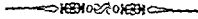


अथ बृहन्नियण्डुरत्नाकरपंचमभागविषयानुक्रमणिका ।



विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
अजीर्ण.		शमन	६०५
मन्दाग्रिहर	५९७	विरेचन	६०६
पाराशर	"	सामान्यपत्र	"
कर्मविपाकसंग्रह	"	कोलास्थियोग	"
जठराग्निदान ...	५९८	क्षीर	"
विपूच्यादि निदान	"	विदारिकलक	"
चतुर्विध आग्नि के कार्य	"	त्रिफलावलेह	६०७
प्रकारांतर	"	अपामार्गादि योग	"
हिंवाष्टकचूर्ण	५९९	कदलीफलयोग	"
जीरकादि चूर्ण	"	अजीर्ण के भेद	"
विडंगादि चूर्ण	६००	गुडाष्टक	६०८
वडवानल चूर्ण	"	पथ्यादि चूर्ण	"
वीरिनामक रस	"	बृहच्छंखवटी	"
विपाक	"	लघुक्रव्याद रस	६०९
प्रा प्रकार	६०१	विदग्धाजीर्णलक्षण	६१०
प्रकनिदान	"	विदग्धाजीर्ण की चिकित्सा	"
प्रकलक्षण	"	निद्रानियम	"
प्रकत्साक्रम	६०२	दिवा निद्रा	"
प्रकचिकित्सा	"	विष्टग्धाजीर्णलक्षण	६११
निर्णय का निदान	"	विष्टग्धाजीर्ण में सामान्य उपचार.	११२
सामाजीर्णलक्षण	६०३	रसशोषाजीर्णलक्षण	"
वचादि वमन	"	रसशोषाजीर्ण में सामान्य उपचार.	"
लवंगादि क्षाय	"	अजीर्ण	"
वैश्वानरक्षार	"	अजीर्ण के सामान्य उपचार.	६१२
सामुद्रादि चूर्ण	६०४	अजीर्ण के उपचार का ...	"
हरीतक्यादि योग	६०५	...	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
अग्निमुख चूर्ण	६१३	पाशुपतरस	६२५
वृद्धाग्निमुख चूर्ण	६१४	आदित्परस	६२६
यावशूकादि चूर्ण....	६१५	हुताशनरस	६२७
लघुचित्रकादि चूर्ण	"	अजीर्णकंटकरस	"
शुंघ्यादि चूर्ण	"	रामवाणरस	"
कणाद्य चूर्ण	६१६	दूसरा प्रकार	६२८
कापित्यादि योग	"	ज्वालानलरस	"
ज्वालामुख चूर्ण	"	चिंतामणिरस	६२९
व्योपादि चूर्ण	"	पंचमूल्यादि घृत....	"
शुण्घ्यादि चूर्ण	६१७	दशमूल्यादि घृत....	६३०
विश्वादि चूर्ण	"	धान्यादि घृत	"
चित्रकादि चूर्ण	"	अग्निघृत	"
बिडलघणादि चूर्ण	"	शार्दूलकांजिक	६३१
बडवानल चूर्ण	६२८	विपूचिकादि की संप्राप्ति निदान.	६३२
पंच.ग्नि चूर्ण	"	विपूचिका के लक्षण	"
विश्वभेषज चूर्ण	"	विलंबिका व अलसक इन की चिकित्सा "	"
संजीवनी गुटी	"	अलसक की निरुक्ति	"
धनंजय वटी	६१९	अलसक व दंडाळसकलक्षण	"
शंखवटी	६२०	विलंबिका लक्षण....	"
लवंगामृतवटी	"	अजीर्ण से उत्पन्न हुए आम के कार्य.	६
व्योपादि गुटी	६२१	विपूची और अलसक इन के असाध्य	"
हरीतक्यादि वटी....	"	लक्षण	"
अमृत हरीतकी	६२२	जीर्णआहारलक्षण	"
चित्रकगुड	"	विपूचिका के उपद्रव	"
द्राक्षादि योग	६२३	विपूचिकाचिकित्सा	"
यवामू	"	लशुनाद्य चूर्ण	"
ऋष्यादकल्क	"	अपामार्गादि योग ...	"
क्षारयोग	६२४	वालमूत्रादि काढा....	"
अग्निमुखरस	"	तक्रयोग ...	६
अजीर्णादि रस	६२५	बिल्वादि काढा	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
यवपिष्टलेप	६३६	कृमिरोगाधिकारः.	
कुष्ठादि लेप	"	कृमिनिदान	६४७
साधारणलेप	"	बाह्यकृमि के नाम	"
लवंगादि चूर्ण	६३७	कृमि रोग का कारण	"
पथ्यादि चूर्ण	"	पुरीषकफरक्तजकृमिकारण	"
शंखद्राव	"	पेट में कृमि हुए के लक्षण	६४८
दालचिनीतैल	६३८	कफकृमि का लक्षण	"
चुक्रतैल	"	रक्तकृमि का लक्षण	"
अर्कादि तैल	"	पुरीषज कृमी का लक्षण	६४९
तक्र	६३९	कृमिरोगचिकित्सा	"
पानी	"	पूड़ी	६५०
विलंबिका व अलसिकाचिकित्सा.	"	अन्न	"
हस्तिकर्णयोग	"	कृमिलेप	"
निबुरसयोग	"	यवागू	"
करंजादि कपाय	६४०	त्रिभृतादि कल्क	६५१
उत्कृष्टशलक्षण	"	पलाशबीजरस व कल्क	"
कटुत्रयरस	"	स्वरस	"
व्योषादि अंजन	"	तैल	"
अपामार्गाद्यंजन	"	विडंगादि तैल	"
बिल्वादि अंजन	६४१	घृतपत्रतैल	६५२
अजीर्णादिकों पर पथ्य	"	दाडिमादि काढा	"
अपथ्य	६४२	नियमनादि काढा	"
दूसरा प्रकार	६४३	विडंगादि काढा	"
नित्पोदितरस	"	मुस्तादि काढा	"
अशंकुठार	"	खदिरादि काढा	६५३
पडाननरस	६४४	रस	"
पीयूषसिंधु	"	पारदादि योग	"
चक्रबन्धरस	६४५	कृमिकुठाररस	"
पर्पटीरस	"	कृमिमुद्गररस	६५४
भल्लातकावलेह	६४६	विडंगादि चूर्ण	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
दूसरा प्रकार	६५४	पूर्वरूप	६६३
पारासिकयवानी चूर्ण	"	पांडुरोगचिकित्सा	"
निंबादि चूर्ण	६५५	वातपांडुनिदान	"
त्रिफलाद्य घृत	"	मंडूराद्यरिष्ट	६६४
विडंगघृत	"	पित्तपांडुनिदान	"
सारनालयोग	६५६	आमलक्यवलेह	"
भल्लातकयोग	"	दुग्धयोग	६६५
पलशशीजयोग	"	कफपांडुनिदान	"
किरमानी अजमायन का कल्क	"	दशमूलादि काढा	"
निशोतरादि योग	"	नागरादि योग	"
पिप्पल्याद्य चूर्ण	"	लोहभस्मयोग	६६६
आखुषण्यादि चूर्ण	६५७	मधुमंडूर	"
निंबादि चूर्ण	"	मंडूरवटक	"
सुवर्चकादि चूर्ण	"	मंडूरलवण	६६७
जूंआ इत्यादि कों पर तैल	६५८	सन्निपातपांडुनिदान	"
विडंगादि तैल	"	पांडु का असाध्य लक्षण	"
कपिलाचूर्ण	"	असाध्यलक्षण	"
निंबादि रस	"	दूसरा प्रकार	६६८
हरीतकी चूर्ण	"	तीसरा प्रकार	"
सावित्रवटक	"	त्रिफलादि लेह	६६९
विशालादि धूप	६५९	फलत्रिकादि काढा	"
अष्टसुगंधधूप	"	पुनर्नवादि काढा ...	"
ककुमादि धूप ...	६६०	वासादि काढा	६७०
कृमिरोग पर पथ्य ...	"	दाव्यादि वटक	"
अपथ्य	६६१	किरातादि मंडूर	"
दूसरा प्रकार ...	"	अभयादि मोदक	६७१
पांडुरोगकर्मविपाकः.		पाण्डुररस	"
शिरोवेदनासहित पांडुरोगहरण	६६२	पुनर्नवादि वटक	"
पांडुरोगनिदान	"	लोहासव पांडुरोगादिकों पर	६७२
निदानपूर्वक संप्राप्ति ...	"	गोमूत्रलोह	६७३

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
गोमूत्रसिद्धमंडूर	६७३	कामलाकर्मविपाकः.	
नवापसादि चूर्ण पांडुरोगादिकों पर.	"	प्रतिपादान	६८५
दूसरा नवापसचूर्ण	"	कामलानिदान	६८६
लोहादि चूर्ण जीर्णपांडु पर	६७४	लक्षण	"
शिलाजितादि योग	"	कामलाचिकित्साक्रम	"
मंडूरवज्रवटक	"	नस्य व अंजन	"
हंसमंडूर	६७५	जालिनीफलादि नस्य	६८७
सिद्धमंडूर	"	कुमारीकंदनस्य	"
अमृतहरीतकी	६७६	कामला पर अन्न	"
पंचकोलघृत	"	कामला पर काढा	"
साधारणयोग	६७७	पुनर्नवादि काढा	"
देवदालीयोग	"	त्रिफलादि काढा	६८८
गोमूत्रहरीतकीयोग	"	गोदुग्धपान	"
भूर्निवादि गुटी	"	हरीतक्याद्यंजन	"
मदेभासिंहसूत	६७८	खरविट्स्वरस	"
त्रैलोक्यपनाथरस	"	गुडूचीकल्क	"
उदयभास्कर	६७९	घाड्यादि चूर्ण	"
कामेश्वररस	"	अयोरजादि चूर्ण	६८९
कालविध्वंसकरस	६८०	व्योपादि चूर्ण	"
पांडरि	६८१	अयोरजादि योग	"
गंडुसूदन	"	अंजन	"
गेश्वर	"	नस्य	"
गंडुनिग्रहरस	६८२	लोहादि चूर्ण	६९०
मनिलरस	"	एलादि चूर्ण	"
शोहसुंदररस	६८३	हरिद्राचूर्ण	"
वैदनादि तैल	"	दावर्पादि चूर्ण	"
वृत्तिकामक्षणज पांडुनिदान	६८४	घृत	"
केशरादि काढा	"	एरंडस्वरस	६९१
घृत	"	कटुकीयोग	"
		कुंभकामलानिदान	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
कामला का असाध्य लक्षण	६९१	दूर्वादि घृत	७००
दूसरा प्रकार	॥	शतावर्यादि पेय	७०१
कुंभकामला का असाध्य लक्षण....	६९२	पैत्तिकरक्तपित्तनिदान	॥
कुंभकामलाचिकित्साक्रम....	॥	त्रिफलादि काढा....	॥
शिलाजीतयोग	॥	अतस्पादि काढा....	॥
मंद्ूर	॥	वासादि लेह	७०२
नस्यादि योग	॥	कूप्मांडकावलेह रक्तपित्तादिकों पर. ॥	॥
पांडुरोग में कब हलीमक होता है. ६९३	६९३	कफयुक्त रक्तपित्तनिदान....	७०३
पानकीलक्षण	॥	अभयभक्षण	॥
हलीमकपरिभाषा....	॥	आज्यपान....	॥
अयोभस्मयोग	॥	ह्नीवेरादि जल	॥
सित्तादि लेह	॥	मृद्दीकादि गुटी	७०४
अमृतादि घृत	६९४	पारावतादि यूष	॥
गुडुचीस्वरसयोग....	॥	घृतसंधवयोग	॥
पांडु कामला कुंभकामला हलीमक		पथ्य और जलपान	॥
इन पर पथ्य	॥	द्वंद्वजसत्रिपातरक्तपित्तनिदान	॥
अपथ्य	६९५	असाध्यरक्तपित्तलक्षण	७०५
पांडुरोग पर दंभ....	॥	असाध्यलक्षण	॥
कामला पर दंभ....	॥	रक्तपित्त के उपद्रव ...	॥
रक्तपित्तिकर्मविपाकः.		असाध्यलक्षण	७०६
ज्योतिःशास्त्राभिप्राय	६९६	वृषादि स्वरस	॥
दूसरा प्रकार	॥	मातुलिङ्गपादि पेय	॥
ज्योतिःशास्त्रोक्त चिकित्सा	॥	उदुंबरादि योग	॥
रक्तपित्तनिदान	॥	अश्वत्थपत्रयोग	७०७
पूर्वलक्षण	६९७	चित्रकचूर्णयोग	॥
असाध्य लक्षण	॥	गंधकादि प्राशन	॥
वातरक्तपित्तनिदान	॥	दुग्धादि योग	॥
भोजन	६९८	वासास्वरस	॥
रक्तपित्तशास्त्रार्थ	॥	लाक्षादि योग	७०८
रक्तपित्तादिक पर कामदेवघृत	६९९	मन्थादि पेय	॥

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
मधुकादि कल्क	७०८	चौथा प्रकार	७१८
हीबेरादि काढा	"	वासाखंड	७१९
पद्मोत्पलादि काढा	७०९	उशीरासव रक्तपित्तादिकों पर	"
इक्ष्वादि काढा	"	दमन	७२०
चन्दनादि काढा	"	यष्ट्यादि वमन	"
उशीरादि काढा	"	आरग्वधादि रेचन	"
अमृतादि काढा	७१०	विरेचन	७२१
द्वीबेरादि काढा	"	अपतर्पण	"
मुद्गादि काढा	"	दूसरा प्रकार	"
यष्ट्यादि काढा	"	पारावतशकृत्लेह	"
पलाशकल्क व काढा ...	"	केशरलेह	"
आटरूपादि काढा ..	७११	खदिरादि लेह	"
वासादि काढा	"	उदुंबरादि लेह	"
उशीरादि चूर्ण	"	खंडकाद्यवलेह	७२२
मृद्धीकादि चूर्ण	"	रक्तपित्तकुठाररस	७२३
चंदनादि चूर्ण	७१२	वासासुत	७२४
पत्रकादि चूर्ण	"	बोलपर्पटीरस	"
कर्पूरादि चूर्ण	७१३	सुधानिधिरस	"
वासापुटपाक	"	आटरूपाद्यर्क	"
एलादिगुटी रक्तपित्तादिकों पर ...	"	शतावरीघृत	७२५
हरीतक्यादि नस्य	७१४	दूर्वादि तैल	"
मस्तकलेप	"	दूसरा प्रकार	"
कल्क व घृत	"	रक्तपित्त पर पथ्य	७२६
नस्य	"	रक्तपित्त पर अपथ्य	७२७
दूसरा प्रकार ...	७१५	क्षयकर्मविपाकाः-	
आर्द्रिकादि नस्य	"	कदलीदान	७२८
हरीतक्यादि नस्य ...	"	बल्लचर्यादि योग	७२९
कूष्माण्डकावलेह ...	"	ज्योतिःशास्त्राभिप्राय	"
दूसरा प्रकार	७१६	दूसरा प्रकार ...	"
तीसरा प्रकार ...	७१७	देवपूजादि योग	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
शास्त्रार्थ	७३०	अश्वत्थवल्कलादि लोह....	७४२
गीतादि उपाय	"	ककुभाद्य चूर्ण	७४३
राजयक्ष्माक्षयनिदान	"	अश्वगंधाद्य चूर्ण....	"
अनुलोमं व प्रतिलोम क्षय की संप्राप्ति. ७३१		तालीसाद्यचूर्ण	"
पूर्वरूप	७३२	नवनीतयोग	"
क्षय का सामान्य त्रिरूप लक्षण....	"	सितोपलादि चूर्ण....	७४४
एकादशरूप पद्धरूप और त्रिरूप क्षयों		तवराजादि चूर्ण	"
का कारण	"	अदूसायोग	"
पुनः असाध्यलक्षण	७३३	द्राक्षादि चूर्ण	"
साध्यलक्षण	"	स्वर्णमाक्षिकादि चूर्ण	७४५
असाध्यलक्षण	७३४	शिलाजितादि चूर्णः....	"
क्षयरोगी को वर्ज्य पदार्थ	"	लाक्षाकूष्मांडरस	"
क्षयहारक पदार्थ ...	"	मार्कवादि चूर्ण	"
पडंगयूप	७३५	बलादि चूर्ण	७४६
ज्वरदाहक्रिया	"	जातीफलादि चूर्ण	"
वर्षभक्षण के माहात्म्य	"	शिवगुटी	७४७
च्यवनप्राश्यावलेह	"	लघुशिवगुटी	७४८
एलाद्यचूर्ण	७३७	सूर्यप्रभागुटी	७४९
अश्वगंधाचूर्ण	"	गुदुच्यादि मोदक....	७५०
द्राक्षादि चूर्ण	७३८	इक्ष्वादि मोदक	७५१
कर्पूरादि चूर्ण	"	द्राक्षासव	७५२
यवादि चूर्ण	७३९	खर्जूरासव	"
त्रिकशादि चूर्ण	"	दशमूलासव	७५३
शंखपाटलीरस	"	कुमारीपाक	७५४
शिलाजतुयोग	७४०	धानीपाक	७५६
पिप्पल्यासव क्षयादिकों पर	"	शेवंतीपाक	"
कृष्णाद्यवलेह	७४१	महाकनकसुंदररस	७५७
रास्नादि चूर्ण	"	क्षयकेसररस	७५८
अगस्त्यहरीतकी क्षयादिकों पर....	"	शंखेश्वररस	"
आटरूपादि कषाय	७४२	हररुद्ररस	७५९

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
नीलकंठरस ७५९	हेमगर्भपोटलीरस कफक्षयादिकों पर.	७७८
शंखगर्भपोटलीरस ७६०	दूसरा प्रकार	७८०
हेमगर्भरस ७६०	लोकनाथरस	७८३
नागेश्वररस ७६१	लघुलोकनाथरस	७८४
कालांतकरस ७६१	मृगांकपोटलीरस	७८५
चंद्रायत्नरस ७६२	गोधुराद्य घृत	७८६
प्राणनाथरस ७६३	जिवंत्यादि घृत	७८७
सुवर्णपर्पटीरस ७६३	बलाद्य घृत	७८८
प्राणदापर्पटी ७६४	कोलाद्य घृत	७८९
कुमुदेश्वररस ७६४	कणाद्य घृत	७९०
पंचामृताख्यरस ७६५	पाराशर घृत	७९१
स्वयमाग्निरस ७६५	जलाद्य घृत	७९२
राजमृगांक ७६६	वासाद्य घृत	७९३
दूसरा प्रकार ७६७	खर्जूरादि घृत	७९४
लोकेश्वर ७६७	पिप्पल्याद्य घृत	७९५
नवरत्नराजमृगांक ७६८	दूसरा प्रकार	७९६
मृगांकरस ७६९	दशमूलाद्य घृत	७९७
कनकसिंदूर ७७०	तिलों का तैल	७९८
हेमाभ्रकरसिसिंदूर ७७०	चंदनादि तैल	७९९
सुवर्णभूपति ७७१	लक्ष्मीविलासतैल	८००
लक्ष्मीविलासरस ७७२	व्यवायजन्यशोष	८०१
शिलाजत्वादि लोह ७७३	व्यवायशोषिलक्षण	८०२
पंचामृत्तरस ७७४	व्यवायदोषचिकित्सा	८०३
अमृतेश्वररस ७७५	शोकशोषिलक्षण	८०४
चिंतामणिरस ७७६	शोकशोषचिकित्सा	८०५
दूसरा त्रिलोक्यचिंतामणि ७७७	जराशोषलक्षण	८०६
वसंतकुसुमाकर ७७८	अध्वशोषलक्षण	८०७
लोकेश्वरपोटली ७७९	अध्वशोषचिकित्सा	८०८
लोहरसायन क्षयादिकों पर ७८०	व्यायामशोषलक्षण	८०९
रत्नगर्भपोटली ७८१	व्यायामशोषचिकित्सा	८१०

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
व्रणशोपलक्षण ७९३	पथ्यादि घृत ८०१
व्रणशोप ७९४	गोक्षुराद्य घृत ८०२
रसवर्द्धन १	अमृतपाश्यावलेह १
रक्तवर्द्धन १	रसराज ८०३
मांसवर्द्धन १	क्षयरोग में पथ्य १
मेदवर्धन १	क्षय पर अपथ्य ८०५
दूसरा प्रकार ७९५	कासकर्मविपाकः.	
अस्थिवर्धन १	दूसरा प्रकार १
शुक्रवृद्धि १	तीसरा प्रकार ८०६
दूसरा प्रकार १	ज्योतिःशास्त्राभिप्राय.... १
ककडी का रस वांति पर १	कारण सम्प्राप्ति और निरुक्ति १
दूसरा प्रकार ७९६	संख्यारूपसम्प्राप्ति १
रक्तवांति पर १	पूर्वरूप ८०७
उशीरादि चूर्ण १	वातिक कासनिदान १
श्लोष्मा पर ७९७	कासचिकित्सापरिभाषा १
कुस्तुंबर्यादि चूर्ण १	रुद्रपर्पटी १
अरुचि पर १	भूतांकुशरस ८०८
दाहपर १	सठचादि लेह १
शोपपर १	भाङ्गर्यादि लेह ८०९
उरःक्षतक्षयनिदानम्.		विश्वादि लेह १
उरःक्षत के पूर्वरूप ७९९	दशमूली घृत १
क्षतक्षीण के असाध्यलक्षण १	कट्फलादि पेय वातकफकासों पर, १
असाध्यलक्षण १	शुब्बादि चूर्ण १
उरःक्षतक्षयचिकित्साक्रम १	चित्रकादि लेह ८१०
चिकित्साक्रम ८००	शुब्बादि लेह वातकास पर.... १
दशमूलादि काढा १	दशमूल का काढा १
बलादि काढा १	पंचमूलकाढा ८११
एलादि गुटिका १	कर्कटरस १
द्राक्षादि घृत ८०१	शुब्बादि चूर्ण १
बलादि घृत १	पित्तकासनिदान १

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ.
सिहास्यादि काढा	८११	दंतीधूम	८१८
बलादि काढा	८१२	उरःक्षतकासनिदान	"
शब्धादि काढा	"	क्षतकासलक्षण	"
शरादि काढा	"	क्षयकासनिदान	"
शब्धादि काढा	"	क्षयकासलक्षण	८१९
त्वक्क्षीरलेह	"	साध्यासाध्यविचार	"
कंटकार्प्यादि काढा	"	चिकित्साप्रक्रिया	"
पिप्पल्यादि चूर्ण	८१३	इक्ष्वाद्यावलेह	८२०
मधुकादि चूर्ण	"	मजिष्ठाद्य चूर्ण	"
अर्धोवर्तितकाढा	"	क्षुद्रावलेह	"
मातुलिंगादि लेह	"	तारेश्वररस	८२१
सर्जूरालेह	"	सूर्यरस	"
द्राक्षामलकादि लेह	८१४	पिप्पल्यादि लेह	८२२
क्षीरामलकघृत	"	कुलित्थगुड	"
रस	"	वासाकूपमाडावलेह	"
लोकेश्वररस	"	ककुभलेह	८२३
कफकासनिदान	"	पिप्पल्यादि घृत	"
कफकाससामान्यचिकित्सा	८१५	पिप्पल्यादि लेह	"
नवागयूप	"	स्वयमाग्निरस	८२४
पिप्पल्यादि काढा	"	सन्निपातकास	"
पित्तश्लेष्मकास	"	अमृतादि काढा	८२५
अवलेह	"	भाङ्गर्यादि काढा	"
विभीतकधारण	८१६	स्वरसादि योग	"
भद्रमुस्तादि चूर्ण	"	मरीचादि चूर्ण	"
पथ्यादि चूर्ण	"	कुलित्यादि काढा	"
चित्रकादि चूर्ण	"	पुष्करादि काढा	८२६
शिलादि लेह	८१७	कुनव्यादि लेह	"
व्योषादि घृत	"	बाहिषादादि और मरीचादि लेह	"
कहुत्रयादि चूर्ण	"	भाङ्गर्यादि चूर्ण	"
बोलबद्धरस	"	घनादि गुठी	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
निर्गुड्यादि घृत ८२७	जातिमूलादि धूम ८३६
धूमपान ११	हरिद्राधूम ११
वारुणीपत्रधूम ११	विभीतकावलेह ११
हेमगर्भपोटली ८२८	कंटकार्यवलेह ११
कासविधूननरस ८२९	अगस्तिहरीतक्यवलेह ८३७
ताम्रपर्पटी ११	व्याघ्र्यादि घृत ११
कंटकार्यादि चूर्ण ८३०	गुडूच्यादि घृत ८३८
लवंगादि चूर्ण ११	त्र्यूपणादि घृत ११
विभीतकादि चूर्ण ११	कंटकारी घृत ११
पंचकोलादि चूर्ण ११	दूसरा प्रकार ८३९
बदरीकल्क ११	भागोत्तरवटी ११
कर्पूरादि चूर्ण ८३१	अगंधखर्परपर्पटी ८४०
त्रिकटुकादि चूर्ण ११	कासश्वासविधूननरस ११
देवदारवादि चूर्ण ११	गुरुपंचमूलीकाढा ११
द्विक्षारादि.... ११	वासादि काढा ८४१
ग्रंथिकादि ११	सिंहीकपाय ११
कटुत्रिकादि ८३२	वृषादि काढा ११
हरीतक्यादि गुटी ११	आर्द्रकावलेह ११
त्रिजातादि ११	व्याघ्रीहरीतक्यवलेह ११
मरीच्यादि गुटी ११	कासकंडनावलेह ८४२
लवंगादि गुटी ८३३	हेमगर्भपोटली ८४३
धनंजयवटी ११	हेमगर्भ ११
खदिरादि गुटी ११	दूसरा प्रकार ८४४
व्योपादि गुटी ८३४	कासकेसरी ११
विष्पल्यादि गुटी ११	रसैद्रवटी ८४५
अर्कमूलादि धूम ११	नीलकंठ रस ११
मनःशिलादि धूम ८३५	लोकनाथपोटली ८४६
दूसरा प्रकार ११	अमृताण्वरस ११
धत्तूरादि धूम ११	अग्निरस ८४७
जातिपत्रादि धूम ११	कासकर्तरी ११

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
कफाग्निवटी ८४७	कटुकादि भस्म ८५५
कासपथ्य.... ८४८	कोलमज्जालेह "
अपथ्य "	हेममात्रा "
हिक्काकर्मचिपाकः.		पिप्पल्यादि लेह "
हिक्कानिदान "	शंखचूलरस ८५६
संप्राप्ति ८४९	मेघडंबर रस "
हिक्का के भेद "	महाहिक्कानिदान "
पूर्वरूप "	कटुत्रिकलेह "
सामान्यचिकित्सा "	असाध्यहिक्कानिदान लक्षण ८५७
त्याज्यहिक्का ८५०	असाध्य लक्षण "
अन्नजाहिक्कानिदान "	यष्ट्यादि चूर्ण ८५८
यूप "	विश्वादि चूर्ण "
कुष्ठित्यादि काढा ८५१	रक्तचंदन योग "
हरिद्रादि लेह "	कृष्णाचूर्ण "
अभयादि कल्क "	शृंग्यादि चूर्ण "
चंद्रसूरकाढा "	भाङ्गर्यादि चूर्ण ८५९
यमलाहिक्कानिदान ८५२	हिक्कानस्य "
दशमूला यवागू "	मधुकनस्य "
हिंवादि यवागू "	मक्षिकानस्य "
क्षुद्राहिक्कानिदान "	शिलाजीतधूम "
दशमूलीकाढा "	श्लासावरोध ८६०
कुष्ठित्यादि काढा ८५३	मापादि धूम "
धान्यादि काढा "	हिंवादि धूम "
गंभीराहिक्कानिदान "	हिक्कारोग में पथ्य "
पाटल्यादि योग "	हिक्कारोग में अपथ्य ८६१
दशमूलीकाढा "	श्वासकर्मचिपाकः.	
छागदुग्धयोग ८५४	दूसरा प्रकार ८६२
मधुसौवर्चलयोग "	तीसरा प्रकार ८६३
शिखीलेह "	श्वासनिदान "
पिप्पल्यादि लेह "	प्राग्रूप "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
कफजन्यअरोचक निदान ८९६	पिप्पल्यादि चूर्ण ९०५
गंडूष ८९७	छत्रादि चूर्ण ९०६
कवलग्राह ११	अम्लिकादि पेय ११
विडंगचूर्ण ११	शुंठ्यादि चूर्ण ११
अम्लिकाकवल ११	त्र्यूपणादि वंटी ११
कुष्ठादि कवल ११	अमृतप्रभावटी ११
नींब का पन्हा ८९८	आकल्लाकादि चूर्ण ९०७
मुखधावन ११	लवणाद्रकयोग ११
दूसरा प्रकार ११	शृंगवेरादि लेह १०८
तीसरा प्रकार ११	त्वङ्मुस्तादि चूर्ण ११
शर्करादि भक्ष ८९९	दाडिमरस ११
पानक ११	जीरकादि चूर्ण ११
तालीसादि चूर्ण ११	कपित्थादि चूर्ण ११
खांडवचूर्ण ९००	शुंठ्यादि गुटी ११
यवानीखांडवचूर्ण ९००	अरुचि रोग में पथ्य ९०९
अरोचकादि पर. १०१	अरुचि पर अपथ्य ११
कारव्यादि गुटिका १०१	छर्दिरोगकर्मविपाकः	
खंडाद्रक योग ११	अन्यत्र ९१०
राजिकादि शिखरिणी १०२	ज्योतिषशास्त्राभिप्राय ११
आद्रक योग ११	छर्दिनिदान संप्राप्ति व लक्षण ९११
ताम्राशिखरिणी ११	पूर्वरूप ११
आमलकादि चूर्ण १०३	वातछर्दिलक्षण ११२
कर्पूरादि चूर्ण ११	सैधवयोग ११
चव्यादि चूर्ण ११	लवणत्रययोग ११
आद्रकमानुलुंगावलेह ९०४	धान्याकयूप ११
जीरकादि घृत ११	पित्तच्छर्दिलक्षण ११
सूतादि गुटिका ११	तंदुलजलपान ९१३
लघुचुकसंधान ११	लाजादि यूप ११
केसरादि लेह ९०५	पर्पटादि काढा ११
आद्रकदाडिमयोग ११	मक्षिकाविडवलेह ११
दाडिमचूर्ण ११		



विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
गुडूचादि काढा	९१३	असाध्यच्छर्दिदक्षण	९२०
लाजसक्तुपान	"	आगंतुकच्छर्दिदक्षण....	"
कफछर्दिदक्षण	९१४	असाध्यलक्षण	"
सामान्यचिकित्सा	"	उपद्रव	९२१
शालिभक्त	"	सामान्यचिकित्सा	"
विडंगादि चूर्ण	"	आम्रास्थिकाढा	"
जांबवादि योग	"	जंबूपल्लवादि काढा	९२२
सन्निपातछर्दिदक्षण	९१५	मयूरपक्षभस्मावलेह	"
विल्वादि काढा	"	गोण्याद्यभस्म योग	"
कोलाद्यवलेह	"	पटोलाद्य घृत	"
सुरसापान	"	दधित्थरसादि लेह	"
मनःशिलादि योग	"	रंभाकंदयोग	९२३
अश्वत्थवल्कलादि योग	९१६	करंजादि लेह	"
लाजादि योगत्रय	"	करंजबीजादि योग	"
धात्रीफलपान	"	शंखपुष्पीरसादि पान....	"
मसूरसक्तु....	"	जीरकादि धूप	"
एलाद्यचूर्ण	९१७	वांतिहृद्रस	"
पक्षकादि घृत	"	जातीरसपान	९२४
चंदनादि पान	"	यष्ट्यादि पान	"
उदीच्यजल	"	गुडूच्यादि हिम	"
चंदनपान	"	पारदादि चूर्ण	"
मुद्गाकाढा....	९१८	जीरकादि रस	९२५
कोलमज्जा	"	वमनामृत योग	"
बीजपूरादि पुटपाक	"	छर्दिपथ्य....	"
हरीतकी चूर्ण	"	अपथ्य	९२६
जंब्वाम्रपल्लवरस	९१९	तृष्णाकर्मचिपाकः.	
हिंवादि पान	"	शांति	९२७
उग्रगंधादि योग	"	तृष्णानिदान	"
सामान्यचिकित्सा	"	तृष्णादित का स्वरूप	"
जातीपत्रचूर्ण	"	तृष्णासंप्राप्ति	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
घातजतृष्णानिदान	१२८	दूसरा प्रकार	१३५
घाततृष्णाजय प्रकार....	"	अवलेह	"
दूसरा प्रकार	"	ताम्रादि रस	"
तेल	१२९	श्रीखंड योग	१३६
जल	"	आमलक्यादि गुटिका तृष्णादि पर.	"
पित्ततृष्णानिदान	"	वटी	"
पित्ततृष्णाचिकित्सा	"	गुटी	"
तंदुलोदकपान	"	काश्मर्यादि काढा ...	१३७
मधुकादि फांट	१३०	जीरकादि चूर्ण	"
कफतृष्णानिदान	"	आम्रादि काढा	"
कफतृष्णासामान्यचिकित्सा	"	द्राक्षादि नस्य	"
विल्वादि काढा	"	जीरकादि काढा	"
कफतृष्णाप्रयोग	१३१	कोष्ठादि योग	१३८
क्षतजन्यतृष्णानिदान	"	तप्तलोष्ठादि योग	"
क्षतजतृष्णाचिकित्सा	"	मंदादि योग	"
क्षयजतृष्णानिदान	"	रसादि गुटी	"
क्षयजतृष्णा	१३२	रसादि चूर्ण	१३९
आमजतृष्णानिदान	"	लेप	"
आमजतृष्णा	"	गुटी	"
अन्नजातृष्णानिदान	"	उपसर्गतृष्णासामान्यविधि	"
अन्नजाचिकित्सा	"	अभ्यंजन और स्नान....	१४०
उपद्रव व असाध्यलक्षण तृष्णा	१३३	कसेर्वादि काढा	"
जलपाननियम	"	क्षौद्रादि गंडूष	"
गंडूष	"	लेप	"
गंडूष	१३४	दूसरा प्रकार	१४१
लेप	"	पानात्पयजतृष्णा	"
चूर्ण	"	तृष्णारोग पथ्य	"
कुष्ठादि चूर्ण	"	तृष्णारोग अपथ्य	१४२
चूर्ण	१३५	सूत्रार्थमनिद्रासंन्यासनिदानम्.	
घटाश्वउह	"	संप्राप्ति	१४३

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
पूर्वरूप १४३	पथ्यादिघृत मदजन्यमूर्च्छा पर....	१५१
वातादि मूर्च्छालक्षण "	रस "
पित्तमूर्च्छानिदान १४४	ताम्रादि चूर्ण "
कफमूर्च्छा "	शुंघ्यादि गुटी "
सन्निपातमूर्च्छानिदान "	मूर्च्छारोग में पथ्य १५२
रक्तमूर्च्छानिदान "	मूर्च्छा अपथ्य १५३
विषमद्यमूर्च्छानिदान.... १४५	पानात्ययपरमदपानार्जिर्णपान- विभ्रमनिदानम्.	
रक्तादि मूर्च्छादिओं के लक्षण "	मद्य का सेवन प्रकार.... "
मूर्च्छाभेदकारण विशेषकरके कहता हूं. १४६		विधि से मद्य पीने के दूसरे गुण....	१५४
संन्यासकथन "	त्रिविधमद के लक्षण.... १५५
संन्यासलक्षण "	मध्यममद के लक्षण.... "
मूर्च्छा १४७	तृतीयमद के लक्षण "
चिकिरसाक्रम "	चतुर्थमद लक्षण "
दुरालभादि काढा "	अविधि से सेवित मद्य के अन्य विकार. १५६	
पंचमूलकाढा "	अन्न के साथ मद्यपान करने के विकार. १५	
धुद्रादि काढा १४८	उन विकारों को कहते हैं "
द्राक्षादि काढा "	वातादि संबंधमदात्ययलक्षण	१५७
रक्तजादि का मूर्च्छा पर शास्त्रार्थ "	पित्तजन्यमदात्ययनिदान "
कोलादि योग "	कफमदात्यय निदान "
त्रिफलादि योग "	त्रिदोषमदात्यय निदान "
दुरालभादि काढा १४९	परमदलक्षण "
सामान्य "	वातमदात्यय में सैषर्चलादि	१५८
आत्मगुतादि योग "	सूक्तशुंग्यादि "
नारिकेलादि योग "	आम्लश्लिग्वादि "
प्रकारांतर "	पित्तमदात्यय "
मृणालाद्यषडह १५०	धुद्रामलकादि पान "
अंजन "	सामान्य १५९
दूसरा प्रकार "	कफमदात्यय सामान्य "
सामान्य उपचार अंजन "	अष्टांगलवण "
लेह १५१		

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
सुपारी के मद पर ९५९	चंद्रकळारस ९६७
दूसरा प्रकार "	तृष्णानिरोधजदाहलक्षण "
कोद्रवधत्तूर ९६०	तृष्णानिरोधजदाह "
जायफळ के मद पर.... "	यवादि मंथ ९६८
दूसरा प्रकार "	मृतसंजीवनी गुटी "
कज्जलीरस "	रक्तपूर्णकोष्ठजदाह "
सामान्य "	रक्तपूर्णकोष्ठजदाह "
पानाजीर्ण के लक्षण.... ९६१	दूसरा प्रकार ९६९
पानविभ्रम लक्षण "	दशसारचूर्ण "
असाध्य लक्षण "	धातुक्षयजन्य दाह "
पानोपद्रव.... ९६२	खर्जूरादि चूर्ण "
मथिततैल "	धातुक्षयज दाह ९७०
मद्योपशम "	पित्तदाह "
कृष्णादि पने "	क्षतजदाह "
सर्वजमदात्यय में त्रिफलादि पान.	"	चंदनादि चूर्ण "
दुःस्पर्शादि योग ९६३	रक्तजदाह पर ९७१
चन्पादि चूर्ण "	चंदनादि काढा "
शतावरीपुनर्नवा घृत.... "	योग "
माष घृत "	लाजादि काढा "
सामान्यशास्त्रार्थ ९६४	कमलादि पान ९७२
खर्जूरादि मंथ "	कोष्ठपूर्णरक्त दाह "
मदात्ययपथ्य "	दाहरोग तैल "
मदात्यय अपथ्य ९६५	तिलतैल "
दाहरोगकर्मविपाकः.		पुनर्नवादि तैल "
ज्योतिःशास्त्राभिप्राय.... "	तंदुलोयकमूलादि पान ९७३
दाहनिदान.... "	लेप "
सामान्यचिकित्सा ९६६	स्नान "
दूसरा प्रकार "	दाहहरणकर्त्ता योग "
रक्तजदाहलक्षण "	धान्यदिम ९७५
रसादि गुटी ९६७	घृत लेप "

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
निबन्धप्रवाल लेख	९७५	धूप	९८६
अन्य उपाय	"	पर्पटीरस	"
बालआलिंगन	"	शिरीषाद्यजन	"
दूसरा चद्रकलारस	९७६	ब्राह्म्यादि रस	९८७
मर्माभिधातज दाह	९७७	ब्राह्म्यादि कल्क	"
असाध्य लक्षण	"	सितकुसुमबलादि योग	"
दाह रोग में पध्य	"	दशमूलादि योग	"
दाहरोग में अपध्य	९७८	भूतोन्मादलक्षण	९८८
उन्मादरोगकर्मविपाकः		देवजुष्ट-उन्मादलक्षण	"
उन्माद व भूतोन्माद निदान	९७९	असुरउन्माद	"
उन्मादभेद व निदान के हेतु कहते हैं	"	गर्ध्वजुष्ट-उन्माद	"
संप्राप्तिकथन	"	यक्षग्रस्त उन्माद लक्षण	९८९
उन्माद का रूप	९८०	पितृग्रहग्रस्त उन्माद लक्षण	"
वातोन्मादलक्षण	"	सर्पग्रहग्रस्त उन्माद लक्षण	"
पित्तोन्माद निदान	"	राक्षसजुष्ट उन्माद लक्षण	"
कफोन्माद	९८१	ब्रह्मराक्षस उन्माद लक्षण	९९०
सात्रिपातज उन्माद निदान	"	पिशाचजन्य उन्माद लक्षण	"
दुःखोन्माद लक्षण	"	असाध्य लक्षण	"
विषजउन्मादलक्षण	९८२	देवादीनामावेशसमयः	९९१
असाध्यलक्षण	"	निशादि घृत	"
उन्मादशास्त्रार्थ	"	कल्याण घृत	९९२
सामान्य उपचार	"	हिग्वादि घृत	९९३
सामान्यचिकित्सा	९८३	सारस्वत घृत	"
सामान्य उपचार	"	उन्मादगजकेसरी रस	"
शास्त्रार्थ	"	विगतोन्माद लक्षण	९९४
लशुनादि घृत	९८४	भूतोन्माद पर अजन व नावन	"
चन्दनादि तैल	"	भूतभैरव रस	"
अजन	९८५	भूतराव घृत	९९५
शिरीषादि नस्य	"	धूप	"
व्योषाद्यजन	"	भूतोन्मादचिकित्सा शास्त्रार्थ	९९६

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
महापैशाचिक घृत १९७	त्रिकत्रय लेह १००६
कल्याणक घृत ११	कल्याण चूर्ण ११
उन्मादपथ्य ११	लेप व दाग ११
उन्माद अपथ्य १९८	चंदनादि अवलेह १००७
अपस्मारकर्मविपाकः-		द्राक्षाद्यवलेह १००८
ज्योतिःशास्त्राभिप्राय.... ११	शास्त्रार्थ १००९
अपस्मार निदान १९९	पलंकपा तैल ११
पूर्वरूप ११	कटभ्यादि तैल ११
वातजन्य अपस्मार ११	शिशु तैल ११
पैत्तिक अपस्मार ११	अपस्मार पथ्य. १०१०
कफापस्मार ११	अपस्मार अपथ्य ११
सन्निपातापस्मार निदान १०००	वातव्याधिकर्मविपाकः-	
असाध्य लक्षण ११	वातरोगहर १०११
अपस्मार का कालनियम कहते हैं ११	धनुर्वातहर ११
मधुक घृत १००१	पक्षवातहर १०१२
काश घृत ११	रक्तवातहर ११
कफअपस्मार पर वचाय घृत.... ११	रक्तवातपित्तहर ११
मधुवचायोग ११	वातपित्तहर ११
मुस्तकमूल योग १००२	वातव्याधि निदान १०१३
कूप्मांडकादियोग ११	वायु का पूर्वरूप १०१४
भैरवरसायन ११	रूपकथन ११
स्मृतिसागर रस ११	वातचिकित्सोपक्रम.... १०१५
पानीयकल्याणघृत अपस्मारादिकों १००३	दूसरा प्रकार ११
पर ११	तीसरा प्रकार १०१६
शंखपुष्पी घृत ११	कोष्ठगत वातलक्षण ११
सैंधवादि घृत १००४	कोष्ठलक्षण ११
ब्राह्मी घृत ११	आमाशयोक्त ११
कूप्मांड घृत ११	कोष्ठवातचिकित्सा क्रम ११
पंचगव्य घृत ११	चिकित्सा १०१७
अपस्मार नस्य १००५	आमाशयगत लक्षण ११
अंजन १००५		

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
आमाशय लक्षण १०१७	किरातादि कल्क १०२५
आमाशयगतवातचिकित्सा "	त्वक्शून्यता निदान १०२६
आमाशयगतवात "	चिकित्सा "
पट्टचरण योग १०१८	रसगतवायु के लक्षण "
तीन काढे "	रक्तगतवायु के लक्षण "
पक्काशयवायु "	मांसगत वायु "
चिकित्सा "	मेदाश्रित वातलक्षण १०२७
हृदयवात १०१९	अस्थि वात लक्षण "
सर्वांगवात लक्षण "	मज्जागत वातलक्षण "
चिकित्सा "	शुक्रगत वातलक्षण "
अवशिष्टवात १०२०	सप्तधातुगत वातचिकित्सा "
कुरंदकादि काढा "	मांसमेदोगत "
महारास्रादि काढा.... "	अस्थिमज्जागत १०२८
दूसरा प्रकार १०२१	केतकादि तैल "
महाबलादि काढा १०२२	शुक्रगत "
पंचमूलादि योग "	शिरागतवायु "
धाजिगंधादि काढा.... "	चिकित्सा "
समीरदावानल १०२३	स्नायुगत वातलक्षण "
शुदास्थितवायुकार्य "	चिकित्सा १०२९
चिकित्सा "	संधिगतवात निदान "
चिकित्सा "	सामान्य चिकित्सा.... "
श्रोत्रादिगत लक्षण "	इंद्रवारुणि चूर्ण "
चिकित्सा "	पित्तकफाश्रित प्राण "
जृम्भा (जंभाई) १०२४	पित्तकफाश्रित उदान "
चिकित्सा "	पित्तकफाश्रित समान १०३०
जृम्भाचिकित्सा "	पित्तकफाश्रित अपान "
प्रलापक "	पित्तकफाश्रित व्यान "
चिकित्सा १०२५	चिकित्सा "
रसाज्ञान निदान "	आक्षेप के सामान्य लक्षण "
चिकित्सा "	आक्षेप के चार भेद.... १०३१

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
केवल वातजाक्षेप	१०३१	गुग्गुल पक्षाघात पर	१०३९
सामान्य चिकित्सा....	११	रालतैल	११
आक्षेपक चिकित्सा....	११	शुंठी चूर्ण	१०४०
आक्षेप के भेद अपतंत्रक	१०३२	अर्दित निदान	११
चिकित्सा	१०३३	वातार्दित	१०४१
हरीतक्यादि लेह	११	चिकित्सा	११
मरिचादि चूर्ण	११	पित्तार्दित	१०४२
दंडापतानक	११	कफार्दित	११
अपतानक	११	अर्दितसाध्यासाध्य....	१०४३
असाध्यत्व कहते हैं	१०३४	दूसरा प्रकार	११
चिकित्सा	११	लशुनविधि	११
चिकित्साप्रक्रिया	११	हनुग्रह निदान	१०४४
धनुस्तंभलक्षण	१०३५	चिकित्सा	११
दूसरा प्रकार	११	हनुग्रह चिकित्सा	११
कुब्जलक्षण	११	रसोनवटक	१०४५
अंतरायामलक्षण	११	अभ्यंजन	११
बाह्यायामलक्षण	१०३६	प्रसारणीतैल वातकफजन्यवायुपर- ..	११
सामान्य	११	मन्यास्तंभ	१०४६
दूसरा प्रकार	११	चिकित्सा	११
चिकित्सा	११	जिह्वास्तंभ	११
सर्ज तैल	१०३७	चिकित्सा	१०४७
एरंडादि काढा	११	दूसरा प्रकार	११
पक्षवध	११	कल्याणकावल्लह	११
सर्वांगरोग लक्षण	११	शिरोग्रह	११
मापादि काढा	१०३८	चिकित्सा	११
म्रंधिकादि तैल	११	गृध्रसल्लक्षण	१०४८
मापादि तैल	११	वातज गृध्रसीनिदान	११
मापादि सप्तक	११	वातश्लेष्मज गृध्रसीनिदान	११
मापतैल	१०३९	गृध्रसीचिकित्सा	११
कापिकण्टादि काढा....	११	एरंडतैलयोग	१०४९

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
गृध्रसीहरतैल	१०४९	अववाहुकलक्षण	१०५७
शिरावेध गृध्रसी पर....	"	चिकित्सा "	"
निंबकल्क	१०५०	मापतैल	"
गृध्रसीचिकित्सा	"	मापतैलादि मर्दन	१०५८
राम्नागुग्गुलु	१०५१	मूक मिम्मिष व गद्गदनिदान	"
राम्नाकाढा	"	सारस्वत घृत	"
पथ्यागुग्गुलु	"	तूनीलक्षण	१०५९
एरंडतैलयोग	१०५२	प्रतूनीलक्षण	"
विश्वाचीलक्षण	"	इन दोनों पर चिकित्सा	"
चिकित्सा	१०५३	आध्मानलक्षण	"
मापतैल	"	चिकित्सा	१०६०
क्रोमुशीर्षलक्षण	"	नाराचूर्ण	"
चिकित्सा	"	दारुपद्कलेप	"
सामान्यचिकित्सा	"	महानाराचरस	"
खंज व पंगु के लक्षण	१०५४	प्रत्याध्माननिदान	१०६१
चिकित्सा	"	चिकित्सा	"
कलायखंजलक्षण	"	वाताष्ठीलानिदान	"
चिकित्सा	"	प्रत्यष्ठीलां	१०६२
चिकित्साक्रम	"	हिंवादि चूर्ण	"
वातकंठकानिदान	१०५५	प्रत्यष्ठीलादि चिकित्सां	"
चिकित्सा	"	दूसरं प्रकार	"
पाददाहलक्षण	"	हिंवादि योग	१०६३
चिकित्सा	"	नादेयादि काढा	"
पाददाह पर लेप	"	विडंगासव	"
पादहर्षलक्षण	१०५६	वास्तिवातलक्षण	१०६४
चिकित्सा	"	चिकित्सा	"
बाहुशोपनिदान	"	हरितक्यादि चूर्ण	"
चिकित्सा	"	यवक्षारचूर्ण	१०६५
रसानकल्क	"	कृष्मांडवीजयोग	"
बाहुशोपचिकित्सा	१०५७	आमलक्यादि योग	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
वृद्ध्यादि तैल ११८८	महौपधादि काथ ११९७
त्रिफलाचूर्ण ११८९	महारासनादि काथ "
शिलाजतुयोग "	रासनादि काथ ११९८
ग्रंथिकादि कल्क "	रासनाद्वादशकाढा "
पिप्पल्यादि कल्क "	रासनासप्तक काथ "
पिप्पलीयोग "	शुंठ्यादि काथ "
ऊरुस्तंभ पर योग.... "	शठचादि काथ ११९९
प्रकारांतर ११९०	पिप्पल्यादि काथ "
ऊरुस्तंभ पर लेप "	दशमूलादि काढा "
कुष्ठादि तैल "	अजमोदादि चूर्ण "
सैंधवादि तैल "	पंचसमचूर्ण १२००
कटुतिक्त तैल ११९१	पंचकोलचूर्ण "
त्रिफलादि गुग्गुलु "	त्रिफलादि चूर्ण "
गुंजागर्भ रसायन ११९२	आरग्वधपत्र चूर्ण "
लशुन योग "	पुनर्नवादि चूर्ण १२०१
ऊरुस्तंभरोग पर पथ्य ११९३	त्रुट्यादि चूर्ण "
ऊरुस्तंभरोग पर अपथ्य "	अलंबुवादि चूर्ण "
आमवातकर्मविपाकः.		भल्लातादि चूर्ण "
आमवात पर वैदिककर्म ११९४	वैश्वानरचूर्ण "
ज्योतिशशास्त्राभिप्रायमाह "	हिंश्यादि चूर्ण "
आमवातनिदान "	चित्रकादि चूर्ण "
आमवात के सामान्य लक्षण ११९५	नागरचूर्ण "
अत्यंत बढे हुए आमवात के सामान्य लक्षण "	अजमोदादि गुटिका वा चूर्ण १२०३
आमवात के विशेष लक्षण "	सिंहनागगूगल "
आमवात में साध्यासाध्य विचार. ११९६ "	हरीतकीगूगल १२०४
आमवात की सामान्य चिकित्सा "	योगराजगूगल "
रासनादि काथ "	सिंहनादगूगल १२०५
रासनादि काथ "	बभयादि गुटी १२०६
रासनादि काथ "	एरंडादि गुटी "
 "	आमवातारि गुटिका "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
एरंडयोग १२०७	शमन १२१७
एरंडयोग ११	अरुचिशूल ११
हरितकी योग ११	शमन ११
अहिंसादि योग ११	शमन १२१८
जल १२०८	काटिशूल का कर्मविपाक ११
एरंडमूलयोग ११	कर्णशूल ११
रसोनयोग ११	शमन ११
पारदभस्मप्रयोग ११	हस्तशूल १२१९
आमवातविध्वंस रस १२०९	शमन ११
आमवातारिरस ११	नेत्रशूल ११
उदयभास्कर रस ११	शमन ११
शतपुष्पादि छेप १२१०	शूलरोग में कर्मविपाक ११
रसोनाद्य तैल ११	शूल निदान १२२०
रसोनासव ११	वातशूल की चिकित्सा १२२१
लशुनरस १२११	वातशूल में घृष ११
रसोनासव ११	दशमूलादि छाथ ११
वृहत्सैधवादि तैल १२१२	विश्वादि काढा ११
एरंडतैल १२१३	चलादि छाथ १२२२
शुंठीघृत ११	वातशूल पर कल्क ११
शुंठीसिंह ११	बीजपूरस्वरस ११
प्रकारांतर १२१४	तुंबरुआदि चूर्ण ११
मेघीपाक ११	हरितक्यादि चूर्ण ११
सौभाग्यशुंठी १२१५	सौवर्चलाद्य चूर्ण १२२३
शुंठ्यादि पुटपाक १२१६	उशीराद्य चूर्ण ११
आमवातरोग पर पध्य ११	श्वेतपरंठादि चूर्ण ११
आमवातरोग पर अपध्य ११	मंदारमूलाकाद्य चूर्ण ११
शूलरोगकर्मविपाकः.		यथान्यादि चूर्ण ११
अजीर्णशूल का कर्मविपाक १२१७	करंजाद्य चूर्ण ११
श्रीहशूल ११	गुडूच्यादि चूर्ण १२२४
जठरशूल ११	प्रकारांतर ११

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
उशीरादि चूर्ण १२२४	कट्फलादि चूर्ण १२३१
सुवर्चलादि चूर्ण "	बृहत्कट्फलादि चूर्ण १२३२
प्रकारांतर "	पथ्यादि चूर्ण "
एरंडमूलादि चूर्ण १२२५	मुस्तादि चूर्ण "
सौवर्चलादि गुटिका.... "	लवणादि चूर्ण "
विल्वादि गुटिका "	सर्वांगसुंदर रस १२३३
सोमाग्निमुखरस गुटी "	आमशूल "
मृगशृंगोद्भव भस्म "	आमशूल की सामान्य चिकित्सा.	"
अग्निमुख रस १२२६	चित्रकादि क्वाथ १२३४
उदयभास्कर रस "	त्रिफलादि चूर्ण "
नाभिशूल पर लेप १२२७	दीप्यादि चूर्ण "
वातशूल पर लेप "	विल्वमूलादि चूर्ण "
मृत्तिकासेक "	दावादि लेप "
नाभिलेप "	आमशूल पर "
पैत्तिकशूलनिदान १२२८	हिंवादि योग १२३५
सामान्यचिकित्सा "	कूपमांडकार "
नाभी के ऊपर पात्र धरना १२२९	द्वंद्वजशूल लक्षण "
सामान्ययत्र "	द्वंद्वजशूल की सामान्य चिकित्सा.	१२३६
शतावर्यादि क्वाथ "	द्वंद्वजशूल पर क्वाथ "
बृहत्यादि क्वाथ "	पटोलादि क्वाथ "
त्रिफलादि क्वाथ "	द्राक्षादि क्वाथ "
त्रिफलादि क्वाथ १२३०	एरंडमूलादि क्वाथ "
त्रायमाणादि क्वाथ "	लशुन कल्क १२३७
शतावर्यादि रस "	सन्निपातशूल के लक्षण "
धान्यादि चूर्ण "	त्रिदोषशूल चिकित्सा "
धान्यादि स्वरस "	विदारि रस योग "
कफजन्य शूल के लक्षण "	अक्षादि स्वरस "
कफशूल की सामान्य चिकित्सा.	१२३१	वैश्वानर योग १२३८
एरंडमूलादि क्वाथ "	सर्वजशूल पर शास्त्रार्थ "
बीजपूररस "	शूले स्वरसमाह "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
बीजपूरादि स्वरस	१२३८	गोमूत्रमंडूर	१२४७
मातुलुंगस्वरस	१२३९	सूर्यप्रभावटी	"
बृहत्यादि काय	"	शंखादि चूर्ण	"
एलादि काय	"	क्षारयोग	१२४८
मातुलुंगादि काय	"	चित्रकादि षटक	"
अजमोदादि काय	"	हरीतक्यादि वटी	"
एरंडादि काय	१२४०	कुबेराक्षवटी	१२४९
त्रिफलादि काय	"	अगस्त्यवटी	"
पथ्यादि काय	"	गरलादि वटी	"
शूलमात्र परु र्यवागू....	"	वचादि वटी	१२५०
रेचन के वास्ते वत्ती	१२४१	कुबेराक्ष पाक	"
अश्वीपुरीष रस योग	"	सप्तविंशति गुग्गुलु....	"
विश्वजलादि काय	"	लोहभस्म योग	१२५१
कुबेरादि चूर्ण	"	गंधक रसायन	"
हिंवादि चूर्ण	१२४२	शूलकुठार रस	"
नाराच चूर्ण	"	अप्रिकुमार रस	१२५२
क्षार योग	"	क्षारताम्र रस	"
हिंवादि चूर्ण	१२४३	सोमनाथी ताम्र	"
तुंबकूआदि चूर्ण	"	गदमददहन	१२५३
पंचसमचूर्ण	१२४४	शंखादि चूर्ण	"
विश्वादि चूर्ण	"	विद्याधराभ्रलोह	१२५४
विश्वादि चूर्ण	"	पीडारि रस	१२५५
वचादि चूर्ण	"	शुल्बसुंदर रस	"
अजमोदादि चूर्ण	"	पण्मुस रस	१२५६
वचादि चूर्ण	१२४५	महाशूलहर रस	"
यवान्यादि चूर्ण	"	त्रिनेत्र रस पक्तिशूलादिकों पर	"
अजमोदादि चूर्ण	"	गजकेसरी	१२५७
रुचकादि चूर्ण	"	शूलगजकेसरी	१२५८
हिंवादि चूर्ण	१२४६	गजकेसरी	"
शंखवटी	"	पथ्यादि रस	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
परिणामशूल निदान १२५८	कृष्णाद्य लोह १२६६
शूल के स्थान १२५९	कृष्णादि लोह १२६७
वातिकशूल के लक्षण "	शंबूकादि गुटिका "
पैत्तिकशूल के लक्षण "	चतुःसमलोह "
कफजन्य शूल के लक्षण "	विडंगादि मोदक १२६८
द्वंद्वजसन्निपातशूल के लक्षण १२६०	तिलादि वटी "
शूल के उपद्रव "	खंडामलकरस १२६९
शूल के असाध्य लक्षण "	जीर्णशूल पर गुड "
परिणामशूल की सामान्यचिकित्सा.	"	योगांतर.... "
वातादिकों पर सामान्यचिकित्सा.	"	शंबूकभस्म योग १२७०
त्रिफलादि काय १२६१	नाभि पर मदनादि लेप "
वमन "	रसादि लेप "
परिणामशूल पर कल्क "	शतपुष्पादि लेप "
शुंठीकल्क "	कुचेराक्षयोग १२७१
विरेचन.... "	क्षारयोग "
वमन "	खंडपिप्पली "
गुडादि चूर्ण १२६२	मातुलंगादि घृत १२७२
सामुद्रादि चूर्ण "	तैल "
इंद्रवारुण्यादि चूर्ण.... १२६३	अन्नद्रवशूल निदान "
एरंडादि भस्म योग.... "	अन्नद्रवशूल के लक्षण "
पिप्पल्यादि योग "	वमन-विरेचन १२७३
त्रिपुरभैरवरस "	सामान्य यत्र "
शूलदावानलरस १२६४	माषेंडरी "
परिणामशूल पर मंडूर "	घात्रीलोह "
तारमंडूर.... "	पायस "
भीममंडूर १२६५	अन्न १२७४
लोहगुग्गुलु "	अन्न "
मारिकेडक्षार १२६६	अन्न "
पथ्याद्ये लोह "	सामान्यचिकित्सा "
लोहादि लेह "	सामान्यचिकित्सा "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
भक्षण १२७४	उद्गारछर्दिनिरोधज उदावर्त्त की चिकित्सा १२८२
गुडमंडूर १२७५	उद्गार (डकार) जन्य उदावर्त्त पर. "	"
शतावरिमंडूर "	छर्दिजन्य उदावर्त्त पर	"
शूलरोग में पथ्य १२७६	क्षुधातृपोत्य उदावर्त्त पर	१२८३
शूलरोग में अपथ्य "	श्रमनिद्रोत्थ उदावर्त्त पर	"
आनाहोदावर्त्तकर्मविपाकः.		सामान्य चिकित्सा	"
ज्योतिःशास्त्र का अभिप्राय	१२७७	विधारादि छेप	"
उदावर्त्तनिदान	"	रसोनादि प्राश	१२८४
घातनिरोधजन्य उदावर्त्त	"	कदलीफल योग	"
मल रोकने का उदावर्त्त	"	पंचमूलक्षीर	"
मूत्र रोकने का उदावर्त्त	१२७८	सुवर्चलादि पेय	"
जंभाई रोकने का उदावर्त्त	"	धात्रीस्वरस ...	"
अश्रुपात रोकने का उदावर्त्त	"	वत्यादि यूप	"
छींक रोकने का उदावर्त्त	"	शामादि काथ	१२८५
डकार रोकने का उदावर्त्त	"	नाराचचूर्ण	"
वमन रोकने का उदावर्त्त	१२७९	दंत्यादिक वर्ती	"
वीर्य रोकने का उदावर्त्त	"	हिंम्वादि चूर्ण	"
भूँक रोकने का उदावर्त्त	"	भद्रदावादि चूर्ण	१२८६
प्यास रोकने का उदावर्त्त	"	हरीतक्यादि चूर्ण	"
श्यासोच्छ्वास रोकने का उदावर्त्त	"	गुडाष्टक	"
निद्राविघातजन्य उदावर्त्त	१२८०	शुष्कमूलादि घृत	"
रूक्षादि कुपितवातज उदावर्त्त....	"	त्रिकडुकाद्या वर्ति	१२८७
अधोवातजन्य उदावर्त्त की चिकित्सा. "	"	मदनफलादिक फलवर्ति	"
मलनिरोधज उदावर्त्त की चिकित्सा. "	"	हिंम्वादि वर्ति	"
मूत्रनिरोधज उदावर्त्त की चिकित्सा. १२८१	"	उदावर्त्त पर पथ्य	"
जंभाईनिरोधज उदावर्त्त की चिकित्सा. "	"	उदावर्त्त पर अपथ्य....	"
वाग्पावरोधज व छींक के रोकने के उदावर्त्त की चिकित्सा	"	आनाहोरोग निदान....	१२८८
जंभाईजनित उदावर्त्त की चिकित्सा. "	"	आमजन्य आनाह	"
छींकजन्य उदावर्त्त की चिकित्सा. १२८२	"	पक्काशपज आनाह	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
उदावर्त्त के असाध्य लक्षण	१२८८	वातगुल्म पर हनुपादि घृत	१२९७
सामान्यविधि	"	चित्रकादि घृत	"
चिकित्सापरिभाषा.....	१२८९	हिंवादि घृत	"
आनाह....	"	त्र्युपणादि घृत	१२९८
हिंवादि चूर्ण	"	तैल	"
फलचूर्ण....	"	कुष्ठादि तैल	"
तुंबुरुचूर्ण	१२९०	विडंगादि कल्क	"
वचादि चूर्ण	"	गुग्गुल योग	१२९९
त्रिवृत्तादि गुटिका ..	"	कुलत्थादि क्वाय	"
शुद्धादि वटी	"	हिंवादि चूर्ण	"
दारुपट्टकादि लेप	१२९१	वातगुल्म पर विरेचन	"
दारुपट्टकादि योग....	"	शिशिवाडवरस	"
स्थिरादि घृत	"	पथ्य	१३००
उदावर्त्त पर पथ्य	"	पित्तगुल्म के लक्षण	"
उदावर्त्त पर अपथ्य	१२९२	द्राक्षादि चूर्ण	"
अथ गुल्मरोगकर्मविपाकः.		पित्तगुल्म पर विरेचन	"
गुल्मरोग निदान	१२९३	पित्तगुल्म पर पथ्य....	१३०१
गुल्मरोग के स्थान....	"	द्राक्षादि घृत	"
गुल्म का रूप	१२९४	आमलक्यादि घृत....	"
संप्राप्ति....	"	त्रायमाणादि घृत ...	"
पूर्वरूप	"	कफगुल्मनिदान और लक्षण	१३०२
गुल्म के साधारण रूप	"	सामान्य चिकित्सा....	"
वातगुल्म के लक्षण	१२९५	यवानी चूर्ण	"
वातगुल्म पर साधारणक्रिया	"	हिंवादि चूर्ण	१३०३
सामान्यचिकित्सा	"	पंचकोलादि घृत	"
सामान्य उपचार	१२९६	कफगुल्म पर पथ्य....	१३०४
मातुलुंगादि योग	"	तिलादि लेप और सेक	"
शून्यादि योग	"	सेक	"
केतकीक्षार योग	"	दशमूलादि तैल	"
वाहणीमंड योग	"	त्रिवृत्तादि घृत	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
विद्याधर रस	१३०५	मूलिकादि धारण	१३१४
नाराच रस	"	निंबादि वटी	"
द्वंद्वजगुल्म निदान और लक्षण.	"	सञ्जादि कांकायन वटी	"
द्राक्षादि कल्क	१३०६	यवान्यादि गुटिका	"
सैंधवादि तैल	"	स्वर्जिका वटी ...	१३१५
नाराच रस	"	प्रवालपंचामृत	"
करंजादि पुटपाक	"	हिंवादि घृत	१३१६
सन्निपातगुल्म	१३०७	धात्री घृत	"
सामान्य	"	पट्पलघृत	१३१७
वरुणादि क्वाथ	"	दधिक योग	"
वरुणक्वाथ मध्यविद्रधि पर	"	सूहिक्षीराद्य घृत	"
वरुणादि क्वाथ	"	अग्निमुख चूर्ण	१३१८
जयंत्यादि दो क्वाथ	१३०८	पिप्पल्यादि चूर्ण	"
राजशृक्षादि पुटपाक	"	हिंवादि चूर्ण	१३१९
अभयादि योग	"	चित्रकादि चूर्ण	"
संप्राप्तिपूर्वक स्त्रीगुल्म	१३०९	त्रिफलादि चूर्ण	"
दंत्यादि वटी	१३१०	कुमारी योग	१३२०
पलाश घृत	"	नाराच चूर्ण	"
शताह्वादि कल्क	"	पूतिकादि चूर्ण	"
तिलक्वाथ	"	हस्तिकर्णादि चूर्ण	"
भाङ्गर्यादि चूर्ण	"	हिंवादि चूर्ण	१३२१
तिलमूलादि चूर्ण	१३११	विद्याधर रस	"
मुंब्यादि चूर्ण	"	बडवानल रस	१३२२
गुल्म के असाध्य लक्षण	"	गुल्मोदरगजाराति रस	"
दूसरे लक्षण	१३१२	उद्दामाल्य रस	"
तीसरा लक्षण	"	नाराच रस	१३२३
पुनर्नवादि कल्क	१३१३	गुल्मकुठार रस	"
चित्रकादि क्वाथ	"	गुल्ममदेभसिंह रस	"
नादेयादि क्वाथ	"	वज्रसार	१३२४
पारदादि वटी	"	गुल्मरोग पर क्षार	१३२५

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
वृत्ती १३२५	कफज हृद्रोगपर सामान्य चिकित्सा.....	१३३५
चविकासव " "	त्रिवृतादि चूर्ण " "
कुमारी आसव १३२६	सूक्ष्मैलादि चूर्ण " "
दंतीहरीतकी लेह १३२७	सन्निपातज हृदयरोग निदान " "
चिंचाशंख वटी १३२८	त्रिदोषज हृद्रोग की चिकित्सा.....	१३३६
क्षारादि चूर्ण " "	कृमिज हृद्रोग निदान " "
सूर्यपुट से शंखद्राव..... " "	हृदयरोग के उपद्रव " "
द्वितीय शंखद्राव १३२९	कृमिहृद्रोग की सामान्य चिकित्सा.	१३३७
तीसरा शंखद्राव " "	गोमूत्रपान " "
क्षाराष्टक १३३०	दुग्धपान " "
शरपुंखक्षार " "	पौष्करादि काय " "
गुल्मरोग पर पथ्य..... " "	दशमूलादि काय " "
गुल्मरोग पर अपथ्य १३३१	परंदादि काय १३३८
हृद्रोगकर्मविपाकः.		वाहीकादि काय " "
ज्योतिःशास्त्रद्वारा निर्णय १३३२	नागरादि काय " "
हृद्रोग निदान " "	नागमूलादि दुग्धपान " "
संप्राप्ति..... " "	हिंगुपंचक चूर्ण १३३९
वातजन्य हृदयरोग.... " "	पुष्कर चूर्ण " "
पंचमूल काय १३३३	हरिणशृंग भस्म " "
पिप्पल्यादि चूर्ण " "	हिंम्वादि चूर्ण " "
पुष्करादि कल्क " "	ककुभत्वक् चूर्ण " "
पुनर्नवादि तैल " "	कटुक्यादि चूर्ण १३४०
पित्तजन्य हृदयरोग निदान " "	हरीतक्यादि चूर्ण " "
सामान्य चिकित्सा.... १३३४	पाठादि चूर्ण " "
द्राक्षादि चूर्ण " "	गोधूमादि चूर्ण " "
श्रीपण्यादि रेचन और वमन " "	बल्लभ घृत १३४१
हारहरादि चूर्ण " "	यष्ट्यादि घृत " "
अर्जुनादि क्षीर " "	बलादि घृत " "
कसेरुकादि काय १३३५	हृदयार्णव रस " "
कफजहृद्रोग निदान.... " "	रसायन.... " "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
हृद्रोग पर पथ्य ...	१३४२	सामान्य क्रम	१३४९
हृद्रोग पर अपथ्य	"	लोहभस्म योग	"
मूत्रकृच्छ्रकर्मविपाकाः.		रसपान. ...	"
ज्योतिष ...	१३४३	पुरीपज मूत्रकृच्छ्र	"
मूत्रकृच्छ्र निदान	"	सामान्य चिकित्सा....	१३५०
संप्राप्ति	१३४४	गोधुरकाय ...	"
वातमूत्रकृच्छ्र निदान	"	आमलक्यादि काय	"
वातमूत्रकृच्छ्र पर सामान्ययत्न....	"	एलाचूर्ण	"
काय	"	खर्जुरादि चूर्ण	"
त्रिकंटकादि काय	"	त्रिफलादि कल्क	१३५१
एलादि चूर्ण	१३४५	अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र	"
पित्तमूत्रकृच्छ्र निदान	"	अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र	"
कुशुभाशादि काय....	"	काय	"
शतावरी काय	"	एलादि काय	"
एवाहबीजपान	१३४६	शुक्रज मूत्रकृच्छ्र	"
द्राक्षादि कल्क	"	सामान्य चिकित्सा	१३५२
नारिकेलजलपान	"	तृणपंचमूल घृत ...	"
रक्तनारिकेलजलपान	"	बलादि क्षीर	"
कफजन्य मूत्रकृच्छ्र निदान	"	पथरी और शर्करा का निदान....	"
कफजन्य मूत्रकृच्छ्र की सामान्य	"	मूलपंचक योग	"
चिकित्सा	"	दाडिमादि रसपान....	१३५३
एलादि चूर्ण	१३४७	निदग्धिकारसपान	"
सित्तदारुकादि चूर्ण....	"	यवक्षारपान	१३५४
सन्निपातमूत्रकृच्छ्र निदान	"	यवक्षारपान	"
धृहत्यादि काय	"	पाषाणभेद काय	"
शतावरीयादि काय	१३४८	हरीतक्यादि काय	"
दुग्ध योग	"	पाषाणभेदादि काय	"
यवक्षार	"	गोधुरादि काय	"
गोकंटकादि छेह	"	हरीतक्यादि काय	१३५५
शल्यज मूत्रकृच्छ्र	१३४९	यवादि काय	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
कंटकादि घृत १३५५	मूत्राघात के असाध्य लक्षण १३६६
शतावर्यादि घृत "	भस्तिकुंडलिका के लक्षण "
त्रिकंटकादि गुग्गुलु १३५६	साध्यासाध्यत्वकथन १३६७
गोक्षुरादि लेप "	मूत्राघात की सामान्य चिकित्सा. "
किंशुकस्वेद "	गोक्षुरादि घटी "
आखुविट्कल्क "	पयादि १३६८
त्रपुसादि बीजपूर रस १३५७	ऐर्वारुषीजादि कल्क "
मंथादि योगत्रय "	सामान्य यत्र "
हरिद्रादि योग "	धीरतर्वादि काथ १३६९
भृष्टेक्षुरसपान १३५८	सशूलमूत्राघात पर.... "
कुटज योग "	त्रिफलादि काथ "
लघुलोकेश्वर "	गोधावन्यादि काथ.... "
चंद्रकला रस "	दशमूलादि काथ १३७०
बृहद्रोक्षुराद्य लेह १३६०	गोक्षुरादि काथ "
मूत्रकृच्छ्र पर पथ्य.... १३६१	प्रकारांतर "
मूत्रकृच्छ्र पर अपथ्य १३६२	वरुणादि काथ "
मूत्राघातनिदानचिकित्सा.		शतावर्यादि स्वरस "
मूत्राघात के १२ भेद "	तिलक्षार योग १३७१
घातकुंडलिका के लक्षण १३६३	कर्पूरवर्ती "
अघीला के लक्षण "	निदग्धिकास्वरस "
घातभस्ति के लक्षण "	शिलाजतु योग "
मूत्रातीत के लक्षण १३६४	कर्कटीबीजादि चूर्ण.... "
मूत्रजठर के लक्षण "	भद्रादि चूर्ण १३७२
मूत्रोत्संग के लक्षण "	स्वगुप्तादि चूर्ण "
मूत्रसय के लक्षण "	उशीरादि चूर्ण "
मूत्रग्रंथी के लक्षण १३६५	क्षीद्राद्य घृत १३७३
मूत्रशुक्र के लक्षण "	धान्यकादि घृत "
उष्णवात के लक्षण.... "	चित्रकाद्य घृत "
मूत्रसाद के लक्षण.... "	मूत्राघात पर पथ्य १३७४
बिह्विपात लक्षण १३६६	मूत्राघात पर अपथ्य "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
अश्मरीरोगकर्मविपाकः.		त्रिविक्रम रस १३८१
शांति १३७५	रसभस्म योग "
ज्योतिःशास्त्र का मत "	लघुलोकेश्वर रस "
अश्मरी (पथरी) निदान "	गंधर्वादि कल्क १३८२
संमाप्ति १३७६	तिलादि क्षार "
अश्मरी का पूर्वरूप.... "	शिलाजतु योग "
अश्मरी के सामान्य लक्षण "	हिंवादि योग "
वाताश्मरी के लक्षण "	शृंगबेरादि कल्क "
अश्मरी की सामान्य चिकित्सा....	१३७७	आनंदभैरवीवटी १३८३
शुंझादि चूर्ण "	मंजिष्ठादि चूर्ण "
यवादि घृत "	त्रिकंटकादि चूर्ण "
धीरतर्वादि काथ "	केशर योग "
अन्न "	पापाणभेदी रस १३८४
वरुणमूल काथ १३७८	तिलपुष्पक्षार योग.... "
पित्ताश्मरी "	गोपालकर्कटीमूल योग "
पापाणभेदि काथ "	अर्कपुष्पी कल्क "
कफ की पथरी का लक्षण "	शतावरीमूल रस "
इस का बालकों के होना "	वरुणादि काथ "
शिशुकाथ १३७९	काथ १३८५
शुक्राश्मरी निदान "	शिशुमूल काथ "
शुक्राश्मरी के कार्य.... "	तुपकपाय "
शुक्राश्मरी की सामान्य चिकित्सा.	"	शुंझादि काथ "
यवक्षार योग "	आकल्लकादि काथ.... १३८६
कुटज योग १३८०	पापाणभेदादि काथ "
शर्कराश्मरी निदान "	कुलित्य काथ "
शर्करा के असाध्य लक्षण "	कृष्णोडस्वरस १३८७
पापाणभेद रस "	वरुणादि घृत "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
पापाणभेद पाक १३८७	स्त्रियों के प्रमेह न होने में कारण.... १३९६
वरुणादि गुड १३८८	प्रमेह के असाध्यलक्षण "
अश्मरी (पथरी) पर पथ्य १३८९	मधुमेहोत्पत्ति और कारण "
पथ्य "	दो प्रकार के मधुमेहों के कारण.... "
अश्मरी पर अपथ्य १३९०	आवरण के लक्षण.... १३९७
प्रमेह रोग कर्म विपाकः.		मधुमेहप्रवृत्तिनिमित्त "
सशूलप्रमेह का कर्मविपाक "	लोघ्रादि काय "
वातप्रमेह कर्मविपाक "	कफजन्यमेहों पर क्रम से दश काय. " "
मधुमेह का कर्मविपाक १३९१	शैर्मेह.... १३९८
प्रमेह निदान "	पिष्टप्रमेह "
कफादि प्रमेहों की संप्राप्ति "	सिकताप्रमेह "
कफादिजन्य प्रमेहों का साध्यासा-		उदकप्रमेह "
ध्यत्व १३९२	सांद्रप्रमेह "
प्रमेहों में दोष और दूष्य तथा संख्या. " "	लालाप्रमेह "
पूर्वरूप "	शुक्रमेह.... १३९९
प्रमेह के सामान्यलक्षण "	शीतप्रमेह "
प्रमेह के बीस भेद १३९३	इक्षुप्रमेह "
कफजन्य उदकादि दश प्रमेह.... "	सुराप्रमेह "
पित्तप्रमेह के छः भेद १३९४	पित्तप्रमेह पर चार काय "
क्षारादि प्रमेहों के लक्षण.... "	पित्त की छः प्रमेहों पर क्रम से	
वातजन्यमेह "	छः काय "
वसादि मेहों के लक्षण १३९५	क्षारप्रमेह १४००
कफप्रमेहों के उपद्रव "	हरिद्राप्रमेह "
पित्तप्रमेहों के उपद्रव "	मांजिष्ठप्रमेह "
वातप्रमेहों के उपद्रव "	शोणितप्रमेह "
असाध्यलक्षण "	दुष्टरक्तज प्रमेह "
		नीलप्रमेह "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
सर्पिप्रमेह वातजन्य १४०१	एलादि चूर्ण १४०६
छिन्नादि काथ ११	कर्कट्यादि चूर्ण ११
हस्तिमेह ११	त्रिफलाचूर्ण ११
हस्तिमेह पर क्षार.... ११	गुग्गुल.... ११
वसामेह और हस्तिमेह पर काथ.	११	गोधुरादि गुग्गुल १४०७
क्षौद्रमेह और सर्पिमेह पर काथ.	११	चंद्रकलावटी ११
द्वितीययोग १४०२	चंद्रप्रभावटी १४०८
वसामेह.... ११	सिंहामृतघृत १४०९
कफपित्तप्रमेह पर ११	हरिद्रादि तैल ११
कफवातजन्य प्रमेह पर ११	सुपारीपाक १४१०
पित्तवातज प्रमेह ११	अस्रगंधपाक ११
त्रिफलादि काथ १४०३	शाल्मलीपाक १४११
त्रिफलादे काथ दूसरा ११	द्राक्षापाक ११
पलाशपुष्पकाथ ११	अभ्रकयोग १४१२
प्रमेहनाशक योगत्रय ११	नागभस्मयोग ११
विडंगादि काथ ११	गंधकयोग ११
प्रकारांतर १४०४	शिलाजतुयोग ११
चणकयोग ११	स्वर्णमासिकभस्मयोग १४१३
योगचतुष्टय ११	बहुमुत्रमेह का निदान ११
शालादि कल्क ११	दूसरा प्रकार ११
वंग तथा नागभस्म.... १४०५	त्रिफलादे योग १४१४
द्विनिशादि हिम ११	देवदार्व्यारिष्ट ११
गुडूची तथा धात्रीरसयोग ११	लोध्रासव १४१५
अंकोलमादि योग ११	तालकेश्वर रस ११
भूयाऽपादि योग ११	बंगेश्वर रस १४१६
कतकबीजयोग ११	आनंदभैरव रस ११
शाल्मलीस्वरस ११	प्रमेहचद्द रस ११

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
हरिशंकर रस १४१७	संप्राप्ति १४२६
मेघनाद रस "	बढी हुई मेद के उपद्रव "
निंबवीज कल्क "	मेद रहने के स्थान.... "
मेहारि रस "	मेदरोग में जठराग्नि प्रदीप्त होने में	
चंद्रोदय रस "	कारण १४२७
वंगेश्वर रस १४१८	बढी मेद नाश का कारण होती है	
मेहकुंजरकेसरी रस.... "	यह कथन "
पंचलोहरसायन १४१९	अत्यंत मेद बढने का परिणाम.... "
महावंगेश्वर रस "	स्थूल लक्षण "
वंगभरम १४२०	उबटना....	... १४२८
वसंतकुसुमाकर रस "	सामान्य योग "
जलजामृत रस १४२१	चव्यादि चूर्ण "
प्रमेह की उपेक्षा से प्रमेह पिटिका-		फलत्रिकादि चूर्ण "
ओं का होना "	मेद पर सामान्य चिकित्सा "
पिटिका के कारण १४२२	नवकगुग्गुलु १४२९
दश पिटिकाओं के लक्षण "	मेद पर उपचार "
असाध्य पिटिका १४२३	तालपत्र का क्षार "
प्रमेह के साध्य लक्षण "	मोचरसादि लेप "
पिटिका के उपद्रव.... "	हरीतक्यादि उद्घर्तन "
पिटिका की सामान्य चिकित्सा. "	उबटना.... १४३०
न्यग्रोधादि चूर्ण १४२४	फाय "
पिटिकाओं पर लेप "	त्र्यूपणाद्य लेह "
प्रमेह पर पध्य "	उबटना.... "
प्रमेहरोग में अपध्य १४२५	दच्चूलादि उद्घर्तन १४३१
मेदोरोगनिदानचिकित्सा.		वासादि लेप "
मेदरोग निदान १४२६	त्रिफलादि तैल "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
महासुगंधि तैल १४३२	पित्तोदर के लक्षण.... १४३९
बडवाग्नि रस "	पित्तोदर का सामान्य यत्र १४४०
रसभस्म योग १४३३	सातलादि घृत "
त्रिमूर्ति रस "	त्रिवृतादि घृत "
मेद पर सामान्य उपचार "	कफोदर के लक्षण "
मेदरोग पर पथ्य "	कफोदर का यत्र १४४१
मेदरोग पर अपथ्य.... १४३४	सन्निपातोदर का निदान "
उदररोगकर्मविपाकः.		सन्निपातोदर १४४२
शांति १४३५	नागरादि तैल "
जलोदर का कर्मविपाक "	दूषोदरसंज्ञा "
शांति "	शंखिनी घृत "
प्रकारांतर "	प्लीहोदर १४४३
शांति १४३६	प्लीहोदर पर सामान्य यत्र "
प्लीहोदरकर्मविपाक.... "	शरपुंखामूल कल्क.... "
शांति "	तक्र १४४४
उदर निदान "	रोहितादि कल्क "
उदररोग की संप्राप्ति "	पिप्पल्यादि काय "
उदररोगों का सामान्य लक्षण.... १४३७	शाल्मलीपुष्पपाक "
उदर की संख्या "	लवणादि तक्र "
वातोदर के लक्षण "	शुक्तिक्षार योग "
वातोदर का सामान्य यत्र १४३८	परंडभस्म योग १४४५
तक्रपान.... "	भल्लातकादि मोदक "
चूर्ण कपाय "	लशुनादि "
शिलाजतुचूर्ण "	सौभागजनक योग "
कुष्ठादि चूर्ण १४३९	रक्तस्त्राव और दाग "
सद्द्रादि चूर्ण "	प्लीहोदर पर शंखनाभि चूर्ण १४४६
वातोदर पर घृत "	कुष्ठादि चूर्ण "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
लघुहिंवादि चूर्ण १४४६	जल निकालने में नियम १४५३
सिंधवादि चूर्ण "	जल निकालने पर व्रण पर लेप. १४५४
नागवटी "	जलोदर लक्षण "
विडंगादि चूर्ण १४४७	छाछ "
यवान्यादि चूर्ण "	जलोदरारि रस १४५५
वज्रक्षार "	जलोदर पर रेचन "
क्षारादि योग १४४८	पेट फूलने पर यत्न "
क्षारभावितपिप्पली "	छः महीने तक नियम "
अर्कपत्रक्षार "	अन्न "
अग्निमुखलवण "	साध्यासाध्य विचार १४५६
रोहितकघृत १४४९	असाध्य लक्षण "
चित्रकाष्ठ घृत १४५०	असाध्य लक्षण "
रक्तस्त्राव "	यत्र १४५७
शिरावेध "	रेचन "
यकृतोदर "	ज्योतिष्मतीतैल "
दोषसंबंध "	गोमूत्र योग "
यकृद्दाल्युदर १४५१	उदर पर यत्नांतर "
पिप्पली कल्क "	वर्द्धमानपीपल "
सामान्ययकृतोपचार "	जलोदर पर योग १४५८
वद्धगुदोदर "	देवदान्वादि लेप "
हृषुपादि चूर्ण १४५२	प्रयोगांतर १४५९
वस्तिप्रकार "	चव्यादि १थ "
उत्तरवस्ति "	देवदुमादि "
क्षतोदर.... "	नारायण चूर्ण "
वेधक्रिया तथा पाटनक्रिया १४५३	हृषुपादि चूर्ण १४६०
वेधस्थान "	उदररोग पर चूर्ण १४६१
वेध करने का प्रकार "	पटोलादि चूर्ण "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
उदर पर बिंदु घृत.... १४६१	इच्छाभेदी रस १४६५
पंचमूल घृत १४६२	शोफोदर "
नाराच घृत "	हरीतक्यादि काथ "
बिंदुघृत १४६३	पुनर्नवादि योग १४६६
त्रिवृतादि घृत "	पुनर्नवादि काथ "
हिंवादि घृत १४६४	शोथोदर चिकित्सा "
उदर पर वंगेश्वर रस "	माहिषमूत्रपान "
त्रैलोक्यडंबर "	विल्वादि काथ १४६७
रेचन १४६५	उदररोग पर पथ्य "
		उदररोग पर अपथ्य १४६८

इत्यनुक्रमणिका समाप्ता.

मुस्तक मिलनेका ठिकाना—
 गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास
 लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर छापाखाना
 कल्याण—मुंबई.

वैद्यकग्रन्थाः ।

१ हारीतसंहिता भाषाटीकासहित	३-०
२ अष्टाङ्गहृदय (वाग्भट) भाषाटीका अल्पुत्तम	८-०
३ बृहन्निघण्टुरत्नाकर प्रथमभाग	३-०
४ बृहन्निघण्टुरत्नाकर द्वितीयभाग	३-०
५ बृहन्निघण्टुरत्नाकर तृतीयभाग	३-८
६ बृहन्निघण्टुरत्नाकर चतुर्थभाग	२-८
७ रसराजसुन्दर भाषाटीकासह	३-४
८ शार्ङ्गधर निदानसह भाषाटीका पं० दत्तराम चौबेकृत	३-०
९ अमृतसागर कोशसहित हिन्दी भाषामें नवीन छपके तैयार है की० रु० २ आ० ८, तथा रफू	२-४
१० अमृतसागर मारवाडी भाषा	२-०
११ चिकित्साखण्ड भाषाटीका प्रथमभाग	४-०
१२ चिकित्साक्रमकल्पवल्ली संस्कृत काशिनाथकृत	२-८
१३ माधवनिदान उत्तम भाषाटीका	२-८
१४ अंजननिदान भाषाटीकाअन्वयसहित	०-८
१५ योगतरङ्गिणी बहोतही उत्तम	२-०
१६ वीरसिंहावलोकन ज्योतिषशास्त्रादिकर्मविपाकचिकित्सा नवीन टाइपमें अतिउत्तम	१-१२
१७ राजवल्लभनिघंटु भा० टी०	१-८
१८ लोलिवराज वैद्यजीवन संस्कृतटीका और भा. टी.	१-०
१९ अनुषामदर्पण भाषाटीकासह	०-१०
२० मदनपालनिघंटु भा० टी०	२-४
२१ ज्ञाननैपज्यमञ्जरी भाषाटीकासह... ..	०-३

पुस्तकें मिलनेका ठिकाना.

लक्ष्मीविकटेश्वर छापाखाना कल्याण-मुंबई.



अजीर्ण



मन्दाग्निहर

मन्दोदराग्निर्भवति सति द्रव्येण वै यजेत् ।

प्राजापत्यव्रतं कृत्वा भोजयेत्स शतं द्विजान् ॥

अर्थ—जो पुरुष धनवान होकर (बलि वैश्वदेवादि) यज्ञ नहीं करे उस के मन्दाग्नि का रोग होता है । इस पाप के कारण इस का प्रायश्चित्त यह है कि वह तीन प्राजापत्य व्रत करे और सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥

पाराशर

गोमांसभक्षको मन्दजठराग्निर्भवेन्नरः । प्राजापत्यं चरेत्कृद्म-
तिकृद्मं तथैव च ॥ अग्निमन्त्रं जपेन्नित्यं श्रीसूक्तं च विचक्षणम् ॥

अर्थ—पाराशर संहिता में लिखा है कि जो प्राणी पूर्व जन्म में गोमांस भक्षण करता है उस के इस जन्म में मन्दाग्नि का रोग होता है । इस पाप के दूर करने को कृच्छ्रातिकृद्म प्राजापत्य व्रत करे और “अग्निरादिम” इस मंत्र का तथा श्रीसूक्त का जप करे तो यह रोग नष्ट होवे ॥

कर्मविपाकसंग्रह

अकारणं गरं दत्त्वा प्रमारयति यः पुनः । स मन्दाग्निर्भवेदेव
मृतकल्पश्च जायते ॥ याते रुद्रेण सूक्तेन चरुं च जुहुयाद्घृतम् ।
अष्टोत्तरयुतं सम्यक् तत्पापस्यापनुत्तये ॥ तामग्निवर्णामिति
च जपेत्सूक्तं सहस्रकम् । भोजयेद्ब्राह्मणान् सम्यक् चत्वारिंश-
त्सुखी भवेत् ॥

अर्थ—जो प्राणी पूर्वजन्म में बिना कारण दूसरे को विष (जहर) देकर मार डालता है वो इस जन्म में मन्दाग्निरोगी होता है । उस का जीना मुँद के समान है । उस को इस का प्रायश्चित्त यह करना चाहिये कि “याते रुद्र” इस सूक्त से चरु और घृत का एक ही आठ बार हवन करे तथा “तामग्निवर्णा” इस सूक्त का एक हजार जप करे । तथा १० ब्राह्मणों को भोजन करावे तो इस प्राणी का मन्दाग्नि रोग दूर होवे ॥

जठराग्निनिदान

मन्दस्तीक्ष्णोतिविषमः समश्चेति चतुर्विधः ।

कफपित्तानिलाधिक्यात्तत्साम्याज्जाठरोऽनलः ॥

अर्थ—मनुष्य के कफ की प्रकृति से मंदाग्नि, पित्त की प्रकृति से तीक्ष्णाग्नि, वात की प्रकृति से विषमाग्नि, तथा वात, पित्त, कफ इनके समान होने से समाग्नि होती है। ऐसे अग्नि चार प्रकार की है—इस में मंदाग्नि को दुर्जय होने से प्रथम कही और (जाठर) शब्द कहने से धातु की अग्नि का त्याग जानना ॥

विषूच्यादिनिदान

अजीर्णमामं विष्टब्धं विदग्धं च यदीरितम् ।

विषूच्यलसकौ तस्माद्भवेच्चापि विलम्बिका ॥

अर्थ—आम, विष्टब्ध और विदग्ध ये जो अजीर्ण कहे हैं उन से विषूचिका (हैजा), अलस और विलम्बिका पैदा होय हैं। इन में चौथे रस शेष अजीर्ण को विषूच्यादि उत्पादक नहीं लिखा है इस का कारण यह है कि उस रसाजीर्ण को अपरिणाममात्रत्व करके विषूचिका आदि के आरंभत्व स्वभावादिको के कहने से आम, विदग्ध और विष्टब्ध इन से क्रमपूर्वक विषूचिका, अलस, विलम्बिका ये प्रगट होती हैं ऐसे कार्तिक-कुंड आचारी कहता है सो असत्य है क्योंकि विदग्धाजीर्ण को विलम्बिका का प्रगट करना असम्भव है क्योंकि उस विलम्बिका को आगे कफवात से प्रगट होना कहेंगे और विदग्धभाव को पित्तजन्यता है यासे ये मत मन्तव्य नहीं है। इसी कारण तीनों अजीर्ण मिलकर विषूचिका आदि को प्रगट करते हैं यह वकुल आचारी का मत है ॥

चतुर्विध अग्नि के कार्य

विषमो वातजान्‌रोगांस्तीक्ष्णः पित्तनिमित्तजान् ।

करोत्यग्निस्तथा मन्दो विकारान्कफसंभवान् ॥

अर्थ—विषमाग्नि वातजन्य ८० रोगों में से किसी रोगको प्रगट करे और सामान्य ज्वरातिसारादिक को प्रगट करे। तीक्ष्णाग्नि पित्त के ४० रोगों में से किसी रोगको प्रगट करे। उसी प्रकार मंदाग्नि कफजन्य २० रोगों में से किसी रोग को पैदा करे और आलस्यादिक को उत्पन्न करे ॥

प्रकारांतर

समासमाग्नेरशिता मात्रा सम्यग्विपच्यते । स्वल्पापि नैव

मन्दाग्नेर्विपमाग्नेस्तु देहिनः ॥ कदाचित्पच्यते सम्यक्कदाचित्र
विपच्यते । मात्रातिमात्राप्यशिता सुखं यस्यविपच्यते ॥
तीक्ष्णाग्निरिति तं विद्यात्समाग्निः श्रेष्ठ उच्यते ।

अर्थ—समाग्निवाले पुरुष के यथोचित आहार भले प्रकार पाचन होता है और मन्दाग्निवाले पुरुष के थोड़ा भी आहार यथार्थ नहीं पचता और विपमाग्निवाले मनुष्य के कभी अच्छी तरह से अन्न पचे और कभी नहीं पचे और बहुत भोजन करा भी जिस के सुखपूर्वक पच जावे उस को तीक्ष्ण अग्नि कहते हैं । इन चारों प्रकार की अग्नि में समाग्नि उत्तम है । तीक्ष्णाग्नि के कहने से भस्मक का ग्रहण नहीं करना चाहिये क्योंकि अत्यंत तीक्ष्णाग्नि को भस्मक कहते हैं उस के लक्षण चरक में कहे हैं ॥

हिंमवाष्टकचूर्ण

त्रिकटुकमजमोदा सैन्धवं जीरके द्वे समचरणधृतानामष्टमो
हिड्ढुभागः । प्रथमकवलभुक्तं सर्पिषा चूर्णमेतज्जनयति जठरा-
ग्निं वातगुल्मं निहन्ति ॥

अर्थ—साँठ, काली मिरच, छोटी पीपल, अजमोद (अजमायन) सैंधानिमक, सफेद जीरा, काला जीरा और हींग ये सब औषध समान भाग लेवे । इस चूर्ण को भोजन के समय दालभात या खिचड़ी में डाल धी मिलाय के पहले इस का ग्रास (गस्सा) लेवे फिर यथेच्छ भोजन करे तो जठराग्नि प्रबल हो और वायुगोला आदि अनेक रोग दूर हो । इस में हींग को धी में भून के डालनी चाहिये ॥

जीरकादिचूर्ण

जरणरुचकशुण्ठीपिप्पलीतीक्ष्णवेल्लं सलवणमजमोदाहिड्ढुप-
थ्येतिकर्पम् । पृथगथ पलमात्रा स्यान्नित्चूर्णमेपां जननमुदर-
वह्नेः पाचनं रोचनं च ॥

अर्थ—जीरा, संचरनिमक, साँठ, पीपल, काली मिरच, वायविडंग, सैंधानिमक, अजमोद, हींग और हरड ये प्रत्येक औषधी एक २ तोले लेवे; तथा निसोय ४ तोले लेवे । इन सब को कूटपीस चूर्ण करे । इस का सेवन करे तो जठराग्नि को दीपन करे, पाचक और रुचि को उत्पन्न करता है ॥

१ सर्वत्र भक्षण करने के चूर्ण आदि में जहा २ अजमोद लिखा है उस जगह अजमायन केना चाहिये क्योंकि अजमायन अंतःसमार्जक है, अजमोद नहीं है । ॥१॥

त्रिसंभवान् । पक्वान्नमाशु धात्वादीन्संक्षिप्तं नाशयेत्तनुम् ॥
क्षणाद्भुक्तं भवेद्भस्म स रोगो भस्मकः स्मृतः ।

अर्थ—इस प्राणीका कफ क्षीण होवे तब पित्त वातके साथ अपने स्थानमें प्राप्त हो जठराग्निको अत्यंत बढ़ावे उसको भस्मकरोग कहते हैं । यह तृपा, दाह, श्वास, मूर्च्छा, आदि अति अग्निके रोगोंको करे है । यह अन्नको पचाय कै फिर रसरक्तादि धातुओंको पचाय देहको नष्ट करे । इस रोगमें भोजन कराहुआ पदार्थ क्षणमात्रमें पच जाता है इसीसे इसको भस्मकरोग कहा है ।

चिकित्साक्रम

तं भस्मकं गुरुस्निग्धसान्द्रमण्डहिमस्थिरैः ।

अन्नपानैर्नयेच्छान्तिं पित्तत्रैश्च विरेचनैः ॥

अर्थ—भस्मक रोगवाले को भारी और चिकने ऐसे अन्न तथा कठोर पदार्थ, मंड, हिम, तथा बहुत देर में पचनेवाले अन्न और पान तथा पित्तनाशकारी यत्न इन से दूर करे तथा पित्तनाशक जुलाब देवे ॥

भस्मकचिकित्सा

कफे पूर्वं जिते पित्तं मारुते चानलः समः ।

समधातोः पचत्यन्नं पुष्ट्यायुर्वलवर्धनः ॥

अर्थ—कफ पित्त और वायुको प्रथम जीतनेपर समानधातु मनुष्य की अग्नि को समान कर देती हैं इसीमें अन्न उत्तम प्रकारसे पचाकर आयुष्य पुष्टी और बल को बढ़ाने वाली होती है ॥

अजीर्ण का निदान

अत्यम्बुपानाद्विपमाशनाच्च संधारणात्स्वप्नविपर्ययाच्च ।

कालेपि सात्स्यं लघुचापि भुक्तमन्नं न पाकं भजते नरस्य ॥

ईर्ष्याभयक्रोधपरिक्षितेन लुब्धेन शुग्दैर्न्यनिपीडितेन ।

प्रद्वेषयुक्तेन च सेव्यमानमन्नं न सम्यक्परिपाकमेति ॥

अर्थ—बहुत जल पीने से, भोजनके समय को छोड़ पीछे भोजन करने से, मल-मूत्र आदि वेगोंके रोकने से, दिन में सोमने से, रात में जागने से—इन कारणों से भोजनके समय यदि लघु और हितकारी पदार्थ खाय तो भी अन्न अच्छीरिति से नहीं पचे ये देहके कारण कहे। अब अजीर्णके कारण जो मन से सम्बंध रखते हैं उनको कहते हैं

ईर्ष्या कहिये परद्रव्य को न देख सकना, डरना, क्रोध करना इन कारणों से तथा लोभ शोक दीनता इन कारणों से और मत्सरता करना इन कारणों से मनुष्य के भोजन करा हुआ अन्न भले प्रकार पचता नहीं है ॥

आमाजीर्णलक्षण

तत्रामे गुरुतोत्क्लेदः शोथो गण्डाक्षिकूटगः ।

उद्गारश्च यथाभुक्तमविदग्धं प्रवर्तते ॥

अर्थ—उन चारों अजीर्णों में प्रथम आमाजीर्ण के लक्षण कहते हैं, पेट और अंग भारी होंय, वमन का होना ऐसा प्रतीत हो, कपोल और नेत्रों में सूजन होवे और इसी अजीर्ण के प्रभाव से जैसा मीठा आदि भोजन करा होय उसी प्रकार की डकार आवे है॥

वचादिवमन

वचालवणत्रोयेन वान्तिरामे प्रशस्यते । धान्यनागरसिद्धं वा
तोयं दद्याद्विचक्षणः ॥ आमाजीर्णप्रशमनं शूलघ्नं वस्तिशोधनम् ।

अर्थ—आमाजीर्ण पर वच और सैधानिमक इन के चूर्ण को गरम जल के साथ देवे । यह वमन कराने में उत्तम है । फिर धनिया, और सोंठ इन का काढा देवे तो आमाजीर्ण का नाश होय तथा वस्ति का शोधन होवे ॥

लवंगादि क्वाथ

लवङ्गपथ्ययोः क्वाथः सैन्धवेनावधूलितः ।

पीतः प्रशमयत्युग्रमजीर्णं रेचयत्यपि ॥

अर्थ—लौग और हरड़ इन का काढा सैधानिमक डालके देवे तो आमाजीर्ण का नाश करे तथा दस्त कराता है ॥

वैश्वानरक्षार

सुहृत्कचित्रकैरण्डलवणं सपुनर्नवम् । तिलापामार्गकदलीपला
शान्तिन्तिणी तथा ॥ गृहीत्वा ज्वालयेदेतत्प्रस्थं भस्माखिलं
च तत् । जलाढके विपक्तव्यं यावत्पादावशोपितम् ॥ स प्रसन्नं
विनिःश्राव्य लवणप्रस्थसंयुतम् । पक्वं निर्धूमकठिनं सूक्ष्मं
चूर्णं कृतं पुनः ॥ यवान्जीरकव्योपस्थूलजीरकहिङ्गुभिः ।
पृथगर्धपलैरेभिश्चूर्णितैस्ताद्विमिश्रयेत् ॥ आर्द्रकस्वरसेनापि

भावयेच्छोषयेत्पुनः । शीतोदकेन तच्चूर्णं पिबेत्प्रातर्हि मात्रया ॥
 तस्मिन् जीर्णन्नमश्रीयाद्यूपैर्जाङ्गलजै रसैः । ईपदम्लैः सलवणैः
 सुखोष्णैर्वह्निदीपनैः ॥ एतेनाग्निश्च वर्धेत बलमारोग्यमेव च ।
 तत्रानुपानं शस्तं हि तक्रं वा भोजने हितम् ॥ मन्दाग्न्यशोषि-
 कारेषु वातश्लेष्मामयेषु च । सर्वाङ्गशोथरोगेषु शूलगुल्मोदरेषु
 च ॥ आमार्शःशर्करायां तु विण्मूत्रानिलरोगिषु ।

अर्थ—थूहर, आक, चीते की छाल, अरंड, निमक, पुनर्नवा (सांठ), तिल, ऑं-
 गा, केला, पलास (टाक) और इमली की छाल इन सब की भस्म करके २५६
 तोले लेवे । इस को १०२४ तोले जल में डालके औटावे । जब चतुर्थांश काढा रहे तब
 उस को उतारके छान लेवे । इस में ६४ तोले निमक मिलाके और फिर औटावे । तो निर्धूम
 और कठोर ऐसा क्षार बनके तयार होवे । उस को लेकर बारीक चूर्ण करे उसमें अजमायन,
 जीरा, सोंठ, काली मिरच, पीपल, मगरेला और हींग ये प्रत्येक द्वादश तोले मिलायके
 अदरख के रस की भावना देकर सुखाय ले । इस में से प्रातःकाल में बलाबल
 विचार शीतल जल के साथ देवे । फिर जब औषध पचजावे तब जंगली जीवों का
 मांसरस और यूप कुछ २ खट्टे और नमक मिलायके मंदोष्ण तथा अग्नि के प्रदीप्त
 करनेवाले ऐसे पदार्थ देवे तो अग्नि, बल, आरोग्य इन की वृद्धि करे । इस औषध
 पर पश्चात् छाल पीवे अथवा भोजन के समय देवे । मंदाग्नि, बवासीर, वादी, कफ,
 सर्वांग की सूजन, शूल, गोला, उदररोग, आम, अर्श, शर्करा और मल तथा मूत्र
 संबंधी एवं वादी के रोग इन को दूर करे । यह वैश्वानर नामक क्षार परम चमत्कारी है ॥

सामुद्रादि चूर्ण

सामुद्रसौवर्चलसैन्धवानां क्षारो यवानां च तथाजमोदा । हरी-
 तकीपिप्पलिशृङ्गवेरं हिङ्गुर्विडङ्गं च समानि कुर्यात् ॥ एतानि
 चूर्णानि घृतक्षृतानि भुञ्जीत ग्रासान्प्रथमं च पञ्च । अजीर्णवा-
 तं गुदगुल्मवातं वातप्रमेहं विपमं च वातम् ॥ विपूचिकाकाम-
 लपाण्डुरोगं श्वासं च कासं च हरेत्प्रयुक्तम् ॥

अर्थ—समुद्रनमक, संचरनोन, सैंधानोन, जवासार, अजमायन, हरड, पीपलछो-
 टी, सोंठ घाड़की, हींग और वायवितंग ये समान भाग लेवे । सब का चूर्ण करके
 घी में सान लेवे । इस को भोजन के समय पाहले पांच ग्रास (पांच गस्तों) में

मिलायके साथ तो अजीर्ण, वादी, गुदा की वादी, वायगोला, वातप्रमेह, विषमवात, विपूचिका, कामला, पांडुरोग, श्वास और खांसी इन का नाश करे ॥

हरीतक्यादि योग

हरीतकी तथा शुण्ठी भक्ष्यमाणा गुडेन वा ।

सैन्धवेन युता वा स्यात्सातत्येनाग्निदीपनी ॥

अर्थ—हरड अथवा सोंठ को गुड में मिलायके अथवा सैधेनमक के साथ नित्य नेम से भक्षण करे तो अग्नि को दीपन करे ॥

गुडादि चतुष्क आमार्जीर्णादि के ऊपर

गुडेन शुण्ठीमथवोपकुल्यां पथ्यां तृतीयामथ दाडिमं वा ।

आमेष्वाजीर्णेषु गुदामयेषु वचोविवन्धेषु च नित्यमद्यात् ॥

अर्थ—गुड के साथ सोंठ अथवा पीपल अथवा हरड अथवा अनारदाना साथ यह आमार्जीर्ण, बवासीर, मल की रुकावट इन पर परमोत्तम प्रयोग है ॥

आहारं पचति शिखी दोषानाहारवर्जितः पचति ।

दोषक्षये च धातून्धातुक्षेप्ये तथा प्राणान् ॥

अर्थ—जठराग्नि प्रथम आहार को पचाता है, जब आहार पचाने को नहीं रहे तब वातादि दोषों को पचावे, जब दोष भी पच जाते हैं तब वही अग्नि धातुओं का पाचन करे, जब धातु भी पच जाते हैं तब इस प्राणी के प्राणों का नाश करे है ।

मुहुर्मुहुरजीर्णेषु भोज्यान्यस्योपहारयेत् ।

निरिन्धनोन्तरं लब्ध्वा यथैनं न विपादयेत् ॥

अर्थ—बारंबार अजीर्ण होने पर भी वैद्य को उचित है कि इस प्राणी को थोड़ा बहुत भोजन कराता रहे इसका कारण यह है कि यदि जठराग्नि को भोजन न मिलने से कदाचित् शांति होकर इस प्राणी को न मार डाले । जैसे अग्नि में जबतक ईंधन गेरे जाओंगे तो बराबर अग्नि बनी रहेगी अन्यथा शांति ही जावेगी । इसी प्रकार इस जगो जानना परंतु यह आज्ञा मंदाग्नि में नहीं है भस्मकादिक में है ॥

शमन

अत्युद्धताग्निशान्त्यै माहिपदधिदुग्धसर्पापि ।

संसेवेत यवागूं समधूच्छिष्टां ससर्पिष्काम् ॥

अर्थ—अत्यंत बढी हुई अग्नि को भैस के दही, दूध और घी आदि के सेवन से अथवा घी और मोम मिलायकर करी हुई कांजी का सेवन करने से शांति करे ॥

विरेचन

असकृत्पित्तहरणं पायसं प्रतिभोजनम् ।

श्यामात्रिवृद्धिपक्वं च पयो दद्याद्विरेचनम् ॥

अर्थ—वारंवार पित्तनाशकारी औषध देवे, पायस (खीर) का भोजन करावे काली और सपेद निसोध को गैरके आँटा हुआ दूध दस्त कराने को देवे तो भस्मक रोग शांति होवे ॥

सामान्ययत्न

यत्किञ्चिन्मधुरं मेघ्यं श्लेष्मलं गुरु भोजनम् ।

सर्वं तदत्यग्निहितं भुक्त्वा प्रस्वपनं दिवा ॥

अर्थ—यावन्मात्र मधुर (मीठी) कफकारी, और भारी भोजन है वो सब बढी हुई अग्निवाले को हितकारी है तथा भस्मक रोगवाले को यथेष्ट दिन में निद्रा लेना हितकारी है ॥

कोलास्थियोग

कोलास्थिमज्जकल्कस्तु पीतो वाप्युदकेन वै ।

अचिराद्विनिहन्त्येनं प्रयोगो भस्मकं नृणाम् ॥

अर्थ—बेर के भीतरकी मिर्गी को बारीक पीस पानी के साथ फकी लेवे तो मनुष्यों के भस्मक रोग को शीघ्र दूर करे यह प्रयोग भस्मक रोग नाशक है ॥

क्षीर

नारीक्षीरेण संपिष्ट्वा पिवेदौदुम्बरत्वचम् ।

ताभ्यां वा पायसं सिद्धं पिवेदत्यग्निशान्तये ॥

अर्थ—स्त्री के दूध में गूलर की छालको पीस के पीवे अथवा स्त्री का दूध गूलरकी छाल इन से बनाई हुई खीर को खाना अत्यंत अग्नि का नाश करे ॥

सिततण्डुलसितकमलं छागक्षीरेण पायसं सिद्धम् ।

भुक्त्वा घृतेन पुरुषो द्वादश दिवसान्बुभुक्षितो न भवेत् ॥

अर्थ—सपेद चावल, सपेद कमल और बकरी का दूध इन की खीरकर घी मिलाय बारह दिन तक नित्य भोजन करे तो भस्मक रोग अवश्य दूर होवे ॥

विदारीकल्क

विदारीस्वरसं क्षीरे पचेदष्टगुणं घृतम् ।

• माहिपं जीवनीयेन कल्केनात्यग्निनाशनम् ॥

अर्थ—विदारीकंद का रस आठ भाग, दूध ११ भाग, भैंस का घी १ भाग, तथा जीवनीय (मुलहठी, मुद्गपर्णी, मापपर्णी, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक और ऋषभक इन) औषधों का कल्क १ भाग मिलाय के पचावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार के सेवन करे तो भस्मक रोग दूर होवे ॥

त्रिफलावलेह

त्रिफलामुस्तविडङ्गैः कणया सितया समैः ।

स्यात्खरमञ्जिरिवीजैर्लेहो भस्मकनाशनः ॥

अर्थ—त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग, पीपल, खांड और सपेद आंगा के बीज इन को ढालके अवलेह बनावे इस अवलेह के सेवन करने से भस्मक रोग दूर होवे ॥

अपामार्गादि योग

अपामार्गस्य बीजानि पिष्ट्वा क्षीरेण साधयेत् ।

तत्पायसं महापोरे भस्मके संप्रशस्यते ॥

अर्थ—आंगा के बीजों को पीसके दूध में ढालके खीर सिद्ध करे इस को महापोर भस्मक रोग पर देना उत्तम कहा है ॥

कदलीफलयोग

कदलिफल सुपक्वं पट्टपलं सुप्रभाते घृतसममभिनित्यं भक्षये-
न्मण्डलं च । हरति सकलमग्नेस्तीव्रतां भस्मरोगमनुभवि
रिदमुक्तमग्निमान्द्यं करोति ॥

अर्थ—इकतालिस दिन पर्यंत प्रातःकाल २४ तोले पकी हुई केले की गहरों को घी में मिलाय के खाय तो संपूर्ण अग्नी की तीव्रता तथा भस्मक रोग इन का नाश करे तथा अग्निमाद्य (मंदाग्नि) करे-यह मेरा अनुभव करा हुआ प्रयोग कहा है ॥

अजीर्ण के भेद.

आमं विदग्धं विष्टब्धं कफपित्तानिलैस्त्रिभिः । अजीर्णं केचि-
दिच्छन्ति चतुर्थं रसशेषतः ॥ अजीर्णं पञ्चमं केचिन्निदोषं दिनं
पाकि च । वदन्ति पष्टं चाजीर्णं प्राकृतं प्रतिवासरम् ॥

अर्थ—मनुष्य के कफ से आम, पित्त से चिदग्ध, वात से विष्टब्ध ऐसे तीन प्रकार का अजीर्ण रोग होता है—और जो भोजन करा सो पक होय नहीं रस शेष रहे सो

रसशोष से चतुर्थ अजीर्ण होय है, और रात्रिदिन में जो आहार पचे और जिस में अफरा हड़ फूटन कुछ न होय ये पांचवा अजीर्ण किसी के मत से है और जो नित्य ही स्वाभाविक अजीर्ण रहे (विकृतिजन्य न होय) उस को छटा अजीर्ण कहते हैं । इस अजीर्ण के पचाने के अर्थ (सुश्रुत) में वामपार्श्वशयनादिक उपाय कहे हैं सो करने चाहिये ॥

गुडाष्टक

व्योपदन्तीत्रिवृच्चित्रं कृष्णामूलं विचूर्णितम् । तच्चूर्णं गुडसंमिश्रं
भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥ एतद्गुडाष्टकं नाम वलवर्णाग्निवर्धनम् ।
शोथोदावर्तशूलघ्नं षीहपाण्ड्वामयापहम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, दंती, निसोथ, चित्रक की छाल और पीपलामूल इन के चूर्ण को गुड में मिलाय के प्रातःकाल उठके नित्य भक्षण करे । इस को गुडाष्टक कहते हैं । यह बल देवे अग्नि को बढ़ावे; तथा सृजन, उदावर्त, शूल, षीहा और पांडुरोग इन को नाश करे ॥

पथ्यादि चूर्ण

पथ्यापिप्पलिसंयुक्तं चूर्णं सौवर्चलं पिवेत् । मस्तुनोष्णोदकेनाथ
मत्वा दोषगतिं भिषक् ॥ चतुर्विधमजीर्णं च मन्दानलमथा-
रुचिम् । आध्मानं वातगुल्मं च शूलं चाशु विनाशयेत् ॥

अर्थ—हरड़ और पीपल के साथ संचर निमक का चूर्ण अथवा दही के जल के साथ संचर निमक अथवा गरम जल के साथ जैसी दोषों की गति होंवे उस के अनुसार इन में से एक वस्तु का सेवन करे तो चार प्रकार के अजीर्ण, मंदाग्नि, अरुचि, अफरा गोला और शूल इन को तत्काल दूर करे ॥

बृहच्छंखवटी

सुगर्कचिञ्चामार्गर्मभातिलपलाशजान् । क्षारांश्च भिषगो द-
द्यात्प्रत्येकं पलमात्रया ॥ लवणानि पृथक्पञ्च ग्राह्याणि पलमात्र-
या । सर्जिका च यवक्षारं टङ्कणं त्रितयं पलम् ॥ सर्वं त्रयोदशप-
लं सूक्ष्मं चूर्णं विधाय तु । निम्बूफलरसे प्रस्थसंमिते तत्परिक्षि-
पेत् ॥ तत्र शङ्खस्य शकलं पलं बह्वो प्रताप्य तु । वारान्निर्वाप-
येत्सप्त सर्वं द्रवाति तद्यथा ॥ नागरं त्रिपलं ग्राह्यं मरीचं च पल-
द्वयम् । पिप्पली पलमानास्यात्पलार्धं भ्रष्टहिङ्गुनः ॥ ग्रन्थिकं

चित्रकं चापि यवानीजीरकं तथा । जातीफलं लवङ्गं च पृथक्-
 र्पद्रयोन्मितम् ॥ रसो गन्धो विषं चापि टङ्कणं च मनःशिला ।
 एतानि कर्पमात्राणि सर्वं संचूर्ण्य मिश्रयेत् ॥ शरावार्धेन चुक्रेण
 सन्नयिवटिकां चरेत् । मापप्रमाणा सा वैद्यैर्वृहच्छंखवटी स्मृता ॥
 सर्वाजीर्णप्रशमनी सर्वशूलनिवारिणी । विपूच्यलसकादीनां
 सद्यो भवति नाशिनी ॥

अर्थ—थूहर, आक, इमली, आंगा, केला, तिल और पलास (टाक), इन सब
 के क्षार चार २ तोले लेवे, और नमक, सुहागा, सैधा नमक, बिडनमक और संचर
 नमक ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा ये तीनों मिलाकर
 चार तोले । सब ५२ तोले हुए । सब का वारीक चूर्ण कर ६४ तोले नीबू के रस में
 डालके फिर ४ तोले शंख के टुकड़े अग्नि में तपाय के उस में डाले । इस प्रकार वारं-
 वार तपाय २ के सात वार बुझाने से उस में मिल जावेगा । पश्चात् साँठ १२ तोले,
 काली मिरच ८ तोले, पीपल छोटी ४ तोले, भुनी हुई हींग २ तोले, पीपरामूल, चीते
 की छाल, अजमायन, जीरा, जायफल, लौंग, ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे; पारा, गंधक,
 सिंगियाविष, सुहागा और मनसिल ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे । इस प्रकार सब
 औषध लेकर १६ तोले चूका के रस से खरल करके १ मासे की गोली बनावे । इस
 में से एक गोली खाय तो अजीर्ण, शूल, विपूचिका, अलसक इन को तत्काळ दूर
 करे । इस को वृहच्छंखवटी कहते हैं ॥

लघुक्रव्यादरस

पारदाद्विगुणं गन्धमर्धांशं मृतलोहकम् । पिप्पली पिप्पली-
 मूलमग्निशुण्ठी लवङ्गकम् ॥ लोहसाम्यं पृथक् कुर्याद्रससाम्यं
 सुवर्चलम् । टङ्कणं मरिचं चापि गन्धतुल्यं प्रदापयेत् ॥ एतद्वि-
 चूर्ण्य यत्नेन भावयेत्सप्तधाम्लकैः । एतद्रसायनं श्रेष्ठं मापमात्रं
 प्रदापयेत् ॥ तत्रेण केवलं वापि दद्याद्भोजनपाचने । क्षिप्रं त-
 जीर्यते भुक्तं दीपनं भवति ध्रुवम् । सर्वाजीर्णप्रशमनं लघुक्र-
 व्यादसंज्ञितम् ॥

अर्थ—पारा ४ तोले, गंधक ८ तोले, लोहे की भस्म २ तोले, तथा पीपल, पीपरामूल,
 चित्रक, साँठ और लौंग प्रत्येक आठ २ तोले लेवे; संचरनोन, सुहागा, काली

मिरच ये सब प्रत्येक चार चार तोले लेवे इन सब का चूर्ण कर नींबू के रस की इस में सात भावना देवे तो लघुक्कच्याद नामक रस सिद्ध होवे। इस में से १ मासे भर छाछ के साथ लेवे अथवा विना छाछ के ही भोजन के पचने के वास्ते देय तो भोजन तत्काल पचे और आग्नि प्रदीप्त होवे तथा संपूर्ण अजीर्णों का नाश हों ॥

विदग्धाजीर्णलक्षण

विदग्धे भ्रमतृणमूर्च्छाः पित्ताच्च विविधा रुजः ।

उद्गारश्च सधूमाम्लः स्वेदो दाहश्च जायते ॥

अर्थ—विदग्ध अजीर्ण में भ्रम प्यास और मूर्च्छा ये लक्षण होते हैं। और पित्त के अनेक रोग प्रगट हों तथा धूपं के साथ खट्टी डकार आवें, पसीना आवें और दाह होय ॥

विदग्धाजीर्णकी चिकित्सा

अन्नं विदग्धं च नरस्य शीघ्रं शीताम्बुना वै परिपाकमेति ।

तदास्य शैत्येन निहन्ति पित्तमाक्लेदिभावाच्च नयत्यधस्तात् ॥

अर्थ—मनुष्य का विदग्ध अन्न शीतल जल पीने से अवश्य पचे; तथा शीत के योग से पित्त भी शांति होता है तथा आर्द्रता (गीलापन) रक्त पचे अन्न को नीचे को गेरता है ॥

निद्रानियम

भोजनात्प्राक् दिवा स्वापात्पापाणोपि च जीर्यति । भोजनान्ते
दिवास्वापाद्वातपित्तकफैः कृतम् ॥ आलिप्य जठरं प्राज्ञो हिङ्गु-
त्र्युपणसेन्धवैः । दिवा स्वापं प्रकुर्वीत सर्वाजीर्णप्रणाशनम् ॥

अर्थ—प्रातःकाल भोजन के प्रथम निद्रा लेने से यदि पापाण (पत्थर) भी खाय होवे तो वो भी पच जावे, तथा भोजन करने पश्चात् निद्रा वादी, पित्त और कफ को कुपित करती है। इस वास्ते चतुर मनुष्य हींग, सोंठ, काली मिरच, पीपल और सैधानमक इन को जल में पीस के उदर (पेट) पर लेप करे फिर सोय जावे तो संपूर्ण अजीर्णों का नाश होय इस में संदेह नहीं है ॥

दिवा निद्रा

व्यायामप्रमदाध्ववाहनरतान्क्लिन्नानतीसारिणः

शूलश्वासवतस्तृपापरिगताञ्च द्विक्लामरुत्पीडितान् ।

क्षीणान्क्षीणकफान् शिशून्मदहतान्वृद्धांस्तथा जीर्णिनो

रात्रौ जागरितान्नरात्रिरशनान्कामं दिवा स्वापयेत् ॥

अर्थ—व्यायाम (दण्ड कसरत), स्त्रीसंग, मार्गगमन, सवारी इन के सेवन करने से जो थके हुये हैं जो अतिसार, शूल, श्वास, प्यास, हिचकी और बादी के विकार-वाले हैं; तथा क्षीण, क्षीणकफ, बालक, मद से व्याप्त, वृद्ध, अजीर्णवाला, रात्रि में जगा हुआ, उपवास किया हुआ इन को दिन में यथेच्छ सुलाना चाहिये ॥

विष्टब्धाजीर्णलक्षण

विष्टब्धे शूलमाध्मानं विविधा वातवेदनाः ।

मलवाताप्रवृत्तिश्च स्तम्भो मोहोद्गपीडनम् ॥

अर्थ—विष्टब्ध अजीर्ण के यह लक्षण हैं। शूल, अफरा, अनेक वात की पीड़ा, मल और अधोवायु का रुक जाना, देह जकड़ जाय, मोह और देह में पीड़ा होय ॥

विष्टब्धाजीर्णं में सामान्य उपचार

विष्टब्धे स्वेदनं कार्यं पेयं च लवणोदकम् ॥

अर्थ—विष्टब्धाजीर्ण में पसीने निकाले और नमक का मिला जल पीना चाहिये ॥

रसशेषाजीर्णलक्षण

रसशेषेन्नविद्वेषो हृदयाशुद्धिगौरवे ॥

अर्थ—रसशेष अजीर्ण के यह लक्षण है। अन्न में अरुचि, हृदय में शुद्धि न होय और देह भारी होय ॥

रसशेषाजीर्णं में सामान्य उपचार

रसशेषे दिवा स्वापं लङ्घनं वातवर्जनम् । आलिप्य जठरं प्राज्ञो

हिङ्गुव्यूपणसैन्धवैः ॥ दिवा स्वापं प्रकुर्वीत सर्वाजीर्णप्रणाशनम् ।

अर्थ—रसशेष अजीर्ण में दिन में सोना और लंघन करना, जहाँ बहुत पवन आती होवे उस जगह न बैठना तथा हींग, सोंठ, मिरच, पीपल और सेंधा नमक इन को जल में पीसके पेट पर लेप दिन में सोना हितकारी है ।

अजीर्ण

अनात्मवन्तः पशुवद्भ्रुञ्जन्तेशनलोलुपाः ।

रोगानीकस्य ते मूलमजीर्णं प्रमुवन्ति हि ॥

अर्थ—जिन मनुष्यों की इन्द्री स्वाधीन नहीं है वे पशु के समान अप्रमाण भोजन करते हैं । उन्हीं के अनेक रोगों का कारण अजीर्ण रोग प्रगट होता है ॥

अजीर्ण के सामान्य लक्षण

ग्लानिगौरवविष्टम्भभ्रममारुतमूढता ।

विवन्धोतिप्रवृत्तिर्वा सामान्याजीर्णलक्षणम् ॥

अर्थ—ग्लानि, भारीपना, विष्टंभ, भौर, अधोवातका रुकना, मलरोध अथवा अत्यंत दस्त हो. ए सामान्य अजीर्णके लक्षण हैं ।

अजीर्ण के उपद्रव

मूर्छा प्रलापो वमथुः प्रसेकः सदनं भ्रमः ।

उपद्रवा भवन्त्येते मरणं चाप्यजीर्णतः ॥

अर्थ—मूर्छा, बड़बड़, ओकारी अर्थात् वमन, लार का गिरना, ग्लानी, भ्रम ये अजीर्ण के उपद्रव हैं । और बहुत बड़ा अजीर्ण मनुष्य को मार भी डालता है ॥

स्वल्पं यदा दोषविवन्धमामं लीनं न तेजःपथमावृणोति ।

भवत्यजीर्णेपि तदा बुभुक्षा सा मन्दबुद्धिं विपवन्निहन्ति ॥

अर्थ—जिस समय दोषयुक्त अल्प ऐसा आमाजीर्ण आग्नि के मार्ग का अवरोध नहीं करे तब इस प्राणी को अजीर्ण में भी भोजन करने की इच्छा होती है। वह भोजनेच्छा अल्प बुद्धिवाले पुरुष को विष के समान मारती है ॥

प्रायेणाहारवैपम्यादजीर्णं जायते नृणाम् ।

तन्मूलो रोगसंघातस्तद्विघाताद्विनश्यति ॥

अर्थ—प्रायः भोजन के न्यूनाधिकपनसे मनुष्यों के अजीर्ण रोग होता है उस अजीर्ण से इस प्राणी के अनेक प्रकार के रोग होते हैं और इस अजीर्ण के नष्ट होने से संपूर्ण रोग नष्ट होते हैं ॥

लवणभास्करचूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं धान्यकं कृष्णजीरकम् । सैन्धवं च विडं
चैव पत्रं तालीसकेसरान् ॥ एषां द्विपलिकान् भागान् पञ्च सौ-
वर्चलस्य च । मरीचाजाजिशुण्ठीनामेकैकस्य पलं पलम् ॥
त्वगेला चार्धभागा स्यात्सामुद्रं कुडवद्वयम् । दाडिमात्कुडवं
चैव द्विपलं चाम्लवेतसम् ॥ एतच्चूर्णीकृतं श्लक्ष्णं गन्धाढ्यममृ-

१ अजीर्ण में भोजन की इच्छा होती है परंतु उस की परीक्षा यही है कि वह थोड़ी देर पीछे स्वयं शांत हो जाती है ।

तोपमम् । लवणो भास्करो नाम भास्करेण विनिर्मितः ॥ जग-
तोस्य हितार्थाय वातश्लेष्मामयापहः । वातगुल्मं निहन्त्येप वात-
शूलानि यानि च ॥ तक्रमस्तुसुरासिन्धुयुक्तः काञ्जिकयोजितः ।
मन्दाग्नितां विनाश्यैव शक्तो भवति पावकः ॥ हृद्रोगमामदोषं
च विविधान्युदराणि च । अन्यान्यपि निहन्त्याशु रोगान्
लवणभास्करः ॥

अर्थ-पीपर, पीपरामूल, धनिया, काला जीरा, सैधा नमक, बिडनमक, पत्रज, ताली
सपत्र, नागकेशर ये प्रत्येक आठ २ तोले छेवे । संचरनमक २० तोले और काली मि-
रच, अजमायन और सोंठ ये प्रत्येक ४ चार तोले, दालचीनी और इलायची बडी दो
दो तोले, नमक ३२ तोले और अनारदाना १६ तोले, अमलवेत ८ तोले । सब
का चूर्ण करके एकत्र करे तो यह लवणभास्कर चूर्ण बनके तयार होवे । यह उत्तम
गंधयुक्त अमृत के समान त्रिलोकी के हित करने के वास्ते सूर्य भगवान ने निर्माण
क्रिया है । यह वादी, कफ, वादीगोला, वातशूल इन का नाश करे । तथा छाछ, दही का
जल, मद्य, सैधानमक किंवा कांजी इन मे से किसी एक के साथ मन्दाग्निवाला प्राणी
सेवन करे तो अग्निवृद्धि होय तथा हृद्रोग, आमदोष, संपूर्ण उदर के विकार और
इन से पृथक् अनेक रोगो को यह नष्ट करता है ॥

अग्निमुख चूर्ण

हिड्डुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा भवेत् । पिप्पली त्रिगुणा
ज्ञेया शृङ्गवेरं चतुर्गुणम् ॥ यवानिका पञ्चगुणा पड्गुणा च
हरीतकी । चित्रकं सप्तगुणितं कुष्ठं चाष्टगुणं भवेत् ॥ एतद्वातहरं
चूर्णं पीतमात्रं प्रसन्नया । पिवेद्भ्रा मस्तुना वा सुरया कोष्ण-
वारिणा ॥ उदावर्तमजीर्णं च प्लीहानुदरं तथा । अङ्गानि
यस्य शीर्यन्ति विषं वा येन भक्षितम् ॥ अशौंहरो दीपनश्च
शूलघ्नो गुल्मनाशनः । कासं श्वासं निहन्त्याशु तथैव क्षयना-
शनः ॥ चूर्णो ह्यग्निमुखो नाम्ना न कस्मिन्प्रतिहन्त्यते ।

अर्थ-हींग १ भाग, वच २ भाग, पीपल ३ भाग, अदरक ४ भाग, अजमायन ६
भाग, जंगी हरड ६ भाग, चित्रक ७ भाग, ओर कूठ ८ भाग । इस प्रकार सब औषध

लेकर कूट पीसके चूर्ण बनावे, इस को मद्य, दही अथवा दही के पानी, सुरा अथवा गरम जल से पीवे तो उदावर्त्त, अजीर्ण, प्लीहा, उदर, तथा अंगों का गिरना एवं विष खाया हो तथा बवासीर, शूल, गोला, खोंसी, श्वास और क्षय इन का नाश करे। यह अग्निमुख चूर्ण दीपन है ॥

वृद्धाग्निमुख चूर्ण

द्वौ क्षारौ चित्रकं पाठा करञ्जो लवणानि च । सूक्ष्मैलापत्रकं
भार्ङ्गी कृमिघ्नं हिङ्गुपुष्करम् ॥ शठी दार्वी त्रिवृन्मुस्ता वचा
चेन्द्रयवास्तथा । धात्री जीरकवृक्षाग्लयवासा चोपकुञ्चिका ॥
आम्लवेतसमल्लीका दाडिमं सकटुत्रिकम् । भल्लातकाज-
मोदा च यवानी सुरदारु च ॥ आपश्चातिविपाः श्यामा ह्वुपार-
ग्वधं समम् । तिलमुष्ककशिग्रूणां कोकिलाक्षपलाशयोः ॥ क्षी-
राणि लोहकिट्टं च तप्तं गोमूत्रभावितम् । समभागानि सर्वाणि
सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ मातुलुङ्गरसेनैव भावयेत्तु दिनत्रयम् ।
दिनत्रयं तु सूक्तेन तथैवार्द्ररसेन च ॥ अत्यन्ताग्निकरं चूर्णं प्र-
दीप्ताग्निसमप्रभम् । उपयुक्तं विधानेन नाशयत्यचिराद्गदान् ॥
अजीर्णकमथो गुल्मं प्लीहानमुदराणि च । ग्रहणीं पाण्डुरोगां-
श्च श्वासं कासं च दारुणम् ॥ प्रतिश्यायं क्षयं शोषं विद्रधिं
कफजं तथा । जठराण्यन्त्रवृद्धिं च अष्टीलां वातशोणितम् ॥
प्रणुदत्युल्बणान् दोषान् नष्टमग्निं च दीपयेत् । समस्तव्यञ्ज-
नोपेतं भक्तं दत्त्वा तु भोजयेत् ॥ दापयेदस्य चूर्णस्य विडाल-
पदमात्रकम् । गोदोहमात्रं तत्सर्वं द्रवे पक्त्वातिसोष्मकम् ॥
एषो ह्यग्निमुखश्चूर्णश्चूर्णराजो निगद्यते । ब्रह्मणा निर्मितो ह्येष
अश्विभ्यां परिकीर्तितः ॥

अर्थ—मुहागा, जवासार, चीते की छाल, पाद, कंजा, पांचों नमक, छोटी इला-
यची, तमालपत्र, भारंगी, वायव्रिडंग, हींग, पुहकरमूल, कचूर, दारुहल्दी, निसोय
नागरमोया, मच, इन्द्रजव, आँवले, जंरा, तित्तीकी, घमासा, कलोंजी, काला जीरा,

अमलवेत, इमली, अनारदाना, सोंठ, काली मिरच, पीपल, भिलाए, अजमोद, अजमायन, देवदारु, नेत्रवाला, अतीस, पीपल, हाऊवेर और अमलतास का गूदा ये सब औषधी समान भाग लेवे तथा तिल, घंटापाटलीवृक्ष (मोखावृक्ष), सहजना, तालमखाने, पलासपापडा, आक आदि का दूध, तथायके गोमूत्र में बुझाया हुआ मंडूर ये सब समान भाग एकत्र करके इस में बिजोरे निंबू के रस की तीन दिन भावना देवे। तथा कांजी की और अदरख के रस की तीन तीन भावना देवे। यह चूर्ण अग्नि को अत्यंत बढ़ाता है। इस को नित्यप्रति सेवन करने से थोड़े ही दिन में व्याधि दूर होवे तथा अजीर्ण, गोला, प्लीहा, उदररोग, संग्रहणी, पांडुरोग, श्वास, खांसी, पीनस, क्षय, शोष, कफजन्य विद्रधि, अंत्रवृद्धि, अष्टीला, वातरक्त, त्रिदोष तथा नष्टाग्नि इन को नष्ट करे। इस पर संपूर्ण पदार्थ भोजन करने को देवे। इस चूर्ण की मात्रा एक तोले की है परंतु वैद्य अपने बुद्धि से रोगी के बलाबल को विचार के न्यूनाधिक देवे। यह अग्निमुखचूर्ण संपूर्ण औषधों में श्रेष्ठ है। इस प्रकार ब्रह्मदेव और अश्विनीकुमार ने कहा है। यह चूर्ण जितनी देर में गौ दुही जाती है इतनी देर में संपूर्ण भोजन को पचाय देता है ॥

यावशूकादि चूर्ण

स यावशूकनागरं शिवाजलं च सादरम् ।
निहन्त्यजीर्णजं दरं वदामि ते पुरन्दर ॥

अर्थ—जवाखार, सोंठ, हरदई इन का काढा अजीर्ण से होनेवाले भय को नष्ट करता है। हे इन्द्र! यह मैं तेरे आगे कहता हूँ ॥

लघुचित्रकादि चूर्ण

दहनाजमोदसैन्धवनागरमरिचाम्लतन्त्रेण ।
सप्ताहादग्निकरं यदर्शोनाशनं परं कथितम् ॥

अर्थ—चित्रक की छाल, अजमोद, सेंधा नमक, सोंठ और काली मिरच इन का चूर्ण करके खट्टी छाल के साथ सात दिन सेवन करे तो अग्निवृद्धि करे और बवासीर को नष्ट करे ॥

शुंघ्यादि चूर्ण

यवक्षारान्वितं शुण्ठीचूर्णं लीढं घृतान्वितम् ।
उष्णोदकेन वा पीतं शुण्ठीचूर्णं क्षुधाकरम् ॥

अर्थ—सोंठ और जवाखार इन का एकत्र चूर्ण करके घी के साथ अथवा गरम जल के साथ देवे तो क्षुधा को उत्पन्न करे ॥

कणाद्य चूर्ण

कणासिन्धुशिवावह्निचूर्णमुष्णेन वारिणा ।

पीतं प्रातः क्षुधां कुर्यात्पावकस्यापि दीपनम् ॥

अर्थ—पीपल, सेंधानमक, हरड और चीते की छाल इन के चूर्ण को गरम जल के साथ प्रातःकाल लेवे तो क्षुधा तथा अग्निवृद्धि इन को करे ॥

कपित्थादियोग

कपित्थतक्रचाङ्गेरिमिरिचाजाजिचित्रकैः ।

कफवातहरो ग्राही बल्यो दीपनपाचनः ॥

अर्थ—कैथ का गूदा, छाल, शूका, काली मिरिच और चीते की छाल इन का योग कफवात हारक, ग्राहक, बल देगवाला, दीपन और पाचन है ॥

ज्वालामुख चूर्ण

हिङ्गुगाम्लवेतसकटुत्रिकचित्रकाणां कर्पाः पृथक् गुडपलं यव-

चूर्णकं च । ज्वालामुखोपमनलस्य करोति दीप्तिं चाजीर्णमा-

त्रशमने हि कृशानुरेपः ॥

अर्थ—हिंग, अमलवेत, त्रिकुटा, चित्रक की छाल और जवाखार ये प्रत्येक एक एक तोले और उस में गुड चार तोले मिलावे । इस को ज्वालामुख चूर्ण कहते हैं । यह अग्निवृद्धि तथा अजीर्ण का नाश करे ॥

व्योपादि चूर्ण

व्योपैला हिङ्गुभाङ्गीविडलवणयवक्षारपाठा यवानी

चिञ्चात्वग्भस्म चव्यं दहनगजकणात्वक् पटुग्रन्थजाजी ।

एतच्चूर्णं घृताढ्यं त्रिदिवसमग्ने हन्यते रोगजालम्

विश्वं वैश्वानरोयं दहति सरभसं किं पुनर्भुक्तमन्नम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरिच, पीपल, बड़ी इलायची, हिंग, भारंगी, विडनमक, जवाखार, पाठ, अजमायन, इमली की छाल की भस्म, चव्य, चित्रक, गजपीपल, दालचीनी, नमक, पीपरामूल और जीरा; इन सब के चूर्ण को घी में सान के तीन दिन राय तो संपूर्ण रोगजालों को नष्ट करे, फिर भोजन का तो क्या कहना है, इस को वैश्वानर चूर्ण कहते हैं ॥

शुण्ड्यादि चूर्ण

शुण्ठी वाणमिता कर्णार्णवमिता दीप्या यवानी क्रमा-
द्भागानां त्रितयं द्वयं च लवणं भागैः शिवा तत्समा ।
कोष्टाटोपरुगामगुल्ममलहल्लोलिम्बराजोदित-
शूर्णोऽद्दीनपि भस्मसात्प्रकुरुते किं भोजनं भो जनाः ॥

अर्थ-सोंठ ५, पीपल ४, अजमोद ३, अजमायन २, नमक १, तथा हरड की छाल १६ भाग; इन सब का चूर्ण करके खाय तो पेट का गुडगुडाहट, आम, गो-ला और मल इन को नाश करे यह चूर्ण लोलिम्बराज कवि का कहा हुआ पर्वतों को भी भस्म कर देता है, फिर भोजन का भस्म कर देना क्या बड़ी बात है ॥

विश्वादि चूर्ण

विश्वकणोपणनागदलैश्च त्वक्त्रुटिभिर्विहितं क्रमवद्धम् ।
चूर्णमिदं समखंडमरोचश्चासगुदोद्भवगुल्मवमीषु ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, नागरवेल के पान, दालचीनी तथा छोटी इलायची; ये संपूर्ण पदार्थ क्रमवृद्धि करके लेवे । सब का चूर्ण करे और सब चूर्ण की बराबर खांड मिलावे इस को सेवन करने से अरुचि, श्वास, बवासीर, मोला और वांति इन का नाश होता है ॥

चित्रकादि चूर्ण

कृशानुश्चव्यं वा मरिचमगधाहिंशुचपला
शठी दीप्यो विश्वा यवजयुगुलं पञ्चलवणम् ।
समं बीजद्रावैर्लुलितमथवा दाडिमरसै-
र्जयेदामात् रोगान्ग्रहणिकफतां वह्नितनुताम् ॥

अर्थ-चित्रक, चव्य, काली मिरच, पीपल, हींग, गजपीपल, कयूर, अजमायन, सोंठ, जवासार, सेंधानमक से आदि ले पांचो नमक; ये प्रत्येक समभागलेवे, सब का चूर्ण कर बिजोरे के रस का पुट देवे । यह आमरोग, संग्रहणी, कफ, वादी और मँदाग्रि इन का नाश करे ॥

विडलवणादि चूर्ण

विडं चित्रकं जाजियुग्मं यवानी शिवा ऽयूपणं धान्यसौवर्चलं च ।

त्वचा तित्तिडीकाजमोदाम्लवेतं समं योज्यमेतत्समं चाविडङ्गम् ॥

विडादिरोगदारकं गदार्तिनां च तारकं
ह्यनेन जीर्यते धरा कथं न जानते नराः ॥

अर्थ—विडनमक, चित्रक, जीरा, काला जीरा, अजमायन, हरड की छाल, सोंठ, काली मिरच, पीपल, धनियां, संचरनमक, दालचीनी, इमली, अजमोद, जमलवेत और वायविडंग; इन को समान भाग लेकर चूर्ण करे। यह विडादिचूर्ण सर्व प्रकार की व्याधिन का नाशक है ॥

वडवानल चूर्ण

शिवाकरञ्जचित्रकं कणाजटाकटुत्रिकम् ।
सशकरं समांशकं त्विदं हि वाडवाग्निकम् ॥

अर्थ—हरड की छाल, कंजा की छाल, चीते की छाल, पीपरामूल, सोंठ, मिरच, पीपल और खांड इन का समान भाग ले चूर्ण करे। इस को वडवानल चूर्ण कहते हैं। यह अजीर्ण पर पाचन है ॥

पंचाग्नि चूर्ण

अम्लवेतसधनंजयवज्री मोरटा तदनु सूरण एषः ।
पञ्चवह्निजठरानलवृद्धयै तक्रसाकामिदमाशु हि पेयम् ॥

अर्थ—अमलवेत, कोह वृक्ष की छाल, यूहर, मरौरफली और जमीकंद इन पांचों का चूर्ण छाल के साथ देवे तो अग्निवृद्धि करता है ॥

विश्वभेषज चूर्ण

विश्वभेषजं हिङ्गुटङ्कणं मागधी च सौवर्चलं त्विदम् ।
शिष्टुपादजैर्भाषितं रसैः शूलनाशनं क्षुत्प्रबोधनम् ॥

अर्थ—सोंठ, हींग, सुहागा, पीपल और संचरनमक, इन के चूर्ण को सहजने की जड़ के रस की भावना देवे तो यह शूल (पेट के दर्द) को नष्ट तथा क्षुधा को उत्पन्न करे।

संजीवनी गुटी

विडङ्गनागरं कृणा पथ्या वह्निविभीतकाः ।
वचा गुडूची भृष्टातं विषं चात्र प्रयोजयेत् ॥

एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेपयेत् ।
 गुञ्जाभां वटिकां कुर्याद्दद्यादाद्रकजै रसैः ॥
 एकामजीर्णयुक्तस्य द्वे विपूच्यांप्रदापयेत् ।
 तिस्रो भुजङ्गदृष्टस्य चतस्रःसन्निपातिनः ॥
 गुटिका जीवनी नाम्ना संजीवयति मानवम् ।

अर्थ—वायविडग, सोठ, पीपल, हरड की छाल, चित्रक, बहेडे, वच, गिलोय भिलाए और अतीस; ये सब समान भाग लेके सब का चूर्ण करके गोमूत्र में खरल करे । फिर १ रत्ती के प्रमाण गोली बनावे । इस को अदरख के रस से अजीर्ण पर एक देवे, तथा विपूचिका (ईजा) में दो गोली देवे, सांप के काटनेपर तीन गोली और सन्निपात में चार गोली देनी चाहिये । यह संजीवनी नामक गोली मनुष्य को संजीवन करती है ॥

धनंजय वटी

जीरकं चित्रकं चव्यं ससुगन्धं वचात्वचौ ।
 एलाकपूर्वरहपुपाकारवीनागकेसरम् ॥
 पृथक्कर्पमितं ख्यातमिति कर्पार्धसंमितम् ।
 यवानी पिप्पलीमूलं स्वर्जिका च हरीतकी ॥
 जातीफललवङ्गं च पृथक्कर्पयुगं मतम् ।
 धान्यकं पत्रकं चापि कर्पत्रयमितं पृथक् ॥
 कृष्णा पलप्रमाणं स्यात्पलमानं तु रोमकम् ।
 मरीचानि च नः सप्त त्रिवृन्मूलं पलद्वयम् ॥
 पृथग्दशाक्षं सामुद्रं सैन्धवं नागरं तथा ।
 शरावसंमितं चुक्रं तदर्धं तन्तिणीफलम् ॥
 धनंजयवटी ह्येषा धनंजयविवर्धिनी ।
 जीर्णं च जरयत्याशु शूलमुन्मूलयेद्द्रुतम् ॥
 हरेद्विबन्धेन सममाध्मानं कर्पयत्यपि ।
 ग्रहण्या नियहं कुर्याद्रचयेद्बुचिसुत्तमाम् ॥

अर्थ—जीरा, चित्रक, चव्य, संचरनमक, वच, दालचीनी, इलायची, कपूर, हंसपदी, अजमोद, और नागकेशर ये प्रत्येक औषधी एक २ तोला लेवे; अजमायन, पीपरा मूळ, सज्जीखार, हरड ये प्रत्येक आधे २ तोला लेवे, जायफल और लोंग ये दोनों दो दो तोले तथा धनियां, पत्रज ये दोनों तीन २ तोले, पीपर, सांभरनमक ये चार २ तोले, काली मिरच ७ तोले, निसोय ८ तोले, नमक १० तोले, सैंधानमक और सोंठ १० तोले एवं चूका ३२ तोले तथा इमली १६ तोले । इन सब का चूर्ण करके गोली बनावे । यह धनंजयवटी अग्नि को बढ़ावे तथा अजीर्ण को नष्ट करे शूल को उखाड़ देवे तथा विड्वंध, अफरा और संग्रहणी इन को नष्ट करे एवं रुचि को उत्पन्न करे है ॥

शंखवटी

चिञ्चाश्वत्थस्त्रुद्विक्षारादपामार्गार्ककं तथा ।
 लवणं पञ्च संगृह्य ततो लवणपञ्चकात् ॥
 सैन्धवाद्यान्समादाय सर्वमेतत्पलद्वयम् ।
 द्वौ द्वौ कर्षौ पृथक्कार्यौ तथा द्वौ शङ्खचूर्णतः ॥
 फलत्रयाच्च कर्षकं द्विकर्षं तु लवङ्गकम् ।
 एतत्सर्वं समासाद्य श्लक्ष्णचूर्णाकृतं शुभम् ॥
 भावयेदम्लयोगेन सप्तधा च प्रयत्नतः ।
 रसशङ्खवटी नाम सेवितः सर्वरोगजित् ॥
 गुञ्जामात्रमिमं खादेद्भवेद्दीपनपाचनम् ।
 अजीर्णं वातसंभूतं पित्तश्लेष्मभवं तथा ॥
 विपूचीं शूलमानाहं हन्यादत्र न संशयः ।

अर्थ—इमली, पीपल धूर, आंगा, आंक इन का क्षार, सैंधवादिक पांचों नमक प्रत्येक आठ २ तोले; शंखमस २ तोले, त्रिफला १ तोले और लोंग २ तोले इन सब का चूर्ण करके नींबू के रस की सात भावना देवे । यह शंखवटी रस १ रत्ती नित्यप्रति सेवन करने से संपूर्ण रोगों को दूर करे तथा दीपन और पाचन है । तथा अजीर्ण, वात, पित्त और कफ इन से उत्पन्न हुए अजीर्ण तथा विपूचिका, शूल तथा आनाहवायु इन का नाश करे ॥

लवंगामृतवटी

सर्वार्धं देवपुष्पं मरिचमगधयोस्त्रिस्त्रिकर्षं यवान्यो-

रष्टावष्टाश्रितांपित्रिपटुरथ पलं श्रन्धिकं सप्तकर्पम् ॥
 शुण्ठी पथ्या दशाक्षामलककलिफलाजाजिचव्याञ्च
 पद् पद् सुत्रामप्रीतिपात्रं नखमितमखिलं चूर्णितं वस्त्र-
 पूतम् । निर्भाव्यं चार्द्रकस्य द्रवमपि विधिवन् माप-
 युग्मप्रमाणा वद्धा चुक्रेण सिद्धा प्रभवति गुटिकासौ
 लवङ्गामृताख्या ॥ भुक्ता युक्ता सकलसुखकरी दीप्तिम-
 श्रेर्विधत्ते वृष्या पुष्या वपुष्याऽमयनिचयहृतिख्याति-
 पूर्णा विभाति ।

अर्थ—कालीमिरच और पीपल ये प्रत्येक ३ तोले अजमायन और चित्रक ८ तोले, तीनों नमक ४ तोले, पीपरामूल ७ तोले, सोंठ और हरड १० तोले, बहेडा, अंबला, भिलाए, जीरा और चव्य ये प्रत्येक छः छः तोले; इंद्रज्व २० तोले; इन सबका चूर्ण करे और सब चूर्ण के बराबर लौंग का चूर्ण लेवे । सब को अदरस के रस की तथा चूका के रस की तीन २ भावना देवे, फिर दो दो मासे की गोली बनावे । यह लवंगामृत-नामक बटी भक्षण करने से अग्नि को प्रदीप्त करती है तथा वृष्य (वीर्य बढ़ानेवाली) और संपूर्ण सुख के देनेवाली है; तथा स्त्रियों के रजोदर्शन संबंधी व्याधियों का नाश करती है ॥

व्योपादि गुटी

त्रिकटु पिप्पलीमूलमेला लवणपञ्चकम् । द्विजीरधान्यकं
 नागकेशरं सारत्वक्समैः ॥ चुक्राह्वा तित्तिडीकाद्रिलवणं
 मर्द्यचार्द्रकम् । निम्बुनीरेण तद्भाव्यं रोगहृद्बहिदीपनम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, बटी इलायची, पाचों नमक, जीरा, काला जीरा, धनिया, नागकेशर, फरया, दालचीनी, चूका, इमली और सेधानमक, ये समान समान भाग लेके चूर्ण करे । फिर अदरस और नींबूके रस की भावना देवे । यह व्योपादि बटी रोगनाशक और अग्निदीप्त करनेवाली है ॥

हरितक्यादि वटी

हरितकी हरिहरतुल्यपद्गुणा चतुर्गुणा चतुरविशालपिप्पली ।
 चित्रकं वरदवरैकसैन्धवं रसायनं कुरु नृप वटिं वह्निदीपनीम् ॥

अर्थ—हरड की छाल ६ भाग, तथा पीपल और गजपीपल ४ भाग, चित्रक १ भाग और संधानमक १ भाग; ये सब एकत्र कर गोली बनावे। यह अग्नि को प्रदीप्त करने वाली तथा रसायन है ॥

अमृतहरीतकी

तत्रे सुसंस्वेद्य शिवाशतानि तद्वीजमुद्धृत्य च कौशले-
न । पटूपणं पञ्च पटूनि हिङ्गुक्षारावजार्जामजमोदकं च ॥
पटूपणादिस्त्रिवृद्धभागं गणे प्रदेयं पटुगालितस्य ।
विभाव्य चुक्रेण रजांस्यमीपां क्षिपेच्छिवां बीजनिवा-
सगर्भे ॥ समूह्य घर्मेषु विशोष्य तासां हरीतकीमन्य-
तमां निषेवेत् । अजीर्णमन्दानलजाठरामयान्समूलशूलग्र-
हणीगुदाङ्कुरान् ॥ विबन्धमानाहरुजो जयत्यसौ स आ-
मवातावमृता हरीतकी ।

अर्थ—मोटी २ बड़ी हरड १०० लेकर उन को छाछ में भिगो देवे; फिर उन वं अग्निपर रखके पचावे जब नरम हो जावें तब चतुराई से उन की गुठली निकाल डालें और पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक की छाल, सोंठ, मिरच, नमक, सुहागा, सें धानमक, विडनमक, संचरनोन, हींग, जवाखार, जीरा और अजमोद ये प्रत्येक एक एक तोले लेवे और निसोय छः मासे लेवे। इन सब को कूटपीस कपड़छान चूर्णक लेवे। फिर इस को चूका को रस की भावना देके पूर्वोक्त चिरी हुई हरडों में भर दें और उन को डोरे से बांधके सुताय देवे। इन में से ? हरड नित्य खाय तो अजीर्ण मंदाग्नि, उदररोग, शूल, संग्रहणी, ववासीर, विडबंध, अफरा, यादी, और आमवात इन का नाश करे। इस को अमृतहरीतकी अथवा तक्रहरीतकी कहते हैं।

चित्रकगुड

वह्नेर्द्रिपञ्चमूलस्य काथे पलशतद्वये । अमृताया रस-
स्यैकं पूतोस्मिन्नभयाढकम् ॥ पचेद् गुडतुलां दत्त्वा
यावदापाकलक्षणम् । अन्येद्युस्तु सुशीतेस्मिन्मधुनः
कुडवद्वयम् ॥ प्रत्येकं स्याद्यवक्षाराच्छुक्तिस्तस्मिन्
रसायने । उत्तमं कथितं पुंसामश्विभ्यामग्निवृद्धये ॥

जीर्यन्त्यपि च काष्ठानि कासश्वासकृमिक्षयान् ।

गुल्मोदरार्शःकुष्ठानि सान्धवृद्धीनि हन्ति च ॥

योगैः शतैरप्याजितान् त्र्यहाज्जयति पीनसान् ।

अर्थ—चित्रक और दशमूल का काटा ८०० तोले और गिलोय का रस २५६ तोले तथा हरड़ की छाल का चूर्ण २५६ तोले और गुड १०० तोले; इन सब को कढ़ाई में भर चूल्हे पर चढायेके पाक करे । जब पाक हो जावे तब उतारके धर लेवे । फिर दूसरे दिन इस में ३२ तोले सहत ओर जवारसार २ तोले मिलायके सब को एकत्र करे यह उत्तम चित्रकगुड अश्विनीकुमार ने पुरुषों की अग्निवृद्धि करने के वास्ते कहा है । इस को भक्षण करके काष्ठभी खाय ले चीभी पचजावे तथा श्वास, खाँसी, कृमि, क्षय, गोला, उदर, बवासीर, सर्व प्रकार के कुष्ठ और अंडवृद्धि इन का नाश करे तथा तीन दिन में पीनस रोग को दूर करे ।

द्राक्षादियोग

विदह्यते यस्य तु भुक्तमात्रं दह्यन्ति हृत्कोष्ठगता मलाश्च ।

द्राक्षासितामाक्षिकसंप्रयुक्ता लीढाभयां वाससुसं लभेच्च ॥

अर्थ—जिस प्राणी के भोजन करने के उपरांत पेट में जलन होवे और कोष्ठ तय हृदय में दाह होय वह दास, खांड, सहत और हरड़ इन को भक्षण करे तो सुखी होवे ॥

यवागू

चित्रकचविकानागरभागाभ्यधिकाग्रकैर्यवागूः स्यात् ।

गुल्मानिलशूलहरी सचित्रदा वह्निजननी च ॥

अर्थ—चित्रक १ भाग, चव्य २ भाग और सोंठ ३ भाग लेवे इन की यवागू बनावे । यह गुल्म, वादी और शूल इन को नाश करे तथा अग्नि प्रदीत करे । यह यवागू आश्चर्यकारक है ॥

क्रव्यादकल्क

एलावङ्गमरिचं कृष्णाशुक्तिसमन्वितम् । चुक्रनागरसिन्धू-

त्यशूकं लवणपञ्चकम् ॥ एषां चूर्णं वस्त्रपूतं क्रव्यादीनितिरिच्यते ।

अर्थ—इलायची, लोग, काली मिरच, सीप की भस्म, चूका, सोंठ, सेधानमक, जवार और पांचो नमक इन का कपडछन चूर्ण करे । यह क्रव्याद रस के समान गुण धरनवाला है ॥

क्षारयोग

द्वौ क्षारौ टङ्कणं सूतं लवङ्गं लवणत्रयम् । पिप्पली गन्धकं
 शुण्ठी मरीचं पलसंभितम् ॥ कर्पमेकं विपं दत्त्वा सूक्ष्मचूर्णा-
 नि कारयेत् । अर्कदुग्धस्य दातव्या भावनाः सप्तवासरम् ॥
 अन्धमूपागजपुटे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् । ततो लवङ्गं मरिचं
 स्फटिकानां पलं पलम् ॥ सर्वं समर्थं सुदृढं दृढभाण्डे निधापयेत् ।
 सोयं गुञ्जाद्वयं खादेद्भुक्तं द्रावयति क्षणात् ॥ पुनर्भोजनवाञ्छां
 च जनयेत्प्रहरोपरि । आममांसं द्रावयति श्लेष्मरोगनिकृन्तनः ॥

अर्थ—सज्जीखार और जवाखार, सुहागा, पारा, लौंग, सेंधानमक, विडनमक, क-
 चियानमक, पीपल, गंधक, सोंठ, और मिरच ये प्रत्येक चार २ तोले तथा सींगियाविप
 १ तोले; इन सब का बारीक चूर्ण करके आक के दूध की ७ भावना देवे । फिर
 अंधमूपा में रखके गजपुट में फूंक देवे । जब शीतल हो जावे तब निकास ले फिर लौंग,
 कालीमिरच, तथा फिटकरी इन का चार २ तोले चूर्ण करके उसमें मिलाय देवे फिर
 सब को खरल करके उत्तम पात्र में भरके रख देवे इस में से दो रत्ती की मात्रा खाने
 को देय तो एक क्षणभर में भोजन करे हुए को भस्म कर देवे तथा फिर भोजन करने
 की इच्छा उत्पन्न करे तथा कच्चे मांस को द्रवरूप कर देवे और कफरोग को
 शमन करता है ॥

अग्निमुखरस

सूतं गन्धं विपं तुल्यं मर्दयेदार्रकद्रवैः । अश्वत्थचिञ्चा-
 पामार्गक्षारंक्षारौ च टङ्कणम् ॥ जातीफलं लवङ्गं च
 त्रिकटु त्रिफलासमम् । शङ्खक्षारं पञ्चपलं हिङ्गुजीरं
 द्विभागकम् ॥ मर्दयेदम्लयोगेन गुञ्जामात्रा वटी कृता ॥
 पाचनी दीपनी सद्यो जीर्णशूलविपूचिकाः ॥ हिक्रां
 गुल्मं चोदरं च नाशयेन्नात्र संशयः । रसेन्द्रसंहिता-
 याश्च नाम्ना वह्निमुखो रसः ॥

अर्थ—पारा, गंधक और सींगिया विप इन को अदरस के रस में खरल करे फिर
 पीपल, इमली, आंगा इन का सार, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, जायफल, लौंग,

सोंठ मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, ओंठला ये समान भाग लेवे शंख की भस्म ९ पल लेवे, हींग और जीरा दो दो पल लेवे इन सब को नींबू के रस में खरल कर एक २ रत्ती की गोली बनावे यह पाचन करता है, जठराग्नि को दीपन करता है, तत्काल अजीर्ण, शूल, विपूचिका, हिचकी, गोला, उदर इन को नष्ट करता है इस में संदेह नहीं है यह चह्निमुखरस रसेन्द्रसंहिता में लिखा है ॥

अजीर्णारिरस

शुद्धं सूतं गन्धकं च पलमानं पृथक् पृथक् । हरीतकी
च द्विपला नागरास्त्रिपलः स्मृतः ॥ कृष्णा च मरिचं
तद्वत्सिन्धूत्थं त्रिपलं पृथक् । चतुःपला च विजया मर्द-
येन्निम्बुकद्रवैः ॥ पुटानि सप्त देयानि घर्ममध्ये पुनः
पुनः । अजीर्णारिरयं प्रोक्तः सद्यो दीपनपाचनः ॥
भक्षयेद्द्विगुणं भक्ष्यं पाचयेद्रेचयेदपि ।

अर्थ—पारा शुद्ध, गंधक शुद्ध दोनों चार २ तोले लेवे; हरड ८ और सोंठ १२ तोले पीपल, काली मिरच, सेंधानमक ये प्रत्येक बारह २ तोले और भांग १६ तोले इन सब का बारीक चूर्ण कर नींबू के रसके धूप में धरके सात पुष्ट देवे । यह अजीर्णारिरस दीपन पाचन है इस के भक्षण करने से प्राणी दूना भोजन करे और उस का पाचन करके रेचन भी करता है ॥

पाशुपतरस

कर्पू सूतं द्विधा गंधं त्रिभागं भस्म तीक्ष्णकम् । त्रिभिः
समं विषं योज्यं चित्रकद्रवभाषितम् ॥ द्विधा त्रिकटुकं
योज्यं लवङ्गैला तु तत्समे । जातीफलं जातिपत्री चार्ध-
भागमितं समम् ॥ तथार्धपञ्चलवणं स्नुह्यर्को वापि ति-
त्तिणी । अपामार्गाश्वत्थ एषां लवणं च पलार्धकम् ॥ टङ्गणं
यावकक्षारं स्वर्जिकां हिंशुजीरकम् । हरीतकी सूतस्तुल्या
मर्दयेदम्लयोगतः ॥ धूर्तवीजस्य भस्म तु स वै सप्तम-
भागतः । रसः पाशुपतो नाम प्रोक्तः प्रत्ययकारकः ॥
गुंजामात्रा वटो कार्या सर्वाजीर्णविनाशिनी । तालमूलीत-

ऋयोगादुदरामयनाशिनी ॥ मोचरसेनातिसारं ग्रहणीं
तक्रसैधवैः । शूले नागरकं शस्तं द्विगुसौवर्चलान्वितम् ॥
अर्शस्सु तत्रेण हिता पिप्पली राजयक्ष्मणि । वात-
रोगं निहंत्याशु शुंठी सौवर्चलान्विता ॥ गुडूची शर्क-
रायोगात्पित्तरोगविनाशिनी ! पिप्पली क्षौद्रयोगेन श्ले-
ष्मरोगं निकृंतति ॥ अतः परतरा नास्ति धन्वन्तरमते वटी ।

अर्थ-शुद्ध पारा १ तोला, गंधक २ तोले तथा कांतिलोह की भस्म ३ तोले, इन सब की बराबर शुद्ध सींगिया विष लेवे सब को चित्रक के रस में खरल करे तथा सोंठ, मिरच और पीपल ये दो दो भाग, लौंग, इलायची दो दो भाग, जायफल और जावित्री ये एक २ भाग लेवे पौंचों नमक ५ तोले तथा थूहर, आक, इमली, अोंगा और पीपर वृक्ष इन का क्षार प्रत्येक दो दो तोले ले, सुहागा, जवाखार, सज्जीखार, हींग, जीरा और हरड ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे सब का चूर्ण करके अम्लवर्ग की भावना देवे । फिर इस में धतूरे के बीजों की भस्म ७ भाग मिलाकर एक २ रत्ती के प्रमाण गोली बनावे । यह पाशुपत नामक रस तत्काल परचा देनेवाला है । यह संपूर्ण अजीर्णों का नाश करे तथा मूसली और छाछ इन के साथ उदर रोगों पर, अतिसार में मोचरस के साथ, संग्रहणी में छाछ और सेंधे नमक के साथ, शूल रोग में सोंठ, हींग और संचर नमक के साथ, बवासीर में छाछ के साथ, क्षयरोग में पीपल के साथ, वादी में सोंठ और संचर नमक के साथ, पित्त के रोग में गिलोय और मिश्री के साथ, कफरोग में पीपल और सहत के साथ देना चाहिये । इस पाशुपतरस से बढके दूसरा उत्तम रस धन्वन्तरी के मत से नहीं है ॥

आदित्यरस

दरदं च विषं गन्धं त्रिकटु त्रिफलासमम् । जातीफलं लवङ्गं च
लवणानि च पञ्च वै ॥ सर्वमेकीकृतं चूर्णमम्लयोगेन सप्तधा ।
भावयित्वा वटी कुर्याद्द्विजार्धप्रमिता बुधैः ॥ रसो ह्यादित्यसंज्ञो-
यमजीर्णक्षयकारकः । भुक्तमात्रं पाचयति जठरानलदीपनः ॥

अर्थ-हींगलू, विष, गंधक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आँवला, जायफल लौंग, रेह का नमक, सेंधानमक, सञ्जरनमक, कचियानमक, कालानमक, इन सब को एकत्र कर अम्लवर्ग की सात भावना देवे फिर चार २ रत्ती की गोली बनावे । यह

आदित्य नामक रस अजीर्ण का नाशक है तथा जो राय उसी को पचावे तथा अग्नि को प्रदीप्त करता है ॥

हुताशनरस

एकं च दिग्द्रादशभागमानं योज्यं विपं टङ्कणमूपणं च ।

हुताशनो नाम हुताशनस्य करोति वृद्धिं कफवातहंता ॥

अर्थ—सींगियाविष १ भाग, सुहागा ८ भाग और कालीमिरच १२ भाग लेवे सब को एकत्र कर चूर्ण करे और जल से घोटके गोली बनावे यह हुताशन नामक रस अग्नि की वृद्धि करे तथा कफ वादी के रोगों को नष्ट करे ॥

अजीर्णकण्टकरस

शुद्धसूतविपगन्धकं समं तुल्यभागमरिचं च चूर्णितम् ।

मर्दयेत्तु बृहतीफलद्रवैरेकविंशतिविभाषितं पुनः ॥

गुञ्जिकात्रयमिदं सुभक्षितं सद्य एव जठराग्निवर्धनम् ।

एष कण्टकरसो विपूचिकाजीर्णमारुतगादन्निहन्ति च ॥

अर्थ—शुद्धपारा, शुद्धविष, शुद्धगंधक, तीनों समान भाग लेवे तथा काली मिरच सब के समान लेवे । इन सब का चूर्ण कर कटेली के फल के रस की २१ भावना देवे फिर तीन २ रत्ती की गोली बनावे, एक गोली नित्य खाय तो अग्नि की वृद्धि करे । यह अजीर्णकण्टकरस हैजा, अजीर्ण और वादी के रोगों को दूर करे ॥

रामवाणरस

पारदामृतलवङ्गगन्धकं भाग्युग्ममरिचेन मिश्रितम् । तत्र

जातिफलमर्धभागिकं तित्तिणीफलरसेन मर्दितम् ॥ वह्नि-

मांघदशवक्रनाशनो रामवाण इति विश्रुतो रसः । संग्र-

ह्यग्रहणिकुम्भकर्णयोः सामवातखरदूपणं जयेत् ॥ दीयते

तु चणकानुमानतः सद्य एव जठराग्निदीपनः । रोचनो

कफकुलान्तकारकः श्वासकासवमिजन्तुनाशनः ॥

अर्थ—पारा, सींगिया विष, लौग, गंधक ये समान भाग ले तथा काली मिरच २ भाग और जायफल आधा भाग । सब को एकत्र कर इमली के रस में तरल करे यह रामवाणरस की चना के समान गोली बनायके देवे यह मंदाग्निरूप रावण, संग्र-

हणीरूप कुंभकर्ण, आमवातरूप खरदूषण को नष्ट करे, तत्काल जठराग्नि को दीपन करे, रुचि प्रगट करे, कफ रोग, श्वास, खांसी, वमन और कृमिरोग इनको नष्ट करे ॥

दूसरा प्रकार

त्रिनिष्कं शुद्धजेपालं विपं गन्धेश टङ्कणम् । भृङ्गराजरसैः पिष्ट्वा
भूयो वटकसाधितः ॥ रामवाणरसः ख्यातो द्विगुंजः श्लेष्मवात-
हा । अजीर्णाध्मानविष्टम्भशूलेषु श्वासकासयोः ॥

अर्थ—शुद्ध जमालगोटा ४ मासे तथा सींगियाविप, गंधक और पारा ये एक एक मासे सब को एकत्र कर भांगरे के रस में खरल करे इस में से दो दो रत्ती की गोली बनावे यह कफ, वादी, अजीर्ण, अफरा, विष्टंभ, शूल, श्वास, और खांसी इन का नाश करे ॥

ज्वालानलरस

एलात्वक्गगनपुष्पाणामत्रोत्तरविवर्धिताः । मरीचं पि-
प्पली शुण्ठी चतुः पञ्चपडुत्तरा ॥ द्रव्याण्येतानि यावं-
ति तावद्धि सितशर्करा । चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यमग्निसंदी-
पनं परम् ॥ क्षारत्रयं सूतगन्धौ पंचकोलमिदं शुभम् ।
सर्वैस्तुल्या जया भ्रष्टा तदर्धं शिशुजा जटा ॥ एतत्सर्वं
जयाशिशुवह्निमार्द्रकजैर्द्रवैः । भावयेत्त्रिदिनं घर्मे ततो
लघुपुटे क्षिपेत् ॥ सप्तधार्द्रवैर्घृष्टो रसो ज्वालानलो
भवेत् । निष्कं च मधुना लिह्यानुपानं गुडनागरम् ॥
हन्त्यजीर्णमतीसारं ग्रहणीमग्निमार्दवम् । श्लेष्महृत्ला-
सवमनमालस्यमरुचिं जयेत् ॥

अर्थ—इलायची १ दालचीनी २ अम्रक भस्म ३ लौंग ४ काली मिरच ४ पीपल ५ सोंठ इस प्रकार सब औषध लेवे और सब के बराबर सपेद खोंड मिलावे सब को एकत्र करके चूर्ण तयार करे इस के सेवन करने से आग्नि दीपन हो, सज्जीस्वार, जवास्वार, सुहागा, पारा, गंधक, पीपल, पीपरापूल, चव्य, चित्रक की छाल और सोंठ ये सब समान भाग लेवे, सब का चूर्ण करे और सब चूर्ण के बराबर भुनी हुई भांग तथा भांग से आधी सहजने की जड लेवे, सब को खरल कर अरनी, सहजना, चित्रक,

और अदरख इन के रस में भिगोयके धूप में धर देवे, फिर उस को सराव संपुट में रखके लघुपुट देवे जब शीतल हो जावे तब इस में अदरख के रस की सात भावना देवे यह ज्वालानलरस ४ मासे सहत में मिलाय कर देवे और ऊपर से सोंठ और गुड खबावे तो अजीर्ण, अतिसार, संग्रहणी, मंदाग्नि, कफ, हृत्लास, वमन, अलस, और अरुचि इन का नाश करे ॥

चिन्तामणिरस

रसं गंधं मृतं शुल्वं मृतमभ्रं फलत्रिकम् । त्र्यूपणं जय-
पालं च समं खल्वे विमर्दयेत् ॥ द्रोणपुष्पीरसं भाव्यं
शुष्कं तद्वस्त्रगालितम् । चिन्तामणिरसो ह्येष अजीर्णं
शंसते सदा ॥ ज्वरमष्टविधं हन्ति सर्वशूलहरः परः ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा आमवातहरः परः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, तामे की भस्म, अब्रक की भस्म, हरड, बहेडा, जाबला, सोंठ, मिरच, पीपल और जमालगोटा ये सब समान भाग लेके गोमा के रस में ररल करे जब सूख जावे तब पीसके कपरछन कर लेवे यह चिन्तामणिरस अजीर्ण पर कहा है यह आठ प्रकार के ज्वर, संपूर्ण शूल और आमवात इन का नाश करे इस रस की मात्रा दो रत्ती की है ॥

पञ्चमूल्यादिघृत

पञ्चमूल्याभयाव्योपपिप्पलीमूलसैधवम् । रास्नाक्षारद्व-
याजार्जाविडङ्गसठिभिर्घृतम् ॥ युक्तेन मातुर्लिंगस्य स्व-
रसेनार्द्रकस्य च । तक्रमस्तुसुरामण्डसौवीरकतुपो-
दकैः ॥ काञ्जिकेन तु यत्पक्वं पीतमग्निकरं स्मृतम् ।
गुल्मशूलोदरश्वासकासानिलकफापहम् ॥

अर्थ—पंचमूल, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, सैधानिमक, रासना, जवाखार, सज्जीखार, जीरा, वायविडंग, सोंठ की जड़ इन का काटा करके फिर पीको विजोरे का रस, भोंगरे का रस, छाउ, दही का जल, मद्य, गंद की बौनी, तुपों का काटा और काँजी इन सब को मिलायके पचन करावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार लेवे इस के सेवन करने से अग्नि की वृद्धि होते तथा गोला, शूल, उदररोग, श्वास, खोंसी, वादी और कफ इन का नाश करे ॥

दशमूलादिघृत

मरीचं पिप्पलीमूलं नागरं पिप्पली तथा । भल्लातक-
यवानी च विडंगं गजपिप्पली ॥ हिंगुसौवर्चलं चैव अ-
जाजीविडधान्यकम् । सामुद्रसैधवं क्षारं चित्रकं वचया
सह ॥ एभिरर्धपलैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् । दशमू-
लरसे सिद्धं पयसाष्टगुणेन वा ॥ मंदाग्रेश्च हितं सिद्धं
ग्रहणीदोपनाशनम् । विष्टंभमामं दौर्बल्यं ष्ठीहानमपि
कर्षयेत् ॥ कासं श्वासं क्षयं वापि दुर्नामानं भगंदरम् ।
कफजान्हंति रोगांश्च वातजान् कृमिसंभवान् ॥ तान्
सर्वान्नाशयत्याशु शुष्कं दावानलो यथा ।

अर्थ—मिरच, पीपरामूल, सोंठ, पीपर, भिलाए, अजमायन, वायविडंग, गजपीपर,
हींग, संचरनिमक, जीरा, विडनिमक, धनिया, समुद्रनिमक, सैधानिमक, जवाखार,
चीते की छाल और वच ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे इन का काढा करके इसमें
गौ का घी ६४ तोले, दशमूल का रस, दूध ये अठगुने मिलावे—फिर मंदाग्री पर
रखके सिद्ध करे यह संग्रहणी, विष्टंभ, आम, दुर्बलता, ष्ठीहा, श्वास, खासी, क्षय,
बवाशीर, भगंदर, कफ के रोग, कृमिरोग, इन को जैसे वन को अग्नि दहन करे है
इस प्रकार नाश करे ॥

धान्यादिघृत

धान्यजीरकसंसिद्धं घृतमग्निविवर्धनम् ।

रोचनं दोषशमनं वातपित्तविनाशनम् ॥

अर्थ—धनिया और जीरा इन के कोठे में घी मिलायके सिद्ध करे यह अग्नि को
बढावे रोचक तथा दोषनाशक है तथा वादी और पित्त इन को नाश करे ॥

अग्निघृत

पिप्पलीपिप्पलीमूलं चित्रकं गजपिप्पली । हिंगुचव्या-
जमोदा च पंचैते लवणानि च ॥ द्वौ क्षारौ हृषुपा चैव
दद्यादर्धपलोन्मिता । दधिकांजिकसूक्तानि स्नेहमात्रस-
मानि च ॥ आर्द्रकस्वरसप्रस्थं घृतप्रस्थे विपाचयेत् ।

एतदग्निघृतं नामं मंदाग्नीनां प्रशस्यते ॥ अशीसां ना-
शनं श्रेष्ठं तथा गुल्मोदरापहम् । नाशयेद् ग्रहणीदोषं
श्वयथुं सभगंदरम् ॥ ये च वस्तिगता रोगा ये च कुक्षिस-
माश्रयाः । सर्वास्तान्नाशयत्याशु सूयंस्तम इवोदितः ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, चित्रक, गजपीपल, हिंग, चव्य, अजमोद, पांचों निमक, सजीखार, जवाखार, हाँवेर ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे इन का काटा करके अथवा कलक करके इसमें दही, कांजी, सूत, घी और अदरक का रस ये प्रत्येक ६९ तोले मिलाय के मंदाग्नि पर चढायके पचन करे, ये अग्निनामक घृत मंदाग्नि को उत्तम है तथा बवासीर, गोला, जलंधर, संग्रहणी, सूजन, भगंदर, वस्ति और कूप इन के रोग इन सब को नाश करे जैसे सूर्योदयके होने से अंधकार का नाश होता है उसी प्रकार यह सब रोगों को नाश करे है ॥

शार्दूलकांजिक

पिप्पली शृंगवेरं च देवदारुं सचित्रकम् । चव्यं सविल्व-
पेशी च अजमोदां हरीतकीम् ॥ महौषधिं यवानीं च
धान्यकं मरिचं तथा । जीरकं चापि निहितं कांजिकं
साधयेद्भिषक् ॥ एष शार्दूलको नाम कांजिकोऽग्निचल-
प्रदः । सिद्धार्थतैलसंभृष्टो दश रोगान्व्यपोहति ॥ का-
सं श्वासमतीसारं पांडुरोगं च कामलाम् । आमं च
गुल्मशूलं च वातशूलं सवेदनम् ॥ अशीसि श्वयथुं चैव
भुक्तपातं च शाश्वतम् । क्षीरपाकविधानेन कांजिक-
स्यापि साधनम् ॥

अर्थ-पीपर, अदरक, देवदारु, चीते की छाल, चव्य, बेलगिरी, अजमोद, हरद, सोंठ, अजमायन, धनिया, काली विरच और जीरा, इन सब वस्तुओं को ढाड़के कांजी सिद्ध करे तो यह शार्दूल नामक कांजी अग्नि और चल को बढ़ावे। यदि इस को कद्दुए तेल में छोकके लेवे तो खासी, श्वास, अनिसार, पांडुरोग, कामला, आम, गोले का शूल, वातशूल, बवासीर, परिणामशूल और सूजन इन को दूर करे कांजी को बनावे तो क्षीरपाक की विधि से बनावे ॥

विषूचिकादिकीसंप्राप्तिनिदान
सूचीभिरिव गात्राणि तुदन्संतिष्ठतेनिलः ।
यत्राजीर्णे च सा वैद्यैर्विषूचीति निगद्यते ॥

अर्थ—अजीर्ण में वादी-सूई के से चक्का देह में करे उस को वैद्यों ने विषूची (हैजा) रोग कहा है इंग्रजी में इस को कौलेरा कहते हैं ॥

न तां परिमिताहारा लभन्ते विदितागमाः ।
मूढास्तामजितात्मानो लभन्तेशनलोलुपाः ॥

अर्थ—इस विषूचीका रोग को परिमाण का भोजन करनेवाले और वैद्यशास्त्र के ज्ञाता नहीं प्राप्त होते, किंतु जो मूढ हैं और आत्मा जिन की बशीभूत नहीं तथा भोजन के लालची है वो प्राणी इस विषूचिका रोग को प्राप्त होते हैं ॥

विषूचिकाकेलक्षण

मूर्च्छातिसारो वमथुः पिपासा शूलभ्रमो द्वेषनञ्जंभदाहाः ।
वैवर्ण्यकंपौ हृदये रुजश्च भवन्ति तस्यां शिरसश्च भेदः ॥

अर्थ—मूर्च्छा, अतिसार, वमन, प्यास, शूल, भ्रम, जांघोंमें पीडा, जंभाई, दाह, देह का विवर्ण, कम्प, हृदय में पीडा और मस्तक में पीडा ये लक्षण हों उस को विषूचिका कहते हैं इसीको महामारी अथवा हैजा कहते हैं ॥

विलंबिका व अलसक इन की चिकित्सा
विलंबिकालसकयोरुर्ध्वाधः शोधनं हितम् ।
नालेन फलवर्त्या च तथा शोधनभेषजैः ॥
दंडालसकेप्युच्चैरयमेव क्रियाक्रमः ।

अर्थ—विलंबिका और अलसक इन दोनोंको क्रमसे वमन और विरेचन हितकारी है तथा फलवर्ती और शोधन देना हित है. दंडालसक परभी यही क्रिया जाननी चाहिये ॥

फलवर्तिवमिस्वेदं लंघनं चापतर्पणम् ।

विशेषादलसे कुर्याद्विषूच्यामतिसारवत् ॥

अर्थ—कपट की बत्ती बनायके उस को रंचक औषधों में भिगोकर गुदा में रचने, वमन कराये, पसीने निकाले, लंघन कराये, अतृप्त करना, ये उपाय अलस-रोगपर विशेष फलके करे । दाहीके अतिसारोक्त यत्न करने चाहिये ॥

अलसककीनिरुक्ति

प्रयाति नोर्ध्वं नाधस्तादाहारो न विपच्यते ।

आमाशये लसीभूतस्तेनासौ लसको मतः ॥

अर्थ—जिस व्याधि में ऊपर और नीचे दोष न जावे तथा आमाश पचे नहीं वो दोष आमाशयमें लसी (लहस्सी)के समान होकर रहे उसको अलसक रोग कहते हैं ॥

अलसक व दंडालसकलक्षण

कुक्षिरानह्यतेत्यर्थं प्रताम्येत्परिकूजति । निरुद्धो मारुतश्चैवं कुक्षावुपरि धावति ॥ वातवर्चो निरोधश्च यस्यात्यर्थं भवेदपि । तस्यालसकमाचष्टे तृष्णोद्धारौ तु यस्य च ॥

अर्थ—कूख में और पेटमें अफरा हो, मोह होय, पीड़ासे पुकारे, पवन चलने से रुककर कूख में और कंठादि स्थानों में फिरे, मलमूत्र और गुदाकी पवन रुके, प्यास बहुत लगे, डकार आवे ये लक्षण जिस में होय उस को अलसक रोग कहते हैं ॥

वायुः कंपभ्रमानाहशूलादीन्प्रकरोति च । पित्तं ज्वरातिसारौ च दाहादीन्स्वेदनानि च ॥ श्लेष्मांगगुरुताच्छर्दिवाक्संगष्टीवनानि च । लुब्धास्ते लसको दोषाश्छर्द्यतीसारवर्जिता ॥ कारकास्तत्रिशूलादेः स्रोतसः सनिरोधकाः । तिर्यग्गतास्तनुं स्तब्धा दंडवत्स्तंभयंति च ॥ स दंडालसकस्त्याज्यः शीघ्रं देहविनाशकृत् ।

अर्थ—इस दंडालसकरोगमें कफ, भ्रम, अफरा, और शूल आदि रोगोंको करती है । तथा पित्तज्वर, अतिसार, दाह, पसीने आना, कफ, देहका भारी होना, वमन, वाणिका रुकना, वारंवार थूकना, इनको करे, यदि वातादि दोष कुपित्त हो वमन और अतिसारको न करावे तो वो त्रिक स्थानमें शूल, और छिद्रोंका रुकना यह करे. तथा तिरछे मार्गमें प्राप्त हो देहको दंडक (लकड़ीके) समान देहको स्तंभित करदेवे. यह दंडालसक रोग तत्काल देहको नष्ट करे इसवास्ते वैद्य इस रोगीको त्याग देवे ॥

विलंबिका लक्षण

दुष्टं च भुक्तं कफमारुताभ्यां प्रवर्तते नोर्ध्वमधश्च यस्याम् ।

विलंबिकां तां भृशदुश्चिकित्स्यामाचक्षते शास्त्रविदः पुराणाः ॥

अर्थ—जिस मनुष्य के भोजन करा भया, अन्न, कफ वातकरके दूषित होय ऊपर नीचे नहीं जाय अर्थात् वमन, विरेचन न होय, उस को वैद्यविद्या के जाननेवाले जिस की चिकित्सा नहीं ऐसा विलंबिकारोग कहते हैं । * कोई शंका करे कि अलसक और विलंबिका इन दोनों की गतकफ के प्रबल होने से ऊपर नीचे प्रवृत्ति होती है इन दोनों में भेद क्या है सो कहो । * उत्तर—अलसकमें शूल आदि घोर पीडाकर्तारोग होते हैं और विलंबिका में नहीं हैं इतनाही भेद है ॥

अजीर्णसे उत्पन्न हुए आम के कार्य

यत्रस्थमामं विरुजे तमेव देशं विशेषेण विकारजातैः ।

दोषेण येनावततं शरीरं तल्लक्षणैरामसमुद्भवैश्च ॥

अर्थ—जिस ठिकानेपर आम रहता है उस ठिकानेपर जिस दोष से वह स्थान व्याप्त हो उस के लक्षण करके (पीडा, दाह, गौरव आदि) और आमजन्य विकारकरके (आमवातादिक) विशेष पीडा होती है। इससे जाना गया कि और ठिकानेपर थोड़ी पीडा होती है और (यत्र) इस सर्वनाम शब्द से कुपित भये वातादिकों के सदृश आम का कोई स्थान नहीं है ये दिखाया ॥

विषूची और अलसक इन के असाध्य लक्षण

यः श्यावदंतोष्ठनखोल्पसंज्ञो वम्यादितोभ्यंतरयातनेत्रः ।

क्षामस्वरः सर्वविमुक्तसंधिर्यायात्ररोसौ पुनरागमाय ॥

अर्थ—जिस रोगी के दांत, नख, होठ काले पडजावे और संज्ञा जाती रहे वमन से पीडित होवे और नेत्र भीतरको बैठ जाय मन्द स्वर हो तथा हाथपैरकी संधि ढीली पड जाय वो मनुष्य बचे नहीं, विलंबिकास्वरूपसे ही असाध्य है यह जैजट आचारी का मत है ॥

जीर्णआहारलक्षण

उद्गारशुद्धिरुत्साहो वेगोत्सर्गो यथोचितः ।

लघुता क्षुत्पिपासा च जीर्णाहारस्य लक्षणम् ॥

अर्थ—शुद्ध डकार आवे, शरीर मन का प्रसन्न होना, जैसा भोजन करा हो उस सदृश मलमूत्र की भले प्रकार प्रवृत्ति होना, शरीर हलका होय परंतु कोष्ठ विशेष हलका हो, भूंस और प्यास लगे, यह भोजन पचने के उत्तर लक्षण होते हैं ॥

विषूचिका के उपद्रव
निद्रानाशोरतिः कंपो मूत्राघातो विसंज्ञिता ।
अमी उपद्रवा घोरा विषूच्यां पंच दारुणाः ॥

अर्थ—निद्रा का नाश, मन का न लगना, कम्प, मूत्र का रुकना, संज्ञा का नाश ये विषूचिका के घोर पांच उपद्रव हैं ॥

विषूचिकाचिकित्सा

विषूच्यामतिवृद्धायां पाण्योर्दाहः प्रशस्यते ।
गंधकं कुंकुमं वापि दद्यान्निबुजलेन वा ॥

अर्थ—विषूचिका अत्यंत बढ़ने पर हाथोंमें दाग देवे अथवा गंधक वा केशर को नीबू के रस में मिलायके पीवे तो विषूचिका रोग दूर हो ॥

लशुनाद्यचूर्ण

लशुनजीरकसैंधवसंचलं त्रिकटुरामठचूर्णमिदं समम् ।
सपदि निंबुरसेन विषूचिकां हरति भो रतिभोगविचक्षणे ॥

अर्थ—लहसन, जीरा, सैधानिमक, संचरनिमक, सोंठ, काठी मिरच, पीपल, और हींग इन के चूर्ण को नीबू के रस में मिलायके खाय तो हे रतिभोगविचक्षणे ! विषूचिका (हैजा) का नाश होवे ॥

अपामार्गादियोग

जलपीतमपामार्गमूलं हन्याद्विषूचिकाम् ।
सतैलं कारवेलांबु विधुनोति विषूचिकाम् ॥

अर्थ—आंगा की जड़ को जल में औटायके पीवे, अथवा करेले का रस तेल मिलाके पीवे तो विषूचिका रोग नष्ट होवे ॥

वालमूत्रादिकाढा

वालमूत्रस्य निःकाथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः ।
विषूचिनाशनः श्रेष्ठो जठराग्निविवर्द्धनः ॥

अर्थ—बछड़े के मूत्र के काठे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे, तो विषूचिका रोग नष्ट होवे और जठराग्नि वर्द्धित होवे ॥

तक्रयोग

तत्रेण युक्तं यवचूर्णमुष्णं सक्षारमार्तिं जठरस्य हन्यात् ।

स्वेदो घटैर्वा बहुवाष्पपूर्णैरुष्णैस्तथान्यैरपि पाणित्तोयैः ॥

अर्थ—जौ के चूर्ण को छाछ में मिलाय गरम कर उस में जवाखार मिलायके पीषे उसी प्रकार गरम जल की वाफ अथवा शेक किवा हाथों को सेकना ये सब उपचार विपूचिका रोग नाशक है ॥

विल्वादिकाढा

विल्वनागरनिःकाथो हन्याच्छर्दिं विपूचिकाम् ।

विल्वनागरकैडर्यकाथः स्यादधिको गुणैः ॥

अर्थ—वेलगिरी और सोंठ इन का काढा वमन, विपूचिका, इन का नाशक है तथा वेलगिरी और सोंठ तथा कायफर इन का काढा पहले काढे की अपेक्षा अधिक गुणकारी है ॥

यवपिष्टलेप

यवपिष्टजवक्षारलेपस्तत्रेणसंयुतः ।

उष्णकृतो हरेत्सद्यो जठरार्तिं सुदुर्जयाम् ॥

अर्थ—जों का चून और जवाखार इन को छाछ में मिलायके ओटावे फिर इस का सुहाता लेप करे तो कैसा ही उदरशूल हो वो तत्काळ शांति होवे ॥

कुष्ठादिलेप

कुष्ठसंधवयोः कल्कं चुक्रतैलसमन्वितम् ।

विपूच्यामर्दनं कोष्णं खल्लीशूलनिवारणम् ॥

अर्थ—कूठ, और संधानिमक, इन के चूर्ण को चूका के तेल में मिलायके मंदोष्ण कर अंग में लेप करे तो विपूचिका और खल्लीशूल इन को दूर करे है ॥

साधारणलेप

सरुग्वानद्धमुदरमम्लपिष्टैः प्रलेपयेत् ।

दारुहैमवतीकुष्ठशताह्वार्दिगुसंधवैः ॥

अर्थ—शूलयुक्त फूले हुए पेट पर सट्टे रस में दारुहलदी, हरड, कूट, शतावर, हांग और संधानिमक पीसके लेप करे तो शूल और पेट का फलना दूर होषे ॥

लवंगादिचूर्ण

शाणद्वयं स्यात्तु लवंगमेलजातीफलं कोलसुनागफेनम् ।
मापप्रमाणं सकलं विचूर्ण्य शाणं कवोष्णेन जलेन पीतम् ॥
विपूचिकां हन्ति सुदारुणां च शूलातिसारौ वमथुः प्रसक्तः ।

अर्थ—लौंग ८ मासे, इलायची और जायफल ये दोनों आधे २ तोले, अफीम एक मासे; इन सब का चूर्ण एकत्र करके गरमजल के साथ छः मासे सेवन करे तो दारुण विपूचिका, शूल, अतिसार और वमिष इन का नाश करे ॥

पथ्यादिचूर्ण

पथ्यावचाहिंगुकलिगभृंगसौवर्चलैः सातिविपैः सचूर्ण्य ।
सुखांबुपीतो विनिहंत्यजीर्णशूलं विपूर्चां कसनं च सद्यः ॥

अर्थ—हरड, वच, हींग, कूडा की छाल, भांगरा, संचरनिमक, और अतीस इनके चूर्ण को सुहाते २ गरमजल के साथ पीवे तो अजीर्ण, शूल, हैजा, और खांसी इनको तत्काल दूर करे ॥

शंखद्राव

लवणानि तथा क्षाराः प्रत्येकं पंचभागिका । कासीसं टंकणं
तुत्थं गंधकं निंबुकद्रवम् ॥ तिलापामार्गजं क्षारप्रत्येकं वेदभा-
गिकम् । नवसागरसौराष्ट्रीसर्जिकानेत्रभागिका ॥ एतत्सर्वं
समालोढ्य भाव्यं जंजीरनीरतः । सरंध्रे नलिकायंत्रे यामयुग्मं
विपाचयेत् ॥ शंखद्रावो भवेदेप सर्वदोषनिवृत्तनः । लो-
हपापाणशंखानां द्रावकोयं न संशयः ॥

अर्थ—पाँचों निमक, तथा संपूर्णक्षार, ये प्रत्येक पाँच २ भाग ले, हीराकसीस, मुहागा, गीला योथा, गंधक, नींबू का रस, तिल, आँगा, इन का क्षार प्रत्येक ४ भाग लेवे, नास-
र, फिटकरी, और सज्जीखार ये प्रत्येक दो २ भाग लेवे इन सब को एकत्रकर नी-
ंबू के रस में खरल करे, फिर नलिका यंत्र में भरके दो प्रहर पचावे तो यह शंखद्राव
उद्भूत होवे यह संपूर्ण दोषों का नाश करे है, यह लोह, पत्थर, शंख इत्यादि जो वस्तु
स में डालो उसी का पानी कर देता है इस में संदेह नहीं है ॥

दालचिनीतैल

त्वक्पत्ररास्नागुरुशियकुष्ठैरम्लप्रपिष्टैः सवचाशताह्वैः ।
उद्धर्तनं खल्लिविपूचिकाघ्नं तैलं विपक्वं च तदर्थकारि ॥

अर्थ—दालचीनी, पत्रज, रास्ना, अगर, सहजने की जड़, कूट, वच, और शतावर इन सब को नीबू के रस में पीसके देह में मालिस करे अथवा तेल बनाय लेवे इस तेल-को देह में लगावे तो वादी और हैजा इन को नष्ट करे ॥

चुक्रतैल

पलं चुक्रं कुष्ठं पिचुयुगमितं सैधवकणा तदर्धप्रत्येकं करत-
लमितं जातिफलकम् । कटुं तैलं किञ्चित्कुडवमितिमग्नाव-
धिशतं तदेतच्चुक्राद्यं शमयति विपूचीं च गदहम् ॥ कुष्ठसैध-
वयोः कल्कं चुक्रतैलसमन्वितम् । विपूच्यां मर्दनं कोष्णं
खल्लीशूलनिवारणम् ॥

अर्थ—चूका ४ तोले, कूट ४ तोले, नीम की छाल २ तोले, सैधानिमक १ तोले, पीपल १ तोले, जायफल १ तोले, सरसों का तेल १६ तोले अथवा सर्व चूर्ण बूड जावे इतना तेल मिलायके सिद्ध करे इस को विपूचिका में लगावे तो नष्ट होवे—तथा कूट और सैधानिमक इन का कल्क और चूका का तेल डालके विपूचिका पर गरम करके मा-लिस करे तो वायु रोग तथा शूल इन को नष्ट करे ॥

अर्कादितैल

अर्कस्य च रसप्रस्थं प्रस्थं धतूरकस्य च । श्वेतसुहिर-
सप्रस्थं प्रस्थं सौभांजनाद्रसात् ॥ कुष्ठसैधवयोः कल्कं
पले द्वे द्वे प्रमाणतः । तैलप्रस्थं कांजिकेन पचन् मृद्र-
ग्निना समम् ॥ खल्लीं विपूचिकां हन्ति पक्षाघातं च गृध्रसीम्

अर्थ—आक का दूध ६४ तोले, धतूरे का रस ६४ तोले, सपेद थूहर का रस ६४ तोले, सहजने का रस ६४ तोले, कूट और सैधानिमक इन का कल्क दो दो पल तेल ६४ तोले, और कांजी ८४ तोले सब को मिलाय के मंदाग्नि से पचावे जब तेल मात्र आय रहे तब उतारके लगावे तो यह पल्लीवात, विपूचिका, पक्षाघात और गृध्रसी इन का नाश करे ॥

तक्र

विषूच्यामतिवृद्धायां तक्रं दधिसमं जलम् ।

नारिकेरांबुपेयां वा प्राणत्राणाय योजयेत् ॥

अर्थ—अत्यंत बढी हुई विषूचिका में छाल अथवा दही ले उस में समान भाग जल मिलाय ले अथवा नारियल के पानी से पेया करे और पीवे तो प्राणों की रक्षा होवे ॥

पानी

पिपासायां तथोत्केशे लवंगस्यांबु शस्यते ।

जातीफलस्य वा शीतं शृतं भद्रघनस्य वा ॥

अर्थ—तृषा अथवा उतकेश इन में लौंग अथवा जायफल अथवा नागरमोषा इन का जल औंढायके शीतल करके देवे ॥

विलंबिका व अलसिकाचिकित्सा

विलंबिकालसकयोरयमेव क्रियाक्रमः ।

अतएव तयोरुक्तं पृथङ् नैव चिकित्सितम् ॥

अर्थ—विलंबिका और अलसक इन पर विषूचिका के ऊपर जो चिकित्सा कही है वही इन दोनों में करे इन दोनों में विषूचिकारोगसे भिन्न चिकित्सा नहीं कही ॥

हस्तिकर्णयोग

हस्तिकर्णाश्च दंतश्च पिप्पलीकंदसंयुतः ।

पीता कोष्णेन तोयेन क्षिप्रं हन्याद्विषूचिकाम् ॥

अर्थ—हस्तिकर्णपलास की जड़ और हाथीदांत पीपल और प्याज इन को गरम जल में पीसके पीने को देवे तो विषूचिका का नाश होवे ॥

निंबुरसयोग

निंबुरसं चिंचिणिकासमेतं विषूचिकाशोपहरं कफं च ।

दुग्धेन पीतो यदि टंकणोसौ प्रशाम्यतेयं वमनं निरुध्यात् ॥

अर्थ—नींबू के रस में पुरानी इमली को मिलायके पीवे तो विषूचिका शोष और कफ इन का नाश होवे तथा दूध में सुहागा डालके पीवे तो विषूचिका तथा वमन करना बंद होवे ॥

करंजादिकपाय

करंजं निंबुशिखरीगुडूच्यर्जुनवत्सकैः ।

पीतः कपायो वमनात् घोरां हन्याद्विपूचिकाम् ॥

अर्थ—कंजे की छाल, नीम की लकड़ी, आंगा की जड़, गिठोय, कोह और कूब की छाल इन का काटा देय तो वमन होकर विपूचिका नाश होवे ॥

उत्क्लेशलक्षण

उत्क्लेश्यान्नं न निर्गच्छेत्प्रसेकष्टीवनेरितम् ।

हृदयं पीड्यते चास्य तमुत्क्लेशं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ—वमन होने की सी भ्रांति तथा मुँह में से पानी छूटे, धारंवार थूके, द्रव्य दूखे परंतु वमन न होवे उस को उत्क्लेश कहते हैं ॥

कटुत्रयरस

कटुत्रयं जीरकहिंगुसिंधूरसोनगंधं च समं विमर्द्य ।

निंबुद्रवेणाशु निहंति तूर्णं विपूचिकां दुष्टविलंबिकां च ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, हींग, सेंधानिमक, लहसन और गंधक दों संपूर्ण वस्तु समान भाग लेके पीसे कलरु करके नीबू के रस से देवे तो दुष्ट विपूचिका और विलंबिका इन का नाश होवे ॥

व्योपादिअंजन

व्योपं करंजस्य फलं हरिद्रे मूलं समावाप्य च मातुलुंग्याः ।

छायाविशुष्का गुटिकाः कृतास्ता हन्युर्विपूचीं नयनांजनेन ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, कंजे के बीज, दारुहळदी, हलदी, और विजोरे की जड़ इन सब को कूट पीस गोली बनावे उस को छाया में सुखाय के धर रक्खे फिर जल में घिसके नेत्रों में अंजन करे तो विपूचिका का नाश होय ॥

अपामार्गाद्यंजन

अपामार्गस्य पत्राणि मरीचानि समानि च ।

अश्वस्य लालया पिष्टान्यंजनाद्धंति सूचिकाम् ॥

अर्थ—आंगा के पत्ते और काली मिरच ये दोनों समान भाग लेवे दोनों को घोडे की लार में पीसके अंजन करे तो विपूचिका (हैजे की विमारी) दूर होवे ॥

विल्वादिअंजन

विल्वस्य मूलं शिरसस्य मूलं फलं करंजस्य नतं सुराह्वम् ।
फलत्रयं व्योपनिशाद्वयं च वस्तस्य मूत्रेण सुसूक्ष्मपिष्टम् ॥
भुजंगलूतोदरवृश्चिकादिविषूचिकाजीर्णहरं ज्वरघ्नम् ।

अर्थ-बेल की जड़, सिरस की जड़, कंज के बीज, तगर, देवदारु, हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल, हरदी, दारुहरदी इन सब को बकरे के मूत्र में खरल करके गोली बनावे इस को जल में घिसके अंजन करे तो सांप, लूता, बीछू, इत्यादिकों का विष तथा जलंधर, विषूचिका, अजीर्ण और ज्वर इन का नाश होवे ॥

अजीर्णादिकों पर पथ्य

श्लेष्मिके वमनं पूर्वं पैत्तिके मृदुरेचनम् । वातिके स्वेदनं
वाप्यं पथ्यापथ्यं हितं हि यत् ॥ नानाप्रकारो व्यायामो
दीपनानि लघूनि च । बहुकालसमुत्पन्ना मुद्गलोहित-
शालयः ॥ विलेपी लाजमंडश्च मंडो मुद्गरसस्तथा । ए-
णो वह्निः शशो लावः क्षुद्रमत्स्याश्च सर्वशः ॥ शालिं
च शाकं वेत्रायं वास्तुकं बालमूलकम् । लशुनं वृद्धकू-
प्पाडं नवीनं कदलीफलम् ॥ सोभांजनं पटोलं च वा-
र्त्ताकं ललदंबुजम् । कर्कोटकं कारवेलं बार्हतं च महा-
द्रकम् ॥ प्रसारणी काकमाची चांगेरी सुनिपण्णकम् ।
धात्रीफलं नागरं च दाडिमं यवपर्पटाः ॥ अम्लवेतस-
जंवीरमातुलुंगानि माक्षिकम् । नवनीतं घृतं तक्रं सौ-
वीरकतुपोदकम् ॥ धान्याम्लं कटुतैलं च रामठं लव-
णार्द्रकम् । यवानी मरिचं मेथी धान्यकं जीरकं दधि ॥
तांबूलं तप्तसलिलं कटुतिकौ रसस्तथा । मन्दानलेप्य-
जीर्णे च पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥

अर्थ-मंदाग्नि, अजीर्ण (विषूचिका और भस्मरोग) ये यदि कफजन्य होंगे तो प्रथम वमन देवे, और पित्तजन्य होंगे तो नरम विरेचन देवे । और वात जनित

होय तो स्वेदन कर्म करे, ये यथा काल में हितकारी होते हैं । तथा अनेक प्रकार के व्यायाम (मेहनत) दीपन, हलके और बहुत दिन के लाल चावल, विलेपी, खीलों का मॉँढ, मंड (चावल आदि का) मूँग का रस (पानी) (मद्य) तथा कालाहरिण, मोर, शशा, लवा, सब प्रकार की छोटी मछली, शालिंच शाक, वेतकी आगे की कोपल, वथुआ, नरम २ मूली, लहसन, पुराना पेठा, नवीन केला की फली (गहर) सौभांजन (सहजना,) परवल, वैगन, (खसका सुगंधित जल) कमल, ककोडा, करेला, कटेरीका फल, अदरक, प्रसारणी, मकोय, लोनिया का साग, चौपतिया, आवले, सॉँठघाडकी, (नारंगी) अनार, (क्षार) जों, पित्तपापडा (पापड) अमलवेत, जंभीरी, विजोरानिंबू, सहत, मक्खन, घृत, छाछ, कांजी, तुषोदक, धान्याम्ल, (धान की कांजी) कडवा तेठ, हींग, निमक और अदरक, अजमायन, काली मिरच, मेथी, धनिया, जीरा, दही, पान, गरम, जल कडुए और चरपरे रस, मंदाग्नि-पर और अजीर्णपर ये पदार्थ पथ्यकारी हैं ॥

अपथ्य

विरेचनानि विण्मूत्रवातवेगविधारणम् । अतिवेलं चा-
ध्यज्ञं जागरं विपमाशनम् ॥ रक्तश्रुतिं शिबिधान्यं
मत्स्यं मांसमुपोदिकाम् । जलपानं च विष्टंभं जांबवं
सर्वशालुकम् ॥ कूर्चिकां मोरटं क्षीरं किलाटं च प्रपान-
कम् । लालनं सस्यतद्भालस्नेहनं दुष्टवारि च ॥ विरु-
द्धासात्म्यपानानां विष्टंभीनि गुरुणि च । अग्निमांघे-
प्यजीणं च सर्वाणि परिवर्जयेत् ॥

अर्थ— विरेचन, मल, और मूत्र इन के वेग का धारण करना, भोजन करने के अनंतर तत्काल फिर भोजन करना, जागना, विपमाशन, (विपम भोजन करना) रुधिर का निकालना, दोदल (जैसे मूँग मोठ चना आदि) का खाना, मछली, मांस, पोई का साग, जल पीना, विष्टंभकारी (जिसे अफरा होवे ऐसे पदार्थ) पिसा अन्न (सून मैदा आदि) जामुन, सर्व प्रकार के कमलों के कंद, कूर्चिका (चावलों को धीमें औ. टाना) सात दिन की व्याही हुई गौ का दूध, किलाट (फटे दूध का खोहा) पना, चि-रोजी (तालफल की मिमी, धनिया, नेत्रवाला, स्नेहपदार्थ) वा स्नेहन कर्म (बुरा-पानी) विरुद्ध और असात्म्य ऐसे अन्न, तथा जल, विष्टंभी और भारी पदार्थ, ये अग्निमांघ्य और अजीर्णरोग पर त्याग देने चाहिये ॥

दूसरा प्रकार ❀

मृतसूताभ्रलोहार्कविपमं गंधकं समम् । सर्वतुल्यांशभल्लातफलमेकत्र चूर्णयेत् ॥ द्रवैः सूरणकंदोत्थैः खल्वे मर्द्यं दिनत्रयम् । मापमात्रां लिहेदाज्यैरसश्वाशीसि नाशयेत् ॥ रसोनित्योदितो नाम गुदोद्भवकुलांतकः । हस्ते नाभौ मुखे पादे गुदे वृषणयोस्तथा ॥ शोथो हृत्पार्श्वशूलं च यस्यासाध्यार्शांसांहितः । असाध्यस्यापि कर्तव्या चिकित्सा शंक्रोदिता ॥

अर्थ—पारे की भस्म, अभ्रक, लोहभस्म, तामे की भस्म, सिंगिया विप, और धक ये समान भाग लेवे सब की बराबर भिलाए का चूर्ण मिलावे सब को एकत्र पीसके जमीकंद के रस से तीन दिन सरल करे इस को १ मासे पी के साथ देवे यह नित्योदितरस बवासीर का नाश करे तथा हाथ, पैर, नाभि, मुख, गुदा, और वृषण इन की सूजन और हृदय तथा पसवाडे इन का शूल और असाध्य बवासीर इन को नाश करे तथा असाध्य बवासीर चिकित्सा शंक्रोदित करनी चाहिये ॥

नित्योदितरस

वेपरविगंगनायः सूतगंधं समांशं समद्भुजद्रावैर्भावितं सप्तवारम् । अबलगुदजकीलं हंति नित्योदितोसौ मलहति मलबंधे मापमात्रःसर्षपः ।

अर्थ—सिंगिया विप, तामे की भस्म, अभ्रक, लोहभस्म, शुद्ध पारा, और गंधक ये समान भाग लेवे सब को कूट पीस चित्रक के रस की सात भावना देवे यह नित्योदितरस बवासीर और मलबंध इन पर एक मासे भर पी के साथ देवे तो बवासीर का नाश करे ॥

अर्शकुठार

भागः शुद्धरसस्य भागयुगुलं गंधस्य लोहाभ्रयोः पद्मविल्वाम्ब्रिहन्वूपणाभयरजोदंती च भागैः पृथक् । पंच स्युः स्फुटटकणस्य च यवक्षारस्य सिंधूद्रवा भागाः पंच गवांजलेषु विमले द्वात्रिंशदेतत्पचेत् ॥ सुकृद्गुग्धं च गवां जलावधिशनैः पिंडीकृतं तद्भवेद्द्वौ मापौ गुदकीलकाननजटाच्छेदे कुठारो रसः ।

• यह विषय बवासीर रोगमें लिखने का था ।

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, लोहभस्म और अभ्रकभस्म ६ भाग, बेलगिरी, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरितकी और जमालगोटा ये प्रत्येक एक २ भाग लेवे सुहागा, जवाखार, सैंधानिमक ये पांच २ भाग लेवे सब को एकत्र कर गोमूत्र ३२ भाग में ढालके पचावे तथा धूहर का दूध ३२ तोले ढालके फिर पचावे जब गाढा हो जावे तब दो दो मासे की गोली बनावे यह रस गुदा के अंकुरों को तोड़ने में कुठारी के समान है इसी से इस रस को वैद्यजन अर्शकुठार कहते हैं ॥

पडाननरस

वैक्रांतताम्राभ्रकगंधकानां रसस्य कांतस्य समानभागम् ।

चूर्णं भवेत्तेन पडाननोयमर्शोविनाशाय च वल्लमात्रम् ॥

अर्थ-वैक्रांतमणी, ताम्बे की भस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध गंधक, पारा और कांत-लोह की भस्म ये सब समान भाग लेवे सब को घोट लेवे तो यह पडाननरस बने इस को बवासीर दूर करने के वास्ते तीन रत्ती के प्रमाण देवे ॥

पीयूषसिंधुः

शुद्धं सूतं पद्मगुणं जीर्णगंधं काचे पात्रे वालुकायंत्रयोगात् ।

भस्मीकृत्वा योजयेदत्र हेम तत्तुल्यांशं भस्म लोहाभ्रयोश्च ॥

सूतस्तुल्यं गंधकं मेलयित्वा खल्वे मर्द्यं सूरणस्य द्रवेण ।

दंती मुंडी काकमाची हलाख्या भृंगाको निः सप्तमैषां रसेन ॥

क्षित्वा पश्चाद्धान्यराशौ त्रिघस्रं चूर्णं कृत्वा मापमात्रं ददाति ।

अर्शोरोगे दारुणे च ग्रहण्यां शूले पांड्यामम्लपिते क्षये च ॥

श्रेष्ठं क्षौद्रं चानुपानं प्रशस्तं रोगोक्तं वा मापपद्कप्रयोगात् ।

सर्वे रोगा यांति नाशं जरयां वर्षे द्वंद्वसेवनीयं प्रयत्नात् ॥

पथ्यं साम्लं चाम्लयोगादियोपिद्वर्ज्यां देयं सर्वरोगप्रशांत्यै ।

पुष्टिं कांतिं वीर्यवृद्धिं सदा च सेवायुक्तो मानवः संलभेत ॥

अर्थ-शुद्ध पारे को लेकर वालुकायंत्र में पद्मगुण गंधक जारण करे फिर उस पारे के समान भाग सुवर्णभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म और गंधक ये मिलायके जमीकंद के रस में-दंती, गोरखपुंडी, मकोय, मद्य, भांगरा, आक और चित्रक इन प्रत्येक के रस की सात २ भावना देवे फिर गोला बनाय के तीन दिन धान की राशि में दाबके धर देवे चौथे दिन निकालके इस में से १ मासे की मात्रा देवे यह उग्र बवासीर का

रोग, संग्रहणी, शूल, पांडुरोग, अम्लपित्त और क्षय इन में सहत के साथ देवे। अथवा रोगोक्त अनुपान के साथ देवे। यह छः मासे भक्षण करने से संपूर्ण रोग तथा शुद्धापा दूर होवे। इस वास्ते प्रयत्न से सेवन करना चाहिये इस के सेवन करनेवाले को खटाई और स्त्रीसंग इन को त्यागके और जो सात्म्य होवे सो देवे तो पुष्टि, कांति और वीर्य वृद्धि ये प्राप्त होवे ॥

चक्रबन्धरस

दिनत्रयं गंधस्रमं रसेंद्रं विमर्दयेच्छ्वेतवसुद्रवेण । ताम्रस्य
चक्रेण निवध्य वह्निहरीतकीभृंगरसैर्विमर्द्य ॥ कटुत्रयेणा-
पि ददीत गुंजाद्वयं मरुत्पायुरुहप्रशांत्यै ॥ चक्रबन्धरसोयं
हि सर्वरोगोपकारकः । एतैस्तु गंधकेनैकं पुटं चैव प्रदापयेत् ॥

अर्थ—पारा और गंधक इन दोनों को सपेद पुनर्नवा के रस में तीन दिन खरल करे फिर इस में तामे की भस्म डालके खरल करे तो चक्र के समान पारा बद्ध होवे फिर उस को चित्रक, हरड, भांगरा, सोंठ, काली मिरच और पीपल इन के रस में तथा काठे में खरल कर दो दो रत्ती की गोली बनावे १ गोली वातार्श (वादी की बवासीर) दूर करने को देवे। यह चक्रबन्ध रस सर्व रोगनाशक है इस में गंधक की एक पुट देनी चाहिये ॥

पर्पटीरस

रसेंद्रगंधं सुदृढं विमर्द्य सर्पिर्युतं तत् द्विगुणं च बोलम् ।
तावत्क्षिपेल्लोहमये द्रवं स्यात् क्षिपेच्च रंभादलयुग्ममध्ये ॥
ततो रसः पर्पटिकाभिधानः समस्तदुर्नामनिकृंतनः स्यात् ।
संसेवितो वल्लचतुष्कमात्रः शोथातिसारवंमिरं गसादनम् ॥
तृष्णाज्वरारोचकवह्निमांघ्रं गुदस्य पाकं हृदयं हि शूलम् ।

अर्थ—पारा, गंधक इन दोनों की कजली करके इस में धी और धीजा बोल का ना चूर्ण डालके सब को लोह के पात्र में भरके अग्नि पर चढावे और पतला करे फिर इस को केले के पत्ते पर दाल देवे और तन्हाल दूसरे पत्ते से ढक्के गी के गोबर का दाब देवे। यह पर्पटीरस चार बल्ल (१२ रत्ती) अनुपान के साथ देवे तो संपूर्ण कार की बवासीर, सूजन, अतिसार, वांति, अंगों का रह जाना, प्यास, ज्वर, अरुचि, दाभि, गुदापाक, हृदय का शूल, संपूर्ण बवासीर के विचार और शूल इन को नाश करे ॥

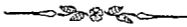
भल्लातकावलेह

चित्रकं त्रिफला मुस्तं ग्रंथिकं चविकामृता । हस्तिपिप्पल्यपा-
 मार्गो दंडोत्पलकुडेरकः ॥ एषां चतुःपलान्भागान् जलद्रोणे
 विपाचयेत् । भल्लातकसहस्रे द्वे छित्त्वा तत्रैव दापयेत् ॥ तत्र
 पादावशेषेण लोहपात्रे पचेद्भिपक् । तुलार्धं तीक्ष्णलोहस्य घृ-
 तस्य कुडवद्वयम् ॥ त्र्यूपणं त्रिफला वह्निसैधवं विडमौद्भिदम् ।
 सौगंधिकविडंगानि पलिकांशानि कल्पयेत् ॥ कुडवं वृद्धदा-
 रोश्च तालमूल्यास्तथैव च । सूरणस्य पलान्यष्टौ चूर्णीकृत्वा
 विनिःक्षिपेत् ॥ सिद्धे सति प्रदातव्यं मधुनः कुडवद्वयम् । प्रा-
 तभोजनकाले वा ततः खादेद्यथावल् ॥ अशीसि ग्रहणीदोषं
 पांडुरोगमरोचकम् । कृमिगुल्माश्मरीनाहान् शूलं चापि व्यपो-
 हति ॥ भवेच्छुक्रोपमं चक्षुर्वलीपलितनाशनम् । रसायनमिदं
 श्रेष्ठं सर्वरोगहरं परम् ॥

अर्थ—चीते की छाल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, पीपरामूल, चव्य, गि-
 लोय, गजपीपल, आंगा की जड, कमल, सहदेई की जड और आजबला ये प्रत्येक
 सोलह २ तोले लेवे सब को २०४ तोले जल में डाले तथा २००० भिलाओं को तोड़
 के उस में गेरे फिर लोहे के कटाव में चढायके चतुर्थांश काढा करे इस में तीक्ष्ण
 (खेरी) लोह की भस्म २०० तोले डाले; घी ३२ तोले तथा त्रिकुटा, त्रिफला, चित्रक,
 सैधानिमक, विडनिमक, सोरा, संचरनिमक, और वायविडंग ये प्रत्येक चार २ तोले
 तथा वृद्धदारु (विधायरो) १६ तोले, तालमूली (मूसली) १६ तोले और जमीकंद
 ३२ तोले इन सब का चूर्ण करके उस में डाल देवे फिर चूल्हे पर चढाय गाढा होने
 पर्यंत औटावे, जब गाढा हो जावे तब उतारके शीतल करे फिर इस में सहत ३२
 तोले डाले तो यह भल्लातकावलेह सिद्ध होवे । इस को प्रातःकाल अथवा भोजन
 के समय बलाबल विचारके देवे तो बवासीर, संग्रहणी, पांडुरोग, अरुचि, कृमिरोग,
 गोला, पथी, अफरा और शूल इन को नाश करे तथा शुक के समान नेत्र होवे और
 वली तथा पलित इन का नाश करे यह सर्व रोगनाशक उत्तम रसायन है ॥

इति श्रीबृहन्नृषिण्डुरत्नाकरे अजीर्णरोगनिदानचिकित्सा समाप्ता ॥

कृमिरोगाधिकारः ।



कृमिनिदान

कृमयस्तु द्विधा प्रोक्ता बाह्याभ्यन्तरभेदतः । वहिर्मलकफासृ-
ग्विद्वज्जन्मभेदाच्चतुर्विधाः ॥ नामतो विंशतिविधा-

अर्थ—कृमिरोग दो प्रकार का है एक बाहर का दूसरा भीतरका तहां बाहर के मल (पसीना आदि) और कफ, रुधिर, विष्टा इन कारणों से बाहिः कृमिरोग चारि प्रकार का है उन के नाम वीस प्रकार के है वद कृमिरोग के वीस न म से वीस भेद है ॥

बाह्यकृमी के नाम

बाह्यस्तत्र मलोद्भवाः । तिलप्रमाणसंस्थानवर्णाः केशां-
वराश्रयाः ॥ बहुपादाश्च सूक्ष्माश्च यूकालिक्षादिनाम-
तः । द्विधा ते कुष्ठपिटिका कंडूगंडान्प्रकुर्वते ॥

अर्थ—तहां बाहर के मल से प्रगट कृमि, तिल के प्रमाण श्वेत, काली, केश और वस्त्र में रहनेवाली होती है तथा बहुत पैर की और छोटी जूं लीस नामसे प्रसिद्ध दो प्रकार की है ये कृमि कोठ, पीडिका, खाज, गांठ इत्यादि रोग प्रगट करे है ॥

कृमि रोग का कारण

अजीर्णभोजी मधुराम्लनित्यो द्रवः प्रियपिष्टगुडोपभोक्ता ।

व्यायामवर्जी च दिवा शयानो विरुद्धभुक् संलभते कृर्माश्च ॥

अर्थ—अजीर्णमें भोजन करे प्रतिदिन मीठा, रस्टा, खावे तया पतला पदार्थ (जैसे कटी, रायता आदि) खावे पिसा अन्न मैदा आदि और गुड के पदार्थ खावे और भोजन करके परिश्रम न करे दिनमें सोवे, विरुद्ध भोजन जैसे दूध मछली आदि को खावे ऐसे पुरुष के कृमिरोग प्रगट होता है ॥

पुरीपकफरक्तजकृमिकारण

मापपिष्टान्नलवणगुडशाकैः पुरीपजाः । मांसमापगुड-
क्षीरदधिसूक्तैः कफोद्भवाः ॥ विरुद्धाजीर्णशाकाद्यैः शो-
णितोत्था भवंति हि ।

अर्थ—उरद, पिसा अन्न (लड्डू, घेवर गुंदाआदि) नोन के, गुड के तया शाक आदि ऐसे पदार्थ खाने से मल की कृमि प्रगट होती है । मांस, उरद, गुड, दूध, दही,

कांजी ऐसे पदार्थ खाने से कफ की कृमि पैदा होती है। विरुद्ध पदार्थ जैसे दूध मछली और आधा कच्चा आधा पक्का शाक (जैसे हरा चने का आदि) ऐसे भोजन से रुधिर-जन्य कृमि पैदा होती है ॥

पेट में कृमि हुए के लक्षण

ज्वरो विवर्णता शूलं हृद्रोगः सदन् भ्रमः ।

भक्तद्वेषोत्तिसारश्च संजातकृमिलक्षणम् ॥

अर्थ—ज्वर हो शरीर का रंग औरही प्रकार का हो जावे शूल हृदय दूखे वमन कीसी इच्छा हो भ्रम भोजन बुरा लगे दस्त होय ये लक्षण जिस के पेट में गिंडोहा आदि कृमि पढ जातें उस के होते हैं ॥

कफजकृमि का लक्षण

कफादामाशये जाता वृद्धाः सर्पति सर्वतः । पृथुव्रधनिभाः
केचित्केचिद्गंडूपदोपमाः ॥ रूढधान्यांकुराकारास्तनुदीर्घास्त-
थाणवः । श्वेतास्ताम्रावभासाश्च नामतः सप्तधा तु ते ॥ अंत्रा-
दा उदरावेष्टा हृदयादा महारुजः । चुरवोदर्भकुसुमाः सुगंधा-
स्ते च कुर्वते ॥ हृत्लासमास्यस्रवणमविपाकमरोचकम् । मूर्च्छा-
छर्दितृपानाहकार्यश्चयथुपीनसान् ॥

अर्थ—कफ से आमाशय में प्रगट हुई कृमि जब बढ जाती है तब चारों तरफ डोलती है—कोई चाम के सदृश, कोई गिंडोहे के आकार, कोई धान्य के अंकुर के समान होती है। कितनी ही छोटी, बड़ी, चौड़ी होती है और किसी का वर्ण श्वेत, किसी का तामे के समान होय है उन्हीं के सात नाम हैं सो इस प्रकार १ अंत्रादा, २ उदरावेष्टा, ३ हृदयादा, ४ महारुज, ५ चुर, ६ दर्भकुसुम और ७ सुगंध ये नाम कोई सार्थक है और कोई निरर्थक है। व्यवहार के निमित्त पहले आचार्यों ने कहे हैं इन कृमियों से वमन कीसी इच्छा होय मुख से पानी गिरै अन्न का पाक न होना, अरुचि, मूर्च्छा, वमन, प्यास, अफरा, शरीर कृश होवे, सृजन और पीनस इतने विकार होते हैं ॥

रक्तकृमि का लक्षण

रक्तवाहशिरस्थाना रक्तजा जंतवोणवः । अपादावृत्तताम्राश्च
सौक्ष्म्यात्केचिददर्शनाः ॥ केशादा रोमविध्वंसा रोमद्वीपा उदुं-
चराः । पट्ट ते कुष्ठैककर्माणः सहस्रैरभमातरः ॥

अर्थ—रुधिर की वहनेवाली नाडीन में रुधिर से प्रगट कृमि बारीक, पादरहित, गोल, तामे के रंग के होते हैं; कोई बहुत बारीक होती है वो देखने सेभी नहीं दीखे ये कृमि छः प्रकार की है उन के नाम ये हैं १ केशाद, २ रोमाविध्वंस, ३ रोमद्वीप, ४ उदुं-
र, ५ सौरभ, और ६ मातर ये कुष्ठ को पैदा करती है ॥

पुरीपजकृमी का लक्षण

पकाशये पुरीपोत्था जायंते धोविसर्पिणः । प्रवृद्धाः स्युर्भवेयुश्च ते
यदामाशयोन्मुखाः ॥ तदास्योद्गारनिश्वासा विद्मंग्धानुविधा-
यिनः । पृथुवृत्ततनुस्थूलाः श्यावपीतसितासिताः ॥ ते पंच
नाम्ना कृमयः ककेरुकमकेरुकाः । सौसुरादामलूनाश्च लेलिहा
जनयंति च ॥ विद्भेदशूलविष्टंभकार्श्यपारुष्यपांडुताः । रो-
महर्षामिसदनगुदकंडूविमार्गगाः ॥

अर्थ—पकाशय में विष्टा से प्रगट कृमि गुदा के मार्ग होकर बाहर निकसती है जब यह बढ जाती है तब आमाशय में प्राप्त होकर डकार और श्वास से विष्टा फीसी वास आने लगती है । ये कृमि बडी, छोटी, गोल, मोटी, रंग में काली, पीली, सफ़ेद, नीली होती है इन के पांच नाम हैं १ ककेरुक, २ अकेरुक, ३ सौसुरादा, ४ मलून, ५ लेलिहा । जब ये कृमि मार्ग को छोड अन्यमार्ग में जाते है तब इतने रोग प्रगट करे हैं दस्तका पतला होना, शूल, अफरा, देह में कृशता तथा देह में कठोरता पांडु-
रोग, रोमांच, मंदाग्नि और गुदा में रुजली का होना ।

कृमिरोगचिकित्सा

कृमीणां विट्कफोत्थानामेतदुक्तंचिकित्सितम् ।

रक्तजानां तु संहारं कुर्यात्कुष्ठचिकित्सया ॥

अर्थ—यह चिकित्सा विष्टा और कफ से उत्पन्न होनेवाली कृमियों की वही है तथा रुधिर से प्रगट होनेवाली कृमि (कीडा) की चिकित्सा करना होवे तो कुष्ठ रोग के समान करे ॥

तेपामन्यतमो वैद्यो जिघांसुः स्निग्धमातुरम् । सुरसादिविपकेन

सविपं वांतआदिभिः ॥ विरेचयेत्तीक्ष्णतरैर्योगैरास्थापयेद्धि च ।

अर्थ—उस अभ्यंतर (भीतरी) जयवा बाह्य (बाहर की) कृमि के नाश करने को प्रथम निर्गुंडी इत्यादिक में सिद्ध करे हुए घृतादिक से रोगी को स्निग्ध करके वमन कराये फिर तीक्ष्ण जुलाब देवे अथवा विचकारी आदि क्रिया करे ॥

पूडी

शालिपिष्टं कणासिंधु विडंगं भोपनीत्वचैः ।

सुपक्वा पोलिका जंतून्पातयेन्मधुभक्षिता ॥

अर्थ—चावलों का चून, पीपर, सेंधानिमक, वायविडंग इन को एकत्र कर भोपनी के रस से पूडी बनावे इन को सहत के साथ राय तो संपूर्ण पेट की कृमि गिर जावे ॥

अन्न

प्रत्यहं कटुकं तिक्तं भोजनं कफनाशनम् ।

कृमीणां नाशनं रुच्यमग्निसंदीपनं परम् ॥

अर्थ—कृमिरोगवाले को नित्य तीक्ष्ण, कडुआ और कफ, कृमि इन के नाशकारी और अग्निदीपक ऐसे भोजन करने चाहिये ॥

पथ्याखुपर्णिकायुक्ता गोधूमैश्च क्रमाद्धृता ।

सुपक्वा पोलिका जंतून्पातयेन्मधुभक्षिता ॥

अर्थ—हरड, मूसाकर्णी, गैहू का चून इन की पूडी धी में उतारके सहत के साथ भोजन करे तो संपूर्ण पेट के कीड़े झड़ जावे ॥

कृमिलेप

पारदं मर्दयेन्निष्कं कृष्णधत्तूरकद्रवैः । नागवल्लीद्रवैर्वाथ

वस्त्रखंडं प्रलेपयेत् ॥ तद्भस्त्रं मस्तके वध्वा धार्यं याम-

त्रयं ततः । यूकाः पतंति निश्चेष्टाः पारीक्ष्यं नात्र संशयः ॥

अर्थ—काले धतूरे के अथवा नागरवेल पान के रस में पारे को खरल करे फिर उस को बारीक वस्त्र में लेप करके उस को मस्तक पर दो प्रहर बांधे तो माथे की जितनी जूआं लिख है सब मरके गिर पड़े इसी लेप से जमजूआ भी मरके गिर पड़ते हैं यह अनुभव करा हुआ है ॥

यवागू

विडंगतंदुलव्योपशिष्टुभिर्मरिचं नतम् ।

तक्रसिद्धा यवागूः स्यात्कृमिघ्नोससुवर्चिका ॥

अर्थ—वायविडंग, चावल, सोंठ, मिरच, पीपल, सहजने की छाल, लालमिरच,

तगर इन सब को छाछ में यवागू (छः गुना जल डालके पतला भात करते हैं) इस प्रकार की बनावे इसमें काला निमक मिलायके पिलावे तो यह कृमिनाश करे ॥

त्रिवृतादि कल्क

त्रिवृत्पलाशबीजं च पारसीकयवानि च । कंपिल्लकं वि-
डंगं च गुडश्च समभागिकः ॥ तत्रेण कल्कमेतेपां
कृमिकोटगणापहः ।

अर्थ—निसोय, पलासपापडा, किरमानी अजमायन, कवीला, वायविडंग इन के चूर्ण तथा चूर्ण के समान गुड लेवे इस का छाछ में कल्क करे यह कृमिकोटगण अर्थात् कीड़ों के समूह को नष्ट करे ॥

पलाशबीजरस व कल्क

पलाशबीजस्वरसं पिवेन्माक्षिकसंयुतम् ।

पिवेत्तद्वीजकल्कं वा तत्रेण कृमिनाशनम् ॥

अर्थ—पलास (ढाक) के बीजों का स्वरस सहित से अथवा पलासपापडे का कल्क छाछ के साथ पीने से कीड़ामात्र का नाश होवे ॥

स्वरस

पारिभद्रकपत्रोत्थरसं क्षौद्रयुतं पिवेत् ।

रूकस्य रसं वापि धतूरस्यापि वा रसम् ॥

अर्थ—कहुए नांव के पत्तों का स्वरस तथा अंड अथवा धतूरा इन का रस सहित मिलायके पीवे तो पेट के कीड़े मर जावें ॥

तैल

विडंगं च शिलया शुद्धं सुरभिजलेन कट्टु तैलम् ।

निखिलान्नयाति विनाशं लाक्षासहिता दिनैर्धुंकाः ॥

अर्थ—वायविडंग, मनासिल इन का कल्क और गोमूत्र इन में सरसों का तेल मि-
लायके तेल सिद्ध करे यह एक दिन में लीख और जूआं इन को नाश करे ॥

विडंगादि तैल

विडंगगोमूत्रमनःशिलानां सुगंधिकाभिः परिपाचितं यत् ।

तैलं भवेत्सर्पपसंभवं च यूकासु लीक्षासु हितं हि तद्यः ॥

अर्थ—वायविडंग, गोमूत्र, मनसिल और काली निर्गुंडी इन के कल्क से सरसों के तेल को सिद्ध करे यह तेल जूआं, लीख इन को तत्काल नष्ट करे ॥

धतूरपत्रतैल

धतूरपत्रकल्केन तद्रसेनैव पाचितम् ।

तैलमभ्यंगमात्रेण यूका नाशयति क्षणात् ॥

अर्थ—धतूरे के पत्तों का कल्क अथवा रस इस में तेल डालके सिद्ध करे इस की देह में मालिस करे तो तत्काल जूआं जमजूआ नष्ट होवे ॥

दाडिमादि काढा

दाडिमत्वक्कृतः काथस्तितलतैलेन संयुतः ।

त्रिदिनात्पातयत्येव कोष्ठतः कृमिजालकम् ॥

अर्थ—अनार की छाल का काढा करके उस में तिली का तेल मिलायके पीने को देवे तो तीन दिन में पेट की संपूर्ण कृमियों के बाहर निकालके गेर देवे ॥

नियमनादि काढा

नियमनस्त्रिफला कुटजो वचा त्रिकटुकं खदिरा त्रिवृतं युतम् ।

मुनिदिनं हि गवां सलिलेन च शृतमिदं कृमिनाशकरं पिवेत् ॥

अर्थ—कडुआ नीम, हरड, बहेडा, आमला, कूडा की छाल, साठ, वच, मिरच, पीपल, खैर की छाल और निसोथ इन का गौ के मूत्र में काढा करके देवे तो सात दिन में संपूर्ण पेट के कीड़े मरके गिर जावें ॥

विडंगादि काढा

विडंगशृतपानीयं विडंगेनावधूलितम् ।

पीतं कृमिहरं कुष्ठं कृमिजातान्प्रदापयेत् ॥

अर्थ—वायविडंग का काढा कर उस में वायविडंग का ही चूर्ण डालके पिलावे तो कृमिमात्र मरके गिर जावे ॥

मुस्तादि काढा

मुस्ताखुपर्णीफलदारुशियुक्काथः सकृष्णाकृमिशत्रुकल्कः ।

मार्गद्वयेनापि चिरप्रवृत्तान्कृमीन्निह्न्यात्कृमिजांश्च रोगान् ॥

अर्थ—नागरमोथा, मूसाकणी, इंद्रजो, देवदारु और सहजना इन का काढा करके इस में पीपल और वायविडंग का चूर्ण डालके पिलावे तो दोनों द्वार (युदा-

और मुख) करके बहुत दिन की पडे हुए कीडे उन को और उन कीडों के होने से जो रोग होवे उन को नाश करे ॥

खदिरादिकाढा

खदिरः कुटजः पिचुमंदवचात्रिकटुत्रिफलात्रिवृतासहितम् ।

पशुमूत्रयुतं पिच सप्त दिनं कृमिकोटिशितान्यपि हंत्यचिरात् ॥

अर्थ—खैर की छाल, कूडा की छाल, नीम की छाल, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, यहैडा, आमला, और निसोय इन का चूर्ण अथवा काढा गोमूत्र में मिलायके सात दिन पीवे तो कोट्यावाधि अर्थात् करोडों भी कृमि होवे तो तत्काल दूर होवे ॥

रस

हिंगुलः कर्पमानंस्याहंतिवीजं तदर्धकम् । अर्कक्षीरेण
संमर्द्य दापयेद्भावना दश ॥ मापमात्रं प्रदातव्यमर्कमूल-
रसं पुनः । प्रपिबेद्धिंगुसंयुक्तं कृमिजालनिपातनम् ॥

अर्थ—हिंगलू १ तोले और जमालगोटा ६ मासे दोनों का चूर्ण करके आक के दूध की १० भावना देवे इसमें से एक मासे औषध आक का जड के रस और हिंग के साय देवे तो पेट की संपूर्ण कृमि शरके गिर पडे ॥

पारदादियोग

शुद्धसूतमिन्द्रियवमजमोदमनःशिला । पलाशार्वाजतुल्यांशं देव-
दाल्याद्रवैर्दिनम् ॥ मर्दयेद्भक्षयेन्नित्यं मूषपर्णिकपायकम् । सिता-
युक्तं पिबेच्चानु कृमिपातो भवत्यलम् ॥

अर्थ—शुद्ध पारा, इन्द्रजों, अजमायन, मनसिल, पलासपापडा ये समान भाग लेके चूर्ण करे इस को बंदाळ के रस से १ दिन सरल करे इसमें से ४ मासे औषध पूसाकर्णा औषध के काटे में साँड मिलाय के देवे तो पेट के कीडे सब गिर पडे ॥

कृमिकुठाररस

कर्पूरं चाष्टभागं च कुटजश्चैकभागकः । तत्समानं त्रायमाणाम-
जमोदा विडंगकम् ॥ हिंगुलं विषभागं च तत्समानं च केसरम् ।
सर्वं दृढं च संमर्द्य भृंगराजरसेस्तथा ॥ पलाशार्वाजसंमिश्रं चंद-
रीरसभावितम् । ब्राह्मीरसं ततो दत्त्वा सिद्धयत्यृमिकुठारकः ॥

बलमात्रां वर्दीं कुर्याद्दद्याद्धेमसमन्विताम् । कुर्यात्कृमिविनाशं च
एवं सप्तविधं दृढम् ॥

अर्थ—कपूर आठ भाग, कूडा की छाल, त्रायमाण, अजमायन, वायविडंग, हींगलू, सिंगियाविप, केशर और पलासपापडा ये सब एक २ भाग लेके एकत्र करे फिर इस को भांगरे के रस, मूसाकर्णी के रस और ब्राह्मी के रस की भावना देवे यह कृमिकुठाररस तीन रत्ती धतूरे के रस के साथ देवे तो सर्व प्रकार के कृमि का नाश करे ॥

कृमिसुद्गररस

क्रमेण वृद्धं रसगंधकाजमोदाविडंगं विषमुष्टिका च ।
पलाशबीजस्य च चूर्णमस्य निष्कप्रमाणं मधुनावलीढम् ॥
पिवेत् कपायं घनजं तदूर्ध्वरसो प्रयुक्तः कृमिसुद्गराल्यः ।

अर्थ—पारा १ भाग, गंधक २ भाग, अजमोद ३ भाग, वायविडंग ४ भाग, वकायन की छाल ५ भाग, पलासपापडा ६ भाग, इन का चूर्ण एक तोले अथवा शक्ति के प्रमाण सहत के साथ चाटे फिर इस के ऊपर नागरमोथे का काढा पीवे इस को कृमिसुद्गररस कहते हैं ॥

विडंगादिचूर्ण

विडंगसिंधूद्रवाहिं गुपथ्याकंपिल्लसौवर्चलपिप्पलीनाम् ।
चूर्णं कषोणोदकसंगृहीतं कृमीन् निहंत्याशु दहेद्रमि च ॥

अर्थ—वायविडंग, सैंधानिमक, हींग, हरड, कवीला, संचरनिमक और पीपल इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो कृमि और वमन इन को दूर करे ॥

दूसरा प्रकार

विडंगानां तु चूर्णं च कर्षार्धाकर्षमेव च ।
मधुना सहितं लिह्यात् कृमिकोटिनिवृत्तये ॥

अर्थ—वायविडंग का चूर्ण तोले अथवा छः मासे लेकर सहत के साथ सेवन करे तो कृमि के समुदाय को नाश करे ॥

पारसिकयवानीचूर्ण

पारसिकां यवानीं तु पर्णेन सह भक्षयेत् ।
कृमिजालं निहंत्याशु पीतो निवरसेन वा ॥

अर्थ—किरवानी अजमायन को पान में रखके खाय अथवा नीम के रस के साथ पीवे तो कृमि रोग नष्ट होवे ॥

निंवादिचूर्ण

निंवाजमोदा जंतुघ्नं ब्रह्मबीजं सचोरकम् ।

सहिंशुकं समगुडं सद्यो जंतुविनाशनम् ॥

अर्थ—नीम की छाल, अजमायन, वायविडंग, किरमानी अजमायन और हींग इन के चूर्ण की बराबर गुड मिलायके भक्षण करे तो उदर की संपूर्ण कृमि नष्ट होवे ॥

विडंगव्योपसंयुक्तं भक्तमंडं पिवेन्नरः ।

दीपनं कृमिनाशाय जठराग्निविवृद्धये ॥

अर्थ—वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण डालके चावल का मांढ पीवे तो दीपन करे और कीड़ों को नष्ट करके जठराग्नि को बढ़ावे ॥

त्रिफलाद्यघृत

फलत्रयं वचा दंती त्रिवृत्कंपिष्टकैः समैः ।

सिद्धं सर्पिर्गवां मूत्रे पीतं च कृमिनाशनम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आंवला, वच, दंती के बीज, निसेय, कवीला और गोमूत्र इन के कल्क से घृत पचावे इस घृत के सेवन करने से कृमि का नाश होवे ॥

विडंगघृत

त्रिफलायास्त्रयः प्रस्था विडंगं प्रस्थमेव च । दीपनं द-

शमूलं च लाभतः समुपाहरेत् ॥ पादशेषे जलद्रोणे युते

सर्पिर्विपाचयेत् । प्रस्थोन्मितं सिंधुयुतं तत्परं कृमि-

नाशनम् ॥ विडंगघृतमेतच्चु लेह्यं शर्करया सह । सर्वा-

न्कृमीन्प्रणदति वज्रं मुक्तमिवासुराच्च ॥

अर्थ—त्रिफला ११२ तोले, वायविडंग ६४ तोले, दीपनीय गण की औषधी और दशमूल इन में से जो जो औषध मिले वो सब लेकर उन को २०४८ तोले जल में डालके चतुर्याश काटा करे उस में ६४ तोले पी और सेधानिमक डालके घृत सिद्ध करे इस घृत में वायविडंग डालके घृत और खांड के साथ पीवे तो कृमि रोग दूर होवे ॥

सारनालयोग

सारनालाखुपर्णी वा तक्रं पालाशबीजयुक् ।

हिंवाजमोदातक्रं वा कृमिरोगं विनाशयेत् ॥

अर्थ—कांजी में मूसाकर्णी और छाछ में पलासपापडा अथवा छाछ में हींग और अजमायन मिलायके पीवे तो कृमिरोग का नाश करे ॥

भल्लातकयोग

भल्लातकं वा दधा च चिंचाम्ब्लेन हरेत्कृमीन् ।

अर्थ—भिलाए को दही के साथ अथवा इमली के साथ खाने से उदर की कृमि मर जावे ॥

पलाशबीजयोग

पलाशबीजं वल्लैकं स्रुहिक्षीरेण जंतुजित् ॥

अर्थ—ढाक के बीज, यूहर के दूध के साथ खावे तो पेट के सब कीड़े मरके दस्त की राह निकल जावे ॥

किरमानी अजमायन का कल्क

पारसी यवानी पीता पर्युपिता वारिणा प्रातः ।

गुडपूर्वा कृमिजालं कोष्ठगतं पातयत्याशु ॥

अर्थ—किरमानी अजमायन को वासे पानी में पीसके उस में गुड मिलायके पीवे तो पेट की सब कृमियों के जाल को तत्काल गिराय देवे ॥

निशोतरादियोग

भिंडीपिड्वारनालेन गोमूत्रेणातिमुक्ततः ।

कुन्टीकटुतैलेन योज्या यूकापहास्रयः ॥

अर्थ—सफेद निसोथ बते कांजी में अथवा तैदू को गोमूत्र में अथवा मनसिल को सरसों के तैल में मिलायके पीवे ये तीनों योग जू लीख के नाशक है ॥

पिप्पल्याद्यचूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं सेंधवं कृष्णजीरकम् । चव्यचित्रकताली-
सपत्रकानागकेसरम् ॥ एषां द्विपलिकान्भागान्पंच सौवर्चलस्य
च । मरीचाजाजिशुंठीनामेकैकस्य पलं पलम् ॥ दाडिमात्कुडवं

चैव द्विदलं चाम्लवेतसात् । सर्वमेकत्र संयुक्तं योजयेत्कुशलो
भिषक् ॥ पिप्पल्यादिरिति ख्यातं नष्टवन्धेश्च दीपनम् । अर्शा-
सि ग्रहणीगुल्ममुदरं सभगंदरम् ॥ कृमिकंडुरुचिहरं सुरयो-
ष्णोदकेन वा । नातः परतरं किंचिदामशोथनिपूदनम् ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, सैधानिमक, काळा जीरा, चव्य, चित्रक, ताळीसपत्र, नागकेशर, ये प्रत्येक आठ २ तोले लेवे, संचरनिमक ५ तोले तथा काली मिरच, जीरा, सोंठ, ये चार २ तोले अनारदाना १६ तोले, अमलवेत ८ तोले ले सब को एकत्र चूर्ण बनावे इस चूर्ण को कुशलवैद्य अपने बुद्धि के साथ देवे यह मंदाग्नि को दीपन करे और बवासीर, संग्रहणी, गोला, जलंधर, भगंदर, कृमि, पुजली, अरुचि इन पर मद्य के साथ अथवा गरम जल के साथ देवे इस से बढकर दूसरी आम और सूजन इन के नाश करनेवाली औषध नहीं है ॥

आखुपण्यादिचूर्ण

आखुपर्णदलैः पिष्टैः पिष्टकेन च पूषकान् ।

भुक्ता सौवीरकं चानु पिबेत्कृमिहरं परम् ॥

अर्थ—भूसाकर्णी के पत्तों को कूट चूर्ण कर उस में गेहू का चून मिलाय पूआ बनावे और खाय इस के ऊपर यदि जोंकी कांजी पीवे तो कृमि रोगका नाश होवे ॥

निंवादिचूर्ण

निंबुवत्सकविडंगसंयुतं रामठेन सह जंतुनाशनम् ।

निवपत्रमजमोदकान्वितं चूर्णमेव मधुना प्रशस्यते ॥

अर्थ—नींबू, कूडा की छाल, वायविडंग और हींग इन का चूर्ण जंतु (कीड़ा) नाशक है । अथवा नींबू के पत्ते और अजमायन इन के चूर्ण को सहत के साथ खावे तो भी संपूर्ण कीड़े नष्ट हो जावे ॥

सुवर्चकादि चूर्ण

सुवर्चिकारामठपत्रिकाह्वविडंगवाल्हीककणाग्निविश्वा ।

यवानिकाग्रंथिकभद्रमुस्ता तत्रेण चूर्णां कृमिकोटिहारी ॥

अर्थ—सज्जीखार, हींग, जावित्री, वायविडंग, केशर, पीपल, चीने की छाल, सोंठ, अजमायन, पीपरामूल और नागरमोया इन का चूर्ण छाल के साथ पीवे तो कोट्यावधि कृमि का नाश होवे ॥

जूआ इत्यादि कों पर तैल

चित्रकं दंतिनीमूलं कोशातकिसमन्वितम् ।

कल्कं पिष्ट्वा च तैलं च केशशत्रुविनाशनम् ॥

अर्थ—चित्रक, दंती की जड़, कड़ई तोरई इन का कल्क डालके तेल बनावे इस तेल के लगाने से जूआ, लीख नष्ट होवे ॥

विडंगादि तैल

सविडंगं जतुशिलया सिद्धं सुरभेर्जलेन कटुतैलम् ।

निखिला नयति विनाशं लिक्षासहिताश्च वै यूकाः ॥

अर्थ—वायविडंग, शिलाजीत, और गोमूत्र इन में सरसों का तेल डालके तैल-विधि से सिद्ध करे यह तेल लीख और जूआं इन को नाश करे ॥

कपिलाचूर्ण

कांपिल्यचूर्णकर्पार्थं गुडेन सह भावितम् ।

पातयेत्तु कृमीन्सर्वानुदरस्थान्न संशयः ॥

अर्थ—कबीले का चूर्ण आधा तोला लेकर गुड में मिलायके खावे तो पेट के यावन्मात्र कृमि है सब निकल जावे इस में संशय नहीं है ॥

निंवादिरस

निंवपत्रसमुद्भूतं रसं क्षौद्रयुतं पिबेत् ।

धतूरपत्रजं वापि कृमिनाशनमुत्तमम् ॥

अर्थ—कडुए नीम के पत्तों का रस अथवा धतूरे के पत्तों के रस को सहत मिलायके पीवे तो कृमिरोग नष्ट होवे ॥

हरीतकीचूर्ण

हरीतकी चैव तथा हरिद्रा सौवर्चलं चैव समं विचूर्णितम् ।

इंद्रवारुणिजलेन भावितं कीटसंघविनिवारणं परम् ॥

अर्थ—हरड, हलदी और संचर निमक ये समान भाग लेवे चूर्ण कर उस में इंद्रायन के काठे की भावना देवे यह चूर्ण कृमिसमुदाय को नाश करे ॥

सावित्रवटक

पलंकपापले द्वे च कार्णायसपलद्वयम् । पथ्यामृताक्षधात्रीणां

पृथगेकैकशः पलम् ॥ पूतीकचव्यव्योपाग्निकारवीकृमिनाशनैः ।
 चूर्णितैरर्धपलकैस्तिलतैलं पलद्वयम् ॥ त्रिफलाया रसप्रस्थे
 खंडं प्रस्थयुगं भवेत् । दात्रीं प्रलेपात्पाकश्च चातुर्जातकसंयु-
 तम् ॥ सावित्रवटकाद्यैते यथाग्निबलभक्षिताः । कृमिकोष्ठाग्निदौ-
 र्वल्यशोथे गुल्मोदरव्रणान् ॥ कामलापांडुरोगाशोभगंदरगद-
 व्रणान् । निहंत्येतद्धि संधित्थं बलस्थैर्यसुखप्रदम् ॥ वायुमे-
 हप्रशमनाश्चक्षुपः प्रीतिवर्धनाः । भवंत्यतिस्निग्धभुजो वाता-
 तपनिपेविणः ॥

अर्थ—ढाक के बीज ८ तोले, लोहे की भस्म ८ तोले, हरड, गिलोय, बहेडा, आवला, ये प्रत्येक चार २ तोले तथा पूतीकरंज, चव्य, सोंठ, काली मिरच, पीपल, चित्रक, अजमायन, वायविडंग, ये प्रत्येक दो दो तोले और तिलों का तेल ८ तोले, त्रिफले का काढा अथवा त्रिफले का रस १६ तोले, मिश्री ३२ तोले इन सब को एकत्र कर जबतक कलछी से न चिपटे तब तक पकावे, जब कलछी से लिपटने लगे तब उतार लेवे और इस में चातुर्जात (दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर) ये ढालके मिलाय देवे इस को सावित्रवटक कहते हैं यह अग्नि और बलाबल विचार के देवे तो कृमि, मंदाग्नि, दुर्बलता, सृजन, उदररोग, प्रण, कामला, पांडुरोग, बवासीर, भगंदर इन का नाश करे । तथा अवस्था, बल और स्थिरता इन को करे तथा दुष्ट अधोवायु और प्रमेह इन को नाश करे । तथा नेत्रों को हितकारी है इस पर स्निग्ध भोजन और पवन तथा घूप इन का सेवन करना चाहिये ॥

विशालादिधूप

विशालायाः फलं पक्वं तप्तलोहोपरि क्षिपेत् ।

तद्धूमोदंतलग्नश्चेत् कीटानां पातनः परः ॥

अर्थ—इन्द्रायन के पके हुए फलों को गरम तवे पर गेरे इस का धूआं दांतों को देवे तो दांतों में जो कीड़ा होता है वो तत्काल मरके गिर पड़े यह प्रयोग परमोत्तम है ॥

अष्टसुगंधधूप

लाक्षा भस्मतकश्च श्रीवासः श्वेतापराजिता । अर्जु-

नस्य फलं पुष्पं विडंगं सर्जगुग्गुलुः ॥ एभिः कृतेन
धूपेन शाम्यन्ते निहिते गृहे । भुजंगमूपकादंशाधुणा-
मशकमत्कुणाः ॥

अर्थ—लास, भिलाए, श्रीवास (सरलधूप) सपेद कोयल की जड़, कोहवृक्ष के फल और फूल वायविडंग, राल और गुग्गुलु इन की धूनी घर में देवे तो सांप, मूँसे, ढाँस, मच्छर, छोटे कीड़े और खाट के खटमल ये सब मर जावे ॥

ककुभादिधूप

ककुभकुसुमविडंगं लांगली भल्लातकं तथोशीरम् । श्री-
वेष्टकं सर्जरसं चंदनमथ कुष्ठमष्टमं दद्यात् ॥ एष सुगंधो
धूपः सकृत्कृमीनां विनाशकः प्रोक्तः । तथा स मत्कुणा-
नां शिरसि च गात्रेषु यूकानाम् ॥

अर्थ—कोहवृक्ष के फूल, वायविडंग, पिठवन, भिलाए, नेत्रवाला, राल, चंदन, कूठ यह सुगंधधूप एकवार के देने से कृमिनाश करे तथा यह धूप शय्या (सेज) में देने से खटमल मर जावे और अपनी देह को यह धूनी देवे तो मस्तक के जूँआ, लीख और देह की जमजूआ आदि को नष्ट करे है ॥

कृमिरोगपर पथ्य

आस्थापनं कायशिरोविरेचनं धूपः कफघ्नानि शरीरशोधनम् ।
चिरंतना वैणवरक्तशालयः पटोलवेत्रायरसोनवास्तुकम् ॥
हुताशमन्दारदलानि सर्पपा नवीनमोचं बृहतीफलान्यपि ।
तिक्तानि नालीचफलानि मौषिकं मापं विडंगं पिचुमन्दपल्लवम् ॥
तैलं तिलानामथ सर्पपोद्भवं सौवीरसूक्तं च तुपोदकं मधु ।
पचेलिमं तारमरुष्करं गवां मूत्रं च तांबूलसुरामृगं रजः ॥
औष्ट्राणि मूत्राज्यपयांसि रामठं क्षारोजमोदाखदिरश्च वत्सकम् ।
जंवीरनीरं सुषवीयवानिकासाराः सुराह्वागुरुशिशिपोद्भवः ॥
तिक्तः कपायः कटुको रसोयं वर्गो नराणां कृमिरोगिणां सुखः ।
अर्थ—आस्थापनवस्ती, शरीर और मस्तकका विरेचन अर्थात् जुल्लाम देकर शुद्ध

करना, धूमपान, कफनाशक पदार्थ, देह का शोधन, बहुत दिन के बांस के बीज, (बा सांठी चावल) लाल चावल, परबल, वेत के अग्रभाग, लहसन, बथुआ, चीता, मं-
दार (आक) के पत्ते, सरसो, नवीन केला, कटेरी के फल, कडुए पदार्थ, नाली के
फल (वा तालीसपत्र), भूसे का मांस, उडद, वायविडंग, नीम के पत्ते (हरड) तिल
और सरसों का तेल, कांजी, दही का तोड़, तुपोदक, सहत, पचेलिम. चांदी के वर्क-
भिलाए, गोमूत्र, पान का बीड़ा, मदिरा, कस्तूरी, ऊँट का मूत्र, धी और दूध, हींग,
क्षार, अजमोद, खैरसार, कूडा की छाल, जैभीरी नीबू का रस, सुपवी (कलौजी), अ-
जमायन, देवदारु, अगर और सीसों का रार, कडुए और कपेले तथा चरपरे सब
रसयह संपूर्णवर्ग कृमिरोगहरणकारी जानना ॥

अपथ्य

छदिं च तद्वेगविधारणं च विरुद्धपानाशनमाह्नि निद्राम् । द्रवं च
पिष्टान्नमजीर्णभोजनं घृतानि मापान्दधिपत्रशाकम् ॥ मांसं
पयोम्लं मधुरं रसञ्च कृमीन् जिघांसुः परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—वमन करना, तथा वमन के वेग को रोकना, विरुद्ध अन्न पान, दिन में निद्रा,
द्रवपदार्थ, पिष्टान्न (मेंदा चून), अजीर्ण में भोजन करना, धी, उडद, दही, पत्तों का
साग, मांस, दूध, खटाई और मीठारस ये कृमिनाशकर्ता प्राणी को त्याग करने योग्य हैं ॥

दूसरा प्रकार

शीतांबु मधुरक्षीरं दधिक्षीरघृतादिकम् ।
सौवीरं शाकपत्रांश्च वर्जयेत्कृमिवान्नरः ॥

अर्थ—शीतल जल, मीठा दही, दही दूध और घृतादिक, कांजी, पत्तेके साक
इनको कृमिरोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीआयुर्वेदाद्धरे बृहन्नियंदुरत्नाकरे कृमिरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

पांडुरोगकर्मविपाकः ।

देवद्विजद्रव्यहारी पांडुरोगी भवेन्नरः ।

कृच्छ्रातिकृच्छ्रे कुर्याच्च चांद्रायणमतंद्रितः ॥

कुर्यात्कृष्णाम्ण्डहोमं च स्वर्णचंद्रेण वाससी ।

ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्ति पांडुरोगस्य शांतये ॥

अर्थ—देवता, ब्राह्मण, इन के द्रव्य हरण करने से यह प्राणी इस जन्म में पांडुरोगी होता है, इस पाप के प्रायश्चित्त करने को कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र चांद्रायण व्रत करे अथवा कूप्मांडहोम अथवा सुवर्ण का चंद्रमा और वस्त्र दान करे तथा यथाशक्ति द्रव्य देवे तो यह प्राणी पांडुरोग से छूट जावे ॥

शिरोवेदनासहित पांडुरोगहरण

अग्निष्टोमादिकर्माणि प्रक्रम्य न समापयेत् ।

स पांडुरोगी भवति शिरोवेदनवांस्तथा ॥

कृच्छ्रातिकृच्छ्रं कुर्याच्च चांद्रायणमतंद्रितः ।

शतं च भोजयेद्विप्रान्मिष्टान्नेन यथेप्सितम् ॥

अर्थ—जो अग्निष्टोमादि कर्म का प्रारंभ करके समाप्ति नहीं करे वह मस्तकपीडावाला पांडुरोगी होता है उस को कृच्छ्र अतिकृच्छ्र चांद्रायण व्रत करना चाहिये अथवा सौ ब्राह्मणों को मिठाई से तथा इच्छित भोजन करावे तो यह प्राणी का पांडुरोग जाता रहे ॥

पांडुरोगनिदान

पांडुरोगाः स्मृताः पंच वातपित्तकफैस्त्रयः ।

चतुर्थः सन्निपातेन पंचमो भक्षणान्मृदः ॥

अर्थ—मूत्र से प्रगट कृमिरोग—पांडु(पीलिया) रोग को प्रगट करे है इसी कारण कृमिरोग के अनन्तर पांडुरोग का निदान कहे हैं तहां प्रथम पांडुरोग की संख्यारूप सम्प्राप्ति कहते हैं १ वात का, २ पित्त का, ३ कफ का, ४ सन्निपात का और ५ माटी के खाने से ऐसे पांडुरोग पांच प्रकार का कहा है ॥

निदानपूर्वकसंप्राप्ति

व्यवायमम्लं लवणानि मद्यं मृदं दिवास्वप्नमतीव तीक्ष्णम् ।

निपेव्यमाणस्य विदूष्य रक्तं कुर्वति दोषास्त्वचि पांडुभावम् ॥

अर्थ—आति मैथुन, खट्टे पदार्थ का भोजन, नोन का पदार्थ खाने से, बहुत मद्य पीने से, मिट्टी खाने से, दिन में सोने से, अत्यंत तीखा पदार्थ खाने से इन कारणों से तीक्ष्ण दोष रुधिर को विगाड देह की त्वचा को पीले रंग की कर देते हैं इस जगह रुधिर का तौ उपलक्षणमात्र है रक्त के कहने से त्वचा, मांस इन को दूषित करते हैं ॥

पूर्वरूप

त्वक्स्फोटनिष्ठीवनगात्रसादोमृद्भक्षणप्रेक्षणकूटशोथाः ।

विण्मूत्रपीतत्वमथाविपाको भविष्यतस्तस्य पुरःसराणि ॥

अर्थ—त्वचा का फटना, मुख से बारंबार बूकना, अंगों का जिकटना, माटी राने की इच्छा, नेत्रों पर सूजन, मलमूत्र पीले हों, अत्र का परिपाक न होय ये लक्षण पांडुरोग प्रगट होनेवाला होय है तब होते हैं ॥

पांडुरोगचिकित्सा

साध्यं च पांड्वामयिनं समीक्ष्य स्निग्धं घृतेनोर्ध्वमधुश्च शुद्धम् ।

संपादयेत्क्षौद्रघृतप्रगाढैर्हरीतकीचूर्णमयप्रयोगैः ॥ पिवेत्घृतं वा-

रजनीविपक्वं यस्त्रैफलं तैल्वकमेकमेव । विरेचनं द्रव्यकृतं पिवेद्वा

योगांश्च वै रेचनिकान्घृतेन ॥ विधिः स्निग्धोत्र वातोत्थे तिक्तः

शीतश्च पैत्तिके । श्लेष्मिके कटुरूक्षोष्णः कायो मिश्रस्तु मिश्रजे ॥

अर्थ—यदि पांडुरोगी साध्य होवे तो उस को पी पिलायके स्निग्ध करे तथा रेचन और वमन कराकर उस को शुद्ध करे फिर सहित, घी और हरद ये जिस चूर्ण में अधिक होवे ऐसी औषधों का उपचार करे, तथा हलदी डालके औटाए हुए घी को पीवे किवा त्रिफला और इन से सिद्ध करा हुआ घी पिलावे अथवा किसी एक औषध से दस्त लानेवाली औषध सिद्ध करके पीवे अथवा रेचक औषध घृत के साथ पीवे । अब सामान्य उपचार कहते हैं कि घात पांडुरोग पर स्निग्ध, पित्त पांडुरोग पर कडुए और शीतल तथा कफपांडुरोग पर तीक्ष्ण रुस और उष्ण, द्रंज अतिसार पर मिश्रित यत्न करे इस प्रकार यत्न करने चाहिये ॥

वातपांडुनिदान

त्वङ्मूत्रनयनादीनां रुक्षकृष्णारुणात्मता ।

वातपांड्वामये कंपनोदानाद्भ्रमादयः ॥

अर्थ—वात के पांडुरोग में त्वचा, मूत्र, नेत्र इन में रुखापना, कालापना और लाली होय है तथा कंप मुई छेड़ने का सा चमका, अत्ररा, भ्रम, आदि जन्तु से भेद और शब्दादिक भी होते हैं ॥

मंडूराद्यरिष्ट

मंडूरस्य तु शुद्धस्य तुलार्द्धं परिकीर्तितम् । तद्रहोहस्य पत्राणि
तिलोत्सेधप्रमाणतः ॥ पुराणगुडपंचाशत्कोलप्रस्थत्रयं तथा ।
निकुंभचित्रकाभ्यां च पले द्वे द्वे सुचूर्णिते ॥ पिप्पलीनां विडंगा-
नां कुडवं च पृथक्पृथक् । त्रींश्चापि त्रिफलाप्रस्थाञ्जलद्रोणे स-
मावपेत् ॥ अर्धमासस्थितो धान्ये पेयोरिष्टप्रमाणतः । दोपानु-
भयतः स्राव्यपांडुरोगं नियच्छति ॥ कृमीनशीसि कुष्ठं च
कासं श्वासकफामयान् । एयोरिष्टस्तु मंडूरः सर्वपांड्वामयापहः ॥

अर्थ—शुद्ध मंडूर २०० तोले, तिल के बराबर मोटे लोहे के पत्र २०० तोले, पु-
राना गुड २९२ तोले, जलवेत और चित्रक का चूर्ण प्रत्येक ८ तोले, पीपल और
वायविडंग प्रत्येक १६ तोले, हरड ६४ तोले, बहेडे ६४ तोले, आवला ६४ तोले
ले इन सब औषधों को १०२४ तोले पानी में डालके पंद्रह दिन धान की राशि में
धर रक्खे फिर जिस प्रकार अरिष्ट देने का प्रमाण लिखा है उस प्रकार देवे तो यह
दोनों मागों से दोषों को निकाल पांडुरोग का नाश करे उसी प्रकार कृमिरोग, बवासी,
र,कोठ, खांसी, श्वास और कफरोग इन को यह नाश करे । इस को अरिष्टमंडूर
कहते हैं यह सर्व प्रकार के पांडुरोगों का नाशक है ॥

पित्तपांडुनिदान

पीतमूत्रसकृन्नेत्रो दाहतृष्णाज्वरान्वितः ।

भिन्नविट्कोतिपिताभः पित्तपांड्वामयी नरः ॥

अर्थ—पित्तपांडुरोगी के ये लक्षण होते हैं मल मूत्र और नेत्र पीले हों, दाह, प्यास,
ज्वर इन से पीडित हो मल पतला हो और उस रोगी के देह की कांति अत्यंत पीली
होती है ॥

आमलक्यवल्लेह

रसमामलकानां तु संशुद्धं यंत्रपीडितम् । द्रोणं पचेच्च मृद्ग्रौ
तत्रेमानि प्रदापयेत् ॥ चूर्णितं पिप्पलीप्रस्थं मधुकं द्विपलं तथा ।
प्रस्थं गोस्तनिकायाश्च द्राक्षायाः कल्कपेपितम् ॥ शृंगवेरपले
द्वे तुतुगाक्षीर्याः फलद्रयम् । तुलार्धं शर्करायाश्च घर्नाभूतं समु-

द्वरेत् ॥ मधु प्रस्थसमायुक्तं लेहयेत्पलसंमितम् । हलीमकं कामलां च पांडुत्वं चापकर्षति ॥

अर्थ—आमलों का रस शुद्ध १०२४ तोले लेके अग्नि पर चढावे उस में पीपल का चूर्ण ६४ तोले, मुलहठी ८ तोले, काली मुनका दाख बीज निकाली हुई और पीसी हुई ६४ तोले, साँठ और वंशलोचन ८ तोले तथा खाँड २०० तोले इतने पदार्थ डालके गाढा करे जब गाढा हो जावे तब उत्तार लेवे इस में ६४ तोले सहत डालके घर देवे चार तोले के प्रमाण नित्य खावे तो हलीमक, कामला और पांडुरोग ये दूर हों ॥

दुग्धयोग

लोहपात्रस्थितं क्षीरं सप्ताहं पथ्यभोजनम् ।

पिवेत्पाण्डुमयी शोपी ग्रहर्णादोपपीडितः ॥

अर्थ—लोहे के पात्र में औटाए हुए धरे हुए दूध को सात दिन पीवे और पथ्य करे तो पांडुरोग, क्षय और संग्रहणी ये रोग दूर हों ॥

कफपांडुनिदान

कफप्रसेकश्चयथुस्तंद्रालस्यातिगौरवैः ।

पांडुरोगी कफाच्छुक्लैस्त्वङ्मूत्रनयनाननैः ॥

अर्थ—मुख से कफ का गिरना, सूजन, तन्द्रा, आलस्य, शरीर का भारी होना, त्वचा, मूत्र, नेत्र, मुख इन का सफेद होना इन लक्षणों से कफ का पांडुरोग जानना ॥

दशमूलादिकाढा

द्विपंचमूलीकथितं सविश्वं कफात्मके पांडुगदे पिवेत्तत् ।

ज्वरेत्तिसारे श्वयथौ ग्रहण्यां कासेऽरुचौ कंठहृदामयेषु ॥

अर्थ—दशमूल और साँठ इन का काढा कफयुक्त पांडुरोग, ज्वर अतिसार, सूजन, संग्रहणी, खाँसी अरुचि, कंठरोग और हृदयरोग इन को नाश करने को पिलावे ॥

नागरादियोग

नागरं लोहचूर्णं वा कृष्णां पथ्यामयोप्मजाम् ।

गुग्गुलं वाथ मूत्रेण कफपांडुमयी नरः ॥

अर्थ—साँठ और लोहभस्म अथवा पीपल, हरद और लोहभस्म, शिलाजीत अथवा गुग्गुल, गोमूत्र ये सब योग कफ पांडुरोग के नाशक हैं ॥

लोहभस्मयोग

अतिशुद्धमयोभस्म सर्पिः क्षौद्रयुतं लिहेत् ।

पांडुरोगस्य नाशाय कामलानां च सर्वशः ॥

अर्थ—अत्युत्तम लोहभस्म—सहत और घी इन के साथ देवे तो पांडुरोग और कमला इन का नाश करे ॥

मधुमंडूर

गृहीत्वा भिषक्प्रस्थमंडूरभागं श्रुते त्रैफले मर्दयित्वा च यामम् ।

पुटे पाचयेद्यामयुग्मं कृशानौ पुटानीह देयानि चंद्राक्षिवारम् ॥

तथा धेनुमूत्रे कुमारीरसेच विधेयश्च पंचामृते योगराजः । भवे-

त्सिधुनागैः पुटैः सिद्धिदोयमचित्यप्रभावश्च मंडूर एषः ॥ मधुमं-

डूरक एष कणामधुना चिरपांडुगदं ननु हे गदिनः । जनको

रुधिरस्य निहंति परं विविधार्तिहरस्त्वनुपानवलैः ॥

अर्थ—६४ तोले लोह की कीट का चूर्ण त्रिफले के काढे में डालके प्रहरभर खरल करे फिर सराव संपुट में रखके दो प्रहर आग्निपुट देवे । इस प्रकार इक्कीस पुट देवे फिर गोमूत्र ग्वारपट्टे का रस और पंचामृत इन के काढे की प्रत्येक की इक्कीस २ पुट देवे अर्थात् ८४ पुट देने से सर्व सिद्धि देनेवाला अचित्यप्रभाव ऐसा यह मंडूर सिद्ध होवे इस प्रकार सिद्ध हुआ मधुमंडूर पीपल और सहत इन के साथ छः रत्ती सेवन करने से पांडुरोग को तत्काल नष्ट करे तथा देह में रुधिर उत्पन्न करे है और भी अनुपानभेदों करके अनेक प्रकार के रोग दूर करे ॥

मंडूरवटक

सुराब्ददार्वाकिट्टपट्टकताप्यं वेलं वरा चेति समांशचूर्णम् । मंडूर-

भागद्वयमष्टमूत्रे पक्त्वा गवां तक्रसमं च देयम् ॥ कामलापां-

डुमेहार्शः शोफकुष्ठकफामयान् । ऊरुस्तंभमर्जाणि च षीहानां

नाशयोद्धि च ॥

अर्थ—देवदारु, नागरमोया, दारुहलदी, सांठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक, पीपरामूल, सुवर्णमाक्षिक की भस्म, वायविडंग और त्रिफला ये सब औषध एक एक

१ सांठ, सपेद, मूसली, गिलोय, शतावर और गोखरू इन पांच औषधों की पञ्चामृत संज्ञा है ॥

भाग लेवे और मंडूरभस्म २ भाग ले सब का लूर्ण एकत्र करके अर्ध प्रकार के मूत्रों में अथवा गौ की छाछ में मिलायके पीवे तो कामला, पांडुरोग, प्रमेह, बवासीर, सूजन, कोढ़, कफरोग, ऊरुस्तंभ, अजीर्ण, ग्रीहा इन का नाश होवे ॥

मंडूरलवण

कृत्वाग्निवर्णं मलमायसंतु मूत्रेभिर्पिचेद्बहुशो गवां च ।
तत्रैव सिंघ्रत्थसमं विपाच्यं निरुद्धधूमं च विभीतकाम्नौ ॥
तत्रेण पीतं मधुनाथवापि विभीतकारख्यं लवणं प्रयुक्तम् ।
पांडुमयिभ्यो हितमेतदस्मात्पांडुमयघ्नं नहि किंचिदन्यत् ॥

अर्थ—लोहे की कीटी को अग्नि में अग्नि के समान लाल करके गोमूत्र में भिगो देवे इस प्रकार अनेक बार करे फिर सेधानिमक और वह लोहकीट को गोमूत्र में डालके धुंआ न निकले इस प्रकार भिलाए की अग्नि से पचावे इस को विभीतकारख्यलवण कहते हैं इसे छाछ के साथ अथवा सहत के साथ पीवे यह पांडुरोग पर हितकारी है इस के समान पांडुनाशक दूसरी औषध नहीं है ॥

सन्निपातपांडुनिदान

सर्वान्नसेविनः सर्वे दुष्टा दोषास्त्रिदोषजम् ।
लिंगैः कुर्वति दोषाणां पांडुरोगं सुदारुणम् ॥

अर्थ—जो प्राणी सर्व प्रकारके (स्रष्टे चरपरे आदि) रसोंका सेवन करता है उसके तीनों दोष कुपित हो त्रिदोषके लक्षणवाले ऐसे त्रिदोषज पांडुरोगको करे है ॥

पांडु का असाध्य लक्षण

ज्वरारोचकहृत्लासच्छर्दिर्तृष्णाक्लमान्वितः ।
पांडुरोगी त्रिभिर्दोषैस्त्याज्यः क्षीणो हतेद्रियः ॥

अर्थ—ज्वर, अरुचि, ओकारी, प्यास और कृम तथा वमन इतने उपद्रवयुक्त जो त्रिदोषजन्य पांडुरोगी और क्षीण हो गया हो और जिस रोगी के इन्द्रियों की अपने अपने विषय ग्रहण करने की शक्ति जाती रही हो ऐसे रोगी को वैद्य त्याग दे ॥

असाध्यलक्षण

शूनाक्षिकूटगंडधूः शूनपन्नाभिमेहनः । कृमिकोष्ठोतिसार्पेत मलं
चासृक्कफान्वितम् ॥ पांडुरोगश्चिरोत्पन्नः खरीभूतो न सिध्यति ।

१ गौ, भैस, बजरी, भेड, गधा, घोडा, ऊँ और हाथी इन मूत्रों की अद्रमूत्र सत्ता है ।

कालप्रकर्षाच्छूनांगो यो वा पीतानि पश्यति ॥ बद्धाल्पविट्सह-
रितं सकफं योतिसार्यते । दीनः श्वेतादिदिग्भांगच्छर्दिमूर्च्छा-
तृडर्दितः ॥

अर्थ—नेत्र, कपोल, भृकुटी, पैर, नाभि और लिंग इन में सूजन हो और कोठे में कृमि पड जाय तथा रुधिर और कफ मिला दस्त उतरे. सब पांडुरोगों में जब पेट में कृमि पड जाय है तब ये पूर्वोक्त लक्षण होते हैं यह (जैजट आचारीका मत है और कोई कहता है ये मृत्तिकाजन्य पांडुरोग के लक्षण हैं क्योंकि मृत्तिकाजन्य पांडुरोग लक्षण के अनंतर लिखें हैं परंतु विदेहने तो ये मृत्तिकाजन्य पांडुरोग के लक्षण स्पष्ट कहे हैं) बहुत दिन का पांडुरोग—काल बहुत बीतने से पुराना हो जाय है सो अच्छा नहीं होय । अथवा—सब देह में सूजन आ गई होवे और उस को पदार्थ पीले दीखें सो भी असाध्य है । अथवा—जिस मनुष्य का बंधा हुआ मल थोडा हरे रंग का कफमिश्रित उतरे सो भी असाध्य है । अथवा—जो पुरुष दीन कहिये ग्लानियुक्त हो और जिस की देह का श्वेत वर्ण हो और वमन, मूर्च्छा, प्यास इन से पीडित होवे सो पांडुरोगी नष्ट होवे ॥

दूसरा प्रकार

सनास्त्यसृक्षयादींश्च पांडुश्वेतत्वमाप्नुयात् । पांडुदंतनखो यस्तु
पांडुनेत्रश्च यो भवेत् ॥ पांडुसंचातदर्शी च पांडुरोगी विनश्यति ॥

अर्थ—जो रुधिरक्षय होने से पांडुरोग उत्पन्न होय सो भी असाध्य है जिस के दांत, नख और नेत्र पीले होय वो रोगी असाध्य है । जिस को सब पदार्थ पीले ही पीले दीखे वो रोगी मरे । हाथ, पैर, शिर इन में सूजन हो और जिस का मध्य पतला होय ऐसा पांडुरोगी असाध्य है—या से विपरीत साध्य है ॥

तीसरा प्रकार

अंतेषु शूनं परिहीनमध्यं म्लानं तथांतेषु च मध्यशूनम् । गु-
दे च शोफस्यथ मुष्कयोश्च शूनं प्रताम्यं तमसंज्ञकल्पम् ॥ वि-
वर्जयेत्पांडुकिनं यशोर्था तथातिसारज्वरपीडितं च ॥

अर्थ—जिस रोगी के देह के मध्य में सूजन हो ओर हाथ, पग, शिर ये सूख जाय तथा गुदा, लिंग इन में सूजन होय तथा मरे के समान हो गया होय ऐसे पांडुरोगी को जिस वैद्य को यश की इच्छा हो सो त्याग दे । इसी प्रकार अतिसार और ज्वर इन से पीडित रोगी को वैद्य त्याग देवे ॥

त्रिफलादिलेह

त्रिफलायास्त्रयो भागास्त्रयस्त्रिकटकस्य च । भागश्चित्रकमूलस्य
विडंगानां तथैव च ॥ पंचाश्मजतुनो भागास्तथा रूप्यमलस्य
च । शुद्धलोहस्य रजसो भागाश्चाष्टो प्रकल्पयेत् ॥ अष्टौ भा-
गाः सतापस्तु तत्सर्वं मधुसंयुतम् । श्लक्ष्णचूर्णं सुसंस्थाप्यमा-
यसे भाजने शुभे ॥ उदुंबरसमां मात्रां ततः खादेद्यथाग्निना ।
दिने दिने प्रयोक्तव्यं जीर्णभोज्यं यथोचितम् ॥ वर्जयित्वा कुलि-
त्थांस्तु काकमाचीकपोतकान् । पांडुरोगं विषं कासं यक्ष्माणं
विषमज्वरम् ॥ कुष्ठानि जठरं मेहं श्वासं शोफमरोचकम् । विशे-
पाच्च ह्यपस्मारं कामलागुदजानि च ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, चीते की छाल, वायाविडंग ये सब औषध एक २ भाग लेवे तथा शिलाजीत, रूपे की भस्म और मंड़ूर ये पांच २ भाग लेवे, शुद्ध लोह की भस्म और सुवर्णमाक्षिक ये प्रत्येक आठ२भाग लेवे इन सब का चूर्ण सहत डालके सब को लोहे के पात्र में भर देवे फिर इस में से अग्निबल विचारके एक तोले पर्यंत की मात्रा प्रतिदिन देवे, जब पच जावे तब यथायोग्य पथ्य देवे परंतु कुलथी, मकोय, कबूतर ये खाना वर्जित है यह पांडुरोग, विष, रांसी, राजरोग, विषमज्वर, कोढ़, जलंधर, प्रमेह, श्वास, सूजन, अरुचि, मृगी, कामला और बवासीर ये रोग नाश करे ॥

फलत्रिकादिकाढा

फलत्रिकामृता वासा तित्ता भूर्निर्वानिवजः ।

क्वाथः क्षौद्रयुतो हन्यात्पांडुरोगं सकामलम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला, गिलोय, अहृसा, कुटकी, चिरामता, नीम के पत्ते न सब के काटे में सहत डालके पीवे तो पांडुरोग और कामला इन का नाश करे ॥

पुनर्नवादिकाढा

पुनर्नवानिवपटोलशुंठी तित्तामृता दाव्यभयाकपायः ।

सर्वांगशोफोदरपांडुरोगं स्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु ॥

अर्थ—सांठी की जड़, नीम की छाल, पटोलपत्र, सांठ, कुटकी, गिलोय, दारुहलदी और हरड इन का काढा सर्वांग की सृजन, जलंधर, पांडुरोग, स्थूलता, मुख से पानी का गिरना और कफरोग इन का नाश करे ॥

वासादिकाढा

वासामृतानिंवकिरातकट्टीकपायकोयं समधुर्निपीतः ।

सकामलं पांडुमयास्रपित्तं हन्याद्धलीमं च कफादिकान् गदान् ॥

अर्थ—अडूसा, गिलोय, नीम की छाल, चिरायता और कुटकी इन का काढा, सहत और घी डालके देवे तो कामला, पांडुरोग, रक्तपित्त, हलीमक और कफादिक व्याधि इन को नाश करे ॥

दाव्यादिवटक

दावींत्वद्भ्रमाक्षिको धातुग्रंथिको देवदारु च । एषां द्विदलिका-
न्भागान्कृत्वा चूर्णं पृथक् पृथक् ॥ मंडूरं द्विगुणं चूर्णं शुद्धमंज-
नसन्निभम् । मूत्रे चाष्टगुणे पक्त्वा तस्मिस्तत्प्रक्षिपेन्नरः ॥ उदुं-
वरसमान्कृत्वा वटकांस्तान्यथाग्नि च । उपयुंजीत तत्रेण जीर्ण-
सात्म्यं च भोजनम् ॥ मंडूरवटका ह्येते प्राणदाः पांडुरोगिणः ।
कुष्ठानि प्रवरं शोथमूरुस्तंभं कफामयान् ॥ अर्शांसि कामलामेहं
प्लीहानं शमयंति च ॥

अर्थ—दारुहलदी, दालचीनी, सोनामक्खी की भस्म, पीपरामूल, देवदारु ये औषध आठ २ तोले ले और मंडूर १६ तोले इन सब को एकत्र करके आठ गुणे गोमूत्र में पचाके इस में से एक २ तोले की गोली करे इस को रोगी का बलाबल विचारके देवे इस के ऊपर पुराने और आत्मा को हितकारी ऐसे पदार्थ पथ्यमें देवे यह मंडूरवटक पांडुरोगी को प्राणदायक है तथा कोठ, सृजन, ऊरुस्तंभ, कफरोग, ववासीर, कामला, प्रमेह और प्लीहा इन की शांति करे ॥

किरातादिमंडूर

किराततित्तं सुरदारुदावीं मुस्तागु डूची कटुकापटोलम् । दुरा-
लभापर्पटकं सनिंवा कटुत्रिकं वन्दिफलत्रिकं च ॥ फलं विडंगस्य
समांशकानि सर्वैः समं चूर्णमथायसं च ॥ सर्पिमधुभ्यां वटिका
विधेया तत्रानुपानाद्भिपजा प्रयोज्या ॥ निहंति पांडुं च हलीम-

कं च शोथं प्रमेहं ग्रहणीरुजं च । श्वासं च कासं च सरक्तपित्त-
मर्शास्यथोर्वोग्रहमामवातम् ॥ व्रणांश्च गुल्मान् कफविद्रधीश्च
श्वित्रं च कुष्ठं सततप्रयोगात् ॥

अर्थ—चिरायता, देवदारु, दारुहलदी, नागरमोथा, गिलोय, कुटकी, पटोलपत्र,
धमासा, पित्तपापडा, नीम की छाल, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, हरड, बहेडा,
आमला और वायविडंग ये सब समान भाग ले लोहभस्म सब चूर्ण के समान लेके
उस की सहत और घी के साथ गोली बनावे इस को अनुपान के साथ देवे तो पां-
डुरोग, हलीमक, सूजन, प्रमेह, संग्रहणी, श्वास, खांसी, रक्तपित्त, बवासीर, ऊरुग्रह,
आमवात, व्रण, गोला, कफरोग, विद्राधि और सपेद कोठ इन सब को नष्ट करे ॥

अभयादिमोदक

अयस्ति लघ्न्यूपणकोलभागैः सर्वैः समं माक्षिकधातुचूर्णम् ।

तैर्मोदकः क्षौद्रयुतो हि भक्तः पांड्वामये दूरगतोपि शस्तः ॥

अर्थ—लोहभस्म, तिल, सोंठ, मिरच, पीपल और बेर के फल की छाल ये स-
मान भाग लेवे इन सब की बराबर मुवर्णमाक्षिक की भस्म डालके गोली बनावे इस
को सहत में मिलायके खावे तो असाध्य भी पांडुरोग नष्ट होवे ॥

पाण्डुरिरस

रसगंधाम्रलोहैक्यं पाण्डुरिः पुटितं त्रिधा ।

कुमार्यास्तु चतुर्वलं पाण्डुकामलपूर्वहत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, लोहभस्म ये समान भाग ले इन को घीगुवार
के रस की तीन भावना देवे तो यह पाण्डुरिरस सिद्ध होय इस को चार बल (१२
रसि) के प्रमाण सेवन करने से कामला और पांडु इन का नाश करे ॥

पुनर्नवादिवटक

पुनर्नवात्रिवृद्योपविडंगं दारुचित्रकम् । कुष्ठं हरिद्रे त्रिफला दं-
ती चव्यं कालिंगकम् ॥ कटुकापिप्पलीमूलं मुस्तं शृंगी च का-
रवी । यवानी कटफलं चेति पृथक्पलमितं मतम् ॥ मंडूरं द्विगु-
णं चूर्णं गोमूत्रेष्टगुणे पचेत् । गुडवद्रटकान्कृत्वा तत्रेणालोज्य
तान्पिचेत् ॥ पुनर्नवादिमंडूरवटोश्विभ्यां विनिर्मितः । पांडुरो-
गं पुराणं च कामलां च हलीमकम् ॥ श्वासं कासं च यद्दमाणं

ज्वरं शोथं तथोदरम् । शूलप्लीहप्रदध्मानमर्शांसि ग्रहणीं कृमीन् ॥
वातरक्तं च कुष्ठं च सेवनात्राशयेद्द्रुवम् ॥

अर्थ—पुनर्नवा (सांठ), निसोय, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, चि-
त्रक, कूट, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आमला, दंति, चव्य, इन्द्रजो, कुटकी,
पीपलमूल, नागरमोथा, काकडासिंगी, बडीसोफ (मगरेला), अजमायन, कायफल,
ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे और मंडूर ८ तोले ले सब को एकत्र करके आठ गुने
गोमूत्र में पचावे जब गुड के समान पाक हो जावे तब उस की गोली बनायके इस
को छाछ के साथ देवे यह पुनर्नवादि मंडूर अश्विनीकुमार ने पुराने पांडुरोग, हली-
मक, श्वास, खांसी, क्षय, ज्वर, सृजन, जलंधर, शूल, प्लीहोदर, अफरा, बवासीर,
संग्रहणी, कृमि, वातरक्त और कोठ इन के नाश करने को उत्पन्न करा है इस के सेवन
करने से पूर्वोक्त सर्व व्याधि नष्ट होवे ॥

लोहासव पांडुरोगादिकों पर

लोहचूर्णं त्रिकटुकं त्रिफलां च यवानिकाम् । विडंगं मुस्तकं
चित्रं चतुःसंख्यापलान् पृथक् ॥ धातकीकुसुमानां तु प्रक्षिपेत्प-
लविंशतिः । चूर्णीकृत्वा ततः क्षौद्रं चतुःपष्टिपलं क्षिपेत् ॥ द-
द्यात् गुडे तुलां तत्र जलद्रोणद्वयं तथा । घृतभांडे विनिक्षिप्य
निदध्यान्मासमात्रकम् ॥ लोहासवममुं मर्त्यः पिवेदग्निकरं परम् ॥
पांडुश्च पृथुगुल्मानि जठराण्यर्शांसां रुजम् ॥ कुष्ठं प्लीहामयं कंडूं
कासश्वासभगंदरम् । अरोचकं च ग्रहणीं हृद्रोगं च विनाशयेत् ॥

अर्थ—लोहभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, अजमायन, वाय-
विडंग, नागरमोथा और चीते की छाल ये ग्यारह औषधी चार चार पल लेवे तथा
घाय के फूल २० पल ले सब का चूर्ण करके ६४ पल सहत और १ तुला गुड ले
इस में पूर्वोक्त चूर्ण मिलायके दो द्रोण जल डाले फिर सब को घी के चिकने वासन
में भरके और मुस पर मुद्रा देकर एकांत में धर देवे इस प्रकार एक महीने तक धरा
रहने देवे फिर मुद्रा को दूर करे इस को लोहासव कहते है यह आसव पीवे तो जठ-
राग्नि प्रदीप्त होवे तथा पांडुरोग, सृजन, पेट के गोले का रोग, बवासीर, कोठ, प्ली-
हा (पिलही), रुजली, खांसी, श्वास, भगंदर, अरुचि, संग्रहणी, हृदय का रोग
इन सब रोगों को यह लोहासव दूर करे है ॥

गोमूत्रलोह

सप्तरात्रं गवां मूत्रं भावितं चायसो रजः ।

पांडुरोगप्रशान्त्यर्थं पयसा प्रपिवेत्ररः ॥

अर्थ—गौ के मूत्र में लोहे को सात रात दिन भीगने देवे फिर इस मूत्र को दूध के साथ मिलायके पांडुरोगी मनुष्यको पिलावे तो पांडुरोग दूर हो ॥

गोमूत्रसिद्धमंडूर

गोमूत्रसिद्धमंडूरचूर्णं सगुडमिश्रितम् ।

पांडुरोगः क्षयं याति पंक्तिशूलं च दारुणम् ॥

अर्थ—गोमूत्र में मंडूर को पचायके उस को गुडमें मिलायके पांडुरोगी को खिलावे तो पांडुरोग पंक्तिशूल (परिणाम शूल) नष्ट होवे ॥

नवायसादिचूर्णं पांडुरोगादिकों पर

चित्रकं त्रिफला मुस्तं विडंगं त्र्यूपणानि च । समभागानि कार्या-

णि नव भागा हतायसः ॥ एतदेकीकृतं चूर्णं मधुसर्पियुतं लिहे-

त् । गोमूत्रमथवा तक्रमनुपाने प्रशस्यते ॥ पांडुरोगं जयत्युग्रं

त्रिदोषं च भगंदरम् । शोथकुष्ठोदराशांसि मंदाग्निमरुचिं कूर्मान् ॥

अर्थ—चीते की छाल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल ये नौ औषध समान भाग लेकर चूर्ण करे इस चूर्ण के समान लोह भस्म ले उस चूर्ण में मिलाय देवे फिर यह चूर्ण सहत और धी मिलाके सेवन करे अथवा गोमूत्र में किंवा गौ की छाछ के साथ सेवन करे तो घोर पांडुरोग दूर होवे तथा त्रिदोष, भगंदर, सूजन, कोढ़, उदररोग चवासीर, मंदाग्नि और कृमिरोग ये सब रोग दूर होवें ॥

दूसरा नवायसचूर्ण

त्र्यूपणं त्रिफला मुस्ता विडंगं चित्रकं समम् । नवायोरजसो भा-

गास्तचूर्णं मधुसर्पिपा ॥ भक्षयेत्पांडुहृद्रोगकुष्ठार्शःकामलापहम् ।

गोमूत्रेण पिबेद्वातपांडुरोगं च नाशयेत् ॥ शोथहृद्रोगमुदरं कृ-

मिकुष्ठं भगंदरम् । नाशयेदग्निमाद्यं च दुर्नामकमरोचकम् ॥ आ-

र्द्रकस्य रसेनापि लिह्यात्कफसमृद्धिमान् । गुंजामेकां समारभ्य

यावत्स्युर्नैव रक्तिका ॥ प्रलिह्यान्मधुसर्पिः र्थ्या पिबेत्तत्रेण वा सहा ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग और चित्रकये समान भाग लेवे तथा लोहभस्म ९ भाग, सब को एकत्र करके इसे सहत और घी में मिलायके पांडुरोग, हृदयरोग, कोढ़, बवासीर, कामला इन पर देवे यदि गोमूत्र के साथ इस को देवे तो वादी का पांडुरोग, सूजन, हृदयरोग, जलंधर, कृमिरोग, कोढ़, भगंदर, मंदाग्नि, बवासीर और अरुचि ये रोग नष्ट होवे तथा अदरख के रस से दिया जाय तो कफरोग नष्ट हो यह चूर्ण एक रत्ती से लेकर नौ रत्ती पर्यंत देना चाहिये अथवा अठारह रत्ती पर्यंत बलाबल विचारके सहत घी अथवा छाछ के साथ देवे ॥

लोहादिचूर्ण जीर्णपांडु पर

लोहं कट्टुत्रिकंकोलं तिलं वा चूर्णसमं कीलकमाक्षिक-
संयुक्तं । क्षौद्रयुतं च सतक्रमेव हि जीर्णतरे खलु पांडुगदेपि ॥

अर्थ लोह की भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, कंकोल, तिल, सुवर्णमाक्षिक की भस्म इन का चूर्ण १ तोले को सहत अथवा छाछ इन के साथ देवे तो बहुत दिन क पांडुरोग नष्ट होवे ॥

शिलाजितादियोग

शिलाजतुक्षौद्रविडंगसर्पिलोहोभयाशर्करया समक्षम् ।
आपूर्यते दुर्बलदेहधारी त्रिपंचरात्रेण यथा शशांकः ॥

अर्थ—शिलाजीत, सहत, वायविडंग, घी, हरड और खांड इन सब का समान भाग चूर्ण करके देवे तो पंद्रह दिन में देह बलवान् होवे जैसे चंद्रमा परिपूर्ण होता है ॥

मंडूरवज्रवटक

पंचकोलमरिचं देवदारुफलत्रिकम् । विडंगमुस्तायुक्ताश्च भागा-
द्विफलसंमिताः ॥ यावंत्येतानि चूर्णानि मंडूरं द्विगुणं ततः ।
पक्त्वाष्टगुणिते मूत्रे तदनीभूतमुद्धरेत् ॥ ततोक्षमात्रान् वटका-
न् पिबेत्तत्रेण तक्रमुक्त् ॥ पांडुरोगं जयेत्तद्वन्मंदाग्नित्वमरोचक-
म् ॥ मंडूरवज्रवटको रोगानाकप्रभेदतः । अर्शांसि ग्रहणांशां-
फामूरुस्तंभं हलीमकम् ॥ कृमिर्गृहानमुदरं गलरोगं च नाशयेत् ॥

अर्थ—पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, काली मिरच, देवदारु, हरड, व-

हेडा, आवला, वायविडंग और नागरमोथा ये सब औषध समान भाग ले सब से दूना मंडूर लेवे सब से आठ गुने गोमूत्र में डालके पचावे जब गाढा हो जावे तब उतारके एक २ तोले की गोली बनायके एक गोली छाछ के साथ देवे तथा छाछ भात पध्य में देवे तो पांडुरोग, मदांघ्रि, अरुचि, बवासीर, संग्रहणी, सृजन, ऊरुस्तंभ, हलीमक, कृमिरोग, ग्रीहा, उदररोग, गलरोग तथा यह अनेक रोगों को नाश करे है ॥

हंसमंडूर

मंडूरं चूर्णयेत् श्लक्ष्णं गोमूत्रेष्टगुणे पचेत् । पंचकोलं देवदारुमु-
स्तव्योपफलत्रयं ॥ विडंगं स्यात्प्रतिपलं पाकांते चूर्णितं क्षिपेत् ।
भक्षयेत्कर्पमात्रं च तत्रे तत्रं च भोजने ॥ पांडुशोफंहलीमं च
ऊरुस्तंभं च कामलां । अशांसि हंति नो चित्रं हंसमंडूर उच्यते ॥

अर्थ—मंडूर में आठ गुना गोमूत्र डालके पचावे जब गाढा हो जावे तब उस में पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, देवदारु, नागरमोथा, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला और वायविडंग इन प्रत्येक को चार २ तोले लेके सब का चूर्ण करके उस अवलेह में मिलाय एक २ तोले की गोली बनावे इस को छाछ के साथ देवे तथा पध्य में छाछ भात देवे तो पांडुरोग, सृजन, हलीमक, ऊरुस्तंभ, कामला और बवासीर इन को नाश करे इस को हंसमंडूर कहते हैं ॥

सिद्धमंडूर

मंडूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेष्टगुणे पचेत् । पुनर्नवात्रिवृश्रूपं वि-
डंगं देवदारुकम् ॥ द्विनिशा पुष्करं वह्निर्दती चव्यं फलत्रिकम् ।
कुटजस्य फलं तिक्ता पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥ विपं च प्रतिक-
र्पस्य चूर्णं कृत्वा विमिश्रयेत् । मंडूरस्य च पाकांते अक्षमात्रं
वटीकृतम् ॥ पांडुशोफोदरानाहशूलसत्कृमिगुल्मनुत् । इत्येवं
सिद्धमंडूरः सर्वरोगविनाशकृत् ॥

अर्थ—मंडूर ३२ तोले और गोमूत्र २५६ तोले दोनों को एकत्र कर अग्नि पर रखके पचन करे जब गाढा हो जावे तब इस में पुनर्नवा, निशोध, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, हलदी, दारहलदी, पुष्करमूल, चीने की छाल, दंती, चव्य, हरड, बहेडा, आवला, इन्द्रजो, कुटकी, पीपरामूल, नागरमोथा, अतीस इन प्रत्येक का तोले २ चूर्ण उस में मिलावे जब पाक हो जावे तब एक एक तोले की

गोली बांधे यह सिद्धमंडूरवटक पांडुरोग, सूजन, उदर, अफरा, शूल, कृमि और गोला तथा सर्व रोगों का नाश करे है ॥

अमृतहरीतकी

शतावरीभृंगराजपुनर्नवकुरंटकैः । प्रतिसप्तपलं चूर्णं जले काथ्यं
चतुर्गुणे ॥ पादशेषं कपायं तु वस्त्रपूतं समाहरेत् । हरीतकीपलं
तस्मिन् पष्टं चाधिशतत्रयम् ॥ पाचयेद्विधिवच्चैव त्रिंशद्गुध-
पलं पचेत् । भित्वा निवारयेदुदंडं तद्गर्भं सर्वमौषधम् ॥ पट्टपलं
रसगंधौ च शुद्धे पात्रे क्षणं पचेत् । उत्तार्य चालयेत्तावद्यावत्क-
ठिनतां व्रजेत् ॥ चूर्णयित्वामृतासर्वं पलं सप्त विमिश्रयेत् । म-
धुना वटिका कार्या पष्ट्याधिकशतत्रयम् । एकैका ह्यमया गर्भे
क्षिप्त्वा सूत्रेण बंधयेत् । मधुभाण्डे क्षिपेत्पश्चादेकैकां भक्षयेद्वि-
जम् ॥ शुष्कपांडुहरं सम्यगमृताया हरीतकी ॥

अर्थ—शतावर, भांगरा, पुनर्नवा और पियावांसा ये प्रत्येक अठ्ठाईस २ तोले लेवे इन को चौगुने जल में चढाय काढा करके उतार लेवे, फिर काढे को छान के इस में हरड १४४० तोले डालके १२० तोले गौ का दूध डाले फिर चूल्हे पर चढायके हरडों को सिजावे जब नरम हो जावें तब उन को फोडके गुठली निकालके फेक देवे और पारा २४ तोले, गंधक २४ तोले दोनों को एक पात्र में चढायके पचन करावे जब दोनों सघन हो जावें तब उन का चूर्ण कर उस में गिलोय का सत्व २८ तोले मिलायके सहत से ३६० गोली बनावे इन को गुठली निकाली हुई हरडों में भरे और सूत से लपेट देवे । फिर इन को सहत के वासन में गरे देवे इस में से नित्य प्रति एक हरड राय तो यह अमृतहरीतकी शुष्क पांडुरोग का नाश करे ॥

पंचकोलघृत

पंचकोलं यवाग्रं च क्षीरं दध्ना घृतं पुनः । समांशानि तु यो-
ज्यानि भार्गीं कुष्ठं च पौष्करम् ॥ शतं तत्र हरीतक्या जलेनैव
चतुर्गुणम् । काथं नैकत्र योज्यांते काथयेन्मृदुबन्धिना ॥ मृदु-
पाकघृतं सिद्धं पाने नस्ये च वस्निपु । गुणाधिक्यं भवेन्नृणां
पांडुरोगे हलीमके ॥ क्षये च राजयक्ष्मे च शस्तमुक्तं भिषग्वरैः ॥

अर्थ—पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, जों के अग्रभाग (अर्थात् जों के तुस), दूध, दही, घी, भारंगी, कूठ, पुहकरमूल ये समान भाग लेवे और ३०० सौ जवाहरड ले इन सब के काढ़े में घी मिलायके मंद २ अग्निपर पचावे; इस घी के पीने से नस्य और बरिस्त इन में देवे यह मनुष्य को उत्तम गुणकारक है, यह पांडुरोग, हलीमक, क्षय और राजरोग इन रोगों में देना वैद्यों ने उत्तम कहा है ॥

साधारणयोग

बन्धिचूर्णनिशाभाव्यं धात्रीफलकपायकैः ।

गव्येनाज्येन दातव्यं निशायां पांडुरोगिणाम् ॥

अर्थ—चित्रक को चूर्ण के आंवले को काढ़े में तीन भावना देवे फिर गौ के घी में मिलायके पांडुरोगवाले को रात्रि के समय देवे तो पांडुरोग नष्ट होय ॥

देवदालीयोग

देवदाल्यास्तु पंचांगचूर्णं क्षीरेथ वा जले ।

निष्कमात्रं पिवेन्नित्यं मासात्पांडुगदापहम् ॥

अर्थ—देवदाली (बंदाल वा घघरवेले) के पंचांग के चूर्ण को दूध अथवा जल के साथ ४ मासे एक महीने पर्यंत देवे तो पांडुरोग को नाश करे ॥

गोमूत्रहरीतकीयोग

त्रिःसप्ताहं गवां मूत्रैरभयां च विभावयेत् ।

एकैका भक्षिता नित्यं पांडुरोगविनाशिनी ॥

हस्तिकर्ण्यः समूलायाश्चूर्णपानेन पांडुजित् ॥

अर्थ—हरडों को २१ दिन पर्यंत गोमूत्र में भिगने देवे फिर इस में से एक एक नित्य भक्षण करे तो पांडुरोग का नाश करे । अथवा समूल हस्तिकर्ण (कासाळ) लेकर चूर्ण करके देवे तो पांडुरोग का नाश होय ॥

भूनिंवादिगुटी

भूनिंवाद्पटोलनिंबकटुकादावीविडंगामृतावासाशामलकाभया-

मरकणाविश्वोपधैश्चूर्णितैः । तुल्यैः पपेटचूर्णितैः सदहनैः सल्लो-

हचूर्णाद्रिकैः कर्तव्या मधुसंयुता च गुटिका पांड्वामयग्राहहा ॥

अर्थ—चिरायता, नागरमोया, पटोलपत्र, नीम की छाल, कुटकी, दादहलदी, वाय-विडंग, गिलोय, धमासा, बहेडा, आमले, हरड, पीपल, सोंठ, पित्तपापडा, चीते की

छाछ, लोहे की भस्म इन सब को समान भाग ले चूर्ण करे फिर इस की अदरख के रस में गोली बनावे इस को सहत के साथ खाने को देवे तो घोर पांडुरोग का नाश करे ॥

मदेभसिंहसूत

रसगंधवराताम्रशंखविपनंगाभ्रकांतीक्ष्णमुंडं । अथा हिंगुलं टंकणं
समांशं सकलतस्त्रिगुणं पुराणकिट्टं ॥ पशुमूत्रविशोधितं तु भृ-
द्वा त्रिफलाभृंगतथार्द्रकोत्थनीरैः । सुविशोध्य नरामृतालिवा-
सास्वरसैरष्टगुणैः पुनर्नवोत्थैः ॥ पृथगाग्निघृतं विपाच्यं गुटिका
गुंजमिता निजानुपानैः । ज्वरपांडुतृपास्रपैत्यगुल्मक्षयकासस्व-
रमग्निसादमूर्च्छाः ॥ पवनादिषु दुस्तराष्टरोगान् सकलं पित्तहरे-
मदावृतं च । बहुना किमयं यथार्थनामा सकलव्याधिहरो मदे-
भसिंहः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, हरड, बहेडा, आंवला, तामे की भस्म, शंखभस्म, सिंगिया-
विष, अम्रक, कांतीलोह, तीक्ष्णलोह, मुंडलोह इन की भस्म और हींगूल तथा सुहा-
गा ये सब समान भाग लेवे इन सब से त्रिगुना मंडूर ले सब को गोमूत्र में शोधन कर
भूनके निकाल लेवे फिर हरड, बहेडा, आंवला, भांगरा और अदरख इन के रस में
खरल करके सुखाय ले फिर त्रिफला, गिलोय इन के अठगुने रसों की भावना
देकर फिर पुनर्नवा के स्वरस को डालके आग्निपर रखके पचावे जब गाढा हो जावे
तब एक २ रत्ती की गोली बनावे इस को रोग २ के अनुपान से देवे तो ज्वर, पांडु-
रोग, तृपा, रक्तपित्त, गोला, क्षय, खांसी, स्वरभेद, मंदाग्नि, मूर्च्छा, वातव्याधि
आदि आठ असाध्य रोग, पित्तव्याधि इन को नाश करे यह संपूर्ण व्याधिरूप हाथी
के मारने को सिंहरूप है ॥

त्रैलोक्यनाथरस

पलानि चत्वारि रसस्य पंच गंधस्य सत्वस्य गुडूचिकायाः ।
व्योपस्य चूर्णस्य सतालमूल्याः सशाल्मलस्येह पलत्रयं स्यात् ॥
पृथक् पृथक् पद्म गगनस्य चाष्टौ लोहस्य सर्वं त्रिफलाजलेन ।
घृतं चतुःपष्टिमितं तदर्धाः स्युर्भावनायार्द्रकजद्रवस्य ॥
शिशूत्थनीरेण च षोडशाष्टौ तथानलोत्था गृहकन्यकायाः ।

आर्द्रद्रवस्येति रसोयमुक्तो पांडुक्षयश्वासगदार्तिहंता ॥

क्षौद्रेण वै शर्करया घृतेन कर्पाधमेतस्य भजेत्प्रयुंजात् ॥

अर्थ-पारा १६ तोले, गंधक २० तोले, गिलोय का सत्व, सोंठ, मिरच, पीपल, मूसली और सेमर का गोंद ये प्रत्येक १२ तोले लेवे. अत्रक २४ तोले, लोहभस्म ३२ तोले, सब को एकत्र करके घूर्ण करके त्रिफला के काठे की ६४ भावना देवे, अदरख के रस की ३२ भावना सहजने के रस की १६, चित्रक के रस की ८, घीगुवार-के रस की ८, फिर अदरख के रस की ८ इस प्रकार देकर उस में से सहत खांड और घी इन के साथ छः मासे देवे तो पांडुरोग, क्षय, श्वास इन सब रोगों को नाश करे ॥

उदयभास्कर

भागेकं रसगंधकं द्विगुणितं शुल्वं च भागाष्टकं शैलेयास्त्रयता-
लकद्वयमिदं शुद्धं च खल्वे कृतं । अर्थ व्योपजवेदभागसहितं
भागद्वयं चामृतं निर्गुण्ड्यार्द्रकभृंगराजसहितं भाव्यं जयंतीरसैः ॥
प्रत्येकं दिनसप्तकं तु सुदृढं शोष्यं च सूर्यातपे योज्यं गुंजमितं
रसाद्रसहितं व्योपेण संमिश्रितं । पांडूकामलरोगशोकदहनं स-
न्ने त्रिदोषे ज्वरे मेहप्लीहजलोदरं ग्रहणिका कुष्ठं धनुर्वातजं ॥ पथ्यं
पाष्टिकतंदुलं नवनितं तक्रं च शाल्योदनं देयश्चोदयभास्करः
क्षितितले संबंधिकारान् जयेत् ॥

अर्थ-पारा १, गंधक २, तामे की भस्म ८, शिलाजीत ३, हरताल २, सोंठ, मिरच, पीपल तीनों ४ तथा सिंगियाविप २ भाग लेवे इन सब को एकत्र करके निर्गुंडी, अदरख, भांगरा और अरनी इन के रस की पृथक् २ सात २ भावना देवे अर्थात् खरल करे और घूप में सुखाय लेवे. इस में से १ रत्ती यह रस अदरख के रस और त्रिकुटा इन के साथ देवे तो पांडुरोग, कामला, सूजन, मंदाग्नि, त्रिदोषज्वर, प्रमेह, प्लीहा, जलंधर, संग्रहणी, कोठ, धनुर्वात इन का नाश करे इस पर पथ्य में सांठी चावल का भात, छाछ और शाल्योदन (पुराने चावलों का भात), यह उदयभास्कर संपूर्ण रोगरूप अंधकार को नाश करे है इसी से इस की उदय-भास्कर संज्ञा है ॥

कामेश्वररस

पलं सूतं पलं गंधं बन्धिपथ्यात्रयं त्रयं । मुस्तैलापत्रकानां च

मितं चार्धपलं पलम् ॥ त्र्यूपणं पिप्पलीमूलं विपं चैव पलं
पलम् । नागकेशरकर्पूरं रेणुकार्धपलं तथा ॥ पुरातनगुडेनैव
तुलाधेन प्रपाचयेत् । मर्दयेच्चार्द्रकद्रावैर्यामैकं तद्रघृतेन च ॥
गुटिका बदराकारा कारयेद्भक्षयेत्सदा । शोफपांडुहरः सोयं
रसः कामेश्वरो ह्ययम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक दोनों चार २ भाग, चीते की छाल और हरड हर एक बारह
२ भाग, नागरमोथा, इलायची और पत्रज ये दो दो भाग और त्रिकुटा (सॉं,
मिरच, पीपल), पीपरामूल और सिंगियाविष हर एक चार २ भाग, नागकेशर १
तथा रेणुकर्बीज २ तोले ले इस प्रकार सब औषध लेकर चूर्ण कर लेवे; इस में पुराना,
गुड २०० तोले मिलाकर पचावे अर्थात् पक करे फिर शीतल करके अदरस के रस
में १ प्रहर तथा गौ के घी में १ प्रहर मर्दन करके बेर के बराबर गोली बनावे एक
गोली नित्य सेवन करे तो सूजन, पांडुरोग इन को नाश करे इस को कामेश्वर
रस कहते हैं ॥

कालविध्वंसकरस

शुद्धसूतं हेमतारं ताम्रं तुल्यं विमर्दयेत् । जंवीरनीरसंयुक्तमा-
तपे शोपयेद्दिनम् ॥ सर्वतुल्यं पुनः सूतं क्षिप्त्वा पिष्टिं प्रकल्प-
येत् । आदाय बंधयेद्ब्रह्मे इष्टिकायंत्रगं पचेत् ॥ जंवीरैर्गंधकं
पिष्ट्वा अधश्चोर्ध्वं च दापयेत् । तुल्यं तुल्यं पुनर्देयं रुध्वा लघु-
पुटे पचेत् ॥ पद्मगुणैर्गंधके जीर्णे तदुद्धृत्य विचूर्णयेत् । लोह-
भस्म समांशं च दत्त्वामर्द्यं द्रवैर्दिनम् ॥ कंटकार्या बृहत्या च
तथाग्निधमनद्रवैः । प्रतिद्रावैर्दिनं मर्द्यं पचेत्पंचभिरुत्पलैः ॥
एवं नवपुटं देयं द्रवद्रावैस्त्रिधा त्रिधा । वन्ध्यकं चिरविल्वानां
द्रावैर्द्विर्दिः पुटे पचेत् ॥ अंधमूपागतं पाच्यमादायाचूर्णयेत्पुनः ।
दशांशेन विपं योज्यं गुंजामात्रं प्रयोजयेत् ॥ कालविध्वंसको
नाम रसः पांड्वामयापहः ॥

अर्थ—शुद्धपारा और सुवर्ण, चांदी, ताम्र इन की भरम समान भाग लेवे सब
को पंभीरी के रस में एक दिन घूष में रसके सरल करे तथा इन सब की बराबर

फिर पारा लेवे सब की कजली करे और कपड़े में पोटली बांध लेवे पश्चात् जंभीरी के रस में गंधक घोटकर उस पोटली के ऊपर नीचे देकर इष्टिकायंत्र में धरके पचावे इस प्रकार समान गंधक दे देकर पद्मगुण गंधक जारण करे फिर निकालके चूर्ण कर लेवे इस चूर्ण के समान लोहभस्म डालके कटेरी, बडी कटेरी और नीम इन के रस में एक एक दिन खरल करे और पांच उपलों में रख २ के फूंकता जावे इस प्रकार प्रत्येक की तीन २ पुट देवे ऐसे नौ पुट हुई, फिर चित्रक, आंक और कंजा इन की दो दो भावना देवे परंतु प्रत्येक भावना में अंधमूपासंपुट में रख २ के अग्नि में पचाता जावे फिर इस का चूर्ण करके इस का दशमांश शुद्ध सिंगिया विष मिलावे तो यह रस सिद्ध होवे. इस में से १ रत्ती की मात्रा देवे तो यह कालविध्वंसकरस पांडुरोग का नाश करे ॥

पांडुरि

रसगंधकलोहकं पांडुरिः पुटितस्त्रिधा ।

कुमार्याक्तश्चतुर्वल्लपांडुकामलपूर्ववत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, लोहभस्म ये समान भाग लेवे सब का चूर्ण करके धीगुवार के रस की तीन भावना देकर प्रत्येक भावना में गजपुट में रखके फूंकता जावे तो यह तैयार हो. इस पांडुरिरस चार वल्ल रोगी को देवे तो पांडुरोग और कामला इन का नाश करे ॥

पांडुसूदन

रसं गंधं मृतं ताम्रं जयपालं च गुग्गुलुम् ।

समांशमाज्यसंयुक्तं गुटिकां कारयेन्मिताम् ॥

एकैकां प्रदद्वैद्यः शोथपांडूपनुत्तये ।

शीतलं च जलं चाम्लं वर्जयेत्पांडुसूदने ॥

अर्थ—पारा, गंधक, तामे की भस्म, जमालगोटा और गुग्गुलु ये समान भाग लेकर इस की घी में गोली बनावे यह बलाबल विचारके एक एक देवे या न्यूनाधिक दे तो सूजन, पांडुरोग इन का नाश करे इस पर शीतलजल और खट्टा रस खाना वर्जित है ॥

वंगेश्वर

वंगसूतकयोः कृत्वा सारणं कन्यकाद्रवैः । संमर्द्य वटिकाः कृ-

त्वा पाचयेत्काचभाजने ॥ यावच्चंद्रनिभः शुभ्रो वंगेश्वरसमो

गुणैः । पांडुप्रमेहदौर्वल्यकामलांतकनाशनः ॥

अर्थ—वंग (रांगा) और पारा दोनों को धीगुवार के रस में खरल करके कांचकी आतसी शीशी में पचन करे तो यह चंद्रमा के तुल्य सुंदर वर्ण तथा गुणों में वंगेश्वर की समान और पांडुरोग, प्रमेह, दुर्बलता, कामला इन का नाश करनेवाला यह दूसरा वंगेश्वर है ॥

पांडुनिग्रहरस

अम्रभस्म रसभस्म गंधकं लोहभस्म मुसलीविमर्दितम् ।
 शाल्मलीरसततो गुडूचिकाक्वाथकैश्च परिमर्दितं दिनम् ॥
 भावयेत्त्रिफलयार्द्रकन्यकावन्हिशिशुजरसैश्च सप्तधा ।
 जायते हि भवजो विवर्जनं शोथपांडुनिवृत्तिदायकम् ॥
 वल्लयुग्मपरिमाणतस्त्विमं लेहयेच्च घृतमाक्षिकान्वितम् ।
 पथ्यमात्रपरिभाषितं पुरा एतदेव परिवर्जितं हितम् ॥
 शोथपांडुविनिवृत्तिदायकः सेवितस्तु यवांचिचिकाद्रवैः ।
 नागराग्निजयपालकैस्तु वा वर्ज्यदुग्धपरिपक्वसर्पिषा ॥
 तक्रभक्तमिह भोजयेदतिस्निग्धमन्नमतिवृत्तनं त्यजेत् ॥

अर्थ—अम्रकभस्म, पारे की भस्म, गंधक, लोहभस्म और मुसली का चूर्ण ये समान भाग ले सब को एकत्र करके सेमर के रस से तथा गिलोय के काढे से एक एक दिन खरल करके फिर त्रिफले का काढा, अदरस, धीगुवार, चीता, सहजने का रस इन सब की पृथक् २ सात २ भावना देवे तो यह पांडुनिग्रह रस बने. इस में से दो वल्ल (छः रत्ती) रस सहत और धी के साथ देवे तो सूजन, पांडुरोग इन का नाश करे इस पर जौ, इमली, सोंठ, चित्रक, जमालगोटा और दूध इन को औटाय-के तथा उस में धी डाला हुआ ये तथा अतिस्निग्धान्न और नूतनान्न ये वर्जित हैं-पथ्य में छाछ भात देवे ॥

अनिलरस

ताम्रभस्म रसभस्म गंधकं वत्सनाभमपि तुल्यभागिकम् ।
 वन्हितोयपरिमर्दितं पचेद्यामपादमथ मंदवन्हिना ॥
 राक्तिकायुगलमानतोनिलः शोथपांडुघनपंकशोपिता ॥

अर्थ—ताम्रभस्म, पारे की भस्म, गंधक, सिंगियाविप ये सब समान भाग लेवे इन सब को चित्रक के रस में मंदाश्रियर रसके दो घडी पर्यंत घोंटे फिर दो २ रत्ती की

गोली बनावे सेवन करने से यह अनिलरस सूजन और पांडुरोग तथा देह के भीतर की कीच अर्थात् तरी को सुखाय देता है ॥

लोहसुंदररस

सूतभस्म मृतलोहगंधकौ भागवर्धितमिदं विनिक्षिपेत् ।
दीर्घनालदृढकूपिकोदरे मृत्स्रया च परिवेष्टितां क्षिपेत् ॥
चुल्लिकोपरि सुकूपिकामुखे प्रक्षिपेच्च वरशाल्मलिद्रवं ।
त्रैफलं वसुगुडूचिकारसं पाचयेच्च मृदुवन्हिना दिनं ॥
स्वांगशीतलमिदं प्रगृह्य च त्र्युपणार्द्रकरसेन भावयेत् ।
लोहसुंदररसोयमीरितः शुष्कपांडुविनिवृत्तिदः परः ॥

अर्थ—पारे की भस्म १, लोहभस्म २, तथा गंधक ३ भाग इस प्रकार लेकर सरल करे और उस कजली को कांच की आतसी शीशी में भरके मुख बंद करे ऊपर कपड-मिट्टी करके बालुकायंत्र में रखके एक दिन मंदाग्नि से पचन करे और उसी चूल्हे पर उस शीशी के मुख में सेमर का रस, त्रिफले का काढ़ा, वसु का काढ़ा और गिलोय का रस ये डाले जब पचन होकर तैयार हो जावे तब सांग शीतल होने पर उतारके उस में त्रिकुटा और अदरक के रस की भावना देवे यह लोहसुंदररस शुष्क पांडुरोग का नाश करे ॥

चंदनादितैल ।

चंदनं सरलं दारु यष्टचेला वालकं सठी । नखशैलेयकं पक्त्वा
पद्मकं घनकेसरं ॥ कंकालकं मुरा मांसी शैलेये द्वे हरीतकी ।
त्वग्रेण्डका किरातं च सारिवा तित्तका गुरुः ॥ नलिकावालकं
द्राक्षाकपायं सुपरिश्रुतंतैलमस्तु तथा लाक्षारसेन समभागिकं ॥
मंदाग्नौ पाचयेत्तैलं सिद्धं पानेषु वास्तिषु । नस्ये चाभ्यंजनं
चैव योजयेच्च भिषग्वरः ॥ हंति पांडुं क्षयं कासं ग्रहाग्नि बलवर्ण-
कृत् । मंदज्वरमपस्मारं कुष्ठपामाहरं पुनः ॥ करोति बलपुष्टयो-
जोमेधाप्रज्ञाविवर्धनं । रूपसौभाग्यदं प्रोक्तं सर्वभूतवशीकरं ॥

अर्थ—चंदन, सरल, देवदारु, मुलहठी, इलायची, नेत्रवाला, कजूर, नखद्रव्य, शिलाजित, पद्मसख, नागरमोथा, नागकेशर, कंकाल, मुरा, जटामांसी, पर्यर का फूल,

छोटी हरड, बड़ी हरड, दालचीनी, रेणुकबीज, चिरायता, सरवन, कुटकी, अगर, नलिका सुगंध द्रव्य, सुगंधवाला और दाख इन का काढा करके इस में मीठी तिली का तेल, दही का तोड़, लाख का सीरा, ये समानभाग डालके मंदाग्रि पर रखके तेल सिद्ध करे. इस के पीने, वस्तिकर्म, नस्य, तथा देह में मालिस करना इन कर्मों में काम लावे तो पांडुरोग, क्षय, खांसी, ग्रहवाधा, मंदज्वर, मृगी, कोठ तथा सुजली इन को नाश करे. तथा बल, वर्ण, पुष्टि, तेज, बुद्धि, स्मृति, रूप, सौभाग्य इन को देवे. तथा सर्व प्राणियों को वशीकरण करनेवाला तेल है ॥

मृत्तिकाभक्षणजपांडुनिदान

मृत्तिकादनशीलस्य कुप्यत्यन्यतमोमलः । कपया मारुतं पित्तमूपरामधुराकफं ॥ कोपयेन्मृद्रसार्दांश्च रौक्षाद्रक्तं च रूक्षयेत् ॥

पूरयत्यविपक्वैश्च स्रोतांसि निरुणद्धचपि ॥ इंद्रियाणां बलं हत्वा तेजो वीर्यौजसी तथा । पांडुरोगं करोत्याशु बलवर्णाग्निनाशनं ॥

अर्थ—मिट्टी खाने का जिस मनुष्य को अभ्यास पढ जाय उस के वातादिक दो कुपित होवे कपेली माटी से वात कुपित होय खारी माटी से पित्त और मीठी माटी से कफ कुपित होवे फिर वही मिट्टी पेट में जायकर रसादिक धातुओं को रूखा करे. जब रौक्ष्य गुण प्रगट हो जाय तब जो अन्न खाय सो रूखा होजाय। फिर वही मिट्टी पेट में बिना पके रस को रस बहनेवाली नसों में प्राप्त कर उन के मार्ग को रोक दे रसके बहनेवाली नसों का मार्ग जब रुक जाय तब इंद्रियों का बल अर्थात् अपने अपने विषय ग्रहण करने की शक्ति नाश होय शरीर की कांति तेज और ओज कहिये सब धातुओं का सार (हृदय में रहता है सो) क्षीण होकर पांडुरोग प्रगट कर उस में बल, वर्ण और अग्नि इन का नाश होता है ॥

केशरादिकाढा ।

तद्रत्केसरयष्ट्यार्धपिप्पलीसुरसाह्वयैः ।

मृद्धेपणाय तल्लोल्ये वितरेद्भावितां मृदं ॥

अर्थ—नागकेशर, मुलहठी, पीपल और निसोय इन का काढा करके इस की भावना चिकनी सफेद मिट्टी में देवे, फिर इस मिट्टी को सवावे सो वह खाई हुई मिट्टी दस्तों की राह निकलकर विकार को दूर कर देवे ॥

धृत

व्योपविल्वद्विरजनीत्रिफला द्विपुनर्नवा । मुस्ता चायोरजः पाठा

विडंगं देवदारु च ॥ वृश्चिकाली च भार्ङ्गी च सक्षीरैस्तैर्घृतं
शृतं । सर्वाङ्गप्रशमयत्याशु विकारान् मृत्तिकाकृतान् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, बेलगिरी, हरदी, दारुहरदी, हरड, बहेडा, आंवला, सपेद पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा, नागरमोथा, लोहभस्म, पाद, वायविडंग, देवदारु, मेढासिंगी, भारंगी और दूध इतनी औषधों के काढ़े में सिद्ध करा हुआ घी मट्टी खाने से हुए सर्व विकारों को नाश करे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे पांडुरोगनिदानचिकित्सा समाप्ता ॥

कामलाकर्मविपाकः ।

कामली भक्तचोरः स्यात्तस्य वक्ष्यामि निष्कृतिं । कुर्व्याच्च प-
क्षिराजानं विष्णोर्वाहनमुत्तमं ॥ सुवर्णेन यथाशक्त्या पक्षयो-
मौक्तिकद्वयं । नासिकायां तथा वज्रमुत्तरीयं च राजतं ॥ एवं
कृत्वा गरुत्मंतं घृतद्रोणोपरि न्यसेत् । श्वेतवस्त्रेण संवेष्ट्य श्वेत-
माल्यैः समर्चयेत् ॥ सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो वैष्णवो धर्मपाठकः ।
ब्राह्मणस्त्वर्चितो भक्त्या यजमानेन शक्तितः ॥ उपचारैः षोडश-
भिर्द्विजमभ्यर्चयेत्तथा ॥

अर्थ—जो प्राणी पूर्वजन्म में भात की चोरी करे है वो कामलारोगी होवे उस
पाप के दूर करने को प्रायश्चित्त कहते हैं सुवर्ण का गरुड पक्षी बनायके उस के पंखों
में मोती, नाक में हीरा और उस को चांदी के बस्त्र लडावे. ऐसा गरुड करके १०२४
लठि घी के ऊपर रखके और सपेद बस्त्रों से लपेट कर सपेद फूलमाला से सुशोभित
कर पूजा करे. फिर इस को सर्वशास्त्र के तत्त्ववेत्ता वैष्णव धर्म और पाठ करनेवाला
सि ब्राह्मण का पूजन करके यथाशक्ति षोडशोपचार से पूजा करके उस को उस
रुड का दान देवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

प्रतिमादान

पीनांगः कामलारोगः कपालमुसलान्वितः ।
पूजाविधानं त्वातंको देवतात्वमुदाहृतः ॥

अर्थ—कामलारोगी को आतंकदेवी की प्रतिमा पीले रंग की और जिस के हाथों में कपाल और मूसल धारण करे होवे ऐसी बनायके उस की पूजा करके ब्राह्मण को देवे ॥

कामलानिदान

पांडुरोगीति योत्यर्थं पित्तलानि निपेवते ।

तस्य पित्तमसृङ् मांसं दग्ध्वा रोगाय कल्पते ॥

अर्थ—जो पांडुरोगी अत्यंत पित्तकारक वस्तुओं का सेवन करे उस के पित्त, रुधिर, मांस को जलाय (दुष्ट कर) कामलारूप रोग प्रगट करने को समर्थ होय ॥

लक्षण

हारिद्रनेत्रः सुभृशं हारिद्रत्वङ्नखाननः । रक्तपित्तशकृन्मूत्रो भे-
कवर्णो हर्तेन्द्रियः ॥ दाहाविपाकदौर्बल्यसदनारुचिकर्पितः ।

कामला बहुपित्तेपा कोष्ठशाखाश्रया मत्ता ॥

अर्थ—उस मनुष्य के नेत्र अत्यंत पीले होय. त्वचा, नख और मूत्र ये पीले होय मल मूत्र काले होय, अथवा पीले होय, वह मनुष्य वर्षाऋतु के मेंढक के समान पीला होवे, इन्द्रियों की शक्ति नष्ट होय, दाह, अन्न पचे नहीं दुर्बलता, अंगगलानि, अन्न में अरुचि इन से पीडित होय जिस में पित्त प्रबल ऐसी यह कामला एक कोष्ठाश्रय और दूसरी शाखा (रक्तादि घातु) आश्रित है. उसी प्रकार कामला स्वतंत्र होय है ॥

कामलाचिकित्साक्रम

रेचनं कामलार्तस्य स्निग्धस्यादौ प्रयोजयेत् ।

ततः प्रशमनी कार्या क्रिया वैद्येन जानता ॥

अर्थ—ज्ञाता वैद्य होवे उस को कामलारोग से पीडित ऐसे मनुष्य को दूध, घी, कोईसा स्निग्ध पदार्थ पिलायके दस्त करावे फिर दोष शमन करनेवाली औषध देनी चाहिये ॥

नस्य व अंजन

हिंशु वा लोचने न्यस्तं कामलोन्मूलने क्षमं ।

कामलार्तस्य चैरंडंपिप्पल्यो नविनांजने ॥

अर्थ—कामला के नाश करने को हींग का अंजन करे. अथवा अंड का रस तथा पीपल का चूर्ण इन की नस्य देवे ॥

जालिनीफलादि नस्य

जालिनीफलमाध्यानं नस्यं वा तंडुलांभसा ।

जालिनीफलमध्यस्थं श्यामासर्पपनस्यतः ॥

अर्थ—कडुई तोरई के फल के बीजों के घोवन के जल की नस्य देवे अथवा कडुई हूँबी के बीच में पीपल और सरसों भरके थोड़ी देर रख देवे फिर उस को पीसके उस की नस्य देवे तो कामलारोग दूर हो ॥

कुमारीकंदनस्य

किंवा तोयेन सा पिष्टः कुमारीकंदनस्यतः ।

जायते कामलोपेता पित्तनेत्रांतकामला ॥

अर्थ—धीगुवार का रस निकालके उस में घी डालके नस्य देवे तो कामला करके नेत्र पीले भी हो गये हों तो भी उस का नाश करे ॥

कामलापर अन्न

यवगोधूमशाल्यन्नं रसैर्जांगलजैः शुभैः ।

मुद्गाढकामसूराद्यैस्तयोर्भोजनमिष्यते ॥

अर्थ—जौ, गेहूँ और शालीचावल, ये अन्न, जांगली जीवों के मांसरस करके युक्त अथवा मूँग, मसूर इत्यादि करके युक्त जो भोजन वो कामलावाले रोगी को और पांडुरोगी को देना चाहिये ॥

कामलापर काढा

त्रिफलाया गुडूच्या वा दाव्या निंबस्य वा रसं ।

प्रातर्मधुयुतं वैद्यः कामलार्ताय योजयेत् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला, इन का काढा, अथवा गिलोय का काढा अथवा दारुहलदी वा नीम के काढे में सहद डालके प्रातःकाल वैद्य कामलारोगपीडित को देवे तो कामलारोग दूर होवे ॥

पुनर्नवादि काढा

पुनर्नवानिंबपटोलतिकाविश्वाभयादारुनिशामृतानाम् ।

कपायकः पांडुगदं निहंति सश्वासकासोदरशूलशोथम् ॥

अर्थ—पुनर्नवा, नीम, पटोलपत्र, कुटकी, सोंठ, हरड, दारुहलदी, हलदी और

गिलोय इन का काढा पांडुरोग, श्वास, खांसी, उदररोग, शूल और सूजन इन को नाश करे ॥

त्रिफलादि काढा

त्रिफलानिवकैराततित्तावासामृताभवैः ।

काथो मधुयुतो हंति कामलां पांडुतामपि ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आंवला, नीम की छाल, चिरायता, कुटकी, अहसा और गिलोय इन का काढा सहत डालके पीवे तो कामलारोग और पांडुरोग नष्ट होवे ॥

गोदुग्धपान

अये मनोज्ञकुंडले स्फुरन्मुखेंदुमंडले ।

गवां पयः सनागरं प्रिये निहंति कामलां ॥

अर्थ—हे मनोज्ञकुंडले ! हे स्फुरन्मुखेंदुमंडले प्यारी ! गौ के दूध में सोंठ डालके पीवे तो कामलारोग निश्चय दूर होवे ॥

हरीतक्याद्यंजन

हरीतकी च धात्रिका तथा मनोज्ञगौरिका ।

इति प्रयोजितांजनं निहंति कामलाननं ॥

अर्थ—हरड, वच, आंमलां और स्वर्णगेरु इन की नस्य कामलारोग का नाश करे है ॥

खरविदस्वरस

खरविद्ध दधिना सार्धं सम्यक् संमर्द्य पाययेत् ।

महत्पित्तोद्भवं रोगं कामलां च प्रणश्यति ॥

अर्थ—गधे की लीद दही के साथ पीसके उस का रस निकाल लेवे इस के पीने से घोर पित्त के दोष से उत्पन्न कामलारोग नष्ट होवे ॥

गुडूचीकल्क

गुडूचीपत्रकल्कं वा पिवेत्तत्रेण कामली ॥

अर्थ—कामलारोगवाला गिलोय के पत्ते के कल्क को छाछ के साथ पीवे तो कामला दूर हो ॥

धात्र्यादिचूर्ण

धात्रीलोहरजोव्योपनिशाक्षौद्राज्यशर्करा ।

लीढानि वारयंत्याशु कामलामुद्धतामपि ॥

अर्थ-आंवले, लोहे की भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, हलदी, सहत, घी और खांड इन को मिलायके नित्य पीवे तो घोर बढी हुई कामलारोग को तत्काल दूर करे ॥

अयोरजादिचूर्ण

अयोरजोव्योपविडंगचूर्णं लिह्याद्धरिद्रात्रिफलान्वितं वा ।

सशर्करा कामलिनां त्रिभंडी हिता गवाक्षी सगुडा च शुंठी ॥

अर्थ-लोहे की भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, हलदी, हरड, बहेडा, आंमला इन का चूर्ण अथवा निशोथ और मिश्री अथवा इन्द्रायन का गूदा, सोंठ और गुड ये देवे तो कामलारोग नष्ट होय ॥

व्योपादिचूर्ण

व्योपाग्निवल्यत्रिफलामुस्तैस्तुल्यमयोरजः ।

चूर्णितं तक्रमध्वाज्यं कोष्णतोयोपयोजितम् ॥

कामलापांडुहृद्रोगकुष्ठाशोमिहनाशनम् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, काली मिरच, हरड, बहेडा, आंवला और नागरमोथा ये सब समान भाग लेवे तथा सब की बराबर लोहे की भस्म लेवे सब को एकत्र चूर्ण कर छाछ सहत और घी अथवा गरम जल इन के साथ देवे तो कामला, पांडुरोग, हृदयरोग, कोष्ठ, बवासीर और प्रमेह इन को नष्ट करे ॥

अयोरजादियोग

तुल्यमयोरजः पथ्या हरिद्रा क्षौद्रसर्पिषा ।

चूर्णितं कामली लिह्याद्दुडक्षौद्रेण वाभया ॥

अर्थ-लोहे की भस्म, हरड, हलदी इन का चूर्ण सहत और घी से देवे अथवा हरड के चूर्ण को सहत में मिलायके देवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

अंजन

अंजनं कामलार्तानां द्रोणपुष्पीरसं शुभम् ।

निशागैरिकधात्रीणां चूर्णवासं प्रकल्पयेत् ॥

अर्थ-गोमा का रस अथवा हलद, गेरू और आंवले इन को पीसके अंजन करे तो कामलारोग नष्ट होवे इस में संदेह नहीं ॥

नस्य

वेणीफलरसः स्वच्छो नस्यतस्तस्य सादरम् ।

कामला कामलोपेता याति दूरं च सर्पिषा ॥

अर्थ—देवदाली (वंदाळ) के फलों का रस स्वच्छ निकालके नस्य देवे तो कामला दूर होवे अथवा कुछ २ दोषों करके युक्त जो कामला वो घी के पीने से नष्ट होती है ॥

लोहादिचूर्ण

लोहचूर्णनिशायुग्मं त्रिफलाकटुरोहिणी ।

प्रलिह्य मधुसर्पिभ्यां कामलार्तः सुखी भवेत् ॥

अर्थ—लोहे की भस्म, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आंवला और कुटकी इन के चूर्ण को सहत और घी इन में मिलायकर देवे तो कामलारोगी अच्छा होय ॥

एलादिचूर्ण

एलाजीरकभूधात्रीसिता गव्येन भावयेत् ।

प्रातः संसेवनं कुर्यात् कामलानाशनं परं ॥

अर्थ—इलायची, जीरा, भूयआंवला और मिश्री इन को दूध में औटायके प्रातः-काल के समय सेवन करे तो कामला का नाश होवे ॥

हरिद्राचूर्ण

निशाचूर्णं कर्पमितं दध्नः पलमितं तथा ।

प्रातः संसेवनं कुर्यात् कामलानाशनं परं ॥

अर्थ—हलदी का चूर्ण १ तोले और दही ४ तोला दोनों को मिलायके प्रातःकाल सेवन करे तो कामलारोग का नाश होवे ॥

दाव्यादिचूर्ण

दावीपत्रिफलाव्योषविडंगानयसो रजः ।

मधुसर्पिर्युतं लिह्यात्कामलापांडुरोगवान् ॥

अर्थ—दारुहलदी, हरड, बहेडा, आंवला, सोठ, मिरच, पीपल और लोहे की भस्म ये समान भाग लेवे चूर्ण करके सहत और घी के साथ पांडुरोगी और कामला-वाले रोगी को सेवन करना चाहिये ॥

घृत

हरिद्रान्निफलानिवलामधुकसाधितम् ।

सक्षीरं माहिषं सर्पिः कामलापहमुत्तमं ॥

अर्थ—हलदी, हरड, बहेडा, आंवला, नीम की छाछ, खिरेटी और मुल्हटी इनके काठे में सिद्ध करा हुआ भैंस का घी उस को भैंस के दूध के साथ पीवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

एरंडस्वरस

वातारेश्च जटाद्रावं कर्पांधं दुग्धमिश्रितं ।

पाययेत्तु प्रतिदिनमेवमेव दिनत्रये ॥

घृतं दुग्धोदनं पथ्यं कुर्याद्वै लवणं विना ।

कामलां नाशयत्याशु वायुनाभ्रं हरेद्यथा ॥

अर्थ—अंड की कोमल २ डंडा ले उन का रस निकालके छः मासे लेवे उस को में मिलाय प्रतिदिन रोगी को पिलावे इस प्रकार तीन दिन देवे और पथ्य में घी दूध और भात देवे. तो यह कामलारोग को नष्ट करे जैसे पवन बादलों को नष्ट देती है. इस पर निमक खाना वर्जित है ॥

कटुकीयोग

पिवेत्कवोष्णेन जलेन तिक्तां सशर्करां पाणितलप्रमाणां ।

निहंति दुष्टामपि कामलां सा हरीतकी वा मधुना प्रयुक्ता ॥

अर्थ—गरम जल के साथ कूठ के चूर्ण में मिश्री मिलायके एक तोले के प्रमाण पीवे. अथवा सहत में मिलायके हरद देवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

कुंभकामलानिदान

कालांतरात्खरीभूता कृच्छ्रा स्यात्कुंभकामला ॥

अर्थ—बहुत काल से पुरानी पढने से जो कुंभकामला होवे सो कृच्छ्राप्य होती है. कुम्भ कहिये कोष्ठ तद्रत जो कामला अर्थात् कोष्ठाश्रय कामला ॥

कामलाका असाध्य लक्षण

कृष्णपीतशकृन्मूत्रो भृशं शूनश्च मानवः ।

सरक्ताक्षिमुखच्छर्दिविण्मूत्रो यश्च ताम्यति ॥

अर्थ—जिस मनुष्य का मल काला और मूत्र पीला हो और शरीरपर सूजन विशेष होवे और नेत्र, मुख, वमन, मल और मूत्र ये अत्यंत लाल होय मोह होय वो कामलावान् रोगी बचे नहीं ॥

दूसरा प्रकार

दाहारुचितृडानाहतंद्रामाहेसमान्वितः ।

नष्टाग्निसंज्ञः क्षिप्रं हि कामलावान्विपद्यते ॥

अर्थ—दाह, अरुचि, प्यास, अफरा, तंद्रा, मोह इन लक्षणयुक्त तृया मन्दाग्नि और विस्मृतिवान् कामलावाला रोगी तत्काल मरे ॥

कुंभकामलाका असाध्य लक्षण

छर्द्यरोचकहृत्लासज्वरकुमनिपीडितः ।

नश्यति श्वासकासातो विद्भेदी कुंभकामली ॥

अर्थ—वमन, अरुचि, ओकारी का आना, ज्वर, अनायासश्रम इन से पीडित तथा श्वास, खांसी इन से जर्जरित और अतिसारयुक्त ऐसा कुम्भकामलावाला रोगी मर जावे ॥

कुंभकामलाचिकित्साक्रम

कुंभाख्यकामलायां तु हितः कामलको विधिः ॥

अर्थ—कुंभकामलारोग में जो चिकित्सा कामलारोग में कही है वो करना हित है. अर्थात् वो कुंभकामलारोग को दूर करती है ॥

शिलाजीतयोग

गोमूत्रेण पिवेत्कुंभकामलायां शिलाजतु ॥

अर्थ—गोमूत्र के साथ शिलाजीत को मिलायके पीवे तो कुंभकामलारोग नष्ट होवे ॥

मंडूर

दग्ध्वाक्षकाष्टैर्मलमायसं तु गोमूत्रनिर्वाधितमष्टवारान् ।

विचूर्ण्य लीढं मधुना चिरेण कुंभाह्वयं पांडुगदं निहंति ॥

अर्थ—बहेडे के काष्ठ में लोहे की कीटी को फूंक देवे. जब लाल हो जावे तब निकालके गोमूत्र में बुझाय दे इस प्रकार आठवार करे. फिर उस को वारीक पीस दो अथवा तीन रत्ती के अनुमान सहत के साथ चाटे तो कुंभकामला का शीघ्र ही नाश करे ॥

नस्यादियोग

अर्कमूलं हरेन्नस्यात्कामलां तंदुलोदकं।एरंडमूलिका पीता मधुना

हंति कामलां ॥ अपामार्गशिफा पीता सतक्रा कामलापहा ।

विष्णुक्रांतशिफा तक्रपीता वा तद्विनाशिनी ॥ लांगलीपत्रचूर्णं

वा पिवेत्तत्रेण कामली । गुडार्द्रकयुतं हंति कामलां त्रिफलाशिता ॥

अर्थ—कामला (वा कुंभकामला) पर आक की जड़ को चावलों के घोंवन में पीसके नस्य करे और अंड की जड़ का चूर्ण सहत में मिलाय खाने को देवे, तथा आंगा की जड़ को छाछ में औंढायके देवे तथा कोयलजड़ पीसके छाछ में मिलायके देवे अथवा कलियारी के पत्तों का चूर्ण छाछ में मिलायके देवे. अथवा त्रिफला

के चूर्ण को गुड और अदरक में मिलायके देवे तो कामलारोग नाश होवे ये छः योग कहे हैं ॥

पांडुरोग में कव हलीमक होता है

यदा तु पांडुवर्णः स्याद्धरितस्यावपीतकः । बलोत्साहक्षयस्तंद्रा
मंदाग्नित्वं मृदुज्वरः ॥ स्त्रीष्वहर्षोद्गमर्दश्च दाहस्तृष्णारुचिर्भ्र-
मः । हलीमकं तदा तस्य विद्यादनिलपित्ततः ॥

अर्थ—जिस समय पांडुरोगी का वर्ण हरा, काला, पीला होय और बल व उत्साह इन का नाश, तंद्रा, मन्दाग्नि, महीनज्वर, स्त्रीसंभोग की इच्छा का नाश, अंगों का टूटना, दाह, प्यास, अन्न में अप्रीति और भ्रम ये उपद्रव वातपित्त से प्रगट हलीमक रोग के हैं ॥

पानकीलक्षण

संतापो भिन्नवर्चस्त्वं वहिरंतश्च पीतता ।

पांडुता नेत्रयोर्यस्य पानकीलक्षणं भवेत् ॥

अर्थ—सन्ताप कहिये इन्द्री मन इन का ताप, मल का पतला होना, भीतर, बाहर पीला हो जावे और नेत्रों का पीला होना ये पानकीरोग के लक्षण हैं ॥

हलीमकपरिभाषा

पांडुरोगक्रियां सर्वां योजयेच्च हलीमके ।

कामलायां तु या दृष्टा सापि कार्या भिषग्वरैः ॥

अर्थ—जो यत्न पांडुरोग पर तथा कामलारोग पर कहे हैं वो दोनों उपचार वैद्य को हलीमकरोग पर करने चाहिये ॥

अयोभस्मयोग

मारितस्यायसशूर्णं मुस्ताचूर्णेन संयुतम् ।

खदिरस्य कपायेण पिबेद्धतुं हलीमकम् ॥

अर्थ—लोहभस्म और नागरमोथे का चूर्ण ये एकत्र करके रौंर के काठे के साथ पिलावे तो हलीमक रोग नष्ट होवे ॥

सितादिलेह

सितातिक्तावलायष्टीत्रिफलारजनीयुगैः ।

लेहं लिह्यात्समध्वाज्यं हलीमकनिवृत्तये ॥

अर्थ—मिश्री, कुटकी, खिरेटी, मुलहटी, त्रिफला, हलदी और दारुहलदी इन की अवलेह बनायके सहत और घी डालके चाटे तो हलीमक रोग दूर होवे ॥

अमृतादिघृत

अमृतलतारसकल्कं प्रसाधितुं तुरगविद्विपः सर्पिः ।

क्षीरचतुर्गुणमेतद्वितरेच्च हलीमकार्तेभ्यः ॥

अर्थ—गिलोय का स्वरस अथवा कल्क इन से सिद्ध करा हुआ भैंस का घी उस में उस से चौगुना दूध मिलायके हलीमकारोगवाले को पियावे तो यह रोग दूर होवे ॥

गुडूचीस्वरसयोग

गुडूचीस्वरसे सर्पिः सक्षीरं माहिषं घृतम् ।

चतुर्गुणेन पयसा पाययेत्तद्धलीमके ॥

अर्थ—गिलोय का रस, घी और दूध इन को मिलायके पीवे अथवा भैंस के घी में चौगुना दूध डालके पीवे तो हलीमकारोग नष्ट होवे ॥

पांडु कामला कुंभकामला हलीमक इन पर पथ्य

छर्दिर्विरेचनं जीर्णा यवगोधूमशालयः । मुद्गाढकीमसूराणां यूपा

जांगलजा रसाः ॥ पटोलं वृद्धकुष्मांडं तरुणं कदलीफलम् । जीवन्ती-

क्षुरमत्स्याक्षी गुडूची तंदुलीयकम् ॥ पुनर्नवा द्रोणपुष्पी वार्ता-

कं लशुनद्वयम् । पक्काम्रमभया विंवी शृंगी मत्स्यो गवां जलम् ॥

धात्री तक्रं घृतं तैलं सौवीरकतुपोदकम् । नवनीतं गंधसारो हरि-

द्रा नागकेसरम् ॥ यवक्षारो लोहभस्म कपायाणि च कुंकुमम् ।

यथादोषमिदं पथ्यं पांडुरोगवतां नृणाम् ॥

अर्थ—वमन, रेचन, पुराने जों, गेहूं और चावल, मूंग, अरहर, मसूर इन का पू-
प. जंगली जीवों का मांसरस, परवर, पुराना पेठा, नवीन केला की फली, जीवन्ति
(डोडी), कालाईख, (तालमस्राना), मछेली, गिलोय, चौलाई, पुनर्नवा (सांठ),
द्रोणपुष्पी (गोंगा), बेंगन, दोनों लहसन (प्याज और एक पोतिया लहसन), पका
हुआ आंव, हरड, विंवी (कंदूरी), शृंगीनामक अर्थात् सींगवाली मछली, गोमूत्र,
आंवले, छाछ, घृत, तेल, कांजी, तुपोदक, मक्खन, मलयागिरिचंदन, हलदी, नाग-
केशर, जवाखार, लोहे की भस्म (शीशे की भस्म), कपेले रस, केशर ये सब
पांडुरोग में दोषों के अनुसार मनुष्यों को पथ्य देना ॥

अपथ्य

रक्तघृतिर्धूमपानं वमिवेगविधारणम् । स्वेदनं मैथुनं शिबी पत्र-
शाकानि रामठम् ॥ मापोंबुपानं पिण्याकं तांबूलं सर्पपं सुरा ।
सर्वाण्यम्लानि दुष्टानि विरुद्धाध्यशनानि च । गुर्वन्नं च विदाहीनि
पांडुरोगवतां विपम् ॥

अर्थ—रुधिर का निकालना, धूमपान, वमन, मलमूत्रादि वेगों का धारण, स्वेदन-
कर्म, मैथुन करना, सेम (फली) और पत्ते का शाक, हींग, उडद, जलपान, सल,
नागरवेल के पान, सरसों, दारु, सर्व प्रकार के सद्ये रस, पुष्ट अन्न, विरुद्ध भोजन,
अध्यशन (भोजन के ऊपर तत्काल भोजन), भारी अन्न और दाह करता अन्न ये
पांडुरोगवाले को विप के सदृश अपथ्य हैं ॥

पांडुरोगपर दंभ

दाहश्चरणयोः संधौ नाभेर्ब्र्यगुलकादधः ।

मस्तके हस्तयोर्मूले मध्ये च स्तनकुक्षयोः ॥

अर्थ—पांडुरोगवाले रोगी के दोनों पैरों की संधिपर और नाभी के नीचे दो अंगु-
ठ पर तथा मस्तक, स्तन और कूख इन में डाग देवे ॥

कामलापर दंभ

कामलेषु करपृष्ठविभागे दंभयेद्रविशलाकयैव ।

कूर्परार्धमितमध्यप्रदेशे द्रावितं द्रवति निश्चयेन रोगः ॥

अर्थ—कामलारोग में हाथों के पिछाडी पङ्खे के नीचे तथा पङ्खे के आधे भाग
र अर्थात् कलाई में तामे की पट्टी से दाग देवे तथा उस को वहने देवे तो निश्चय
कामला, कुंभकामला, हलीमकादि रोग नष्ट हों ॥

रक्तपित्तिकर्मविपाकः ।

मद्यपो रक्तपित्ती स्यात्स दद्यात्सर्पिपो घटम् ।

मधुनोर्धघटं चैव सहिरण्यं विशुद्धये ॥

अर्थ—जो प्राणी पूर्वजन्म मे मद्य पीता (दारु पीता) है वो इस जन्म में रक्त-

पित्तरोगी होता है उस को घी गगरीभर और सहत से दूसरा आधा घडा भरके उस घी के घडे पर रख उस को सुवर्ण युक्त दान करे तो रक्तपित्तरोग शांत होवे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

चंद्रक्षेत्रे यदा भौमो जायते मनुजस्तदा ।

रक्तपित्तेन दुर्नाम्नो नानाव्याधिसमाकुलः ॥

अर्थ—जिस के जन्मलग्न में चन्द्रमा के क्षेत्र में मंगल बैठा होवे तो रक्तपित्त और बवासीर ऐसी अनेक व्याधि करके युक्त होता है ॥

दूसरा प्रकार

रक्तपित्तं ज्वरं दाहमग्निवाय्वोरुपद्रवम् । लभते नात्र संदेहश्चंद्रम-
ध्ये यदा अजः ॥ भौममंत्रजपः कार्यो होमः खादिरजैस्तिलैः ।
घृतेन च समायुक्तं दानं रक्तवृषस्य च ॥

अर्थ—चंद्रमा की दशा में भौम के आने से रक्तपित्त, ज्वर, दाह, वादी इन उपद्रवों का करे. उस दोष के दूर करने को मंगल का जप करे और खैर की समिधा, तिल, घी इन का होम करे. तथा लाल बैल का दान करे ॥

ज्योतिःशास्त्रोक्तचिकित्सा

विल्वचंदनबलाशणपुष्पैर्हिगुलूकफलनीवकुलैश्च ।

स्नानमद्भिरिदमग्नियुताभिर्भौमदोषविनिवारणमाशु ॥

अर्थ—बेलफल, चंदन, खिरेटी, सन, हींगुलू, कटूमर, मौरसिरी के फल इन पदार्थों को डालके पानी औटावे फिर इस जल से रोगी को न्हावे तो चंद्रमा के स्थान में स्थित भौमदोष की शांति होय ॥

रक्तपित्तनिदान

धर्मव्यायामशोकाध्वव्यवायैरतिसेवितैः । तीक्ष्णोष्णक्षारलवणैर-
म्लैः कटुभिरेव च ॥ पित्तं विदग्धं स्वगुणैर्विदहत्याशु शोणितम् ।
ततः प्रवर्तते रक्तमूर्ध्वं चाधो द्विधापि वा ॥ ऊर्ध्वं नासाक्षिकर्णा-
स्यैर्मेढ्रयोनिगुदैरधः । कुपित्तं रोमकूपैश्च समस्तेस्तत्प्रवर्तते ॥

अर्थ—धूप में बहुत ढोलने से, अति पारिथम करने से, शोक से, बहुत मार्ग चरने से, आनि भेद्युन करने से, मिरच आदि तीखी वस्तु खाने से, अग्नि के तापने से

जवाखार आदि खारे पदार्थ, नोन से आदि ले लवण के पदार्थ, खट्टी, कडुवी ऐसी वस्तु के खाने से कोप को प्राप्त भया जो पित्त सो अपने तीक्ष्ण द्रव प्रीति इत्यादि गुणों से रुधिर को विगाड़े तब रुधिर ऊपर के अथवा नीचे के मार्ग अथवा दोनों मार्ग होकर प्रवृत्त हो (निकले). ऊपर के मार्ग नाक, कान, नेत्र, मुख इन के द्वारा निकले और अधोमार्ग कहिये लिंग, गुदा और योनि इन के रास्ते होकर निकले और जब रुधिर अत्यंत कुपित होय तब दोनों मार्ग और सब रोमाँचों से निकले है ॥

पूर्वरूपलक्षण

सदनं शीतकामित्वं कंठधूमायनं वमिः ।

लोहगंधिंश्च निःश्वासो भवत्यस्मिन्भविष्यति ॥

अर्थ—ग्लानि, शीत की इच्छा, कंठसे धुआं निकलना, वमन और तपाये भये लोहपर जल गेरने से जैसी गंध आवे ऐसी श्वास लेने से गंध का आना, जिस मनुष्य में इतने लक्षण मिलते होंय उस के जानना कि इस के रक्तपित्त प्रगट होवेगा ॥

असाध्य लक्षण

मांसप्रक्षालनाभं कथितमिव च यत्कर्दमांभोनिभं च मेदः पूया-
स्रकल्पं यकृदिव यदि वा पक्वजंबूफलाभम् । यत्कृष्णं यच्च नीलं
भृशमतिकुणपं यत्र चोक्ता विकारास्तद्रज्यं रक्तपित्तं सुरपति-
धनुषा यच्च तुल्यं विभाति ॥

अर्थ—जो रक्तपित्त मांस धोये हुए जल के समान हो अथवा सड़े पानी के समान अथवा कीच के समान, अथवा जल के समान, उसी प्रकार मेद राध रुधिर इन के समान, अथवा कलेजे के टुकड़े के समान, अथवा पकी जामन के समान, किंवा काले रंग का किंवा नील कहिये परैया पक्षी के पंख के समान अथवा जिस में देरखठ बलकिसी वास आवे और जिस में पूर्वोक्त कहे श्वासकासादि विकारयुक्त हो ऐसा रक्तपित्त वर्जित है और जो रक्तपित्त इन्द्रधनुष के वर्णसमान रंग हो तो भी त्याज्य है अर्थात् ऐसे रक्तपित्त का वैद्य चिकित्सा न करे ॥

वातरक्तपित्तनिदान

श्वावारुणं सफेनं च तनु रूक्षं च वातकम् ॥

अर्थ—नीला वर्ण, लाल वर्ण, कुछ क्षागयुक्त, पतला और रूखा ऐसा रक्तपित्तवात का जानना ॥

भोजन

शालिपट्टिकनीवारचणमुद्गा मसूरकाः ।

श्यामाकाश्च प्रियंगुश्च भोजनं रक्तपित्तजाम् ॥

अर्थ—सांठी चावल, समा, पसाई, चना, मूंग, मसूर, सामखिया और प्रियंगू इत्ने धान्य रक्तपित्तवाले रोगी को भोजन करने को देवे ॥

रक्तपित्तशास्त्रार्थ

अतिप्रवृद्धदोषस्य पूर्वं लोहितपित्तिनः ।

अक्षीणबलमांसाग्नेः कर्तव्यमपतर्पणम् ॥

अर्थ—जिस के दोष अत्यंत बढे रहे हो, तथा बल, मांस और जठराग्नि क्षीण न हुई हो उस रोगी का यत्न वैद्य को करना चाहिये ॥

ऊर्ध्वगे रेचनं शस्तमधोगे वमनं हितम् ॥

अर्थ—ऊपर होके जानेवाले रक्तपित्त में दस्त कराने और अधोगामी अर्थात् नीचे होकर जानेवाले रक्तपित्त में वमन करना चाहिये ॥

पित्तास्रं शमयेन्नादौ प्रवृत्तं बलिनः सुतम् ।

हृत्पाण्डुग्रहणीरोगप्लीहगुल्मोदरादिकृत् ॥

अर्थ—बली पुरुष के रक्तपित्त को प्रथम ही बंद न करे यदि ऐसे मनुष्य का रोग होते ही रुधिर बंदकर दिया जावे तो हृदयरोग, पाण्डु, संग्रहणी, प्लीहा, गोला और उदर (जलंधर) ये रोग उत्पन्न हों ॥

क्षीणमांसबलं बालं वृद्धं शोपानुबंधिनम् ।

अवाम्यमविरेच्यं च शमनीयैरुपाचरेत् ॥

अर्थ—जिस का मांस और बल क्षीण है तथा जो बाल तथा वृद्ध तथा जिस के शोपरोग का उपद्रव होवे तथा जो वमन अथवा विरेचनयोग्य नहीं है ॥

शालिपर्ण्यादिना सिद्धो पेयो यूपस्त्वधोगते ।

रक्तातिसारहंता च योज्यो विधिरशेषतः ॥

अर्थ—अधोगत रक्तपित्तपर सालवण इत्यादि औषधों से सिद्ध करा हुआ मंड पि- लावे रक्तातिसार पर सब उपचार करने चाहिये ॥

पयांसि शीतानि रसाश्च जांगलाः सतीनयूपाश्च सशालिपट्टिकाः ।

हितानि चैतानि सरक्तपित्ते चान्यान्यापि स्युः किल पित्तहानि ॥

अर्थ—रक्तपित्त पर शीतल दूध, जंगली जीवों का मांसरस, सांठी चावलों का मंड हितकारी कहा है. तथा जितनी पित्तशान्ति करनेवाली वस्तु हैं वह सब रक्तपित्त-पर हित करनेवाली जाननी ॥

मसूरमुद्गचणकाः समकुष्टाढकीफलाः ।

प्रशस्ताः सूपयूपार्थे कल्किता रक्तपित्तिनाम् ॥

अर्थ—रक्तपित्तवाले मनुष्य को मसूर, मूंग, चना, मोंठ और अरहर इन की दाढ़ अथवा इन का मंड बनाने के लिये उत्तम है ॥

दाडिमामलकं विल्वानम्लार्थं चापि दापयेत् ॥

अर्थ—रक्तपित्तवाले मनुष्य को खटाई देनी होवे तो अनारदाना, आवले और बेलफल ये देवे ॥

पटोला निंबवेत्राग्रप्लक्षवेतसपल्लवाः ।

शाकार्थं शाककामानां तंडलीयादयो हिताः ॥

अर्थ—रक्तपित्तवाले रोगी को शाक (तरकारी) खाने की इच्छा होवे तो परबल, नीम, वेत की कोपल तथा जलवेतस, पाखर के पत्ते अथवा चोलाई इन की तरकारी हितकारक है ॥

रक्तपित्तादिकपर कामदेवघृत

अश्वगंधा तुलैका स्यात्तदर्धो गोक्षुरः स्मृतः । बलामृता शालि-
पर्णी विदारी च शतावरी ॥ पुनर्नवाश्वत्थशुंठी काश्मर्यास्तु
फलान्यपि । पद्मबीजं माषबीजं दद्याद्दशपलं पृथक् ॥ चतुर्द्रो-
णांभसा पक्त्वा पादशेषं शृतं नयेत् । जीवनीयगणः कुष्ठं पद्म-
कं रक्तचंदनम् ॥ पत्रकं पिप्पली द्राक्षा कपिकच्छूफलं तथा ।
नीलोत्पलं नागपुष्पं सारिवे द्वे बले तथा ॥ पृथक् कर्पसमा-
भागाः शर्करायाः पलद्वयम् । रसश्च पौंड्रकेक्षूणामाढकैकं समाह-
रेत् ॥ घृतस्य चाढकं दत्त्वा पाचयेन्मृदुनाग्निना । घृतमेतन्निहंत्या-
शु रक्तपित्तमुरःक्षतम् ॥ हलीमकं पांडुरोगं वर्णभेदं स्वरक्षयम् ।
वातरक्तं मूत्रकृच्छ्रं पार्श्वशूलं च कामलाम् ॥ शुक्रक्षयमुरोदाहं
काश्मर्यमोजःक्षयं तथा । स्त्रीणां चैवाग्रजातानां गर्भदं शुक्रदं
नृणाम् ॥ कामदेवघृतं नाम हृद्यं बल्यं रसायनम् ॥

अर्थ—असंगंध १०० पल, गोखरू ५० पल, खिरेटी की जड़, गिलोय, शालपर्णी, विदारीकंद, शतावर, पुनर्नवा, पीपल वृक्ष की मूल, सोंठ, कंभारी के फल, कमलगट्टा और उडद ये ग्यारह औषध दश दश पल लेवे जब कूट करके सब को एकत्र करके इस में कल्क बनाकर डालने की औषध इस प्रकार हैं. मुलहठी, विदारीकंद, असगंध, मुद्गपर्णी; मापपर्णी यह जीवनीय गण है. कूठ, पद्मास, लालचंदन, पत्रज, पीपल, दाख, कौंच के बीज, नीला कमल, नागकेशर, गौरीशर, कालीशर, बला, नागबला ये बीस औषध एक एक कर्प लेवे सब का कल्क करके काढे में डाल देवे. फिर उस काढे में खांड दो पल डाले. एवं सपेद ईखका रस और धी ये दोनों एक २ आठक मिलाने चाहिये फिर उस काढे को चूल्हे पर चढाय मंद २ आग्नि से पचायके घृत शेष रखे. इस को छानके उत्तम चीनी अथवा अमृतवान आदि उत्तम पात्र में भरके धर रखे. इस घृत के सेवन करने से रक्तपित्त, उरःक्षतरोग, पांडुरोग का भेद हलीमकरोग, स्वरभंग, वातरक्त, मूत्रकृच्छ्र, पीठ का शूल, नेत्रों में कामला होता है वह, धातुक्षय, उर में जो रोग होता है वह, देह की कृशता, शरीर के तेज का क्षय ये संपूर्ण रोग दूर होंवें. यह धी जिस स्त्री के संतान नहीं होती उस को संतान देता है. तथा पुरुषों के धातु उत्पन्न करे है. हृदय को हितकारी है तथा बल देता है. यह कामदेवघृत रसायन है अर्थात् रोग और बुढापे का नाश करनेवाला है ॥

दूर्वादिघृत

दूर्वामुत्पलकिंजल्कं मंजिष्ठां चैलवालुकम् । शिवां लोध्रमुशीरं च
मुस्ताचंदनपद्मकैः ॥ विपचेत्कार्पिकैः कल्कैर्घृतप्रस्थं सुखा-
ग्निना । तंडुलांबुमजाक्षीरं दत्त्वा चैव चतुर्गुणम् ॥ तत्पानाद्भ्रमतो
रक्तं नावनात्रासिकागतम् । कर्णाभ्यां यस्य गच्छेच्च तस्य कर्णौ
प्रपूरयेत् ॥ चक्षुस्त्राविणि रक्ते च पूरयेत्तेन चक्षुषी । मेद्रपायुप्र-
वृत्तेषु वस्तिकर्म प्रकारयेत् ॥ रोमकूपे प्रवृत्ते च तदभ्यंगे प्रयो-
जयेत् । सर्वेषु रक्तपित्तेषु तस्माच्छ्रेष्ठमिदं घृतम् ॥

अर्थ—दूर्व, कमल की केशर, मजीठ, नेत्रवाला, हरड, लोध्र पठानी, लस, नागर-
मोथा, चंदन और पद्मास ये प्रत्येक तोला २ लेवे इन का कल्क और धी ६४ तोले
तथा चावलों का धोवन, बकरी का दूध ये चीयुने डालके मंदाग्नि से पचन करावे।
जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे इस के राने से रुधिर की उलटी
, नाक से रुधिर का गिरना, कान से निकलनेवाला रुधिर, नेत्र से गिरनेवाला

रुधिर तथा स्त्री की भग, लिंग, गुदा इन से निकलनेवाला रुधिर इन पर तथा समस्त रोमकूपों से जानेवाला रुधिर इन पर इस की मालिस करे. उलटीवाले को पिछावे और कान नाक से जाय तो काननाक में इस को डाले और लिंग-गुदा से जाता होवे तो वस्त्रि कर्म करावे. यह सर्व रक्तपित्त विकारों पर देना श्रेष्ठ कहा है ॥

शतावर्यादिपेय

शतावरी बला रास्ना काश्मर्यं सपरूपकम् ।

पाययेद्भक्तपित्तघ्नं सद्यः शूलहरं परम् ॥

अर्थ—शतावरी, बला, रास्ना, कंभारी और फालसे इन का काटा करके पीवे तो रक्तपित्त का नाश करके शूल का भी नाश करे है ॥

पैत्तिकरक्तपित्तनिदान

रक्तपित्तं कपायाभं कृष्णं गोमूत्रसन्निभम् ।

मेचकांगारधूमाभमंजनाभं च पैत्तिकम् ॥

अर्थ—जो रक्तपित्त काटे के रंगसमान हो काला गौ के मूत्रसमान हो अथवा मौर की चन्द्रिका के समान नीलवर्ण होय अर्थात् बैजनी रंग के सदृश होय घर के धू-आं के सुर्मा के समान होय ये रक्तपित्त के लक्षण है. शंका—क्योंजी केवल पैत्तिक रक्तपित्त नहीं हो सके है कारण इसका यह है कि जैसे कफके रक्तपित्त का मार्ग कहा है इस प्रकार पित्त के रक्तपित्त का नहीं कहा ? उत्तर—तुम ने कहा सो ठीक है परंतु यह मार्ग जो कहा है सो वातकफ के लक्षण प्रति नहीं कहा है ॥

त्रिफलादिकाढा

त्रिफलाकृतमालभवं कथनं सितया मधुना मिलितं हरति ।

ननु शोणितपित्तरुजं विविधाघनदाहकपित्तशूलहरम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आंवला और अमलतास का गुदा इन का काटा कर उस में खांड और सहत मिलायके पीवे तो अनेक प्रकार के रक्तपित्त, दाह और पित्तशूल इन को नष्ट करे ॥

अतस्यादिकाढा

अतसीकुसुमसमंगा वटप्ररोहास्तृणांभसा पीताः ।

साध्यंति रक्तपित्तं यदि भुंक्ते मुद्गयूपेण ॥

अर्थ—अलसी के फूल, मजीठ, बड की कौपल और रोहिसतृण इन का काटा पीवे और इस पर मूंग के यूप के साय भात खाय तो रक्तपित्त का नाश करे ॥

वासादिलेह

वासकस्वरसैः पथ्या सप्तधा परिभाविता ।

कृष्णा वा मधुना लीढा रक्तपित्तं द्रुतं जयेत् ॥

अर्थ—अड़से के रस की सात भावना दीनी हुई हरड सेवन करने से रक्तपित्त दूर होवे अथवा पीपल के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो रक्तपित्त का नाश होवे ॥

कूष्मांडकावलेह रक्तपित्तादिकों पर

निष्कुलीकृतकूष्मांडखंडं पलशतं पचेत् । निक्षिप्य द्वितुलं
नीरमर्धशिष्टं च गृह्यते ॥ तानि कूष्मांडखंडानि पीडयेत् दृढ-
वाससा । आतपे शोपयेत्किंचिच्छूलग्रैर्वहुशो व्यधेत् ॥ क्षि-
प्त्वा ताम्रकटाहे च दद्यादष्टपलं घृतम् । तेन किंचिद्भर्जयित्वा
पूर्वोक्तं तज्जलं क्षिपेत् ॥ खंडापलं शतं दत्त्वा सर्वमेकत्र पाच-
येत् । सुपक्वे पिप्पली शुंठी जीरकं द्विपलं पृथक् ॥ पृथक् पला-
र्धधान्याकं पत्रैलामरिचत्वचम् । चूर्णीकृत्य क्षिपेत्तत्र घृतार्धं क्षौ-
द्रमावहेत् ॥ खादेदग्निबलं दृष्ट्वा रक्तपित्ती क्षयी ज्वरी । शोप-
स्तृपातमश्नीदिकासश्वासक्षतातुरः ॥ कूष्मांडकावलेहोयं बाल-
वृद्धेषु युज्यते । उरःसंधानकृत् वृष्यो ग्रहणीबलकृन्मतः ॥

अर्थ—पुराने पके हुए पेटे की ऊपर की छिलका छीले फिर बनारके उस के बीज दूर कर टुकड़े कर १०० पल लेवे. इस को प्रथम चूने के पानी में गेरके शुद्ध कर लेवे फिर दो तुला (२०० पल) जल में गेरके औटावे जब आधा जल रहे तब उत्तारके जल को छान लेवे. और उस जल को अलग धर रखे और उन पेटे के कतलान को मजघृत कपड़े में बांधके निचोड़ लेवे. फिर उन टुकड़ों को किंचित् धूप देकर छेदने के कांटे से खूब छेद लेवे. फिर तांघे के कलईदार पात्र में ८ पल घी डालके उन टुकड़ों को डाल आंच पर रखके भून लेवे फिर पूर्वोक्त पेटे से निकाले हुए जल को कटाई में चढायके मिश्री २०० पल गेरके दुतारी चासनी करे. फिर इस में चूर्ण डालने की औपध इस प्रकार लेवे. पीपल, सोंठ, जीरा ये तीनों औपध दो दो पल तथा धनियाँ, पत्रज, इलायची, काली मिर्च, दालचीनी ये पांच औपध दो दो तोले लेवे सब को एकत्र पूर्ण कर प्रथम पेटे के टुकड़े डाले फिर इस

चूर्ण को डालके सब को एक जीव कर देवे इस में सहत चार पल डाले. इस को कूष्मांडाचलेह कहते हैं यह अवलेह रोगीकी शक्ति और अग्नि का बलाबल विचारके देवे तो रक्तपित्त, क्षय, ज्वर, शोष, प्यास, नेत्रों के सामने अंधेरी का आना, वमन, श्वास, खांसी, उरःक्षत ये रोग दूर हों. यह अवलेह बालकों को तथा वृद्धों को उप-योगी होता है. तथा हृदय में अन्न का रस आता है उस का साधक होता है तथा स्त्रीसंग करने की इच्छा उत्पन्न करे. तथा धातुवृद्धि करे और बल देता है ॥

कफयुक्त रक्तपित्तनिदान

सांद्रं सपांडु सस्नेहं पिच्छलं च कफान्वितम् ॥

अर्थ—सघन कुछ पीला और कुछ चिकना तथा गाढा ऐसा रक्तपित्त कफ-मिश्रित जानना ॥

अभयाभक्षण

अभया मधुसंयुक्ता पाचनी दीपनी मता ।

श्लेष्माणं रक्तपित्तं च हन्ति शूलातिसारजित् ॥

अर्थ—हरड का चूर्ण कर सहत के साथ सेवन करने से पाचक, दीपक और शूल, रक्त तथा पित्त इन का नाशक शूल, अतिसार इन के जीतनेवाली है ॥

कफवायु के संबंध से रक्त का प्रवर्तनमार्ग

ऊर्ध्वगं कफसंसृष्टमधोगं मारुतानुगम् ॥

अर्थ—ऊपर के मार्ग से कफ का और नीचे के मार्ग होकर वात का रक्तपित्त जानना ॥

आज्यपान

शृतेनाज्येन पयसा सुपिष्टं कुंकुमं भवेत् ।

ऊर्ध्वरक्तविनाशाय तेनैवाज्येन भोजनम् ॥

अर्थ—बकरी के दूध में केशर मिलायके पीवे और बकरी के दूध के वा घी के साथ भात भोजन करे तो ऊर्ध्वगत रक्तपित्त बंद होवे ॥

हविरादिजल

हविरचंदनोशीरं मुस्तपर्पटकैः शृतम् ।

केवलं शृतशीतं वा दद्यात्तोयं पिपासिते ॥

अर्थ—नेत्रवाला, चंदन, सस, नागरमोथा और पित्तपापडा इन का काढा अथवा इन का चाह के सदृश जल उतारके शीतल करके पीने को देवे तो तृषा दूर होवे ॥

मृद्धीकादिगुटी

लोहगंधनिभश्वासे डकारे रक्तगंधिनि ।

मृद्धीकोषणमात्रात्तु खादेद् द्विगुणशर्कराम् ॥

अर्थ—जिस रक्तपित्तवाले की श्वास में गरम लोह पर जल छिड़कने से जैसी दु-गंध आती है और डकार में रुधिरकीसी दुर्गंध आवे उस पर गोस्तनी दाख, मिरच इन से दुगुनी खांड डालके गोली बनावे और भक्षण करे तो पूर्वोक्त रक्तपित्त के उपद्रव नहीं होंगे ॥

पारावतादियूप

पारावतकपोतांश्च लावान् रक्ताक्षवर्तकान् ।

शशान्कार्पिंजलानेणान्हरिणान्कालपुच्छकान् ॥

रक्तपित्तहरान्विद्याद्रसं तेषां प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—परेवा, कपोत (पिंडुकीया), लवा, खसूतर तथा बटेर ये पक्षी और ससा, सपेद तीतर, काला हरिण, दुंवा ये पशु रक्तपित्तनाशक हैं इसवास्ते इन के मांस का रस तयार करके पीवे ॥

घृतसैंधवयोग

ईपदम्लाननम्लांश्च घृतभ्रष्टान् ससैंधवान् ।

कफानुगे यूपशाकं दद्याद्वातानुगे रसम् ॥

अर्थ—कफजन्य रक्तपित्त पर कुछ खट्टे किंवा मीठे पदार्थ घी में भून सेंधेनिमक मिलायके देवे. किंवा यूप तथा शाक देवे. यदि वातानुबंध होवे तो उस को मांसरस देवे ॥

पथ्य और जलपान

पथ्यं सतीनयूपेण ससितैर्लाजसक्तुभिः ।

जलं खर्जूरमृद्धीकामधुकैः सपरूपकैः ॥

अर्थ—मटर का यूप, खील, सत्तू और खांड ये पथ्य में देवे. तथा खर्जूर, दाख, मुलहठी और फालसे इन का काटा कर छान लेवे और शीतल करके यह जल पीने को देवे ॥

द्वंद्वजसन्निपातरक्तपित्तनिदान

संसृष्टलिङ्गं संसर्गात्रिलिङ्गं सान्निपातिकम् ॥

अर्थ—दो दोष के मिलने से जो रक्तपित्त होय है उस में दोनों दोषों के लक्षण मिलने से द्विदोषज जानना और जिस में तीनों दोषों के लक्षण मिलते हों उस को त्रिदोषज का रक्तपित्त जानना ॥

असाध्यरक्तपित्तलक्षण

द्विमार्गं कफवाताभ्यामुभाभ्यामनुवर्तते। ऊर्ध्वं साध्यमधो याप्य-
मसाध्यं युगपद्गतम् ॥ एकमार्गं बलवतो नातिवेगं नवोत्थितम् ।
रक्तपित्तं सुखे काले साध्यं स्यान्निरूपद्रवम् ॥ एकदोषानुगं साध्यं
द्विदोषं याप्यमुच्यते । त्रिदोषजमसाध्यं स्यान्मन्दाग्नेरतिवेगितम् ॥

अर्थ—दोनों मार्ग से जो रक्तपित्त निकले सो वात और पित्त इन दोषों से प्रगट
या जानना. ऊपर के मार्ग से लोही निकले सो साध्य है (क्योंकि कफ से प्रगट है सो
कफ के रक्तपित्त में काथ तीखे रस कफ पित्त के हरण कर्ता होते हैं) और नीचे के
मार्ग से जिस में रुधिर गिरे सो याप्य (साध्यासाध्य) है. [इस का कारण यह है
कि पित्त के हरण में विरेचन मुख्य है और इस पर वातपित्त शमन करनेवाला मधुर
त प्रथम है वमन देने से विरुद्धमार्गी होय है अर्थात् वेगमात्र का अवरोधक है.
रंतु पित्त का हरण करनेवाला नहीं है] और दोनों मार्ग से गिरनेवाला रक्तपित्त
साध्य है. कारण इस पर विरुद्ध चिकित्सा करनी पडती है. बलवान् पुरुष के
क मार्ग (अर्थात् ऊपर के मार्ग) से जाता होय अति वेग नहीं होवे नवीन प्रगट
या होय और हेमन्त शिशिर काल में प्रगट भया हो और दुर्बलता आदि उपद्रव
हित होय, ऐसा रक्तपित्त साध्य होय है. एक दोष का रक्तपित्त साध्य है द्विदोष
या याप्य है और तीनों दोषों का असाध्य है. मन्दाग्नि अतिवेग से होय है ॥

असाध्यलक्षण

व्याधिभिः क्षीणदेहस्य वृद्धस्यानश्रतश्च यत् ॥

अर्थ—रोग से क्षीण देहवाले का बूढ़े मनुष्य के और जिस का आहार थक गया होय
से मनुष्य के रक्तपित्त असाध्य होय है ॥

रक्तपित्त के उपद्रव

दौर्बल्यं श्वासकासज्वरवमथुमदाः पांडुतादाहमूर्च्छाभुक्ते घोरो
विदाहस्त्वधृतिरपि सदा हृद्यतुल्या च पीडा । तृष्णा कोष्ठस्य
भेदः शिरसि च तपनं पूतिनिष्ठीवनत्वं भक्तद्वेषाविपाकौ विकृ-
तिरपि भवेद्रक्तपित्तोपसर्गाः ॥

मृद्धीकादिगुटी

लोहगंधनिभश्वासे डकारे रक्तगंधिनि ।

मृद्धीकोपणमात्रात्तु खादेद् द्विगुणशर्कराम् ॥

अर्थ—जिस रक्तपित्तवाले की श्वास में गरम लोह पर जल छिड़कने से जैसी दु-गंध आती है और डकार में रुधिरकीसी दुर्गंध आवे उस पर गोस्तनी दाख, मिरच इन से दुगुनी खांड डालके गोली बनावे और भक्षण करे तो पूर्वोक्त रक्तपित्त के उपद्रव नहीं होंगे ॥

पारावतादियूप

पारावतकपोतांश्च लावान् रक्ताक्षवर्तकान् ।

शशान्कार्पिजलानेणान्हरिणान्कालपुच्छकान् ॥

रक्तपित्तहरान्विद्याद्रसं तेषां प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—परेवा, कपोत (पिंडुकीया), लंवा, खसूतर तथा बटेर ये पक्षी और ससा, सपेद तीतर, काला हरिण, दुंवा ये पशु रक्तपित्तनाशक हैं इसवास्ते इन के मांस का रस तयार करके पीवे ॥

घृतसैंधवयोग

ईपदम्लाननम्लांश्च घृतभ्रष्टान् ससैंधवान् ।

कफानुगे यूपशाकं दद्याद्वातानुगे रसम् ॥

अर्थ—कफजन्य रक्तपित्त पर कुछ खट्टे किंवा मीठे पदार्थ घी में भून सेंधेनिमक मिलायके देवे. किंवा यूप तथा शाक देवे. यदि वातानुबंध होवे तो उस को मांसरस देवे ॥

पथ्य और जलपान

पथ्यं सतीनयूपेण ससितैर्लाजसक्तुभिः ।

जलं खर्जूरमृद्धीकामधुकैः संपरूपकैः ॥

अर्थ—मटर का यूप, खील, सत्त और खांड ये पथ्य में देवे. तथा खर्जूर, दाख, मुलहठी और फालसे इन का काटा कर छान लेवे और शीतल करके यह जल पीने को देवे ॥

द्वंद्वजसन्निपातरक्तपित्तनिदान

संसृष्टलिङ्गं संसर्गात्रिलिङ्गं सान्निपातिकम् ॥

अर्थ—दो दोष के मिलने से जो रक्तपित्त होय है उस में दोनों दोषों के लक्षण मिलने से द्विदोषज जानना और जिस में तीनों दोषों के लक्षण मिलते हैं उस को सन्निपात का रक्तपित्त जानना ॥

असाध्यरक्तपित्तलक्षण

द्विमार्गं कफवाताभ्यामुभाभ्यामनुवर्तते। ऊर्ध्वं साध्यमधो याप्य-
मसाध्यं युगपद्रतम् ॥ एकमार्गं बलवतो नातिवेगं नवोत्थितम् ।
रक्तपित्तं सुखे काले साध्यं स्यान्निरुपद्रवम् ॥ एकदोषानुगं साध्यं
द्विदोषं याप्यमुच्यते । त्रिदोषजमसाध्यं स्यान्मंदाग्रेरतिवेगितम् ॥

अर्थ—दोनों मार्ग से जो रक्तपित्त निकले सो वात और पित्त इन दोषों से प्रगट भया जानना. ऊपर के मार्ग से लोही निकले सो साध्य है (क्योंकि कफ से प्रगट है सो कफ के रक्तपित्त में काथ तीखे रस कफ पित्त के हरण कर्ता होते हैं) और नीचे के मार्ग से जिस में रुधिर गिरे सो याप्य (साध्यासाध्य) है. [इस का कारण यह है कि पित्त के हरण में विरेचन मुख्य है और इस पर वातपित्त शमन करनेवाला मधुर रस प्रधान है वमन देने से विरुद्धमार्गी होय है अर्थात् वेगमात्र का अवरोधक है. परंतु पित्त का हरण करनेवाला नहीं है] और दोनों मार्ग से गिरनेवाला रक्तपित्त असाध्य है. कारण इस पर विरुद्ध चिकित्सा करनी पडती है. बलवान् पुरुष के एक मार्ग (अर्थात् ऊपर के मार्ग) से जाता होय अति वेग नहीं होवे नवीन प्रगट भया होय और हेमन्त शिशिर काल में प्रगट भया हो और दुर्बलता आदि उपद्रव रहित होय, ऐसा रक्तपित्त साध्य होय है. एक दोष का रक्तपित्त साध्य है द्विदोष का याप्य है और तीनों दोषों का असाध्य है. मन्दाग्रे अतिवेग से होय है ॥

असाध्यलक्षण

व्याधिभिः क्षीणदेहस्य वृद्धस्यानश्रतश्च यत् ॥

अर्थ—रोग से क्षीण देहवाले का बूढ़े मनुष्य के और जिस का आहार थक गया होय ऐसे मनुष्य के रक्तपित्त असाध्य होय है ॥

रक्तपित्त के उपद्रव

दौर्बल्यं श्वासकासज्वरवमथुमदाः पांडुतादाहमूर्च्छाभुक्ते घोरो
विदाहस्त्वधृतिरपि सदा हृद्यतुल्या च पीडा । तृष्णा कोष्ठस्य
भेदः शिरसि च तपनं पूतिनिष्ठीवनत्वं भक्तद्वेषाविपाकौ विकृ-
तिरपि भवेद्रक्तपित्तोपसर्गाः ॥

अर्थ—अशक्तता, श्वास, खांसी, ज्वर, वमन, घट्टरे के फूल खाने से जैसी अवस्था होय ऐसी अवस्था, शरीर का पीला वर्ण हो जावे, दाह, मूर्च्छा, अन्न खाने से अत्यंत दाह होय, अधीरजपना, सर्व काल हृदय में विलक्षण पीडा, प्यास, कोष्ठभेद (अर्थात् मल पतला होय), मस्तक में पीडा, दुर्गन्धयुक्त धूकना, अन्न में अरुचि, आहार का परिपाक न होना, ये रक्तपित्त के उपद्रव हैं और उसी प्रकार उस रक्तपित्त की विकृति भी होय है ॥

असाध्यलक्षण

येन चोपहतो रक्तं रक्तपित्तेन मानवः । पश्येद्दृश्यं वियच्चापि
तच्चासाध्यमसंशयम् ॥ लोहितं छर्दयेद्यस्तु बहुशो लोहिते-
क्षणः । लोहितोद्गारदर्शी च म्रियते रक्तपैतिकः ॥

अर्थ—जिस रक्तपित्त ने मनुष्य को ग्रस लिया होय वो दृश्य कहिये घटपटादि और अदृश्य कहिये आकाश इन को रक्तवर्ण का देखे वो रोगी निःसन्देह असाध्य जानना जो वारंवार रुधिर की वमन करे और जिस के लाल नेत्र होय तथा डकार भी लाल आवे सो रक्तपित्तवाला रोगी मर जावे ॥

वृषादिस्वरस

वृषपत्राणि निष्पीड्य रसं समधुशर्करम् ।
अनेन प्रशमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥

अर्थ—अडूसे के स्वरस में सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो भयंकर भी रक्तपित्तरोग दूर होवे ॥

मातुलिङ्ग्यादि पेय

मूलानि पुष्पाणि च मातुलिङ्ग्याः समं पिवेत्तंदुलधावनेन ।
घ्राणप्रवृत्ते जलमाशु देयं सशर्करं नासिकयोः पयो वा ॥

अर्थ—बिजोरे की जड और फूल को चावल के घोवन में पीसके पीवे. अथवा बिजोरे की जड का वा फूल का रस निकाल उस में मिश्री किंवा दूध डालके नाक में डाले तो नाक से रुधिर का गिरना बंद हो ॥

उदुंवरादियोग

उदुंवराणि पक्वानि गुडेन मधुनापि वा ।
उपभुक्तानि निघ्नन्ति नासारक्तं नृणां ध्रुवम् ॥

अर्थ—गूलर के पके हुए फलों को बराबर के गुड में मिछायके साथ तो नाक से रुधिर का गिरना बंद होय ॥

अश्वत्थपत्रयोग

अश्वत्थपत्राग्ररसात् पडंशो बोलोथ तस्माद् द्विगुणं मधु स्यात् ।

रक्तप्रवाहं हृदयस्थितं वा वातो यथाभ्रं हरते तथैव ॥

अर्थ—पीपल के पत्तों के अग्रभाग का रस एक भाग और रक्तबोल छः भाग इस का दुगुना सहत छे सब को एकत्र करके पीवे तो रुधिर का प्रवाह तथा हृदय में संचित रुधिर को दूर करे जैसे पवन बादलों को नष्ट करे है ॥

चित्रकचूर्णयोग

जयेन्नासाश्रितं रक्तं लीढं वा क्षौद्रपावकम् ॥

अर्थ—सहत के साथ चित्रक के चूर्ण को चाटे तो नाक से रुधिर का जाना बंद होवे ॥

गंधकादिप्राशन

गंधं सूतं माक्षिकं लोहचूर्णं सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन ।

लोहे पात्रे गोपयसा च धृत्वा रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशांत्यै ॥

अर्थ—गंधक, पारा, सुवर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म, सब को एकत्र करके लोहे के पात्र में त्रिफले के काढे से खरल करे तथा गौ के दूध के साथ रात्रि के समय पीवे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

दुग्धादियोग

पयः सिताढ्यं शृतशीतमाज्यं गव्यं पयो वा प्रसमीक्ष्य वह्निम् ।

यष्टीमधूकार्जुनभावनीयं द्राक्षाय वा गोक्षुरकैः शृतं वा ॥

द्राक्षया फलिनीमिव विलयान्तागरेण वा ।

श्वदंष्ट्रया शतावर्या रक्तजित्साधितं पयः ॥

अर्थ—गौ का अथवा बकरी का दूध, मुलहटी, महुआ, अथवा कोह इन से किंवा दाख, खिरेटी और गोखरू इन से अथवा दाख और फूलाप्रियंशु इन से अथवा खिरेटी और सॉट इन से तथा गोखरू और शतावर इन को डालके औटावे फिर शीतल करके देवे तो रक्तपित्त को शमन करे ॥

वासास्वरस

वासायां विद्यमानायामाशायां जीवितस्य च ।

रक्तपित्ती क्षयी कासी किमर्थमवसीदति ॥

अर्थ—पृथ्वी पर अडूसा है इस आशा से जीवनेवाले जो रक्तपित्ती, क्षयरोगी और खांसीरोगवाले क्यौं व्यर्थ दुःख पाते हैं ? अर्थात् जब अडूसा पृथ्वीपर है तब आप लोग उस को क्यौं नहीं सेवन करते कि जिस से तुम्हारा रोग नष्ट हो जावे ॥

लाक्षादियोग

क्षीरेण लाक्षां मधुमिश्रितेन प्रपीय जीर्णे पयसानुमद्यम् ।

सद्यो निहन्याद्गुधिरं क्षतोत्थं कांतार्जुनानामथवापि कल्कः ॥

अर्थ—दूध में लाख और सहत डालके पीवे. जब यह पच जावे तब दूध में मद्य मिलायके पीवे तो तत्काल घाव से निकलनेवाला रुधिर बंद होवे अथवा कांतलोह की भस्म, कोह वृक्ष की छाल के जूर्ण के साथ मिलायके देवे तो वो निकलते हुए रुधिर को बंद करे ॥

मध्वादिपेय

मध्वाटरूपकरुसौ यदि तुल्यभागौ कृत्वा नरः

पिबति पुण्यतरः प्रभाते । तद्रक्तपित्तमतिदारुण-

वश्यमाशु यद्वत् प्रशाम्यति जलैरिव वह्निपुंजः ॥

अर्थ—सहत और अडूसे का रस दोनों को समान भाग लेकर प्रातःकाल यदि पीवे तो दारुण भी रक्तपित्त तत्काल दूर होय. जैसे जल अग्नि के समूह को शांति करता है ॥

मधुकादिकल्क

कल्कं मधूजत्रिफलार्जुनानां निशि स्थितं लोहमये सुपात्रे ।

साज्यं विलिह्यानुपिवेत्सुशीतं सशर्करं छागपयः क्षतार्तः ॥

अर्थ—मुलइटी, हरड, बहेडा, आवला और कोहवृक्ष इन का कल्क रात्रि के समय लोहे के पात्र में धर देवे प्रातःकाल पी मिलायके देवे तथा इन के ऊपर गकरी का दूध ओटा हुआ और मिश्री मिला हुआ देवे तो रक्तपित्त का नाश होवे ॥

ऋविवेरादि काढा

ऋविवेरमुत्पलं धान्यं चंदनं यष्टिकामृता । उशीरं च तृपश्वेषां

क्वाथः समधुशर्करः ॥ पाययेत्तेन सद्यो हि रक्तपित्तं प्रणश्यति ।

रक्तपित्तं जयत्युग्रं तृष्णां दाहं ज्वरं तथा ॥

अर्थ—नेत्रवाला, कमल, धनिया, चंदनवाला, मुलहठी, गिलोय, खस, अहूसा इन का काढा सहित और मिश्री डालके देवे यह उग्र रक्तपित्त, तृषा, दाह और ज्वर इन को नाशकरे ॥

पद्मोत्पलादिकाढा ।

पद्मोत्पलानां किञ्चलकः पृष्ठिपर्णी प्रियंगुका ।

वासापत्रसमुद्भूतो रसः समधुशर्करः ।

काथो वा हरते पीतो रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥

अर्थ—सफेद कमल और नीला कमल इन की केशर, पृष्ठिपर्णी, फूलप्रियंगु और अहूसे के पत्ते इन का स्वरस अथवा काढा पीवे तो अतिकठिन भी रक्तपित्त नाश होवे ॥

इक्ष्वादिकाढा

इक्षूणां मध्यकाण्डानि सकंदं नीलमुत्पलम् । केशरं पुण्डरीकस्य

मोचं मधुकपझके ॥ वटप्ररोहशुंगाश्च द्राक्षा खर्जूरमेव च ।

एतानि समभागानि कषायमुपकल्पयेत् ॥ ह्युपितं मधुसंयुक्तं

कषायं शर्करान्वितम् । स प्रमेहं रक्तपित्तं क्षिप्रमेतन्नियच्छति ॥

अर्थ—ईस की बीच की पोई, कंदसहित नीलाकमल, सफेद कमल की केशर, मोचरस, मुलहठी, पद्मास, वड की कोपल और बडी की मुहमुदीकली, दास और खजूर ये सब समान भाग लेवे सब का काढा करे. फिर उतारके शीतल करे पश्चात् इस में सहित और मिश्री डालके पिलावे तो प्रमेह और रक्तपित्त इन का नाश करे ॥

चन्दनादिकाढा

चंदनेन्द्रयवा पाठा कटुका सुदुरालभा । गुडूची वालकं लोथ्रं

पिप्पली क्षौद्रसंयुतम् ॥ कफान्वितं जयेद्रक्तं तृष्णाकासज्वरापहम् ॥

अर्थ—लालचंदन, इन्द्रजो, पाठ, कुटकी, धमासा, गिलोय, नेत्रवाला, पठानी शोध, और पीपल इन का काढा करके उस में सहित डालके पिलावे तो कफ, रक्तपित्त, तृषा, खासी और ज्वर इन को दूर करे ॥

उशीरादिकाढा

उशीरं चंदनं पाठा द्राक्षा मधुकापिप्पली ।

सक्षौद्रं पाययेत् काथं रक्तपित्तहरं ध्रुवम् ॥

अर्थ—खस, लालचंदन, पाद, दाख, मुलहटी और पीपल इन के काढे में सहत डालके पीवे तो निश्चय रक्तपित्त को हरण करे ॥

अमृतादिकाढा

अमृता मधुकं चैव खर्जूरं गजपिप्पली ।

क्वाथः क्षौद्रयुतो ह्येष रक्तपित्तविकारनुत् ॥

अर्थ—गिलोय, मुलहटी, खजूर और गजपीपल इन के काढे में सहत डालके पीवे तो रक्तपित्तसंबंधी विकारोंका नाश करे ॥

हीवेरादिकाढा

हीवेरधान्यकं शुंठी चंदनं मधुयष्टिका ।

वृपोशीरयुतः क्वाथः शर्करामधुयोजितः ॥

रक्तपित्तं जयत्युग्रं तृष्णां दाहज्वरं तथा ॥

अर्थ—नेत्रवाला, धनिया, सोंठ, लालचंदन, मुलहटी, अडूसे के पत्ते और खस इन का काढा सहत और मिश्री डालके पीवे तो घोर आतिसार, प्यास, दाह और ज्वर इन को दूर करे ॥

मुद्गादिकाढा

मुद्गाः सलाजाः सयवाः सकृष्णाः सोशीरमुस्ताः सह चंदनेन ।

बलाजलैः पर्युषितः कपायः स रक्तपित्तं शमयत्युदीर्णम् ॥

अर्थ—मूंग, खील चावल की, जों, पीपल, खस, नागरमोया, चंदन और खिरेटी इन सब को जो कूट करके रात्रि के समय कोरे कुल्हड़े में भिगो देवे. दूसरे दिन प्रातःकाल काढा करके पीवे तो रक्तपित्त शांत होवे ॥

यष्ट्यादिकाढा

यष्टीमधुसमायुक्तं क्षीरं संक्वाथ्य शीतलम् ।

शर्करामधुसंमिश्रं रक्तपित्तापहं पिबेत् ॥

अर्थ—मुलहटी और दूध इन का काढा करके शीतल कर लेवे. फिर इस में मिश्री और सहत डालके पीवे तो रक्तपित्त का नाश होय ॥

पलाशकल्क व काढा

पलाशकल्कः क्वाथो वा सुशीतः शर्करान्वितः ।

पिबेद्वा मधुसर्पिभ्यां गवाश्वशकृतो रसम् ॥

अर्थ—पलाश (टाक) के फूलों को पीस उस में मिश्री मिलायके पीवे. अथवा उन फूलों का काटा करके उस में खांड मिलायके पीवे अथवा गौ के गोबर का रस अथवा घोड़े की लीद के रस में सहत और घी डालके पीवे तो रक्तापित्त दूर होय ॥

आटरूपादिकाढा

आटरूपकनिर्यूहः प्रियंगूमृत्तिकांजने ।

विनीय लोध्रं सक्षौद्रं रक्तापित्तहरं पिबेत् ॥

अर्थ—अडूसे का रस, फूलप्रियंगू, फिटकरी, रसोत और लोध्र इन के काटे में सहत डालके पीवे तो रक्तापित्त का नाश करे ॥

वासादिकाढा

वासाकपायोत्पलमृत्प्रियंगुलोध्रांजनांभोरुहकेसराणि ।

पीत्वा सितक्षौद्रयुतानि जह्यात् पित्तासृजो वेगमुदीर्णमाशु ॥

अर्थ—अडूसा, कमल, फिटकरी, फूलप्रियंगू, लोध्र, रसोत, कमल की केशर इन का काटा सहत डालके और मिश्री मिलायके पीवे तो रक्तापित्त नाश होय ॥

उशीरादिचूर्ण

उशीरकालीयकलोध्रपद्मकं प्रियंगुकाकद्रफलशंखगैरिकम् ।

पृथक्पृथक्चंदनतुल्यभागिकं सशर्करं तंदुलधावनप्लुतम् ॥

सरक्तापित्तं तमकं पिपासां दाहं च पीतं शमयेद्धि सद्यः ॥

अर्थ—खस, दारु हलदी, लोध्र, पद्मास, फूलप्रियंगू, कायफल, शंख, गेरू ये सब समान भाग लेके चूर्ण करे इस में मिश्री मिलाय चावलों के धोवन के साथ देवे तो रक्तापित्त, तमकश्वास, प्यास और दाह ये नष्ट होंय ॥

मृद्धीकादिचूर्ण

मृद्धीका चंदनं लोध्रं प्रियंगुं च विचूर्णयेत् । चूर्णमेतत्पिबेत्क्षौद्र-

वासारससमन्वितम् ॥ नासिकामुखपायुभ्यो योनिमेद्राच्च वेगतः ।

रक्तापित्तं स्रवद्धंति सिद्धये स प्रयोगराट् ॥ यच्च शस्त्रक्षतेनैव

रक्तं स्रवति वेगतः । तदप्यनेन चूर्णेन तिष्ठत्येवावचूर्णितम् ॥

मेद्रतोतिप्रवृत्तेस्त्रे वस्तिरुत्तर इष्यते ॥

अर्थ—दास, चंदन, लोध्र पडानी, फूलप्रियंगू इन का चूर्ण करके इस को अडूसे के रस और सहत के साथ पीवे तो नाक, मुँह, शिश्न, गुदा और योनि इन से गिरने-

वाला रुधिर, स्रवनेवाला रक्तपित्त, घाव में से बहनेवाला रक्तपित्त इन को बंद करे-
अथवा शिश्रेन्द्रिय से यदि रुधिर बहने लगे तो इस औषधी से उत्तर वस्ति करे तो
रुधिर बंद होवे ॥

चंदनादिचूर्ण

चंदनं नलदं लोध्रमुशीरं पद्मकेसरम् । नागपुष्पं च विल्वं च
भद्रमुस्तं सशर्करम् ॥ हीवेरं चैव पाठा च कुटजोत्पलमेव च ।
शृंगवेरं सातिविषा धातकी सरसांजना ॥ आम्रास्थि जंबुसा-
रास्थि तथा पाचरसोपि च । नीलोत्पलं समंगा च सूक्ष्मैला
दाडिमत्वचः ॥ चतुर्विंशतिरेतानि समभागानि कारयेत् ।
तंदुलोदकसंयुक्तं मधुना सह योजयेत् ॥ अतिसारान्तथा छर्दि
स्त्रीणां चापि रजोग्रहम् । प्रच्युतानां च गर्भाणां स्थापनं परमि-
ष्यते ॥ अश्विनोः संमतो योगो रक्तपित्तनिवर्हणः ॥

अर्थ—चंदन, जटामांसी, लोध, नेत्रवाला, कमल की केशर, नागकेशर, बेलफल,
भद्रमोथा, मिथ्री, खस, पाठ, कूडे के बीज (इन्द्रजो), कमल, सोंठ, अतीस, घाय के
फूल, रसोत, आम की गुठली, जामुन की गुठली, पाच, नीले कमल, मजीठ, इला-
यची, अनार की छाल, ये बीस पदार्थ समान भाग लेवे सब का चूर्ण कर चावल के
धोवन के साथ सहत मिलायके पीवे तो सम्पूर्ण अतिसार, वांति, स्त्रियों का प्रदर इन
को नष्ट करे. तथा यह गर्भस्थापन करनेवाला है. यह योग रक्तपित्त नाश करने को
अश्विनीकुमार का संमति करा हुआ है ॥

पत्रकादिचूर्ण

पत्रत्वगेलानतचंदनानां श्यामाकशुंठीमधुकोत्पलानाम् । स्या-
द्वात्रिंसासाद्विगुणोत्तराणां चूर्णं सिताक्षौद्रसमन्वितानाम् ॥ खा-
देज्ज्वरे लोहितरक्तपित्ते कासे क्षये लोहितमूत्रकृच्छ्रे । रक्तेतिनि-
ष्टीवति गात्रसादे दाहे च सद्यः स्मृतिविभ्रमे च ॥ देहस्थिते तू-
र्ध्वगते च वाते श्वासे सहिक्रासु हृदामयेषु । मनोभितापे सततां-
गतापे योन्यामये सप्रदरे च रोगे ॥ रक्तेतिमात्रं पतिते मुखाभ्यां
गुदेथ नासामुखमेद्ध्योनौ । रक्तस्य पित्तस्य विनाशनार्थं सूक्तं
च शिष्टेन महद्द्रवम् ॥

अर्थ—पत्रज २, दालचीनी ४, इलायची ६, तगर ८, चंदन १०, समा १२, सोंठ १४, मुलहठी १६ कमल १८, आवले २० और अहूसा २२ भाग लेवे. तथा इन सब ओषधों के द्विगुणोत्तर भाग के अनुसार चूर्ण करे इस में मिश्री और सहत मिलायके देवे तो ज्वर, रक्तपित्त, खांसी, क्षय, रक्तकृच्छ्र, रुधिर की उलटी, देह का रह जाना, स्मृतिनाश (भूल का रोग), ऊर्ध्व वात (डकारो का बहुत आना), श्वास, खांसी, हृदयरोग, मन का संताप, अंगताप, योनिरोग, प्रदररोग, मुख, गुदा, नाक, शिश्न और योनि इन से अत्यन्त रुधिर का जाना और रक्तपित्त इन सब रोगो का नाश करे ॥

कर्पूरादिचूर्ण

कर्पूरकं च कंकोलं जातीफलदलं समम् । लवंगं स्यात्समरिचं
कृष्णा शुंठी विवृद्धितः ॥ चूर्णं समसितं हृद्यं दीपनं वह्नि-
कारकम् । रक्तपित्त प्रतिश्यायं श्वासं कासमरोचकम् ॥ हृद्रोगं
च जयेच्छ्रीघ्रमिंद्रारिमशनिर्यथा ॥

अर्थ—कपूर भीमसेनी, कंकोल, जायफल, जावित्री, लौंग काली मिरच, पीपल और सोंठ ये पदार्थ एक, दूसरा दूना इस क्रम से लेवे सब को एकत्र कर उस चूर्ण के समान मिश्री मिलाय के देवे तो हृदय को हितकारी (दिल को कुवत देनेवाला), दीपन और अग्निकारक है तथा रक्तपित्त, पीनस, श्वास, खांसी, अरुचि तथा हृदय-का रोग इन को नाश करे जैसे इन्द्र का वज्र शत्रुओं का नाश करे है ॥

वासापुटपाक

पिष्टानां वृषपत्राणां पुटपाको रसो हिमः ।

मधुयुक्तो जयेद्रक्तपित्तकासज्वरक्षयान् ॥

अर्थ—अहूसे के पत्ता को पीस पुटपाक से उन को भूनके रस निकाळ शीतल कर लेवे फिर इस में सहत डालके पीवे तो रक्तपित्त, खांसी, ज्वर, क्षय इन का नाश करे ॥

एलादिगुटी रक्तपित्तादिकों पर

एलापत्रत्वचो द्राक्षाः पिप्पल्यर्धपलं तथा । शिलामधुकसजूरमृ-
द्धीकाश्च पलोन्मिताः ॥ संचूर्ण्य मधुना युक्तां गुटिकां संप्रकल्प-
येत् । अक्षमात्रां ततश्चैकां भक्षयेत्तां दिने तथा ॥ कासश्वासं
ज्वरं हिक्रां छर्दिं मृद्यां मदं भ्रमम् । रक्तनिष्ठीवनं तृष्णां पार्श्वशूल-

मरोचकम् ॥ शोषं घृहिं मूढवातं स्वरभेदं क्षतक्षयम् । गुटिका
तर्पणी वृष्या रक्तपित्तं विनाशयेत् ॥

अर्थ—इलायची, पत्रज, दालचीनी, दास और पीपल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे; शिलाजीत, मुलहठी, खर्जूर और मुनका दास ये प्रत्येक चार ४ तोले, लेवे; सब को कूट पीस सहत डालके १ तोले की गोली बनायके इस में से नित्यप्रति एक गोली खाया करे तो खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, वमन, मद, मूर्च्छा, भ्रम, मुख से रुधिर का गिरना, प्यास, पार्श्वशूल (पशली का दर्द) अरुचि, शोष, घृही, (तीली), मूत्रघात, स्वरभंग, क्षतक्षय और रक्तपित्त इन का नाश करे. तथा वृष्य और वृत्ति का देनेवाला है ॥

हरीतक्यादिनस्य

हरीतकीदाडिमपुष्पदूर्वालाक्षारसो नस्यविधानयोगात् ।
निवारयत्येव चिरप्रवृत्तमप्याशु नासांतरशोणितौघम् ॥

अर्थ—हरड, अनार का फूल, दूब का रस और लाख इन सब के रस को एकत्र कर नाक में डाले तो बहुत दिन का व पडनेवाला नाक से रुधिर बंद होवे ॥

मस्तकलेप

नासाप्रवृत्तं रुधिरं घृतभ्रष्टं श्लक्ष्णपिष्टमामलकम् ।
सेतुरिव रुधिरवेगं रुणद्धि मूर्ध्नि प्रलेपः ॥

अर्थ—आवले को घी में भूँके उस का बारीक जूँ करे फिर पानी मिलायके मस्तक पर लेप करे तो यह लेप नाक से रक्तपित्त का जो रुधिर गिरता है उस को बंद करे ॥

कल्क व घृत

शीतलामलकल्केन शतधौतघृतेन च ।
मुंडयित्वा शिरो लेपः करणीयः पुनः पुनः ॥

अर्थ—शीतल आवलों का कल्क तथा सौ बार धुला हुआ घी इन का मस्तक मुंडायके उस पर शीतल २ लेप वारंवार करे ॥

नस्य

नस्यं दाडिमपुष्पोत्थं रसो दूर्वाभवोऽथ वा । आम्रास्थिजं पलां-

दूत्थं नासिकास्राविरक्तजित् ॥ नासाप्रवृत्ते रुधिरे जलनस्यं
प्रशस्यते ॥

अर्थ—अनार के फूल के रस की अथवा दूध के रस की अथवा आम की गुठली लहसन के रस की अथवा शीतल जल इन की नस्य देवे तो नासिका से रुधिर का गिरना दूर होवे ॥

दूसरा प्रकार

भृंगीगृहं तु क्षीरेण नारीणां नावनाज्जयेत् ।
लोहं खदिरसारेण नासिकारक्तनाशनम् ॥

अर्थ—भृंगी (पीले रंग की मक्खी) के घर को खियों के दूध में मिलायके नस्य देवे तथा लोहभस्म और कत्या दोनों को मिलायके नस्य देवे तो नाक से रुधिर का गिरना अर्थात् नकशीर बंद होय ॥

आर्द्रकादिनस्य

शृंगौरिकयोः कल्कं धातक्या मधुकस्य च ।
घ्राणस्रुतेसृजि प्रोक्तं योपित्क्षीरेण नावनम् ॥

अर्थ—अदरख, गेरू वा फिटकरी, धाय के पृष्ठ, मुलहदी इन के रूण को खियों में दूध में मिलायके नस्य देवे तो नकशीर बंद होवे ॥

हरीतक्यादिनस्य

अभया दाडिमीपुष्पं लांगलीपिष्टमंभसा । नस्यतो हंति नासाया
रक्तस्रावमतिश्रुतम् ॥ त्रिदिनं शर्कराक्षीरप्लुतं गोधूमचूर्णकम् ।
नासारक्तं वारयति वेगतो वहमानकम् ॥

अर्थ—हरद, अनार का फूल, कल्यारी इन को जल में पीसके नस्य देवे; अथवा खांड और दूध डालके गेहूँ को रूण मिलायके नस्य देवे तो नकशीर के जा-
। हुए रुधिर को बंद करे ॥

कूप्मांडकावलेह

खंडकामलकेभ्यस्तु रसः प्रस्थद्वयोन्मितः । खंडकूप्मांडमेकैकं
संस्विद्य रसमाहरेत् ॥ अन्यत्र खंडकूप्मांडे संमतः सकलो रसः ।
पंचाशच्च पलं स्विन्नं कूप्मांडात्प्रस्थमाज्यतः ॥ पक्वं पलशतं

खंडं वासाक्राथाढके पचेत् । शिवा धात्रीफलं भाङ्गीं त्रिसुगंधैश्च
कार्पिकैः ॥ तालीसविश्वधान्याकमरिचैश्च पलांशकैः । पिप्पली
कुडवं चैव मधुना संप्रदापयेत् ॥ कासं श्वासं ज्वरं हिक्कां
रक्तपित्तं हलीमकम् । हृद्रोगमम्लपित्तं च पीनसं च व्यपोहति ॥

अर्थ-मिश्री और आवलों का रस प्रत्येक १२८ तोले तथा पेटे के टुकड़ों को भून-
के उन का रस २०० तोले, वी गौ का ६४ तोले, पके हुए पेटे के टुकड़े ४०० तोले,
अडूसे का रस २५६ तोले लेके काढे में पचावे. जब गाढा हो जावे तब हरड, आंवला,
भारंगी, तज, पत्रज और इलायची ये प्रत्येक तोला तोला लेके तथा तालीसपत्र, सोंठ,
धानिया, और काली मिर्च ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे और पीपल १६ तोले तथा
सहत ३२ तोले डालके धर रक्खे. इस में से रोगी का अग्निबल विचारके खाने
को देवे तो खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, रक्तपित्त, हलीमक, हृदयरोग, अम्लपित्त
और पीनस इनको दूर करे ॥

दूसरा प्रकार

पुराणं पीनमानीय कूष्माण्डस्य फलं दृढम् । तद्वीजाधारवीजत्वक्-
शिराशून्यं च कारयेत् ॥ ततस्तस्य च खण्डानि पचेज्जलतुला-
द्वये । तस्मिन्नीरार्धाशिष्टे तु यत्नतः शीतलीकृते ॥ तानि कू-
ष्माण्डखण्डानि पीडयेत् दृढवाससा । यत्नतस्तज्जलं नीत्वा पुनः
पाकाय धारयेत् ॥ कूष्माण्डं शोपयेदमे ताम्रपात्रे ततः क्षिपेत् ।
क्षिप्त्वा तप्तघृतप्रस्थं कूष्माण्डं तेन भर्जयेत् ॥ मधुवर्णं तदालो-
क्य तज्जलं तत्र निःक्षिपेत् । सितायाश्च तुलां तत्र क्षिप्त्वा तल्ले-
हवेत्पचेत् ॥ सुपके पिप्पलीशुंठीजीराणां द्वे पले पृथक् । पृथक्
पलाद्धै धान्याकपत्रैलामरिचत्वचा ॥ चूर्णमेपां क्षिपेत्तत्र घृतार्धं
क्षौद्रमाहरेत् । क्षौद्राधिका सिता केचित्क्षौद्रात्केचित्सितार्धकम् ॥
द्राक्षार्धानि लवंगानि कर्प कर्पूरकं क्षिपेत् । तद्यथाग्निबलं खादे-
द्रक्तपित्तक्षतक्षयी ॥ कासश्वासी ततश्छर्दिदृष्ट्वाज्वरनिपीडि-
तः । वृष्यं पुनर्नवकरं बलवर्णप्रसादनम् ॥ उरःसंधानकरणं वृंहणं
स्वरबोधनम् । अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं कूष्माण्डकरसायनम् ॥

अर्थ-पुराना और पका हुआ पेठा लेकर उस के ऊपर का छिलका और भीतर के बीजों को दूर करके छोटे २ कतरा कर लेवे उन टुकड़ों को ८०० तोले जल में डालके औटावे जब आधा जल रहे तब उतारके उन पेटे के टुकड़ों को कपडे में बांधके निचोड लेवे, इस जल को कढाई में डालके फिर चुल्हे पर चढावे. और पेटे के टुकड़ों को धूप में सुखाय एक तामे की कढाई में चढावे और ६४ तोले घी डालके मंद २ अग्निसे भूने जब लालरंग का हो जावे तब उतार लेवे और पूर्वोक्त पेटे के पानी में देवे. तथा मिश्री ४०० तोले डाले और मंद २ अग्नि से पाक करे. जब अवलेह के समान पाक हो जावे तब इतनी औषध और डाले. पीपल, सॉठ और जीरा ये प्रत्येक ८ तोले लेवे तथा धनिया, पत्रज, इलायची, काली मिरच, दालचीनी इन का चूर्ण दो दो तोले लेवे और सहत ३२ तोले मिलावे और मिश्री किसी के मत से सहत से अधिक और किसी के मत से सहत से आधी डाले तथा १६ तोले दाख, लॉंग और कपूर एक एक तोला डाले इस को घी के बरतन में भरके धर रखे. यह कूष्माण्डकरसायन अग्निबल विचारके देवे. यह रक्तपित्त, क्षतक्षय, खांसी, श्वास, वमन, प्यास और ज्वर इन पर देवे यह वृष्य, तथा तारुण्य कारक, बल, वर्ण इन को करनेवाला, उरःक्षत को भरनेवाला, पुष्टिकरता और रवर को साफ करे है. यह अश्विनीकुमार ने उत्पन्न करा है ॥

तीसरा प्रकार

पुराणं पीनमानीय कूष्माण्डस्य फलं दृढम् । तद्वीजाधारबीज-
 'त्वक्शिराशून्यं च कारयेत् ॥ ततोतिसूक्ष्मखंडानि कृत्वा
 तस्य तुलां पचेत् । गोदुग्धस्य तुलायुग्मे मंदाग्नौ चालये-
 च्छनैः ॥ शर्करायास्तुलार्धं च गोघृतं प्रस्थमात्रकम् । प्रस्थार्ध-
 माक्षिकं चापि कुडवं नारिकेरतः ॥ प्रियालफलमजानां
 द्विपलं त्रिखुरीपलम् । क्षिपेदेकत्र विपचेद्वहयेत्साधु साध-
 येत् ॥ भिषग्भिषक्त्वमालोक्य ज्वलनादवतारयेत् । काष्ठौ-
 पध्यः क्षिपेदेपां चूर्णं तानि वदाम्यहम् ॥ एकोक्षः शतपुष्पाया
 अथ जीरो यवानिका । गोक्षुरः क्षुरकः पथ्या कपिकच्छूफलानि
 च ॥ सप्तमी त्वक्च सर्वेषामेषामक्षयुगं पृथक् । धान्यकं पिप्पली
 मुस्तमश्वगंधा शतावरी ॥ तालमूली नागबला वालकं पत्रकं शठी ।
 'जातीफलं लवंगं च सूक्ष्मैलावृहदेलिकान् ॥ शृंगाटकं पर्पटकं

सर्वं पलमितं पृथक्।चंदनं नागरं धात्रीफलं चापि कसेरुकम् ॥
 प्रत्येकं पंचकर्पाणि चोत्तार्यैतानि निःक्षिपेत् । पलद्वयमुशीरस्य
 पलान्यष्टोपणानि च ॥ कूष्मांडस्यावलेहोयं भक्षितः पलमा-
 त्रकः । किंवा यथावाह्लिवलं भुंजन् रोगान् विनाशयेत् ॥
 रक्तपित्तं शीतपित्तमाम्लपित्तमरोचकम् । वह्निमाद्यं सदाहं च
 तृष्णां प्रदरमेव च ॥ रक्ताशौ पित्तजिच्छर्दि पांडुरोगं च का-
 मलाम् । उपदंशं विसर्पं च जीर्णं च विषमज्वरम् ॥ लेहोयं पर-
 मो बृष्यो बृंहणो बलवर्धनः । स्थापनीयो विशेषेण भाजने
 मृन्मये नये ॥

अर्थ—पका हुआ पुराना पेठा लेकर उस को छील बना रक्खे बीज निकाल डाले
 और छोटे २ टुकड़े कर लेवे उन को १०० तोले लेय और ८०० तोले दूध में डाल-
 के मंदाग्निर पचन करे. तथा धीरे २ कौचे से हिलाता जावे जब सीज जाय और
 गाढे होने लगे तब २०० तोले मिश्री डाले, गौ का घी ६४ तोले, सहत ३२ तोले
 नारियलकी गिरी कतरी हुई १६ तोले, चिरोंजी ८ तोले और गोखरू ४ तोले डा-
 लके एकजीव कर लेवे जब चाटने योग्य गाढा हो जावे तब उतारके इस में सोंफ
 तोला, तथा जीरा, अजमायन, गोखरू, तालमखाना, हरड, कौछ के बीज, दालचीर्न
 ये प्रत्येक दो दो तोले ले, और धनिया, पीपल, नागरमोथा, असगंध, शतावर, मूस-
 ली, नागबला, नेत्रवाला, पत्रज, कचूर, जायफल, लोंग, इलायची बडी, इलायची
 छोटी, सिंघाडे, पित्तपापडा, ये प्रत्येक चार २ तोले लेय और चंदन, सोंड, आवले,
 नागकेशर ये प्रत्येक पांच २ तोले ले, खस दो तोले, कार्ली मिरच ८ तोले. इन
 का चूर्ण करके उस अवलेह को नीचे उतारके डाले यह कूष्माण्डकावलेह चार
 तोले प्रातःकाल सेवन करे. अथवा अग्निका बलाबल विचारके अधिक अथवा
 कम मात्र देवे तो रक्तपित्त, शीतपित्त, अम्लपित्त, अरुचि, मंदाग्नि, दाह, तृषा, प्रदर,
 खूनी घवासीर, पित्तजन्य वमन का होना, पांडुरोग, कामला, उपदंश, विसर्प, जीर्ण-
 ज्वर और विषमज्वर इन का नाश करे यह अवलेह अत्यन्त बृष्य है, पौष्टिक तथा बल
 के बढ़ानेवाला है. इस अवलेह को मिट्टीके बरतन में भरके धर रक्खे, अथवा किसी
 उत्तम चीनी के बासन में भरके धर देवे ॥

चौथा प्रकार

कूष्माण्डकस्य स्वरसं पलानां शतमात्रकम् । रसतुल्यं गवां क्षीरं

धात्रीचूर्णं पडाष्टकम् ॥ मृद्गग्निना पचेतावद्यावद्भवति पिंडवत् ।
धात्रीतुल्या सिता योज्या पलार्धं लेहयेदनु ॥ खंडकूपमांडकं
ह्येतद्भुक्तमभ्यासतो हरेत् । रक्तपित्तं ह्यम्लपित्तं दाहं तृष्णां च
कामलाम् ॥

अर्थ—पेठे का स्वरस ४०० तोले, गौ का दूध ४०० तोले और आवलों का चूर्ण ३२ तोले इन सब को मंदाग्निपर पक करे जब गोला बंधने लगे तब इस में मिश्री बत्तीस तोले डालके मिलाय देवे. फिर इस में से दो तोले नित्य प्रातःकाल भक्षण किया करे यह खंडकूपमाण्डकावलेह अभ्यास के साथ सेवन करने से रक्तपित्त, अम्लपित्त, दाह, तृषा और कामला इन को नाश करे ॥

वासाखंड

तुलामादाय वासायाः पचेदष्टगुणे जले । तेन पादावशेषेण पा-
चयेदाढकं भिषक् ॥ चूर्णानामभयानां तु खंडं शतपलं तथा ।
शीतीभूते तन्निदध्यात्क्षौद्रस्याष्टौ पलानि च ॥ वंशोद्भवा च
चत्वारि पिप्पली द्विपलं तथा । चातुर्जातं पलं त्वेकं चूर्णितं
तत्र दापयेत् ॥ रक्तपित्तं निहंत्याशु कासश्वासं क्षतक्षयम् ।
विद्रधि जाठरं गुल्मं तृष्णाहृद्रोगपीनसान् ॥ पलार्धभोजनं
चास्य यथेष्टं तत्र भोजनम् ॥

अर्थ—अड्डसा चार सौ तोले लेकर ३२०० बत्तीस सौ तोले जल में डालके भौटावे जब चतुर्थाश जल शेष रहे तब उताके छान लेय इस काटे में हरड का चूर्ण १०२४ तोले तथा मिश्री ४०० तोले डालके पचावे जब सिद्ध हो जावे तब इतारके शीतल कर लेवे और ३२ तोले सहत १६ तोले वंशलोचन ८ तोले पीपल और ४ तोले चातुर्जात ले इन सब का चूर्ण करके चासनी में डाल देवे. इस में से दो तोले यह वासाखंड सेवन करे तो रक्तपित्त, खांसी, श्वास, क्षतक्षय, विद्रधि, उदर, गेग, गोला, प्यास, हृदयरोग और पीनस इनका नाश करे इस पर यथेष्ट भोजन करे ॥

उशीरासव रक्तपित्तादिकोपर

उशीरं वालकं पत्रं काश्मरीनीलमुत्पलम् । प्रियंगुपद्मकं लोध्रं
मंजिष्ठा धन्वयासकः ॥ पाठा किराततित्तं च न्यग्रोधोदुंबरं शठी ।
पर्पटं पुंडरीकं च पटोलं कोचनारकम् ॥ जंबूशालमालिनियांसं

प्रत्येकं पलसंमितान् । भागान्सुच्चारिणितान्कृत्वा द्राक्षायाः पल-
विंशतिः ॥ धातकीं पौडशपलां जलद्रोणद्वये क्षिपेत् । शर्क-
रायास्तुलां दत्त्वा क्षौद्रस्यैकतुलां तथा ॥ मासं च स्थापयेत्
भांडे मांसीमरिचधूपिते । उशीरासव इत्येव रक्तपित्तनिवा-
रणः ॥ पांडुकुष्ठप्रमेहार्शःकृमिकोशापहस्तथा ॥

अर्थ—खस, नेत्रवाला, लालकमल, कंभारी, नीला कमल, फूल भियंगू, पन्नाख,
लोध, मजीठ, जवासी, पाठ, चिरायता, कुटकी, वड की छाल, गूलर की छाल,
कचूर, पित्तपापडा, सपेद कमल और पटोलपत्र, कचनार की छाल, जामुन की छाल,
सेमर का गोंद ये बाइस औपध चार२तोले लेवे तथा दाख २० पल, धाय के फूल १६
पल ले सब का कूट पीसके चूर्ण बनावे इस को दो द्रोण जल में डाले तथा मिथी
१ तुला डाले. फिर जटामांसी और मिरच इन की धूनी देकर उस वासन में ये
सब वस्तु भर देवे उस पात्र का मुख बंदकर मुद्रा देकर १ माहिने पर्यंत रक्खा रहने दे
बाद माहिने के मुद्रा को दूर करके इस को निकास लेवे. इसे उशीरासव कहते हैं
इस आसव के पीने से रक्तपित्त, पांडुरोग, कोढ़, प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग और शो-
ष (देह का दुबला हो जाना) इन सब रोगों को यह दूर करे ॥

वमन

मुस्तेन्द्रयवयष्ट्याह्वमदनाह्वं पयो मधु ।

शिशिरं वमनं योज्यं रक्तपित्तहरं परम् ॥

अर्थ—नागरमोथा, इन्द्रजो, मुलहठी, मैनफल, दूध और सहत इन को शी-
तल करके वमन करने को देवे तो रक्तपित्त का नाश होय ॥

यष्ट्यादिवमन

यष्टीमधुकसंयुक्तं सक्षौद्रं वमनं हितम् ॥

अर्थ—मुलहठी और सहत इन का वमन करना रक्तपित्तवाले को हितकारी है ॥

आरग्वधादिरेचन

आरग्वधेन धात्र्या वा त्रिवृता पथ्ययाऽथवा ।

विरेचनं प्रयोक्तव्यं शर्करामाक्षिकोत्तरम् ॥

अर्थ—अमलतास और आवले अथवा निसेत और हरद इन का काटा कर उस
में सहत और मिथी मिलापके पीवे तो दस्त होकर ऊर्ध्वगामी रक्तपित्त बंद होवे ॥

विरेचन

द्राक्षामधुककाश्मर्यः सितायुक्तं विरेचनम् ॥

अर्थ—ऊर्ध्वगत रक्तपित्तपर दाख, मुलहठी और कंभारी इन में खांड मिलाय के दस्त कराने को देवे तो ऊर्ध्वगत रक्तपित्त दूर होवे ॥

आपतर्पण

जलं खर्जूरमृद्धीकामधुकैः सपरूपकैः ।

शृतं जलं प्रयोक्तव्यं तर्पणाय सशर्करम् ॥

अर्थ—नेत्रवाला, खिञ्जूर, दाख, मुलहठी और फालसा इन औषधों को काढ़े में मिश्री मिलायके पीवे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

दूसरा प्रकार

तर्पणं सघृतक्षौद्रं लाजाचूर्णैः प्रदापयेत् ।

ऊर्ध्वगे रक्तपित्ते तत्काले देयं पिपासिते ॥

अर्थ—धान की सीलों का चूर्ण कर उस में धी और सहत ये एकत्र करके ऊर्ध्व-ज रक्तपित्त में जब प्यास लगे तब पीने को देवे ॥

पारावतशकृलेह

सक्षौद्रं ग्रंथिते रक्ते लिह्यात्पारावतं शकृत् ॥

अर्थ—यदि देह में रुधिर की गांठ पड गई हो तो सहत के साथ कबूतर की बीट वन करे ॥

केशरलेह

अतिनिःसृतरक्तो वा क्षौद्रेण रुधिरं पिबेत् ॥

अर्थ—जिस के देह से अत्यन्त रुधिर निकल गया हो वो सहत के साथ केशर पीवे ।

खदिरादिलेह

खदिरस्य प्रियंगूनां कोविदारस्य शाल्मलेः ।

पुष्पचूर्णानि मधुना लिह्याद्वा रक्तपित्तनुत् ॥

अर्थ—खैर फूल, प्रियंगू, कोविदार (कचनार का भेद), सेमल इन के फूलों के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटें तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

उदुंवरादिलेह ।

पक्रोदुंबरकाश्मर्यपथ्या खर्जूरगोस्तनीः ।

मधुना ग्रन्थि संलीढा रक्तपित्तं पृथक् पृथक् ॥

अर्थ—पके हुए गूलर के फल, कंभारी के फल, हरड, खजूर और दाख इन में से किसी एक को सहत के साथ खाय तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

खंडकाद्यवलेह

शतावरी मुंडितका बलामृता पलं त्वचः पुष्करमूलभांगी ।
 वृषो बृहत्यौ खदिरस्य मूली पृथक् पृथक् पंचपलानि मात्रा ॥
 पक्वं जले द्रोणमितेऽष्टमांशं यावद्भवेच्छेषमथैव पूतम् । विमू-
 छितस्यापि निधाय धीमान्पलानि च द्वादश माक्षिकस्य ॥
 तथा सुवर्णस्य च लोहजस्य विद्याद्धितं खंडघृतस्य तुल्यम् ।
 देयं पलं षोडशकं विधिज्ञो विपाचयेल्लोहमये कटाहे ॥
 गुडेन तुल्यं च यदा भवेत्तदा तुगा विडंगं मगधा च शुंठी ।
 द्वे जीरके कर्कटकं फलत्रिकं धान्यं मरीचं सकणा सकेसरम् ॥
 पलेन मात्रा विदधीत तत्पृथक् सुवद्धितं चूर्णमिदं घृतेन ।
 स्निग्धे कटाहे प्रणिधाय युञ्ज्यात्कर्पप्रमाणं विदधीत चूर्णम् ॥
 प्रभातकाले च सदुग्धपानं गुरूणि चान्नानि च भोजनानि । रक्तं
 सपित्तं सहसा निहंति रक्तप्रवाहं च सरक्तशूलम् ॥ रक्तातिसारं
 रुधिरप्रमेहं तथैव वस्तौ विहितं नराणाम् । भगंदरार्शः श्वयथुं
 निहंति तथाम्भपित्तं किल राजरोगम् ॥ विशेषतः कुष्ठयुजश्च
 गुल्मान् बलप्रदं वृष्यतमं प्रदिष्टम् । वातरक्तं प्रमेहं च शीतिपित्तं
 वर्मिं कृमीन् ॥ श्वयथुं पांडुरोगं च कुष्ठं ग्रीहोदरं तथा । आनाहो
 मूत्रसंस्त्रावम्लपित्तं निहंति च ॥ चक्षुष्यं बृंहणं वृष्यं मांगल्यं
 प्रीतिवर्द्धनम् । आरोग्यपुत्रदं श्रेष्ठं कामाग्निबलवर्द्धनम् ॥ श्रीकरं
 लाघवकरं खंडकाद्यं प्रकीर्तितम् । छागं पारावतं मांसं तित्तिरं
 कृकराशशम् ॥ कुरंगाः कृष्णसाराश्च मांसमेपां प्रयोजयेत् ।
 नारिकेलपयःपानं सुनिपण्णकवास्तुकम् ॥ शुष्कमूलकजीवाह्वयं
 पटोलं बृहतीफलम् । फलं वार्ताकपकाग्रं खजूरं स्वादु दाडि-

मम् ॥ ककारपूर्वकं पंच मांसं चानूपसंभवम् । वर्जनीयं विशेषेण खंडकाद्यं समश्नता ॥

अर्थ—सतावर, गोरखमुंडी, खिरेटी और गिलोय ये औषध चार चार तोले, दालचीनी, पोहकरमूल, भारंगी, अडूसा, कटेरी, बडी कटेरी, खैर की जड ये प्रत्येक तीस २ तोले ले इन को १०२४ तोले जल में डालके अष्टावशेष काढा करे फिर छानके जल अलग निकास लेवे. इस में ४८ तोले स्वर्णमाक्षिक की भस्म ४८ तोले सुवर्ण की भस्म, १६ तोले लोह भस्म और मिश्री तथा ९४ तोले घी इस प्रकार सब को एकत्र कर लोहे की कढ़ाई में पाक करे. जब गुड के समान पाक हो जावे तब इस में वंशलोचन, वायविडंग, पीपल, सोंठ, जीरा, काला जीरा, काकडी के बीज, हरड, बहेडा, आमला, धनिया, काली मिर्च, पीपल, नागकेशर ये प्रत्येक चार चार तोले ले सब का चूर्ण करके चासनी में मिलाय एकजीव कर देवे. इस खंडकाद्यवलेह को घी के शुद्ध चिकने वासन में भरके धर रखे और नित्य १ तोला खापऊपर से दूध पीवे तथा भारी अन्न भोजन करे तो रक्तपित्त, रक्तका प्रवाह, रक्तशूल, रक्तातिसार, रक्तप्रमेह, भगंदर, बवासीर, सूजन, अम्लपित्त, क्षय, कोठ, गोला, वातरक्त, प्रमेह, शीतपित्त, वमन, कृमिरोग, पांडुरोग, ग्रीहा, उदररोग, अफरा, मूत्र का रोग और अम्लपित्त इन सब रोगों को दूर करे तथा नेत्रों को हितकारी, पौष्टिक, मांगल्य, प्रीति को बढ़ावे, आरोग्य तथा पुत्र देनेवाला और कामदेव, जठराग्नि, बल, श्री और लाघव इन को करे. इस के ऊपर बकरा, कबूतर, तीतर, कृकित, ससा, हरिण, काला हरिण इन का मांस भक्षण करे और नारियल, दूध, चौपतिया, बयुआ, सूखी मूली, जीवंती, परवल, कटेरी के फल, बैंगन, पका आम, खजूर, मीठे अनार, ककारपंचक, आनूपदेश का मांस ये संपूर्ण पदार्थ खंडकाद्यवलेह सेवन करनेवाले को खाना निषेध है।

रक्तपित्तकुठाररस

शुद्धपारदवलिप्रवालकं हेममाक्षिकभुजंगरंगकम् । मारितं सक-
लमेतदुत्तमं भावयेच्च विततं द्रवैस्त्रिंशः ॥ चंदनस्य कमलस्य मा-
लतीकोरकस्य वृषपल्लवस्य च । धान्यधारणकणाशतावरीशा-
ल्मलीवटजटामृतस्य च ॥ रक्तपित्तकुलकंडनाभिधो जायते रस-
वरोस्रपित्तिनाम् । प्राणदो मधुवृषद्रवैरयं सेवितस्तु वसुकृष्णलो-
मतः ॥ नास्त्यनेन सममत्र भूतले भेषजं किमपि रक्तपित्तिनाम् ॥

अर्थ—शुद्धपारा, गंधक, मूंगा, सुवर्णमाक्षिक, शीशा, रांगा इन सब की शुद्ध भस्म

समान भाग लेवे. सब को एकत्र करे फिर चंदन, कमल, मालती (चमेली) के फूल, अडूसा, धनिया, गजपीपल, सतावर, सेमर और बड की कोपल, गिलोय इन प्रत्येक के रसों की तीन २ भावना देवे. यह रक्तपित्तकुलकुठार रस एक मासे को अडूसे का रस और सहत इन के साथ देवे तो रक्तपित्त का नाश करे ॥

वासासुत

आटरूपनवपल्लवद्रवं पालिकारसकभस्मवल्लकम् ।

कर्पसंमितमधुप्रयोजितं प्राश्य नश्यति च रक्तपित्तकम् ॥

अर्थ—अडूसे के कोमल पत्तों का रस चार तोले, तथा पारे की भस्म इन को एकत्र कर सहत मिलायके एक तोले की मात्रा खाने को दे तो रक्तपित्त का नाश होवे ॥

बोलपर्पटीरस

सूतगंधकसुकजलिकायाः पर्पटीसमयुतासमभागम् । बोलचूर्णविहितं प्रतिवाप्यं स्याद्रसोयमसृगामयहारी ॥ वल्लयुग्मयुगलं प्रति देयं शर्करामधुयुतः किल दत्तः । रक्तपित्तगुदजलुतियो-
निस्त्रावमाशु विनिवारयतीशः ॥

अर्थ—शुद्धपारा, गंधक दोनों की कजली करके फिर इस कजली के बराबर बोल का चूर्ण ले इन को एकत्र करके लोह के पात्र में तपायके गोबरपर केले का पत्ता विछाय देवे उसपर उस को ढाल देना चाहिये और ऊपर से केले का पत्ता ढक गोबर से दाब देवे तो यह रक्तरोग नाश करनेवाली बोलपर्पटी बने. इसमें से ६ रत्ती पर्पटी और मिश्री तथा सहत इन में मिलायके देवे तो रक्तपित्त, बवासीर, रक्त का बहना और योनिस्त्राव इन को नाश करे ॥

सुधानिधिरस

गंधं सूतं माक्षिकं लोहचूर्णं सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन ।

लोहे पात्रे गोलिका सा च कृत्वा रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै ॥

अर्थ—गंधक, पारा, सुवर्णमाक्षिक की भस्म और लोह भस्म ये समान भाग ले इन को लोह के खरल में ढालके त्रिफले के काटे से खरल करके गोली बनाय ले यह रक्तपित्त दूर करने के वास्ते देवे ॥

आटरूपाद्यकं

आटरूपकमृद्धीका पथ्यार्कश्च सशर्करः । वृपाकों वा समधुको

रक्तपित्तनिवारणः ॥ लोध्रप्रियंगुमृद्धीकाचंदनार्को रसान्वितः ।
वासायाः क्षौद्रसंयुक्त ऊर्ध्वाधो रक्तपित्तहृत् ॥ अर्को दाडिमपु-
ष्पोत्थो मृद्धीकासंभवोपि वा । पानात्तस्य हरेन्नासारक्तमात्रा-
स्थिजोपि वा ॥

अर्थ—अडूसा, दाख और हरड इन के अर्क में मिश्री मिलायके देवे अथवा अडूसा और मुलहठी का अर्क देवे. अथवा लोध्र, फूल प्रियंगू, दाख और चंदन इन के अर्क में अडूसे का रस और सहत मिलाकर देवे. अथवा अनार के फूल और दाख इन का अर्क देवे किंवा आम के गुठली का अर्क देवे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

शतावरीघृत

शतावरी दाडिमतिंतिडीकं कांकोलिकं वा मधुकं विदारी ।
पिष्ट्वा च मूलं फलपूरकस्य पचेत्घृतं क्षीरचतुर्गुणं तत् ॥
कासज्वरोन्मादविबंधशूलं तद्रक्तपित्तं विविधं निहंति ॥

अर्थ—सतावर, अनार, इमली, कंकोल, मुलहठी, विदारीकंद और विजोरे का र्चांग लेकर उन का कल्क करके उस में चौगुना दूध डाले. फिर गौ का घी डालके अग्निपर सिद्ध करे यह शतावरीघृत रांसी, ज्वर, उन्मत्तता, विबंध, शूल और अनेक प्रकार के रक्तपित्त का नाश करे ॥

दूर्वादितैल

दूर्वामधुकर्मजिष्ठाद्राक्षेशुरसचंदनैः । सारिवाघननक्ताह्वैस्तैलप्र-
स्थं विपाचयेत् ॥ क्षीरं चतुर्गुणं दत्त्वा सिद्धमभ्यंजने हितम् ।
रक्तपित्तहरं ह्येतद्रूपं वातघ्नमुत्तमम् ॥ दूर्वादितैलमिति ख्यातं
सुवर्णकरणं महत् ॥

अर्थ—दूध, मुलहठी, मजीठ, दाख, ईस का रस, चंदन, सारिवा, नागरमोया और हलदी ये समान भाग लेवे. १ सेर तैल और ४ सेर दूध डालके घी बनावे उस की देह में मालिस करना हितकारी है, रक्तपित्त को नाश करे, बल बढ़ावे ये उत्तम वातनाशक है यह दूर्वादितैल देह की उत्तम कांती करे है ॥

दूसरा प्रकार

-दूर्वा भव्यफलं मापकुलित्यौ वंशपत्रिका । जलस्थलोद्भवौ

कर्णमोचकौ खरमंजरी ॥ दंडोत्पलस्य मूलं तु निःक्वाथ्याष्ट-
गुणंभसि । तत्पादशेषितं तैलं तुल्यं कृत्वा विपाचयेत् ॥ तत्तैलं
प्रतिघर्षेण आनाहाख्यं गदं जयेत् ॥

अर्थ—दूब, नीम के फल, उडद, कुलथी, वंशपात्रिका (बांस जाति की एक
घास), जल और स्थल में उत्पन्न होनेवाला केला, आंगा और सहदेई की जड़ ये
सब समान भाग लेवे औषधों से आठ गुना जल ले चतुर्थांश काटा करके छान
लेवे इस काटे में बराबर का तेल मिलाय फिर पाक करे इस तेल की देह में मालिस
करने से आनाहाख्य रोग को दूर करे है ॥

रक्तपित्तपर पथ्य

अधोगते छर्दनमूर्ध्वनिर्गमे विरेचनं स्यादुभयत्र लंघनम् ।
पुरातनाः षष्टिकशालिकोद्भवा प्रियंगुनीवारयवप्रसादकाः ॥
मुद्गा मसूराश्वणकास्तुवर्या मकुष्टकश्वागडुवर्मिमत्स्याः । श-
शः कपोतो हरिणैणलावः शरारिपारावतवर्तिकाश्च ॥ वका
उरभ्राश्च सकालपुच्छाः कर्पिजलाश्वापि कपायवर्गाः । गवाम-
जायाश्च पयो घृतं च घृतं महिष्याः पनसं प्रियालम् ॥ रंभाफलं
कंचनतंदुलीयपटोलवेत्रायमहार्द्रकाणि । पुराणकूष्मांडफलं च
पथ्यं तालानि तद्बीजजलानि वासा ॥ स्वादूनि चिल्लानि च
दाडिमानि खजूरधात्रीमिशिनारिकेरम् । कसेरुशृंगाटकपौ-
ष्कराणि कपित्थशालूकपरूपकाणि ॥ भूनिंबशाकं पिचुमं-
दपत्रं तुंबी कलिंगानि च लाजसक्तु । द्राक्षा सिता माक्षिकमिक्ष-
वश्च शीतोदकं चोद्भिदवारि चापि ॥ सेकावगाहः शतधौतस-
पिरभ्यंगयोगः शिशिरः प्रदेशः । हिमानिलश्चंदनमिंदुपादाः
कथा विचित्राश्च मनोनुकूलाः ॥ धारागृहं भूमिगृहं सुशीतं वैडूर्य-
मुक्तामणिधारणं च । रक्तोत्पलांभोरुहपत्रशय्या क्षौमांवरं
चोपवनं सुशीतम् ॥ प्रियंगुकाचंदनरूपिकांतामालिगितं चापि
वरांगनानाम्पापद्माकराणां सरितोद्गतानां चंद्रोदयानां हिमशीक-

राणाम् ॥ सुशीतलानां गिरिनिर्झराणामतिप्रशस्तानि च कीर्त-
नानि । प्रतीरनीरं हिमवालुकानि मित्रं नृणां शोणितपित्तरोगे ॥

अर्थ—अधोगत (गुदालिंगेद्री द्वारा रुधिर जानेवाले) रक्तपित्त रोगी को वमन करावे, तथा ऊर्ध्वगत रक्तपित्त में जुलाव देवे, और ऊपर नीचे दोनों मार्ग से रुधिर जानेवाले को लंघन कराना चाहिये । एवं पुराने सांठी चावल, कोदों, कांगनी, सप्ताप्साई, जों, तीनी, मूंग, मसूर, चना, अरहर तथा मोठ, ये धान्य. तथा गडजाति और वमों जात की मछली (जो मूष के आकार होती है) तथा सप्ता, कपोत (पिंडुकिया), हरिण, काला हरिण, लवा, बगला, कबूतर, बटेर, (वनका चिडा), (मुरगा वा बगला), मेंढा, दुंबा, सपेद तीतर और कपेले वर्ग तथा गौ का और बकरी का घी, और दूध, भैस का घी, पनस (कटहर), चिरोंजी, केला की गहर, जलचोलाई, चौलाई, पटोल (परवर), वेत की कोंपल, अदरक, पुराना पेठा, ताड़फल, ताड़फल के बीज, ताड़ीरस, अडसा, स्वादु चिळी का साग (स्वादिष्ट तथा तीखे रस), अनार, खजूर (छुहारा), आमले, सोंफ, नारियल, कसेरू, सिंघाडे, पुहकरमूल, कैयं, भसीडा, फालसे, चिरायता (साग), नीमके पत्ते, सपेद तुंबी, तरमूज वा इंद्रजो, चावल की खील, सतुआ (सत्), दाख, मिश्री, सहत, ईख, शीतल जल, झरने का पानी, जल का सींचन (छिरकना), जल में गोता मारना, सौवार का धुला हुआ घी, तेल की मालिस, शीतल वस्तु का उबटना, शीतल पवन, चंदन लगाना, चंद्रकिरण (चांदनी), विचित्र और मनोनुकूल (मनोहर) कथा कहानी, फन्बारेदार घर भूमिगृह (तहखान), वैदूर्य, मोती और हीरा, पत्रा आदि मणियों का धारण, लाल कमल, (केला के भीतर के नम्र पत्ते), कमल के पत्ते, इन से रचित शय्या (सेज), रेशमी कपडे, शीतल वनबाग, प्रियंगु, चंदनचर्चित उत्तम स्त्रियों का आलिंगन, जिन में कमल फूल रहे ऐसा सरोवर अथवा नदी, चंद्रोदय, हिम (बरफ) की फुहार, (वा पर्वत के झरने), अत्यंत सुंदर गान, नदीतट का जल, शीतल बालू (रेत) अथवा कपूर ये संपूर्ण वस्तु रक्तपित्त रोगपर पथ्य कारक है ॥

रक्तपित्तपर अपथ्य

व्यायामाध्वनिषेवणं रविकरास्तीक्ष्णानि कर्माणि च । स्रोतो-
वेगविधारणं चपलता हस्त्यश्वयानानि च ॥ स्वेदांबुप्रतिधूमपा-
नसुरतक्रोधः खलु स्याद्बुडो । वार्ताकीतिलमापसर्पपदाधिक्षी-
राणि कौपं पयः ॥ तांबूलं ललदंबु मद्यलशुनं शिम्बी विरूद्भाश-
नम् । कट्फलं लवणं विदाहि च गणस्त्याज्योत्पित्ते नृणाम् ॥

शास्त्रार्थ

नित्यं स्वदेवपूजाभक्तिभैषज्यदेवतागुरुषु ।

छागलमांसपयोश्नन् जीवति यक्ष्मी चिरं धृतिमान् ॥

अर्थ—नित्य, इष्ट देवपूजन और औषधी, देवता और गुरु इन की भक्ति तथा बकरे का मांस तथा बकरी का दूध इन का सेवन इन उपायों से क्षयरोगी बहुत काल इस रोग से बचा रहता है ॥

उपद्रवान्सत्वरवैकृतादीन् जयेद्यथा क्षिप्रसमीक्ष्य शास्त्रम् ।

त्यजेत्कुवैद्यप्रतिपादितानि बुद्धेर्विरुद्धानि च भेषजानि ॥

अर्थ—तत्काल जो विकृति आदि उपद्रव होते हैं उन को शास्त्र में कहे मार्ग से कुशल वैद्य के द्वारा नाश कराना चाहिये. कुवैद्य (मूर्खवैद्य की) औषध न खाय तथा बिना समझे और विचारे हर किसी औषध को नर न खाने लगे ऐसा करने से इस रोगी का हित हो अन्यथा अहित हो ॥

गीतादिउपाय

गीतवादित्रैरिष्टैश्च प्रियस्तुतिभिरेव च ।

हर्षणाश्वासनैर्नित्यैर्गुरूणां समुपासनैः ॥

अर्थ—उत्तम गीत गाना, बाजे बजाना, इष्ट पदार्थ, प्रिय लगे ऐसी बढाई करना और आनन्ददायक पदार्थ तथा आश्वासन (दिलासा देना) ऐसा वाक्य कहना तथा नित्य गुरु की उपासना इन उपायों से क्षयरोग को जीते ॥

राजयक्ष्माक्षयनिदान

वेगरोधात्क्षयाच्चैव साहसाद्विपमाशनात् ।

त्रिदोषो जायते यक्ष्मा गदो हेतुचतुष्टयात् ॥

अर्थ—वात, मूत्र, पुरीष आदि वेगों के रोकने से, अति मैथुन, उपवास, ईर्ष्या, स्वेद इत्यादिक धातुक्षय के कारणों से बलवान से बर करने से विपमाशन कहिये कुसमय थोड़ा अथवा बहुत भोजन करने से इन चार कारणों से तीनों दोषों के कोप से मनुष्य के राजयक्ष्मा रोग होय है. वेग का रोकना ही वातकोप का कारण है यह सत्य है तथापि वातकोप से अग्नि दुष्ट होकर कफ पित्त का कोप होय है इन चार हेतुओं में असंख्य हेतु अन्तर्भाव होय हैं. रसादि धातुओं के शोषण (मुग्राने) से इस रोग को (शोष) कहते हैं. तथा शरीर में पाचनादि सर्व क्रियाओं को क्षय करे है इसी से इस रोग को (क्षय) कहते हैं. और राजा (चन्द्र) इस रोग से अति पीडित भया इसी से

इस को (राजयक्ष्मा) कहते हैं. यह (सुश्रुत) का आशय है और (वाग्भट) ने इस को सर्व रोगों का राजा कहा है इसी से इस को (राजयक्ष्मा) नाम कहा है इस श्लोक में जो कहा है कि त्रिदोष का एक ही यक्ष्मारोग प्रगट होय है उस का तात्पर्य यह है कि तीनों दोषों के कारण भेद से अनेक प्रकार का नहीं है सो (सुश्रुत) में कहा भी है और इस श्लोक में (वेगरोधात्) इस पद से केवल वात, भूत, मल इन का ही ग्रहण करना चाहिये. भ्रमादिक सबों का ग्रहण नहीं है सो (चरक) में लिखा है इति ॥

अनुलोम व प्रतिलोम क्षयकी संप्राप्ति

कफप्रधानैर्दोषैस्तु रुद्धेषु रसवर्त्मसु । अतिव्यवायिनो वापि
क्षीणे रतेस्यनंतराः ॥ क्षीयंते धातवः सर्वे ततः शुष्यति मानवः ।
राज्ञश्चंद्रमसो यस्माद्भूदेष किलामयः ॥ तस्मात्तं राजयक्ष्मेति
केचिदाहुर्मनीषिणः ॥

अर्थ—कफ है प्रधान जिन में ऐसे जो वातादिक दोष तिन करके रस के वहने-वाली नाडियों के मार्ग रुक जाने से (इस से यह सूचना करी कि रसमार्ग बंद होने से हृदय में स्थित जो रस उस को बिगाड और उसी स्थान में विकृति कहिये और प्रकार का स्वरूप करके खांसी के वेग से मुखमार्ग होकर निकाले) सो (चरक) में लिखा भी है “ इस से अनुलोम क्षय दिखाया ” “ अवं प्रतिलोम क्षय कैसा होय है उस को कहते हैं ” अथवा अति मैथुन करने से मनुष्य का वीर्य क्षीण होय है. जब शुक्र क्षीण हो जाय तब समीप की धातु क्षीण होय तब पुरुष सूखने लगे जैसे धीण के अनन्तर मज्जा क्षीण होय मज्जा क्षीण के अनन्तर हड्डी क्षीण होय धातु क्षीण होय जाय । * शंका—क्योजी रस, रुधिर, मांस, मेदा, शुक्र इन में क्रम से प्रत्येक के क्षीण होने से शुक्र का क्षय होना प्रकृत शुक्र का क्षय होने से कारणभूत धातुओं का नाश कैसे होय

क्षय होय है तब वा
ने से पवन के
यहां पवन समीप

हड्डी और उस के पश्चात् मेदा इसी रीति में
अगहपर * दृष्टान्त—है जैसे अग्नि में तपाय
घरने से प्रथम समीप की पृथ्वी के आर्द्रपने क
ना शो करे उसी रीति से यहां जानना चाहिये

शास्त्रार्थ

1. नित्यं स्वदेवपूजाभक्तिर्भेषज्यदेवतागुरुषु ।

2. छागलमांसपयोश्चन् जीवति यक्ष्मी चिरं धृतिमान् ॥

अर्थ—नित्य, इष्ट देवपूजन और औषधी, देवता और गुरु इन की भक्ति तथा बकरे का मांस तथा बकरी का दूध इन का सेवन इन उपायों से क्षयरोगी बहुत काल इस रोग से बचा रहता है ॥

3. उपद्रवान्स्त्वरवैकृतादीन् जयेद्यथा क्षिप्रसमीक्ष्य शास्त्रम् ।

4. त्यजेत्कुवैद्यप्रतिपादितानि बुद्धेर्विरुद्धानि च भेषजानि ॥

अर्थ—तत्काल जो विकृति आदि उपद्रव होते हैं उन को शास्त्र में कहे मार्गसे कुशल वैद्य के द्वारा नाश कराना चाहिये. कुवैद्य (मूर्खवैद्य की) औषध न खाय तथा बिना समझे और विचारे हर किसी औषध को नर न खाने लगे ऐसा करने से इस रोगी का हित हो अन्यथा अहित हो ॥

गीतादिउपाय

गीतवादित्रैरिष्टैश्च प्रियस्तुतिभिरेव च ।

हर्षणाश्वासनैर्नित्यैर्गुरूणां समुपासनैः ॥

अर्थ—उत्तम गीत गाना, वाजे बजाना, इष्ट पदार्थ, प्रिय लगे ऐसी बढाई करना और आनन्ददायक पदार्थ तथा आश्वासन (दिलासा देना) ऐसा वाक्य कहना तथा नित्य गुरु की उपासना इन उपायों से क्षयरोग को जीते ॥

राजयक्ष्माक्षयनिदान

वेगरोधात्क्षयाच्चैव साहसद्रिपमाशनात् ।

त्रिदोषो जायते यक्ष्मा गदो हेतुचतुष्टयात् ॥

अर्थ—वात, मूत्र, पुरीष आदि वेगों के रोकने से, अति मैथुन, उपवास, ईर्ष्या, खेद इत्यादिक धातुक्षयके कारणोंसे बलवान से वैर करने से विपमाशन कहिये कुसमय थोड़ा अथवा बहुत भोजन करने से इन चार कारणोंसे तीनों दोषों के कोप से मनुष्य के राजयक्ष्मा रोग होय है. वेग का रोकना ही वातकोप का कारण है यह सत्य है तथापि वातकोप से अग्नि दुष्ट होकर कफ पित्त का कोप होय है इन चार हेतुओं में असंख्य हेतु अन्तर्भाव होय हैं. रसादि धातुओं के शोषण (सुखाने) से इस रोग को (शोष) कहते हैं. तथा शरीर में पाचनादि सर्व क्रियाओं को क्षय करे है इसी से इस रोग को (क्षय) कहते हैं. और राजा (चन्द्र) इस रोग से अति पीडित भया इसी से

इस को (राजयक्ष्मा) कहते हैं. यह (सुश्रुत) का आशय है और (वाग्भट) ने इस को सर्व रोगों का राजा कहा है इसी से इस को (राजयक्ष्मा) नाम कहा है इस श्लोक में जो कहा है कि त्रिदोष का एक ही यक्ष्मारोग प्रगट होय है उस का तात्पर्य यह है कि तीनों दोषों के कारण भेद से अनेक प्रकार का नहीं है सो (सुश्रुत) में कहा भी है और इस श्लोक में (वेगरोधात्) इस पद से केवल वात, मूत्र, मल इन का ही ग्रहण करना चाहिये. भ्रमादिक सबों का ग्रहण नहीं है सो (चरक) में लिखा है इति ॥

अनुलोम व प्रतिलोम क्षयकी संप्राप्ति

कफप्रधानैर्दोषैस्तु रुद्धेषु रसवर्त्मसु । अतिव्यवायिनो वापि
क्षीणे रेतस्यनंतराः ॥ क्षीयंते धातवः सर्वे ततः शुष्यति मानवः ।
राज्ञश्चंद्रमसो यस्माद्भूदेप किलामयः ॥ तस्मात्तं राजयक्ष्मेति
केचिदाहुर्मनीषिणः ॥

अर्थ—कफ है प्रधान जिन में ऐसे जो वातादिक दोष तिन करके रस के बहने-वाली नाडियों के मार्ग रुक जाने से (इस से यह सूचना करी कि रसमार्ग बंद होने से हृदय में स्थित जो रस उस को बिगाड और उसी स्थान में विकृति कहिये और प्रकार का स्वरूप करके खांसी के वेग से मुखमार्ग होकर निकाले) सो (चरक) में लिखा भी है " इस से अनुलोम क्षय दिखाया " " अब प्रतिलोम क्षय कैसा होय है उस को कहते हैं " अथवा अति मैथुन करने से मनुष्य का वीर्य क्षीण होय है जब शुक्र क्षीण हो जाय तब समीप की धातु क्षीण होय तब पुरुष सूखने लगे जैसे नक्षी अनन्तर मज्जा क्षीण होय मज्जा क्षीण के अनन्तर हड्डी क्षीण होय पूर्व पूर्व होय जाय । * शंका—क्योंजी रस, रुधिर, मांस, मेदा, मज्जा, शुक्र क्रम से प्रत्येक के क्षीण होने से शुक्र का क्षय है परंतु कार्यभूत क्षय होने से कारणभूत धातुओं का नाश है तब वात कुपित होता है सो रातु के नष्ट होने से बहनेवाली नाडियों की मज्जा धातु को कुपित करे तब वही पथ और उस के पश्चात् मेदा इसी रात से रसपर्यंत धातुओं गहपर * दृष्टान्त—है जैसे आम्रि में तपाया भया लोह का रने से प्रथम समीप की पृथ्वी के आर्द्रपने को शोषण करे षण करे उसी रीति से यहां जानना चाहिये ॥

पूर्वरूप

श्वासांगसादकफसंस्त्रवतालुशोषवम्यग्निसादमदपीनसकासनि-
द्राः । शोषो भविष्यति भवन्ति स चापि जंतुः शुक्लेक्षणो भवति
मांसपरो रिरंसुः ॥ स्वप्नेषु काकशुकशलकिनीलकंठगृध्रास्त-
थैव कपयः कृकलासकाश्च । तं वाहयन्ति स नदीर्विजलाश्च
पश्येत् शुष्कां स्तरूपवधूमदवार्दितांश्च ॥

अर्थ—श्वास, हाथ पैर का गलना, कफ का थूकना, तालुवे का सूखना, वमन,
मन्दाग्नि, उन्मत्तता, पनिस, खांसी और निद्रा ये लक्षण धातुशोष होनेवाले के होते
हैं और उस मनुष्य के नेत्र सपेद होते हैं और उस मनुष्य की मांस खानेपर तथा
स्त्रीसंग करने की इच्छा होती है और सपने में कौआ, तोता, सेह, नीलकंठ (मोर),
गीध, वन्दर, करकैटा इनपर अपने को बैठा देखे और जलहीन नदी को देखे तथा
पवन धूर और धूआं इन से पीडित ऐसे वृक्ष देखे. चकार से तृण, केश आदि का
गिरना ये होते हैं ये सब स्वप्न क्षयरोग होने के पहले दीखते हैं (सो चरक में लिखा
है) *शंका—क्योंजी शुक का तो क्षय हो जाय है फिर (रिरंसुः) यह पद क्यों
धरा ? *उत्तर—यह केवल व्याधि के घटने से मन के दोष से जानना चाहिये ॥ -

क्षय का सामान्य त्रिरूप लक्षण

अंशपार्श्वभिसन्तापः संतापः करपादयोः ।

ज्वरः सर्वांगश्चैव लक्षणं राजयक्ष्मणः ॥

अर्थ—कन्धा और पसवाडे में पीडा, हाथपैर में जलन और सर्व अंगों में ज्वर
ये राजयक्ष्मा के लक्षण ये तीन लक्षण अवश्य होते हैं ऐसे चरक ने कहा है ॥

एकादशरूप पद्धरूप और त्रिरूप क्षयों का कारण

स्वरभेदो निलाच्छूलं संकोचश्चांसपार्श्वयोः । ज्वरो दाहो तिसारश्च
पित्ताद्रक्तस्य चागमः ॥ शिरसः परिपूर्णत्वमभक्तश्छन्द एव च ।

५. कासः कंठस्य च ध्वंसो विज्ञेयः कफकोपतः ॥ एकादशभिरे-
राज^५ वातकोप^५ नैर्वा पद्भिर्वापि समन्वितम् । कासातिसारपार्श्वार्तिस्वरभे-
हेतु अन्तर्भायचिज्वरैः ॥ त्रिभिर्वा पीडितं लिग्ज्वरकासासृगामयैः ।
कहते हैं. तथा शेषार्दितं जंतुमिच्छन्सुविपुलं यशः ॥
(क्षय) कहते हैं. अ.

अर्थ—राज्यक्ष्मा ये त्रिदोष से उत्पन्न है इस में दोषों को न्यारे न्यारे मिलाकर सब ग्यारह रूप हैं ये व्याधि के प्रभाव से होते हैं सन्निपातज्वर के सदृश सर्व लक्षण सब दोषों से नहीं होते पृथक् पृथक् होते हैं सो दिखाते हैं. वादी के प्रभाव से स्वरभेद, कन्धा और पसवाडे इन में संकोच और पीडा होय. पित्त से ज्वर, दाह, अतिसार और मुख से रुधिर का गिरना और कफ के कोप से मस्तक का भारीपना, अन्न से द्वेष, खांसी, स्वरभेद ये लक्षण होते हैं. इस में तीन तो वात से और चार लक्षण पित्त से तथा चारही लक्षण कफ से ऐसे सब ग्यारह लक्षण से अथवा खांसी, अतिसार, पसवाडे में पीडा, स्वरभेद, अरुचि और ज्वर ये छः लक्षणों से अथवा ज्वर, खांसी और रुधिरविकार इन तीन लक्षणों से पीडित क्षई रोगवाले मनुष्य तथा जिस का बल, मांस क्षीण हो गया होय ऐसे रोगी को यशेच्छ वैद्य त्याग देय ऐसा रोगी असाध्य है ॥

पुनः असाध्यलक्षण

सर्वैरधैस्त्रिभिर्वापि लिङ्गैर्मांसबलक्षयैः । युक्तो वर्ज्यश्चिकित्स्यै-
स्तु सर्वरूपस्ततो न्यथा ॥ महाशनं क्षीयमाणमतीसारनिपी-
डितम् । शूनमुष्कोदरं चैव यक्षिमणं परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—स्वरभेदादिक जो ग्यारह लक्षण कहे वो सब लक्षण करके अथवा उन में से आधे (अर्थात् छः लक्षणों से) अथवा तीन लक्षण कहे इन से युक्त जो खईरोगी बल, मांस क्षीण होने पर त्याज्य है. यदि बल मांस जिसका क्षीण न भया हो परंतु सर्व लक्षणयुक्त भी है तथापि त्याज्य नहीं है उस की चिकित्सा करनी चाहिये. जो बहुत भोजन करे परंतु दिनादिनप्रति क्षीण होता जाय (ये असाध्य रोगी है) अतिसार करके अत्यन्त पीडित होय सो रोगी भी असाध्य होय है क्योंकि खईरोगवाले का जीना मल के आधीन है (जैसे लिखा है) उक्तं च यथा—मला-
प्रसं बलं पुंसां शुक्रायत्तं तु जीवितम् । तस्माद्यत्नेन संरक्षेद्यक्षिमणो
मलरेतसी ॥ इति ॥ और जिस के अंडकोश और उदर ये सूज गये हों
ऐसा रोगी असाध्य है क्यों कि शोथवाला दस्त के कारण से अच्छा होय है सो इस
पर दस्त करना वर्जित है इसी से ऐसे रोगीको वैद्य त्याग देय ॥

साध्यलक्षण

ज्वरानुबंधरहितं बलवंतं क्रियासहम् ।
उपक्रमेदात्मवंतं दीप्ताग्निमकृशं नरम् ॥

उक्षयं
तथाष्ट-

अर्थ—जिस खईरोगवाले मनुष्यको ज्वरका सम्बन्ध होय नहीं बलवान् औषधादि उपचारका सहनेवाला और जिसकी इन्द्री बलमें हो तथा जठराग्नि जिसकी दीप्त होय और कृश न होय ऐसे रोगीकी चिकित्सा (उपचार) करना चाहिये । इस श्लोकमें (अकृशं) इस पदके धरनेका यह प्रयोजन है कि पुष्ट देहवालाभी इस खईरोगसे हजार दिन बचसके है सोई ग्रन्थान्तरमें लिखा है ॥

असाध्यलक्षण

शुक्लाक्षमन्नद्वेषारं ऊर्ध्वश्वासनिपीडितम् ।

कृच्छ्रेण बहु मेहतं यक्ष्मा हन्ति च मानवम् ॥

अर्थ—सपेद नेत्र जिस के हो गये होंय अन्न जिस को बुरा लगे ऊर्ध्वश्वास से पीडित और कष्ट से बहुत मूतनेवाला अर्थात् मल सुख से उतरे इस से ये दिखाया कि जो आहार खाय सो मल हो जाय जब आहार का मल हो गया तब उस के मांस, रुधिर इन का क्षय होय इसी से यह असाध्य है ॥

क्षयारोगीको वर्ज्य पदार्थ

वृताकं कारवेळं च तैलं विल्वं च राजिकाम् ।

मैथुनं च दिवा निद्रां क्षयी कोपं विवर्जयेत् ॥

अर्थ—बैगन, करेले, तेल, बेलफल, राई, छीसंग, दिन में सोना और क्रोध करना ये सब कर्म खईरोगवाले के लिये निषेध है ॥

क्षयहारक पदार्थ

सधान्ययवगोधूमा मुद्गाश्चापि सदा हिताः ।

स्त्रियश्चतुष्पदे श्रेष्ठाः पुंमासो विहगा मताः ॥

अर्थ—सुंदर धान, जौ, गेहूँ, मूँग, चौपाये छी जाति के पशुओं का मांस और पक्षियों में पुरुष जाति का मांस ये क्षय रोग में हितकारी हैं ॥

छागं मांसं पयश्छागं सर्पिश्छागं सशर्करम् ।

छागोपसेवा सततं छागमध्ये तु यक्ष्मनुत् ॥

अर्थ—बकरी का मांस, बकरी का दूध, बकरी का घी, इन में मिश्री मिलायके राज्यन करना. तथा बकरी की दहल चाकरी करना. तथा उन बकारियोंमें रहना ये वातकोपं रोगनाशक यत्न हैं ॥

हेतु अन्तर्भागदित्रशब्दैश्च प्रियस्तुतिभिरेव च । हर्षणाश्वासनैर्नित्यं
कहते हैं. तथा हर्षणं तु यदि जीवति मानवः । सुभिपतिभस्फनितस्तरुणः शोषपीडितः ॥ इति ।
(क्षय) कहते हैं.

गुरूणां समुपासनैः ॥ ब्रह्मचर्येण दानेन तपसा देवतार्चनैः ।
सत्येनाचारयोगेन रविमंडलसेवया ॥ वैद्यविप्रार्चनाच्चैव रोग-
राजो निवर्तते ॥

अर्थ—गीत, बाजे, आदि का घोष, प्रियस्तुति, हर्ष, आश्वासन, गुरु की सेवा, ब्रह्म-
चर्य, तप, देवपूजन, सत्य बोलना, आचार, सूर्यनारायण की सेवा, वैद्य और ब्राह्मण
की सेवा और पूजा करना ये सब कर्म राजयक्ष्मा को दूर करते हैं ॥

पडंगयूप

द्रव्यतो द्विगुणं मासं सर्वतोष्टगुणं जलम् ।
पदस्थं संस्कृतं चाज्यं पडंगो यूप उच्यते ॥

अर्थ—आपध की अपेक्षा दुगुना मास लेवे तथा सब से आठ गुना जल डाले जब
औटते २ चौथाई रहे तब इस में घी डाले इसे पडंगयूप कहते हैं ॥

॥

ज्वरदाहक्रिया

ज्वराणां शमनीयो यः पूर्वमुक्तो क्रियाविधिः ।
क्षयिणां ज्वरदाहेषु स सर्वोपि प्रशस्यते ॥

अर्थ—जो प्रथम ज्वरों के शमनार्थ क्रिया का प्रकार लिखा है वह संपूर्ण क्षय में
ज्वर और दाह इत्यादि कों पर करे ॥

वर्षभक्षण के माहात्म्य

नवनीतसितामधुप्रयुक्तो वरखो हेमभवः क्षयं क्षिणोति ।

वितथः प्रभवेदयं प्रयोगो यदि तन्मे शपथः सदाशिवस्य ॥

अर्थ—मक्खन, मिश्री, सहत इन में सोने के वर्ष को मिलापके सेवन करे तो
क्षयरोग का नाश होवे यदि यह कहा हुआ मेरा प्रयोग असत्य होवे तो मुझे मेरे उ-
पास्य श्रीशिवजी की शपथ (सौगंध) है यह वैद्यामृत ग्रंथ में लिखा है ॥

च्यवनप्राश्यावलेह

पाटलारणिकाश्मर्याविल्वारलुकगोक्षुराः । पण्यौ बृहत्यौ पि-

प्पल्यः शृंगी द्राक्षामृताभयाः ॥ बला भूम्यामली वासा ऋद्धि-

जीवंतिका सठी । जीवकर्पभकौ मुस्तं पौष्करं काकनासि ॥ ३६

मुद्गपर्णी मापपर्णी विदारी च पुनर्नवा । कांकोल्यो ३ तथा

सूक्ष्मैलागरुचंदनम् ॥ एकैकं पलसम्मानं स्थूलचूर्णितमौषधम् ।
 एकीकृत्य वृहत्पात्रे पंचामलशतानि च ॥ पचेत् द्रोणजले क्षित्वा
 ग्राह्यमष्टांशशेषितम् । ततस्तु तान्यामलानि निष्कुलीकृत्य
 वाससा ॥ दृढहस्तेन संमर्द्य क्षित्वा तत्र ततो घृतम् । पलस-
 तमितं तोयं किञ्चित् भृङ्गाल्पवह्निना ॥ ततस्तत्र क्षिपेत्काथं
 खंडं चार्धपलोन्मितम् । लेहवत्साधयित्वा च चूर्णानीमानि
 दापयेत् ॥ पिप्पली द्विपला ज्ञेया तुगाक्षीरी चतुःपला । प्रत्येकं
 च त्रिशाणा स्युस्त्वगेलापत्रकेशराः ॥ ततस्त्वेकीकृते तस्मि-
 न्क्षिपेत्क्षौद्रं च पट्पलम् । इत्येवं च्यवनप्रोक्तं च्यवनप्राश्यसं-
 ज्ञकम् ॥ लेहं वह्निवत् दृष्ट्वा खादेत्क्षीणो रसायनम् । बाल-
 वृद्धक्षतक्षीणा नारीक्षीणाश्च शोषिणः ॥ हृद्रोगिणः स्वरक्षीणा
 ये नरास्तेषु युज्यते । कासं श्वासं पिपासां च वातास्रमुरसो
 ग्रहम् ॥ वातपित्तं शुक्रदोषं मूत्रदोषं च नाशयेत् । मेधां स्मृतिं
 स्त्रीषु हर्षं कांतिं वर्णं प्रसन्नताम् ॥ अस्मात्प्रयोगादाप्नोति नरो
 जीर्णविवर्जितः ॥

अर्थ—पाठ, अरनी, कंभारी, बेलगिरी, टेंडू, गोररू, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेरी
 बडी कटेरी, पीपल, कांकडासिंगी, दाख, गिलोय, हरड, बला, भूय आवला, अ
 डूसा, ऋद्धि, सिद्धि के अभाव में वाराहीकंद, जीवन्ती (डोडी), कचूर, जीवक
 ऋपभक इन दोनों के अभाव में विदारीकंद, नागरमोथा, पुहकरमूल, काकनासा (कौ-
 आडोडी), मुद्गपर्णी, मापपर्णी, विदारीकंद, पुनर्नवा (सांठ), काकोली, क्षीर का-
 कोली इन दोनों के अभाव में असगंध, कमल, मेदा, महामेदा इन दोनों के अभाव
 में मुलहठी, छोटी इलायची, अगर, लालचंदन, इन सब औषधों को एकत्र एक एक
 पल लेवे सब को जब कूट कर लेवे फिर बड़े २ आवले ५०० लेवे इन सब को
 बड़े भारी पात्र में भरके १ द्रोण जल में औटावे जब आठवां हिस्सा जल शेष
 राखे तब उन आठवां को उतार लेवे और मोटे गाटे कपड़े में उन आवलों को ढारके
 वातकांथ रखे तो उस वस्त्र में से आवलों का सीरा छनके नीचे के पात्र में गिरेगा उक्त
 हेतु अन्तर्गत लेवे. फिर कलई के घासन में २८ तोले घी डाल आगिपर चढाई
 कहते हैं. तथा सीरा डालके मंद २ आगिसे भून लेवे. और फिर पूर्वोक्त आवलों का
 (सप्त) कहते हैं.

जल डालके तथा ५० पल मिश्री डालके पक करे जब अवलेह के माफिक चासनी हो जावे तब इन औषधों का चूर्ण डाले. पीपल ८ तोले, वंशलोचन १६ तोले, दाल-चिनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, प्रत्येक तीन शाण लेवे सब का चूर्ण करके उस चासनीमें डाल देवे और सहत छः पल मिलावे, तौ च्यवनऋषि का कहा हुआ यह अवलेह सिद्ध होवे इसे च्यवनप्राश्य अवलेह कहते हैं इस अवलेह को रोगी का बलाबल देखके देवे तथा उस का आश्रितभी विचार लेना चाहिये तो इस से क्षीणत्व दूर होवे. बाल, वृद्ध और क्षत (घाव) करके जो क्षीण है तथा स्त्रीसंग अन्यन्त करने से जिन की धातु नष्ट हो गई है. तथा जिन मनुष्यों के शोष रोग है. जिन के हृदय का रोग है वां एवं जिन के कंठ का स्वर क्षीण हो गया है वो इतने मनुष्यों को यह अवलेह देनी चाहिये. श्वास, खांसी, प्यास, वातरक्त, उरोग्रह, वात, पित्त-विकार, धातुदोष, तथा मूत्र दोष ये संपूर्ण रोग दूर होवें तथा इस अवलेह के सेवन करने से बुद्धि बढ़ती है. स्मरणशक्ति (याद) ठीक रहे है. तथा स्त्रियों से मैथुन करने की इच्छा बढ़ती है. शरीर की कांति और शरीर का वर्ण ये उत्तम होते हैं मन प्रसन्न रहता है तथा मनुष्य के सब रोग दूर करे है यह रसायन है ॥

एलाद्यचूर्ण

एलापत्रं नागपुष्पं लवंगा भागस्त्वेपां द्वौ च खजूरकस्य ।

द्राक्षायष्टीशर्करापिप्पलीनां चत्वार्यैतत्क्षौद्रयुक्तं क्षये स्यात् ॥

अर्थ—इलायची, पत्रज, नागकेशर और लौंग इन को एक २ भाग ले, खजूर दो भाग लेवे, मुनका दाख, मुलहठी, मिश्री और पीपल इन को चार भाग लेवे सब का एकत्र चूर्ण कर सहत के साथ खाने को देवे. यह चूर्ण क्षयरोगपर उत्तम है ॥

अश्वगंधाचूर्ण

अश्वगंधा दशपलं तदर्धं नागरान्वितम् । तदर्धकणसंयुक्तं मरीचं च चतुर्थकम् ॥ चातुर्जातं वरांगं च भार्गी तालीसपत्रकम् । कचोराजाजिकैटयं मांसीकं कोलमुस्तकम् ॥ रास्त्रा कटुकरोहिण्याजीवंती कुष्ठकं तथा । प्रायः कर्पमितं चूर्णं चूर्णेन समशर्करा ॥ प्रातःकाले त्विदं चूर्णं जलेनोष्णेन सेवयेत् । वातुक्षियं तक्षये चैव अजागोघृतसंयुतम् ॥ श्लेष्मक्षये क्षौद्रयुक्तं तथाष्ठातेन मेहजित् । शिरोभ्रमणपित्तातं गो

क्षतक्षीणं च देहं च विशेषबलवर्द्धनम् । मेदोदरं च मंदाग्निं
कुक्षिशूलोदरापहम् ॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगहरं परम् ॥

अर्थ—असंगंध ४० तोले, सोंठ २० तोले, पीपल १० तोले, काली मिरच ४ तोले तथा चातुर्जात, दालचीनी, भारंगी, पत्रज, कचूर, जीरा, अजमायन, कायफल, जटामांसी, कंकोल, नागरमोथा, रास्ना, कुटकी, जीवंती, कूठ ये संपूर्ण औषधी एक-एक तोला लेकर चूर्ण करे तथा सब चूर्ण की बराबर मिश्री मिलावे। इस चूर्ण को प्रातःकाल गरम जल के साथ देवे तथा वातक्षय, पित्तक्षय, इन पर बकरी का अथवा गौ के घी के साथ देवे तथा कफक्षय पर सहत के साथ देवे प्रमेह में लोनी (मक्खन) के साथ शिरोभ्रमण (मस्तक के घूमने) पर तथा पित्तव्याधि इन पर गोखरू के साथ देवे यह विशेष करके क्षतक्षीण तथा क्षीणदेह इन के बल की वृद्धि करे है तथा मेद, उदर, मंदाग्नि, कुक्षिशूल, जलंवर इन का तथा सर्व रोगों का नाश करे ॥

द्राक्षादिचूर्ण

द्राक्षालाजसितोपलं समधुकं खर्जूरगोपीतुगा ह्रीवेरामलकाब्द-
चंदननतं कंकोलजातीफलम् । चातुर्जातकणा सधान्यकमिदं
चूर्णं समं शर्करा प्रातर्भक्षितमात्मकेन विधिना पित्तं सदाहं)
जयेत् ॥ मूर्च्छाछर्दिमरोचकं च शमयेत्कायस्य कांतिप्रदं पांडू-
कामिलरक्तपित्तमुदरं दाहज्वरारोचकम् । यक्ष्माणं रुधिरप्रमेह-
हरणं तद्योनिदोषापहं रक्ताशौत्र विवृद्धिविद्रधिहरं द्राक्षादिचू-
र्णोत्तमम् ॥

अर्थ—दाख, खील, मिश्री, मुलहठी, खजूर, सीखन, बंशलोचन, नेत्रवाला आमले, नागरमोथा, चंदन, छज, कंकोल, जायफल, दालचीनी, पत्रज, इलायची नागकेशर, पीपल और धनिया ये सब समान भाग ले इन की बराबर मिश्री मिलावे इस चूर्ण को प्रातःकाल सेवन करने से पित्त, पित्तदाह, मूर्च्छा, वमन और अरुचिइ को शमन करे शरीर की कांति बढ़ावे और पांडुरोग, कामला, रक्तपित्त, उदर, दाह क्षर, अरोचक, खई, रुधिर का विकार, प्रमेह, योनि के दोष, खुनी बवासीर, अं वातकी हेतु अन्तः

कर्पूरादिचूर्ण

कहते हैं. तयो चूर्णं कोलजातीफलदलैः समैः । लवंगमांसीमरिचैः
(क्षय) कहते हैं.

कृष्णाशुंठीविवर्धितैः ॥ चूर्णं सितासमं हृद्यं सदाहृक्षयकासजि-
त् । वैवर्णपीनसश्वासछादिकंठामयापहम् ॥ प्रयुक्तं चानुपानैर्वा
भेषजद्वेषिणां हितम् ॥

अर्थ—कपूर, दालचीनी, कंकोल, जायफल और पत्रज ये समान भाग लेवे तथा लौंग १, जटामांसी २, काली मिरच ३, पीपल ४, सोंठ ५ भाग इस प्रकार। सब औषध लेकर चूर्ण करे चूर्ण के बराबर मिश्री मिलायके देवे। यह हृदय को हितकारी है तथा दाह, क्षय, खांसी, विवर्णता, पीनस, प्यास, वमन और कंठ के रोग इन पर अनुपान के साथ देवे यह औषध से द्वेष करनेवाले को भी प्रिय लगे है ॥

यवादिचूर्ण

यवगोधूमचूर्णं वा क्षीरसिद्धं घृतसुतम् ।

तत्कृत्वा सर्पिषा क्षौद्रसिताक्तं क्षयशांतये ॥

अर्थ—जव और गेहू इन का चून दूध में पक करके उस में घी सहत और मिश्री मिलायके पीने को देवे तो क्षयरोग की शांति होवे ॥

त्रिकटादिचूर्ण

त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफललवंगकैः । नवभागोन्मितैरैतैः
समं तीक्ष्णं मृतं भवेत् ॥ संचूर्ण्यालोडयेत्क्षौद्रे नित्यं यः सेवते
नरः । कासं श्वासं क्षयं मेहं पांडुरोगं भगंदरम् ॥ ज्वरं मंदानलं
शोथं संमोहं ग्रहणीं जयेत् ॥

अर्थ—त्रिकुटा, त्रिफला, इलायची, जायफल, लौंग, इन का चूर्ण बराबर करके इन सबकी बराबर पोलोद लोह की भस्म लेवे सब को एकत्र कर नित्य प्रति सहत के संग खाय तो श्वास, खांसी, क्षय, प्रमेह, पांडुरोग, भगंदर, ज्वर, मंदाग्नि, सूजन, मोह, संग्रहणी इन का नाश करे ॥

शंखपोटलीरस

रसं गंधं कंबोर्भसितमपि कापर्दभसितं मरीचं भूचंद्रांबुधिर-
ससहस्रांशुलविकम् । रसाग्र्यंशं टंकं सकलमपि चूर्णाकृतमित्यं
क्रमाद्यावन्निष्कं घृतसहितमद्यात्क्षयहरम् ॥

अर्थ—पारा १, गंधक १, शंख की भस्म ४, कौडी की भस्म ६,

प्यासा-

सितोपलादिचूर्ण

सितोपला षोडश स्यादष्टौ स्याद्वंशरोचना । पिप्पली स्याच्च-
तुःकर्पा एला स्याच्च द्विकर्पिका ॥ एककर्पा च त्वग्ग्राह्या चूर्ण-
येत्सर्वमेकतः । सितोपलादिकं चूर्णं मधुसर्पियुतं लिहेत् ॥
कासश्वासक्षयहरं हस्तपादांगदाहजित् । मंदाग्निं सुप्तजिह्वत्वं
पार्श्वशूलमरोचकम् ॥ ज्वरमूर्ध्वगतं रक्तं पित्तमाशु व्यपोहति ॥

अर्थ—मिश्री १६ तोले, बंशलोचन ८ तोले, पीपल ४ तोले, इलायची २ तोले,
और दालचीनी १ तोले इन सब का चूर्ण करे इसे शीतोपलादि चूर्ण कहते हैं इस
को सहत और घी के साथ देवे तो खांसी, श्वास, क्षय और हाथ, पैर, अंग इन का
दाह, मंदाग्नि, जिह्वा का रसअज्ञान, पसली की पीडा, अरुचि, ज्वर, ऊर्ध्वगत
रक्तविकार और पित्त इन को शीघ्र नाश करे ॥

तवराजादिचूर्ण

तवराजकणा द्राक्षा खर्जूरं मधुकं तृटी । लवंगं पत्रकं चैव
नागकेशरनामतः ॥ मधुना भक्षितं हंति चूर्णमेपां हि निश्चि-
तम् । भ्रमं दाहं शिरःपीडां क्षयरोगं न संशयः ॥

अर्थ—मिश्री, पीपल, दास, खजूर, मुलहठी, इलायची, छोटी लोंग, पत्रज
और नागकेशर इन का चूर्ण कर सहत के साथ देय तो यह भ्रम, दाह, मस्तकशूल
और क्षयरोग इन का नाश करे ॥

अद्रुसांयोग

आयुर्वेदा स्याद्बलवन्नराणां सरक्तपित्तश्वसनक्षयीणाम् ।

मधुप्रयुक्ता यशसा प्रतीता वासा तदा किं न करिष्यतीयम् ॥

अर्थ—यदि रोगी की आयु बलवान् होवे तो उस के रक्तपित्त, श्वास, क्षय ये रोग
अद्रुसे के स्वरस वा काठे में सहत डालके पीने से क्या परचा नहीं देवे. अर्थात्
अवश्य अपना परचा देता है ॥

द्राक्षादिचूर्ण

द्राक्षाखर्जूरसर्पिभिः पिप्पल्या च सह स्मृतम् ।

सक्षौद्रं ज्वरकासघ्नं श्वयथुं च प्रयोजयेत् ॥

रा. वातके. हेतु अन्तः कहते हैं. तयोऽग्न, खजूर और पीपल इन के चूर्ण को सहत और घी डालके सेवन करे
(क्षय) कहते हैं. रंभी और सूनन पर देवे तो इन रोगों को नष्ट करे ॥

स्वर्णमाक्षिकादिचूर्ण

मधुताप्यविडंगाश्मजतु लोहं घृतं मतम् ।

हन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं सेव्यमानं हिताग्निः ॥

अर्थ—सुवर्णमाक्षिक, वायविडंग, शिलाजीत, लोह इन का चूर्ण कर इस को घी और सहत में मिलायके देवे तो क्षय और श्वास इन को नाश करे ॥

शिलाजितादिचूर्ण

शिलाजतुमधुव्योपताप्यलोहरजांसि च ।

क्षिरयुगलोहिनः श्वासः क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥

अर्थ—शिलाजीत, सोंठ, मिरच, पीपल, सुवर्णमाक्षिक की भस्म और कांति लोह की भस्म ये दूध, सहत और मिथी इन में मिलायके देवे तो क्षय तथा श्वास इन का नाश होय ॥

लाक्षाकूष्मांडरस

कूष्मांडकगिरोत्थेन रसेन परिपेपितम् ।

लाक्षाकर्पद्रव्यं पीत्वा जयेद्रक्तक्षयं तथा ॥

अर्थ—कुहड़ा (पेठे) के गूदे के रस में दो तोले लाख का चूर्ण डालके पीवे तो रक्तक्षय का नाश होवे. परंतु पेठा पका हुआ लेवे ॥

मार्कवादिचूर्ण

द्वे पले मार्कवं धात्री माक्षिकं सपुनर्नवा । तुगा स्पृक्का शालि-

पर्णी वासकं सदुरालभम् ॥ चूर्णार्धेन समं योज्यं त्रिगंधं मरि-

चानि च । तालीसं मगधा चैव तदर्धेन शिलोद्भवम् ॥

शिलाभेदं तदर्धेन सर्वं चैकत्र मिश्रयेत् । समेन तिलचूर्णेन

शर्करा च समाहृता ॥ भक्षयित्वा पयःपानं शस्यते घृतसंयु-

तम् । तेन क्षयो राजयक्ष्मा कामला च विनश्यति ॥ अर्शा-

श्मरीं जयत्याशु बलवीर्याधिको भवेत् । शाम्यन्ति च महारोगाः

शुक्राढ्यो जायते नरः ॥

अर्थ—भांगरा, आवले, स्वर्णमाक्षिक, पुनर्नवा, वंशलोचन, लजालु कंदुवाष्टा-
अहसा और धमासा ये समान भाग लेवे इन सब से . ११७५

यची, काली मिरच, तालीसपत्र, पीपर लेवे तथा इन से आधा शिलाजीत, पाषाणभेद और सब चूर्ण के बराबर तिलों का चूर्ण और खांड ले सब को एकत्र कर चूर्ण करे इसको भक्षण करे ऊपर से घी डालके दूध पीवे तो क्षय, राजयदमा, कामला, बवासीर, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और अष्ट महारोग इन को नाश करे तथा रोगी को बल आनकर धातु पुष्ट होवे ॥

बलादिचूर्ण

बला विदारी लघुपंचमूली पंचैव क्षीरावृतत्वक् प्रयोज्या ।
पुनर्नवा मेघतुगा च भृंगः संजीवनीयैर्मधुकैः समांशैः ॥ अक्षप्रमा-
णानि च मानिकानि सर्वाणि चैतानि विचूर्णयित्वा । विमिश्रयेत्त-
क्रकणाशतानि पंचाशगोधूमयवाश्च पिष्ट्वा ॥ तुगासमांशं सि-
ततंदुलानां पिष्टं सशृंगाटकमिश्रितं तु । प्राक् चूर्णं काथेन
वियोजनीयं सर्वांशकेनाप्यथ वा प्रयोज्यम् ॥ विभावयेचामल-
कारिसेन वारत्रयं गोपयसा विभाव्यम् । ततोस्य सर्वैः समश-
र्करा वा घृतेन चैवं पुनरेव भाव्यम् ॥ तद्भक्षयेत्क्षौद्रयुतं पलाई
जीर्णं च भोज्यं कटुकाम्लवर्ज्यम् । क्षीरं घृतं वा सितशर्करं वा
यवान्नगोधूमकशालिमद्यान् ॥ ज्ञात्वाग्निपाकं जठरे नरस्य देयो
विधिज्ञैः क्षयरोगशांत्यै ॥

अर्थ—बला, विदारीकंद, लघुपंचमूल, बड, गूलर, पीपलटृक्ष, पाईर, नांदरुत इन की छाल, पुनर्नवा, नागरमोथा, वंशलोचन, भांगरा और जीवनीपगण, मुलहटी, ये सब समान भाग लेकर चूर्ण करे इस चूर्ण का पांचवां भाग गेहूँ और जौ का आटा तथा वंशलोचन के समान चावल और सिंघाड़े का चूर्ण लेवे ये सब चूर्ण को एकत्र करके ऊपर कही हुई बला से लेकर मुलहटी पर्यंत वो फिर लेके उन का काटा करके पूर्वोक्त चूर्ण में भावना देवे फिर चूर्ण में बराबर की मिश्री मिलाय लेवे इस में से छः मासे चूर्ण को सहत के साथ देवे जब चार घडी बीत जावे तब चरपरे और सट्टे २०-२५ त्वागकर दूध, घी, खांड, गेहूँ, जौ, चावल और मद्य ये पथ्य में देवे. इस धातके + आग्निबल जानके क्षयरोग का नाश करने के अर्थ देवे तो राजरोग नष्ट होवे ॥

हेतु अन्त

कहते हैं. तथ

(क्षय) कहते हैं. विडंगानि चित्रकं तगरं तिलाः । तालीसं चंदनं शुंठी

जातीफलादिचूर्ण

लवंगमुपकुंचिका ॥ कर्पूरश्वाभया धात्री मरीचं पिप्पली तुगा ।
 एषामक्षसमा भागाश्चातुर्जातकसंयुताः ॥ पलानि सप्त भंगायाः
 सिता सर्वसमा मता । चूर्णमेतत्क्षयं कासं श्वासं च ग्रहणीगदम् ॥
 अरोचकं प्रतिश्यायं तथा चानलमंदताम् । एतान् रोगान् नि-
 हंत्येव वृक्षानिद्राशनिर्यथा ॥

अर्थ—जायफल, वायविडंग, चीते की छाल, तगर, तिल, तालीसपत्र, चंदन, सोंठ, लौंग, इलायची, भीमसेनी कपूर, हरड, आवला, काली मिर्च, पीपल, बंश-
 लोचन तथा चातुर्जात. ये प्रत्येक एक २ तोला लेवे तथा भांग सात तोले ले और
 सब के बराबर मिश्री लेवे इस चूर्ण के खाने से क्षय, खांसी, श्वास, संग्रहणी, अरुचि,
 प्रतिश्याय और मंदाग्नि इन का नाश करे ॥

शिवगुटी

त्रीन्वारान्प्रथमे शिलाजतुजले भाव्यं भवे त्रैफले निःक्वाथे
 दशमूलजेथ तदनु च्छिन्नोद्भवाया रसैः । क्वाथे वालकजे पटो-
 लसलिले यष्टीकपाये पुनर्गोमूत्रेथ पयस्यथापि च गवामेषां
 कपाये ततः ॥ द्राक्षाभीरुविदारिकाद्रयपृथक्पर्णीस्थिरापो-
 प्करैः पाठाकर्कटकोटजाख्यकटुकारास्त्रांबुदालंबुदैः । दंतीचि-
 त्रकचव्यवारुणकणावीराष्टवर्गौपधैरष्टौ चरणस्थिते पलमितै-
 रेभिः पृथक् भावयेत् ॥ धात्रीमेपविशाणिकात्रिकटुकैरेभिः
 पृथक् पंचकैर्द्रव्यैश्च द्विपलोन्मितैरपि पलं चूर्णं विदारीभवम् ।
 तालीसात्कुडवं चतुःपलमिह प्रक्षिप्यते सर्पिपस्तैलस्यार्धपलं
 पलाष्टकमथ क्षौद्रं भिषग्योजयेत् ॥ तुल्यं पलैः षोडशभिः
 शितायास्त्वक्क्षीरिकापत्रककेसरैश्च । विल्वांशकैस्त्वक्वृदि-
 संप्रयुक्तैरित्यक्षमात्रा गुटिका प्रकल्प्या ॥ तासामेकतमां प्रयोज्य
 विधिवत्प्रातः पुमान्भोजनात्प्राग्वा मुद्गदलांबुजांगलरसं शीतं त्रयं
 शृतं वा जलम् । माक्षिकं मदिरामगुर्वशनभुक् पीत्वा पयोः पाष्टा-
 गवां प्राप्नोत्यंग मनोभवः सुभवनं संपन्नमानंदकृत् ॥

ग्रंथिविबंधवेपथुवर्मि पांड्यामयं श्लिपदं श्लिहाशीं प्रदरं प्रमेहपिटिकां मेहाश्मरीं शर्कराम् । हृद्रोगार्बुदवृद्धिविद्रथियकृद्योन्यामयः सानिलश्चौरुस्तंभभगंदरज्वररुजस्तूणी प्रतूणी तथा ॥ वातासृक् प्रबलं प्रवृद्धमुदरं कुष्ठं किलासं कृमीन् कासं श्वाससुरःक्षतक्षयमसृक्पित्तं समानात्ययम् । उन्मादं मदमप्यपस्मृतिमतिस्थौल्यं कृशत्वं तनोः सालस्यं च हलीमकं च शमयेन्मूत्रस्य कृच्छ्राणि च ॥

अर्थ—शोधा शिलार्जात लेकर उस को त्रिफले के कोठे की ३ भावना देवे फिर दशमूल का काढा, गिलोय का रस, नेत्रवाला का काढा, पटोल पत्र का रस, मुलहठी, गोमूत्र, गौ का दूध, दाख, शतावर, विदारीकंद, कोहडा, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, पुहकरमूल, पाठ, कूडे के बीज (इन्द्रजौ), कांकडी, कुटकी, रास्ना, नागरमोथा, खस, दंती, चीते की छाल, चव्य, गजपीपल, भूंयआवला, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीरकाकोली ये औषधी प्रत्येक चार चार तोले लेकर इन के रस की अथवा काठे की पृथक् भावना देवे फिर आवला, मेदासिंगी, सांठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक ८ तोले, विदारीकंद का चूर्ण ४ तोले, तालीसपत्र १६ तोले और घी १५ तोले, तेल २ तोले, सहत ३२ तोले और मिश्री ६०, षंशलोचन, पत्रज, नागकेशर, दालचीनी, छोटी इलायची, ये सब चार २ तोले लेवे सब को एकजीव करके एक २-तोले की गोली बनावे इस को प्रातःकाल में सेवन करे और भोजन करने के प्रथम देवे और पथ्य में मूंग की दाल अथवा मूंग का जल देवे जंगली जीवों का मांसरस औटायके शीतल करा हुआ जल सहत, मद्य, हलके अन्न, तथा गौ का दूध ये पदार्थ देने चाहिये ती कामदेव को प्रबल करे तथा सूजन, गांठ, विह्वबंध, कफ, वांति, पांडुरोग, श्लिपद, श्लिहा, बवासीर, प्रदर, प्रमेह, प्रमेह पिटिका, मूत्राश्मरी, हृदयरोग, अर्बुद, अंडवृद्धि, विद्रथि, यकृत, योनिरोग, वातरोग, ऊरुस्तंभ, भगंदर, ज्वर तथा तूणी और प्रतूनी, वातरक्त, बदा हुआ जलंधर का रोग, कुष्ठ, किलासकुष्ठ, कृमिरोग, खांसी, श्वास, उरःक्षत, क्षय, रक्तपित्त, मद, उन्माद, (वावलापना), अपस्मार (मृगी), अतिस्थूलता, अत्यंत कृशता, आलस्य, हलीमक, पत्रकृच्छ्र, बली (देह में गुजलटोंका पडजाना), पलित (बालों का सपेद हो तिके) इन सब रोगों को यह शिवगुटी दूर करे ॥
तु अन्त
हते हैं. तद्
क्षय) कहते हैं. त्रिफलां निंबं पटोलं धननागरैः । भावितानि दशाहानि

लघुशिवगुटी

रसैर्द्वित्रिगुणानि च ॥ शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ।
त्वक्क्षीरी पिप्पली धात्री कर्कटाख्या पलोन्मिता ॥ निदिग्धी
फलमूलाभ्यां पलं युंज्यात् त्रिजातकात् । मधुत्रिपलसंयुक्ता
कुर्यादक्षसमा गुटी ॥ दाडिमाम्लपयःक्षीररसयूपसुरासवान् ।
तान्भक्षयित्वानुपिवेन्निरन्नो हितभक्ष्यभाक् ॥ पांडुं कुष्ठज्वरप्ली-
हतमकाशोभगंदरम् । नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि मूत्रस्थानविवंध-
नुत् ॥ यद्यत्र मेलितं येन कांतलोहं तथाभ्रकम् । पलं पलं च
मिलितं तदा स्यात्किमतः परम् ॥ तीव्रदुःखप्रदं पांडुं प्रमेहमप-
रिग्रहम् । राजरोगं च व्याधिं च जयेदिति किमद्भुतम् ॥

अर्थ—शुद्ध शिलाजीत बत्तीस तोले को कुडा की छाल, हरड, बहेडा, आवला, नीम, पटोलपत्र, नागरमोथा और सोंठ इन के काटे में एक महीना खरल करे फिर इस में मिश्री ३२ तोले तथा वंशलोचन, पीपल, आंवला, ककोडा ये प्रत्येक चार चार तोले और कटेरी का पंचांग ४ तोले तथा दालचिनी, पत्रज, इलायची और गन्धक २ तोले ले इन को खरल करके दश मासे की गोली खायकर अनारदाना, दूध, खीर, रस, यूप, मद्य अथवा आसव इन में से किसी एक को भक्षण करे. तथा हितकारी भोजन करे तो पांडुरोग, कोड, ज्वर, प्लीहा, तमक, बवासीर, भगंदर, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रसंबंधी रोग तथा मूत्रबंध इन को नाश करे इस गोली में किसी २ वैद्य की आज्ञा है कि इस में कांतलोह और अभ्रक इन की भस्म ये चार २ तोले और मिलावे फिर इस के गुणों का क्या ही कहना है. यह पांडुरोग, सर्व प्रकार के प्रमेह, क्षय और अनेक व्याधियों को नाश करे इस में आश्चर्य ही क्या है ॥

सूर्यप्रभागुटी

दार्वा व्योपविडंगचित्रकवचा पीता करंजामृता देवाह्वातिविषा
त्रिवृत्सकट्टका कुस्तुंबरुः कारवी । द्वौ क्षारौ लवणत्रयं गजकणा
चव्यं तथारुष्करं तालीसं कणमूलपुष्करजटाभूनिंबसंज्ञैर्युतम् ॥

भाङ्गी पद्मकजीरकोशकुटजो दंतीत्वचा भद्रकं सर्व कर्पसमां-
शकं सुभिपजा सूक्ष्मं च संचूर्णितम् । तद्वत्पंचपलं वरा गिरि-
जतु स्यात्पंचमुष्टिः पुरोलोहस्य द्विपलं पलद्वयमथो ता-
२९

पत्रज, इलायची ये प्रत्येक १६ तोले लेवे इन सब का चूर्ण कर उस पूर्वोक्त रसों में मिलाय देवे फिर रई से मंथन करके चार २ तोले के लड्डू करके धर रखे इस में से दोनों वरुत अथवा एक बार इस मोदक को अग्नि का बल विचारके खाने को देवे। इस पर पथ्य उत्तम करे तथा जितेन्द्री और ब्रह्मचर्य से रहे तो यह संग्रहणी, ग्यारह प्रकार की क्षय रोग इन को नष्ट करे और जौ वृद्ध व्याकुल है तथा घातु क्षीण हो गए हैं उन को यह वाजीकरण कर्ता है वंध्याओं को पुत्र देय है और युद्ध (लड़ाई), स्त्रीसंग, मद्य और भार इन से श्रमित पुरुषों को बल बढावे और हृद्रोग, प्लीहा, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, अपतंत्रक, अपस्मार, विष, उन्माद इन को नाश करे यह रसायन है॥

द्राक्षासव

मृद्धीकायास्तुलाद्धं तु द्विद्रोणेपां विपाचयेत् । पादशेषे कपाये च पूते शीते प्रदापयेत् ॥ गुडस्य द्वितुला भाविधातक्या घृतभाजने । विडंगं फलिनी कृष्णा त्वगेलापत्रकेसरम् ॥ मरिचं च भिपक् चूर्णं सम्यक् दत्त्वा विचक्षणः । क्षिपेच्च पलिकैर्भागैः स्थापयेच्चातपे दिने ॥ ततो यथाबलं पीत्वा कासश्वासगलामयात् । हन्ति यक्ष्माणमत्युग्रमुरःसंधानकारकम् ॥ चतुर्थभागो द्राक्षाया धातकीमत्र केचन । प्रयच्छन्ति ततो वीर्यमेतस्योच्चैः प्रजायते ॥

अर्थ—मुनका दास दो सौ तोलेन को चार हजार छियाणव तोले जल में डाल के औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके जल को छान लेवे जब काटे का जल शीतल हो जावे तब गुड आठ सौ तोले डाले और धाय के फूलों का चूर्ण ८०० तोले डालके सब को घी के चिकने वासन में भरके उस में वायविडंग, त्रायमाण पीपल, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर और काली मिरच इन प्रत्येक क चार चार तोले चूर्ण डालके १ दिन धूप में धरा रहने दे फिर मुख बंद करके १ महिने पर्यंत धरा रहने देवे इस को बलाबल विचार करके पीवे तो घोर खाई का रोग, खांसी, श्वास, गलेके रोग, उरःक्षत, इन को दूर करे इस आसव में कोई २ वैश चतुर्थांश धाय के फूल गेरते है कि जिस से आसव अधिक वीर्यवाली हो जावे ॥

खजूरासव

हेतु अर्थात् पंचप्रस्थं समादाय खजूरस्य विचक्षणः । द्रोणांभासि पचेत्स-
कहते हैं- त- कू ततोत्तार्य च गालयेत् ॥ कुंभं सुधूपितं कृत्वा प्रक्षिपेत्तं
(क्षय) कहते है

रसं शुभम् । हृषुपा ताम्रपुष्पी च कपायं तत्र निःक्षिपेत् ॥
द्वारं निरुध्य सुदृढं निक्षिपेद्भसुधातले । सप्तकद्रययोगेन सिद्धो-
यमासवो रसः ॥ रोगराजं तथा शोफं प्रमेहं पांडुकामलाम् ।
ग्रहणीं पंचगुल्मार्शौ नाशयत्यतिवेगतः ॥

अर्थ—खजूर ३२० तोले को २०४८ जल में डालके औंटावे जब चतुर्याश जल रहे तब उतारके छान लेवे फिर एक मिट्टीकी गगरी ले उस को अगरआदि की धूनी देके उस काठे के जल को उस में भर देवे फिर हाऊबेर, धाय के फूल, इन का काटा उस में डालके मुख बंद कर उस गागर को धरती खोदके गाड देवे १४ चौदह दिन के उपरान्त निकाल लेय तो यह खजूरासच तयार होयह क्षय, सूजन, प्रमेह पांडुरोग, कामला, संग्रहणी, पांच प्रकारके गोले का रोग, बवासीर इन सब रोगों का नाश करे ॥

दशमूलसव

दशमूलं तुलाद्धं च पौष्करं च तदर्धकम् । हरीतकीनां प्रस्थाद्धं
धात्री प्रस्थद्वयं तथा ॥ चित्रकं पुष्करमितं चित्रार्धं दुरालभा ।
गुडूच्यादिः शतपलं विशालापलपंचकम् ॥ खदिरस्य पलान्यष्टौ
तदर्धं बीजकं तथा । मंजिष्ठा मधुकं कुष्ठं कपित्थं देवदारु च ॥
विडंगं चविकं लोभ्रं भागं चाष्टकवर्गकम् ॥ कृष्णाजार्जा पिप्पली च
ऋमुकं पद्मकं सठी ॥ प्रियंगुसारिवामांसी रेणुका नागकेसरम् ।
त्रिवृता रजनी रास्ना मेपशृंगी पुनर्नवा ॥ शतावरी चंद्रयवा मुस्ता
द्विपलिकान् जले । चतुर्गुणे पादशोषे द्राक्षापष्टिपलं क्षिपेत् ॥
त्रिंशत्पलानि धातव्या गुडं पलचतुष्टयम् । मधु द्वात्रिंशत्पलं
च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ भांडे पुराणे स्निग्धे वा मांसीमरिचधू-
पित्ते । पृथक् द्विपलिकानेतान् पिप्पली चंदनं जलम् ॥ जाती-
फलं लवंगं च त्वगेलापत्रकेशरान् । कर्पमात्रां च कस्तूरीं
दत्त्वा पक्षं निधापयेत् ॥ कनकद्रुपलं चूर्णं क्षिपेन्निर्मलभावि-
तम् । पक्षादूर्ध्वं पिबेद्यस्तु मात्रया च यथाबलम् ॥ धातुक्षयं
जयत्येव कासं पंचविधं तथा । अर्शांसि पट्प्रकाराणि तथाष्टा-

धात्रीपाक

धात्रीफलानि पक्वानि तीक्ष्णलोहेन वेधयेत् । विश्वावरणपत्रैश्च
 फलानि स्वेदयेद्दृशम् ॥ ततो दुग्धे च संस्वेद्यं जले च तदनंतरम् ।
 मधुमध्ये क्षिपेद्भ्रांटे स्थापयेद्दिनविंशतिः ॥ विनष्टं मधु संत्यज्य
 मधुमध्यं पुनः क्षिपेत् । सिता धात्रीफलान्येव पेपयेत्करिणा
 सह ॥ एला चैव तुगा क्षीरी लोहं वंगं तथैव च । मेलयित्वा
 सुनक्षत्रे प्रातः कर्पमितं भजेत् ॥ वलेक्षीणे क्षये चैव पथ्यं
 मधुरमाचरेत् । प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रं च नाशयेत्तत्क्षणादपि ॥
 वीर्यवृद्धिकरं चैव वाजीकरणमुत्तमम् । कुष्ठं पित्तप्रकोपं च
 नाशयेन्नान्न संशयः ॥ एतेन्ये पित्तजा रोगाः शोणिताद्यास्त-
 थैव च । ते सर्वे प्रशमं यांति धात्रीपाकस्य सेवनात् ॥

अर्थ—मोटे २ और पके हुए आवले लेके उन को कांटे से खूब गोद लेवे फिर
 अदरक के पत्ते जल में डालके और आवले डालके औटावे जब सीज जावे तब
 निकालके फिर दूध में औटावे फिर स्वच्छ जलमें औटावके सहत से भरे हुए वासन
 में गेर देवे और बीस दिन पर्यंत धरे रहने दे फिर उस खराब सहत को निकाल
 नवीन ताजा सहत भरे तथा मिश्री, आवले, गजपीपर, इलायची, वंशलोचन, लोह-
 भस्म, वंग भस्म, ये सब डाल के शुभदिन में प्रातःकाल १ तोले बलक्षय और रोग
 इन पर देवे तथा मधुर पदार्थ पथ्य में देवे तो प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, कोढ़, पित्तका कोप,
 पित्तजन्य सर्व रोग और रुधिरविकार ये नष्ट होवे तथा वीर्यवृद्धि करके उत्तम
 वाजीकरण करे है ॥

श्वेतीपाक

श्वेतपुष्पसहस्रं तु घृतप्रस्थे विपाचयेत् । घृते पक्वीकृते तत्र
 निःक्षिपेदौषधं भिषक् ॥ सितोपलाचतुष्कं च चातुर्जातं पलं
 पलम् । मृद्धीका पट्टपलं चैव क्षिप्त्वा मधु पलायकम् ॥ धारा-
 सत्त्वं तवक्षीरं श्वेतजीरं पृथक् पृथक् । नागं वंगं पलायकं च
 सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ कर्पूरं बलमात्रं च दत्त्वा स्थाप्य सुकुंभके ।

भक्षयेन्निष्कमात्रं तु प्रातरेव हि पथ्यभुक् ॥ जीर्णज्वरे क्षये कासे
अग्निमांद्ये प्रमेहके । दिनरात्रिज्वरे चैव शिरोरोगे प्रशस्यते ॥
प्रदरं रक्तजान् रोगान् कुप्टाशांसि च नाशयेत् । नेत्ररोगान्सु-
दुष्टांश्च तथा सर्वान्मुखे स्थितान् ॥ नाशयेन्नात्र संदेहो मंडलस्य
च सेवनात् ॥

अर्थ—सपेद सेवती के फूल १००० ले इन को ६४ तोले घी में पचावे फिर
श्री २५६ तोले, चातुर्जात १६ तोले, दाख २४ तोले, सहत ३२ तोले, गिलोय
त्व, तवाखीर, सपेद जीरा, नागेश्वर, बंग ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे इस प्रमाण से
च को एकत्र कर तीन रत्ती भीमसेनी कपूर इस में और मिलावे इस को अमृतवान्
ादि में अथवा चीनीके चरतन में भरके घर दे. इस में से छः मासे नित्य सेवन
रे. और पथ्य से रहे तो जीर्णज्वर, क्षय, खांसी, मदाग्नि, प्रमेह, दिन का ज्वर,
त्रिज्वर, मस्तकरोग, रक्तप्रदर, रक्तजन्य रोग, कोठ, चवासीर, नेत्ररोग, तथा मुख
ग, इन को नाश करे ॥

महाकनकसुंदररस

रसगंधकनागाश्च रसको माक्षिकाभ्रके । कांतविद्रुममुक्तानां वंग-
भस्म च तालकम् ॥ भस्म कृत्वा प्रयत्नेन प्रत्येकं कर्षसंमि-
तम् । सर्वतुल्यं शुद्धहेमभस्म कृत्वा प्रयोजयेत् ॥ मर्दयेत्त्रिदिनं
सर्वं हंसपादीरसैर्भिषक् । ततो वै गोलकान्कृत्वा काचकुप्यां विनिः-
क्षिपेत् ॥ रुध्वा तत्काचकूप्यां च सप्तवस्त्रेण वेष्टितम् । ततो वै
सिकतायंत्रे त्रिदिनं चोक्तवह्निना ॥ पश्चात्त्वं स्वांगशीतं च मर्दं
पूर्वोदिते रसे । विनिःक्षिप्य करंडेथ संपूज्य रसराजकम् ॥ महा-
कनकसिंदूरो राजयक्ष्महरः परः । पांडुरोगं श्वासकासकामला-
ग्रहणीगदान् ॥ कृमिशोफोदरावर्तगुल्ममेहगुदांकुरान् । मंदाग्नि-
च्छर्दिमरुचिमामशूलहलीमकान् ॥ ज्वरान्दंद्वादिकान्सर्वान्सन्नि-
पातांस्त्रयोदश । पैत्तरोगमपस्मारं वातरोगान्विनिःक्षिपेत् ॥
रक्तपित्तप्रमेहांश्च स्त्रीणां रक्तक्षुतिं तथा । विंशतिश्लेष्मरोगांश्च

अर्थ—शंखकी नाभी ८ तोले ले बारीक चूर्ण करके उसकी मूस बनावे उसमें पारे की भस्म भरके ऊपर से १॥ तोले गंधक का चूर्ण डाल देवे फिर इस मूसा के मुखको बंद कर ऊपर से ७ कपड मिट्टी करे. इसको धूप में सुखाय के गजपुट में रख के फूंक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल मूसा समेत को खरल में डालके पीस डाले और उत्तम शीशी में भर के धर देवे यह शंखगर्भपोटली रस एक रत्ती देवे और पथ्य मृगांकरस के समान करे तो क्षय और वातपित्त इन का नाश करे ॥

हेमगर्भरस

रसभस्म द्विनिष्कं तु निष्कैकं स्वर्णभस्मकम् । शुद्धगंधक द्वौ निष्कौ मर्दयेच्चित्रकद्रवैः ॥ द्विशामांते विशोष्याथ तेन पूर्य वराटिका । गोक्षरैष्टंकणं पिष्ट्वा तेन रोध्य वराटिका ॥ वराटी मृन्मये भांडे रुध्वा गजपुटे पचेत् । स्वांगशीतो विचूर्ण्यथ पोटलीहेमगर्भकः ॥ मृगांकवच्चतुर्गुजा भक्षितो राजयक्ष्मनुत् ॥

अर्थ—पारद की भस्म १ तोले, सुवर्ण की भस्म छः मासे, शुद्ध गंधक १ तोले इन सब को एकत्र करके चीते के रस में दो प्रहर खरल करे फिर इसको सुखाय कौडियों में भरे और गौ के दूध में सुहागा घोटके उन कौडियों के मुखको बंद करे और उन कौडियों को मिट्टी के वासन में बंद कर टक देवे गजपुट में फूंक देवे जब स्वयं शीतल हो जावे तब निकाल खरल में बारीक चूर्ण कर धर रखे इसका नाम हिरण्यगर्भपोटलीरस है यह चार रत्ती अनुपान के साथ देवे तथा पथ्य और अनुपान मृगांकरस के समान करने चाहिये ॥

नागेश्वररस.

मृतसूतं मृतं नागं गंधकं तूथतंकणम् । प्रत्येकं कर्पनिष्कं स्यान्मृतशुल्वं द्विनिष्कम् ॥ शंखचूर्णं द्विनिष्कं स्यान्नवनिष्कं वराटिका । पूरयेत् पूर्ववच्चूर्णं पुटयेल्लोकनाथवत् ॥ ततश्चार्कदलद्रावैर्मर्दं रुध्वा पुटे पचेत् । आदाय चूर्णयेत् श्लक्ष्णं तुल्यांशैर्मरिचैर्युतम् ॥ चूर्णाच्चतुर्गुणं गंधमेकीकृत्य विचूर्णयेत् । पंचमापघृतैर्लेह्यमसाध्यराजयक्ष्मजित् ॥ शोफोदराशौग्रहणीज्वरं गुल्मं च नाशयेत् ॥

अर्थ—पारे की भस्म, शीशे की भस्म, गंधक, लीलाथोया और सुहागा ये प्रत्येक डेढ़ तोले लेवे. तामे की भस्म और शंख की भस्मये एक २ तोले ले पीली कौडि १॥ तोले

पारे आदि की भस्म को इन कौडियों में पूर्व प्रकार से भरे और लोकनाथ रस के समान पुट देवे. फिर आक के पत्तों के रस में खरल कर गजपुट में रखके फूक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल बराबर की मिरच मिलाय बारीक खरल करे फिर इस में चौगुनी गंधक मिलावे तो यह नागेश्वर रस तयार होवे इस को पांच मासे लेकर घी के साथ देवे तो असाध्य क्षयरोग, सूजन, उदर, बवासीर, संग्रहणी, ज्वर, और गोले का रोग इन को नाश करे ॥

कालांतकरस

कुर्याल्लोहमयीं मूपासुन्नतां द्वादशांगुलाम् । मर्दितं स्वर्णवाराहिय-
हकन्यारसै रसम् ॥ लज्जुनैर्याममात्रं च पिंडीकृत्वा निवेशयेत् ।
कृत्वा पूर्वोक्तमूपायां सूतपादं च गंधकम् ॥ निर्गुडीरससंपिष्टं
तन्मूपायां विनिःक्षिपेत् । आच्छाद्य लोहचक्रेण रुद्रयंत्रेण जार-
येत् ॥ एवमष्टगुणे जीर्णे समुद्धृत्य विचूर्णयेत् । पंचगुंजामितं
खादेदनुपानं मृगांकवत् ॥ अयं कालांतको नाम रसोयं रा-
जयक्ष्मजित् ॥

अर्थ—बारह अंगुली ऊंची लोहे की मूस बनावे उस में धतूरा, बाराहीकंद, घीगुवार और लहसन इन प्रत्येक में एक एक ग्रहण घुटे हुए पारे का गोला करके उस पूर्वोक्त मूसा में चतुर्दश गंधक निर्गुडी के रस में खरल करके उस मूसा में डालके उस पर उस पारे को रखे. ऊपर से गंधक देकर लोहे के पत्र उस मूस के मुख पर देकर उस को रुद्रयंत्र में पचावे इस प्रकार अष्ट गुण गंधक जारन करे फिर रस को नि-कालके घोट डाले फिर इस को मृगांक के समान अनुपान के साथ पांच रत्ती देवे यह कालांतकरस क्षय का नाश करे है ॥

चंद्रायतनरस

शुद्धसूतसमं गंधं सूततुल्यं च सैधवम् । शमीश्वेतदलाद्रावैर्म-
र्दितं गोलकीकृतम् ॥ नागवल्लीदलव्योषैः पाच्यं पाचनयंत्रके ।
दिनाति ऊर्ध्वलग्नं तु ग्राह्यं भक्ष्यं त्रिगुंजकम् ॥ पर्णखंडेन सं-
युक्तं मापैकं राजयक्ष्मजित् । रसश्चंद्रायतो नाम ह्यनुपानं
मृगांकवत् ॥

अर्थ—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, और सैधानिमक ये समान भाग लेवे. इन को सपेद शमीके पत्तों के रस में घोट गोला बनाय ले उस को सोंठ, मिरच, पीपल,

तथा नागरवेल पान इन के साथ डमरूपत्र में भरके एक दिन चूल्हे पर रखके नीचे आग्नि देवे सांयकाल को उस डमरूपत्र में से ऊपर लगे हुए पारे निकाल ले इस को तीन रत्ती पान में रख के १ महिनेतक खाने को देय इस रस का भी अनुपान और पथ्य मृगांक रस के समान है ॥

प्राणनाथरस

लोहभस्म पलैकं तु द्विपलं भृंगजद्रवैः । वराभांगीभवं द्रावं
पलैकैकं नियोजयेत् ॥ पलैकं त्रैफले काथे सर्वं भर्ज्य च
खर्परे । लोहांशं माक्षिकं शुद्धं मर्द्यं पूर्वोदितैर्द्रवैः ॥ रुद्धा त्रि-
भिः पुटैः पाच्य द्रवैर्मर्द्यं पुनः पुनः । मृतं सूतं मृतं वंगं नि-
ष्कं निष्कं विमिश्रयेत् ॥ द्वौ निष्कौ शुद्धगंधस्य चतुर्निष्का
वराटिका । एकीकृत्य पुटे पाच्यं पूर्वं लोहविमिश्रितम् ॥ पूर्वोक्तै-
स्तु द्रवैर्मर्द्यं पुटेनैकेन पाचयेत् । चूर्णयेन्मरिचं सप्त तूत्थटंक-
णयोर्दश ॥ मेलयेच्च पृथक् निष्कं प्राणनाथाह्वयो रसः ।
भक्षयेन्निष्कपादारधमसाध्यराजयक्ष्मनुत् ॥ शोफोदराशोग्रहणी-
ज्वरगुल्महरं तथा ॥

अर्थ—लोहभस्म ४ तोले लेवें. उस को ८ भांगरे के रस में सरल करे. फिर गिलोय और भारंगी इन का काढा तथा त्रिफले का काढा ४-४ तोले ले सब को एकत्र कर आग्नि पर रख खिपडे में भून तथा जितना लोहा हो उतनी शुद्ध माक्षिक भस्म डाल पूर्वोक्त रसों से घुटावें और पुट देवें इस प्रकार तीन पुट देवें. फिर पारे की भस्म और तामे की भस्म प्रत्येक ६-६ मासे शुद्ध गंधक १ तोले, पीली कौडी ४ तोले उन को एकत्र कर उन को पुट देकर उन्हें उस लोह में मिलावें फिर पूर्वोक्त रसों की भावना देकर फिर १ पुट देवें पश्चात् निकालके इस में ३॥ तोले काली मिरच, लीलायोया और सुहागा ५-५ तोले लेकर मिलावें तो यह प्राणनाथरस तयार हो इस में से ६ रत्ती की मात्रा देवें तो असाध्य क्षय, सूजन, उदर, चवासीर संग्रहणी, ज्वर, और गोला इन को नाश करें ।

सुवर्णपर्पटीरस

शुद्धं सुवर्णदलमष्टगुणेन शुद्धसूतेन पिंडितमयोवसुभागभा-
जम् । गंधे द्रुते दरदवन्हितुलोहपात्रे दत्त्वा विलोच्च लघुलो-

शलाकया तत् ॥ मंदं निरस्य सुरभीमलमंडलस्थं रंभादले
तदुपरि प्रणिधाय चान्यत् । रंभादलं लघु नियंय तदाददीत
शीतं सुवर्णरसपर्पटिकाभिधानम् ॥ पित्तोल्बणे ससितया तुग-
याथ वातश्लेष्मोल्बणे किल तुगामधुपिप्पलीभिः । क्षीणे विरेकि-
णिच शोपिणि मंदवह्नौ पांडौ प्रमेहिणि चिरज्वरिणि ग्रहण्याम् ॥
वृद्धे शिशौ सुखिनि राज्ञि तदेवमार्यं भैषज्यमेतदुदितं
हितमामयघ्नम् ॥

अर्थ—सोने के बर्क १ भाग, शुद्ध पारा ८ भाग, और लोहभस्म ८ भाग, इन
को एकत्र खरल कर लोहे के पात्र में गंधक को ताय उस में हिंगुल १ और
वेत्रक १ भाग इन के साथ पूर्वोक्त औषधी मिलाय कछी की डांडी से १ मेल करे
कर पृथ्वी में गोबर का चौका दे उसे केले के पत्ते बिछाय उस पर उस कजली की
चासनी को उलट देवे और तत्काल दूसरे केले के पत्ते से ढक गोबर से दाब दें जब
गीतल हो जावे तब निकाल ले इस को सुवर्णपर्पटी कहत हैं यह पित्तादिक व्याधी
र वंशलोचन और मिश्री इन से तथा वात श्लेष्मादिक व्याधी पर वंशलोचन, सहत
पौर पापल इन से खाय और यह क्षीणत्व, दस्त होनेपर, क्षय पर, मंदाग्नि पाण्डु-
ोग, प्रमेह, संग्रहणी, वृद्ध, बालक, और राजा इन को देने योग्य यह संपूर्ण रोगो-
ना नाश करे है ॥

प्राणदापर्पटी

सूताभ्रायोहिंवंगोपणविपमखिलांशेन गंधेन कृत्वा कोलाग्रौ
विद्रुतेन क्षणममलमिदं ढालितं गोमयस्थे । रंभापत्रेमुनान्येनच
दृढपिहितं प्राणदा पर्पटी स्यात्पांडौ रेके ग्रहण्यां ज्वररुजि
कसने यक्ष्ममेहाग्निमाद्ये ॥ प्राणदा पर्पटी सैषा भापिता शंभु-
ना स्वयम् ॥ तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगविनाशिनी ॥

अर्थ—पारा, अभ्रक, लोह, वंग, मिरच, और सिंगिया विष यह सम भाग तथा
उस के बराबर गंधक लेकर लोहे के पात्र में वेर की अग्नि पर पतली करके उस में
तब औषधी डालके गोबर के चौके में केले के पत्ते बिछाय दें और उस पर उस
कजली की चासनी को उडेल देवे और तत्काल दूसरे पत्ते से ढकके दाब देवे जब
गीतल हो जावे तब निकाल ले इस औषधी को प्राणदापर्पटी कहते हैं यह पां-

डुरोग, अतिसार, संग्रहणी, ज्वर, अरुचि, कास, क्षय, प्रमेह, तथा मंदाग्नि इन पर देवे यह प्राणदापर्पटी महादेवजी ने स्वयं अपने मुख से कही है यह योग्य अनुपान के साथ देने से संपूर्ण रोगों का नाश करे ॥

कुमुदेश्वररस

पारदं शोधितं गंधमभ्रकं च समं समम् । तदूर्ध्वं दरदं दद्यात्तदूर्ध्वं
च मनःशिलाम् ॥ सर्वार्धं मृतलोहं च खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
द्विः सप्त भावना देया शतावर्या रसेन च ॥ ततः सिद्धो भवत्येष
कुमुदेश्वरसंज्ञकः । सितया मरिचेनाथ गुंजाद्वित्रिप्रमाणतः ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय पूजयित्वेष्टदेवताः । यक्ष्माणमुग्रं हंत्येव
वातपित्तकफामयान् ॥ ज्वरादीनखिलान् रोगान् यथा दैत्यान्
जनार्दनः । सतताभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनः ॥

अर्थ—शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, तथा अभ्रकभस्म, ये समान भाग इन से आधा हिंगुल तथा इस से आधी मनशील तथा सब औषधों से आधा मृत लोह इन सब को खरल में डालके सतावरी के रस की १४ भावना देवे तो यह कुमुदेश्वररस सिद्ध होय इस को मिश्री और काली मिरच इन के साथ दो अथवा तीन रत्ती प्रातः काल इष्टदेव का पूजन करके सेवन करे तो उग्रक्षय, वातपित्तरोग और ज्वरादि सब रोगों का नाश करे जैसे विष्णु दैत्यों को नष्ट करे है उसी प्रकार यह सब रोगों को नष्ट करे इस रस को निरंतर सेवन करने से वली (गुजलट) और पलित (सपेद बाल) इन को नष्ट करे ॥

पंचामृताख्यरस

भस्मीभूतसुवर्णतारदिनकृत्सूताभ्रसत्त्वैः क्रमात्संबृद्धैस्त्रितयं
त्रयः कृमिहरांभोदैर्युतः कट्फलैः । निर्गुंडीदशमूलवन्धिरजनी-
व्योपार्द्रकैर्भाविता गोलं कृत्य विशेषतो निगदितः पंचामृताख्यो
रसः ॥ नानेन सदृशः कोपि रसोस्ति भुवनत्रये । निहंति सकलान्
रोगान् भवरोगमिवाच्युतः ॥ सर्वरोगहरः सूतस्तत्तद्रोगानुपा-
नतः । अयं पंचामृतो नृणां त्रिदशानामिवामृतम् ॥

अर्थ—सुवर्ण भस्म, रौप्य भस्म, तामे की भस्म, पारे की भस्म, अभ्रक सब से प्रत्येक शृद्धि के क्रम से लेवे. तथा वायविडंग, नागरमोथा, कायफल, ये तीन

भाग लेवे सब को एकत्र कर निगुंडी, दशमूल, चित्रक, हलदी, त्रिकुटा और अदरक इन के रस की भावना देकर गोली बांध लेवे तो यह पंचामृताख्यरस होवे. इस रस के समान त्रिलोकी में दूसरा रस नहीं है यह संपूर्ण रोगों को नाश करे. जैसे विष्णु जन्म मरण का नाश करे है उसी प्रकार यह संपूर्ण रोगों को योग्य अनुपान करके नाश करे है. यह पंचामृत रस मनुष्य को अमृत के प्रमाण है ॥

स्वयमाग्निरस

शुद्धसूतं द्विधा गंधं कुर्मात् खल्वेन कजली । तयोः समं ती-
क्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ द्वियामांति कृतं गोलं ताम्रपात्रे
विनिःक्षिपेत् । आच्छाद्यैरंडपत्रेण यामार्धेत्युष्णतां भवेत् ॥ घा-
न्यराशौ न्यसेत्पश्चाद्द्वारात्रात्समुद्धरेत् । संचूर्ण्य गालयेद्ब्रह्मे
सत्यं वारितरं भवेत् ॥ भावयेत्कन्यकाद्रवैः सप्तधा भृंगजैस्तथा ।
काकमाचीकुरंतोत्थद्रवैर्मुंड्या पुनर्नवैः ॥ सहदेव्यमृतानिल्या निर्गु-
ड्याश्चित्रजैस्तथा ॥ सप्तधा तु पृथक्द्रवैर्भाव्यं शोष्यं तथातपे ॥
सिद्धयोगो ह्ययं ख्यातः सिद्धानां च मुखागतः । अनुभूतो मया
सत्यं सर्वरोगगणापहः ॥ स्वर्णादीन्मारयेद्देवं चूर्णाकृत्य तु
लोहवत् । त्रिफलामधुसंयुक्तः सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ त्रिकटुत्रि-
फलैलाभिर्जातीफललवंगकैः । नवभागोन्मितैरैतैः समः पूर्वरसो
भवेत् ॥ संचूर्ण्य लोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यं निष्कद्रयं द्वये । स्वयम-
ग्निरसो नाम्ना क्षयकासनिवृत्तनः ॥

अर्थ—शुद्ध पारा १ भाग, गंधक २ भाग, दोनों को एकत्र खरलकर कजली करें इस में समान भाग खेरी लोह की भस्म डाले फिर धीगुवार के रस से २ ग्रहं खरल कर गोला बनावे. इस को तामे के पात्र में रखकर चारों तरफ अंडीके पत्ते ढककर चार घड़ी पर्यंत धूप में रहने दे तो ये गोला अत्यंत उष्ण हो जावेगा इसको धान की रास में गाढ़ देवे १ दिन रात के उपरान्त निकाल ले तो इस की भस्म होय उसको खरल कर कपडेमें छान ले. इस को पानी में डालने से निश्चय करके तर-ने लगे इस में संदेह नहीं फिर इस भस्म को खरलमें डालके जिन २ वनस्पतियों की छुट देना चाहिये वो इस प्रकार जाननी धीगुवार के रस में खरल कर धूप में सुखाय लें सूखने पर फिर उसी के रस में खरल कर धूप में सुखावे इस प्रकार सात पुट धीगुवार के देवे फिर उसी प्रकार भांगरे के रस की, मकोय के रस की,

पीयावांसे के रस की, और मुंडी के रस की और पुनर्नवा के रस की तथा सहदेई, गिलोय, मीठ, निगुंडी और चित्रक इन के रस की पृथक् २ सात २ पुट देवे तो ये रसायन सिद्ध हो इसे स्वयमग्निरस कहते हैं. यह रस विख्यात है ये बडे २ सिद्ध पुरुषों ने कहा है इसी वास्ते मैंने अनुभव करके कहा है यह स्वयमग्निरस संपूर्ण रोग दूर करने के वास्ते त्रिफले के चूर्ण और सहत इस अनुपात से दो निष्क प्रमाण खाय तो संपूर्ण रोग दूर होय. सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्ष, बहेडा, आंवला, इलायची, जायफल, लौंग ये नव औषध समान भाग ले चूर्ण करे इस चूर्ण के बराबर यह स्वयमग्निरस ले दोनों को एकत्र कर २ निष्क प्रमाण खाने को दे तो क्षय रोग और खांसी का रोग ये दूर होंय तथा रसायन की रीत से सुवर्णादिक धातुओं का चूर्ण कर के भस्म करे तो होय ॥

राजमृगांक

रसभस्म त्रिभागं स्याद्भागैकं हेमभस्मकम् । मृतताम्रस्य भागैकं शिलागंधकतालकम् ॥ प्रतिभागद्रयं शुद्धमेकीकृत्वावचूर्णयेत् । वराटान्पूरयेत्तेन चाजाक्षीरेण टंकणम् ॥ पिष्ट्वा तेन मुखं रुध्वा मृद्गांडे सन्निधापयेत् । शुष्कं गजपुटे पाच्यं चूर्णयेत्स्वांगशीतलम् ॥ रसो राजमृगांकोयं चतुर्गुणः क्षयापहः । एकोनत्रिंशन्मरिचैर्घृतेन सह भक्षयेत् ॥ दशानां पिप्पलीनां च चूर्णं दत्त्वा प्रदापयेत् । क्षये कासे ज्वरे पांडौ ग्रहण्यां चातिसारके ॥

अर्थ—पारद भस्म ३ भाग, सुवर्ण भस्म १, ताम्र भस्म १ भाग, और मनसिल, गंधक, हरताल ये प्रत्येक दो दो भाग लेवे सबको एकत्र सरल कर कौडियों में भरके बकरी के दूध में सुहागा पीस उन कौडियों को मुख को मूंद देवे फिर धूप में सुखाय संपुट में भरके उस का मुख बंद कर देवे फिर उस को गजपुट में धरके फूक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब इस को सरल करके धर रखे इसे राजमृगांक कहते हैं. २९ मिरचों का चूर्ण कर अथवा १० पीपल का चूर्ण और घी इन में मिलायके चार री के प्रमाण देवे तो क्षय, खांसी, ज्वर, पांडु, संग्रहणी, और आतिसार इन को नश करे ॥

दूसराप्रकार

रसेन तुल्यं धनकं तयोस्तु साम्येन युज्यान्नवमौक्तिकानि । रसप्रमाणो वरिष्ठत्रिभागः क्षारश्च सर्वं तुपवारिणा तु ॥ समर्थ

वस्त्रे तु विधाय गोलं दिनं पचेत्तं लवणेन पूर्णं । भांडे मृगांको-
यमतिप्रगल्भः क्षयाग्निमांद्यग्रहणीगदेषु ॥ साज्योपणाभिर्मधुपि-
प्पलीभिर्वल्लोस्य देयो न ततोधिकस्तु । पथ्यं हितं शीतलमेव
योज्यं त्याज्यं सदा पित्तकरं विदाहि ॥

अर्थ—पारा, सुवर्ण इन दोनों की बराबर मोती और पारे के समान गंधक खपरिया ३ भाग ले इस प्रकार सब को लेकर धान के तुपाम्ल के कोठे से खरल करे वस्त्र में उस गोले को बांधके एक सराव लेवे प्रथम आधा निमकसे भर बीच में इस को धरके ऊपर से फिर इस को निमक से भर देवे और उस का मुख बंद कर गजपुट धरके फूक देवे तो यह मृगांक अत्यन्त उत्कृष्ट बने यह क्षय, मंदाग्नि, संग्रहणी इन पर घी और मिरच का चूर्ण अथवा सहत और पीपल इन के साथ ३ रत्ती देवे अधिक न देवे इस पर शीतल पथ्य में पदार्थ देवे पित्तकारक और गरम ऐसे पदार्थ न देवे तो क्षयादि सर्व रोगों को नाश करे ॥

लोकेश्वर

पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगंधयोः । मापृष्टकणकस्यैको जं-
वीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥ पुटेल्लोकेश्वरो नाम्ना लोकनाथोयमुत्तमः ।
ऋते कष्टं रक्तपित्तमन्यरोगान्क्षयं जयेत् ॥ पुष्टिर्वीर्यप्रसादौजः-
कांतिलावण्यदः परः । कोस्ति लोकेश्वरादन्यो नृणां शंभुमु-
खोद्गतात् ॥

अर्थ—कौडी की भस्म, पारा और गंधक ये प्रत्येक चार २ तोले, सुहागा १ मासा इस क्रम से लेकर नीबू के रस से खरल करे फिर पुट देवे तो यह लोकेश्वर रस तयार हो इस को लोकनाथरसभी कहते हैं यह बिना कष्ट के रक्तपित्त, क्षय इत्यादि रोग नाश करे और पुष्टि वीर्य की निर्दोषता करे कांति, सुंदरता इन को करे यह लोकेश्वररस श्री शंभु के मुख से निकला इस से परे मनुष्य को सुख का देनेवाला कौन है ॥

नवरत्नराजमृगांक

सूतं गंधकहेमताररसकं वैक्रांतकांतायसं वंगं नागपविप्रवाल-
विमलामाणिक्यगारुत्मतम् । ताप्यं मौक्तिकपुष्परागजलजं वैडूर्य-
कं शुल्बकं शुक्तिस्तालकमभ्रहिं गुलसिलागोमेदनीलं समम् ॥
गोक्षूरैः फणिवाल्लिसिंहवदनामुंडीकणाचित्रकैरिक्षुच्छिन्नरुहाहर-

श्वृतयोजितः सकलमत्र पथ्यं हितं मृगांकवदथापरं किमपि
नैव योज्यं क्वचित् ॥

अर्थ-पारद, सुवर्ण, सुवर्णमाक्षिक, हरताल, मनसिल, खपरिया, गंधक और लीलायोथा ये समान भाग लेवे पारा और गंधक की कजली करे इस कजली में सब औषध मिलाय आक के दूध में खरल करे फिर अरनी, अगस्तिया, बहेडा, चित्रक, भांगरा और अडूसा इन प्रत्येक के रस में एक एक दिन खरल करे फिर गोला बनाय भूधर यंत्र में मृगांक के समान पुट देवे फिर निकाल के अदरख के रस की सात भावना देवे पश्चात् सोंठ, मिरच, पीपल इन के काढे की सात २ भावना देवे यह कनकसुंदररस क्षयरोग का नाश करे यह अदरख के रस से सन्निपात पर देवे और सोंठ, तथा घी इन से वातव्याधि पर देवे इस पर भी राजमृगांक के समान पथ्य करे इस से सिवाय और कुछ न खाय ॥

हेमाभ्रकरससिंदूर

अभ्रकं रससिंदूरं मिश्रितं हेमभस्मना । समभागं प्रकुर्वीत रसे-
नार्द्रकयोजितम् ॥ क्षयं च क्षयपांडुं च क्षयकासं च कुंभकम् ।
जयेन्मंडलपर्यंतं पूर्वकर्मविपाकवित् ॥

अर्थ-अभ्रक भस्म, रससिंदूर और सुवर्ण भस्म ये समान भाग लेवे सब को अदरख के रस में खरल कर दो रत्ती की मात्रा सेवन करे तो क्षय, क्षयपांडुरोग खांसी, कुंभकामला इन को दूर करे कर्मविपाक का जाननेवाला उसको एक मंडल पर्यंत सेवन करना चाहिये ॥

सुवर्णभूपति

शुद्धं सूतं समं गंधं मृतशुल्वं तयोः समम् । अभ्रलोहकयोर्भस्म
कान्तभस्म सुवर्णजम् ॥ रजतं च विषं सम्यक्पृथक् सूतसमं
भवेत् । हंसपादीरसैर्मर्द्यं दिनमेकं वटीकृतम् ॥ काचकुप्यां विनि-
क्षिप्य मृदा संलेपयेद्ब्रह्मिः । शुष्का सा बालुकायंत्रे शनैर्मृद्भिना
पचेत् ॥ चतुर्गुणमितं देयं पिप्पल्यादिद्रवेण तु । क्षयं त्रिदोषजं
हन्ति सन्निपातास्त्रयोदश ॥ आमवातं धनुर्वातं शूलवातमेव
च । आढ्यवातं पंगुवातं कफवाताग्निमाद्यनुत् ॥ कटीवातं सर्वशू-
लं नाशयेन्नात्र संशयः । गुल्मशूलमुदावर्तं ग्रहणीमतिदुस्तराम् ॥

प्रमेहमुदरं सर्वाभश्मरीं मूत्रविट्ग्रहम् । भगंदरं सर्वकुष्ठं विद्रधिं
महतीं तथा ॥ श्वासं कासमजीर्णं च ज्वरमष्टविधं तथा ।
कामलां पांडुरोगं च शिरोरोगं च नाशयेत् ॥ अनुपानविशेषेण
सर्वरोगान्विनाशयेत् । यथा सूयोदये नश्येत्तमः सर्वगतं तथा ॥
सर्वरोगविनाशाय सर्वेषां स्वर्णभूपतिः ॥

अर्थ-पारा १, गंधक १, ताम्रभस्म २ और अभ्रक, लोह, कांति, सुवर्ण और चांदी इन प्रत्येक की भस्म एक एक भाग और सिंगियाविष १ भाग, इस प्रकार सब औषध लेकर हंसपदी (लाल लाल) के रस में १ दिन खरल कर गोली बनावे इन को कांच की आतसी शीशी में भर मुख बंद करे और उस के ऊपर कपडमिट्टी करके मुखाय लेवे इस को 'वालुकायंत्र' में मंद मंद अग्नि से धीरे पचावे तो रस सिद्ध होवे. इस को पीपल और अदरक के रस के साथ ४ रत्ती देवे तो त्रिदोष, क्षय, तेरह प्रकार के संनिपात, आमवात, धनुर्वात, शृंखलावात, आढ्यवात, पंगु वात, कफवात, मंदाग्नि, कटिवात, सर्व प्रकार के शूल, गुल्मशूल उदावर्त्त, संग्रहणी, प्रमेह, उदररोग, सर्व प्रकार की पथरी, मूत्रकृच्छ्र, विट्ग्रह, भगंदर, सर्व प्रकार के कुष्ठरोग, घोर विद्रधि का रोग, श्वास, खांसी, अजीर्ण, आठ प्रकार के ज्वर, कामला, पांडुरोग और मस्तकरोग इत्यादि सब रोगों को अनुपान विशेष करके नाश करे है. जैसे सूयोदय होनेसे अंधकार सर्वत्र का नष्ट होता है इसी प्रकार यह सुवर्णभूपति रस सर्व रोग नाश करके प्रगट हुआ है ॥

लक्ष्मीविलासरस

सुवर्णताराभ्रकताम्रवंगं त्रिलोहनागानृतमौक्तिकं च । एतत्समं
योज्य रसस्य भस्म खल्वे कृतं स्यात्कृतकज्जलीकम् ॥ संमर्द्द-
येन्माक्षिकसंप्रयुक्तं तच्छोषयेत् द्वित्रिदिनं च घर्मे । तत्कल्कमू-
पोदरमध्यगामी यत्नात्कृतं ताक्षर्यपुटेन पक्वम् ॥ यामाष्टकं पा-
वकमर्दितं च लक्ष्मीविलासो रसरज एषः । क्षये त्रिदोषप्रभवे
च पांडौ सकामलासर्वसमीरणेषु ॥ शोकप्रतिश्यायविनष्टवीर्यं
मूलामयं सर्वसशूलकुष्ठम् । हत्वाग्निमाद्यं क्षयसन्निपातं श्वासं
च कासं च हरेत्प्रयुक्तम् ॥ तारुण्यलक्ष्मीप्रतिबोधनाय श्रीम-
द्विलासो रसरज एषः ॥

अर्थ—सुवर्ण, रूपा, अभ्रक, ताम्र, रांगा, वट्टलोह, शीसा, सिंगियाविष औ मोती इन प्रत्येक की भस्म समान भाग ले. तथा सब की बराबर पारे की भस्म लें सब को एकत्र कर सहत डालके खरल करे और सुखावे फिर मूस में भरके गरुड पुट में फूंक देवे. शीतल होने पर निकालके चीते के काटे में आठ प्रहर खरल करे तो यह लक्ष्मीविलासरस बने यह संपूर्ण रसोंका राजा है यह त्रिदोष से प्रग-क्षयरोग, पांडुरोग, कामला, सर्व प्रकार के वादी के रोग, सूजन, प्रतिश्याय, विनष्टवीर्य, बवासीर, सर्व प्रकार के शूलकोठ, मंदाग्नि, सन्निपात, श्वास और खांसी इन को नष्ट करे तथा तारुण्यलक्ष्मी को बढ़ावे, धनवान् (सेठ, साहुकार, राजा, महाराजाओं) को यह विलास के अर्थ है ॥

शिलाजत्वादिलोह

शिलाजतुयुतं लोहं वल्लं तु विधिमारितम् ।

पथ्याशी सेवते यस्तु स यक्ष्माणं व्यपोहति ॥

अर्थ—लोहं भस्म २ रत्ती शिलाजित के साथ सेवन करे और पथ्य से रहे तो राजयक्ष्मा (सई का) रोग नाश होवे ॥

पंचामृतरस

भस्मसूताभ्रंलोहानां शिलाजतुविषं समम् । गुडूचीत्रिफलं
क्वाथसंकृतं गुग्गुलं तथा ॥ मृतनैपालताम्रं वा सूततुल्यं नि
योजयेत् । एकीकृत्य द्विगुंजं तु भक्षयेद्राजयक्ष्मनुत् ॥ पंचामृतो
रसो नाम ह्यनुपानं च पूर्ववत् ॥

अर्थ—पारा, अभ्रक, लोह इन की भस्म, शिलाजित और सिंगियाविष ये समान भाग लेवे इन को गिलोय, हरड, बहेडा, आवला इन के रस में खरल कर गुग्गुल और नेपाली तामे की भस्म ये पारे के समान मिलायके घोटे फिर दो रत्ती इस में से अनुपान के संग देय तो यह पंचामृतरस राजयक्ष्मा को नाश करे ॥

अमृतेश्वररस

रसभस्मामृतासत्त्वं लोहं मधुघृतान्वितम् ।

अमृतेश्वरनामार्यं पद्मं गुंजा राजयक्ष्मजित् ॥

अर्थ—पारे की भस्म, गिलोय का सख और लोह इन को एकत्र कर सहत और घी के साथ १ रत्ती के प्रमाण देवे. इस को अमृतेश्वररस कहते हैं यह क्षयनाशक है ॥

चिंतामणिरस

रसेन्द्रवैक्रान्तकरौप्यताम्रसलोहमुक्ताफलगंधहेमाम् । त्रिभाषितं
चारद्रकमार्कवन्हिरसैरजा गोपयसा तथैव ॥ अर्श क्षयं कासम-
रोचकं च जीर्णज्वरं पांडुमपि प्रमेहान् । गुंजाप्रमाणं मधुमा-
गधीभ्यां लीढं निहन्याद्विपमं च वातम् ॥ चिंतामणिरिति ख्यातः
पार्वत्या निर्मितः स्वयम् ॥

अर्थ—पारा, वैक्रान्त, रूपा, तांबा, लोहा, मोती और सुवर्ण इन की भस्म तथा धक ये समान भाग लेवे सब को खरल में डालके अदरख, भांगरा और चित्रक इन के रस की तीन २ भावना देवे और बकरी, गौ इन के दूध की तीन २ भावना देवे तो यह चिंतामणि रस सिद्ध होवे यह १ रत्ती सहित और पीपल के साय खाय तो बवासीर, क्षय, खांसी, अरुचिं, अजीर्ण, ज्वर, पांडुरोग, और प्रमेह इनको नाश करे यह पहले पार्वती ने स्वयं निर्माण करा है ॥

दुसरा त्रैलोक्यचिंतामणि

सूताम्रस्वर्णतारारुणभिदुरशिलाताप्यगंधप्रवालायोमुक्ताशंख-
तालं वरमिदमनलकाथतः सप्तभाव्यम् । निर्गुंडीसूरणांभःप-
विरविपयसा त्रिःपृथग्भावयित्वा चापूर्यैतैर्वराटानथ मिहिरपय-
ष्टं कणालितवक्रान् ॥ कृत्वा भांडे च रुद्ध्वा गजपुटजठरे युक्ति-
तस्तच्च पत्तवोद्धृत्यैतन्मर्दयित्वा तदखिलतुलितं सूतभस्म
प्रदद्यात् । वैक्रान्तं सूर्यतुर्यांशकमथ मिलितं सप्तशः शिशुमूलं
त्वग्वाणस्तेन तुल्यं विपमनलवरं टंकणं चोपणं च ॥ पथ्या
जातीफलं चामरकुसुमकणानागरं वत्सनाभं तुर्यांशं मेलयित्वा
पृथगथ दिवसं मर्दयेद्गुगतोयैः । एष त्रैलोक्यचिंतामणिरखिल-
गदध्वातविध्वंसहंसस्तत्तद्द्रोगानुपानादुपसि कवलितः सार्ध-
वल्लप्रमाणः ॥ वातव्याध्यामवातज्वरजठरकृमिश्वासशूलाम्ब-
वातासृक्पित्तक्षैण्यकासक्षयकफजगदोरःक्षताजीर्णमेहे । कुष्ठा-
तीसारपांडुग्रहणिषु तमकेषु व्रणार्शःप्रकृष्टे खाजे खंजाज्ववाते
श्रुतिभगजगदे सर्वथैष प्रशस्तः ॥

अर्ध-पारा, अश्रक, सुवर्ण, चांदी, माणिक, हीरा, मनशिल, सुवर्णमाक्षिक, गंधक, मूंगा, लोह, मोती, शंख और हरताल इन की भस्म, पारा और गंधक इन की कजली इन सब को एकत्र करके चित्रक के काटे की सात भावना देवे फिर निगुंडी, सूरण (जमीकंद) इनके रस, थूहर और आक इन का दूध इन प्रत्येक की तीन तीन भावना देवे फिर इन को कौडियोंमें भर आक के दूध में सुहागा पीसके उन कौडियों के मुख को बंद कर देवे फिर इन को एक सराव में बंद कर संपुट में धरके गजपुट में फूंक देवे जब शीतल हो जावे तब निकालके घोट डाले फिर सब चूर्णके समान पारे की भस्म और वैक्रांत की भस्म पारे की भस्म से चतुर्थाश ले सब को एकत्र कर सब से सातगुना सहजने के जड का चूर्ण डाले. दालचीनी पांच भाग तथा लाल बोल, चित्रक, सुहागा, काली मिरच ये सब पाव २ भाग लेवे जंगी हरड, जायफल लौंग, पीपल, सोंठ और सिंगिया विप ये प्रत्येक चतुर्थाश मिलावे फिर इस को विजोरे के रस में १ दिन खरल करे यह त्रैलोक्यचिंतामणिरस संपूर्ण रोग-रूप अंधकार नाश करने में सूर्य के समान है यह रोगोक्त अनुपान से तीन रत्ती सेवन करने से संपूर्ण रोगों का नाश करे यह वातव्याधि, आमवात, ज्वर, उदर, कृमि, श्वास, शूल, रक्तवात, रक्तपित्त, क्षीणता, खांसी, क्षय, कफरोग, उरःक्षत, अजीर्ण, प्रमेह, कोढ, अतिसार, पांडु, संग्रहणी, तमकश्वास, व्रण, बवासीर, पंगुवात, आढ्य-वात, कर्णरोग और योनिरोग इन पर उत्तम है ॥

वसंतकुसुमाकर

प्रवालरसमौक्तिकाश्रकमिदं चतुर्भागभाक् पृथक्पृथगथ स्मृते
 रजतहेमनी व्यंशके । अयोभुजगरंगकं त्रिलवकं विमर्द्याखिलं शु-
 भेहनि विभावयेद्विपगियं धिया सप्तशः ॥ द्रवैर्वृपनिशेक्षुजैः कम-
 लमालतीपुष्पजै रसैः कदलिकंदजैर्मलयचंदनादुद्रवैः । वसंत-
 कुसुमाकरो रसपतिर्द्विवल्लोशितः समस्तगदहृद्भवेत्किलनिजा-
 नुपानैरयम् ॥ क्षिपेच्च समधूपणैः क्षयगदेषु सर्वेष्वपि प्रमेहरुजि-
 रात्रिभिः समधुशर्कराभिः सह । सितामलयजद्रवैर्महाति रक्तपि-
 त्तेथ वा सितामधुसमन्वितैर्वृषभपल्लवानां द्रवैः ॥ त्रिजातगुरुचं-
 दनैरपि च तृष्टिपुष्टिप्रदो मनोभवकरः परो वमिषु शंखपुष्पीर-
 सैः । अभीरुरसशर्करामधुभिरम्लपित्तामये परेषु च यथोचितं
 ननु गदेषु संसेवयेत् ॥

अर्थ—मूंगा, पारा, मोती और अभ्रक ये चार२तोले, रौप्यभस्म और सुवर्णभस्म, ये दो दो तोले, लोहेकी भस्म शीशे की तथा रांग इन की भस्म तीन२तोले लेवे सब को एकत्र खरल कर अडूसेका रस, हलदी का काढा ईखिकारस, कमल और मालती इनके फूलों का रस, केले के कंद का रस, काली अगर और चंदन उन का काढा इन प्रत्येक की सात २ भावना देवे तो यह वसंतकुसुमाकररस बनकर तयार होवे. इस में से ४ या ६ रत्ती रोगोक्त अनुपान के साथ सेवन करे तो संपूर्ण व्याधि का नाश करे. सहत और काली मिरच इन के साथ क्षय पर देवे. प्रमेह पर हलदी के चूर्ण तथा सहत और मिश्री इन से चंदन का काढा और मिश्री इन के सात रक्तपित्त पर दे. अथवा मिश्री, सहत, अडूसेके रस के साथ देवे तथा दालचीनी, पत्रज, इलायची इनके चूर्ण से देवे तो तुष्टि तथा पुष्टि देकर कामोद्दीपन करे तथा शंखाहूली के रस से वांति पर, शतावर का रस, मिश्री और सहत इन से अम्लपित्त पर तथा सर्वरोगों पर योग्य अनुपानों के साथ सेवन करे ॥

लोकेश्वरपोटली

रसस्य भस्म वा हेम पादांशेन प्रकल्पयेत् । द्विगुणं गंधकं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकांबुना ॥ वराटकांश्च संपूर्य टंकणेन निरुध्य च । भांडे चूर्णप्रलिप्तेथ शीघ्रं रुन्ध्यात्तु मृन्मये ॥ शोपयित्वा पुटे गतेरन्निमात्रेपराह्निके । स्वांगशीतलमुद्धृत्य चूर्णयित्वाथ विन्यसेत् ॥ एष लोकेश्वरो नाम वीर्यपुष्टिविवर्धनः । गुंजाचतुष्टयं खादेत्पिप्पलीमधुसंयुतः ॥ भक्षयेत्परया भक्त्या लोकेशः सर्वदर्शनः । अंगकाश्येग्निमांद्ये च कासे पित्ते रसः स्वयम् ॥ मरीचैर्घृतसंयुक्तैः प्रदातव्यो दिनत्रयम् । लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं दधि च योजयेत् ॥ एकविंशद्दिनं यावन्मरीचं सघृतं विवेत् । पथ्यं मृगांक्वत् ज्ञेयं शयीतोत्तानपादतः ॥ ये शुष्का विपमाशनैः क्षयरुजा व्याताश्च ये कुष्ठिनो ये पांडुत्वहताः कुवैद्यविधिना ये शोपिणो दुर्भगाः । ये तप्ता विविधज्वरैर्भ्रममदोन्मादैः प्रमादं गतास्ते सर्वे विगता यया हि परया स्युः पोटलीसेवया ॥

अर्थ-पारदभस्म ४, सुवर्णभस्म १ और गंधक ८ इस प्रकार भाग लेकर चित्रक के काटे से खरल करे फिर कौड़ियों में भरे और उन के मुख को आक के दूध में सुहागे को पीस उस सुहागे से बंद करे फिर १ हांडी लेय उसको आधी चूने में भरे फिर इन कौड़ियों को भरे और ऊपर से चूना फिर भर दे फिर उस का मुख बंद कर फिर १ हाथ का गद्दा खोद उस में उस पात्र को रख आरने ऊपरों से भरे देवे ३ पहर के अनंतर पुट देकर भस्म करे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल खरल कर धर रखे इसे लोकेश्वर रस कहते हैं यह पीपर और सहत इन के साथ ४-४ रत्ती सेवन करे तो तथा भक्तिपूर्वक सेवन करने से सर्व मुख का दिखानेवाला है देह की कृशता, मंदाग्नि, खांसी, पित्त इन पर घी और मिर्च के चूर्ण के साथ ३ दिन देषे निमक खाना वर्जित है तथा इस के ऊपर घी और दही खाय और २१ दिनतक घी और मिर्चका चूरा मिलाकर पीया करे और मृर्गाक के समान पथ्य करे तथा पैरों को सीधे करके लेटे और जो कोई विपमाशन करके शुष्क, क्षय रोग करके व्याप्त, कोटी, पांडुरोगी, कुत्सित वैद्यों के उपचार करके शोषयुक्त, दुर्भग, अनेक प्रकार के ज्वरों करके तप्त, अमरोगवाला, उन्मादरोगवाला और चावला ऐसे सर्व रोग इस लोकेश्वरपोटली के सेवन करने से निरोगी होय ॥

लोहरसायन क्षयादिकोपर.

शुद्धं रसेंद्रं भागैकं द्विभागं शुद्धगंधकम् । क्षिपेत्कज्जलिकां कुर्यात्तत्र तीक्ष्णभवं रजः ॥ क्षिप्त्वा कज्जलिकातुल्यं प्रहरैकं विमर्दयेत् । ततः संजायते तस्य सोष्णो धूमोद्गमो महान् ॥ अत्यंतं पिंडितं कृत्वा ताम्रपात्रे निधाय च । मध्ये धान्येकशूकस्य त्रिदिनं धारयेद्बुधः ॥ उद्धृत्य तस्मात्खल्वे च क्षिप्त्वा घर्मे निधाय च । रसैः कुठारच्छिन्नायास्त्रिवेलं परिभावयेत् ॥ संशोष्य घर्मक्वाथैश्च भावयेत्त्रिकटोस्त्रिधा । लोहपात्रे ततः क्षिप्त्वा भावयेत्त्रिफलाजलैः ॥ निर्गुंडीदाडिमत्वग्भिर्विसभृंगकुरंतकैः । पलाशकदलीद्रावैर्वीजकस्य श्रुतेन वा ॥ नीलीकालंबुपाद्रावैर्बुबूलफलिकारसैः । त्रिविवेलं यथालाभं भावयेदेभिरौषधैः ॥ ततः प्रातर्लिहेत्क्षौद्रघृताभ्यां कालमात्रकम् । पलमात्रं वरकाथं पिवेदस्यानुमानकम् ॥ मासत्रयं शीलितं स्याद्बलीपलीत-

नाशनम् । मंदाग्निश्वासकासांश्च पांडुतां कफमारुतौ ॥ पि-
प्लीमधुसंयुक्तं हन्यादेतन्न संशयः । वातास्रं मूत्रदोषांश्च ग्र-
हणीं तोयजां रुजम् ॥ अंडवृद्धिं जयेदेतच्छिन्नासत्त्वमधुहृतम् ।
बलवर्णकरं वृष्यमायुष्यं परमं स्मृतम् ॥ कूष्मांडं तिलतैलं च
मापात्रं राजिका तथा । मद्यमम्लरसं चैव त्यजेल्लोहस्य सेवकः ॥

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगंधक २ भाग, दोनों को खरल में डाल खरल करे
उस के समान भाग काली मिर्च का चूर्ण लेकर उस कजली में मिलाय १ प्रहर
खरल करे फिर धीगुवार के रस में ३ दिन पर्यंत खरल करे ऐसा करने से इस
औषधी में से गर्भ २ घोर धुंआ, निकलता है तब इसका प्रथम गोला करके तामे के
पात्र में धरके धानी में गाढ देवे जब ३ दिन बीत जाय ४ दिन उस गोला को
निकाल कर खरल कर धूप में रख वनतुलसी के रस की ३ पुट देवे फिर सोंठ,
मेर्च, पीपर इन का काटा करके पृथक् २ तीन दिन पुट देवे फिर अदूसा, गिलोय
और चित्रक इन तीनों का रस पृथक् २ निकाल क्रम से एक २ की पुट तीन २
द्वे पश्चात् इस रसायन को लोहे की कढ़ाई में डालके आगे लिखी औषधों
की पुट देवे जैसे हरड, बहेडा, आवला, निर्गुंडी, अनार की छाल, कमलकंद,
तांगरा, पीयावांसा, पलास, केला का कंद, विजेशार, नीलपुष्पी, मुंडी, बबूरके फली
का रस. इन चौदह औषधों के न्यारे २ रस निकाल कर क्रम पूर्वक एक एक रस की
तीन भावना देकर गोली छडिया बेर की बराबर बनावे १ गोली सहत और धी-
न को एकत्र कर इस में मिलायके खाय और तत्काल इस के ऊपर त्रिफले का
गढा एक पल के प्रमाण पीवे इस प्रकार तीन महिने पर्यंत इस रसायन को सेवन
करे तो देह की गुजलट और छोटी उम्र (अवस्था) में बालों का सफेद होना ये दूर हों
और देह हृष्ट पुष्ट हो तथा बाल काले हों तथा सहत और पीपल के साथ सेवन करे तो
मंदाग्नि, श्वास, खांसी, पांडुरोग, कफवायु ये रोग दूर हों तथा गिलोय के सत्व के
साथ मिलायकर खाय तो वातरक्त, मूत्रदोष दुष्ट पानी पीनेसे हुई जो संग्रहणी, तथा
अंडवृद्धि ये रोग दूर हों. यह रसायन है. बल, कांति, तथा स्त्रीगमन में इच्छा देने-
वाला तथा आयुष्य की वृद्धि करनेवाला है. तथा पेठा, तिलों का तैल, उडद, राई,
अथ (दारू) और खट्टे पदार्थ ये सब इस रस के सेवन करनेवाले को खाना व-
र्जित अर्थात् अपथ्य हैं ॥

रत्नगर्भपोटली

रसं वज्रं हेम तारं नागं लोहं तथाभ्रकम् । तुल्यांशं मारितं यो-

ज्यं मुक्तामाक्षिकविद्रुमम् ॥ राजावर्तं च वैक्रांतं गोमेदं पुष्परा-
जकम् । शंखं च तुल्यतुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः ॥ मर्दयि-
त्वा विचूर्ण्यथ तेनापूर्य वराटकान् । टंकणं रविद्रुग्धेन पिष्ट्वा त-
न्मुखमालिपेत् ॥ मृद्भांडे तान्सुसंयन्त्य सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥ आदा-
य चूर्णयेत्सम्यङ् निर्गुड्याः सप्तभावनाः ॥ आर्द्रकस्य रसैः सप्त
चित्रकस्यैकविंशतिः । द्रवैर्भाव्यं ततः शुष्कं देयं गुंजाचतुष्ट-
यम् ॥ क्षयरोगं निहंत्याशु सत्यं शिव इवांधकम् । योजयेत्पि-
प्पलीक्षौद्रैः सघृतैर्मारिचैश्च वा ॥ पोटलीरत्नगर्भेयं सर्वरोगहरो
मतः ॥

अर्थ—पारा, हीरा, सुवर्ण, चांदी, शीशी, लोह, अम्रक, मोती, सुवर्णमाक्षिक,
मूंगा, राजावर्त, वैक्रांत, गोमेद, पुखराज और शंख इन सब की भस्म समान भाग
लेवे सात दिन पर्यंत चित्रक के कांठे में खरल करे फिर इस चूर्ण को कौडियों में भरे
उन का मुख आक के दूध में पिसे सुहागे से बंद करे. फिर उन कौडियों को मिट्टी
के हांडिया में बंद कर उस के मुख को बंद कर देवे और इस हांडी को गजपुट में
धरके फूंक देवे. शीतल होने पर निकालके चूर कर लेवे और निर्गुडी के रस की सात
भावना देकर सुखाय ले. इस में से ४ रत्नी रस ले सहस्र, पीपल अथवा धी और
काली मिरचों की बुकनी इन के साथ देवे तो जैसे शिवने अंधक दैत्य का नाश करा
उसी प्रकार यह रत्नगर्भपोटली रस क्षय रोग का नाश करे तथा सर्व रोगों
का भी नाश करे ॥

हेमगर्भपोटलीरस कफक्षयादिकोंपर

सूतात्पादप्रमाणेन हेमः पिष्टं प्रकल्पयेत् । तयोः स्याद्विगुणो
गुधो मर्दयेत्कांचनारिणा ॥ कृत्वा गोलं क्षिपेन्मूपासंपुटे मुद्रये-
येत्रिः । पचेद्भूधरयंत्रेण वासरत्रितयं बुधः ॥ तत उद्धृत्य
लाशक दद्याद्गंधं च तत्समम् । मर्दयेच्चार्द्रकरसैश्चित्रकस्वरसेन
बबूलफांपूलपीतवराटांश्च पूरयेत्तेन युक्तितः । एतस्मादौषधा-
ततः षष्टमांशेन टंकणम् ॥ टंकणार्धं विषं दत्त्वा पिष्ट्वा सेहुंडदुग्ध-
काथं पिदयेत्तेन कल्केन वराटानां मुखानि च ॥ भांडे चूर्णप्र-

लिप्तेथ धृत्वा मुद्रां प्रदापयेत् । गतै हस्तोन्मिते धृत्वा पुटे-
 द्रजपुटेन च ॥ स्वांगशीतं रसं ज्ञात्वा प्रदद्याल्लोकनाथवत् ।
 पथ्यं मृगांकवत् ज्ञेयं त्रिदिनं लवणं त्यजेत् ॥ यदा छर्दिर्भवे-
 त्तस्य दद्याच्छिन्नाशृतं तदा । मधुयुक्तं तथा श्लेष्मकोपे
 दद्याद्दुडार्द्रकम् ॥ विरेके भर्जिता भंगा प्रदेया दधिसंयुता ।
 जयेत्कासं क्षयं श्वासं ग्रहणीमरुचिं तथा ॥ अग्निं च कुरुते दीप्तं
 कफवातं नियच्छति । हेमगर्भः परो ज्ञेयो रसः पोटलिकाभिधः ॥

अर्थ—शुद्ध पारा १ भाग तथा पारे का चतुर्याश खरल करा हुआ सुवर्ण का बरक
 और दोनों से दुगुनी गंधक लेवे इन तीनों को कचनार के रस में खरल करे और
 इस का गोला बनाय लेवे इस गोले को मिट्टीके सराव संपुट में रख कपडमिट्टी
 करके उस को भूधर यंत्र में पचावे. जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल
 उस के समान गंधक ले दोनों को अदरक के रस में छोटे फिर चित्रक के रस
 में छोटे फिर इस को सुखायके बडी २ पीली कौडियों में युक्तिपूर्वक भर देवे. फिर
 उस औषधो का आठवां हिस्सा सुहागा ले और सुहागे से आधा सिंगियाविप लेवे
 दोनों को यूहर के दूध में खरल करके उन कौडियों के मुख पर मुद्रा देवे. फिर इन
 कौडियों को एक चूने भरे हुए पात्र के बीच में रख ऊपर से फिर दाबके चूने को भर
 देवे फिर इस पात्र के मुख पर दूसरा पात्र औंधा रखके उस की संधियों को कपडमिट्टी
 से लहसे देवे. फिर एक हाथ भर का गहूदा खोद के आरने उपले भरे और बीच
 में इस पात्र को रखके ऊपर से फिर आरने उपले भर देवे और अग्नि लगाय देवे जब
 इस गजपुट की अग्नि स्वांगशीतल हो जावे तब बडी होसपारी से उन कौडियों को
 निकाल के खरल में डाल के पीस डाले. इस रस को हेमगर्भपोटली कहते है यह
 हेमगर्भपोटली लोकनाथ रस के समान सेवन करे और पथ्य मृगांक रसायन के समान
 सेवन करे. तथा इस से भी विशेषता यह है तीन दिन अधिक नोन न खावे पश्चात्
 इस औषध से उलटी आने लगती है तब गिलोप का काढा कर उस में सहत मि-
 लायके देवे तो उलटी दूर हो. तथा कफ का प्रकोप होने से गुड और अदरक
 का रस मिलायके देवे तो कफप्रकोप दूर होवे तथा दस्त होने लगे तो भांग को भून
 क्षी में मिलायके देवे इस से दस्तों को होना बंद होवे, तथा इस हेमगर्भ पोटली
 से खांसी, क्षय, श्वास, संग्रहणी और अरुचि ये रोग सब दूर होवे तथा अग्नि प्रदीप्त
 होय तथा कफ और वायु का प्रकोप दूर होवे ।

ज्यं मुक्तामाक्षिकविद्रुमम् ॥ राजावर्तं च वैक्रांतं गोमेदं पुष्परा-
जकम् । शंखं च तुल्यतुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः ॥ मर्दयि-
त्वा विचूर्णयथ तेनापूर्य वराटकान् ॥ टंकणं रविदुग्धेन पिष्ट्वा त-
न्मुखमालिपेत् ॥ मृद्गां डि तान्सुसंयन्त्य सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥ आदा-
य चूर्णयेत्सम्यङ् निर्गुब्ध्याः सप्तभावनाः ॥ आर्द्रकस्य रसैः सप्त
चित्रकस्यैकविंशतिः । द्रवैर्भाव्यं ततः शुष्कं देयं गुंजाचतुष्ट-
यम् ॥ क्षयरोगं निहंत्याशु सत्यं शिव इवांधकम् । योजयेत्पि-
प्पलीक्षौद्रैः सघृतैर्मरिचैश्च वा ॥ पोटलीरत्नगर्भोयं सर्वरोगहरो
मतः ॥

अर्थ—पारा, हीरा, सुवर्ण, चांदी, शीशी, लोह, अम्रक, मोती, सुवर्णमासिब
मृंगा, राजावर्त, वैक्रांत, गोमेद, पुखराज और शंख इन सब की भस्म समान भा
लेवे सात दिन पर्यंत चित्रक के काठे में खरल करे फिर इस चूर्ण को कौड़ियों में भ
उन का मुख आक के दूध में पिसे सुहागे से बंद करे. फिर उन कौड़ियों को मिट्ट
के हांडिया में बंद कर उस के मुख को बंद कर देवे और इस हांडी को गजपुट
धरके फूंक देवे. शीतल होने पर निकालके चूर कर लेवे और निर्गुंडी के रस की सात
भावना देकर सुखाय ले. इस में से ४ रत्नी रस ले सहस्र, पीपल अथवा धी और
काली मिरचों की चुकनी इन के साथ देवे तो जैसे शिवने अंधक दैत्य का नाश करा
उसी प्रकार यह रत्नगर्भपोटली रस क्षय रोग का नाश करे तथा सर्व रोगों
का भी नाश करे ॥

हेमगर्भपोटलीरस कफक्षयादिकोपर

सूतात्पादप्रमाणेन हेमः पिष्टं प्रकल्पयेत् । तयोः स्याद्विगुणो
गुधो मर्दयेत्कांचनारिणा ॥ कृत्वा गोलं क्षिपेन्मूपासंपुटे मुद्रये-
येत्त्रिंशः । पचेद्भूधरयंत्रेण वासरत्रितयं बुधः ॥ तत उद्धृत्य
लाशकं दद्याद्गंधं च तत्समम् । मर्दयेच्चार्द्रकरसैश्चित्रकस्वरसेन
ब्वूलफाबूलपीतवराटांश्च पूरयेत्तेन युक्तितः । एतस्मादौषधा-
ततः षष्टमांशेन टंकणम् ॥ टंकणार्थं विषं दत्त्वा पिष्ट्वा सेहुंडदुग्ध-
काथं पिद्रयेत्तेन कल्केन वराटानां मुखानि च ॥ भांडे चूर्णप्र-

लिप्तेथ धृत्वा मुद्रां प्रदापयेत् । गतै हस्तोन्मिते धृत्वा पुटे-
द्रजपुटेन च ॥ स्वांगशीतं रसं ज्ञात्वा प्रदद्याल्लोकनाथवत् ।
पथ्यं मृगांकवत् ज्ञेयं त्रिदिनं लवणं त्यजेत् ॥ यदा छर्दिर्भवे-
त्तस्य दद्याच्छिन्नाशृतं तदा । मधुयुक्तं तथा श्लेष्मकोपे
दद्याद्गुडार्द्रकम् ॥ विरेके भर्जिता भंगा प्रदेया दधिसंयुता ।
जयेत्कासं क्षयं श्वासं ग्रहणीमरुचिं तथा ॥ अग्निं च कुरुते दीप्तं
कफवातं नियच्छति । हेमगर्भः परो ज्ञेयो रसः पोटलिकाभिधः ॥

अर्थ—शुद्ध पारा १ भाग तथा पारे का चतुर्थांश खरल करा हुआ सुवर्ण का वरक
और दोनों से दुगुनी गंधक लेवे इन तीनों को कचनार के रस में खरल करे और
इस का गोला बनाय लेवे इस गोले को मिट्टीके सराव संपुट में रख कपडमिट्टी
करके उस को भूधर यंत्र में पचावे. जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल
उस के समान गंधक ले दोनों को अदरक के रस में घोटे फिर चित्रक के रस
में घोटे फिर इस को सुखायके बडी २ पीली कौडियों में युक्तिपूर्वक भर देवे. फिर
सुष औषधों का आठवां हिस्सा सुहागा ले और सुहागे से आधा सिंगियाविष लेवे
दोनों को धुहर के दूध में खरल करके उन कौडियों के मुख पर मुद्रा देवे. फिर इन
कौडियों को एक चूने भरे हुए पात्र के बीच में रख ऊपर से फिर दाबके चूने को भर
देवे फिर इस पात्र के मुख पर दूसरा पात्र आँधा रखके उस की संधियों को कपडमिट्टी
से लहसे देवे. फिर एक हाथ भर का गड्ढा खोद के आरने उपले भरे और बीच
में इस पात्र को रखके ऊपर से फिर आरने उपले भर देवे और अग्निलगाय देवे जब
इस गजपुट की अग्नि स्वांगशीतल हो जावे तब बडी होसयारी से उन कौडियों को
निकालके खरल में डालके पीस डाले. इस रस को हेमगर्भपोटली कहते है यह
हेमगर्भपोटली लोकनाथ रस के समान सेवन करे और पथ्य मृगांक रसायन के समान
सेवन करे. तथा इस से भी विशेषता यह है तीन दिन अधिक नोन न खावे पश्चात्
इस औषध से उलटी आने लगती है तब गिलोय का कादा कर उस में सहत मि-
लायके देवे तो उलटी दूर हो. तथा कफ का प्रकोप होने से गुड और अदरक
का रस मिलायके देवे तो कफप्रकोप दूर होवे तथा दस्त होने लगे तो भांग को भून
झधी में मिलायके देवे इस से दस्तों को होना बंद होवे, तथा इस हेमगर्भ पोटली
से खांसी, क्षय, श्वास, संग्रहणी और अरुचि ये रोग सब दूर होवे तथा अग्नि प्रदीप्त
होय तथा कफ और वायु का प्रकोप दूर होवे ।

दूसरा प्रकार

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावन्तः कनकस्य च । तयोश्च पिष्टिकां
 कृत्वा गंधो द्वादशभागिकः ॥ कुर्यात्कज्जलिकां तेषां मुक्ता-
 भागाश्च षोडश । चतुर्विंशच्च शंखस्य भागैकं टंकणस्य च ॥
 एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिंबूकजै रसैः । कृत्वा तेषां ततो गोलं मू-
 पासंपुटके न्यसेत् ॥ मुद्रां दत्त्वा ततो हस्तमात्रे गतं च गो-
 मयैः । पुटेद्गजपुटेनैव स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ पिष्ट्वा गुंजाच-
 तुर्मानं दद्याद्गव्याज्यसंयुतम् । एकोनत्रिंशदुन्मानमरिचैः सह
 दीयते ॥ राजते मृन्मये पात्रे काचजे वावलेहयेत् । लोकनाथ-
 समं पथ्यं कुर्यात् शुचितमानसः ॥ कासे श्वासे क्षये वाते कफ-
 ग्रहणिकागदे । अतिसारे प्रयोक्तव्या पोटली हेमगर्भिका ॥

अर्थ—पारा ४ भाग, सुवर्णके वर्क ४ भाग, दोनों को एकत्र करके खरल करे जब
 उत्तम पिष्टी हो जावे तब पारे के बारह भाग शुद्ध गंधक लेवे इस को मिलायके फिर
 घोटकर कजली करे पश्चात् पारे के सोलह भाग मोती, चौबीस भाग शंख, एकभाग
 सुहागा ले पूर्वोक्त कजली में मिलाय पके हुए नींबूके रसमें मिलायके खरल करे
 गोला बनाय ले इस गोले को मिष्टीके सराव संपुट में रख कपडमिष्टी करके गौ के
 गोबरों के गजपुट में धरके फूंक देवे. जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल उस
 में से युक्तिपूर्वक औषध को निकाल लेवे और इस को खरल में डालके पीस डाले.
 इस को भी हेमगर्भपोटली रस कहते हैं यह हेमगर्भ ४ रत्ती के अनुमान उन-
 तीस मिरच की बुकनी के साथ चांदी के पात्र में अथवा मिष्टी के अथवा शीशे के
 प्याले में गौ का घी डालके सब मिलायके सेवन करे तथा अंतःकरण को स्वस्थ कर
 लोकनाथ रस के समान पथ्य करे तो श्वास, क्षयरोग, वात के विकार, कफ और
 संग्रहणी, तथा अतिसार ये रोग दूर हों ।

लोकनाथरस

शुद्धो बुभुक्षितः सूतो भागद्वयमितो भवेत् । तथा गंधस्य भागौ
 द्वौ कुर्यात्कज्जलिकां तयोः ॥ सूताच्चतुर्गुणेष्वेव कपर्देषु विनि-
 क्षिपेत् । भागैकं टंकणं दत्त्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ॥ तथा
 शंखस्य खंडानां भागानष्टौ प्रकल्पयेत् । क्षिपेत्सर्वपुटस्यांत-



शूर्णालिसशरावयोः ॥ गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पचेद्भ्रजपुटेन च ।
 स्वांगशीतं समुद्धृत्य पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ॥ पद्भ्रजुंजासंमितं
 चूर्णमेकोनत्रिंशद्दूषणैः । घृतेन वातजे दद्यान्नवनीतेन पित्तजे ॥
 क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतीसारे क्षये तथा । अरुचौ ग्रहणीरोगे
 काश्ये मंदानले तथा ॥ कासे श्वासेषु गुल्मेषु लोकनाथो रसो
 हितः । तस्योपरि घृतान्नं च भुंजीत कवलत्रयम् ॥ मं-
 चे क्षणैकमुत्तानः शयीतानुपधानके । अनम्लमन्नं सघृतं भुंजीत
 मधुरं दधि ॥ प्रायेण जांगलं मांसं प्रदेयं घृतपाचितम् ॥ सुदु-
 ग्धभक्तं दद्याच्च जातेभ्यो सांध्यभोजने । सघृतान् सुद्ववटकान्
 व्यंजनेष्वेव चारयेत् ॥ तिलामलककल्केन स्नापयेत्सर्पिपाथवा ।
 अभ्यंजयेत्सर्पिपा च स्नानं कोष्णोदकेन च ॥ क्वचित्तैलं न गृ-
 हीयान्न विल्वं कारवेल्लकम् । वार्ताकं शफरीं चिंचां त्यजेद् व्या-
 याममैथुने ॥ मद्यं संधानकं हिंशुशुंठीमापान् मसूरकान् । कूष्मां-
 डराजिकां कापं कांजिकं चैव वर्जयेत् ॥ त्यजेच्च युक्तनिद्रां च
 कांस्यपात्रे च भोजनम् । ककारादियुतं सर्वं त्यजेच्छाकफला-
 दिकम् ॥ पथ्योयं लोकनाथस्तु शुभनक्षत्रवासरे । पूर्णातिथौ
 शुक्लपक्षजाते चंद्रवले तथा ॥ पूजयित्वा लोकनाथं कुमारीं
 भोजयेत्ततः । दानं दद्याद्विघटिकामध्ये ग्राह्यो रसोत्तमः ॥
 रसात्संजायते तापस्तदा शर्करया युतम् । सत्वं गुडूच्या गृही-
 याद्दंशरोचनया युतम् ॥ खर्जूरं दाडिमं द्राक्षामिक्षुखंडानि
 चारयेत् । अरुचौ निस्तुपं धान्यं घृतभृष्टं सशर्करम् ॥ दद्यात्तथा
 ज्वरे धान्यं गुडूचीकाथमाहरेत् । उशीरवासककाथं दद्यात्स-
 मधुशर्करम् ॥ रक्तपित्ते कफे श्वासे कासे च स्वरसंक्षये । अग्नि-
 भृष्टजयाचूर्णं मधुना निशि दीयते ॥ निद्रानाशेतिसारे च ग्र-
 हण्यां मंदपावके । सौवर्चलाभयाकृष्णाचूर्णमुष्णजलेः पिवेत् ॥

शूले जीर्णे तथा कृष्णा मधुयुक्ता ज्वरे हिता । ष्टीहोदरे वात-
रक्ते छर्द्या चैव गुदाङ्कुरे ॥ नासिकादिषु रक्तेषु रसदाडिमपुष्प-
जम् । दूर्वायाः स्वरसं नस्ये दद्याच्छर्करया युतम् ॥ कोलमज्जा-
कणावर्हियक्षभस्म सशर्करम् । मधुना लेहयेच्छर्दिहिक्काकोप-
स्य शान्तये ॥ विधिरेप प्रयोज्यस्तु सर्वस्मिन् पोटलीरसे । मृ-
गाङ्के हेमगर्भे च मौक्तिकाख्ये रसेषु च ॥ इत्ययं लोकनाथो-
क्तो रसः सर्वरुजो जयेत् ॥

अर्थ—शुद्ध और वृक्षित पारा दो भाग तथा शुद्ध करी हुई गंधक दो भाग इन दोनों की एकत्र कजली करे फिर पारे से चौगुनी पीली कौडी ले उन में इस कजली को युक्ति से भर देवे और सुहागा एक भाग लेके गौ के दूध खरल करके इस से उन कौडियों के मुख बंद कर देवे. फिर शंख के टुकड़े वजन में आठ भाग ले. और मिट्टी के दो सराव लेकर एक में चूना भरके उस चूने के बीच में शंख के टुकड़े को रखके और उस पर उन कौडियों रखके आधे शंख के टुकड़े को उन कौडियों के ऊपर रख देवे और चूने से दाब ऊपर दूसरे सराव से ढक देवे और कपडमिट्टी करके एक हाथ के गड्ढे में आरने उपले भर बीच में इस संपुट को धर देय और ऊपर फिर उपले भरके फूंक देवे. जब गजपुट स्वयं शीतल हो जावे तब संपुट को निकाल उस के भीतर से चूना दूर कर बाकी सब की भस्म को निकाल के खरल में डाल के घोट डाले और उत्तम पात्र में भरके रख देवे इस को लोकनाथरस कहते हैं यह लोकनाथ रस छः रत्ती लेकर उन्नीस काली मिरचाँ के चूर्ण में मिलायके वादी का रोग होवे तो घी के साथ देवे. तथा पित्तरोग होय तो मक्खन के साथ और कफ का रोग होय तो सहत में मिलाकर देवे तथा अतिसार, क्षय, अरुचि संग्रहणी, कृशता, मंदाग्नि, खांसी, श्वास और गोला इतने रोग दूर होने को यह रस देवे इस की मात्रा लेकर इस के ऊपर घी भात के तीन ग्रास खाय फिर शय्या (खाट) पर बिना बिछैया के एक क्षण मात्र चीत लेट जावे. खट्टे पदार्थ को त्यागके घृत से भोजन करे तथा उत्तम मीठा दही भोजन में खाय. जंगली जीवों का अर्थात् हरिण आदि के मांस घी में तलके खाय. सायंकाल में जब भूक लगे तब दूधभात खाय, मूंग के बड़े घी में तल के खाय तिल और आवले इन का कल्क करके देह में मालिस कर फिर स्नान करे, अथवा घी की देह में मालिस करके स्नान करे. स्नान के शिवाय देह में लगाना होय तो घी को ही लगावे और स्नान को जल सुहाता २ गरम लेवे. तेल का स्पर्श न करे तथा बेलफल,

करेला, बैंगन, छोटी मछली, इमली, परिश्रम करना, मैथुन, मद्यपान, संधान (अ-
 चार), हींग, सोठ, उडद, मसूर, पेठा, राई, कांजी इन सब वस्तुओं का सेवन
 त्याग देय. क्रोध करना, दिन में सोना, त्याग देवे कांसे के पात्र में भोजन न करे
 ककार है आदि में जिन के ऐसे शाक और फल इत्यादिक वाजित है इस प्रकार
 लोकनाथ की पथ्य करे शुभदिन, शुभवार, पूर्णातिथि, शुक्लपक्ष, और अपने को
 जिस दिन उत्तम चंद्रमा होवे उस दिन लोकनाथरस की पूजा करके फिर कुमारी स्त्री
 को भोजन करावे तथा सुवर्णादिक दान करके लोकनाथरस को खाय इस के खाने से
 दो घड़ी पश्चात् देह में संताप होता है उस के दूर करने को मिश्री और गिलोय का
 सत्व और वंशलोचन इन तीनों को एकत्र मिलायके सेवन करे तो संताप दूर हो.
 खजूर, अनार, दाख, ईख के टुकड़े ये पदार्थ थोड़े थोड़े खाय तो संताप और
 अरुचि का होना दूर होवे तथा धनियों को कूट उस की गिरी निकालके घी में
 भून और मिश्री मिलायके उस के साथ लोकनाथरस खाय तो अरुचि दूर हो
 धनिया, गिलोय इन का काढा कर इस काढे में इस रस को मिलायके पीवे तो ज्वर
 दूर होय. खस और अडूसा इन दोनों का काढा कर सहत और मिश्री मिलाय उस
 में लोकनाथ रस को मिलायके पीवे रक्तपित्त और कफ, श्वास, खांसी, स्वरभंग ये
 रोग दूर हो, भांग को भूनके चूर्ण करे उस में इस रस को मिलायके और सहत
 डालके रात्रि में सेवन करे तो जिस को निद्रा न आती हो उस को निद्रा आवे
 अतिसार और संग्रहणी ये रोग दूर हो, जठराग्नि प्रदीप्त होवे संचरनिमक, जंगीहरड,
 पीपल इन तीन औषधों का चूर्ण कर इस में इस लोकनाथ रस को मिलायके
 गरम जल के साथ पीवे, शूल और अजीर्ण ये दूर हो, सहत और पीपल के साथ
 लोकनाथ सेवन करे तो ज्वर दूर हो, अनार के फल के रस के साथ सेवन करे तो
 पेट में दहने तरफ जो तिछ्ठी का रोग होता है वह और वातरक्त, वमन, बवासीर,
 नाक से रुधिर का गिरना ये सब रोग दूर हो. दूब का रस निकाल उस में रांड
 मिलाय तथा लोकनाथ को डालके नाक में नस्य देवे तो नाक से रुधिर गिरना बंद
 होवे बेर की गुठली के भीतर की मींगी, पीपल, मोरचंद्रका की भस्म इन तीन औ-
 षधों को एकत्र कर उस में मिश्री और सहत डाल लोकनाथरस मिलायके सेवन
 करे तो वमन और हिचकी ये दूर हों इस प्रकार संपूर्ण जितने पोटली रस है उन
 में तथा मृगार्क तथा हेमगर्भ और मौक्तिकारप रसायन इन में इसी प्रकार
 विधि करनी चाहिये. इस प्रकार लोकनाथरस कहा है यह लोकनाथ संपूर्ण रोगों को
 दूर करता है यह शार्ङ्गधर संहिता में लिखा है और अन्य ग्रंथों में भी लिखा है ॥

लघुलोकनाथरस

वराटभस्म मंडूरं चूर्णयित्वा घृते पचेत् । तत्समं मरिचं चूर्णं

नागवल्या विभावितम् ॥ तञ्जूर्णं मधुना लेह्यमथवा नवनीत-
कैः । मापमात्रं क्षयं हन्ति यामे यामे च भक्षितम् ॥ लोकना-
थरसो ह्येप मंडलाद्राजयक्ष्मनुत् ॥

अर्थ—कौडी की भस्म १ भाग, मंडूर १ भाग, काली मिरच २ भाग इन को एकत्र करके घी में खरल करे जब घी गाढा हो जावे तब नागरखेलपान में खरल करके मासे २ भर की गोली बनावे इस को सहस्र अथवा नवनीत के संग एक एक प्रहर में सेवन करे तो सामान्य क्षय को दूर करे इसी प्रकार एक मंडल सेवन करने से राजयक्ष्मा को भी दूर करे इसे लघुलोकनाथरस कहते हैं इस की भी पथ्य लोकनाथ के समान करे ऐसी किसी आचार्य की संमति है ॥

मृगांकपोटलीरस

भूर्जवत्तनुपत्राणि हेमः सूक्ष्माणि कारयेत् । तुल्यानि तानि
सूतेन खल्वे क्षिप्त्वा विमर्दयेत् ॥ कांचनारसैर्नैव ज्वालामुख्या-
रसेन वा । लांगल्या वा रसैस्तावद्यावद्भवति पिष्टिका ॥ ततो
हेमश्चतुर्थांशं टंकणं तत्र निक्षिपेत् । पिष्टमौक्तिकचूर्णं च हेमाद्वि-
गुणमावपेत् ॥ तेषु सर्वसमं गंधं क्षिप्त्वा चैकत्र मर्दयेत् । तेषां
कृत्वा ततो गोलं वासोभिः परिवेष्टयेत् ॥ पश्चान्मृदा वेषयि-
त्वा शोपयित्वा च धारयेत् । शरावसंपुटस्थान्ते तत्र मुद्रां प्र-
दापयेत् ॥ लवणापूरिते भांडे धारयेत्तं च संपुटम् । मुद्रां दत्त्वा
शोपयित्वा बहुभिर्गोमयैः पुटेत् ॥ ततः शीते समाहृत्य गंधं
सूतसमं क्षिपेत् ॥ घृष्ट्वा च पूर्ववत्खल्वे पुटेद्भ्रजपुटेन च ॥
स्वांगशीतं ततो नीत्वा गुंजायुग्मं प्रकल्पयेत् । अष्टभिर्मरि-
चैर्युक्तो कृष्णात्रययुतोथवा ॥ विलोक्य देयो दोषादीनेकैका र-
सरक्तिका । सर्पिषा मधुना वापि दद्याद्दोषाद्यपेक्षया ॥ लो-
कनाथसमं पथ्यं कुर्यात्स्वस्थमनाः शुचिः ॥ श्लेष्माणं ग्रहणो
कासं श्वासं क्षयमरोचकम् । मृगांकायं रसो हन्यान्कृशत्वं
बलहानिताम् ॥

अर्थ—सोने के भोजपत्र के समान बारीक पत्र करके उस के समान भाग शुद्ध पारा लेवे दोनों को एकत्र करके कचनार के रस में अथवा ज्वालामुखी के रस में तथा कटियारी के रस में जबतक सब मिलकर उत्तम पिष्टीन होवे तबतक खरल करे फिर सुवर्ण की चतुर्थांश सुहागा और सुवर्ण से दूना मोती का बारीक चूर्ण तथा सोने के बराबर गंधक ले सब को एकत्र खरल कर गोला बनावे उस के चारों तरफ कपड़ा लपेट उस पर मिट्टी का लेप करके धूप में सुखाय ले. फिर मिट्टी के दो स-राव ले एक में उस गोले को रखके उस के ऊपर दूसरा रख देवे और दोनों को मिलाय कपडमिट्टी कर देवे मिट्टी के मटके में नोन भरके उस में इस सराव संपुट को रखके ऊपर से फिर निमक भर देवे फिर इस के मुख को बंद कर उस की संधियों को कपडमिट्टी से बंद कर देवे फिर इस को गजपुट से अधिक आरने उपलों की आग्नि में रखके फूंक देवे. जब शीतल हो जावे तब निकालके फिर उस पारे की बराबर गंधक लेकर सब को खरल में डालके पहले जो औषध कहीं है उन्हीं के रसों में खरल करे और पूर्वाविधि से गजपुट की आग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल फिर इस संपुट में से औषधी निकाल लेवे इस को मृगांकपोटली रस कहते हैं यह पोटली रस दो रत्ती के अनुमान आठ मिरचों के अथवा तीन पीपलों के साथ देवे तथा दोषों का तारतम्य देखकर एकरत्ती भी देवे जैसी दोषों की अपेक्षा होवे उसी प्रकार घी में अथवा सहत में मिलायके सेवन करे तथा अंतःकरण को स्वच्छ करके पवित्र हो लोकनाथरस के समान पथ्य करे. इस प्रकार आचरण करने से इस रसायन से कफरोग, संग्रहणी, खांसी, श्वास, क्षयरोग, अरुचि, शरीर की कृशता तथा बलहानी ये रोग दूर होंगे ॥

गोक्षुराद्यघृत

दुरालभा स्वदंष्ट्रा च चतस्रः पर्णिनी बला । भागान्पलोन्मि-
तान् कृत्वा पलं पर्पटकस्य च ॥ पचेद्दशगुणे तोये दशभागा-
वशोपितम् । रसे पूते तु द्रव्याणामेपां कल्कं समावपेत् ॥ सठी-
पुष्करमूलानां पिप्पलीत्रायमाणयोः । तामलक्या किरातस्य
तित्तस्य कटुकस्य च ॥ पलानां सारिवायाश्च तत्पिष्ट्वा कर्पसं-
मितान् । तैः साधयेद्दृतप्रस्थं क्षीरं द्विगुणितं भिषक् ॥ ज्वरं
दाहं तमः श्वासं कासं पार्श्वशिरोरुजम् । तृष्णां छर्दिमतीसार-
मेतत्पानं व्यपोहति ॥

अर्ध-गोखरू, धमासा, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मापपर्णी, मुद्गपर्णी, खरेटी, पित्तपापडा, ये आठ औषध चार २ तोले लेवे इन को दस गुने जल में डालके औटावे और काढा करे जब दशांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे फिर कचूर, पुहकरमूल, पीपल, त्रायमाण, हरड, चिरायता, तेजबल, कुटकी, सारिवा ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे इन का कल्क तथा ६४ तोले घी, १२८ तोले दूध डालके घृतपाक की विधि से इस घृत को सिद्ध करे यह गोक्षुरादिघृत ज्वर, दाह, तमकश्वास, पसली और मस्तक इन के शूल को तथा प्यास, वमन और अतिसार इन को नाश करे ॥

जीवन्त्यादिघृत

जीवन्तिकावत्सकयष्टिकानां सपौष्करं गोक्षुरके बले द्वे । नीलो-
त्पलं तामलकं यवासा सत्रायमाणा मगधा च कुष्ठं ॥ द्राक्षाम-
लक्या रसमेकप्रस्थं प्रस्थद्वयं छागलकं पयश्च । प्रस्थं तथा
योज्य दधिश्च धीमान् पचेत् घृतं वा मृदुवह्निना तत् ॥ पाने
प्रशस्तं हितमेतदेव नस्ये च वस्तौ विनियोजयेत् ॥ विनाशय-
त्याशु च राजयक्ष्महलीमकं कामलपांडुरोगम् ॥ मूर्च्छाभ्रम-
श्रेष्मशिरोर्तिशूलं मदाश्मरीं वा गुदकीलकुष्ठम् । शिरोगदं ना-
शमुपैति तस्य नस्यप्रदानेन नियोजितेन ॥ पानेन पाण्ड्यामय-
राजयक्ष्मा नाशं समायाति हलीमकं च । वस्तिप्रदानेन गुदो-
द्भवश्च रोगो विनाशं समुपैति पुंसाम् ॥ विसर्पविस्फोटकमृक्ष-
णेन नश्यन्त्यनेनैव गदाः समस्ताः ॥

अर्थ-गिलोय, कुडे की छाल, मुलहठी, पुहकर मूल, गोखरू, खिरेटी, गगेरन, नील कमल, भूय आवला, धमासा, त्रायमाण, पीपल, कूठ, दाख और आमले इन का रस ६४ तोले बकरी का दूध १२८ तोले, दही ६४ और घी ६४ तोले ले सबको एकत्र क के लोहे की कढ़ाई में भरके चूल्हे पर चढावे और मंद २ आगि से पचावे इस घृत में नस्य देने से तथा पान करने से तथा वस्ति इन कर्माँ में देवे तो तत्काल राजयक्ष्मा हलीमक, कामला, पांडुरोग इन को तथा वस्तिकर्म से गुदासंबंधी रोगोंका तथा दे में लगाने से विसर्प, विस्फोटक इन को और अनेक व्याधियों को नाश करे ॥

बलाद्यघृत

बला श्वदंष्ट्रा कलशी बृहती धावनी स्थिरा । निचपर्वटकं मुस्ता त्रा-

यमाणं दुरालभा ॥ कृत्वा कपायं पेयार्थं दद्यात्तामलकी सठी ॥

द्राक्षा पुष्करमूलं च मेदा ह्यामलकानि च ॥ घृतं पयश्च त-

त्सिद्धं सर्पिर्ज्वरहरं परम् । क्षयकासप्रशमनं शिरःपार्श्वरूजापहम् ॥

अर्थ-खिरेटी, गोखरू, पिठवन, कटेरी, बडी कटेरी, सालपर्णी, नीम की छाल, पित्त पापडा, नागरमोथा, ज्ञायमाण, धमासा, हरड, कचूर, दाख, पुहकरमूल, मेदा और आवला इन का काढा, तथा दूध, घी, डालके घृतपाक की विधि से इस घृत को सिद्ध करे तो यह अत्यंत ज्वरनाशक, मोह और क्षय, मस्तक और पसली इन के शूल को नाश करे इस को बलादिघृत कहते हैं ॥

कोलाद्यघृत

कोललाक्षारसे तद्वत्क्षीराष्टगुणसाधितम् ॥ कल्कैः पडंगदार्वा-
त्वग्द्राक्षाक्षोटफलान्वितम् ॥ घृतं खर्जूरमृद्धीकामधुकैः सपरू-
पकैः । सपिप्पलीकं वैस्वर्यकासश्वासरूजापहम् ॥

अर्थ-बेर की लाख के काढे में अष्टमांश दूध तथा गोखरू, दारुहलदी, दालचीनी, दाख, अखरोट, खजूर, गोस्तनी मुनक्का, मुलहठी, फालसे और पीपल इन का कल्क करके इस में घी सिद्ध करे यह घृत स्वरभंग, खांसी और श्वास इस का नाश करे है ॥

कणाद्यघृत

कणापलं पंचगुडांभसश्च सज्यं घृतं वै विपचेत्समांशम् ।
पानेथवा भोजनके प्रशस्तं क्षये च राजक्षयनाशहेतु ॥

अर्थ-पीपल २० तोले, गुड का जल २० तोले और घी ये सब समान माग ले सब को एकत्र कर घृत सिद्ध करे इस को पीने के वास्ते अथवा भोजन करने को देवे तो क्षय और राजयक्ष्मा इन को दूर करे ॥

पाराशरघृत

यष्टी बला गुडूची च पंचमूलं समांशकम् । काथेन सदृशं
धात्रीरसं चेशुरसं तथा ॥ विदार्याया रसं चैव घृतं च समभा-
गिकम् ॥ क्षीरं दाधिसमं चात्र नवनीतं तु तत्समम् ॥ द्राक्षा-
तालीससंयुक्तं पथ्यालाभेन योजयेत् ॥ सिद्धं घृतं च पानीये
नस्ये वस्तौ प्रदापयेत् । हरते राजयक्ष्माणं पांडुरोगं च दारु-

णम् ॥ हलीमकार्शसी नित्यं रक्तपित्तनिवारणम् । लेपनं दुष्टवी-
सर्पपित्तदग्धत्रणापहम् ॥

अर्थ—मुलहठी, सिरिटी, गिलोय, और पंचमूल इन सब को समान माग लेकर काटा करे इस काढे के समान आवले का रस ईख का रस विदारी कंद का रस और घी, दूध, दही, मक्खन, दाख, तालीसपत्र ये यथालाभ करके घी को सिद्ध करे इस घी के खाने से नस्य अथवा बस्ति इन में देवे तो क्षय, पांडुरोग, कामला, हलीमक, बवासीर, रक्तपित्त, इन को नाश करे. तथा इस की देह में मालिस करने से पित्त और दग्ध त्रण इन को दूर करे ॥

जलाद्यघृत

जलद्रोणे विपक्तव्यं यावत्पादावशोपितम् । पिप्पली चंदनं लोध्रं
हीवेरोशीरपर्पटम् ॥ पाठाभूनिवयष्ट्याहा त्रायंती नीलमुत्पलम्।
मुस्तकेंद्रयवा शुंठी कटुकं सदुरालभम् ॥ त्वक्पत्रं वृषमूलं च
कल्पैरर्धपलैर्भिषक् । अजाक्षीरेण तूष्णेन घृतप्रस्थं विपा-
चयेत् ॥ हंति यक्ष्माणमत्युग्रं रक्तपित्तं त्रिदोषजम्। श्वासकास-
क्षतक्षीणदाहशोकरुजापहम् ॥

अर्थ—१०२४ तोले जल में पीपल, रक्तचंदन, लोध्र, नेत्रवाला, खस, पित्तपा पडा, पाठ, चिरामता, मुलहठी, त्रायंती, कालाकमल, नागरमोथा, इन्द्रजो, सोंठ कुटकी, धमासा, दालचीनी और अडूसे की जड ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे सब को एकत्र करके चतुर्थांश शेष काटा करे. फिर इस को छान लेय और काढे के समान बकरी का दूध तथा ६४ तोले घी इन सब को एकत्र करके औटावे जब घृतमात्र शेष रहे तब उतार लेवे यह घी क्षयरोग, त्रिदोषजन्य रक्तपित्त, श्वास, खांसी, क्षतक्षीण, दाह, तथा शोक इन को नाश करे ॥

वासाद्यघृत

वासामृतारिष्टनिदिग्धकानां रसेश्वगंधेभवलाजुनानाम् । सिद्धं
संपंचोषणपुष्कराणां कल्कैर्घृतं छागपयस्तु शोषे ॥

अर्थ—अडूसा, गिलोय, नीम की छाल, कटेरी, असगंध, अतिबला, कोह, इन के काढे में घी, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, पीपरामूल, पुहकरमूल, इन के कल्के की बराबर बकरी का दूध डालके घी को सिद्ध करे तो यह वासादिघृत क्षयरोग को नाश करे है ॥

खजूरादिघृत

घृतं खजूरमृद्धीकामधूकैः सपरूपकैः ।

सपिप्पलीकैर्वैस्वर्यकासश्वासज्वरापहम् ॥

अर्थ—खजूर, दाख, गुडहदी, फालसे और पीपल इन से सिद्ध करे हुए घी के सेवन करने से स्वरभंग (आवाज का बँट जाना), खांसी, श्वास, ज्वर इन का नाश करे ॥

पिप्पल्याद्यघृत

पिप्पलीगुडसंयुक्तं छागमांसयुतं घृतम् ।

एतदग्निविवृद्धयर्थं प्रदेयं क्षयकासिनाम् ॥

अर्थ—पीपल और गुड तथा बकरे का मांस इन से सिद्ध करा हुआ घी क्षयरोग और खांसी इनपर देना चाहिये ॥

दूसरा प्रकार

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ।

सयावशूकैश्च क्षीरं स्रोतसां शोधनं परम् ॥

कल्कोत्र पादिकः कार्यः क्षीरं वापि चतुर्गुणम् ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और जवारार इन से सिद्ध करा हुआ घृत स्रोत (देह की छिद्रों) की शुद्धि करे हे इस जगह औषधों का कल्क १ भाग और घी ४ भाग इस प्रमाण से लेकर घी बनावे ॥

दशमूलाद्यघृत

दशमूलीश्रृतात्क्षीरात्सार्पिर्यदुदियान्नवम् ।

सपिप्पलीकं सक्षौद्रं तत्परं स्वरशोधनम् ॥

क्षीरः पार्श्वगशूलघ्नं कासश्वासज्वरापहम् ॥

अर्थ—दशमूल डालके ओटे हुए दूध को जमाय घी निकाल लेवे यह घी, सहत और पीपल इन के साथ सेवन करे तो स्वर को शुद्ध करता और मस्तक, वृक्ष इन के शूल का, खांसी, श्वास और ज्वर इन का नाशक है ॥

तिलोंका तैल

क्षीरे चतुर्गुणे तैलं प्रस्थद्वयतिलोद्भवम् ।

शतशः पावितं यष्टीपलकल्केन यन्नतः ॥

पाननस्यादिभिर्यक्ष्महरमामयपांडुजित् ।

ऊर्ध्वजञ्जुगरोन्मादरक्तपित्तविसर्पनुत् ॥

अर्थ—१२८ तोले तिलों का तेल, ५१२ तोले दूध, ४ तोले मुलहठी का चूरा इन को एकत्र कर बहुत धार औटावे फिर छानके पीवे तो राजयक्ष्मा, पांडुरोग, हसली के ऊपर के भाग में होनेवाले रोग, विष के रोग, उन्माद, रक्तपित्त और विसर्प इन रोगों को दूर करे ॥

चंदनादितैल

चंदनांबुनखैर्याम्यं यष्ट्या शैलेयपद्मकम् । मंजिष्ठा सरलं दारु
सेव्यैलं पूतिकेसरम् ॥ हरिद्रा सारिवा तित्ता लवंगागुरु-
कुंकुमम् । त्वग्नेणुनलिका चेति तैलं मस्तु चतुर्गुणम् ॥ लाक्षार-
ससमं सिद्धं ग्रहघ्नं बलवर्धनम् । अपस्मारज्वरोन्मादकृत्याल
क्ष्मीविनाशनम् ॥ आयुःपुष्टिकरं चैव वशीकरणमुत्तमम् ।
विशेषात्क्षयरोगघ्नं रक्तपित्तहरं परम् ॥

अर्थ—चंदन, नेत्रवाला, नख (सुगंधद्रव्य), लालचंदन, मुलहठी, शिलाजीत पद्मास, मजीठ, सरलद्रव्य, देवदारु, खस, जवाद, हलदी, सारिवा, कुटकी, लैंग अगर, केशर, दाडचीनी, रेणुकबीज और नलिका ये सब वस्तु समान भाग में और इन सब से चौगुना तेल तथा दही का जल और सब की बराबर लाख व काढा लेवे सब को एकत्र करके तेल सिद्ध करे यह ग्रहनाशक, बल बढ़ानेवाला मृगी, ज्वर, उन्माद रोग, कृत्या (घातमूढ) और अलक्ष्मी इन को नाश करे तथा आयुष्य, पुष्टि और वशीकरण इन को करे है तथा विशेष करके क्षयरोग और रक्तपित्त इन को नाश करे है ॥

लक्ष्मीविलासतैल

एलाश्रीखंडरास्नाजतुनखशशितक्कोलकं चाथ मुस्ता वल्लत्वग्दा-
रुकृष्णागरुतगरजटाकुप्रमेतत्समांशम् । त्रैगुण्यं कालरालं सु-
दृढमरुकायंत्रसिद्धं तु तैलं गंधैः पुष्पैश्च भाव्यं परिमल्ल-
लितं नामतो गंधतैलम् ॥ एतल्लक्ष्मीविलासं जनयति जगती-
नायकैः संप्रयोगं युक्त्या रोगान् निखिलगदहरं वातसंघात-
हंतृ । पीतं तांबूलवल्लीदलमिलितमलं जाठरे वह्निसिद्धं कु-
र्याद्दुर्नामयक्ष्मक्षयमपि नितरामंगसमर्द्धनेन ॥

अर्थ—इलायची, चंदन, रासना, लाख, नखद्रव्य, कपूर, कंकोष्ठ, नागरमोथा, खिरेटी, दालचीनी, हलदी, पीपल, अगर, तगर, जटामांसी, कूठ ये समान भाग ले-
तिगुनी राख लेवे. इन सब पदार्थों को डमरुयंत्र में डालके तेल निकाल लेवे. इसे
लक्ष्मीविलासतेल कहते हैं यह अत्यंत सुगंध करके युक्त इस को गंधतैल भी
कहते हैं. यह स्त्रीपुरुषों में प्रीति उत्पन्न करे है. युक्तिपूर्वक इस का उपयोग करने से अनेक
रोग तथा अनेक वादी के रोग इन को नाश करे-इस को पान में लगायके स्वाय तो
जठराग्नि को दीप्त करे तथा देह में लगाने से बवासीर, क्षयरोग इन को नाश करे है ॥

व्यवायजन्यशोष

व्यवायशोकवार्धक्यव्यायामाध्वप्रशोपितान् ।

व्रणोरःक्षतसंज्ञौ तु शोषिणो लक्षणं शृणु ॥

अर्थ—अति मैथुन का शोष, शोकशोषी, वार्धक्यशोषी, व्यायामशोषी, मार्ग-
शोषी, व्रणशोषी और उरःक्षतशोषी इन के न्यारे न्यारे लक्षण कहता हूँ ॥

व्यवायशोषिलक्षण

व्यवायशोषी शुक्रस्य क्षयलिङ्गैरुपद्रुतः ।

पांडुदेहो यथापूर्वं क्षीयंते चास्य धातवः ॥

अर्थ—व्यवायशोषी (अति मैथुन से क्षीण भया), (सुश्रुत) के कहे अनुसार
शुक्रक्षयलक्षणों से (शुक्रक्षय होने से लिङ्ग और अंडकोश में पीडा होय मैथुन करने में
अशक्ति और बल से मैथुन करे तौ बहुत देर में शुक्र का स्राव होय और वह स्राव
बहुत अल्प होय अथवा रुधिर का स्राव होय) पीडित होय उस के देह का वर्ण
पीला हो जाय और शुक्र से मज्जा, मज्जा से हड्डी ऐसे उलटे धातु क्षीण होते जाते हैं ॥

व्यवायदोषचिकित्सा

व्यवायशोषिणं क्षीररसमांसाज्यभोजनैः ।

सकलैर्मधुरैर्हृद्यैर्जीवनीयैरुपाचरेत् ॥

अर्थ—जो प्राणी अत्यन्त मैथुन के करने से क्षीण हो गया हो उस को दूध, मांस,
घी इन करके युक्त भोजन करे तथा संपूर्ण मिष्ट पदार्थ, हृदय को जो प्रिय हो,
आयुष्यवर्धक ऐसी औषधों का उपचार करे ॥

शोकशोषिलक्षण

प्रध्मानशीलः स्रस्तांगः शोकशोष्यपि तादृशः ।

विना शुक्रक्षयकृतैर्विकारैरुपलक्षितः ॥

अर्थ—शोकशोपी अर्थात् शोच से जिस को क्षय हो वह चिंता करे और हाय, परै गलने लगे तथा शुक्रक्षयव्यतिरिक्त शोपवान् हो और पांडु देह होय ऐसा शोच से क्षयवाला पुरुष होता है ॥

शोकशोपिचिकित्सा

हर्पणाश्वासनैः क्षीरैः स्निग्धैर्मधुरशितलैः ।

दीपनैर्लघुभिश्चान्नैः शोकशोपमुपाचरेत् ॥

अर्थ—जो प्राणी शोक के कारण क्षीण हो गया हो उस को हर्प (प्रसन्न करना), आश्वासन (धीरज बधाना) तथा क्षीर, स्निग्ध, मधुर, शीतल, दीपन और हलके ऐसे अन्न इन पदार्थों करके उपचार करे ॥

जराशोपलक्षण

जराशोपी कृशो मंदवीर्यबुद्धिवर्लेन्द्रियः ।

कंपनो रुचिमान्भिन्नः कांस्यपात्रहतस्वरः ॥

प्रीवति श्लेष्मणा हीनो गौरवारुचिपीडितः ।

संप्रसृतास्यनासाक्षिः शुष्करूक्षमलच्छविः ॥

अर्थ—जरा (बुढापा) शोपी मनुष्य कृश होय है उस के वीर्य, बुद्धि, बल और इन्द्रियों मन्द होजाँय, कंप होय, अन्न में अरुचि, फूटे कांसे के वासन को लकड़ी से बजाने से जैसा शब्द होय ऐसा शब्द होय, कफरहित वारंवार थूके (अर्थात् कफ के निकालने के वास्ते यत्र करे तथापि कफ नहीं निकले) शरीर भारी रहे अरुचि से पीडित (पुनः अरुचि ग्रहणविशेषताद्योतक के वास्ते कही है) मुख, नाक और नेत्र इन से स्राव होय मल शुष्क उत्तरे और देह की कांति निस्तेज होय ॥

अध्वशोपलक्षण

अध्वप्रशोपी स्रस्तांगः संभृष्टरूपच्छविः ।

प्रसुप्तगात्रावयवः शुष्कक्लोमगलाननः ॥

अर्थ—अध्वप्रशोपी (अति मार्ग चलनेसे क्षीण हुआ) मनुष्य के हाय, पैर शिथिल हो जावें उस के देह का वर्ण भूजे पदार्थ के सदृश और सरदार होय है सर्व देह में प्रसुप्ता हृदय में प्यास का स्थान है सो गञ्जा और मुस इन का सुसन्ना, झांका—क्यों जी जराशोपी के अनन्तर व्यायामशोपी के लक्षण कहने चाहिये अध्व (मार्ग) शोपी के लक्षण नहीं कहने चाहिये फिर माधवाचार्य ने अध्वशोपी के लक्षण य्यों कहे । * उत्तर—अध्वशोपी के लक्षण इस वास्ते पहले कहे कि व्यायामशोपी में

इस के सब लक्षण मिलते हैं । अच्छा आप ऐसे कहोगे तो व्यायामशोपी में अध्वशोपी के कौनसे लक्षण नहीं मिलते ? *उत्तर—तुम ने कहा सो ठीक है परंतु अध्वशोपी में उरःक्षत आदि चिन्ह नहीं है इस से पूर्व अध्वशोपी के लक्षण कहे ॥

अध्वशोपचिकित्सा

आस्यासुखैर्दिवास्वप्नैः शीतैर्मधुरबृंहणैः ।

अन्नमांसरसाहारैरध्वशोपमुपाचरेत् ॥

अर्थ—बैठने का सुख, दिन में सोना और शीतल, मधुर, पीष्टिक ऐसे अन्न, मांस का रस इन के सेवन इन उपायों से अध्वशोप (रास्ते के चलने करके जो सूख गया हो उस) की चिकित्सा करे ॥

व्यायामशोपलक्षण

व्यायामशोपी भूयिष्ठमेभिरेवमुपद्रुतः ।

लिङ्गैरुरःक्षतसमैः संयुक्तश्च क्षतं विना ॥

अर्थ—व्यायामशोपी (अत्यंत दंड कसरत आदि श्रम से क्षीण) मनुष्य, विशेष करके अध्वशोपी के लक्षण स्रस्तंगतादियुक्त होय है, अर्थात् जो लक्षण अध्वशोपी में पाड़े थोड़े होते हैं वे व्यायामशोपी में अधिक होते हैं और उस मनुष्य के पाव के बिना ही उरःक्षत के लक्षण मिलते हैं उरःक्षतके लक्षण सुश्रुत में लिखे हैं ॥

व्यायामशोपचिकित्सा

व्यायामशोपिणं स्निग्धैः क्षतक्षयकृतैर्हितैः ।

उपाचरेज्जीवनीयैर्विधिना श्लैष्मिकेण तु ॥

अर्थ—जो प्राणी दंड, कसरत आदि परिश्रम के करने से क्षीण हो गया हो उस में स्निग्ध, क्षतक्षय पर जो पदार्थ हितकारी है तथा शरीर को हितकारी, कफ करने-वाले और जीवनीयगणोक्त औषध इत्यादिक उपचार करे ॥

व्रणशोपलक्षण

रक्तक्षयाद्रेदनाभिस्तथैवाहारयंत्रणात् ।

व्रणिनश्च भवेच्छोपः स चासाध्यतमो मतः ॥

अर्थ—रुधिर के क्षय से फोड़ा की पीड़ा से तैसे ही आहार के घटने से व्रणी पुरुष के शोप होय सो अत्यंत असाध्य जानना ॥

व्रणशोष

व्रणशोषं जयेत्स्निग्धैर्दीपनैः स्वादुशीतलैः ।

ईषदम्लैरनम्लैर्वा यूपमांसरसादिभिः ॥

अर्थ—चिकने, दीपन, मीठे, कुछ २ खट्टे और मिष्ट ऐसे यूप मांस रस इत्यादि से व्रणशोष अर्थात् जिस के घाव होने से क्षीण हो उस का यत्न करे ॥

रसवर्द्धन

गुडूची शृंगवेरं च यवानां कथितं जलम् ।

मरीचैः कथितं दुग्धं पाने रात्रौ प्रशस्यते ॥

रसस्य तेन वृद्धिः स्यात्क्षयं शीघ्रं विमुंचति ॥

अर्थ—गिलोय, अदरक और जो इन का काटा अथवा काली मिरच डाला तपाया हुआ दूध पीवे तो रसधातु की वृद्धि होवे और तत्काल रसक्षय का नाश होय

रक्तवर्द्धन

गोधूमयवशालीनां जांगलानि विशेषतः ।

घृतदुग्धसिताक्षौद्रमरीचानि च पिप्पली ॥

पानं शस्तं मनुष्याणां रक्तवृद्धिकरं परम् ॥

अर्थ—गेहूँ, जो, शालीधान्य, जंगली जीवों का मांस, धी, दूध, मिश्री, सहस्र काली मिरच और पीपल इन का सेवन करे तो मनुष्यों के रुधिरवृद्धि करने को यह यत्न उत्तम है ॥

मांसवर्द्धन

अनूपानि च धान्यानि लशुनादीनि कल्पयेत् ।

कुल्यासघृतदुग्धादीन् सेवयेन्मधुराणि च ॥

अर्थ—जलसमीप रहनेवाले जीवों का मांस और अनुपदेश के धान्य, लहसन, धी, दूध और मधुर पदार्थ ये भक्षण करे तो मांसवृद्धि होय ॥

मेदवर्द्धन

तालिसाद्यं हितं चूर्णसेवनं मधुरांस्तथा ।

रसांश्च जांगलान्दद्यात् सेवनार्थं भिषग्वरः ॥

अर्थ—तालीसादिक चूर्ण, मधुर रस, तथा जंगली जीवों के मांस का रस ये पदार्थ जिस प्राणी की मेदाधातु क्षीण हो गई हो उस को देवे ॥

दूसरा प्रकार

सीतोपलादिकं चूर्णमजाक्षीरं सकोलकम् ।

हितं पानं क्षये चैव कल्पयेत्प्रातराशनेः ॥

अर्थ—सितोपलादि चूर्ण, बकरी का दूध, वन में रहनेवाला सूअर का मांस तथा हितकारी पदार्थों का पान ये सब वस्तुओं को वैद्य प्रातःकाल खाने को देवे तो मेदाघात की वृद्धि होवे ॥

अस्थिवर्धन

घृतपक्वानि शस्तानि क्षीराणि विविधानि च ।

चंदनादीनि द्राक्षादिचूर्णानि च भिषग्वरैः ॥

जांगलानि च सर्वाणि सेवनीयानि पुत्रक ।

मधुराणि तथान्नानि सर्वाणि संप्रयोजयेत् ॥

अर्थ—घृतपक्क पदार्थ (मोमन की पूड़ी, कचौड़ी), दूध के पदार्थ, चंदनादि और द्राक्षादि चूर्ण, जंगली जीवों का मांस, मधुर अन्न और पान ये सब कुशलवैद्य हड्डी क्षीण हो गई हो उस के घटाने को देवे ॥

शुक्रवृद्धि

शुक्रक्षयेम्लपक्वानि सराणि च विशेषतः ।

नवनीतं तथा क्षीरं मधुराणि च सेवयेत् ॥

अर्थ—जिस प्राणी का शुक्र (वीर्य) क्षीण हो गया हो उस को अम्ल पदार्थों से सिद्ध करा हुआ अन्न तथा विशेष करके दस्तावर पदार्थ, मक्खन, दूध और मधुर रस ये देने चाहिये ॥

दूसरा प्रकार

ककटीमूलपयसा विदारीकंदशाल्मली ।

सिताब्धं च हितं पानं शस्यते मधुना सह ॥

अर्थ—ककड़ी की जड़ को पीसके दूध में मिलाय छेवे तथा विदारीकंद, सेमर को मूसला तथा मिश्री और सहत मिलायके पीवे तो शुक्र की क्षीणता दूर होवे ॥

ककड़ी का रस वांतिपर

पिवेद्वांतिप्रशांत्यर्थं क्षौद्रं छिन्नरुहारसम् ।

मातुलुंगस्य मूलं वा लाजाचूर्णं ससैधवम् ॥

पिप्पलीमधुसंयुक्तं खादेद्वांतिप्रशांतये ॥

अर्थ-क्षयरोग में वांति (वमन) नाश करने को गिलोय का रस, सहत अथवा विजोरे की जड़, खीलों का चूरा, सेंधा निमक, पीपल और सहत इन को एकत्र करके पीवे तो वमन होना शांति होवे ॥

दूसरा प्रकार

रजनी पूगखंडं च निष्कैकं वांतिनाशकम् ।

निष्कार्धं टंकणं वाथ काकमाचीद्रवैः पिबेत् ॥

सुगंधं वा पिबेत्खादेत्सर्वं वांतिप्रशांतये ॥

अर्थ-हलदी, सुपारी और मिश्री इन का एक तोला चूर्ण सेवन करे तो वांति को नाश करे अथवा आधा तोला मकोय के रस में सुहागा मिलायके पीवे अथवा सुगंधित पदार्थों को पीवे वा खाय तो सर्व प्रकार की वांति (रहों) की शांति होवे ॥

रक्तवांतिपर

आलक्तकरसैः क्षौद्रं रक्तवांतिहरं परम् ।

पुष्यार्कं काकतुंब्यास्तु मूलं गोक्षीरमर्कटम् ॥

रक्तवांतिहरं पेयं सदाहे निष्कनिष्ककम् ॥

अर्थ-लास का रस और सहत इन को एकत्र करके पिलावे अथवा काकडोडी की जड़ पुष्य नक्षत्र पर जब सूर्य आवे तब उखाडी हो उस को गौ के दूध में औटागने देवे वह दाहयुक्त रुधिर की वांति को नाश करे ॥

उशीरादिचूर्ण

कंकोलं चंदनद्वयम् । लवंगं पिप्पलीमूलं

॥ मुस्तामलककर्पूरं तवक्षीरं च पत्रकम् ।

सिता ॥ दृष्टमांशतः ॥ रक्तवांतिं च

, सपेद चंदन, लौंग, पीपरामूल,
कर्पूर, तवाररीर, पत्रज, काकडोडी
मिश्री मिलायके चूर्ण करे पर

श्लेष्मापर

विकारे श्लेष्मणो जाते भक्षयेत्कदलीफलम् ।

भृष्टं तन्मरिचैः साज्यं हन्ति श्लेष्माणमुल्बणम् ॥

अर्थ—कफविकार होने से केला की पकी हुई फली को भून सहत और काली मिरच के चूर्ण में मिलायके खाये तो बढे हुए कफ को नाश करे ॥

कुस्तुंबरीचचूर्ण

घृतं कुस्तुंबरीचूर्णं पाययेच्छर्करायुतम् ।

एलामरीचसंयुक्तं खादेदरुचिशांतये ॥

अर्थ—धनिया इलायची, काली मिरच इन के चूर्ण को घी मिश्रीमें मिलायके खाये तो अरुचिनाश होय ॥

अरुचिपर

खादेदरुचिशांत्यर्थमार्द्रकं वा समाक्षिकम् ॥

अर्थ—अरुचि दूर करने को अदरस का रस मिलायके खिये ॥

दाहपर

कांचनारस्य त्वक्पिपष्टं सजीरं तापनाशकम् ।

कर्पूरेण समायुक्तं रसं तापे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—कचनार की छाल को कूटकर रस निकाल लेवे उस में जीरे का चूर्ण और कपूर डालके देवे तो संताप का नाश होय ॥

शोषपर

कोलिलाक्षस्य बीजैर्वा जीरकंण गुडेन वा ।

वमने चास्य शोषे वा फलं जात्याः प्रशस्यते ॥

मत्स्याक्षी पाटला मेघनादमूलं च शोषजित् ॥

अर्थ—तालमसाने, जीरा और जायफल इन का चूर्ण गुड के साथ देवे किंवा मत्स्याक्षी (मछली), पाटल और चीलाई इन की जब देवे तो शोषरोग नष्ट होवे ॥

इति श्रीबृहन्निर्यटुरत्नाकरे राजयक्ष्मरोगनिदानचिकित्सा समाप्त ।

उरःक्षतक्षयनिदानम् ।



धनुरायम्यतोत्यर्थं भारमुद्ग्रहतो गुरुम् । युध्यमानस्य बलिभिः
 पततो विषमोच्चतः ॥ वृषं हयं वा धावंतं दम्यं चान्यं निगृह्यतः ।
 शिलाकाष्ठाश्मनिर्घातान्क्षिपतो निघ्नतः परान् ॥ अधीयानस्य
 वात्युच्चैर्दूराद्वा व्रजतो भृशम् । महानदीं चातरतो हयैर्वा सह धा-
 वतः ॥ सहस्रोत्पततो दूरं तूर्णं वापि प्रनृत्यतः । तथान्यैः कर्म-
 भिः क्रूरैर्भृशमभ्याहतस्य च ॥ वीक्ष्यते वक्षसि व्याधिर्बलवा-
 न्समुदीर्यते । स्त्रीषु चातिप्रसक्तस्य रूक्षाल्पप्रमिताशिनः ॥ उरो
 विरुज्यतेत्यर्थं भिद्यतेथ विदह्यते । प्रपीड्यते तथा पार्श्वे शुष्य-
 त्यंगं प्रवेपते ॥ क्रमाद्दीर्यं बलं वर्णो रुचिरग्निश्च हीयते । ज्वरो
 व्यथा मनोदैन्यं विद्भ्रमेदाग्निवधावपि ॥ दुष्टः श्यावः सदुर्गंधः
 पीतो विग्रथितो बहु । कासमानस्य चाभीक्षणं कफस्रावः प्रवर्त-
 ते ॥ स क्षती क्षीयतेत्यर्थं तथा शुक्रौजसः क्षयात् ॥

अर्थ—बहुत तीरंदाजी करने से बहुत भारी वस्तु उठाने से बलवान् पुरुष के साथ यु-
 करने से ऊंचे स्थान से गिरने से बेल घोड़ा हाथी ऊंट इत्यादिक दौड़ते हुआ को था-
 ने से भारी शिला लकड़ी पत्थरनिर्घात (अस्त्रविशेष) इन के फेंकने से शत्रु को मार-
 णाला जोर से वेदादिक शास्त्र को पढ़ने से अथवा दूर दिशावर शीघ्र चलकर जाने से गं-
 यमुनादि महानदी को तरनेवाला अथवा चोड़े के साथ दौड़नेवाला अकस्मात् कल-
 खानेवाला जल्दी जल्दी बहुत नाचने से इस प्रकार वृसरे मल्लयुद्धादि क्रूर कर्म करने
 पर (छाती) फट जाती है ऐसे पुरुष की छाती दूखने से बलवान् उरःक्षतरूप व्याधि
 उत्पन्न होय है और बहुत मैथुन करे तथा रूखा थोड़ा कुसमय तथा छाती में चो-
 छगने से अत्यंत स्त्रीरमण करने से और रूखा थोड़ा और अनमानका भोजन
 करनेवाले के पूर्वोक्त लक्षणयुक्त ऐसे पुरुषका हृदय फटके सदृश मालूम हो अथवा
 हृदय के दो टुक कर डाले ऐसा मालूम होय और हृदय में अत्यंत पीडा होय औ-
 उस के पसवाढामें अत्यंत पीडा होय अंग सब सूखने लगे तथा घरघर कांपने लगे
 और शक्ति मांस वर्ण रुचि और अग्नि ये सब क्रम से घटने लगे ज्वर रहे व्यथा होय
 मन में सन्ताप दीन हो जाय अग्नि मन्द होने से दस्त होने लगे और बारंबार रांस

खांसते दुष्ट काला अत्यन्त दुर्गन्धयुक्त पीला गांठ के समान बहुत और रुधिर मिला ऐसा कफ गिरे इस प्रकार क्षतरोगी अत्यंत क्षीण होय सो केवल क्षत से ही क्षीण हो जाय ऐसा नहीं किन्तु स्त्रीसेवन करने से शुक्र और ओज (सब धातुओं का तेज) इनका क्षय होने से ये मनुष्य क्षीण होय है ॥

उरःक्षत के पूर्वरूप

अव्यक्तं लक्षणं तस्य पूर्वरूपमिति स्मृतम् ॥

अर्थ—उस उरःक्षत के अप्रगट लक्षणों को पूर्वरूप कहते हैं ॥

क्षतक्षीण के असाध्यलक्षण

उरोरुक्छोणितच्छर्दिंकासो वैशेषिकः क्षते ।

क्षीणे सरक्तमूत्रत्वं पार्श्वपृष्ठकटिग्रहः ॥

अर्थ—क्षतक्षीण रोगी के हृदय में पीडा होय रुधिर की उलटी करे और विशिष्ट कास (अर्थात् पूर्व कहे जो दुष्टधासादि लक्षण उन्हीं से युक्त होय) और रुधिरयुक्त मूत्र का उत्तरना पसवाड़े पीठ और कमर इन में पीडा होय ॥

असाध्यलक्षण

अल्पलिंगस्य दीप्ताग्नेः साध्यो बलवतो नवः । परिसंवत्सरो
याप्यः सर्वलिंगं विवर्जयेत् ॥ परं दिनसहस्रं तु यदि जीवति मा-
नवः । सुभिपग्भिरुपक्रांतस्तरुणः शोपपीडितः ॥

अर्थ—जिस में थोड़े लक्षण मिलते हैं और जिस को अग्नि दीप्त होय ऐसे पुरुष बलवान् के होय तथा रोग नवा हो तो वह साध्य है और रोग को भये एक वर्ष व्यतीत हो गया होय सो याप्य (साध्यासाध्य) है और जिस में सर्व लक्षण मिलते होय सो असाध्य है उस को वैद्य त्याग देय ॥

उरःक्षतक्षयचिकित्साक्रम

यद्यच्च तर्पणं शीतमविदाहि हितं लघु ।

अन्नपानं निपेव्यं तत्क्षतक्षीणैः सुखार्थिभिः ॥

अर्थ—जो जो पदार्थ वृत्ति करनेवाले, शीतल, अविदाही अर्थात् जो दाह न करे, तकारी, हलके हो वह वह अन्न और जल सेवन उरःक्षत से क्षीण हुआ तथा सुख इच्छा करनेवाले को करना चाहिये ॥

चिकित्साक्रम

शोकं स्त्रियः क्रोधमसूयतां च त्यजेदुदारान्विषयान्भजेच्च ।

तथा द्विजातींस्त्रिदशान्गुरुंश्च वाचश्च पुण्याः शृणुयाद् द्विजेभ्यः ॥

अर्थ—उरःक्षत से क्षीण हुए मनुष्य को शोक करना, स्त्री सेवन, दूसरे के गुणों में दोष लगाना ये छोड़ देवे. तथा कथा, पुराण इत्यादि विषय सेवन करे, देव, ब्राह्मण और गुरु इन की सेवा करे ब्राह्मणों से पुण्यकारक वाणी को श्रवण करे ये सब कर्म हितकारी हैं ॥

दशमूलादिकाढा

दशमूलवलारास्त्रापुष्करामरदारुनागरैः कथितम् ।

पेयं पार्श्वसशिरोरुक्क्षतकासादिशांतये सलिलम् ॥

अर्थ—दशमूल, खिरेटी, रास्त्रा, पोहकरमूल, देवदारु, नागरमोथा इन का काढा पीवे तो पसवाडा, कंभा, मरतक इन स्थानों की पीडा, उरःक्षत, खांसी, श्वास ये शांति होवे ॥

बलादिकाढा

बला विदारी श्रीपर्णी बहुपुत्री पुनर्नवा । पयसा नित्यमभ्यस्ताः

क्षमयन्ति क्षतक्षयम् ॥ शृतं पयो मधुयुतं सिद्धार्थानां पिबेत्क्षयी ॥

अर्थ—बला, विदारीकंद, श्रीपर्णी (कंभारी), कांटेसेवंती वा सतावर, पुनर्नवा इन को पीसके दूध और सहत इन के साथ पीवे तो उरःक्षत क्षय का नाश होय ॥

एलादिगुटिका

एलापत्रत्वचो द्राक्षा पिप्पल्यर्धपलं पृथक् । सितामधुकखजू-

रमृद्धीकाश्च पलोन्मिताः ॥ संचूर्ण्य मधुना युक्ता वटिकाः संप्र-

कल्पयेत् । अक्षमात्रास्ततश्चैव भक्षयेच्च दिने दिने ॥ क्षतक्षयं

ज्वरं कासं श्वासं द्विक्कां वमिं भ्रमम् । मूर्च्छां मदं तृपां शोषं पा-

र्श्वशूलमरोचकम् ॥ घृहीतान्मात्र्यवातं च रक्तपित्तं ज्वरं क्षयम् ।

एलादिगुटिका हन्ति वृष्या संतर्पणी परा ॥

अर्थ—इलायची, पत्रज, दालचीनी, दारु, पीपल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे मिश्री, मुलहठी, खर्शूर और दाख ये प्रत्येक चार २ तोले लेय सब का चूर्ण करके

उस में सहत मिलायके गोली एक २ तोले की बनावे इस में से नित्य प्रती एक एक मेवन करे तो उरःक्षत, क्षय, ज्वर, खांसी, श्वास, दिचकी, वमन, भ्रम, मूर्च्छा, मद, तृषा, शोष, पसवाडे का शूल, अरुचि का रोग, ग्रीहा (तापतिह्नी), आढ्यवात, रक्तपित्त, ज्वर और क्षय इन का नाश करे ऐसी यह पलादिगुटिका वृष्य और तृप्ति करनेवाली है ॥

द्राक्षादिघृत

द्राक्षायाः प्रस्थमेकं तु मधुकस्य पलाटकम् । पचेत्तोयाठके
शुद्धे पादशोषेण तेन तु ॥ पलिके मधुकद्राक्षे पिष्टं कृष्णापल-
द्रयम् । प्रदाय सर्पिपः प्रस्थं पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ॥ सिद्धे शीते
पलान्यष्टौ शर्करायाः प्रदापयेत् । एतद् द्राक्षाघृतं सिद्धं क्षत-
क्षीणसुखावहम् ॥ वातपित्तज्वरश्वासविस्फोटकहलीमकान् ।
प्रदरं रक्तपित्तं च हन्यान्मांसचलप्रदम् ॥

अर्थ—दाख ६४ तोले, मुलहटी ३२ तोले और जल २५६ तोले इन तीनों को एकत्र कर औटावे. जब चतुर्याश जल रहे तब इस काटे को उतारके छान लेवे इस में मुलहटी और दाख इन को कूट २ कर चार चार तोले डाले पीपल का चूर्ण ८ तोले घी ६४ तोले और सब से चौगुना दूध डाले फिर चूल्हे पर चढायके घृत को सिद्ध करे अर्थात् बनावे जब तयार हो जावे तब उतारके शीतल कर लेवे फिर इस में ३२ तोले मिश्री मिलावे और सब को चलायके एक जीवकर लेय तो यह द्राक्षाघृत बनके तयार हो यह उरःक्षत करके क्षीण मनुष्यों को हितकारी है और वातपित्तज्वर, श्वास, विस्फोटक, हलीमक, प्रदर और रक्तपित्त इन को नाश करे तथा मांस को चलवान् करे ॥

बलादिघृत

घृतं बलानागबलाजुर्नान्बुसिद्धं सयष्टीमधुकल्कपादम् ।

हृद्रोगशूलक्षतरक्तपित्तं कासानिलाशान् शमयत्युदीर्णान् ॥

अर्थ—खिरेटी, गगेरन और कोह इन के काटे में मुलहटी का कल्क मिलाय के घृत को बनावे इस घृत के सेवन करने से हृदयरोग, शूल, उरःक्षत, रक्तपित्त, खांसी, यादी और बवासरि ये अत्यंत बडे हुए हो तोभी नाश करे ॥

पथ्यादिघृत

पथ्याह्वनागबलयोः काथे क्षीरसमे घृतम् ।

पयसा पिप्पलीवासाकल्कसिद्धं क्षते हितम् ॥

अर्थ—हरड और गगेरन इन के काटे में बराबर का दूध पीपल और अहुसा इन का कल्क डालके घृत बनावे यह घृत उरःक्षत क्षय को नाश करे ॥

गोक्षुराद्यघृत

श्वदंष्ट्रोशिरमंजिष्ठाबलाकाश्मर्यकटूतृणम् । दर्भमूलं पृष्ठीपर्णी
बला सर्पपका स्थिरा ॥ पलिकान्साधयेत्तेषां रसे क्षीरे चतुर्गुणे ।
कल्कैः स्वगुत्सर्पभकमेदाजीवंतिजीवकैः ॥ शतावर्यादिमृद्धी-
काशर्कराश्रावणीवृषैः । प्रस्थं सिद्धं घृतं वातपित्तहृद्रोगगुल्म-
नुत् ॥ मूत्रकृच्छ्रप्रमेहार्शकासशोपक्षयापहम् । धनुःस्त्रीसंग-
भाराध्वखिन्नानां बलमांसदम् ॥

अर्थ—गोखरू, खस, मजीठ, खिरेटी, कंभीरा, कटूतृण, डाभ की जड़, पृष्ठपर्णी, अतिबला, सरसों और सालपर्णी ये सब औषध चार २ तोले लेय इन का रस और चौगुणा दूध तथा सपेद लाजालू, सपेद सांठ, मेदा, जीवंती, जीवक, सतावर, दाख, मिश्री, मुंडी और अहुसा इन का कल्क और १ सेर घी इन को एकत्र करके घृतपाक करे इस घी के खाने से वात, पित्त, हृदयरोग, गोला, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, बवासीर, खांसी, शोष और क्षय इन को नाश करे ॥

अमृतप्राश्यावलेह

क्षीरघात्रीविदारीक्षुक्षीरीणां च तथा रसे । पचेत्समे घृतप्रस्थे म-
धुकैरिक्षुणान्वितैः ॥ द्राक्षाद्विचंदनोशीरशर्करोत्पलपद्मकैः ।
मधूककुसुमानंताकाश्मरीतृणसंज्ञकैः ॥ प्रस्थार्धं मधुनः शीत-
शर्करायास्तुलां तथा । पलार्धकांश्च संचूर्ण्य त्वगेलापद्मकेसरान् ॥
विनीय तस्य संलिह्यान्मात्रां नित्यं सुयंत्रितः । अमृतप्राश्यामि-
त्येतन्निर्मितं त्रिपुरारिणा ॥ क्षीरमांसाशिनो हंति रक्तपित्तक्षत-
क्षयान् । तृष्णारुचिश्वासकासछर्द्याद्विक्काप्रमर्दनम् ॥ मूत्रकृच्छ्र-
ज्वरघ्नं च बल्यं स्त्रीरतिवर्द्धनम् ॥

अर्थ—दूध, आवलों का रस, विदारी कंद का रस, ईस का रस, क्षीर घृतों का रस २, तथा १ सेर घी इन सब को मिलापके उत्तम विधि से पचावे. फिर इस में मुलहदी,

ईख, दाख, चंदन, छालचंदन, नेत्रवाला, मिश्री, कूट, पन्नाख, महुआ के फूल, घ-
मासा, कंभारी और कत्तूण इन का चूर्ण ढालके अवलेह बनावे जब शीतल हो जावे
तब ३२ तोले सहत और ४०० तोले मिश्री और दालचीनी, पत्रज, नागकेशर इन
प्रत्येक का चूर्ण दो दो तोले ढालके धर रखे. इस में से अग्नि का बलावल विचार-
के मात्रा खाने को देवे. दूध और मांस इत्यादिक पदार्थ पथ्य में देवे तो रक्तपित्त,
क्षतक्षय, प्यास, अरुचि, श्वास, खांसी, वांति, हिचकी, मूत्रकृच्छ्र और ज्वर इन का
नाश करे और बल तथा स्त्रियों में प्रीति इस के सेवन से बढ़ती है. इस को
अमृतप्राश्यावलेह कहते हैं ॥

रसराज

मुक्ताप्रवालरसहेमशिताभ्रकांतं वंगं मृतं सकलमेतदलं विभा-
व्य । छिन्नारसेन च वरीसलिलेन सप्त पश्चाद्देन्मधुहविर्मरिचेन
साकम् ॥ लिह्यादुरःक्षतहरं रसराजकार्ख्यं मापप्रमाणमतनूद्भव-
हेतुमेनम् ॥

अर्थ—मोती, मूंगा, पारा, सुवर्ण, काला अमृत, कांतलोह और वंग इन सब
की भस्म समान भाग लेवे इन को गिलोय और सत्तावर के रस की पृथक् २ सात
सात दिन भावना देवे फिर इस रसराज में से १ मासे की मात्रा सहत, धी और काली
मिरचों का चूर्ण इन के साथ देवे तो उरःक्षत का नाश करे तथा कामदेव
को प्रदीप्त करे है ॥

उरोमथिक्षती लाजान्पयसा मधुसंयुतान् । सद्य एव पिबेत्
जीर्णे पयसाद्यात्सशर्करम् ॥ पार्श्ववस्तिरुजि त्वल्पपित्ता-
ग्निस्तान् सुरायुतान् ॥

अर्थ—उरःक्षत क्षयरोगी को स्त्रियों को दूध और सहत के साथ भक्षण करे,
जब ये पच जावे तब मिश्री मिलायकर दूध पीवे तथा पसवाडा और बस्ती इन में
शूल तथा अग्नि और पित्त ये मंद होवे तो उन रोगियों को मद्य के साथ धान की
खीछ खानी चाहिये ॥

क्षयरोग में पथ्य

दोषाधिकस्य बलिनो मृदुशुद्धिरग्रे गोधूममुद्गचणकावनशाल-
यश्च । छागानि मांसनवनीतपयोघृतानि ऋव्यादमांसमपि जांग-
लजा रसाश्च ॥ मार्त्तंडचन्द्रकिरणैः प्रतिशोपितानि लेह्यानि

पक्कपल्लानि सुचूर्णितानि । रागाः सकांबलिकखांडववेसवारा
 भक्ष्याः शशांककिरणैर्मधुरो रसश्च ॥ पक्वानि मोचपनसाप्र-
 फलानि धात्रीखजूरपौष्करपरूपकनारिकेरम् । सौभाञ्जनं वकु-
 लकं नवतालसस्यद्राक्षाफलानि भिषजापि इमानि दद्यात् ॥ सिं-
 हास्यपत्रमपि गोमहिषीघृतं च छागाश्रयश्च हितदंतकमूत्र-
 लेपः । मत्स्यंडिकाशिखरणीमदिरारसालाः कर्पूरकं मृगमदः
 शित्तिचंदनं च ॥ अभ्यंजनानि सुरभीण्यनुलेपनानि स्थानानि
 वेश्मरचनान्यवगाहनानि । हर्म्यं स्रजः स्मरकथा मृदुगंधवाहः
 शीतानिलास्यमपि चंद्ररुजो विपंची ॥ संदर्शनं मृगदृशामपि
 हेमपूर्णं मुक्तामणिप्रचुरभूषणधारणं च । होमप्रदानममराद्रिजपू-
 जनानि दिव्यानुपानमपि पथ्यगणः क्षयात् ॥

अर्थ—जो दोषाधिक क्षयरोगी बलवान् हो तो प्रथम मृदु विरेचन आदि से शुद्धि करे तथा गेहूँ, मूँग, चना, वन के शाली (लाल चावल), बकरे का मांस, मक्खन, दूध, घी, कच्चे मांस भक्षण करनेवाले पक्षियों का मांस, जंगली जीवों का मांस, रस, सूर्य की किरणों से तपे हुए तथा चंद्रमा की किरणों से शीतल ऐसे लेह्य पदार्थ, पक करे हुए तथा बारीक करे हुए मांस, खांडवादि, राग और कांबलिक (मूल और फल इन के काष्ठ में समभाग तिल पुष्पों की खटाई डालते हैं वह) वेसवार (गरम मसाला) [तवेड] पने, चंद्रमा की किरण, मीठे रस, पके हुए केले की गहर, कटहर, पके आम, आमरे, खजूर (लुहारे), पुहकर मूल, फालसे, नारियल, सहजना, मौलसरी, नवीन ताल के फल, हरी दारु, अहूसे के पत्ते, गौ और भैस का घी, सर्वदा बकरियों में रहना [अथवा बकरे की मँगनी और मूत्र का लेप], मत्स्यंडी (मिश्री), सिखरन, मद्य (दारु), रसाला (मिश्री काली मिरच मिछायके बनाते हैं वह पदार्थ), कपूर, कस्तूरी, सपेद चंदन, उबटना, सुगंधित लेप, उत्तम सुंदर और मनोहर ऐसे स्थान, तथा घर (न्हाना और बख्खालंकारादि से सजना), गोता मारना, फूल माला का धारण करना, काम के बढानेवाली वार्त्ता का कहना, शीतल मंद सुगंध पवन, नाच, गान, चंद्रमा की चांदनी, वीणा (वीनवाजा) छियों का दर्शन तथा सुवर्ण (सुवर्ण के बर्क), मोती, हीरा पन्नाआदि रत्न के गहनों का धारण तथा होम दान देव और ब्राह्मण इन की पूजा और उत्तम अनुपान, यह सब क्षयरोग में पथ्यगण कहा है. क्षयरोग को भाषा में रई की विमारी कहते हैं कोई कोई इस को राजरोग कहते हैं ॥

क्षयपर अपथ्य

विरेचनं वेगविधारणं च श्रमश्च सुस्वेदनमंजनं चाप्रजागरं साहसकर्मसेवा रूक्षं च पानं विपमाशनं च॥तांबूलकालिंगकुलिंगमांसं रसोनवंशांकुररामठानि । अम्लानि तिक्तानि कपायकाणि कटूनि सर्वाणि च पत्रशाकम् ॥ क्षारान्विरुद्धाध्यशनानि विंवी ककौटकं चापि विदाहि सर्वम् । कुटिलिकं कृष्णमपिक्षयेषु विवर्जयेत्संततमप्रमत्तः ॥

अर्थ—विरेचन, मलमूत्रादि वेगों का धारण, परिश्रम, स्वेदन, अंजन, रात्रि में जागना, साहस (जो अपनी सामर्थ्य से न हो सके उस को करना) रूखा अन्न, रूखा पान, विपमाशन, तांबूल भक्षण, तरबूज, कुलथी, (कुलंग पक्षी का मांस) उडद, द्रहसन, वंश की कोपल, हींग, खट्टे पदार्थ, कहुए और कपेले पदार्थ, तथा सब चर्परे (स, साग, पत्तो का क्षार, विरुद्ध भोजन, अध्यशन, कंदूरी (सैम), ककोडा (करेला), संपूर्ण विदाही पदार्थ, लाल और सपेद पुनर्नवा ये पदार्थ क्षयरोगी को सेवन करना वर्जित है ॥

इति श्रीबृहन्निषण्डुरतनाकरं उर क्षतनिदानचिन्तिता समाप्ता ।

कासकर्मविपाकः.

द्रव्याणि चाल्पसाराणां स्तेयं कृत्वान्यवेपतः ।

चरेत्सांतपनं कृच्छ्रमित्येवं मनुरब्रवीत् ॥

अर्थ—जो प्राणी दुर्बल (गरीब) मनुष्यों का द्रव्य चुराता है इस पाप के प्रभावसे इस जन्म में वह प्राणी कफरोगी होता है. उस को इस पाप के प्रायश्चित्त करने को कृच्छ्र और सांतपन व्रत करना चाहिये ऐसे मनुमहाराज की आज्ञा है ॥

दूसरा प्रकार

त्रपुहारी च पुरुषो जायते श्रेष्मलः सदा ।

उपोष्य दिवसं सोपि दद्यात्पलशतं त्रपु ॥

अर्थ—जो प्राणी पूर्वजन्म में रांगे की चोरी करता है वो इस जन्म में कफरोगी होता है उस को एक दिन उपवास करके ४०० तोले रांगे का दान करना चाहिये ॥

तीसरा प्रकार

नित्यानुष्ठानविमुखः कफरोगी भवेन्नरः । पराभवं स चाप्रोती-
त्याह वै भगवान् यमः ॥ तच्छांतये मासमेकं यावकं भक्षयेन्नरः ।
सहस्रनामपाठश्च होमश्चाष्टोत्तरायुतम् ॥ नाममंत्रेण कुर्वीत च-
र्वाज्यं च हविर्भवेत् ॥

अर्थ—जो प्राणी नित्यकर्म (संध्यावंदनादि) नहीं करे वो कफरोगी होता है
उस को कफ से अथवा शत्रु से पीडा होती है इस प्रकार यमऋषि ने कहा है. इस
पाप की शांति के अर्थ १ महीने पर्यंत जो खाय और विष्णुसहस्रनाम का पाठ तथा
अष्टाक्षरी वा द्वादशाक्षरीनाममंत्र से चरु और आज्य (घृत) इन से १०८ आहुती
देवे इस प्रकार विधि करनी चाहिये ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

सूर्ये कुलीरजाते बुधेन दृष्टे विगतनेत्रः ।

कफमारुतरोगार्तः परस्वहारी विलोलमतिचेष्टः ॥

अर्थ—जन्मसमय में सूर्य कर्कराशि में बैठा होय और बुध उस को देखता होय
तो नष्टदृष्टि अर्थात् अंधा होय अथवा कफवातरोगी होय अथवा चोरी और चंचलपने
(चालाकी) के कर्म करे ॥

कारणसम्प्राप्ति और निरुक्ति

धूमोपघाताद्रजसस्तथैव व्यायामरूक्षान्ननिपेवणाच्च । विमार्ग-
गत्वादपि भोजनस्य वेगावरोधात्क्षवथोस्तथैव ॥ प्राणो ह्युदाना-
नुगतः प्रदुष्टः संभिन्नकांस्यस्वनतुल्यघोषः । निरेति वक्त्रा-
त्सहसा सदीपो मनीषिभिः कास इति प्रदिष्टः ॥

अर्थ—नाक मुख में धूर वा धूआ जाने से दंड, कसरत, रूक्षान्न इन के नित्य सेवन
करने से, भोजन के कुपथ्य से, मलमूत्र के रोकने से, उसी प्रकार छिका अर्थात् (छींक)
आती हुई के रोकने से, प्राणवायु अत्यंत दुष्ट होकर और दुष्ट उदानवायु से मिलकर
कफपित्तयुक्त अकस्मात् मुख से बाहर निकले उस का शब्द फूटे कांस्यपात्र के समान
होय उस को विद्वान् लोग कांस (सांसी) कहते हैं ॥

संख्यारूपसंप्राप्ति

पंच कासाः स्मृता वातपित्तश्लेष्मक्षतक्षयैः ।
क्षयायोपेक्षिताः सर्वे वलिनश्चोत्तरोत्तरम् ॥

गोमयम् । दग्धं विचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादं विपं क्षिपेत् ॥ रुद्रपर्पटिका ह्येषा देया गुंजाद्रयं द्वयम् । चूर्णितं कटुनिर्गुञ्ज्या मूलनिष्कद्रयं पिबेत् ॥ भृंगराजरसेनैव लिहेद्वा मधुना सह । वातकासान्निहंत्याशु सर्वथैव न संशयः ॥

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, गंधक २ भाग, दोनों को मिलायके कजली करे फिर इस को अंड की जड, काकडासिंगी, मकोय और इन के रस में एक २ दिन खरल करे फिर इस को अग्निपर तपायके पर्पटी बनावे फिर इस पर्पटी का चतुर्थांश ताम्रभस्म मिलावे और मंदाग्निपर पचन करे जब लालरंग हो जावे तब उतारके केले के पत्तेपर ढाल देवे और तत्काल दूसरे पत्ते से ढकके गोबर से दाब देय तो पतली पर्पटी हो जावेगी जब शीतल हो जाय तब निकालके चूर्ण करके धर रखे इस में चतुर्थांश सिंगिया विप मिलावे. यह रुद्रपर्पटी दो रत्ती अनुपान से देवे और इस के ऊपर निर्गुंजी के जड का चूर्ण छः मासे देवे अथवा भांगरे का रस और सहत इन के साथ देवे तो सर्व वादी की रांसी नाश करे ॥

भूतांकुशरस

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धगंधकम् । भागत्रयं मृतं ताम्रं मरीचं दशभागिकम् ॥ मृताभ्रस्य चतुर्भागं भागमेकं विपं क्षिपेत् । भूतांकुशस्य भागैकं सर्वमम्लेन मर्दयेत् ॥ रसो भूतांकुशो नाम मापैको वातकासजित् । अनुपानं लिहेत्क्षौद्रं विभीतकफलत्वचः ॥

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, गंधक २ भाग, तामे की भस्म ३ भाग, मिरच १० भाग, अम्रक ४, विप १ और नकलिकनी १ भाग ले इन सब को एकत्र चूर्ण कर नीबू के रस में खरल करे. इस भूतांकुशरस की मात्रा १ तोले की है इस को चहेडे का चूर्ण और सहत इन के साथ देवे तो वादी की रांसी दूर होय ॥

सव्यादि लेह

सठी शृंगी कणा भार्ङ्गी गुडवारिदयासकैः ।

सतैलैर्वातकासघ्नो लेहोयमपराजितः ॥

अर्थ-कचोरा, काकडासिंगी, पीपली, भारंगमूल, गुड, नागरमोया और धमासा इन का छेद करके सेठ ढालके सेवन करने से वात का नाश करता है ॥

भाङ्ग्यादिलेह

भाङ्गी द्राक्षा शठी शृंगी पिप्पली विश्वभेषजम् ।

गुडतैलयुतो लेहो हितो मारुतकासिनाम् ॥

अर्थ—भाङ्गी, दाख, कचूर, काकडासिंगी, पीपल और सोंठ इन का गुड मिलाय-
क अवलेह बनावे इस में तेल डालके सेवन करे तो वादी की खांसी दूर होय ॥

विश्वादिलेह

विश्वा भाङ्गी कणा सोमवल्कद्राक्षासठीसिताः ।

लीढा तैलेन वातोत्थं कासं जयति दुस्तरम् ॥

अर्थ—सोंठ, भाङ्गी, पीपल, कायफल, दाख और कचूर इन का अवलेह तेल
मिलायके सिद्ध करे इस में मिश्री मिलायके सेवन करे तो घोर दुस्तर वादी की
खांसी नाश होय ॥

दशमूलीघृत

दशमूलीकपायेण भाङ्गीकल्कैर्घृतं पचेत् ।

दशतित्रिनिर्युहैस्तत्परं वातकासजुत् ॥

अर्थ—दशमूल का काढा, भाङ्गी का कल्क तथा दश तीतरों के मांस का काढा
इन में घी डालके सिद्ध करे यह वात की खांसी नाश करने में उत्तम है ॥

कट्फलादिपेय वातकफकासोपर

कट्फलं कट्फणं भाङ्गीं मुस्तधान्यं वचाभया । शुंठी पर्पटकं

शृंगी सुराह्वं च जले शृतम् ॥ मधुहिंशुयुतं पेयं कासे वातक-

फान्विते । कंठरोगे मुखे शूले हिक्काश्वासज्वरेषु च ॥

अर्थ—कायफल, रोहिपतृण, भाङ्गी, नागरमोथा, धनियाँ, वच, हरड, सोंठ, पित्त-
पापडा, काकडासिंगी, देवदार इन के काढे में सहत, हींग डालके पीवे तो वादी कफ
की खांसी, कंठरोग, मुखरोग, शूल, हिचकी, श्वास और ज्वर इनपर परमोत्तम है ॥

शुंघ्यादिचूर्ण

शुंठी दुरालभैरंडमूलं कर्कटशृंगिका । चचुंदरो देवदारुशूर्णमेपां

समांशतः ॥ उष्णेन वारिणा किंवा तैलेनालोब्ध भक्षितम् ।

वातजं श्लेष्मजं कासं नाशयत्यतिवेगतः ॥

अर्थ-सोंठ, जवासा, अंड की जड़, काकडासिंगी चचूदर, देवदारु इन का समभाग चूर्ण कर गरम जल से अथवा तेल से सेवन करे तो वातजन्य तथा कफजन्य खांसी का नाश होय ॥

चित्रकादिलेह

चित्रकं पिप्पलीमूलं व्योपं मुस्ता दुरालभा । शठी पुष्करमूलं
च श्रेयसी सुरसा वचा ॥ भार्ङ्गी छिन्नरुहा रास्ना कर्कटाख्या च
कार्पिका । कल्कोग्निदग्धद्वितुलां कपाये पलविंशतिः ॥ मत्स्यं-
डिकाया दश वा सर्पिपः कुडवं पचेत् । सिद्धे सीते पृथक्
क्षौद्रपिप्पलीकुडवान्वितम् ॥ चतुःपलं तुगाक्षीर्याशूर्णं तत्र
प्रदापयेत् । लेहयेत्कासहृद्रोगश्वासगुल्मनिवारणम् ॥

अर्थ-चीते की छाल, पीपल, पीपरामूल, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोया, धमासा, कचूर, पुष्करमूल, हरड, तुलसी, वच, भारंगी, गिलोप, रास्ना, काकडासिंगी इन को समान भाग ले कल्क और राख ८० तोले इन को औषधों के ८०० तोले काढे में डाले और मिश्री ४० तोले तथा घी ६४ तोले डालके उस काढे को पचावे तो अवलेह सिद्ध होय इस में सहत, पीपल और वंशलोचन ये प्रत्येक १६ तोले डाले और सेवन करे तो खांसी, हृदय, श्वास और गोला इन को दूर करे ॥

शुंक्यादि लेह वातकासपर

चूर्णिता विश्वदुःस्पर्शा शृंगीद्राक्षा शठी सिता ।
लिहेत्तैलेन वाताद्यं कासं जयति दुस्तरंम् ॥

अर्थ-सोंठ, धमासा, काकडासिंगी, द्राक्षा, कचूर और मिश्री इन को तेल मिलाके अवलेह बनावे इस के सेवन करने से दुस्तर वाताधिक खांसी को नाश करे ॥

दशमूलका काढा

दशमूली शृता विश्वा कासहिकारुजापहा ।
यवागू दीपनी वृष्या वातरोगविनाशिनी ॥

अर्थ-दशमूल, सोंठ इन का काढा खांसी और हिचकी इन का नाशक है. और यवागू छः गुन पानी डालके करा हुआ पतला भात यह दीपन, कामोदीपक तथा वातरोग नाश करनेवाला है ॥

पंचमूलकाढा

पंचमूलीकृतः काथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः ।

रसान्नमश्नतो नित्यं वातकासमुदस्यति ॥

अर्थ—शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेरी, बड़ी कटेरी, गोखरू इन का काढा पीपल का चूर्ण डालके सेवन करे तथा रसयुक्त भोजन करे तो वात खांसी का नाश करे ॥

कर्कटरस

रसं कर्कटकानां वा घृतभृष्टं सनागरम् ।

वातकासप्रशमनं शृंगीमत्स्यस्य वा पुनः ॥

अर्थ—केकडे के मांसरस को घी में भून उस में सोंठ डालके देवे अथवा शृंगी-जाति की मछली का रस घृत में भून सोंठ को डालके देवे तो वात की खांसी दूर करे ॥

शुंघ्यादिचूर्ण

शुंठी दुरालभा द्राक्षा कर्चूरस्तवराजकम् ।

वातकासं निहंत्याशु तैलभुक्तं हि चूर्णकम् ॥

अर्थ—सोंठ, धमासा, दाख, कचूर और यवाशशर्करा (शीराखिस्त) इन का चूर्ण में मिलायके देवे तो वादी की खांसी का नाश होय ॥

पित्तकासनिदान

उरोविदाहज्वरवक्रशोषैरभ्यर्दितस्तित्तमुखस्तृपातः ।

पित्तेन पीतानि वमेत्कटूनि कासेन पांडुः परिदह्यमानः ॥

अर्थ—पित्त की खांसी से हृदय में दाह, ज्वर, मुख का सूखना इन से पीडित हो मुख कड़ुवा रहे प्यास लगे पीले रंग की और कड़ुवी ऐसी पित्त के प्रभाव से वमन होय रोगी का पीला वर्ण हो जाय और सब देह में दाह होय ॥

सिंहास्यादिकाढा

सिंहास्यामृतसिंहीनां काथं मधुयुतं पिबेत् ।

पिबेत्सपित्तकफजे कासे श्वासे ज्वरे क्षये ॥

अर्थ—अहूसा, गिलोय और कटेरी इन के काढे में सहत डालके पीवे तो पित्त-कात्मक खांसी, श्वास, ज्वर और क्षय इन का नाश करे ॥

बलादिकाठा

बलाद्विवृहतीद्राक्षावासाभिः क्लृथितं जलम् ।

पित्तकासापहं पेयं शर्करामधुयोजितम् ॥

अर्थ—खिरेटी, कटेरी, बड़ी कटेरी, दाख और अडूसा इन के काठे में सहत और मिश्री डालके सेवन करे तो यह पित्तकास को नाश करे ॥

शब्द्यादिकाठा

शठी ह्रीवेरवृहती शर्करा विश्वभेषजम् ।

पक्त्वा रसे पिबेत्पूतं सघृतं पित्तकासनुत् ॥

अर्थ—कचूर, नेत्रवाला, कटेरी और सोंठ इन के काठे में घी और मिश्री डालके देवे तो पित्त की खांसी को नाश करे ॥

शरादिकाठा

शरादिपंचमूलस्य पिप्पलीद्राक्षयोस्तथा ।

कपायेण शृतं क्षीरं पिबेत्समधुशर्करम् ॥

अर्थ—शर, ईख, डाम, कांस इन की जड़ का काटा करके उस में दूध डाल औटावे फिर सहत और मिश्री डालके देवे तो पित्त की खांसी का नाश करे ॥ १

शठ्यादिकाठा

सठीद्विपंचमूलस्य पिप्पलीद्राक्षयोस्तथा ।

कपायेण शृतं क्षीरं पिबेत्समधुशर्करम् ॥

अर्थ—कचूर, दशमूल, पीपल और दाख इन के काठे में औटा हुआ दूध सा और मिश्री मिलायके देवे तो पित्त की खांसी दूर होय ॥

त्वक्क्षीरलेह

त्वक्क्षीरपिप्पलीलाजाद्राक्षाजलदशर्कराः ।

सर्पिर्मध्वावलेहोयं पित्तकासविनाशनः ॥

अर्थ तवाखीर, पीपल, खील, दाख, नागरमोथा इन के काठे में मिश्री, घी अ सहत डालके पीवे तो पित्त की खांसी दूर होवे ॥

कंटकार्य्यादिकाठा

कंटकारीयुगं द्राक्षावासाकर्त्रवालकैः ।

नागरेण च पिप्पल्या कथितं सलिलं पिबेत् ॥

शर्करामधुसंयुक्तं पित्तकासहरं परम् ॥

अर्थ—कटेरी, बड़ी कटेरी, दाख, अडूसा, कचूर, नेत्रवाला, सोंठ और पीपल इन के काढे में मिश्री और सहत मिलायके देवे तो पित्त की खांसी को दूर करे ॥

पिप्पल्यादिचूर्ण

पिप्पलीतवराजश्च तवक्षीरं त्रयं समम् ।

मधुसर्पिर्युतं भुक्तं पित्तकासविनाशनम् ॥

अर्थ—पीपर, यवास, शर्करा और तवाखीर इन को समान भाग लेवे सब का चूर्ण करके सहत और पी मिलायके सेवन करे तो पित्त (गरमी) की खांसी दूर हो ॥

मधुकादिचूर्ण

मधुकं पिप्पलीमूल दूर्वाद्राक्षाकणासमम् ।

घृतेन मधुना युक्तं पित्तकासविनाशनम् ॥

अर्थ—मुलहठी, पीपरामूल, दूर्वा, दाख और पीपल इन का समान भाग चूर्ण करके सहत के साथ खाय तो पित्त की खांसी को दूर करे ॥

अर्धावर्तितकाढा

अर्धावर्तितपानीयं सलाजं पिप्पली मधु ।

त्रयं सर्पिर्युतं भुक्तं पित्तकासविनाशकृत् ॥

अर्थ—अधोटा पानी, खील और पीपल इन का काढा करके उस में सहत और पी डालके पीवे तो पित्त की खांसी का निवारण होय ॥

मातुलिगादिलेह

मातुलिगरसो हिंयुत्रिफला मधुशर्करा ।

सर्पिर्मध्वावलेहोयं पित्तकासविनाशकृत् ॥

अर्थ—बिजोरे का रस, हॉंग और त्रिफला इन का काढा सहत और मिश्री डालके देवे तो पित्त की खांसी को दूर करे ॥

खजूरादिलेह

खजूरं पिप्पली द्राक्षा सिता लाजाः समांशकाः ।

मधुसर्पिर्युतो लेहः पित्तकासहरः परेः ॥

अर्थ—खजूर, पीपल, दाख, मिश्री और खील इन को समान भाग लेकर लेह

सिद्ध करे इस में सहत घी डालके सेवन करे तो पित्त की खांसी को नाश करे ॥

द्राक्षामलकादिलेह

द्राक्षामलकखर्जूरं पिप्पलीमरिचान्वितम् ।

पित्तकासहरं ह्येतल्लिह्यान्माक्षिकसंयुतम् ॥

अर्थ—दाख, आमला, खजूर, पीपल और मिरच इन को एकत्र चूर्ण कर सहत और घी के साथ खाने से पित्त की खांसी को नाश करे है ॥

क्षीरामलकघृत

महिष्यजाविगोक्षीरघात्रीफलरसैः समैः ।

सर्पिः प्रस्थं पचेद्युत्तया पित्तकासनिवर्हणम् ॥

अर्थ—भैंस, बकरी और गौ इन का दूध और आमले का रस ये समान भाग ले इस में दूध तोले घी मिलायके युक्ति से पचावे और सेवन करे तो यह घृत पित्त की खांसी को दूर करे ॥

रस

भस्मताम्राभ्रतीक्ष्णानां कासमर्दवरीरसैः ।

मुनिजैर्वैतसाम्लेन दिनं मद्ये तु पीडितम् ॥

निष्कार्धं पित्तकासार्तं भक्षयेन्नात्र संशयः ॥

अर्थ—ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म और कांतिभस्म इन को एकत्र करके कसोंदा क रस की, सत्तावर और अगस्तिया अमलवेत और मद्य इन में घोटके दो मासे पित्तखांसी-वाले को देवे तो हित करे ॥

लोकेश्वररस

रसो लोकेश्वरोप्यत्र पिप्पलीमधुना सह ।

दातव्यो विनिहंत्येव पित्तकासं सुदारुणम् ॥

अर्थ—क्ष्मीरोग में जो लोकेश्वररस कह आये हैं उस को पीपल और सहत के साथ देवे तो दारुण पित्तखांसी को नाश करे ॥

कफकासनिदान

प्रलिप्यमानेन मुखेन सीदन् शिरोरुजार्तः कफपूर्णदेहः ।

अभक्तरुग्गौरवकंडुयुक्तः कासेद्भृशं सांद्रकफः कफेन ॥

अर्थ—कफ की खांसी से मुख कफ से लिपटा रहे मथवाय और सब देह कफ से

परिपूर्ण रहे अत्र में अरुचि शरीर भारी रहे कंठ में खुजली और रोगी वारंवार खांसे कफ की गांठ धुक्ने से सुख मालूम होवे ॥

कफकाससामान्यचिकित्सा

कफजे वमनं कार्यं कासे लंघनमेव च ।

शस्तापवाताप्रकृतिर्यूपाश्च कटुतिक्तकाः ॥

अर्थ—कफ की खांसी में प्रथम ही वमन करावे तथा लंघन कराना ये उपचार तथा मुख्यत्व करके वातरहित प्रकृति का रखना और चरपरे, कडुए ऐसे यूष देना इत्यादि उपचार करे ॥

नवांगयूप

मुद्गामलाभ्यां यवदाडिमाभ्यां कर्कंधुना मूलसशुष्ककेन ।

शुंठीकणाभ्यां सकुलित्थकेन यूषो नवांगः कफकासहंता ॥

अर्थ—मूंग, आमले, जो, अनार, बेर, सूखी मूली, सोंठ, पीपल और कुलथी इन का यूष करे यह नवांगयूप कफकास को नाश करे ॥

पिप्पल्यादिकाढा

पिप्पली कटुफलं शुंठी शृंगी भार्ङ्गी तथोपणम् । कारकं
कंटकारी च सिंधुवारो यवानिका ॥ चित्रको वासकश्चैषां कपायं
विधिवत्कृतम् । कफकासविनाशाय पिबेत्कृष्णारजोयुतम् ॥

अर्थ—पीपर, कायफल, सोंठ, कांकडासिंगी, भार्ङ्गी, मिरच, अजमायन, कोटेरी, निर्गुंडी, अजमोद, चित्रक और अहूस। इन के काटे में पीपल के चूर्ण की चुकनी ढालके देवे तो कफकास को नष्ट करे ॥

पित्तश्लेष्मकास

वासकः स्वरसः पेयो मधुयुक्तो हिताशिना ।

पित्तश्लेष्मकृते कासे तालीसाद्यं च योजयेत् ॥

अर्थ—पित्तकफ की खांसी पर अहूसे का रस सहित मिलायके देवे और पथ्य रहे अथवा तालीसादि चूर्ण देवे तो इस को नष्ट करे ॥

अवलेह

शठी सातिविपा मुस्ता शृंगी कर्कटकस्य च । अभ्यां

शृंगवेरं च समं शुंठ्यादि पेपयेत् ॥ हिंयुसैधवसंयुक्तं तक्रो-
दकपरिष्ठुतम् । श्लेष्मकासी लिहेदेवमवलेहं मुहुर्मुहुः ॥

अर्थ—कचूर, अतीस, नागरमोथा, कांकडासिंगी, हरड, अदरख और सोंठ ये समान भाग लेकर चूर्ण करे इस छाल के जल में हींग और संधानिमक मिलायके वारंवार चाटने को देवे तो कफ की खांसी नष्ट होय इस में संदेह नहीं है ॥

विभीतकधारण

विभीतकं घृताभ्यक्तं गोशकृत्परिवेष्टितम् ।

स्विन्नमेतन्निहंत्याशु कासमास्यविधारितम् ॥

अर्थ—बहेडे को घृत में भूनके उस पर गोबर लपेट पुटपाक कर लेवे फिर इस से गोबर दूर करके तोड़ डाले इस के टुकड़ों को मुख में रखे तो सर्व प्रकार की खांसी नष्ट होय ॥

भद्रमुस्तादिचूर्ण

भद्रमुस्ताकणाचूर्णं समांशं मधुना सह ।

निहन्ति भक्षितं शीघ्रं श्लेष्मकासं न संशयः ॥

अर्थ—नागरमोथा और पीपल इन का समान भाग चूर्ण कर सहत से खाय तो कफ की खांसी को नष्ट करे इस में संदेह नहीं है ॥

पथ्यादिचूर्ण

पथ्या विश्वा कणा मुस्ता देवदारुः समांशकम् ।

एतच्चूर्णं मधूपेतं श्लेष्मकासापनुत्तये ॥

अर्थ—हरड, सोंठ, पीपल, नागरमोथा और देवदारु इन का समान भाग चूर्ण करके सहत में मिलायके चाटे तो कफ की खांसी नष्ट होय ॥

चित्रकादिचूर्ण

चित्रकं पिप्पलीमूलं पिप्पली गजपिप्पली ।

एतच्चूर्णं समं युक्तं मधुना श्लेष्मकासनुत् ॥

अर्थ—चित्रक की छाल, पीपरामूल, पीपल और गजपीपल इन के चूर्ण को एकत्र समान भाग लेवे. इस में यथायोग्य मात्रा सहत में मिलायके देवे तो कफ की खांसी को नष्ट करे ॥

शिलादिलेह

शिला व्योपाभयाहिंशुविडंगं सैधवं समम् ।

लेह्यं साज्यमधुश्वासहिक्काकासेषु शस्यते ॥

अर्थ—मनसिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, होंग, वायविडंग और संधानिमक न के चूर्ण को सहत और पी इन में मिलायके श्वास, हिचकी और खांसी इन पर देना चाहिये ॥

व्योपादिघृत ।

व्योपाजमोदचित्रकजीरकपडूग्रंथिचव्यकल्कितं सर्पिः ।

कफकासश्वासहरं वासकरससाधितं समधु ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपर, अजमोद, चित्रक, जीरा, वच और चव्य इन को समान भाग ले सब का कल्क करके उस में घी, अड़से का रस और सहत डालके सेवन करे तो कफ संबंधी खांसी, श्वासें को नाश करे ॥

कटुत्रयादिचूर्ण

कटुत्रयं पावकदेवदारुरास्नाविडंगत्रिफलामृतानाम् ।

चूर्णं समांशं सितया समेतं कासं जयेद्विष्णुगदेव दैत्यान् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, चीते की छाल, देवदारु, रास्ना, वायविडंग, हरड, बहेडा, आवला इन का चूर्ण मिश्री मिलायके देवे तो खांसी का नाश करे ॥

बोलवद्धरस

रसभस्म विपं तुल्यं बोलाद्याद्विगुणं मतम् । बोलातालकपा-
ठाग्निकर्कोटीमाक्षिकं निशा ॥ कंटकारीयवक्षारं लांगली जीरसै-
धवम् । मधूकसारसं चूर्णं सप्ताहं चार्द्रकद्रवैः ॥ छायायां भावये-
त्पश्चात्सप्ताहं चिंचकद्रवैः । गुटिका वदराकारा श्लेष्मकासाप-
नुत्तये ॥ भक्षयेद्बोलवद्धोयं रसः स्यात् श्वासपांडुजित् ॥

अर्थ—पारद की भस्म और सिंगियाविप दोनों समान भाग लेवे तथा बोल, हर-
ताल, पाट, काकडासिंगी, सुवर्णमाक्षिक, हलदी, कटेरी, जवाखार, कलपारी, जीरा,
संधानिमक और मूल्हटी इन के चूर्ण को सात दिन अदरस के रस में खरल करे
फिर छाया में सुखायके सात दिन चीते के रस में खरल कर बेर की बराबर गोबी
बनाय लेवे इस को कफरोग, श्वास और पांडुरोग इन पर देवे ॥

दंतीधूम

दंतिमूलस्य धूमं वा निर्गुंडीं चापि योजयेत् ।

श्लेष्मकासं न संदेहो धूमपानेन तत्क्षणात् ॥

अर्थ—दंती की जड़ का धूआं अथवा निर्गुंडी का धूआं पीवे तो इस धूमपान के करने से कफ की खांसी दूर हो इस में संदेह नहीं है ॥

उरःक्षतकासनिदान

अतिव्यवायभाराध्वयुद्धाश्च गजनिग्रहैः ।

रूक्षस्योरःक्षतं वायुर्गृहीत्वा कासमावहेत् ॥

अर्थ—बहुत खीसंग करने से, भारके उठाने से, बहुत मार्ग चलने से, मल्लयुद्ध (कुस्ती) करने से, हाथी घोड़ा दौड़ने को गोकने से रूक्ष पुरुष का हृदय फूटकर वायु-कोप होकर खांसी को प्रगट करे ॥

क्षतकासलक्षण

स पूर्वं कासते शुष्कं ततः घृीवति शोणितम् । कंठेन रुजतात्यर्थं
विभिन्नेनेव चोरसा ॥ सूचीभिरिव तीक्ष्णाभिस्तुद्यमानेन शू-
लिना । दुःखस्पर्शेन शूलेन भेदपीडाभितापिना ॥ पर्वभेदज्व-
रश्वासतृष्णावैवर्ण्यपीडितः । पारावत इवाकूजन्कासवेगात्क्षयो
भवेत् ॥

अर्थ—सो पुरुष प्रथम सखा खांसे पीछे रुधिर मिला धुके कंठ अत्यन्त दूरे हृदय फूटे सदृश मालम होय और तीखी सुईकेसे चभका चले और उस को हृदय का स्पर्श सुहाय नहीं दीनों पसवाडों में शूँछ होय यह चाग्भट का मत है तय दाह हो उस रोगी के गांठ गांठ में पीडा होय. ज्वर, श्वास, प्यास, स्वरभेद इन से पीडित होय क्षतजन्य खांसी के वेग से रोगी कबतर की तरह घुंघुं शब्द करे ॥

क्षयकासनिदान

विपमासात्म्यभोग्यातिव्यवायाद्रेगनिग्रहात् ।

घृणिनां शोचतां नृणां व्याप्यन्तेऽग्नौ त्रयोमलाः ॥

कुपिता क्षयजं कासं कुर्युर्देहक्षयप्रदम् ॥

अर्थ—कुपथ्य और विषमाशन के करने से अतिमैथुन मलमूत्रादिक वेगधारण इन से अति दया करने से अति शोक करने से अग्नि मन्द होय (अर्थात् आहार

यकरुकर वायु कुपित हो आग्नि को नष्ट करे) तब तीनों दोष कोष को प्राप्त हो क्षयजन्य देह का नाशक ऐसी खांसी को प्रगट करे तब वह खांसी देह को क्षीण करे ॥

क्षयकासलक्षण

सगात्रशूलज्वरदाहमोहात्प्राणक्षयं चापलभेच्च कासी । शुष्कं विनिष्ठीवति दुर्वलस्तु प्रक्षीणमांसो रुधिरं सपूयम् ॥ तं सर्व-
लिंगं भृशदुश्चिकित्स्यं चिकित्सितज्ञा क्षयजं वदन्ति ॥ इत्येष
क्षयजः कासः क्षीणानां देहनाशनः । साध्यो बलवतां वा स्या-
द्याप्यस्त्वेवं क्षतोत्थितः ॥

अर्थ—शूल, ज्वर, दाह और मोह ये होय तब यह प्राण का नाश करे सूखी खांसी रुधिर मांस शरीर को मुखावे रुधिर और राध धूके ये सर्व लक्षणयुक्त और चिकित्सा करने में अति कठिन ऐसे उस खांसी को वैद्य क्षयज कहते हैं- इस प्रकार यह क्षयजकास (खांसी) क्षीण पुरुष की घातक होय है बलवान् पुरुष के असाध्य अथवा याप्य (साध्यासाध्य) होय है क्षतज खांसीभी इसी प्रकार की होती है यदि वैद्यादि पादचतुष्टयसंपन्न हो और ये दोनों प्रकार की खांसी नवीन होय तो कदाचित् साध्य होय और बूढ़े पुरुष के जराकास अर्थात् धातुक्षीण होने से भई जो खांसी सो सब प्रकार की याप्य है सो सब इंद्रियके अंतर्गत जाननी- अब कहते हैं कि वात, पित्त, कफ ये तीन खांसी साध्य हैं और बाकी तीन याप्य हैं वे पथ्य सेवन करने से नाश होती और अवज्ञा करने से असाध्य हो जाती है ॥

साध्यासाध्यविचार

न वै कदाचित्साध्येतामपि पादगुणान्वितौ ।

स्थविराणां जराकासः सर्वो याप्यः प्रकीर्तितः ॥

त्रिन्पूर्वान्साध्येत्साध्यान्पथ्यैर्याप्यास्तु यापयेत् ॥

अर्थ—यदि नवीनोत्पन्न क्षयकासरोगी वैद्य परिचारक और द्रव्य इत्यादि गुणों करके युक्त होय तो वह रोगी कदाचित् अच्छा होय और वृद्ध रोगी का जो जराकास होय तो सर्व याप्य जानना तथा वातादिक जनित तीन प्रकारके जो खांसी है वह साध्य है वह औषधों करके अच्छी हो तथा याप्य खांसी को पथ्य करके न्यून करे ॥

चिकित्साप्रक्रिया

कासे तु क्षतजे बल्ये पाचनैर्बृंहणैरपि ।

शमनैः पित्तकासत्रैरन्यैश्च मधुरौषधैः ॥

अर्थ-क्षयकास को पाचन, पौष्टिक और शमन तथा पित्तकास को शमन करने-
वाली औषधों करके तथा दूसरी मधुर औषधों करके शमन करे ॥

यवागूं वा पिवेत्सिद्धां क्षतोरस्कः सुशीतलाम् ।

इक्ष्विक्षुवालिकापद्ममृणालोत्पलचंदनैः ॥

शृतां पेयां मधुयुतां संधानार्थं पिवेत्क्षती ॥

अर्थ-उरःक्षत खांसी रोगी ईख, कसौंदी के बीज, कमल का कंद, नीलकमल
कंद तथा चंदन इन करके सिद्ध करी शीतल यवागू घाव को संधान करने के अर्थ पीवे ॥

इक्ष्वाद्यावलेह

इक्ष्विक्षुवालिकापद्ममृणालोत्पलचंदनैः । मधुकं पिप्पली द्राक्षा
लाक्षा शृंगी शतावरी ॥ द्विगुणा च तुगाक्षीरी सिता सर्वैश्चतु-
गुणा । लिह्यात्तं सधुसर्पिर्भ्यां क्षतकासनिवृत्तये ॥

अर्थ-ईख का रस, कसौंदी के बीज, कमलकंद, कमल, सपेद चंदन, मुलहठी,
पीपल, दाख, लाख, कांकडासिंगी और सतावर ये समान भाग ले तथा दो भाग
वंशलोचन तथा सब औषधों से चौगुनी मिश्री डालके अवलेह बनावे इस में सहत
और घी डालके चाटे तो खांसी की निवृत्ति अर्थात् नाश होय ॥

मंजिष्ठाद्यचूर्ण

मंजिष्ठमूर्वानतवाह्निपाठाकृष्णाहरिद्राविदधीतचूर्णाः ।

क्षौद्रेण कासे विलिहेत्क्षतोत्थे पिवेद्घृतं चेशुरसे विपक्वम् ॥

अर्थ-मंजीठ, मूर्वा, तगर, चित्रक, पाठा, पीपल और हलदी इन का चूर्ण सहत
के साथ चाटे अथवा ईख के रस में घी को औटाकर पीवे ये दोनों योग क्षतज
खांसीपर उत्तम हैं ॥

क्षुद्रावलेह

समूलकंटकारी च चपला चपलाजटा । अपामार्गस्य बीजानि

जीर्णं सामुद्रकं तथा ॥ मधुना लेहयेत्सर्वं कासश्वासहरं परम् ।

उरःक्षतक्षये तीव्रे कफरक्तवमीषु च ॥

अर्थ-कटेरी का पंचांग, पीपल, पीपरामूल, आगा के बीज, जीरा और सेंधा
निमक इन से सिद्ध करे अवलेह को सेवन करे तो खांसी, श्वास, उरःक्षत और
कफरक्त की वांति इन को दूर करे ॥

तारेश्वररस

रसपादं मृतं तारं शिलाताप्यं चतुर्गुणम् । वासाचेक्षुरसाभ्यां च
मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ द्वियामं वालुकायंत्रे स्वेद्यमादाय चूर्णयेत् ।
गुंजाद्वयं निहंत्याशु कासं क्षतभवं ध्रुवम् ॥ रसस्तारेश्वरो नाम
ह्यनुपानं च कथ्यते । दाडिमं त्रिफला व्योपं त्रयाणां च समं
गुडम् ॥ चूर्णितं भक्षयेत्कर्प क्षतकासापनुत्तये ॥

अर्थ—पारा १ भाग, रूपे की भस्म पारे की चतुर्थांश, मनसिल तथा सुवर्ण-
माक्षिक ये चतुर्गुण लेकर अड़सा और ईस का रस इन में दो प्रहर खरल करे फिर
स को कांच की शीशी में भरके वालुकायंत्र में दो प्रहर पर्यंत पचायके उतार लेवे
स में से दो रत्ती यह तारकेश्वररस अनार, त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला),
गोठ, मिरच, पीपल तथा इन सब के बराबर गुड मिलाय इन के एक तोले चूर्ण के
माय देवे तो क्षतकास को नष्ट करे ॥

सूर्यरस

रसमेकं द्विधा गंधं त्रिताप्यं पंच तालकम् । सर्वशुद्धं विचूर्ण्याथ
चतुर्भागं मृताभ्रकम् ॥ वचा कुष्ठहरिद्राप्रितंकणं संधवं विपम् ।
सपाठालांगलीव्योपं सर्वं प्रत्येककर्पकम् ॥ भावितं भृंगसारेण
दिनैकं तं च भक्षयेत् । मापः सूर्यरसो नाम द्विक्रवैस्वर्यका-
सजित् ॥ अष्टगुंजामितं भक्ष्यं विख्याता रसपर्पटी । त्रिकंटमू-
लशुंठी च अजाक्षीरसमोदकम् ॥ क्षीरावशिष्टं तं काथं सकणं
पाययेन्निशि ॥

अर्थ—पारा १, गंधक २, सुवर्णमाक्षिक ३, हरताल ५ और अभ्रक ४ भाग लेवे
और वचा, कूठ, हलदी, चित्रक, सुहागा, सेधानिमक, बलनाग विप, पाठ, कलपारी,
सोठ, मिरच और पीपल ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे सब का चूर्ण कर भागरे के
रस में १ दिन खरल करे यह सूर्यरस एक मासे खाने को देय तो हिचकी, स्वर-
रस और खासी इन को नष्ट करे अथवा रत्ती रसपर्पटी लेकर रात्रि में गोतरु, सोठ,
बकरी का दूध तथा दूध की बराबर जल लेकर औटावे जब दूधमात्र शेष रहे तब
उतारके उस में पीपल का चूर्ण डालके पीवे ॥

पिप्पलीपादिलेह

पिप्पली पत्रकं लाक्षा सुपक्वं बृहतीफलम् ।

घृतक्षौद्रयुतो लेहः क्षयकासनिवर्हणः ॥

अर्थ—पीपल, पद्मास, लास और उत्तम पके हुए कटेरी के फल ये समान भाग ले सब को पीस घी और बहुत इन से अवलेह बनायके सेवन करे तो क्षयजन्य खाँ को नाश करे ॥

कुलित्थगुड

कुलित्थानां शतपलं दशमूलं तथा शतम् । शतब्राह्मणयष्ट्या-
ह्वा चतुर्गुणजले शृतम् ॥ पादावशेषतः पूते गुडस्यार्धतुल्यं
पचेत् । पाकं ज्ञात्वावतार्येवं सुशीते श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ पदपलं
च तुगाक्षीया पिप्पल्या द्विपलं तथा । कुडवं मधुना दद्यात्स्था-
पयेद्भ्राजने शुभे ॥ खादेदग्निबलापेक्षी नाशयेदचिराद्गदान् ।
यक्ष्माणं पित्तजं कासं श्वासं जीर्णमजीर्णकम् ॥ जीर्णज्वरं पां-
डुरोगं हृद्रोगं श्लेष्ममारुतौ । कुलित्थगुड इत्युक्तः सर्वोपद्रव-
नाशनः ॥

अर्थ—कुलथी ५०० तोले, दशमूल की औषध ४०० तोले और भारंगी ४०० तोले ले १६०० तोले जल में काढा करके चतुर्थांश शेष रहने पर उतार लेवे. इस में गुड २०० तोले डालके पाक करे जब तयार हो जावे तब शीतल करके इस में २४ तोले बंशलोचन, ८ तोले पीपल और १६ तोले सहत डालके उत्तम पात्र में भरके धर रखे. इस में से अग्निबल विचारके खाने को देवे तो क्षय, पित्त की खाँसी, श्वास, पका हुआ अजीर्ण, जीर्णज्वर, पांडुरोग, हृदयरोग और कफवात इन को और संपूर्ण उपद्रवों को यह कुलित्थगुड नाश करे ॥

वासाकूष्मांडावलेह

पंचाशतपलं स्विवन्नं कूष्मांडं प्रस्थमाज्यतः । पक्वं पलशतं खंडं
वासाकाथाढके पचेत् ॥ शुभ्रा धात्री चनो भार्द्वा त्रिसुगंधिश्च क-
र्पकैः । एलोपविपधान्याकमरिचैश्च पलांशकैः ॥ पिप्पली
कुडवं चैव मधुमानं प्रदापयेत् । कासं श्वासं क्षयं हिक्रां रक्त-
पित्तहृत्लीमकान् ॥ हृद्रोगमम्लपित्तं च पीनसं च व्यपोहति ॥

अर्थ-पेटे के टुकड़े शुद्ध करे हुए २०० तोले उन को ६४ तोले घी में भूने फिर इस में १०० तोले टुकड़े लेकर अदूसे के २५६ तोले काढे में सिजावे इस में शंशलोचन, आंवले, नागरमोथा, भारंगी, तज, तमालपत्र और इलायची ये प्रत्येक विचार २ तोले ले तथा पीपल १६ तोले और सहत ३२ तोले डालके भरके धर रखे. इस में से बलाबल-विचारके मात्रा वैद्य देवे तो खांसी, श्वास, क्षय, हिचकी, रक्त-पित्त, हलीमक, हृदयरोग, अम्लपित्त और पीनस इन को दूर करे ॥

ककुभलेह

चूर्णं ककुभविपिष्टं वासकरसभावितं सुबहुवारात् ।

मधुघृतसितोपलाभिलैह्यं क्षयकासपित्तहरम् ॥

अर्थ-कोह्वृक्ष की छाल को चूर्ण में अदूसे के रस की बहुतसी भावना देवे फिर सहत, घी और मिश्री मिलायके चाटे तो क्षय कास और पित्त इन को नाश करे ॥

पिप्पल्यादिघृत

पिप्पलीगुडसंसिद्धं छागक्षीरयुतं घृतम् ।

एतदग्निविवृद्धचर्थमुक्तं च क्षयकासिनाम् ॥

अर्थ-पीपल और गुड इन से बनाया हुआ घी बकरी के दूध के साथ पीवे, तो क्षयखांसी के अग्नि प्रदीप्त करने को उत्तम है ॥

पिप्पल्यादिलेह

पिप्पलीमधुकं पिष्टं कपायं ससितोपलम् । प्रस्थैकं गव्यमाज्यं

च क्षीरमिक्षुरसस्तथा ॥ यवगोधूममृद्धीका चूर्णमामलकीरसम् ।

तैलं च प्रसृतांशानि तत्सर्वं मृदुवह्निना ॥ पचेच्छोहं घृतक्षौद्र-

युक्तः सश्वासकासनुत् । क्षयहृद्रोगकासघ्नो हितो वृद्धालपरे-

तसाम् ॥

अर्थ-पीपल और मुलहठी इन दोनों को कूट इन के चूर्ण का काढा मिश्री मिले हुए गौ का दूध, घी और ईख का रस प्रत्येक ६४ तोले जों का गेहूं का चून चून, दास, आंवले का रस और सरसों का तेल ये प्रत्येक आठ २ तोले लेवे सब को एकत्र कर २ अग्नि पर रखके अवलेह बनावे इस अवलेह में सहत और घी डालके पीवे तो श्वास, खांसी, क्षय और हृदयरोग इन को नाश करे और वृद्धत्व तथा अल्पवीर्य पुरुषों को परम हितकारी है ॥

स्वयमग्निरस

शुद्धसूतं द्विधा गंधं कुर्व्यात्खल्वे च कज्जलीम् । तयोः समं
 तीक्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ द्वियामांते कृतं गोलं ताम्रपात्रे
 विनिक्षिपेत् । आच्छाद्यैरंडपत्रेण यामार्धेत्युष्णतां व्रजेत् ॥
 धान्यराशौ न्यसेत्पश्चात् द्विदिनांते समुद्धरेत् । संपेष्य
 गालयेद्ब्रह्मे सत्यं वारितरं भवेत् ॥ त्रिकटुत्रिफलाचैलाजाती-
 फललवंगकैः । एतेषां नवभागानां समं पूर्वैरितं भवेत् ॥ सं-
 चूर्ण्य लोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वयम् । स्वयमग्निरसो नाम
 क्षयकासनिवृत्तकः ॥ इंद्रवारुणिकामूलं भृंगीकृष्णातिलैः सह ।
 भक्षयेत्क्षयकासातो निष्कमात्रं प्रशांतये ॥

अर्थ-शुद्ध पारा १ भाग और गंधक २ भाग ले दोनों की कजली करे ता
 कजली के समान पोलाद लोह की चूर्ण मिलायके उस को घीगुवार के रस में
 प्रहर घोटके गोला बनाये उस को ताम्रसंपुट में रखके उस के ऊपर और नीचे अं
 के पत्ते लपेट देवे फिर चार घड़ी पर्यंत उस को धूप में उसी प्रकार धरा रहने ।
 जब गरम हो जावे तब उठायके धान की राशि में दो दिन पर्यंत गडा रहने ।
 तीसरे दिन निकालके खरल में डालके घोट डाले फिर कपडे में छान ले तो य
 जल में तैरनेवाली लोह की भस्म होवे. यह लोहभस्म सोंठ, मिरच, पीपल, हरड
 बहेडा, आंवला, इलायची, जायफल और लौंग इन नौ औषधों के चूर्ण के बराबर
 लोहभस्म मिलायके इस को सहत से आठ मासे पर्यंत देवे यह स्वयमग्निरस क्षय
 कास का नाश करे अथवा इंद्रायन की जड, भांग, पीपल और तिल इन के साथ
 ४ मासे देवे तो क्षयजन्य खांसी की शांति होय ॥

सन्निपातकास

सन्निपातभवो ह्येषः क्षयकासः सुदारुणः ।

सन्निपातहितं तस्मात्कार्यमत्र चिकित्सितम् ॥

अर्थ-यह दारुण क्षयकास संनिपात से होती है इसी से जो संनिपात पर हित
 होवे उसी उपाय को वैद्य करे ॥

अमृतादिकाढा

अमृता नागरं फंजी व्याघ्रिपर्णी सुसाधितः ।

काथः पिप्पलिचूर्णाढ्यः कासश्वासौ जयत्यलम् ॥

अर्थ-गिलोय, सॉठ और सालपर्णी इन के काढे में पीपल का चूर्ण डालके रोमी को पिढावे तो खांसी और श्वास इन को शीघ्र नाश करे ॥

भाङ्गर्चादिकाढा

भाङ्गी सनागरा सिंही कुलित्थं मूलकं तथा ।

पिवेत्पिप्पलिचूर्णेन कासश्वासं व्यपोहति ॥

अर्थ-भारंगी, सॉठ, कटेरी, कुलथी और मूली इन का काढा पीपल का चूर्ण मिलायके पीवे तो खांसी और श्वास इन को दूर करे ॥

स्वरसादियोग

स्वरसं शृंगवेरस्य माक्षिकेण समन्वितम् ।

पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥

अर्थ-अदरस के रस में सहत डालके पीवे तो श्वास, खांसी, पीनस और कफ इन का नाश करे परंतु अग्निपर कुछ गरम करके और बडी इलायची का चूरा मिलायके खाय तो अधिक गुण करे ॥

मरीच्यादिचूर्ण

सेवितं मधुखंडाभ्यां चूर्णं मरिचजं यदि ।

किमर्थं क्रियते चिंता कासश्वासपराजितैः ॥

अर्थ-सहत और मिश्री इन के साथ मिरच का चूर्ण देने से खांसी की और श्वास की दूर होने की फिकर क्यों करते हो ? ॥

कुलित्थादिकाढा

कुलित्थं कंटकारी च तथा ब्राह्मणयाष्टिका ।

शुंठीसुरभिसंयुक्तः कासश्वासज्वरापहः ॥

अर्थ-कुलथी, कटेरी, भारंगी, सॉठ और राळ इन सबका काढा करके पीवे तो खांसी, श्वास और ज्वर इन का नाश करे ॥

पुष्करादिकाढा

पौष्करं कट्फलं भाङ्गीं विश्वपिप्पलिसाधितम् ।

पिवेत्काथं कफोद्रेकं कासे श्वासे च हृद्भेदे ॥

अर्थ—पुष्करमूल, कायफल, भारंगी, सोंठ और पीपल इन सब को समान भाग लेके काढा करे तो कफादिक, श्वास, खांसी और हृदयरोग इन को नाश करे ॥

कुनठ्यादिलेह

कुनटी सैधवं व्योपविडंगामरुहिगुभिः ।

लेहः साज्यमधुकासहिकाश्वासनिवारणः ॥

अर्थ—मनसिल, सैधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु और हींग इन का अवलेह करके उस में घी और सहत डाल पीवे तो खांसी, हिचकी, श्वास इन को दूर करे ॥

वर्हिपादादि और मरिचादिलेह

श्वासकासहरा वर्हिपादा च क्षौद्रसर्पिपा ।

लिह्यान्मरिचचूर्णं वा सघृतं क्षौद्रशर्करम् ॥

अर्थ—पीले टेढ़ के चूर्ण में सहत और घी मिलायके देवे अथवा काली मिरचाँ का चूर्ण घी, सहत और मिश्री मिलायकर देवे तो खांसी दूर हो ॥

भाङ्गर्चादिचूर्ण

भाङ्गीशुंठिकणाचूर्णं गुडेन श्वासकासनुत् । संयुतो मधुसर्पिभ्यां

चूर्णं त्रिकटुसंभवम् ॥ निहंति तरसा कासं श्वासानिव सतां हरिः ॥

अर्थ—भारंगी, सोंठ, पीपल इन के चूर्ण को गुड में मिलायके अथवा सोंठ, मिरच, पीपल इन के चूर्ण को सहत और घी में मिलायके देवे तो श्वास, खांसी का नाश हो ॥

घनादिगुटी

घनविश्वशिवागुडजा गुटिका त्रिदिनं वदनांबुजमध्यधृता ।

हरति श्वसनं कसनं ललने ललनेव हिमे हृदये निहिता ॥

अर्थ—नागरमोथा, सोंठ और हरड इन का चूर्ण करके उस में गुड मिलायके अथवा सोंठ, मिरच और पीपल इन का चूर्ण सहत और घी इन के साथ देवे तो श्वास, खांसी का नाश होय ॥

निर्गुंड्यादिघृत

निर्गुंडीरसभागैकं रसाच्चतुर्गुणं घृतम् । पाच्यं घृतावशेषं च
चव्यं वह्निविडंगकम् ॥ चतुर्जातं कटुः कुप्टं समं चूर्ण्य घृते
पचेत् । अष्टमांशघृतं चूर्णं निर्गुंड्याख्यं घृतं पिबेत् ॥ यवाग्नः
कृष्णशाल्यस्तु तंडुलैः परिपाचितैः । निर्गुंडीघृतसंयुक्तं कास-
श्वासहरं पिबेत् ॥

अर्थ—निर्गुंडी का रस १ भाग ले उस में चौगुना घी डालके घृत शेष रहे तब-
तक पचावे फिर इस में चव्य, चित्रक, वायविडंग, दालचीनी, इलायची, पत्रज, ना-
गकेशर, महुआ और कूठ इन का चूर्ण घृत का अष्टमांश डालके घृत के साथ पचावे
फिर काले चावलों की यवाग् डालके पचावे तो यह निर्गुंडीघृत सिद्ध होवे. यह
खांसी और श्वास को दूर करे ॥

धूमपान

अपामार्गस्य पंचांगं संपिष्टं नलिकारसैः । तल्लितवस्त्रे वालिप्य
तालकं च मनःशिला ॥ तं क्षिप्वाग्नौ पिबेत्धूमं सप्ताहं श्वास-
कासजित् ॥

अर्थ—आंगा के पंचांग को बारीक पीस उस को नलिका के रस में खरल करे
उस में हरताल और मनसिल घोटके उस का कपडे पर लेप करे जब सूख जावे
तब इस को हुके में धरके धूआ पीवे तो सात दिन में श्वास और खांसी इन को
नाश करे ॥

वारुणीपत्रधूम

उत्तरावारुणीपत्रं शालितंडुलतालकम् । संपेष्य गुटिका कार्या
वदरांडप्रमाणका ॥ मुखी तंडुलपिष्टेन कर्तव्या छिद्रसंयुता ॥ दीप्तां-
गारे वटीं क्षिप्वा मुखमाच्छाद्य यत्नतः ॥ धूममेरंडनालेन पिबे-
द्भुक्तोतरं शनैः । तांबूलपूरितमुखं पथ्यं क्षीरोदनं हितम् ॥
तत्क्षणात्नाशयेत्कासं सिद्धयोग उदाहृतः ॥

अर्थ—इंद्रायन के पत्ते, शालीधान के चावल और हरताल इन को एकत्र पीस
बेर की गुठली के बराबर गोली बनावे उस को चावलों को पीसके चिलम बनावे

उस में इस गोली को रखके ऊपर अग्नि रखे और उस को ढकने से ढक देवे। फिर उस चिलम में अंडकी नली (नै) लगायके भोजन करने के पश्चात् पीवे और ऊपर से पान खाय और पथ्य में दूध भात खाने को देवे तो खांसी तत्क्षण दूर होय। यह सिद्ध प्रयोग है ॥

हेमगर्भपोटली

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावंतः कनकस्य च । तयोश्च पिष्टिकां
कृत्वा गंधो द्वादशभागिकः ॥ कुर्यात्कज्जलिकां तेषामुक्तभा-
गाश्च षोडश । चतुर्विंशच्च शंखस्य भागैकं टंकणस्य च ॥
एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्कनिंबूकजै रसैः । कृत्वा तेषां ततो गोले
मूपासंपुटके न्यसेत् ॥ मुद्रां दत्त्वा ततो हस्तमात्रे गते च गोम-
यैः । पुटेद्भ्रजपुटेनैव स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ पिष्ट्वा गुंजाचतुर्मा-
नं दद्याद्गव्याज्यसंयुतम् । एकोनत्रिंशदुन्मानमरिचैः सह दी-
यते ॥ राजते मृन्मये पात्रे काचजे वावलेहयेत् । लोकनाथसमं
पथ्यं कुर्याच्च्युचितमानसः ॥ कासे श्वासे क्षये वाते कफग्रह-
णिकागदे । अतिसारे प्रयोक्तव्या पोटली हेमगर्भिका ॥

अर्थ—पारा ४ भाग और सुवर्ण का वारिक चूरा ४ भाग लेकर दोनों को ए
मर्दन करे जब दोनों की उत्तम पिष्टी हो जावे तब पारे का १२ भाग गंधक ले. ३
पिष्टी में मिलायके खरल कर कजली करे फिर पारे का सोलहवां भाग मोती, चौब
भाग शंख तथा एक भाग सुहागा लेकर उस में मिलाय देवे फिर पके हुए नीबू
रस में खरल करके उस का गोला बनावे और उस गोले को सराव संपुट में
ऊपर से कपडमिष्टी करे फिर एक हाथ भर का गड्ढा खोदे उस में गोबर के आ
उपले भर बीच में उस संपुट को रख गजपुट की अग्नि देवे जब शीतल हो ज
तब बाहर निकाल लेवे और उस में औषध निकाल किसी उत्तम पात्र में भरके
रखे. इस रस को हेमगर्भपोटलीरस कहते हैं. यह हेमगर्भ ४ रत्नी ले २९
काली मिरची के चूर्ण से चांदी के पात्र में अथवा मिष्टी के पात्र में अथवा कांच
प्याले में गौ का घी डालके पीवे तथा चित्त को एकाग्र कर लोकनाथरस के सम
पथ्य करे तो श्वास, खांसी, क्षयरोग, वादी के विकार, कफ और संग्रहणी तथा अ
सार इन सब रोगों को दूर करे ॥

कासविधूननरस

रसभागो भवेदेको गंधको द्वौ तथैव च। यवक्षारं त्रिभागं स्या-
द्रुचकं च चतुर्गुणम् ॥ मरीचं पंचभागं स्याच्छुद्धं रसविम-
र्दितम् । कासं पंचविधं हन्याच्छुद्धासं पंचविधं हरेत् ॥

अर्थ-पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, जवाखार ३ भाग, पांगानिमक ४ भाग,
झाली मिरच ५ भाग ले इन को अदरख के रस में खरल कर तीन २ रत्ती की
गोली बनाय ले इसे खाय तो पांच प्रकार की खांसियों का नाश करे ॥

ताम्रपर्पटी

मृतं ताम्रं त्रिभागं च रसं गंधं च तत्समम् । भागमेकं वत्स-
नाभं कज्जलीं खल्वमध्यगाम् ॥ गोघृतेन कृतं कल्कं लोहपात्रे
विपाचयेत् । ढालयेदर्कपत्रस्थपर्पटीरससिद्धये ॥ गुंजाद्रयं त्रयं
चैव पिप्पलीमधुसंयुतम् । त्रिःसप्तत्रयोऽङ्गुलैः रोगराजं च
नाशयेत् ॥ आर्द्रकस्य रसेनैव सन्निपातं नियच्छति । त्रिफला
खंडसंयुक्तं सर्वं पांडुं विनाशयेत् ॥ वातारितैलसंयुक्तं सर्वशूल-
निवारणम् । कुमारीरसयोगेन वातपित्तोपशांतये ॥ वाक्वृची-
रससंयुक्तं सर्वदद्रुविनाशनम् । त्रिफलामधुसंयुक्तं सर्वमेहनिवा-
रणम् ॥ खदिरकाथपानेन कुष्ठाष्टादशनाशनम् । मंथानभै-
रवेणोक्ता लोकानां हितकाम्यया ॥

अर्थ-तामे की भस्म, पारा, गंधक ये प्रत्येक तीन २ भाग ले सिंगियाविष १ भाग इन
सब को एकत्र करके कजली करे इस को गौ के घी में खरल कर लोहे के पात्र में पक
करके इस को आक के पत्तों पर ढाल देवे और दूसरे पत्ते से तत्काल इस को ढकके
दबाय देवे तो यह पर्पटी सिद्ध होय इस को दो अथवा तीन रत्ती लेके सहत और
पीपल के चूर्ण के साथ २१ दिन खाय तो राजयक्ष्मा को नाश करे, अदरख के रस के
साथ सेवन करे तो सन्निपात का नाश करे, त्रिफला और मिश्री के अनुपान से सर्व
प्रकार के पांडुरोग, अंडी के तिल के अनुपान से शूल, धीगुवार के रस के अनुपान
से वातपित्त, वाक्वृची के रस के अनुपान से सर्वकुष्ठ, त्रिफला और सहत इन के अनुपान
से सर्व प्रकार के प्रमेह, खैर के काठे के अनुपान से अठारह प्रकार के कोठ इस प्रकार
अनुपान के भेद से अनेक रोगों का नाश करे यह मंथानभैरव ने लोगों के हितार्थ
पर्पटीरस कहा है ॥

कंटकार्याद्विचूर्ण

कंटकार्याः काणयाश्च चूर्णं समधु कासहृत् ॥

अर्थ—कटेरी और पीपल इन के चूर्ण को सहत से देवे तो खांसी को दूर करे ॥

लवंगाद्विचूर्ण

लवंगजातीफलपिप्पलीनां भागाश्च कल्प्याक्षसमानपूर्वाः । प-
लार्द्धमानं मरिचं प्रदेयं पलानि चत्वारि महौषधस्य ॥ सिता-
समस्तेन समाप्य चूर्णं रोगानिमानाशु वलान्निहन्ति । कासज्वरा-
रोचकमेदगुल्मश्वासाग्निमांद्यं ग्रहणीविकारान् ॥

अर्थ—लौंग, जायफल और पीपल ये एक एक तोला; बहेडा २ तोले, काली मिरच २ तोले, तथा सोंठ १६ तोले ले इन सब का चूर्ण कर और इस चूर्ण की बराबर मिश्री मिलावे। यह चूर्ण खांसी, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गोला, श्वास, मंदाग्नि और संग्रहणी को दूर करे ॥

विभीतकाद्विचूर्ण

द्वौ भागौ च विभीतक्या भागैकं पिप्पलीयुतम् ।

चूर्णं मधुयुतं लेह्यं कासरोगहरं परम् ॥

अर्थ—बहेडा २ भाग और पीपल १ भाग इन का एकत्र चूर्ण कर सहत से चां-
तो यह खांसी के दूर करने में सर्वोत्कृष्ट है ॥

पंचकोलाद्विचूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं शुंठीचूर्णं विभीतकम् ।

मधुना लेहयेच्चाशु हरेत्कासं त्रिदोषजम् ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, सोंठ और बहेडा इन का चूर्ण सहत से चाटे तो त्रिदोष-
जन्य खांसी का नाश होय ॥

बदरीकल्क

बदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैधवम् ।

ज्वरोपघाते श्वासे च लेहमेतं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—बेर के पत्तों का कल्क करके उस में सैधा निमक मिलायके घी में तल ले
यह स्वरभंग और श्वास इन पर देवे ॥

कर्पूरादिचूर्ण

कर्पूरवालकंकोलजातीफलदलं समम् । लवंगं नागमिरचं कृ-
ष्णाशुंठीविषद्धिता ॥ चूर्णं सितासमं ग्राह्यं रोचनं क्षयकासजित् ।
वैस्वर्यश्वासकासघ्नं छर्दितृष्णाक्षयापहम् ॥

अर्थ—कर्पूर, नेत्रवाला, कंकोल, जायफल और जावित्री ये समान भाग लेवे तथा
लौंग, नागकेशर, काली मिरच, पीपल और सोंठ ये सब १-२-३-४भाग इस क्रम से
उये सब का चूर्ण कर तथा सब चूर्ण की बराबर मिश्री मिलावे इस के सेवन करने से
क्षय करे और क्षय, कास, स्वरभंग, श्वास, खांसी और वमन इन का नाश करे ॥

त्रिकटुकादिचूर्ण

कटुत्रिकं छिन्नलताकृशानुफलत्रिकं वेष्टभवं सरासना ।

सशर्करं चूर्णमिदं तु सेव्यं कासाटवीदाहदवानलाख्यम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, चीते की छाल, हरड, बहेडा, आंवला, मि-
रच और रास्ना इन का चूर्ण कर इस में मिश्री मिलाय खाने को देवे तो खांसीरूप
जान को अग्नि के समान नष्ट करनेवाला है ॥

देवदारवादिचूर्ण

देवदारुबलारास्नात्रिफलाव्योपपद्मकैः ।

सविडंगैः सितातुल्यं तच्चूर्णं सर्वकासनुत् ॥

अर्थ—देवदारु, बला, रास्ना, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, पद्माक्ष
और वायविडंग इन का चूर्ण करके बराबर मिश्री मिलाय खाने को देवे तो संपूर्ण
शांति का नाश करे ॥

द्विक्षारादि

द्वौ क्षारौ पञ्चमूलानि पंचैव लवणानि च । सठीनागरकोदीच्य-

कल्कं वा वस्त्रगालितम् ॥ पाययेच्च घृतोन्मिश्रं सर्वकासनिवर्हणम् ॥

अर्थ—जवाखार, सजीखार, पंचमूल और पांचों निमक, कचूर, सोंठ, नेत्रवाला
न का कल्क करके वस्त्र से छान लेवे फिर इस में घी डालके देवे तो संपूर्ण खां-
सियों का नाश करे ॥

ग्रंथिकादि

ग्रंथिकमागधिकाक्षमहौषधैरचितं चूर्णमिदं मधुना युतम् ।

हरति कासभवं दरमाततं विविधदोषहरं च निषेवितम् ॥

अर्थ—पीपरामूल, पीपल, बहेडा और सोंठ इन का चूर्ण सहत में मिलायके दे तो खांसी की भय को और अनेक दोषों का नाश करे ॥

कटुत्रिकादि

कटुत्रिकं च चूर्णितं गुडेन सर्पिपा युतम् ।

निहन्ति कासजं दरं निषेवणं निरंतरम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण गुड और घी इनके साथ बहुत दिन दें तो खांसी का भय नष्ट होवे ॥

हरितक्यादिगुटी

हरितकी कणा शृंठी मरिचं गुडसंयुतम् ।

कासघ्नो मोदकः प्राक्तो परं चानलदीपनः ॥

अर्थ—हरड, पीपल, सोंठ और काली मिरच इन का चूर्ण गुड में मिलायके खा-य तो खांसी नष्ट होय तथा दीपन और पाचन है ॥

त्रिजातादि

त्रिजातमर्धकर्पं च पिप्पल्यर्धपलं सिता । द्राक्षामधुकवर्जूरं

पलांशं श्लक्ष्णकल्कितम् ॥ मधुना गुटिका घ्नति ता वृष्याः

पित्तशोणिते । कासश्वासारुचिच्छर्दिमूर्च्छाहिध्मामदभ्रमान् ॥

क्षतक्षये स्वरभ्रंशे ग्रीहशोपाढ्यमारुतान् । रक्तनिष्ठीवहृत्पार्श्व-

रुक्पिपासाज्वरानपि ।

अर्थ—दालचीनी, पत्रज और इलायची ये छः छः मासे लेवे. पीपल २ तोले और मिश्री, गुलहटी, दाख, खजूर ये प्रत्येक ४ तोले बारीक चूर्ण करके कल्क करे और सहत से गोली बनायके देवे. यह वृष्य है तथा पित्तरक्त, श्वास, खांसी, अरुचि, वांति, मूर्च्छा, हिचकी, मद, भ्रम, क्षतक्षय, स्वरभंग, ग्रीहा, शोष, आढ्यवात, रुधिर की वमन, हृदयरोग, पार्श्वशूल, प्यास और ज्वर इन को दूर करे ॥

मरीच्यादिगुटी

मरीचं कर्पमात्रं च पिप्पली कर्पसंमिता । अर्धकर्षो यवक्षारो

कर्पयुग्मं च दाडिमम् ॥ एतच्चूर्णीकृतं युञ्ज्यादष्टकर्पगुडेन हि ।

शाणप्रमाणगुटिका कृत्वा वक्त्रे विधारयन् ॥ अस्याः प्रभावा-

त्सर्वेपि कासा यांत्येव संक्षयम् ॥

अर्थ—काली मिरच १ तोला, पीपल १ तोला, जवाखार छः मासे, अनार की छाल २ तोले इन सब का चूर्ण करके उस में ८ तोले गुड मिलायके चार २ मासे की गोली बनावे इस को मुख में रखे इस गोली के प्रभाव से संपूर्ण प्रकार की खांसी नष्ट होवे ॥

लवंगादिगुटी

तुल्या लवंगमरिचाक्षफलत्वचः स्युः सर्वैः समो निगदितः खदिरस्य सारः । बबूलवल्कलकपाययुता विभाव्यात्कासान्निहन्ति गुटिका घटिकाष्टकांते ॥

अर्थ—लौंग, काली मिरच और बहेडे की छाल लेवे. तथा इन तीनों की बराबर खैरसार लेवे. सब को खरल में डाल बबूर की छाल के काठे से खरल करे तो यह लवंगादिगुटी आठ घडी में सर्व प्रकार की खांसियों को दूर करे ॥

धनंजयवटी

धनंजयत्रिजातकं कणा जटा कटुत्रिकम् ।

रसाद्र्रकेन भावितं जयेच्च कासमाततम् ॥

अर्थ—कोहू की छाल, दालचीनी, पत्रज, इलायची, पीपरामूल, सोंठ, काली मिरच और पीपल इन का चूर्ण अदरख के रस में खरल करे और गोली बनाय ले यह धनंजयवटी सर्व प्रकार की खांसियों को नष्ट करे ॥

खदिरादिगुटी

खदिरं पौष्करं शृंगी कटुफलं द्विजयष्टिका । हरीतकी लवंगं च व्योपं चातिविषं तथा ॥ कारवीयासममृता बृहतीद्वयमक्षकम् । पृथक्कर्षद्वयं ग्राह्यं सूक्ष्मचूर्णं तु कारयेत् ॥ सर्वैः समं खादिरं च मेलयित्वा विभावयेत् । दाडिमत्वक् तथा शुद्राखादिरांभोभिराद्र्रकैः ॥ बबूलत्वग्दलैः काथैश्चाटरूपजलं तथा । सप्तधा भावयेद्ब्रह्मा गुटिका खदिराभिधा ॥ कासश्वासौ निहन्त्याशु दुस्तरौ चिरजावपि ॥

अर्थ—कत्या, पुहकरमूल, कांकडासिंगी, कायफल, भारंगी, हरड, लौंग, सोंठ, मिरच, पीपल, अतीस, अजमायन, धमासा, गिलोय, कटेरी, बड़ी कटेरी और बहेडे का बकल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सब का बारीक चूर्ण करके उस सब चूर्ण की

बराबर खैरसार मिलावे. फिर अनार की छाल, कटेरी, खैर की छाल, चबूर की छाल और पत्ते, अहूस्रा इन के काढ़े से अथवा रस से सात बार घोंटे फिर भासे भर की गोली बांध ले. इसे खदिरादिचटी कहते हैं इस से खांसी और श्वास ये बहुत दिन के होवे तो भी नष्ट हों ॥

व्योपादिगुटी

व्योपाम्लवेतसं चव्यं तालीसं चित्रकं तथा । जीरकं तित्तिडीकं
च प्रत्येकं कर्पभागिकम् ॥ त्रिसुगंधित्रिशाणं स्याद्गुडः स्यात्
त्कर्पविंशतिः । सर्वमेकत्र संकुप्ये गुटिका कर्पसंमिता ॥ भक्ष-
येत्प्रातरुत्थाय सर्वान् कासान् व्यपोहति । पीनसं श्वासमरुचिं
स्वरभेदं व्यपोहति ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, अमलवेत, चव्य, तालीस, चीता, जीरा, तित्तिडीक, प्रत्येक एक २ तोला ले और तज, पत्रज और इलायची ये चार २ मासे लेवे. और गुड २० तोले इन सब को एकत्र कूटके एक एक मासे की गोली बनावे इस को प्रातःकाल खाय तो संपूर्ण खांसी, पीनस, श्वास, अरुचि और स्वरभेद इन सब को दूर करे ॥

पिप्पल्यादिगुटी

सपिप्पली पुष्करमूलपथ्या शृंठी शठी मुस्तकसूक्ष्मचूर्णम् ।
गुडेन युक्ता गुटिका प्रयोज्या श्वासेषु कासेषु विवर्धितेषु ॥

अर्थ—पीपल, पुहकरमूल, हरड, सोंठ, कचूर और नागरमोथा इन का बारीक चूर्ण करके इस को गुड में मिलाय गोली बनावे यह बड़ी हुई खांसी, श्वास इन को दूर करे ॥

क्ष्वथौ गंधनाशे च धूमपानं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—जिस को छीक और गंध न आती उस को धूमपान कराना चाहिये ॥

अर्कमूलादिधूम

अर्कमूलशिलैस्तुल्यं ततोर्धेन कटुत्रिकम् । चूर्णितं वह्निनि-
क्षिप्तं पिबेद्धूमं तु योगवित् ॥ भक्षयेदथ तांबूलं पिबेद्गुग्धमथापि-
वा । कासः पंचविधो याति शान्तिमाशु न संशयः ॥

अर्थ—आंक की जड़ और मनासिल इन से आधी सोंठ, मिरच, पीपल इन

चूर्ण को आग्निपर ढालके धूप को पीवे और ऊपर से वीड़ी खाय अथवा दूध पीवे तो पांच प्रकार की खांसी नष्ट हो. इस में संदेह नहीं है ॥

मनःशिलादिधूम

मनः शिलाभिर्मरिचमांसीमुस्तेंगुदीयुतम् । धूमं तस्यानुपचयं
सुखोष्णं सगुडं पिबेत् ॥ एष कासान्पृथग्द्वंद्वसन्निपातसमु-
द्भवान् । शतैरपि प्रयोगाणां साधयेदप्रसाधितान् ॥

अर्थ—मनसिल, काली मिरच, जटामांसी, नागरमोथा और गोंदी इन के चूर्ण में गुड मि-
लायके इस को सुखोष्ण पावे तो यह दोपज, द्वंद्वज, सान्निपातिक और सैंकड़ों
औषधों से जो खांसी अच्छी न होवे वे सब इस से नष्ट हों ॥

दूसरा प्रकार

मनःशिलालितदलं वदर्यातपशोपितम् ।
सक्षीरं धूमपानं च महाकासनिवर्हणम् ॥

अर्थ—वेर के पत्तों में मनसिल लगाके धूप में धर देवे जब सूख जावे तब
इस को चिलम में धरके इन का धूआ पीवे तो घोर खांसी का नाश होय ॥

धत्तूरादिधूम

पिष्ट्वा त्रिपुटधत्तूरमूलव्योपमनःशिलाः । तेन प्रालिप्य वसनं धू-
मवर्तिं प्रकल्पयेत् ॥ धूमं तस्याः पिबेद्यस्तु कासो नश्येदिन-
त्रयात् ॥

अर्थ—धतूरे की जड़, सोंठ, मिरच, पीपल और मनसिल इन को एकत्र जल में
पीस कपड़े पर लेप कर देवे फिर इस को धूप में सुखायके बत्ती बनाय ले इस का
धूआ पीवे तो तीन दिन में खांसी दूर होवे अथवा इस को हुके में धरके पीवे ॥

जातिपत्रादिधूम

जातिपत्रं शिलारालैर्योजयेद्गुलं समम् ।
अजामूत्रेण पिष्टोयं धूमः कासहरः परः ॥

अर्थ—जावित्री, मनसिल, रार और गूगुल ये समान भाग ले सब को कूट पीस
बकरी के मूत्र में खरल करे फिर इस को हुके में रखके इस के धूप को पीवे तो
खांसी को नष्ट करे ॥

जातिमूलादिधूम

जातीजटाकिसलयैर्वदरीदलैश्च जाता मसूरकफलैः समनःशिलाभिः । स्याद्भूमवर्तिरिह गुग्गुलुना समेतैः कासे स्थिते वदारिकाग्निविदह्यमानैः ॥

अर्थ—चमेली की जड़, चमेली के पत्ते, मसूर, मनसिल और गुग्गुलु इन को पीसके बेर की पत्ती पर लेप कर देवे फिर इन को सुखाय हुके में रखके इन के धूप को पीवे तो खांसी को नष्ट करे ॥

हरिद्राधूम

रात्रिद्वयशिलाधूमपानात्कासश्रुतिः कुतः ।

जलपानादपि तथा क्षणेन क्षणदाक्षये ॥

अर्थ—हरदी, दारुहरदी और मनसिल इन के धूप को पीवे किंवा उपपान करे अर्थात् प्रातःकाल उठकर जल को पीवे तो सर्व प्रकार की खांसी दूर हो ॥

विभीतकावलेह

अजस्य मूत्रस्य शतं पलानि शतं पलानां च कलिद्रुमस्य । पक्कं समध्वाशु निहंति कासं श्वासं च तद्वत्सवलं बलासम् ॥

अर्थ—बकरी का मूत्र १००पल और बहेडे की छाल १००पल ले दोनों को औटायके अवलेह बनावे इस अवलेह में सहत डालके पीवे तो खांसी, श्वास और कफ इन का नाश करे ॥

कंटकार्यवलेह

कंटकारीं तुलानीरे द्रोणे पक्त्वा कपायकम् । पादशेषं गृहीत्वा च तस्मिन् चूर्णानि दापयेत् ॥ पृथक्पलांशान्येतानि गुडूचीचव्यचित्रकम् । मुस्तककंटशृंगी च त्र्युपणं धन्वपासकम् ॥ भार्ङ्गी रास्ना शठी चैव शर्करापलविंशतिः । प्रत्येकं च पलान्यष्टौ प्रदद्याद्भूतलोहयोः ॥ पक्त्वा लेहत्वजाते च शीति मधुपलाष्टकम् । चतुःपलं तुगाक्षीरीपिप्पलीनां चतुःपलम् । क्षिप्त्वा निदध्यात्सुदृढे मृन्मये भाजने शुभे । लेहोयं हंति कासार्तिहिकाश्वासानशेषतः ॥

अर्थ—कटेरी ४०० तोले, जल २०४८ तोले ले सब को एकत्र कर चतुर्याश झाडा करे उस में गिलोय, चव्य, चित्रक, नागरमोथा, कांकडासिंगी, साँठ, मिरच, पीपल, धमासा, भारंगी, रास्ना और कचूर ये प्रत्येक चार चार तोले लेवे. तथा मेथ्री ८० तोले, घी ३२ तोले लेवे और लोहभस्म ३२ तोले, वंशलोचन १६ तोले और पीपल १६ तोले मिलायके यह अवलेह उत्तम मिट्टी के पात्र में भरके धर रते इस को खाय तो यह खांसी, हिचकी, सर्व प्रकार के श्वास रोग इन को नाश करे ॥

अगस्तिहरीतक्यवल्लेह

दशमूली स्वयंगुप्ता शंखपुष्पी शठी बला । हस्तिपिप्पल्यपा-
मार्गपिप्पलीमूलचित्रकान् ॥ भार्ङ्गी पुष्करमूलं च द्विपलांशं
यवाढकम् । हरीतकीशतं चैव जले पंचाढके पचेत् ॥ यवैः
स्विन्नैः कपाये च पूतं तच्चाभयाशतम् । पचेद्भुडतुलां दत्त्वा
कुडवं च पृथग्घृतम् ॥ तैलात्पिप्पलिचूर्णाच्च सिद्धे शीते च मा-
क्षिकात् । लिह्याद्वे चाभये नित्यमतः खादेद्रसायनम् ॥ वलिं
च पलितं हन्याद्गर्णायुर्वलवर्द्धनम् । पंच कासान् क्षयान् श्वासा-
न् हिकां च विपमज्वरान् ॥ हन्यात्तथा ग्रहण्यर्शोहृद्रोगारु-
चिपीनसान् । अगस्तिविहितं धन्यमिदं श्रेष्ठं रसायनम् ॥

अर्थ—दशमूल, कौंठ के बीज, संलाहली, कचूर, खिरेटी, गजपीपर, आंगा, पीपरामूल, चित्रक की छाल, भारंगी, पुष्करमूल ये प्रत्येक आठ आठ तोले लेवे गीं १०२४ तोले, हरड ४०० तोले और जल ५१२० तोले डालके पक करे जब गीं सीजके कादा हो जावे तब उतारके जल को छान ले उस में ४०० तोले बडी २ हरड डालके औटावे और गुड ४०० तोले, घी १६ तोले, तेल १६ तोले और पीपल का चूर्ण १६ तोले डालके अवलेह बनावे जब तयार हो जावे तब नीचे उता-
ले शीतल होने पर सहित १६ तोले मिट्टीके और शीशे में अच्छा धीमी आदि के पात्र में भरके धर रखे इस में से दो हरड नित्य खाय यह हरड बली, पलित और १ प्रकार की खांसी, क्षय, श्वास, हिचकी, विपमज्वर, संग्रहणी, यवासीर, हृदयरोग, पीनस इन को नष्ट करे और वर्ण, आयुष्प तथा बल को बढावे. यह अगस्त्यकृपापि ही कही हुई है इसी से इस को अगस्त्यावल्लेह कहते हैं ॥

व्याघ्र्यादिघृत

व्याघ्रीस्वरसविपकं रास्नाकटफलगोक्षुरव्योषैः ।
सर्पिः स्वरोपघातं निहन्ति कासं च पंचविधम् ॥

अर्थ—कटेरी के स्वरस में रास्ना, कायफल, गोखरू, सोंठ, मिरच, पीपल और घी डालके इस घृत को सिद्ध कर लेवे इस के खाने से स्वरभंग और पांच प्रकार की खांसी इन का नाश होवे ॥

गुडूच्यादिघृत

सर्पिर्गुडूचीवृषकंटकारीकाथेन कल्केन च सिद्धमेतत् ।
पेयं पुराणज्वरकासशूलप्लीहाग्निमांद्यग्रहणीगदेषु ॥

अर्थ—गिलोय, अडूसा और कटेरी इन का काढा करे तथा कल्क करे इस में घी डालके सिद्ध करे तो यह जीर्णज्वर, खांसी, शूल, प्लीहा, मंदाग्नि और संग्रहणी इन को नष्ट करे ॥

त्र्यूपणादिघृत

त्र्यूपणं त्रिफला द्राक्षा काश्मर्याटपरूपकम् । द्वे पाठे देवदा-
व्यब्दसगुप्तं चित्रकं सठी ॥ व्याघ्री तामलकी मेदा काकनासा
शतावरी । त्रिकंटकं विदारी च पिष्ट्वा कर्पसमान् घृतात् ॥
प्रस्थं चतुर्गुणं क्षीरं सिद्धं कासहरं पिवेत् । ज्वरगुल्मारुचिप्लीह-
शिरोहृत्पार्श्वशूलनुत् ॥ कामलाशोनिलाप्लीलाक्षतशोपक्षयाप-
हम् । त्र्यूपणं नाम विख्यातं घृतमेतन्महोत्तमम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, दाख, कंभारी, अडूसा, पाट बल्लीपाट, देवदारू, नागरमोथा, कौंछ के बीज, चित्रक, कचूर, कटेरी, भूय आंवल ये सब एक २ तोला ले घी ६४ तोले, दूध २५६ तोले डालके घृत सिद्ध करे तं खांसी, ज्वर, गोला, अरुचि, प्लीहा और मस्तक, हृदय, पार्श्व इन का शूल, कामल बवासीर, वातप्लीला, क्षतक्षय और क्षय इन का नाश करे यह त्र्यूपणनामक घृत सर्वोत्तम विख्यात है ॥

कंटकारीघृत

समूलफलपत्रायाः कंटकार्या रसाढकम् । घृतप्रस्थं वलाव्योप-
विडंगं शठिदाडिमम् ॥ सौवर्चलं यवक्षारं विश्वामलकपौष्करैः ।
वृश्चिवद्बृहतीपथ्या यवानीचित्रकादिभिः ॥ मृद्धीका चव्यवर्पा-
भूदुरालंभाम्लवेतसैः । शृंगीतामलकीभाङ्गीरास्नागोक्षुरकैः

पचेत् ॥ कल्कैस्तु सर्वकासेषु श्वासहिक्रासु शस्यते । कंट-
कारीघृतं सिद्धं पंचकासनिपूदनम् ॥

अर्थ—कटेरी के पंचांग का रस १०२४ तोले, घी ६४ तोले और सिरिदी का रस, साँठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, कचूर, अनारदाना, संचर निमक, जवाहार, साँठ, आमले, पुहकरमूल, साँठ, लाल रंगकी कटेरी, हरड, अजमायन, चित्रक, दाख, चव्य, सपेद साँठ, धमासा, अमलवेत, कांकडासिंगी, भूयआंवला, भांगी, रास्ना, गोखरू इन का काटा और कल्क डालके घृत सिद्ध करे यह संपूर्ण प्रकार की खांसी, श्वास और हिचकी इन पर देना चाहिये यह सिद्धकंटकारीघृत पांच प्रकार की खांसी को नष्ट करे ॥

दूसरा प्रकार

कंटकार्यास्तुलां क्षुण्णां कृत्वा द्रोणेभसः पचेत् । तेनाढकेन का-
थस्य घृतप्रस्थं पिचून्मितैः ॥ रास्नादुस्पर्शपद्मार्थि पिप्पली-
द्वयचित्रकैः । सौवर्चलयवक्षारकृष्णामूलैश्च तज्जयेत् ॥ कास-

। श्वासकफष्ठीविहिकारोचकपीनसान् ॥

अर्थ—कटेरी ४०० तोले को २०४८ तोले जल में औटावे जब आधा जल रहे तब इस काटे को उतारके छान लेवे फिर इस में ६४ तोले घी तथा रास्ना, धमासा, पीपल बडी, पीपल छोटी, गजपीपल, चित्रक, संचर निमक, जवाहार, पीपरा-मूल ये एक एक तोला डालके घृत सिद्ध करे- यह कंटकारीघृत खांसी, श्वास, कफ की वांति, अरुचि और पीनस इन को दूर करे ॥

भागोत्तरवटी

रसगंधकणा पथ्या कलिद्रुफलवासकः । भार्ङ्गी चेति क्रमाद्बृद्ध-
मेतज्जंवीरजद्रवैः ॥ अष्टाविंशत्तमाने तान्कुर्यात्क्षौद्रेण गोलकान् ।
कर्पप्रमाणमेतस्य तमेकं प्रातरुत्थितः ॥ अद्यान्मासत्रयं क्षुद्रा-
काथं दशकणायुतम् । पिबेत्तदनु कासाच्च श्वासाच्च परिमुच्यते ॥

अर्थ—पारा, गंधक, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला और भांगी ये क्रमशः लेकर इन का चूर्ण करे और भाँसू के रस में सरल करे फिर सहत से तोले २ भर की गोली २८ बनावे और नित्यप्रति १ गोली सेवन करे इस प्रकार तीन महीने भक्षण करे और ऊपर से दस पीपल पीसके पीवे ती खांसी और श्वास से छूट जावे ॥

अगंधखर्परपटी

भागौरसस्य द्वावेकौ द्वावेकौ लोहभस्मनः । एतद्वृते द्रवीभूतं
मृद्ग्नौ कदलीदले ॥ पातयेद्गोमयगते तथैवोपरि योजयेत् ।
ततः पिष्ट्वा द्रवैरेभिर्मर्दयेत्सतथा पृथक् ॥ भार्ङ्गीशुंठीमुनिवरा-
जयानिर्गुडिकाद्रवैः । व्योपवासककन्याद्रद्रवैः शुष्कैः पुट्लघुः ॥
अगंधखर्परो नाम्ना पर्पटीति रसो भवेत् । सर्वरोगहरः स्वैः स्वैर-
नुपानैर्द्विमापतः ॥ तांबूलपत्रसहितः कासश्वासहरः परः ।
सकणः सुरसाक्वाथोनुपानं वा सगोजलम् ॥

अर्थ—पारा चारह भाग और लोहभस्म चारह भाग इन की कजली को अग्नि
ताप करके लेके पत्रे पर ढाल देवे. फिर उस को पीसके भारंगी, सोंठ, अगस्त्य
अरनी, निर्गुडी, सोंठ, मिरच, पीपल, अडूसा, धीगुवार और अदरक इन के का
में अथवा रस में घोटकर लघु पुट देवे तो यह अगंधखर्पर नामक रस बने इ
को पर्पटी भी कहते हैं यह अनुपान दो रत्ती के प्रमाण देने से संपूर्ण रोगों को हर
करे. इस को पान में रखके खाय और ऊपर से तुलसी के काटे में पीपल का चू
ढालके पीवे अथवा गोमूत्र पीवे तो खांसी और श्वास इन को नष्ट करे ॥

कासश्वासविधूननरस

रसभागो भवेदेको गंधकद्रौ तथैव च । यवक्षारस्त्रिभागः स्या-
द्दुचकं च चतुर्गुणम् ॥ मरीचं पंचभागं स्याच्छुद्धं रसविमर्दि-
तम् । कासं पंचविधं हन्याच्छ्वासं पंचविधं तथा ॥

अर्थ—शुद्ध पारा १ भाग, गंधक २ भाग, जवाखार ३ भाग, पागा निमक ४
भाग, तथा काली मिरच ५ भाग सब शुद्ध लेवे सब को पारे के साथ खरल करे जब
तयार हो जावे तब खाने को देवे तो ५ प्रकार की खांसी तथा पांच प्रकार की श्वास
इन को नाश करे ॥

गुरुपंचमूलीकाढा

अतः परं कोमलवाणि कासश्वासप्रतीकारमुदीरयामि ।

निहंति कासं गुरुपंचमूलीकृतः कपायश्चपलासहायः ॥

अर्थ—लोलिंबराजकवि अपनी स्त्री को संबोधन देकर कहता है कि हे कोमलवाणि!
अब इस के उपरांत मैं तेरे आगे खांसी और श्वास का प्रतीकार कहता हूँ. वृहत्पं-
चमूल के काटे में पीपल का चूर्ण ढालके पीवे तो खांसी को नष्ट करे ॥

वासादिकाढा

वासाहरिद्राधनिकागुडूचीभाङ्गीकणापौष्कररिंगणीनाम् ।

क्वाथेन मारीचरजोन्वितेन कासः क्षयं याति न कस्य पुंसः ॥

अर्थ—अडूसा, हलदी, धनिया, गिलोय, भारंगी, पीपल, पुहकरमूल और कटेरी इन का काढा काली मिरचा का चूर्ण डालके पीवे तो किस पुरुष की खांसी दूर नहीं होती ? ॥

सिंहीकपाय

अयि रत्नकले नीलनलिनच्छदनेक्षणे ।

सिंहीकपायः सकणः कासग्रासकरः क्षणात् ॥

अर्थ—हे रत्नकले ! हे नीलनलिनच्छदनेक्षणे ! कटेरी के काढे में पीपल का चूर्ण डालके देवे तो खांसी को एक क्षणमात्र में ग्रास कर जावे ॥

वृषादिकाढा

पुलोमजावल्लभसूतुपत्नीतातात्मभूशेखरवाहनस्य ।

सौंदर्यदूरीकृतरामरामे कपायकः काससर्मारसर्पः ॥

अर्थ—हे सौंदर्यदूरीकृतरामरामे ! इन्द्राणी पति (इन्द्र) का पुत्र (अर्जुन) की स्त्री (द्रौपदी) का पिता (द्रुपद) का पुत्र (शिशुंडी) सो है मस्तक में जिस के ऐसे (शिव) का वाहन (वृष) अर्थात् अडूसा इस का काढा खांसीरूप पवन के पीने को सर्वरूप है यह श्लोक कूट है और लोळिंबराज में लिखा है ॥

आर्द्रकावलेह

आर्द्रादधगुडातुलादपि तथार्धाभ्रं च कुस्तुंवरीदीप्यायोजरणा-

त्रिजातकटुकादेतत्पचेद्युक्तितः । लेहो रत्नकले तवैव कथितः

प्राणप्रियाया मया कासाज्ञो ज्वरपीनसश्वयथुरुगुल्मक्षयध्वंसनः ॥

अर्थ—अदरस २०० तोले, गुड २०० तोले, धनिया २ तोले और अजमायन, लोहभस्म, जीरा, दालचीनी, पत्रज, इलायची, कुटकी इन प्रत्येक का चूर्ण दो दो तोले लेवे सब को युक्तिपूर्वक पचायके अवलेह सिद्ध करे यह खांसी, बवासीर, ज्वर, पीनस, सूजन, गोला और क्षय इन का नाश करे ॥

व्याघ्रीहरीतक्यवलेह

समूलपुष्पच्छदकंटकार्यातुलाजले द्रोणपरिप्लुता च । हरीतकीनां

च शतं निदध्यादेतच्च पक्त्वा चरणावशेषम् ॥ गुडस्य दत्त्वा
शतमेतद्ग्नौ विपक्वमुत्तार्य ततः सुशीते । कटुत्रिकं च त्रिपलप्र-
माणं पलानि पट्ट पुष्परसस्य चापि ॥ क्षिपेच्चतुर्जातपलं यथा-
ग्निप्रयुज्यमानो विधिनावलेहः । वातात्मकं पित्तकफोद्भवं च
द्विदोषकासानपि सन्निपातान् ॥ क्षतोद्भवं कासक्षयं च हन्या-
त्सपीनसश्वासमुरःक्षतं च । यक्ष्माणमेकादशमुग्रभूयं भृगूपादि-
ष्टं हि रसायनं स्यात् ॥

अर्थ—कटेरी का पंचांग ४०० तोले और ४०० तोले हरड ले इन को २०४८ तोले जल में डालके चतुर्याश शेष काढा करे फिर उस में ४०० तोले गुड डालके उत्तम अवलेह योग्य पाक करे जब सिद्ध हो जावे तब उतार लेवे और शीतल होने पर आगे लिखी हुई औषध डाले जैसे सोंठ, काली मिरच और पीपर चार २ तोले, सहत २४ तोले तथा दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर ये चार तोले डाले फिर इस को बलाबल विचारके खाने को देय तो वात, पित्त, कफ, द्विदोष, सन्निपात इन से होनेवाले तथा क्षतकास, क्षयकास, पीनस, उरःक्षत, ग्यारह प्रकार के क्षय इन को नाश करे यह रसायन भृगु ने कहा है ॥

कासकंडनावलेह

अजामूत्रं शतपलं मंदाग्नौ गुडपाकवत् । पक्त्वा विभीतकं
चूर्णं पलद्वयमितं क्षिपेत् ॥ पलं पिप्पलित्चूर्णं च पलमात्रं
मृतायसम् । कंटकारीफलरजो निःक्षिपेच्च पलद्वयम् ॥ ततो
मापद्वयं खादेष्टककर्ममथापि वा । क्षौद्ररंभांबुना वापि सर्वका-
सात्प्रमुच्यते ॥ असाध्यभिपजा त्यक्ताश्चिरजापथ्यवर्जिताः ।
ये कासास्ते त्वनेनाशु प्रणश्यंति न संशयः ॥ कासकंडनना-
मायं योग आत्रेयभाषितः ॥

अर्थ—बकरी के मूत्र ४०० तोले को मंदाग्नि पर रखके गुडपाक के समान पक करके उस में बहेडे का चूर्ण ८ तोले, पीपल का चूर्ण ४ तोले, लोह की भस्म ४ तोले, कटेरी के फल का चूर्ण ८ तोले इन सब को एकत्र करके सहत से अवलेह बनावे यह कासकंडनावलेह को दो मासे वा दस मासे अथवा एक तोला नित्य सेवन करे अथवा केले के जल से देवे तो बहुत दिनों से वैद्यों ने छोडा तथा पध्यहीं ऐसा सांसी का रोग शीघ्र नष्ट करे यह आत्रेयऋषि ने कहा है ॥

हेमगर्भपोटली

शुद्धसूतं त्रिभागं च तत्समं लोहभस्म च । भागैकं गंधकं दद्यात्तदूर्ध्वं स्वर्णमेव च ॥ कज्जलीं कारयेत्तत्तु खल्वके सप्तवासरम् ॥ अथ निर्गुंडिकाद्रावैर्मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ अथवा कनकद्रावैर्गुंडिकां कारयेत्ततः । किञ्चिच्छलिसमायुक्तवस्त्रे गोलं निधाय च ॥ बध्नीयात्पोटलीमेवं ततश्च त्रिपुटं पचेत् । दृढमृन्मयपात्रस्थे गंधं दत्त्वाधरोत्तरम् ॥ तन्मध्ये पोटलीं न्यस्य निर्वातभवनांतरम् । वितस्तिप्रमितां गर्त्तां तस्यां संस्थाप्य मुद्रयेत् ॥ अंगुलीमुद्रिकाभिश्च ज्वालयेद्दिधनानि च ॥ यामेन सिद्धतां याति हेमगर्भाख्यपोटली ॥ अनुपानानुसारेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

अर्थ-शुद्ध पारा ३ भाग, लोहभस्म ३ भाग, गंधक १ भाग और सुवर्णकी भस्म पाधा भाग इन की खरल में कजली करे फिर इस को निर्गुंडी के रस से ७ दिन ढवना देवे फिर धतूरे के रस में खरल करके गोला कर लेवे फिर इस के ऊपर पिढा लपेट दे और मिट्टी के बरतन में गंधक बिछाय इस गोले को रस देवे तीर ऊपर से फिर गंधक बिछाय दे. फिर निर्वात स्थान में एक वितस्त का गड्ढा करके उस में इस गोले के पात्र को रखके उस पर मुद्रा दे उस के ऊपर १ अंगुल मिट्टी डाल देवे और एक प्रहर लकड़ी की अग्नि देवे तो यह हेमगर्भपोटलीरस सिद्ध होवे इस को अनुपान के साथ सर्व रोग पर देवे तो सब को नष्ट करे ॥

हेमगर्भ

रसस्य भागाश्चत्वारस्तदूर्ध्वं कनकस्य च । तदूर्ध्वं ताम्रकं चैव मौक्तिकं विद्रुमं समम् ॥ तत्समानेन बलिना सर्वं खल्वे विमर्दयेत् । कृत्वा तु गोलकं पश्चात्पचेद्बद्धधरयंत्रके ॥ मृदुना वह्निना चैव स्वांगशीतं समुद्धरेत् । बलिमेव च सम्यग्वै पद्गुणं जारयेत्सुधीः ॥ हेमगर्भरसो नाम त्रिपु लोकेषु विश्रुतः । कासश्वासेषु सर्वेषु शूलेषु च हितस्तथा ॥ तत्तद्रोगानुपानेन सर्वान् रोगान्जयेत्परम् ॥

अर्थ-पारा ४ भाग, ताम्रभस्म १ भाग, मोती ११ भाग, मूंगा १ भाग और गंधक १ भाग इन सब को खरल में डालके कजली करे फिर इस का गोला बनाय उस को

भूधरयंत्र में रख मंदाग्नि से पचन करावे- जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल गंधक के साथ खरल करके फिर पुट देवे- इस प्रकार पड़गुण गंधक जारण करे तो यह हेमगर्भरस त्रिलोकी में खासी, संपूर्ण श्वास और शूल इन का नाशक प्रसिद्ध है तथा रोगोक्त अनुपान के साथ सर्व रोगों का नाश करे ॥

दूसरा प्रकार

शुद्धसूतं पलं चैकं पादांशं शुद्धहेमकम् । शुद्धगंधस्य मापैकं
प्रतिकर्षेण योजयेत् ॥ त्रयमेकत्र कुर्वीत श्लक्ष्णचूर्णं च कारयेत् ।
सुदृढं बंधयेद्वस्त्रे वहिः सूतं समं बलिम् ॥ वस्त्रं गृहीत्वा गुटिका
तदंतर्बन्धयेत्पुनः । शरावसंपुटे न्यस्य मुखे मुद्रां च कारयेत् ॥
भूमिसंपुटगं कृत्वा भूधराख्ये पचेत्पुटे । स्वांगशीतं समुत्पृत्य
त्यजेजीर्णं च गंधकम् ॥ पुनः संचूर्ण्य गुटिकाः सुदृढं बंधयेद्विपक्वा
तया बहिर्वलिं दत्त्वा भूधराख्ये पुनः पचेत् ॥ एवं दत्त्वा मुनिपुटं
रसः स्याद्धेमगर्भकः । श्वासकासेषु सर्वेषु शूलेषु विहितस्तथा ॥

अर्थ-शुद्ध पारा १ तोले, शुद्ध सुवर्ण १ तोला और शुद्ध गंधक १ मासा । तीनों को एकत्र करके बारीक चूर्ण करे फिर इस को दृढ कपडे में बांधे और उस कपडे के बाहर पारे गंधक की कजली कर उस को जल में सानके लेप कर दे और दूसरा कपडा चढाय देवे फिर गोले को शरावसंपुट में रख मुख को मुद्रा देकर बंध कर देवे- फिर इस को पृथ्वी में गहूडा खोद भूधरयंत्र में पचन करे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकालके ऊपर जली हुई गंधक को दूर करे फिर चूर्ण करके दृढ गोल बनाय लेवे उसी प्रकार कपडा लपेट कजली की पंक्त ऊपर से लपेट देवे और भूधरयंत्र में रखके फूंक देवे इस प्रकार सात पुट देवे तो हेमगर्भपोटलीरस सिद्ध होवे- यह खांसी, श्वास, शूल इन पर परम हितकारी है तथा अनुपान के साथ सर्व रोगों का नाश करे है ॥

कासकेसरी

दरदं मरिचं मुस्तं टंकणं च विपं समम् ।

जंबीराद्भिश्च संमर्द्य कुर्यान्मुद्गनिभां वटीम् ॥

आर्द्रकस्वरसेनैव कासं श्वासं व्यपोहति ॥

अर्थ-हिंगुल, काली मिरच, नागरमोथा, सुहागा और सिंगियाविष इन सब को

भीरी के रस में खरल कर गूंग के समान गोली बनावे. इस को अदरर के रस से
ने को देवे तो सांसी और श्वास इन को दूर करे ॥

रसेन्द्रवटी

कर्पे शुद्धरसेन्द्रस्य गंधकस्याभ्रकस्य च । ताम्रस्य हरितालस्य
लोहस्य च विपस्य च ॥ मरिचस्य च सर्वेषां श्लक्ष्णचूर्णं पृ-
थक् पृथक् । मानोल्बौ खंडकर्पे च निर्गुंडी काकमाचिका ॥
केशराजभृंगराजस्वरसेन सुभावितम् । कलायपरिमाणं तु
गुटिकां कारयेद्विपक्वा ॥ कृत्वादौ शिवमभ्यर्च्य द्विजादीन्परितो-
पितान् । जीर्णान्नो भोजयेत्पश्चात्क्षीरमांसरसाशनः ॥ अपि
वैद्यशतैस्त्यक्तमम्लपित्तं नियच्छति । कासं पंचविधं हंति
श्वासं चैव सुदुर्जयम् ॥

अर्थ-शुद्ध पारा, गंधक, अभ्रक, ताम्र, हरिताल, लोह इन की भस्म और
सिंगियाविप तथा काली मिरच इन का बारीक चूर्ण करके निर्गुंडी, मकोय, काळा
गूंगरा और भांगरा इन के रस की भावना देकर मटर के बराबर गोली बनावे इस
से श्रीशिव का पूजन कर तथा ब्राह्मणों को दान देकर सेवन करे और अन्न पचने
पर फिर भोजन करे, दूध और मांसरस भोजन करे तो सेंकड़ों वैद्यों से जो
बच्छा न होवे ऐसा अम्लपित्त, पांच प्रकार की सांसी और दुर्जय श्वास इन को
शां करे ॥

नीलकंठरस

सूतकं गंधकं लोहं विपं चित्रकपत्रकम् । वरांगं रेणुका मुस्ता
ग्रंथिकं नागकेसरम् ॥ फलत्रिकं त्रिकटुकं शुल्बं तुल्यं तथैव
च । एतानि समभागानि गुडो द्विगुणमुच्यते ॥ संमर्द्य गुटिकां
कृत्वा भक्षयेच्चणमात्रकम् । कासे श्वासे तथा गुल्मे प्रमेहे विपम-
ज्वरे ॥ मूत्रकृच्छ्रे मूढगर्भे वातरोगे च दारुणे । नीलकंठरसो
नाम शंभुना निर्मितः स्वयम् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, लोहभस्म, सिंगियाविप, चित्रक, पत्रज, मोटी दाळचीनी,
पित्तपापडा, नागरमोया, पीपरामूल, नागकेशर, हरड, बहेडा, आंवला, सांठ, मिरच,
पिपल और ताम्रभस्म ये समान भाग लेवे तथा सब औषधों से दूना गुड ढाळे सब

को घोटके एक जीव करे और चने के बराबर गोली बनावे यह खांसी, श्वास, गोला, प्रमेह, विषमज्वर, मूत्रकृच्छ्र, सूटगर्भ और वातरोग इन पर भक्षण करे यह नीलकंठ नामक रस श्रीशिव ने स्वयं निर्माण करा है ॥

लोकनाथपोटली

कृत्वा जंभरसेन गंधरसयोस्तत्तुल्यताप्रावृतं गोलं लावणयंत्रग-
भनिहितं रुध्वा पचेत्तं शनैः । यामानपृकपर्दजेन सकलं तुल्ये-
न तद्भस्मना युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिष्ट्वा पुटं दापयेत् ॥
संशुद्धामिति पोटलीं सहविषं मारीचचूर्णेन तां मृद्धीयादिति
लोकनाथविधिना दौर्वल्यकासादिषु । शोफामानिलगुल्मशू-
लकसनश्वासग्रहण्यांशसी प्रौढे यक्ष्मणि पांडुरोगसहिते संता-
पमांघ्यारुचौ ॥

अर्थ—गंधक और पारा इन दोनों की कजली करके नींबू के रस में खरल करे फिर कजली के समान तामे की डिब्बिया लेवे उस में इस कजली को भरके बंद कर देवे और एक हांडी में निमक भरके बीच में उस डिब्बी को रखे ऊपर फिर निमक भर देवे और उस के मुख को बंद कर देय तथा ऊपर से उस पर कपडामिट्टी देकर सुखाय ले इस को अग्नि के संपुट में रखके आठ प्रहर पर्यंत पचावे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकालके उस के बीच में से उस डिब्बी सहित भस्म को निकाल पीस लेवे और उस में समान भाग कौडी की भस्म मिलावे फिर चित्रक के रस में घोटके पुट देवे उस पुट में से निकालके सिंगियाविष और काली मिरच का चूर्ण मिलावे और खरल में डालके मारीक पीस डाले इस लोकनाथपोटलीरस को लोकनाथरस के सदृश देवे तो दुर्बलता, कृशता, सूजन, आमवात, गोला, शूल, खांसी, श्वास, संग्रहणी, बवासीर, क्षयरोग, पांडुरोग, संताप, मंदाग्नि और अरुचि इन को नाश करे ॥

अमृतार्णवरस

पारदं गंधकं शुद्धं मृतलोहं च टंकणम् । रास्नाविडंगत्रिफला-
देवदारुकटुत्रयम् ॥ अमृता पद्मकं क्षौद्रं विषं तुल्यांशचूर्णि-
तम् । त्रिगुंजं सर्वकासार्तं सेवयेदमृतार्णवम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, लोहभस्म, सुहागा, रास्ना, वायविडंग, हरड, बहेडा, आंबला, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, पन्नास, सहत और सिंगियाविष ये सब समान

भाग लेवे सब का चूर्ण करके तीन रत्ती सर्वकासयुक्त रोगी को देवे। इसे अमृता-
र्णवरस कहते हैं ॥

अग्निरस

रसगंधकपिप्पलयो हरीतस्याक्षवासकः । यष्ट्यांतरगुडं चूर्णं
बन्बूलकाथभावितम् ॥ एकविंशतिवारेण शोपयित्वा विचूर्ण-
येत् । भक्षयेन्मधुना हंति कासमग्निरसो ह्ययम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, पीपल, हरड, बहेडा, अडूसा और मुलहठी इन को समान
ग ले चूर्ण करे फिर इस को बबूर के काठे की २१ भावना देवे तथा मुलायके चूर्ण
लेवे इस को सहत के साथ देवे तो खांसी को दूर करे। इस को अग्निरस कहते हैं ॥

कासकर्त्तरी

वंगं कृष्णाभयाक्षाटरूपभाङ्गच्यः क्रमोत्तराः । तत्समं खादिरं
क्षारं बन्बूलकाथभावितम् ॥ एकविंशतिवारं च मधुना कास-
कर्त्तरी । कासं श्वासं क्षयं हिक्कां हंत्येतन्नात्र संशयः ॥

अर्थ—वंग [लौंग], पीपल, हरड, बहेडा, अडूसा और भारंगी ये क्रम से अ-
धक २ भाग लेवे इन सब के बराबर खैर का सार लेवे अथवा क्षार लेवे इन सब को
कत्र करके बबूल के काठे की २१ भावना देवे तो यह कासकर्त्तरीरस बने
स रस को सहत में मिलायके देवे तो खांसी, श्वास, क्षय और हिचकी इन का
नाश करे इस में संदेह नहीं ॥

कफाग्निवटी

कपूरमर्धकपर्पं मृगमदमपि देवकुसुमयुग्मम् । मरिचं कणाक्षकुलिं-
जनमेकैकं शुक्तिपरिमाणम् ॥ दाडिमफलवल्कलपलमखिल-
समं खदिरसारमवचूर्ण्य । वटिका मुद्गसमाना कृता धृतास्ये
कफघ्नी स्यात् ॥

अर्थ—कपूर और कस्तूरी एक २ तोला, लौंग २ तोले और काली मिरच, पीपल,
बहेडा, कुलिंजन ये प्रत्येक आधा २ तोला लेय तथा अनार की छाल ४ तोले लेय
इन सब को खैरसार के काठे से खरल करके मूंग के समान गोली बांधे इस को
मुख में रखे तो कफ का नाश करे ॥

कासपथ्य

शालिपट्टिकगोधूममापमुद्गकुलित्थकाः । छाग्याः पयो घृतं
विंवी वार्ताकं वालमूलकम् ॥ कासमर्दकजीवंती वास्तुकं बीज-
पूरकम् । गोस्तनी लशुनं लाजा व्योपमुष्णोदकं मधु ॥
पथ्यमेतद्यथादोपमुक्तं कासगदातुरे ॥

अर्थ-शालीचांबल, गेहूं, उडद, मूग, कुलित्य, बकरी का दूध व घी, कंदूरी,
बेंगनं, छोटी मूली, कासमर्द, जीवंती, वास्तुक, विजोरा, मुनक्का, लहसन, खील,
सोंठ, मिरच, पीपल, गरम पानी और सहत ये पदार्थ कासरोग में पथ्य हैं ॥

अपथ्य

मैथुनं स्निग्धमधुरं दिवास्वापं पयो दधि ।

भिष्टान्नं पायसादीनि कासी धूमं च वर्जयेत् ॥

अर्थ-मैथुन, स्निग्ध (चिकना) और मीठे पदार्थ, दिन में सोना, दूध, दही,
पिष्टान्न, पायस और धुआ यह कासरोग में अपथ्य है ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे कासरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता.

हिक्काकर्मविपाकः ।

योक्त्वा ब्राह्मणो भुंक्ते स्नानहोमजपादिकम् ।

स हिक्कारोगसंयुक्तस्तत्पापस्यापनुत्तये ॥

चांद्रायणत्रयं कुर्यात् त्रीन् कृच्छ्रांश्च समाचरेत् ॥

अर्थ-जो ब्राह्मण पूर्व जन्म में स्नान, होम, जपादिक नहीं करे और भोजन कर
लेय वह हिक्का (हिचकी) रोगी होता है इस पाप के दूर करने को तीन चांद्रायण
व्रत और तीन कृच्छ्रव्रत ये प्रायश्चित्त करे तो हिचकी का रोग दूर होवे ॥

हिक्कानिदान

विदाहिगुरुविष्टंभिरूक्षाभिष्यंदिभोजनैः । शीतपानाशनस्नान-
रजोधूमातपानिलैः ॥ व्यायामकर्मभाराध्ववेगघातापत्तर्पणैः
हिक्का श्वासश्च कासश्च नृणां समुपजायते ॥

अर्थ—दाहकारक, भारी, अफराकारक, रूखी, अभिष्यंदी ऐसे भोजन करने से, शीतल जल पीने से, शीतल अन्न खाने से, शीत जल करके स्नान करने से, रज और धूँआ मुख नाक में जाने से, गरमी हवा में डोलने से, दंड कसरत के करने से, भार के उठाने से, बहुत मार्ग के चलने से, मलादिक वेग के रोकने से और उपवास के करने से मनुष्य के हिक्का (हिचकी), श्वास (दमा) और कास (खांसी) ये रोग उत्पन्न होते हैं ॥

संप्राप्ति

मुहुर्मुहुर्वायुरुदेति सस्वनो यकृत्पिहांत्राणि मुखादि वा क्षिपन् ।

सघोषवानाशु हिनस्ति यस्मात्तस्तु हिकेत्यभिधीयते बुधैः ॥

अर्थ—उदानवायु प्राणवायु के साथ मिलकर जब निकले तब मनुष्य हिग्हिग् ऐसा शब्द करे और कलेजा ग्रीह इन को मुखपर्यंत खींच लावे (इस स्थान में मुर शब्द करके प्राण, जल, अन्न इन के वहनेवाले मार्ग जानने) ओर मुख में आकर बड़ा शब्द निकले उस को वैद्यवर हिक्का (हिचकी) रोग कहते हैं यह शीघ्र प्राणों का हर्त्ता होय है ॥

हिक्का के भेद

अन्नजां यमलां क्षुद्रां गंभीरां महतीं तथा ।

वायुः कफेनानुगतः पंच हिक्काः करोति च ॥

अर्थ—वात कफ से मिलकर १ अन्नजा, २ यमला, ३ क्षुद्रा, ४ गंभीरा और ५ महती ऐसे पांच प्रकार की हिचकी रोग को प्रगट करे ॥

पूर्वरूप

कंठो रसो गुरुत्वं च वदनस्य कपायता ।

हिक्कानां पूर्वरूपाणि कुक्षेराटोप एव च ॥

अर्थ—कंठ और हृदय भारी रहे और वादी से मुख कसेला रहे, कूख में अफरा रहे यह हिचकी का पूर्वरूप जानना ॥

सामान्यचिकित्सा

यत्किञ्चित्कफवातघ्नमुष्णं वातानुलोमनम् ।

भेषजं पानमन्नं वा हिक्काश्वासेषु तद्धितम् ॥

अर्थ—जो कुछ कफवातनाशक, गरम, वादी को अनुलोमन कर्ता ऐसे औषध, पान और अन्न ये हिचकी तथा श्वास इस विषय में हितकारक हैं ॥

मधुना कटुकाचूर्णं लीढं हिक्कानिवारणम् ॥

अर्थ—कुटकी के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो हिचकी का आना बंद होय ॥

यमलाहिक्कानिदान

चिरेण यमलैर्वैगैर्या हिक्का संप्रवर्तते ।

कंपयंती शिरोग्रीवं यमलां तां विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ—ठहर ठहरके दो दो हिचकी चलें शिरकंधा को कंपावे उस को यमला हिचकी जाननी ॥

दशमूला यवागू

दशमूली सठी रास्ना पिप्पली विश्वपौष्करैः। शृंगी तामलकी

भाङ्गी गुडूचीनागरादिभिः ॥ यवागूं मधुना सिद्धां कपायं वा

पिवेन्नरः । कासहृद्रहपाश्वार्तिहिक्काश्वासप्रशांतये ॥

अर्थ—दशमूल, कचूरा, रास्ना, पीपर, सोंठ, पुहकरमूल, काकडासिंगी, भूयआंवला, भारंगी, गिलोय, नागरमोथा इन से सिद्ध करी हुई यवागू को सहत के साथ पीवे अथवा इन का काढा पीवे तो खांसी, हृदयरोग, पसली की वादी, श्वास, हिचकी इन को शांत करे ॥

हिंवादियवागू

हिंयुसौवर्चलाजाजीविडपुष्पकचित्रकैः ।

सिद्धा कर्कटशृंग्या च यवागूः श्वासहिक्किनाम् ॥

अर्थ—हींग, संचरनोन, जीरा, विड निमक, पुहकरमूल, चित्रक और काकडासिंगी इन सब से सिद्ध करी हुई कांजी श्वास वा हिचकी इन को दूर करे ॥

क्षुद्रहिक्कानिदान

विकृष्टकालैर्या वैगैर्मदैः समभिवर्तते ।

क्षुद्रिका नाम सा हिक्का जञ्जूमूलात्प्रधावति ॥

अर्थ—जो हिचकी बहुत देर में कंठ हृदय की संधि से मंद मंद चले उस को क्षुद्रानाम हिचकी कहते हैं ॥

दशमूलीकाढा

दशमूलीजलयुतं हितं हिक्कासु योजयेत् ।

श्वासकासहरः सर्वो विधिरत्रापि युज्यते ॥

अर्थ—दशमूल के काढे के साथ हिचकी रोग पर जो हित पदार्थ होवे वह देवे तथा संपूर्ण श्वास और खांसी इन के नाशक जो औषधी हैं वह हिचकी रोग पर देवे ॥

कुलित्थादिकाढा

कुलित्थयवकोलांबुदशमूलचलाजलम् ।

पानार्थं कल्पयेत्कासहिक्काश्वासप्रशांतये ॥

अर्थ—कुलथी, जौ, बेर, दशमूल और खिरेटी इन का काढा खांसी, हिचकी तथा श्वास इन की शांति होने के वास्ते पीवे ॥

धात्र्यादिकाढा

धात्री च मागधी शूठी काथश्चैपां सितायुतः ।

हिनस्ति हृदयोद्भूतां हिक्कां प्राणापनोदिनीम् ॥

अर्थ—आंवले, पीपल और सौंठ इन के काढे में मिश्री मिलायके पीवे तो प्राणों के नाश करनेवाली घोर हिचकी का नाश होय ॥

गंभीराहिक्कानिदान

नाभिप्रवृत्ता या हिक्का घोरा गंभीरनादिनी । शुष्कास्यकंठजि-
ह्वा स्याच्छ्वासकासरुजाकरी ॥ अनेकोपद्रववती गंभीरा नाम
सा स्मृता ॥

अर्थ—जो हिचकी नाभि के पास से उठ घोर गंभीर शब्द करे और जिस में ज्वरादि अनेक उपद्रव हों उस को गंभीरा हिचकी कहते हैं ॥

पाटल्यादियोग

पाटल्याः फलतोयेन क्षौद्रेण च समन्वितम् ।

हेमभस्म निहंत्येव हिक्काः पंचातिदुस्तराः ॥

अर्थ—पाटल के फलों का रस और सहत इन के साथ सुवर्ण की भस्म सेवन करे तो अतिकठोर पांच प्रकार की हिचकियों का नाश करे ॥

दशमूलीकाढा

दशमूलीकपायेण मधुना च समन्वितम् ।

कांतायोभस्म हिक्कानां पंचानां पंचतां नयेत् ॥

अर्थ—दशमूल का काढा और सहत इस में कांतलोह का भस्म लेने से पांच प्रकार की हिचकियों का नाश होता है ॥

अर्थ—पीपल, आंवला, दाख, वेर की गुठली, सहत, मिश्री, वायविडंग और पुहकरमूळ इन के चूर्ण में लोह की भस्म मिलायके सेवन करे तो तीन दिन में छर्दि (वमन), हिक्का (हिचकी) और तृषा (प्यास) इन को नाश करे ॥

शंखचूलरस

रसाभ्रहेमभस्मानि वैक्रांतं सर्वतुल्यकम् । सर्वैः पंचगुणं शंख-
चूर्णं शुष्कं विमर्दयेत् ॥ लेहयेन्मधुना मापचतुष्कं सानुपान-
कम् । हिक्कां पंचविधां हन्ति सुमूर्पोरपि तत्क्षणात् ॥

अर्थ—पारा, अभ्रक, सुवर्ण इन तीनों की भस्म समान भाग और इन तीनों की बराबर वैक्रांतभस्म लेवे और चारों से पंचगुनी शंख की भस्म लेवे इस प्रकार सब को एकत्र कर पीस डाले फिर इस में से चार मासे भस्म सहत के साथ अनुपान के साथ खाय तो यदि मरणोन्मुख रोगी होय तोभी उस के पांच प्रकार की हिचकियों को तत्क्षण नाश करे ॥

मेघडंबररस

तंदुलीयद्रवैः पिष्टं सूततुल्यं च गंधकम् । वज्रमूपागतं चैव भू-
धरे भस्मतां व्रजेत् ॥ दशमूलकपायेण भावयेत्प्रहरद्वयम् ।
गुंजाद्वयं हरत्येप हिक्काश्वासं ज्वरं किल ॥ अनुपानेन दातव्यो
रसोयं मेघडंबरः ॥

अर्थ—चौलाई के रस में पारे गंधक बराबर लेकर सरल करे फिर वज्रमूपा में भरके भूधरयंत्र में पचावे तो भस्म होय- फिर दशमूल के काठे में इस भस्म को दो प्रहर सरल करे फिर इस में से दो रसी खाने को देवे तो यह मेघडंबररस हिचकी, श्वास और ज्वर इन को नाश करे ॥

महाहिक्कानिदान

मर्माण्युत्पीडयन्तीव सततं या प्रवर्तते ।

महाहिक्केति सा ज्ञेया सर्वगात्रप्रकंपिनी ॥

अर्थ—जो हिचकी मर्मस्थान में पीडा करती हुई और सर्व गात्र को कंपायनी हुई सर्वकाल प्रवृत्त होय उस को महाहिक्का कहते हैं ॥

कटुत्रिकलेह

कटुत्रिकयवासकट्फलककारवीपौष्करैः । सशृंगिभिरतिद्रुतं

मधुयुतोवलेहो जयेत् ॥ सहिध्मकसनः कफश्वसनमंभसा सिंधुजं
प्रदत्तमपि नावनं झटिति सर्वं हिक्काहरम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, धमासा, कायफल, अजमायन, पुहकरमूल और काकडासिंगी इन का सहत डालके अवलेह बनावे इस के सेवन करने से हिचकी, खांसी, कफ और श्वास इन को नाश करे अथवा सेंधा निमक और जल इन की नस्य देवे तो ये संपूर्ण हिचकियों का नाश करे ॥

असाध्यहिकानिदानलक्षण

आयम्यते हिक्तो यस्य देहो दृष्टिशोर्ध्वं ताम्यते यस्य नि-
त्यम् । क्षीणोऽन्नद्विद्र क्षौति यश्चातिमात्रं तौ द्वौ चांत्यौ वर्जये-
द्विक्रमानौ ॥ अतिसंचितदोषस्य भक्तच्छेदकृशस्य च । व्या-
धिभिः क्षीणदेहस्य वृद्धस्यातिव्यवायिनः ॥ आयासाद्या
समुत्पन्ना हिक्का हंत्याशु जीवितम् । यमिका च प्रलापार्ति-
मोहृत्तृष्णासमन्विता ॥

अर्थ—जिस का हिचकी से देह, तन जावे ऊंची दृष्टि हो जावे और मोह होय क्षीण पड जाय भोजन से अरुचि होय और छीक बहुत आवे ये दोनों हिचकीवाला रोगी अर्थात् जिस को गम्भीरा और महती हिचकी होय सो वैद्य को त्याज्य है जिस के अत्यन्त दोषों का संचय हो गया हो और जिस का अन्न छूट गया हो जो कृश हो गया हो जिस के अनेक व्याधि से देह क्षीण हो गया होय और जो वृद्ध है अति मैथुन करनेवाला हो ऐसे पुरुषके ये दोनों हिचकी उत्पन्न होय तौ तत्क्षण उस रोगी के प्राण नाश करे बकवाद करे पीडा होय मोह, प्यास इन लक्षण से युक्त जो यमिका नाम की हिचकी सो तत्काल प्राणहर्त्री जाननी ॥

असाध्यलक्षण

अक्षीणश्चाप्यदीनश्च स्थिरधात्विन्द्रियश्च यः ।

तस्य साधयितुं शक्या यमिका हंत्यतोऽन्यथा ॥

अर्थ—बलवान्, प्रसन्न मन, जिस की धातु और इन्द्रिय स्थिर होय ऐसे पुरुष की यमिका हिचकी साध्य है और इस से विपरीत (अर्थात् क्षीण, दीन इत्यादि) पुरुष को तत्काल ही नाश करे अन्नजा, क्षुद्रा यह दोनों साध्य ही दो बार आने से यमिका कहाती है चरकोक्त यमला इस जगह नहीं ग्रहण करनी चाहिये ॥

अर्थ—शिलाजीत और मूली अथवा कस्तूरी और बबूर किंवा कूठ और राल अथवा दर्भ (डाभ) को घृत योग करके उस को चिलम में रखके धूमपान करे तो यह हिचकी को नाश करे ॥

श्वासावरोध

श्वासावरोधतो हिक्का श्मयत्यतिवेगतः ।

चूलकैर्वा जलं पीतं धृत्वा श्वासैर्निवर्तते ॥

अर्थ—श्वास के रोकने से अथवा एक चुल्लू जल पीके तत्क्षण श्वास को रोक लेवे तो बहुत जल्दी हिचकी के रोग का नाश होवे ॥

मापादिधूम

धूमो मापनिशारजोयुतशणत्वक्संभवो हंत्यलम् ।

श्वासोर्ध्वानिलकासहृद्रुजोहिध्माः समस्ता अपि ॥

अर्थ—उडद और हलदी इनके चूर्ण को और सन इनको मिलायके हुके में रखके पीवे तो श्वास, ऊर्ध्ववात, खांसी, गले का रोग और सर्व प्रकार की हिचकियों को नाश करे ॥

हिंवादिधूम

निर्धूमांगारसंक्षितहिंशुमापरजोद्भवम् ।

हिक्का पंचापि हंत्याशु धूमः पीतो न संशयः ॥

अर्थ—निर्धूम अंगारों पर हींग और उडद का चूर्ण डालके उसके धुएँ को पीवे तो पांच प्रकार की हिचकियों का नाश करे ॥

हिक्कारोग में पथ्य

स्वेदनं वमनं नस्यं धूमपानं विरेचनम् । निद्रा स्निग्धानि चान्त्रानि मृदूनि लवणानि च ॥ जीर्णा कुलित्था गोधूमाः शालयः पष्टिका यवाः । एणतित्तिरलावाद्या जांगला मृगपक्षिणः ॥ उष्णोदकं मातुलुंगं माक्षिकं सुरभीजलम् । पक्कं कपित्थं लशुनं पटोलं बालमूलकम् ॥ पौष्करं कृष्णतुलसी मदिरा नलदंबु च अन्नपानानि सर्वाणि वातश्लेष्महराणि च ॥ शीतांबुसेक सहसा त्रासो विस्मापनं भयम् । क्रोधो हर्षः प्रियोद्वेगः प्राणा

यामनिपेवणम् ॥ दग्धसिक्तमृदाघ्राणं कूर्चधारा जलार्पणम् ।
नाभ्यर्धपीडनं दाहो दीपदग्धहरिद्रया ॥ पादयोद्ध्यंगुलात्नाभे-
रूर्ध्वं चेष्टातिहिकिनाम् ॥

अर्थ—स्वेदन, वमन, नास, धूमपान, विरेचन, निद्रा, चिकने और नरम अन्न, निमक, पुराने कुलथी, गेहूं, सांठी चावल, जौं, एण (काला हिरन), तीतर, लवा आदि का मांस, जंगली जीव, मृग और पक्षियों का मांस, गरम जल, विजोरा, नींबू, सहत, गोमूत्र, पके हुए कैथ, लहसन, परवल, नरम २ छोटी मूली, पोहकर-मूल, काली तुलसी, मदिरा, खस का सुगंधित जल तथा वात और कफनाशक सर्व प्रकार के अन्नपान, शीतल जल का छिडकाव करना, एकसाय त्रास देना, विस्मापन (भुलाई में डाल देना), भय दिखाना, क्रोध करना, हर्ष, भ्रिय और उद्वेग करनेवाले पदार्थ, प्राणायाम (श्वास का रोकना), अग्नि से गरमागरम मिट्टी पर जल छिडक-के संधना, कूर्च (कुशा की सी गहड़ी) से अथवा धारा से जल का गेरना, नाभी के ऊपर दावना तथा जली हुई हलदी से नाभि के ऊपर दाग देना अथवा पैरों से ऊपर दो अंगुल पर दाग देना, अथवा नाभि से दो अंगुल ऊपर दाग देना ये प्रकार हिचकी रोगवाले को हितकारी हैं ॥

हिकारोग में अपथ्य

वातमूत्रोद्धारकासशकृद्वेगविधारणम् । रजोनिळातपायासान्वि-
रुद्धान्यशनानि च ॥ विष्टंभीनि विदाहीनि रूक्षाणि कफदानि
च । निष्पावमापिण्याकवारिजानूपमामिपम् ॥ अविदुग्धं दंत-
काष्ठं वस्तिमत्स्यांश्च सर्पपान् । आम्लं तुंवीफलं कंदं तैलभृ-
ष्टमुपोदिकाम् ॥ गुरु शीतं चान्नपानं हिकारोगी विवर्जयेत् ॥

अर्थ—अधोवायु, मूत्र, डकार, खांसी और मल इन की बाधा को रोकना, घूल, पवन, धूप, परिश्रम (शीत), विरुद्धभोजन, चौरा, उदद, (पिष्ट पदार्थ), पिण्याक (खल), जल के जीव और जल किनारे रहनेवाले जीवों का मांस, भेड का दूध, दांतन करना, वस्तिकर्म, मछली, सरसों, सटाई, तूंबी का फल, कंद के साग, तैल में लुका पोई का साग, भारी और शीतल ऐसे अन्न और पान इन सब को हिचकी-रोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारो बृहन्निषदुरत्नाकरे हिकारोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

श्वासकर्मविपाकः ।



कृतघ्नो जायते मर्त्यः कफवान्श्वासकासवान् । उष्णज्वरो च
नित्यं हि पित्तरोगसमन्वितः ॥ चांद्रायणत्रयं कुर्यात्पंचाशद्वि-
प्रभोजनम् । विष्णोर्नामजपं कुर्यात्तथा चैव द्विजोत्तमान् ॥
पूजयेद्भोजयेद्दद्यात्तन्मना नान्यमानसः ॥

अर्थ—जो प्राणी कृतघ्नी (किसी के करे हुए उपकार को न माने) वह कफ, श्वास, खांसी, उष्ण ज्वर और पित्तरोग इन से पीडित होता है. इस पाप के दूर करने को तीन चांद्रायण प्रायश्चित्त करके ५० ब्राह्मणों को जिमावे तथा विष्णुसहस्रनाम का पाठ करे और ब्राह्मणों का पूजन करके उन को भोजन करावे तथा दान देवे ॥

दूसरा प्रकार

कुरुक्षेत्रादिदेशेषु कालेषु ग्रहणादिषु । महादानानि गृह्णीयात्रि-
पिद्धान्यथ वा स्वयम् ॥ अपात्रभूतो दातृभ्यो निपिद्धेभ्यश्च
मानवः । स पामाश्वासकासैश्च कुक्षिस्थकृमिभिस्तथा ॥
कंडूत्या चैव पीड्येत तद्रोगस्य प्रशांतये । महिषीं यमदैवत्यां
दद्याद्विज्ञानुसारतः ॥ काम्यं यद्दीयते दानं तत्समग्रं सुखा-
वहम् । असमग्रं तु दोषाय भवतीह परत्र च ॥ जपेन्नारायणस्या-
थ नाम्नां चैव सहस्रकम् । हिरण्यं रक्तवासांसि पंचाशद्विप्रभो-
जनम् ॥ सहस्रकलशस्नानं प्रकुर्याद्रोगशांतये ॥

अर्थ—जो प्राणि कुरुक्षेत्रादि पुण्यदेशों में, ग्रहणादि पुण्य काल में, निपिद्ध मनुष्य से (जिस का दान लेना वर्जित है) दान लेवे अथवा जो दान लेने योग्य नहीं है उस को लेवे तो वह खुजली, श्वास, खांसी, कुक्षिरोग, कृमि और कंडू इन से पीडित होता है. उस के दूर करने को यमदेवता जिस का ऐसा भैंस का दान यथाशक्ति करे. जो काम्य कर्म करे वह संपूर्ण होने से सुख होता है और आघा रहने से वही कर्म दुखदाई होता है तथा इस लोक और परलोक में पातक ल उस को विष्णुसहस्रनाम का जप करना अथवा सुवर्ण, रक्त वस्त्र दान करे और ब्राह्मणों को भोजन करावे. किंवा सहस्र कलशाभिषेक करे तो रोग दूर होय ॥

तीसरा प्रकार

पिशुनो नरकस्यांते जायते श्वासकासवान् ।

घृतं तेन प्रदातव्यं सहस्रपलसंख्यया ॥

अर्थ—पिशुन (चुगलखोर) मनुष्य प्रथम नरकों को भोगे पश्चात् नरक भोगने के श्वास और खांसीवाला होवे. उस के दूर करने को इस प्राणी को १००० पल अर्थात् चार सौ तोले धी का दान करे ॥

श्वासनिदान

महोर्ध्वच्छिन्नतमकक्षुद्रभेदैस्तु पंचधा ।

भिद्यते स महाव्याधिः श्वास एको विशेषतः ॥

अर्थ—हिक्का श्वास का एक हेतु होने से हिक्का के अनन्तर श्वासरोग को कहते हैं. महाश्वास, ऊर्ध्वश्वास, छिन्नश्वास, तमकश्वास और क्षुद्रश्वास इन भेदों से एक श्वासरोग पांच प्रकार का है ॥

प्राग्रूप

प्राग्रूपं तस्य हृत्पीडा शूलमाध्मानमेव च ।

आनाहो वक्रवैरस्यं शंखनिस्तोद एव च ॥

अर्थ—हृदय दूखे, शूल होय, अफरा होय, पेट तनासा होय, कनपटी दूखे, मुस में रस का स्वाद आवे नहीं यह श्वासरोग का पूर्वरूप है ॥

संप्राप्ति

यदा स्रोतांसि संरुध्य मारुतः कफपूर्वकः ।

विष्वग्त्रजति संरुद्धस्तदा श्वासं करोति सः ॥

अर्थ—सर्व देह में विचरनेवाला पवन जब कफ से मिलकर प्राण, अन्न, उदक बढ़नेवाली सब नसों के मार्ग को रोक देवे तब पवन फिरने से रुककर श्वासरोग को प्रकट करे ॥

सामान्यचिकित्सा

यार्त्किचित्कफवातघ्नमुष्णं वातानुलोमनम् । भेषजं पानमन्नं

वा हिक्काश्वासेषु तद्धितम् ॥ हिक्काश्वासातुरे पूर्वं तैलाक्ते स्येद

इष्यते । ऊर्ध्वाधःशोधनं वद्वेर्दुर्वले श्मनं मतम् ॥

अर्थ—जो कुछ कफ वादी के नाशक, गरम, वादी को अनुलोमन करनेवाले

औषध, पान और अन्न हे वह सब हिचकी और श्वास रोग पर देवे अथवा हिचकी और श्वास ये रोग जिस के हे उस के प्रथम देह में- तेल की मालिस करके पसीने निकाले और वमन तथा अग्निदीपनकर्त्री क्रिया करे ॥

दूसरा प्रकार

स्नेहवस्तिमृते केचिदूर्ध्वं चाधश्च शोधनम् । मृदुप्राणवतां श्रेष्ठं
श्वासिनामादिशंति हि ॥ सर्वेषु श्वासरोगेषु वातश्लेष्मनिवर्ह-
णम् । विदधीत विधिं विद्वानादौ स्वेदं मृदुं तथा ॥

अर्थ—स्नेहन और वस्तिकर्म इन के विना ऊर्ध्वाध अर्थात् ऊपर नीचे शोधन करना अल्पप्राणवाले (निर्वलों) को उत्तम है. संपूर्ण श्वासरोगों में वात और कफ के नाशक यत्न करने चाहिये तथा प्रथम विद्वान् वैद्य को उचित है कि मृदु स्वेदन कर्म करे ॥

महाश्वासलक्षण

उद्ध्वयमानवातो यः शब्दबहुःखितो नरः । उच्चैः श्वसिति संरुद्धो
मत्तर्पभ इवानिशम् ॥ प्रनष्टज्ञानविज्ञानस्तथा विभ्रांतलोच-
नः । निवृत्ताक्ष्याननो बद्धमूत्रवर्चाविशीर्णवाक् ॥ दीर्घं प्रश्वसितं
चास्य दूराद्विज्ञायते भृशम् । महाश्वासोपसृष्टस्तु क्षिप्रमेव
विपद्यते ॥

अर्थ—जिस का वायु ऊपर को जायके प्राप्त हो ऐसा मनुष्य दुःखित होकर मु-
स से शब्दयुक्त श्वास को निकाले, ऊंचे स्वर से अथवा जैसे मतवाला बेल शब्द
करे उस प्रकार रात्रिदिन श्वास से पीडित होय उस का ज्ञान विज्ञान जाते रहे, नेत्र
धंचल होय और जिस का श्वास लेने में नेत्र और मुस फट जाय, मल मूत्र बन्द
हो जाय, बोला जाय नहीं अथवा बोले तो मन्द बोले, मन खिन्न होय और जिस
का श्वास दूर से सुनाई देय यह महाश्वास जिस पुरुष को होय वह तत्काल मरण
को प्राप्त होय ॥

शृंग्यादि चूर्ण

शृंगी कटुत्रिकफलत्रयकंटकारी भार्ङ्गी च पुष्करजटालवणानि
पच । चूर्णं पिवेदशिशिरेण जलेन द्विक्वाश्वासोर्ध्ववातकसनारु-
चिपु प्रशस्तम् ॥

अर्थ—कांकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, कटेरी, भारंगी, पुहकरमूल, जटामांसी, सेंधानिमक, संचरनिमक, बिडनिमक, कचियानिमक और सामुद्रनिमक इन का चूर्ण करके गरम जल से पीवे तो हिचकी, श्वास, ऊर्ध्ववात, खांसी और अरुचि इन को नाश करे ॥

शुंघ्यादि चूर्ण

शुंठीकणामरिचनागदलं त्वगेलाचूर्णं कृतं क्रमविर्वाधितमूर्ध्व-
मंत्यात् । खादेदिदं समसितं गुदजाग्निमांघ्रिकासारुचिश्चसनकं-
ठहृदामयेषु ॥

अर्थ—सोंठ, पीपल, काली मिरच ४, पान ३, तज २, इलायची १ क्रम से लेवे सब का चूर्ण करके बराबर की मिश्री मिलावे इसके भक्षण करने से बवासीर, मंदाग्नि, खांसी, अरुचि, श्वास, कंठरोग और हृदयरोग ये दूर हों ॥

मर्कटीचूर्ण

मर्कटीनां तु बीजानां चूर्णं माक्षिकसर्पिपा ।

प्रलिह्यात्प्रातरुत्थाय श्वासातः स्वास्थ्यमाप्नुयात् ॥

अर्थ—कौंच के बीजों के चूर्ण को सहत और घी में मिलायके प्रातःकाल सेवन करे तो श्वास से पीडित प्राणी सुखी होय ॥

शुंघ्यादि चूर्ण

शुंठी भाङ्गी वचा व्योपपथ्यारुचकट्फलम् ।

तेजोह्वा पौष्करं शृंगी सक्षौद्रं श्वासकासहृत् ॥

अर्थ—कचूर, भारंगी, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड छोटी, संचर निमक, कायफल, तेजबल, पुहकरमूल और कांकडासिंगी इन के चूर्ण के सहत में मिलायके चाटे तो पचास खांसी का नाश होय ॥

गुडादि लेह

गुडोपणा निशा रास्ना द्राक्षा मागधिकाः समाः ।

तैलेन चूर्णिता लीढास्तीव्रश्वासनुदः स्मृताः ॥

अर्थ—गुड, काली मिरच, हलदी, रास्ना, मुनक्का दास और पीपल इन सब को समान भाग लेकर चूर्ण करे इस को तैल में मिलायके सेवन करे तो तीव्र श्वास का नाश करे ॥

भाङ्गर्यादि चूर्ण

भाङ्गनागरयोश्चूर्णं लीढमार्द्रकवारिणा ।

श्वासं निहन्ति दुर्धर्षं पंचानन इव द्विपम् ॥

अर्थ—भारंगी और सोंठ इन दोनों के चूर्ण को अदरस के रस से सेवन करे तो घोर दुर्धर भी श्वासरोग का नाश करे. जैसे सिंह हाथी को नष्ट करता है ॥

ऊर्ध्वश्वासनिदान

ऊर्ध्वं श्वासिति योत्यर्थं नच प्रत्याहरत्यधः । श्लोष्मावृतमुख-
श्रोताः क्रुद्धगंधवहार्दितः ॥ ऊर्ध्वदृष्टिर्विपश्यंश्च विभ्रान्ताक्ष
इतस्ततः । प्रमुह्यन्वेदनार्तश्च शुष्कास्योरतिपीडितः ॥

अर्थ—बहुत देर पर्यंत ऊंचा श्वास लेय नीचे आवे नहीं, कफ से मुख भर जाय तथा और सब नाडी के मार्ग कफ से बन्द हो जाय, कुपित वायु से पीडित होय, ऊपर को नेत्र कर चंचल दृष्टि से चारों ओर देखे, मूर्छा से और पीडा से अत्यंत पीडित होय, मुख सूखे तथा बेहोश होय यह ऊर्ध्वश्वास के लक्षण हैं ॥

श्वास नीचे न आने का कारण

ऊर्ध्वःश्वासे प्रकुपिते ह्यधःश्वासो निरुध्यते ।

मुह्यतस्ताम्यतश्चूर्ध्वं श्वासस्तस्यैव हंत्यसूत्रम् ॥

अर्थ—ऊपर का श्वास कुपित होने से नीचे का श्वास बन्द होय अर्थात् हृदय में रुक जाय अथवा श्वास कहिये वायु सो सारी नीचे नहीं उतरे तब मनुष्य को मोह होय, ग्लानि होय ऐसे पुरुष के ऊर्ध्वश्वास प्राण का हरण करे ॥

दुल्हरीचूर्ण

दुल्हरी सैधवं मांसी लवणं च सुवर्चलम् । त्रिकटु ब्रह्मदंडी च
त्रिफलैरण्डमूलिका ॥ पीतमुष्णांभसा कासमूर्ध्वश्वासं निवार-
येत् । विडादिलवणं सर्वं मासं श्लक्ष्णं विचूर्णितम् ॥

अर्थ—दुल्हरी, सेंधानिमक, जटामांसी, निमक, संचरनिमक, सोंठ, मिरच, पीप
ब्रह्मदंडी, हरद, बहेडा, आंवला और अंड की जड़ इन के चूर्ण को गरम जल के
साथ पीवे तो ऊर्ध्वश्वास को दूर करे अथवा विडादि संपूर्ण लवणों को एक महिने
पर्यंत भारीक पीसके गरम जल के साथ सेवन करे तो उक्त रोग दूर हो ॥

शुंठ्यादि चूर्ण

शुंठीदारुकणाचूर्णं पीतमुष्णांभसा समम् ।

ऊर्ध्वश्वासहरं किंवा शुंठीपिप्पलिचूर्णकम् ॥

अर्थ-सोंठ, देवदारु, पीपल इन के अथवा सोंठ और पीपल इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो ऊर्ध्वश्वास को दूर करे ॥

शिलाद्यवलेह

शिलाहिंयुविडंगं च मरिचं कुष्ठसैधवम् ।

मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्पं श्वासकासकफापहम् ॥

अर्थ-शिलाजीत, हींग, वायविडंग, काली मिरच, कूठ और संधानिमक इन के चूर्ण को सहत और घी में मिलाय एक कर्प सेवन करे तो श्वास, खांसी और कफ इन को नाश करे ॥

विडंगादि चूर्ण

विडंगं पिप्पली चैला त्वचं च प्रतिकर्पकम् । द्विकर्पमरिचं चूर्णं

नागरं च चतुः पलम् ॥ सर्वैस्तुल्या सिता योज्या कर्पमात्रं च

भक्षयेत् । श्वासकासज्वरग्रीहपांडुरोगज्वरापहम् ॥

अर्थ-वायविडंग, पीपल, इलायची और दालचीनी प्रत्येक तोले तोले भर, काली मिरच २ तोले और सोंठ १६ तोले सब का चूर्ण करे और सब चूर्ण की बराबर मिश्री मिलावे वो एक तोले नित्यप्रति राय तो श्वास, खांसी, ज्वर, ग्रीहा और पांडुरोग इन को नाश करे ॥

दाडिमादिचूर्ण

दाडिमं नागरं हिंयु कृष्णा च लवणं समम् ।

आम्लवेतससंयुक्तं श्वासहृद्रोगजिद्वेत् ॥

अर्थ-अनारदाना, सोंठ, हींग, पीपर, निमक और अमलवेत ये सब औषध समान भाग लेवे इन का चूर्ण करके खाय तो श्वास, खांसी और हृदयरोग इन का नाश करे ॥

विडंगादिचूर्ण

विडंगं पिप्पली हिंयु साजिसैधवनागरम् । रास्नया च समं चूर्णं

कर्पमद्यादृतप्तम् ॥ कफश्वासहरं ख्यातं विडंगादि च नामकम् ॥

अर्थ-वायविडंग, पीपल, हींग, अजमायन, संधानिमक, सोंठ और रास्ना इन

का समान भाग चूर्ण कर १ तोले की मात्रा घी में मिलायके देवे तो कफ और श्वास इन का नाश करे इस को विडंगादि चूर्ण कहते हैं ॥

आर्द्रकस्वरस

एक एवार्द्रकरसः समधु श्वासकासजित् ।
रतिवल्लभचांपेयचापचारुकलेवरे ॥

अर्थ—हे रतिवल्लभचांपेयचापचारुकलेवरे ! एक ही अदरक का रस सहत डालक पीने से श्वास और खांसी का नाश करे ॥

अक्षकवल

रावणस्य सुतो हन्यान्मुखवारिजधारितः ।
श्वसनं कसनं वापि तमिवानिलनंदनः ॥

अर्थ—रावण का सुत (अक्ष अर्थात् बहेडा) मुख में रखने से श्वास और खांसी को नाश करे जैसे तं (अक्षकुमारं) अर्थात् अक्षकुमारको अनिलनंदन हनुमान् नाश करते भये ॥

आटरूपरस

आटरूपरसो गव्यनवनीतेन पाचितः ।
तेन त्रिफलजं चूर्णं भक्षितं श्वासवारकम् ॥

अर्थ—अड्डसे के रस को गौ के मक्खन में मिलायके आटावे जब रस जलके केवल घृतमात्र रहे तब उतारके इस में त्रिफले का चूर्ण मिलायके सेवन करे तो श्वास को दूर करे ॥

छिन्नश्वासनिदान

यस्तु श्वसिति विच्छिन्नं सर्वप्राणैर्निपीडितः । न वा श्वसिति
दुःखार्तो मर्मभेदरुजादितः ॥ आनाहस्वेदमूर्च्छार्तो दह्यमानेन
वास्तना । विपुताक्षः परिक्षीणः श्वसन् रक्तैकलोचनः ॥ विचेताः
परिशुष्कास्यो विवर्णः प्रलपन्नरः । छिन्नश्वासेन विच्छिन्नः
स शीघ्रं विजहात्यसून् ॥

अर्थ—जो पुरुष ठहर ठहर कर जितनी शक्ति उतनी शक्ति से श्वास को त्योरे करे, अथवा छेश को प्राप्त हो, श्वास को नहीं छोडे और मर्म कहिये हृदयवर्सा (मूत्रस्थान) और नाडियों को मानों कोई छेदन करे ऐसी पीडा होय, पेट का

फूलना, पसीना और मूच्छा, इन से पीडित होय, बस्ती (मूत्रस्थान) में जलन होय, नेत्र चलायमान होय, अथवा नेत्र आंसुओं से भरे होय, श्वास लेते लेते थक जाय, तथा श्वास लेते लेते एक नेत्र लाल हो जाय, (यह व्याधी के प्रभाव से होय हे दोष के प्रभाव से होय ती दोनों हो जाय) उद्विग्न चित्त हो जाय, मुख सूखे, देह का वर्ण पलट जाय, बकवाद करे, सधि के सब बंध शिथिल हो जाय, इस छिन्न-श्वास करके मनुष्य शीघ्र प्राण का त्याग करे ॥

तमकश्वासके लक्षण

प्रतिलोमं यदा वायुः स्रोतांसि प्रतिपद्यते । ग्रीवां शिरश्च संगृह्य
श्लेष्माणं समुदीर्य च ॥ करोति पीनसं तेन रुद्धो घुर्धुरकं तथा ।
अतीव तीव्रवेगेन श्वासं प्राणप्रपीडकम् ॥ प्रताम्यति स वेगेन
त्रस्यते सन्निरुध्यते । प्रमोहं कासमानश्च स गच्छति मुहुर्मुहुः ॥
श्लेष्मणा मुच्यमानेन भृशं भवति दुःखितः । तस्यैव च विमो-
क्षांते मुहूर्तं लभते सुखम् ॥ तथास्योद्धंसते कंठः कृच्छ्राच्छ-
क्रोति भापितम् । न चापि निद्रां लभते शयानः श्वासपीडितः ॥
पार्श्वे तस्यावगृह्णाति शयानस्य समीरणः । आसीनो लभते
सौख्यमुष्णं चैवाभिनन्दति ॥ उच्छ्रिताक्षो ललाटेन स्विद्यता
भृशमार्तिमान् । विशुष्कास्यो बहुश्वासो मुहुश्चैवावधम्यते ॥
मेघांबुशीतप्राग्वातैः श्लेष्मलैश्च विवर्धते ॥ स याप्यस्तमक-
श्वासः साध्यो वा स्यान्नवोत्थितः ॥

अर्थ—जिस काल में शरीर की पवन उलटी गति से नाडियों के छिद्र में प्राप्त होकर मस्तक तथा कंठ का आश्रय कर कफसंयुक्त होय, तब कफ से रुककर अति-वेगपूर्वक कंठ में घुर घुर शब्द करे और मस्तक में पीनसरोग करे और अत्यन्त तीव्रवेग से हृदय को पीडा का करनेवाला ऐसा श्वास को उत्पन्न करे, उस श्वास के वेग से मूर्च्छित होय, त्रास को प्राप्त होय, चेष्टारहित होय और खांसी के उठने से बड़े मोह को वारंवार प्राप्त होय और जब कफ छूटे तब दुःख होय और कफ छूटने के बाद दो घड़ी पर्यन्त सुख पावे, कंठ में खजली चले, बड़े कष्ट से बोले, श्वास पीडा से नींद न आवे, सोवे तो वायु से पसवाडो में पीडा होय, बैठे ही चैन पड़े और गरमी के पदार्थ से खुश होय, नेत्रों में सूजन होय, ललाट में पसीना आवे, अत्यन्त पीडा होय, मुख सूखे, वारंवार श्वास और वारंवार हाथीपर बैठने के

सदृश सर्व देह चलायमान होवे, यह श्वास मेघ के वर्धने से, शीत से, पूरव की पवन से और कफकारक पदार्थ इन के सेवन करने से बढे है यह तमकश्वास याप्य है. यदि नया प्रगट भया होय तो साध्य होय है ॥

प्रतमकनिदान

ज्वरमूर्च्छांपरीतस्य विद्यात्प्रतमकं तु तम् । उदावर्त्तरजोजीर्ण-
क्लिन्नकायनिरोधजः ॥ तमसा वर्धतेऽत्यर्थं शीतैश्चाशु प्रशाम्य-
ति । मज्जतस्तमसीवास्य विद्यात्प्रतमकं तु तम् ॥

अर्थ—इस तमकश्वास में श्वास, ज्वर और मूर्च्छा ये दोनों लक्षण होने से इस को प्रतमक श्वास कहते हैं. उदावर्त, धूल, आम्रादि, अजीर्ण, विदग्धान्न, मल, मूत्रादि वेग के रोकने से अथवा क्लिन्नकाय कहिये वृद्ध मनुष्य और निरोध कहिये वेगरोध इन कारणों से प्रगट भई जो श्वास सो अंधकार से अथवा तमोगुण से अत्यन्त बढे और शीतल उपचार से शीघ्र शांति हो जाय, इस श्वास के योग से रोगी को अन्धकार में बूडासदृश मालूम होय, इस को प्रतमकश्वास ऐसे कहते हैं ॥

सव्यादि चूर्ण

सठी पुष्करजीवंती त्वङ्मुस्तं पुष्कराह्वयम् । सुरसातामलक्ये-
लापिप्पल्यागरुनागरम् ॥ वालुकं च समं चूर्णं कृत्वा द्विगुणश-
र्करम् । सर्वथा तमकश्वासे हिक्कायां च प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—कचूर, कमलकंद, गिलोय, दालचिनी, नागरमोथा, पुहकरमूल, तुलसी, भूयआंवला, इलायची, पीपल, काली अगर, सोंठ और भीमसेनी कपूर इन को समान भाग ले चूर्ण करे और सब चूर्ण से दूनी मिश्री मिलावे. यह चूर्ण प्रायः तमक-
श्वास और हिचकी इनपर देवे ॥

व्याघ्रीजीरकादिगुटिका

व्याघ्रीजीरकधात्रीणां चूर्णं मधुयुतं लिहेत् ।

ऊर्ध्वातमहाश्वासतमकेर्मुच्यते क्षणात् ॥

अर्थ—कटेरी, जीरा और आंवला इन तीन औषधों का चूर्ण करके सहत में मिला यके चाटे तो ऊर्ध्वायु, महाश्वास और तमकश्वास ये रोग क्षणमात्र में दूर हो ॥

क्षुद्रावलेह

व्याघ्रीशतं स्यादभयाशतं च द्रोणे जलस्य प्रपचेत्कपायम् ।

तुलाप्रमाणेन गुडेन युक्तं पक्त्वाभयाभिः सह ताभिरत्र ॥शीते
क्षिपेत्पण्मधुनः पलानि पलानि च त्रीणि कटुत्रयस्य । त्वक्-
पत्रकैलाकरिकेसराणां चूर्णात्पलं चेति विदेहदृष्टः ॥ क्षुद्रावले-
हः कफजान्विकारान्सश्वासशोपानपि पंच कासान् । हिकामुरो-
रोगमपस्मृतिं च हत्वा विवृद्धिं कुरुतेऽनलस्य ॥

अर्थ—कटेरी और हरड प्रत्येक सौ सौ तोले लेवे इन को १०२४ तोले जल में डालके काढा बनावे फिर इस को छानके उस में ४०० तोले गुड मिलायके पक करी हुई हरड मिलायके फिर पक करे जब शीतल हो जावे तब २४ तोले सहत और सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक चार २ तोले, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर ये प्रत्येक एक २ तोले मिलायके अवलेह बनावे इस को क्षुद्रावलेह कहते हैं यह विदेह नामक आचार्य ने प्रथम देखा है. यह कफविकार, स्वास, शोप, खांसी, हिचकी, छाती का रोग तथा अपस्मार (मृगी का रोग) इनका नाशक और आग्नि को दीपन करे है ॥

कंटकार्यावलेहश्वासकासोपर

कंटकारीतुलां नीरद्रोणे पक्त्वा कपायकम् । पादशेषं गृहीत्वा
च तस्मिंश्चूर्णानि दापयेत् ॥ पृथक् पलानि चैतानि गुडूची-
चव्यचित्रकाः । मुस्तं कर्कटशृंगी च त्र्युपणं धन्वयासकः ॥
भाङ्गी रास्ना सठी चैव शर्करा पलविंशतिः । प्रत्येकं च पला-
न्यष्टौ प्रदद्याद्दृततैलयोः ॥ पक्त्वा लेहत्वमानीय शीते मधुप-
लाष्टकम् । चतुःपलं तुगाक्षीर्याः पिप्पलीनां चतुःपलम् ॥ क्षि-
प्त्वा निदद्यात्सुदृढे मृन्मये भाजने शुभे । लेहोयं हन्ति हिकार्ति-
श्वासकासानशेषतः ॥

अर्थ—कटेरी ४०० तोले ले जब कूट करके २०२४ तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके कपडे से छान लेवे. फिर गिलोय, चव्य, चित्रक, नागरमोथा, काकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, धमासा, भारंगी, रास्ना और कचूर प्रत्येक चारह औपथ एक एक पल लेवे; सब का चूर्ण करके उस काढे में डाल देवे. और मिश्री २० पल मिलावे. धी ८ पल और सरसों का तेल आठ पल इन सब को काढे में मिलायके फिर औटायके अवलेह बनाय लेवे फिर शीतल होने पर

सहत् ८ पल मिलावे. इस को दृढ चीनी के अथवा ईभ्रतवान् आदि उत्तम पात्र में भरके धर रखे चार पल इन का चूर्ण भी उसी अवलेह में मिलाय देवे फिर वंशलोचन ४ पल पीपल इस में से बलाबल विचारके रांगी नित्यप्रति सेवन करे तें हिचकी तथा सर्व प्रकार के श्वास रोग और खांसी ये दूर हो ॥

क्षुद्रश्वासनिदान

रूक्षायामसोद्भवः कोष्ठे क्षुद्रो वातमुदीरयेत् । क्षुद्रश्वासेन सो-
स्त्यर्थं दुःखेनांगप्रवाधकः ॥ हिनस्ति न स गात्राणि न च
दुःखं यथेतरे । न च भोजनपानानि निरुणद्ध्युचितां गतिम् ॥
नेन्द्रियाणां व्यथां चापि कांचिदापादयेद्भुजम् । स साध्य उक्तो
बलिनः सर्वे चाव्यक्तलक्षणाः ॥ क्षुद्रः साध्यतमस्तेषां तमकः
क्षुद्र उच्यते ॥

अर्थ—रूखा पदार्थ खाने से, श्रम के करने से, प्रगट भई जो क्षुद्रश्वास सो पवन को ऊपर ले जाय यह क्षुद्रश्वास अत्यन्त दुःखदायक नहीं है. तथा अंगों को कुछ विकार नहीं करे, जैसे ऊर्ध्व श्वासादिक दुःखदायक है ऐसे यह नहीं है और भोजन-पानादिकों की उचित गति को बन्द नहीं करे और इन्द्रिय को भी पीडा नहीं करे और कोई रोग को भी नहीं प्रगट करे. यह क्षुद्रश्वास साध्य कहा है. बलवान् पुरुष के सब महाश्वासादिकों के लक्षण प्रगट न होय तो साध्य है, तिन में भी क्षुद्रश्वास अत्यन्त साध्य है, और तमक को क्षुद्र कहते हैं अथवा “तमकः क्षुद्र उच्यते” इस जगह “तमकः कृच्छ्र उच्यते” ऐसा भी पाठ कोई कहते हैं. उस का अर्थ यह है कि तमक कृच्छ्रसाध्य है महान्, ऊर्ध्व और छिन्न ॥

असाध्यलक्षण

त्रयः श्वासा न सिध्यन्ति तमको दुर्बलस्य च । कामं प्राण-
हरा रोगा बहवो न तु ते तथा ॥ यथा श्वासश्च हिक्का च हरतः
प्राणमाशु च ॥

अर्थ—ये तीन श्वास सम्पूर्ण लक्षणयुक्त साध्य नहीं हैं और निर्बल पुरुष के तमकश्वास भी साध्य नहीं होय. प्राण हरण करनेवाले ऐसे सन्निपात ज्वरादिक बहुत से हैं सो ठीक है. परंतु श्वास और हिककी ये जैसे जल्दी प्राण हरण करते हैं ऐसे और ज्वरादिक नहीं करे ॥

सामान्य उपचार

श्वासहिक्कातुरं प्रायः स्निग्धैः स्वदैरुपाचरेत् । युक्तैर्लवणतैला-
भ्यां तैरस्य ग्रथितः कफः ॥ श्वासो विलयमायाति मारुतश्चो-
पशाम्यति । स्निग्धं ज्ञात्वा ततश्चैनं भोजयेच्च रसौदनम् ॥

अर्थ—श्वास और हिचकी इन से आतुर प्राणी को सेधव, निमक और तेल इन से स्निग्ध ऐसा पसीने निकालने का उपचार करे इस प्रकार करने से उस मनुष्य का गाठदार जो कफ हो गया है वो पतला होकर श्वास का नाश करे और वादी को शमन करे फिर वह मनुष्य स्निग्ध हुआ जानके इस को मांसरस और भात भोजन करावे ॥

शृंगवेररस

स्वरसं शृंगवेरस्य माक्षिकेण समन्वितम् ।

पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥

अर्थ—अदरस का स्वरस सहत डालके पिठावे तो श्वास, खांसी, पीनस और कफ इन को नाश करे ॥

विभीतकावलेह

प्रस्थं विभीतकानामस्थि विना साधयेदजामूत्रे ।

अयमेव लेहो लीढो मधुसहितः श्वासकासघ्नः ॥

अर्थ—एक सेर भिठावे की छाल को बकरी की मूत्र में पचावे जब सिद्ध हो जावे तब इस में सहत डालके चाटे तो श्वास और खांसी ये दूर हो ॥

द्राक्षाद्यवलेह

द्राक्षां हरीतकीं मुस्तां कर्कटारूपां दुरालभाम् ।

सर्पिमधुभ्यां विलिहन् श्वासान् हन्ति सुदारुणान् ॥

अर्थ—दास, हरड, नागरमोथा, कांकडासिंगी और धमामा इन की अवलेह सहत और घी डालके बनावे इस को भक्षण करने से घोर भयंकर श्वास दूर हो ॥

दशमूला यवागू

दशमूलीसठीरास्नापिप्पलीविश्वपौष्करैः । शृंगी तामलकी
भाङ्गी गुडूचीनागराग्निभिः ॥ यवागूं विधिना सिद्धां कपायं
वा पिबेन्नरः । श्वासहृद्रग्रहपाश्वर्तिहिक्काकासप्रशांतये ॥

अर्थ—दशमूल, कचूर, रास्ना, पीपल, सोंठ, अंड की जड़, काकडासिंगी, भूय-
आंवला, भारंगी, गिलोय, सोंठ और चित्रक इन औषधों से करी हुई कांजी को पीवे
अथवा काढा करके पीवे तो श्वास, हृदयव्यथा, पसली की पीडा, हिचकी और
खांसी इन की शांति होय ॥

दशमूलकाढा

दशमूलस्य वा क्वाथः पौष्करेणावचूर्णितः ।

श्वासकासप्रशमनः पार्श्वशूलविनाशनः ॥

अर्थ—दशमूल का काढा करके उस में पुहकरमूल का (अथवा अंड की जड़
का) चूर्ण डालके पीवे तो श्वास, खांसी और पसली की पीडा ये नष्ट होवे ॥

रंभादिकुसुमपान

रंभाकुंदशिरीषाणां कुसुमं पिप्पलीयुतम् ।

पिष्ट्वा तंदुलतोयेन पीत्वा श्वासमपोहति ॥

अर्थ—केला का फूल और कुंद का फूल तथा शिरस का फूल इन तीनों पुष्पों
में पीपल मिलायके चाबलों के घोंवन से पीसके पीवे तो श्वास नष्ट होवे ॥

कटुतैलेन संयुक्तो गुडो यावन्न सेवितः ।

तावन्नश्यति किं श्वासः पीयूषमधुराधरे ॥

अर्थ—जबतक सरसों का तेल और गुड को यह प्राणी सेवन नहीं करता है
पीयूषमधुराधरे ! क्या इस का श्वासरोग नष्ट होता है कदापि नहीं ॥

शृंग्यादिचूर्ण

शृंगीमहौषधकणाघनपुष्कराणां चूर्णं शठीमरिचयोश्च सितावि-
मिश्रम् । क्वाथेन पीतममृतावृषपंचमूल्याः श्वासं त्र्यहेण विनि-
हंति हि घोररूपम् ॥

अर्थ—काकडासिंगी, सोंठ, पीपल, नागरमोया, पुहकरमूल, कचूर और काली
मिरच इन का चूर्ण समान भाग लेकर करे. फिर गिलोय, अहूसा और पंचमूल इन का
काढा करके चूर्ण मिलाय तथा मिश्री डालके पीवे तो बड़ा भारी घोररूप श्वास
तीन दिन में नष्ट होय ॥

शुंठ्यादिकाढा

आयि प्राणप्रिये जातिफललोहितलोचने ।

शुंठीभाङ्गीकृतः क्वाथः श्वासत्रासाय पाययेत् ॥



अर्थ—हे प्राणशिये! हे जातिफललोहितलोचने !! श्वास नष्ट करने को सोंठ और भारंगी इन का काढा करके पीवे ॥

पंचमूलीयोग

पंचमूली तु सामान्या पित्ते योज्या कनीयसी ।

महती मारुते देया सैव देया कफाधिके ॥

अर्थ—सामान्यता करके पित्त की श्वास में लघुपंचमूल देवे और वातश्वास तथा कफश्वास पर बृहत्पंचमूल देना चाहिये ॥

कूष्मांडशिफाचूर्ण

कूष्मांडकशिफाचूर्णं पीतं कोष्णेन वारिणा ।

शीघ्रं शमयति श्वासं कासं चापि सुदारुणम् ॥

अर्थ—पेटे की जड के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो घोर दारुण श्वास और खांसी शीघ्र शमन होवे ॥

हरिद्राद्यवलेह

हरिद्रामरिचं द्राक्षां कर्णां रास्नां शर्ठीं गुडम् ।

कटुतैलं लिहन्हन्याच्छ्वासान्प्राणहरानपि ॥

अर्थ—हरदी, मिरच, दाख, पीपल, रास्ना, कचूर और गुड इन का चूर्ण सरसों के तेल में मिलायके चाटे तो प्राणों के नाश करनेवाली भी श्वास का नाश होवे ॥

भाङ्गीगुड

शंतं संगृह्य भाङ्गीर्यास्तु दशमूल्यास्तथा शतम् । शतं हरीतकीनां च पचेत्तोये चतुर्गुणे ॥ पादावशेषे तस्मिंस्तु रसे वस्त्रनिपीडिते । आलोढ्य च तुलां पूतां गुडस्याप्यभयां पुनः ॥ पुनः पचेत्तु मृद्भ्रमो यावलेहत्वमेति तत् । शीते च मधुनस्तत्र पदलानि विनिःक्षिपेत् ॥ त्रिकटुत्रिसुगंधं च पलमात्रं पृथक् पृथक् । यवक्षारं कर्पयुग्मं संचूर्ण्य प्रक्षिपेत्ततः ॥ भक्षयेदभयामेकां लेहस्यार्धपलं तथा । श्वासं सुदारुणं हंति कासं पंचविधं तथा ॥ अर्शास्यरोचकं गुल्मं शकृद्भेदं क्षयं तथा । स्वरवर्णप्रदो ह्येष जठराग्नेः प्रदीपनः ॥ नाम्ना भाङ्गीगुडः ख्यातो भिषग्भिः सकलेर्मतः ॥

अर्थ—भारंगी, दशमूल और हरड ये प्रत्येक १०० तोले ले इन को १२०० तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके कपडे में छान लेवे फिर इसमें ४०० तोले गुड डालके तथा औटाई हुई हरडों को डाल फिर मंदाग्रिपर रस को पचावे जब गाढी अवलेह हो जावें तब उतारके इस को शीतल कर लेवे और शीतल होने पर २४ तोले सहत और साँठ, काली मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची तथा पत्रज ये प्रत्येक चार २ तोले ले जवाखार २ तोले इन सब का चूर्ण करके अवलेह में मिलाय देवे और कडछी से मिलायके एक कर देवे. तो यह अवलेह सिद्ध होवे. इस में से दो तोले अवलेह और उस में से १ हरड नित्य प्रातःकाल खाय तो बडा भारी भयंकर श्वास, पांच प्रकार की खांसी, चवासीर, अरुचि, गोला, अतिसार और क्षय इन को नाश करे तथा स्वर और देह का वर्ण को उत्तम करनेवाला और अग्निदीपक ऐसा है. इस को भांगीगुड ऐसा कहते हैं यह सर्ववैद्यों को माननीय है ॥

द्राक्षादिकाढा

द्राक्षामृता नागरमुष्णतोयं कृष्णाविपाकं वहुरोगनिघ्नम् ।

श्वासं च शूलं कसनं च मांघ्रं जीर्णज्वरं चैव जयेच्च तृष्णाम् ॥

अर्थ—दाख, गिलोय और साँठ, इन के काढे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे तो श्वास, शूल, खांसी, मंदाग्रि, अजीर्ण और प्यास इन को दूर करे ॥

कुलित्यादिकाढा

कुलित्यनागरख्याग्रीवासाभिः कथितं जलम् ।

पीतं पौष्करसंयुक्तं श्वासकासनिवारणम् ॥

अर्थ—कुलयी, साँठ, कटेरी, अडूसा और पुढकरमूल इन के काढे को पीवे तो श्वास, खांसी इन को दूर करे ॥

देवदार्यादिकाढा

देवदारुवचाव्याग्रीविश्वकट्फलपौष्करैः ।

कृतः काथो जयत्याशु श्वासकासावशेषतः ॥

अर्थ—देवदारु, वच, कटेरी, साँठ, कायफल और पुढकरमूल इन का काढा करके देवे तो श्वास और खांसी इन का शीघ्र निवारण करे ॥

सिंहादिकाढा

सिंही निशा सिंहुमुखी गुडूची विश्वोपकुल्याभृगुजाघनानाम् ।

कृष्णामरीचैर्मिलितः कपायः श्वासाट्वीदाहपयोद एषः ॥



अर्थ—कटेरी, हलदी, अडूसा, गिलोय, सोंठ, पीपल, भारंगी और नागरमोया इन का काढा कर उस में पीपल और काली मिरच इन का चूर्ण डालके पीवे तो यह दवासरूप वन के दहन करते अग्नि को मेघ के समान है ॥

वासादिकाढा

वासा हरिद्रा मगधा गुडूची भाङ्गी घना नागररिङ्गणीनाम् ।

क्वाथेन मारिच्यकणान्वितेन श्वासः शमं याति न कस्य पुंसः॥

अर्थ—अडूसा, हरदी, पीपल, गिलोय, भारंगी, नागरमोया, सोंठ और कटेरी इन के काढे में काली मिरच और पीपल का चूर्ण डालके पीवे तो इस से किस मनुष्य की श्वास दूर नहीं हो ॥

भाङ्गर्यादिलेह

प्रलिह्यान्मधुसर्पिभ्यां भाङ्गी मधुकसंयुताम् ।

पथ्यां तिक्ताकणाव्योपयुक्तां वा श्वासनाशनीम् ॥

अर्थ—भारंगी की जड़, ज्येष्ठमध, हरीतकी, पीपल, कुटकी, सोंठ, काली मिरच, पीपल इन का चूर्ण सहत और घी डालके देवे तो श्वास का नाश करता है ॥

गुडाद्यवलेह

गुडदाडिममृद्धीकापिप्पलीविश्वभेषजैः ।

मातुलिंजरसं क्षौद्रं लीढं श्वासनिवर्हणम् ॥

अर्थ—गुड, अनारदाना, दाख, पीपल और सोंठ इन का चूर्ण बिजोरे के रस में देवे तो श्वासरोग को दूर करे ॥

वासाद्यवलेह

वासातुलामष्टगुणे च नीरे विपाच्य तां पादजलेन साकम् । क्षु-

ष्णाढकं तद्विपचेच्छिवानां खंडा प्रयोज्या सकलस्य तुल्या ॥ ततः

समुत्तार्य पलानि चाष्टौ क्षौद्रस्य च द्वे किल वंशजायाः । क्षि-

पेत्तथा मागधिकापलार्धं पलं चतुर्जातभवं प्रयोज्यम् ॥ योज्यं

पलार्धं श्वसने च कासे क्षयेऽपित्ते कफपीनसे च । हृद्रोगका-

र्ये किल विद्रघौ च उरःक्षते शोणितवांतिकोपे ॥

अर्थ—अडूसा ४०० तोले ले इस को कुछ कुटके ३२०० तोले जल में गेरके ादा करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान ले फिर इस में २५६ तोले

हरड का चूर्ण डालके फिर पचावे जब गाढा हो जावे तब उत्तारके शीतल करे और ३२ तोले सहत, वंशलोचन ८ तोले, पीपल २ तोले तथा चातुर्जात ४ तोले इन सब का चूर्ण करके मिलाय देवे फिर इस में से दो तोले सेवन करे तो श्वास खांसी, क्षय, रक्तपित्त, कफ, पीनस, हृदयरोग, कृशता, विद्रधि रोग, उरःक्षत और रुधिर की वांति इन का नाश करे ॥

सितादिचूर्ण

सिताद्राक्षाकणाचूर्णं समांशं तैलपाचितम् ।

भक्षितं दारुणं श्वासं निवर्तयति वेगतः ॥

अर्थ-मिश्री, दाख और पीपल का चूर्ण इन को समान भाग ले चूर्ण को तेल में पचावे फिर इस के भक्षण करने से अतिदारुण श्वास के वेग को नाश करे ॥

शिलाद्यवलेह

शिलाव्योपभयाहिंशुमणिमंथविडंगकैः ।

लेहः साज्यमधुः कासहिक्काश्वासेषु शस्यते ॥

अर्थ-मनसिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, हींग, सैंधानिमक और वायविडंग इन का लेह सहत और घी इन के साथ देवे. यहः श्वास, खांसी और हिचकी इन पर उत्तम है ॥

राजिकादिगुटी

राजिकाक्षीरकंदश्च चपला च रसोनकम् । ऊपणातिविषा देव-

कुसुमं चविचूर्णितम् ॥ मार्कवाकंकुमारीभिर्निर्गुंडीमुंडिचि-

त्रकैः । भावयित्वा पृथक्सर्वैः श्वासकासनिवृत्तनम् ॥

अर्थ-राई, सपेद विदारीकंद, पीपल, लहसन, काली मिरच, अतीस और लोंग इन का चूर्ण करके उस को भांगरे के रस, आंक का दूध, वीगुवार, निर्गुंडी, मुंडी और चित्रक इन प्रत्येक की भावना देवे फिर गोली बनाय ले यह गोली श्वास और खांसी इन का नाश करे ॥

सूर्यावर्तरस

सूतार्धं बलिमेकयाममभितः कृत्वा रसेर्मर्दयेत्तद्वद्रेण समं तु

शुल्बजलदं लिप्त्वा वटीयंत्रकैः । पक्त्वेकाहमथाहरत्रिगदितो

वल्लोन्मितः श्वासजित्सूर्यावर्तरसोथ गंधमरिचैः साज्यः कफ-

श्वासजित् ॥

अर्थ—पारा १ भाग और गंधक आधा भाग इन दोनों को प्रहर भर तक खूब घोटे फिर इन दोनों की बराबर बहुत बारीक ताम्रपत्र छे उन पर छेप करके संपुट में रख घटीयंत्र से एक दिन पचावे फिर निकालके एक बल्ल गंधक, काली मिरच और घी इन के साथ देवे तो कफ, श्वास इन को नाश करे ॥

अमृतार्णवरस

पारदं गंधकं शुद्धं मृतं लोहं च टंकणम् । रास्ना विडंगत्रि-
फलादेवदारुकटुत्रयम् ॥ अमृता पद्मकं क्षौद्रं विपं तुल्यं सञ्च-
र्णितम् । त्रिगुंजं श्वासकासारतै सेवयेदमृतार्णवम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, लोहभस्म, सुहागा, रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, पद्मास, सहत, विप इन को समान भाग छेके चूर्ण करे इस को ३ रत्ती श्वास और खांसीरोगवाला सेवन करे इसे अमृतार्णव रस कहते हैं ॥

श्वासहेमाद्रिरस

आच्छादितां शिलां ताम्रे द्विगुणं वालुकाह्वये । पक्त्वा संचूर्ण्य
गंधेशौ दिनार्थं तां पुनः पचेत् ॥ श्वासहेमाद्रिनामायं महाश्वास-
विनाशनः । वर्णवृद्धिकरो ह्येव सौवर्ण्यश्च न संशयः ॥

अर्थ—मनसिल को तामे की डिबी में भरके वालुकायंत्र में पचावे फिर उस डिबी के साथ चूर्ण करके उस में पारा, गंधक इन की कजली डालके फिर आधे दिन पचावे यह श्वासहेमाद्रिनामक रस महाश्वास को नाश करे इस में संदेह नहीं है ॥

उदयभास्कर

धान्याभ्रं सूतकं गंधं श्वेतापामार्गजद्रवैः । तुल्यांशं मर्दयेच्चायः-
पात्रे पाचनकं पचेत् ॥ ऊर्ध्वलग्नं ततो ग्राह्यं रसो त्पुदयभा-
स्करः । श्वासं पंचविधं हंति गुंजाद्वयानुपानतः ॥ निष्कैकं
लेहयेच्चानु क्षौद्रेण कटुरोहिणीम् ॥

अर्थ—धान्याभ्रक छेके उस में पारा और गंधक अब्रक के बराबर मिलायके सपेद आंगा के रस से उस को सरल करके फिर डमरुयंत्र में भरके अग्नि देवे. फिर ऊपर के लगे हुए पारे को निकाल छेवे इस को उदयभास्कर सूत कहते हैं यह २ रत्ती अनुपान के साथ देवे और ऊपर से सहत और कुटकी का चूर्ण चटावे तो पांच प्रकार के श्वासों को नष्ट करे ॥

श्वासकालेश्वर

मृतं वंगं मृतं लोहं मृताकं मृतमभ्रकम् । शुद्धसूतं तथा गंधं
माक्षिकं हिंगुलं विषम् ॥ जातीफलं लवंगं च त्वगेलानागके-
सरम् । उन्मत्तकस्य बीजानि जैपालं रात्रिदुर्लभम् ॥ एतानि स-
मभागानि मरिचं हरनेत्रयोः । सर्वं तद्व्याक्षिपेत्खल्वे लोहदंडेन
मर्दयेत् ॥ तावच्चूर्णीकृतं धीमान् यावत्सूतो न दृश्यते । शका-
सनस्य स्वरसैर्भावना एकविंशतिः ॥ द्विगुंजा उत्तमा मात्रा
आर्द्रकस्वरसैर्युता । तदर्धं बालवृद्धेषु पथ्यं देयं तदुच्यते ॥
पंच श्वासान् क्षयं कासं राजयक्ष्मनिवारणम् । श्वासकालेश्वरो
नाम लोकानामपि दुर्लभः ॥

अर्थ—वंग की भस्म, लोहभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, पारा, गंधक, सुवर्णमा-
क्षिक की भस्म, हींगलू, विष, जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची, नागकेशर,
धतूरे के बीज, जमालगोटा, हलदी, कचूर ये सब समान भाग लेवे और काली मिरच
तीन भाग ले सब को खरल में डालके लोहे के मूसल से खरल करे कि जबतक पारा
दीखने से न बंद होवे. फिर इस को भांग के स्वरस की २१ भावना देवे इस में से २
रत्ती की उत्तम मात्रा को अदरख के रस से देवे. और बालक वृद्ध होवे उन को
आधी मात्रा देनी चाहिये और पथ्य से रहे तो ५ प्रकार के श्वास, क्षय, खांसी, राजय-
क्ष्मा इन को नाश करे यह श्वासकालेश्वर रस देवताओं को भी दुर्लभ है ॥

पारदादिगुटी

पारदं गंधकं नागं ताम्रं व्योपानलैः समम् । सर्जीरसेन संचूर्ण्य
प्रदेया भावना दश ॥ पुनः पत्ररसे सम्यक् चार्द्रकस्य रसैस्त-
था । मिरिप्रमाणा कफजित् कार्या सा गुटिकोत्तमा ॥ मंदा-
ग्निफरोगेषु श्वासकासे विशेषतः । आध्मानप्रतिपन्नार्तप्र-
देया सुखकारिणी ॥

अर्थ—पारा, गंधक, शीशे की भस्म, ताम्रभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक और
राल ये समान भाग लेकर चूर्ण करे और नागरवेल के पत्तों के रस की १० भावना
देवे. और अदरख के रस की १० भावना देवे. फिर मिरच के समान गोली बनावे. यह
मंदाग्नि, कफरोग, श्वास, खांसी और पेट का फूलना इन पर देवे तो सुखदायक होय ॥

लवंगादिगुटी

लवंगमरिचे तुल्ये त्रिफलारसभाषिते ।

वबूलत्वचया कार्या गुटी श्वासकफापहा ॥

अर्थ—लौंग, काली मिरच और त्रिफला (हरड, बहेडा, आवला) का चूर्ण समान भाग ले उस को बबूल के छाल के काढ़े की भावना देकर गोली बनावे. यह श्वास और कफ इन को नाश करे ॥

दूसरा प्रकार

लवंगत्रिकटूनागभृंगीक्षुद्राविभीतकैः ।

कन्यारसेन गुटिका कार्या श्वासनिवारिणी ॥

अर्थ—लौंग, सोंठ, काली मिरच, पीपल, सिंगिया विष, भांगरा, कटेरी और हेडा इन का समान भाग चूर्ण कर धीगुवार के रस में घोटके गोली बनाय ले इस में से एक २ गोली खाने को देय तो यह श्वासरोग को नष्ट करे ॥

त्रिकटुकवटी

त्रिकटूटकणं नागपत्रेण क्रियते वटी ।

मिरीप्रमाणा कफजिन्नाम्ना त्रिपुरभैरवी ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल और सुहागा इन को एकत्र चूर्ण करके नागरवेल के पानों के रस में घोटके गोली मिरच के समान बनावे इस के खाने से कफ नष्ट होय इसे त्रिपुरभैरवी गुटी कहते हैं ॥

फलत्रयगुटी

फलत्रयं नागरदारुकृष्णाविपानपावेल्लसुवर्णबीजैः ।

दिनत्रयं भृंगरसैर्विमर्द्य कार्या गुटी श्वासकफापहारिणी ॥

अर्थ—त्रिफला (हरड, बहेडा, आवला), सोंठ, देवदारु, पीपल, सिंगिया विष, नेत्रवाला, काली मिरच और धतूरे के बीज इन सब को तीन दिन भांगरे के रस में मरल कर गोली बनावे यह श्वास और कफ को दूर करे ॥

सुहीदुग्धयोग

वल्लयुग्मं सुहीदुग्धं गुडयुक्तनिपेवणात् ।

कासः श्वासः क्षयरोगो हृद्रोगश्च प्रणश्यति ॥

अर्थ—दो बल्ल (शरत्ती) थूहर के दूध को गुड में मिलायके सेवन करे तो श्वास, खांसी, क्षयरोग और हृदयरोग नष्ट होवे ॥

श्वासकुठार

रसो गंधो विषं चापि टंकणं च मनःशिला । एतानि कर्पमा-
त्राणि मरिचं चाष्टकर्पकम् ॥ कटुत्रयं कर्पयुग्मं पृथगत्र विनि-
क्षिपेत् । रसः श्वासकुठारोयं सर्वश्वासनिवारणः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, सिंगिया विष, सुहागा और मनसिल इन को एक २ तोले ले सोंठ, मिरच, पीपल ये एक तोले लेकर चूर्ण करे. इस के सेवन करने से यह श्वासकुठाररस संपूर्ण रोगों को नाश करे ॥

दूसरा प्रकार

रसं गंधं विषं चैव टंकणं च मनःशिला । एतानि टंकमात्राणि
मरिचं चाष्टटंककम् ॥ एकैकं मरिचं दत्त्वा खल्वे सूक्ष्मं विम-
र्दयेत् । त्रिकटुं टंकपट्टकं च दत्त्वा पश्चाद्विचूर्णयेत् ॥ सर्वमेकत्र
संयोज्य काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् । श्वासे कासे च मंदाग्नौ वा-
तश्लेष्मामयेषु च ॥ गुंजामात्रं प्रदातव्यं पर्णखंडेन धीमता । स-
न्निपाते च मूर्च्छायामपस्मारे तथा पुनः ॥ अतिमोहत्वमापन्ने
नस्यं दद्याद्विचक्षणः । रसः श्वासकुठारोयं सर्वश्वासगदप्रणुत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, विष, सुहागा और मनसिल ये एक २ तोले ले काली मिरच ८ तोले और सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. फिर एक एक मिरच डालके पीसे फिर सब औषधों को डालके बारीक चूर्ण करे और कपडे से छान लेवे फिर इस को काच की शीशी में भरके धर रखे और श्वास, खांसी, मंदाग्नि, वात, कफसंबंधी रोग इन में पान के बीडा में रखके १ रत्ती खाय तथा सन्निपात अपस्मार और अतिमोहवाले रोगी को इस रस की नास देवे यह श्वासकुठाररस संपूर्ण श्वाससंबंधी रोगों को दूर करे ॥

मरीच्यादिगुटिका कासादिकोपर

मरिचं कर्पमात्रं स्यात्पिप्पली कर्पसंमिता । अर्धकर्पो यवक्षारः
कर्पयुग्मं च दाडिमम् ॥ एतच्चूर्णाकृतं युंज्यादष्टकर्पगुडेन हि ।

शाणप्रमाणां गुटिकां कृत्वा वक्त्रे विधारयेत् ॥ अस्याः प्रभा-
वात्सर्वेपि कासा यांत्येव संक्षयम् ॥

अर्थ—काली मिरच १ तोला, पीपल १ तोला, जवाखार छः मासे, अनार का छि-
स्का २ तोले इन चार औषधों का चूर्ण कर आठ तोले गुड में कूट पीसके चार २
मासे की गोली बनाय लेवे इस गोली को मुख में रखे तो सर्व प्रकारकी खांसी और
श्वास दूर हो इस में संदेह नहीं है ॥

श्वासे पथ्य

विरेचनं स्वेदनधूम्रपानप्रच्छर्दनानि स्वपनं दिवा च । पुरातनाः
पट्टिकरक्तशालिकुलित्थगोधूमयवाः प्रशस्ताः ॥ शशाहिभुक्ति-
त्तिरिलावदक्षः शुकादयो धन्वमृगा द्विजाश्च । पुरातनं सर्पि-
रजाप्रभूतं पयो घृतं वापि सुरा मधूनि ॥ पटोलवार्ताकरसोन-
बिंबीजंबीरतंदूलियवास्तुकं च । द्राक्षा वृष्टिः पौष्करमुष्णवारि
कटुत्रयं गोजनितं च मूत्रम् ॥ अन्नानि पानानि च भेषजानि
श्लेष्मानिलघ्नानि च पथ्यवर्गः ॥

अर्थ—विरेचन, स्वेदन, धूम्रपान, वमन, दिन में सोना, पुराने सांठी चावल और
लाल चावल, कुलधी, गेहूं, जौ ये सब अन्न पुराने पथ्य हैं। ससे, मोर, तीतर, लवा,
मुरगा, तोता आदि शब्द से मैना कोयल, मरुभूमि के मृग और पक्षी, पुराना बकरी
का घी, दूध, मद्य, सहत, पटोल, बैंगन, लहसन, कंदूरी, जंभीरी, बधुए का
साग (कटेरी का साग, डोडी का साग, मूली, पिंडुकिया), दाख, [हरड] इला-
यची, पोहकर मूल, गरम जल, त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल), गौ का मूत्र तथा
कफवातनाशक अन्न पान तथा औषधी ये पथ्य हैं ॥

अपथ्य

रक्तस्रावं पूर्ववातान्नपानं मेपीसर्पिर्दुग्धमंभोपि दुष्टम् । मत्स्याः
कंदाः सर्पपाश्चान्नपानं रूक्षं शीतं गुर्वापि श्वासि वर्ज्यम् ॥ मू-
त्रोद्धारश्छर्दिर्दृष्टकामरोधो नस्यं वस्तिर्दतकाष्टं श्रमं च ॥

अर्थ—रुधिर का निकालना, पूर्व दिशा की पवन, बहुत जल का पीना, भेड का
घी और दूध, खराब जल, मछली, कंद, सरसों तथा रूखे शीतल और भारी ऐसे
अन्न, पान, मूत्र, डकार, वमन, प्यास, कामदेव इन की बाधा को रोकना, नास
लेना, वस्तिकर्म, दांतन, परिश्रम श्वासरोग को वर्जित है ॥

दंभ

वक्षःप्रदेशादपि पार्श्वयुग्मे करस्थयोर्मध्यमयोर्धयोश्च । प्रदीप्त-
लोहेन च कंठकूपे दाहोपि च श्वासिनि दंभ उक्तः ॥

अर्थ-वक्षस्थल (छाती) के दोनों तरफ, दोनों हाथों के बीच की अंगुलियों तथा कंठ में गरम लोहे से जलाना इत्यादि अन्य जो कर्म हैं वह सब श्वासरोगी व दम्भ है ॥

इति बृहन्निघण्टुरत्नाकरे श्वासरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

अथ स्वरभेदनिदानम् ।

अत्युच्चभाषणविपाध्ययनाभिघातसंदूपणैः प्रकु-
पिताः पवनादयस्तु । स्रोतःसु ते स्वरवहेषु गताः
प्रतिष्ठां हन्युः स्वरं भवति चापि हि पङ्क्तिः सः ॥

अर्थ-बहुत जोर के बोलने से, विप के खाने से, ऊंचे स्वर के पाठ करने से अर्थात् वेदादि पाठ करने से, कंठ में लकड़ी काष्ठ आदि की चोट लगने से, कोप को प्राप्त हुए जो वात, कफ, पित्त सो कंठ में स्वर के बहनेवाली चार नसें हैं उन में प्राप्त हो अथवा उन में वृद्धि को प्राप्त स्वर को नाश करे यह स्वरभेद रोग वात, पित्त, कफ, सन्निपात, क्षय और भेद इन भेदों से छः प्रकार का है ॥

चिकित्साप्रक्रिया

वाते सलवणं तैलं पित्ते सर्पिः समाक्षिकम् ।
कफे सक्षारकटुकं क्षौद्रं केवलमिष्यते ॥

अर्थ-वादी के स्वरभेद पर क्षार और तेल तथा पित्त के स्वरभेद पर घी और सहत एवं कफ के स्वरभेद पर क्षार और मरिचादिक तीव्र रस तथा सहत इत्यादिक उपचार करने चाहिये ॥

गले तालुनि जिह्वायां दंतमूलेषु चाश्रितः ।
तेन निष्क्रमते लेप्सा स्वरश्चाशु प्रसीदति ॥

अर्थ-ऊपर कहे हुए कर्म के करने से गला, तालू, जीभ, दांतों की जड़ इन का आश्रय करके रहनेवाला कफ निकलकर गिर जाने से स्वर स्वच्छ होवे ॥

स्वरभेदसामान्यचिकित्सा

वातादिजनितश्वासकासघ्ना ये प्रकीर्तिताः ।

योगस्तानत्र युंजीत यथादोषं चिकित्सकः ॥

अर्थ—वातादि दोषों के कुपित होने से जो हुआ स्वरभंग उसपर वातादिजनित श्वास खांसी के जो यत्र लिखे हे वो सब यथा दोषक्रमसे चिकित्सा करे ॥

स्वरोपघाते मेदोजे कफवद्विधिरिष्यते ।

क्षयजे सर्वजे वापि प्रत्याख्याय चरेत्क्रियाम् ॥

अर्थ—मेदवृद्धिसे जो प्रगट स्वरभेद उसपर कफजन्य स्वरभेद की कही हुई चिकित्सा करे और क्षयज तथा सर्वज (सन्निपातजन्य) स्वरभेद को असाध्य जानके उस की यथायोग्य चिकित्सा वेद्य को करनी चाहिये ॥

वातिकस्वरभेदनिदान

वातेन कृष्णनयनाननमूत्रवर्चाभिन्नं शनैर्वदति गर्द्धभवत्स्वरं च ।

अर्थ—वायु से स्वरभंग होय तौ रोगी के नेत्र, मूत्र, मूत्र और विष्टा यह काले होंय वह पुरुष टूटा हुआ शब्द बोले, अथवा गधा के स्वर प्रमाण कर्कश बोले ॥

मरीचघृतपान

स्वरोपघातेनिलजे भुक्तोपरि घृतं पिबेत् ।

मरीचचूर्णसहितं मरुत्स्वरहतिप्रणुत् ॥

अर्थ—वादी से उत्पन्न हुए स्वरभेदपर भोजन करने के उपरांत घी को काली मिरच का चूर्ण डालके पीवे तो यह वादी के स्वरभेद को नष्ट करे ॥

घृतगुडोदन

आद्ये कोष्णजलं पेयं जग्ध्वा घृतगुडोदनम् ।

पीतं घृतं हृत्यनिलं सिद्धं मार्कण्डे रसे ॥

अर्थ—भात में गुड और घी मिलायके भोजन करे फिर ऊपर से गरम २ जल पीवे तो वादी का स्वरभेद अच्छा होय. उसी प्रकार भांगरे के रस में घी डालके औटावे जब घृतमात्र शेष रहे तब इस को पीवे तो वादी का स्वरभंग अच्छा होवे ॥

कासमर्दादिघृत

कासमर्दरसं दत्त्वा भार्गवकल्कं शनैः शनैः ।

सिद्धं सर्पिहितं पीतं स्वरभेदं मरुद्भवम् ॥

अर्थ—कसोंदी का रस और भारंगी इन का चूर्ण डालके मंदाग्रिपर सिद्ध करा हुआ घी पीवे तो वातजन्य स्वरभेद दूर होवे ॥

व्याघ्रीघृत

व्याघ्रीस्वरसविपकं रास्नावात्थालगोक्षुरैः सिद्धम् ।

सर्पिः स्वरोपघातं हन्यात् कासं च पंचविधम् ॥

अर्थ—कटेरी का स्वरस, रास्ना, खिरेटी और गोखरू इन का कल्क अथवा काढ डालके सिद्ध करा हुआ घी स्वरभंग तथा पांच प्रकार की खांसी इन को नष्ट करे ।

पैत्तिकस्वरभेदानिदान

पित्तेन पीतनयनाननमूत्रवर्चा ब्रूयाद्भलेन स च दाहसमन्वितेन ॥

अर्थ—पित्तस्वरभेदवाले मनुष्य के नेत्र, मुख, मूत्र और विष्टा ये पीले होते हैं और बोलते समय गले से दाह होय है ॥

सामान्यचिकित्सा

पैत्तिके तु विरेकः स्यात्पयश्च मधुरैः शृतम् ।

लिह्यान्मधुरवस्तूनां चूर्णं मधुसमन्वितम् ॥

अर्थ—पित्त के स्वरभेदपर रेचन (जुलाब) देवे और मिश्री अथवा दूसरे मधुर पदार्थ डालके औटाया हुआ दूध अथवा मीठे २ पदार्थों का चूर्ण करके सहत में मिलायके चाटे तो पित्त का स्वरभेद दूर होवे ॥

जेष्टीमधकाठा

अश्रीयाच्च ससर्पिष्कं यष्टीमधुकपायकम् ॥

अर्थ—पित्त के स्वरभेदपर मुलहठीके काठे में घी मिलायके पीवे तो हित करे ॥

पयःपान

शर्करामधुमिश्राणि शृतानि मधुरैः सह ।

पिवेत्पयांसि यस्योच्चैर्वदतोपि हतः स्वरः ॥

अर्थ—ऊंचा और बहुत बोलने से जिस का स्वर बैठ गया हो उस को मिश्री, सहत इन से मिला हुआ तथा अन्य मीठे पदार्थ मुनक्का आदि मिलायके औटा हुआ दूध पीवे ॥

शतावरीचूर्ण

शतावरीचूर्णयोगं बलाचूर्णमथापि वा ।

लाजाशतावरीचूर्णं लिह्यान्मधुसितायुतम् ॥

अर्थ—सतावर और खिरेटी इन के चूर्ण को अथवा खीळ और सतावर इन के चूर्ण को सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो पित्त के स्वरभंगको दूर करे ॥

शुंठीघृत

शुंठीत्वचो दुग्धवतां द्रुमाणां संपिष्य दुग्धे विपचेत्तु तेन ।
कल्केन यष्टीमधुकस्य सर्पिः सशर्करं पित्तरुजामयघ्नम् ॥

अर्थ—सॉठ और तज इन के चूर्ण को घड़ आदि क्षीरवृक्ष है उन के दूध में औटाके घी और मिश्री मिलायके भक्षण करे. अथवा मुलहठी के चूर्ण को घी मिश्री के साथ खाय तो पित्तजन्य स्वरभंग को नाश करे ॥

पित्तस्वरभेद

कासमर्दकवार्ताकमार्कवैः स्वरसैर्युतम् ।
क्षीरानुपानं पित्तेषु पिबेत्सर्पिरतंद्रितः ॥

अर्थ—कसोंदी, बैंगन और भांगरा इन के स्वरस में घी डालके पीवे और ऊपरसे दूध पीवे तो पित्त से उत्पन्न स्वरभेद दूर होय ॥

कफस्वरभेद

ब्रूयात्स्वनेन सततं कफरुद्धकंठः
स्वल्पं शनैर्वदति चापि दिवा विशेषात् ॥

अर्थ—कफ के स्वरभेद से, कंठ कफ से रुका रहे, और मंद मंद तथा थोड़ा बोले दिन में बहुत बोले ॥

पिप्पलीयोग

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम् ।
पिबेन्मूत्रेण मतिमान्कफजे स्वरसंक्षये ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, काली मिरच और सॉठ इन के चूर्ण को गोमूत्र में डालके पीवे तो कफ से प्रगट हुआ स्वरभंग नष्ट होय ॥

आम्लवेतसादिचूर्ण

चव्याम्लवेतसकटुत्रयतित्तिडीकं तालीसजीरकतुगादहनैः समांशैः ।
चूर्णं गुडप्रमुदितं त्रिसुगंधियुक्तं वैस्वर्यपीनसकफारुचियु प्रशस्तम् ॥

अर्थ—चव्य, अमलवेत, सॉठ, काली मिरच, पीपल, इमली, तालीसपत्र, जीरा, वंशलोचन, चित्रक, दालचीनी, पत्रज और इलायची इन का चूर्ण गुड में मिलायके खाय तो स्वरभेद, पीनस, कफ और अरुचि इनपर उत्तम है ॥

गंडूष

आर्द्रकस्वरसोपेतं सेंधवं च कटुत्रिकैः ।

बीजपूररसैः सार्धं गंडूषः कफकेसरी ॥

अर्थ—अदरस का रस, सेंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, विजोरे का रस इन ।
गंडूष (कुल्ले) करे तो कफरूप हाथी के मारने को सिंहरूप है ॥

कटुकादिकाढा

कटुकातिषिपापाठादारुमुस्तकलिङ्गकाः ।

गोमूत्रकथिताः पेयाः कंठरोगविनाशनाः ॥

अर्थ—कुटकी, अतीस, पाढ, दारुहलदी, नागरमोथा और इंद्रजों इन को गोमूत्र
में औटायके पीवे तो कंठरोग को नाश करे ॥

सन्निपातस्वरभेदनिदान

सर्वात्मके भवति सर्वविकारसंपत् तं चाप्यसाध्यमृषयः स्वरभेदमाहुः ॥

अर्थ—सन्निपात के स्वरभेद में तीनों दोषों के लक्षण होय हैं यह स्वरभेद असाध्य
है ऐसे ऋषि कहते हैं ॥

अजमोदादिचूर्ण

अजमोदां निशां धात्रीं क्षारं वह्निं विचूर्णयेत् ।

मधुसर्पिर्युतं लीढ्वा त्रिदोषस्वरभंगनुत् ॥

अर्थ—अजमोद, हलदी, आंवले, जवाखार और चित्रक इन का चूर्ण सहत और
धी डालके चाटे तो सन्निपात के स्वरभंग को नाश करे ॥

फलत्रिकचूर्ण

फलत्रिकत्र्यूपणयावशूकचूर्णानि हन्युः स्वरभंगमाशु ।

किं वा कुलित्थं वदनांतरस्थं स्वरामयं हंत्यथ पौष्करं वा ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल और जवाखार इन का चूर्ण
अथवा कुलयी अथवा पुहकरमूल ये स्वरभेद के नाशक हैं ॥

निदिग्धिकावलेह

निदिग्धिका तुला ग्राह्या तदर्धं ग्रंथिकस्य तु । तदर्धं चित्रकस्या-
पि दशमूलं च तत्समम् ॥ जलद्रोणद्वये क्वाथ्यं गृहीयादाढकं
ततः । पूते क्षिपेत्तदर्धं च पुराणस्य गुडस्य च ॥ सर्वमेकत्र

कृत्वा तु लेहवत्साधु साधयेत् । अष्टौ पलानि पिप्पल्यास्त्रिजा-
तकपलं तथा ॥ मरिचस्य पलं चैकं सर्वमेकत्र चूर्णितम् । म-
धुनः कुडवं दत्त्वा तदश्रीयाद्यथानलम् ॥ निदिग्धिकावलेहोयं
भिषग्भिर्मुनिभिर्मतः । स्वरभेदहरो मुख्यः प्रतिश्यायहर-
स्तथा ॥ कासश्वासाग्निमांद्यादीन् गुल्ममेहगलामयान् । आनाहं
मूत्रकृच्छ्राणि हन्याद्ग्रन्थयुर्बुदानि च ॥

अर्थ—कटेरी १०० तोले, पीपरामूल २०० तोले, चित्रक १०० तोले और दश-
मूल १०० तोले ले २०२८ तोले जल में डालके औटावे जब २५६ तोले जल रहे
तब उतारके कपडे से छान लेवे. इस में १२८ तोले पुराना गुड डाले फिर मंदाग्नि
पर रखके अवलेह बनावे जब तयार हो जावे तब उतारके शीतल होनेपर ३२ तोले
पीपल और दालचीनी, इलायची, पत्रज, मिलायके मिरच ४ तोले और सहत १६
तोले उस अवलेह में मिलावे फिर सब को एकजीव करके बलाबल विचारके भक्षण
करे यह निदिग्धिकावलेह नाम से विख्यात है वैद्य और ऋषियों को मान्य
है मुख्यकरके स्वरभंग को नाश करे और पीनस, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, गोला,
प्रमेह, कंठ के रोग, अफरा, मूत्रकृच्छ्र, गांठ, अर्बुद इन सब रोगों को नाश करे ॥

क्षयकृतस्वरभेद और मंदजस्वरभेदनिदान

धूम्येत वाक्क्षयकृते क्षयमाप्नुयाच्च सर्वेषु चापि हतवाक्परिवर्जनीयः ।
अंतर्गतस्वरमलक्ष्य पदं चिरेण भेदः क्षयाद्भवति दिग्धगलस्तृपार्तः ॥

अर्थ—क्षयी के स्वरभेदवाले पुरुष के बोलते समय मुख से धूआंसा निकले और
वाणीक्षय हो जाय, अर्थात् यथार्थ स्वर नहीं निकले. इस स्वरभेद में जिस समय
वाणी हत हो जाय अर्थात् ओज का क्षय होने से बोलने की सामर्थ्य नहीं हो तब
यह असाध्य होय है. और ओज का क्षय (नाश) नहीं होय तो साध्य है. भेद के
सम्बन्ध से कफ अथवा भेद इन से गला लित होय अथवा भेद से स्वर के मार्ग
रुक जाने से प्यास बहुत लगे, गले के भीतर बोले और मंद बोले ॥

असाध्यलक्षण

क्षीणस्य वृद्धस्य कृशस्य चापि चिरोत्थितो यस्य सहोपजातः ।

भेदस्विनः सर्वसमुद्भवश्च स्वरामयो यो न स सिद्धिमेति ॥

अर्थ—क्षीण पुरुष के, वृद्ध के, कृश के, बहुत दिन का, जन्म के संग ही प्रगट
पया मोटे पुरुष के और सन्निपातोद्भव ऐसा स्वरभेद रोग साध्य नहीं होय ॥

क्षयज व मेदज स्वरभंगचिकित्सा
 क्षयजे स्वरभेदे तु तत्रोक्तविधिमाचरेत् ।
 कटुतिक्तकपायाद्यैर्मेदःस्वरहतिं जयेत् ॥

अर्थ—क्षय से उत्पन्न स्वरभेद पर क्षयरोग पर जो चिकित्सा कही है वो करे और मेदजन्य स्वरभेदपर तीखे, कडुए और कपेले इत्यादि औषधियोंसे यत्न करे ॥

जातीफलावलेह

जातीफलैलामधुमातुलिंगैः पत्रैश्च लाजैर्युतपिप्पलीकैः ।
 कृतोवलेहः कुरुते नराणां कंठे ध्वनिं किंनरनादतुल्यम् ॥

अर्थ—जायफल, इलायची, सहत, बिजोरा, पत्रज, खील और पीपल इन का अवलेह करके सेवन करे तो किन्नरों के स्वर के समान मनुष्य के कंठ का स्वर करे ॥

काकजंघादिधार्य

काकजंघा वचा कुष्ठं पिप्पलीमधुसंयुतम् ।
 सप्तरात्रं मुखे धार्यं किन्नरैः सह गीयते ॥

अर्थ—काकजंघा, वच, कूठ, पीपल इन के चूर्ण को सहत के साथ सेवन करे तो यह प्राणी सात ही दिन में किन्नरों के समान गान करे. इन औषधों की गोली बना-यके ७ दिन बराबर मुख में रखे ॥

जातिदलादिलेह

जातीदलैलापिप्पलिलामज्जकमधुमातुलिंगदललेहः ।
 सतताभ्यासात्कुरुते किन्नरमधुरस्वरं रुचिरम् ॥

अर्थ—चमेली के पत्ते, इलायची, पीपल, पीलावृण, सहत, बिजोरे की केशर और तमालपत्र इन का अवलेह बनायके निरंतर सेवन करने से किन्नर के समान मधुर और सुंदर स्वरवाला होवे ॥

गुडूच्यादिलेह

गुडूच्यपामार्गत्रिडंगशंखिनीवचा तथा शुंठिशतावरी समम् ।
 घृतेन लीढं प्रकरोति मानवं त्रिभिर्दिनैः श्लोकसहस्रधारिणम् ॥

अर्थ—गिलोय, आंगा, वायविडंग, संग्राहली, वच, सोंठ और इन के चूर्ण को घी में मिलायके चाटने से मनुष्य को तीन दिन में नित्य हजार श्लोक धारण करने की शक्ति होवे ॥

वदरीकल्क

वदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैंधवम् ।

स्वरोपघाते कासे च लेहमेनं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—बेर के पत्तों के कल्क में सैंधा निमक डालके घी में भून लेवे वह अवलेह स्वरोपघात, खांसी इन पर देना चाहिये ॥

आरनालचूर्ण

विहितमसृणचूर्णान्यारनालेन सार्धं ।

कलितरूपलकृष्णासैंधवानि प्रलित्वात् ॥

अर्थ—बहेडा, पीपल और सैंधा निमक इन का चूर्ण कर कांजी में मिलायके पीवे तो स्वरभंग का नाश होवे इस में संदेह नहीं है ॥

अभिलपति विजेतुं यः स्वरस्य प्रणाशम् ।

स पिबति सह दुग्धेनामलक्याः फलं वा ॥

अर्थ जिस प्राणी को स्वरभंग जीतने की इच्छा होवे वह औंटे हुए दूध में बारीक आंबलों का चूर्ण डालके पीवे ॥

खादिरधार्य

तैलाक्तं स्वरभेदे वा खादिरं धारयेन्मुखे ।

पथ्या पिप्पलियुक्तं वा संयुक्तं नागरेण वा ॥

अर्थ—सरसों के तेल में कत्ये को भिगोय मुख में रक्खे अथवा हरडा और पीपल इन के चूर्ण में सोंठ का चूर्ण मिलायके मुख में रखे तो स्वर स्वच्छ होवे ॥

गोरक्षवटी

रसभस्मार्कलोहस्य भावितस्य त्रिसप्तधा । क्षुद्राफलरसैर्मुद्गतु-

ल्या कार्या वटी शुभा ॥ मुखस्था हरते सर्वं स्वरभंगमसंश-

यम् । गोरक्षनाथैर्गदिता स्वरामयि कृपालुभिः ॥

अर्थ—पारे की भस्म, तामे की भस्म और लोहभस्म इन तीनों को एकत्र करके कटेरी के फलों के रस की भावना देकर मूंग के बराबर गोली बनावे इस में से एक गोली मुख में रक्खे और उस के रस को चूसता रहे तो निःसंदेह स्वरभेद को हरण करे यह गोरक्षनाथ सिद्ध ने कृपा करके प्राणियों के अनुग्रह के वास्ते यह स्वरभेद पर गुटिका कही है ॥

क्षयज व मेदज स्वरभंगचिकित्सा
 क्षयजे स्वरभेदे तु तत्रोक्तविधिमाचरेत् ।
 कटुतिक्तकपायाद्यैर्मेदःस्वरहतिं जयेत् ॥

अर्थ—क्षय से उत्पन्न स्वरभेद पर क्षयरोग पर जो चिकित्सा कही है वो कं और मेदजन्य स्वरभेदपर तीखे, कडुए और कपेले इत्यादि औषधियोंसे यत्न करे ।

जातीफलावलेह

जातीफलैलामधुमातुलिंगैः पत्रैश्च लज्जैर्युतपिप्पलीकैः ।

कृतोवलेहः कुरुते नराणां कंठे ध्वनिं किंनरनादतुल्यम् ॥

अर्थ—जायफल, इलायची, सहत, विजोरा, पत्रज, खील और पीपल इन का अवलेह करके सेवन करे तो किन्नरों के स्वर के समान मनुष्य के कंठ का स्वर करे ॥

काकजंघादिधार्य

काकजंघा वचा कुष्ठं पिप्पलीमधुसंयुतम् ।

सप्तरात्रं मुखे धार्यं किन्नरैः सह गीयते ॥

अर्थ—काकजंघा, वच, कूठ, पीपल इन के चूर्ण को सहत के साथ सेवन करे तो यह प्राणी सात ही दिन में किन्नरों के समान गान करे. इन औषधों की गोली बना-यके ७ दिन बराबर मुख में रखे ॥

जातिदलादिलेह

जातीदलैलापिप्पलिलामज्जकमधुमातुलिंगदललेहः ।

सतताभ्यासात्कुरुते किन्नरमधुरस्वरं रुचिरम् ॥

अर्थ—चमेली के पत्ते, इलायची, पीपल, पीलावण, सहत, विजोरे की केशर और तमालपत्र इन का अवलेह बनायके निरंतर सेवन करने से किन्नर के समान मधुर और सुंदर स्वरवाला होवे ॥

गुडूच्यादिलेह

गुडूच्यापामार्गविडंगशंखिनीवचा तथा शृंठिशतावरी समम् ।

घृतेन लीढं प्रकरोति मानवं त्रिभिर्दिनैः श्लोकसहस्रधारिणम् ॥

अर्थ—गिलोय, आंगा, वायविडंग, संसाहूली, वच, सोंठ और इन के चूर्ण को घृते में मिलायके चाटने से मनुष्य को तीन दिन में नित्य हजार श्लोक धारण करने की शक्ति होवे ॥

वदरीकल्क

वदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैधवम् ।

स्वरोपघाते कासे च लेहमेनं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—वेर के पत्तों के कल्क में सैधा निमक डालके घी में भून लेवे बह अवलेह स्वरोपघात, खांसी इन पर देना चाहिये ॥

आरनालचूर्ण

विहितमसृणचूर्णान्यारनालेन सार्धं ।

कलितरुफलकृष्णासैधवानि प्रलित्यात् ॥

अर्थ—बहेडा, पीपल और सैधा निमक इन का चूर्ण कर कांजी में मिलायके पीवे तो स्वरभंग का नाश होवे इस में संदेह नहीं है ॥

अभिलपति विजेतुं यः स्वरस्य प्रणाशम् ।

स पिबति सह दुग्धेनामलक्याः फलं वा ॥

अर्थ जिस प्राणी को स्वरभंग जीतने की इच्छा होवे वह औंटे हुए दूध में बारीक आंवलों का चूर्ण डालके पीवे ॥

खादिरधार्य

तैलाक्तं स्वरभेदे वा खादिरं धारयेन्मुखे ।

पथ्या पिप्पलियुक्तं वा संयुक्तं नागरेण वा ॥

अर्थ—सरसों के तेल में कत्ये को भिगोय मुख में रक्खे अथवा हरडा और पीपल इन के चूर्ण में साँठ का चूर्ण मिलायके मुख में रखे तो स्वर स्वच्छ होवे ॥

गोरक्षवटी

रसभस्मार्कलोहस्य भावितस्य त्रिसप्तधा । क्षुद्राफलरसैर्मुद्गतु-

ल्या कार्या वटी शुभा ॥ मुखस्था हरते सर्वे स्वरभंगमसंश-

यम् । गोरक्षनाथैर्गदिता स्वरामयि कृपालुभिः ॥

अर्थ—पारे की भस्म, तामे की भस्म और लोहभस्म इन तीनों को एकत्र करके कटेरी के फलों के रस की भावना देकर मूंग के बराबर गोली बनावे इस में से एक गोली मुख में रक्खे और उस के रस को चूसता रहे तो निःसंदेह स्वरभेद को हरण करे यह गोरखनाथ सिद्ध ने कृपा करके प्राणियों के अनुग्रह के वास्ते यह स्वरभेद पर गुटिका कही है ॥

ब्राह्म्यादिचूर्ण

ब्राह्मी मुंडी वचा शुंठी पिप्पली मधुसंयुता ।

सेविता सप्तरात्रेण जायते किंकिणिष्वनिः ॥

अर्थ—ब्राह्मी, गोरखमुंडी, वच, सोंठ और पीपल इन के चूर्ण को सह... .. चाटे तो यह चूर्ण मनुष्य के स्वर को कोकिला के स्वर समान करे ॥

वचादिचूर्ण

ब्राह्मी वचाभया वासा पिप्पली मधुसंयुता ।

अस्य प्रयोगात्सहसा किन्नरैः सह गीयते ॥

अर्थ—ब्राह्मी, वच, हरड, अहूसा और पीपल इन के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो किन्नर के समान उत्तम स्वर होय ॥

दुग्धामलकपान

दुग्धं प्रयुक्तामलकं नराणां नष्टस्वराणां सुखमातनोति ।

यथा मृगाक्षी सुरकिन्नराणां कंदर्पदर्पप्रतिपीडनं च ॥

अर्थ—आंवले के चूर्ण को दूध में डालके पीवे तो स्वरभंगरोगवाले को सुख होता है जैसे मृगाक्षी सुरकिन्नरों के कामदेव का दलन सुख देता है ॥

पथ्य

स्वेदो वस्तिर्धूमपानं विरेकः कवलग्रहः । नस्यं भालशिरावेधो

यवा लोहितशालयः ॥ हंसाटवीताम्रचूडकेकीमांसरसाः सुराः ।

गोकंटकः काकमाची जीवन्ती वालमूलकम् ॥ द्राक्षा पथ्या मातु-

लिंगं लशुनं लवणार्द्रकम् । तांबूलं मरिचं सर्पिः पथ्यानि

स्वरभेदिनाम् ॥

अर्थ—स्वेदन, वस्तिकर्म, धूमपान, विरेचन, औषधों का कवड बना कर मुख में रखना, नास, मस्तक की नस का घेपना, जों, लाल चांबल, हंस, घन का मुरगा, मोर, इन के मांस का रस, दाह, गोखरू, मकोय, जीवन्ती (डोडी) का साग, मवीन मूली, दाख, हरड, बिजोरा, लहसन, निमकमिला अदरस, पान की बीड़ी, काली मिरच और पी ये स्वरभेद (अवाज का मंद हो जाना) रोगवाले के पथ्य कहे हैं ॥

स्वरभेदपर अपथ्य

आम्रः कपित्थं वकुलं शालकं जांबवानि च। तिंदुकानि कपाया-
णि वामिं स्वप्नं प्रजल्पताम् ॥ अन्नपानं विरुद्धं च स्वरभेदे विवर्जयेत् ॥
अर्थ—आम, कच्चा कैय, मौलसिरी, भसीडा, जामुन, तेंदू के फल और कपेले
रस, वमन, सोना, बहुत थोड़ना तथा विरुद्ध अन्न पान ये सब स्वरभेदरोगी
को वर्जित हैं ॥

इति श्रीबृहन्निघटुरत्नाकरे स्वरभगरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

अरुचिकर्मविपाकः ।

श्रद्धाहीनो धनी अदाता दानरतिर्वा तामसगुणान्वितो यः ॥
सोरुचिमान् शूली वा जायते ॥ तस्य प्रायश्चित्तम् ॥ कृच्छ्रम-
तिकृच्छ्रं चांद्रायणं व्यस्तं समस्तं वा व्याधितारतम्येन कुर्यात् ॥
अत्राशक्तौ धनी च नित्यं पंचाशद्ब्राह्मणभोजनं प्रतिदिनं मिष्टा-
न्नेन कारयेत् ॥ अत्राप्यशक्तौ ॥ जपं होमं तथा तीर्थस्नानं
वापि समाचरेत् । तीव्रवैराग्यसंयुक्तः कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥

अर्थ—जो प्राणी धनाढ्य होकर श्रद्धाहीन, अदाता अथवा दान करे तौभी तामसी
रोग करे उस प्राणी के अरुचि (नफरत) का रोग अथवा शूलरोग होय इस का
कर्म है. उस को कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, चांद्रायणव्रत ये संपूर्ण अथवा इन
म सं - व्याधि के तारतम्य करके प्रायश्चित्त करे. यदि इन प्रायश्चित्तों के
करके शूलरोग न होवे और धनाढ्य होय तो नित्यप्रति पचास ब्राह्मणों को मिष्टान्न
भोजन करावे. यदि ये भी न हो सके तो जप, होम तथा तीर्थ स्नान ये करे तथा
तीव्र वैराग्य धारण तथा ब्राह्मणभोजन करावे तो रोगसे छूट जावे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय तत्प्रतीकार

अतिपरिभूतक्षपणः सहजयुतो मानवो भवति । जीवे मंदाग्नि-
विजितो दुश्चित्तको पापकर्मा च ॥ दुश्चित्तस्यस्थानस्थितगु-
रोः प्रागुक्तजपहोमस्नानादिकं विदध्यात् ॥

अर्थ—जिस प्राणी के जन्मसमय में सहजस्थान (तीसरे घर में) क्रूर ग्रह होवे

ब्राह्म्यादिचूर्ण

ब्राह्मी मुंडी वचा शुंठी पिप्पली मधुसंयुता ।

सेविता सप्तरात्रेण जायते किंकिणिष्वनिः ॥

अर्थ—ब्राह्मी, गोरखमुंडी, वच, सोंठ और पीपल इन के चूर्ण को सहत के साथ चाटे तो यह चूर्ण मनुष्य के स्वर को कोकिला के स्वर समान करे ॥

वचादिचूर्ण

ब्राह्मी वचाभया वासा पिप्पली मधुसंयुता ।

अस्य प्रयोगात्सहसा किन्नरैः सह गीयते ॥

अर्थ—ब्राह्मी, वच, हरड, अहूसा और पीपल इन के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो किन्नर के समान उत्तम स्वर होय ॥

दुग्धामलकपान

दुग्धं प्रयुक्तामलकं नराणां नष्टस्वराणां सुखमातनोति ।

यथा मृगाक्षी सुरकिन्नराणां कंदर्पदर्पप्रतिपीडनं च ॥

अर्थ—आंवले के चूर्ण को दूध में डालके पीवे तो स्वरभंगरोगवाले को सुख होता है जैसे मृगाक्षी सुरकिन्नरों के कामदेव का दलन सुख देता है ॥

पथ्य

स्वेदो वस्तिधूमपानं विरेकः कवलग्रहः । नस्यं भालशिरावेधो

यवा लोहितशालयः ॥ हंसाटवीताम्रचूडकेकीमांसरसाः सुराः ।

गोकंटकः काकमाची जीवंती बालमूलकम् ॥ द्राक्षा पथ्या मातु-

लिंगं लशुनं लवणार्द्रकम् । तांबूलं मरिचं सर्पिः पथ्यानि

स्वरभेदिनाम् ॥

अर्थ—स्वेदन, वस्तिकर्म, धूमपान, विरेचन, औषधों का कवड बना कर मुस में रखना, नास, मस्तक की नस का घेघना, जॉ, लाल चांवळ, हंस, वन का मुरगा, मोर, इन के मांस का रस, दाख, गोखरू, मकोय, जीवंती (डोडी) का साग, नवीन मूली, दाख, हरड, बिजोरा, लहसन, निमकमिठा अदरस, पान की बीड़ी, काली मिरच और घी ये स्वरभेद (अवाज का मंद हो जाना) रोगवाले के पथ्य कोहैं ॥

कहते हैं. अन्न के स्मरण, श्रवण, दर्शन और वास इन से जिस को त्रास होय, उस को भक्तद्वेष कहते हैं इस प्रकार ये रोग तीन प्रकार का है. इसी वास्ते चरक शुश्रुत ने अरोचक शब्दकरके संग्रह करा है ॥

गंडूप

किंचिल्लवणसंयुक्तमारनालं विपाचयेत् ।

तेन गंडूपमात्रेण आस्यवैरस्यमृच्छति ॥

अर्थ—कांजी में थोडासा निमक डालके औटावे फिर इस के कुल्ले करे तो मुख की विरसता अर्थात् जायके कान आना दूर होवे ॥

कवलग्राह

सिताव्योपकापित्थानां चूर्णं क्षौद्रेण तद्गटी ।

सर्वारोचकशांत्यर्थं धारयेद्गदनांबुजे ॥

अर्थ—मिश्री, सोंठ, मिरच, पीपल और कैथ इन का चूर्ण करके सहत में गोली बनावे इस को मुख में रखे तो अरुचि दूर होवे ॥

विडंगचूर्ण

विडंगचूर्णकर्पेकं क्षौद्रेश्चतुर्गुणैर्युतम् ।

असाध्यमपि संहन्यादरुचि वक्रधारणात् ॥

अर्थ—वायविडंग का चूर्ण १ तोले, सहत ४ तोले डालके गोली बनावे तो असाध्य भी अरुचि होवे तो उस का भी नाश होय ॥

अम्लिकाकवल

अम्लिकागुडतोयं च त्वगेलामरिचान्वितम् ।

अभक्तच्छंदरोगेषु शस्तं कवलधारणम् ॥

अर्थ—जिस प्राणी की अन्न पर अरुचि होवे उस को इमली के पत्ते में गुड, जल, दालचीनी, इलायची और मिरच इन का चूर्ण डालके पीवे तो अरुचि दूर हो ॥

कुष्ठादिकवल

कुष्ठसौवर्चलाजाजीशर्करामरिचं विडम् । धान्यैलापन्नकोशीर-

पिप्पल्यश्चंदनोत्पलम् ॥ लोध्रतेजोवती पथ्या त्र्यूपणं सयवा-

ग्रजम् । आर्द्रदाडिमनिर्यासः साजाजीशर्करायुतम् ॥ सतैल-

माक्षिका द्येते चत्वारः कवलग्रहाः । चतुरो रोचकान् प्रति वाताद्येकजसर्वजान् ॥

सामान्यचिकित्सा

इच्छाविनाशभयजेषु च बाधकेषु भावान्भवाय वितरेत्खलु
साध्यरूपात्। अर्थेषु चातिपतितेषु पुनर्भवाय पौराणिकैः श्रुति-
पथैरनुमानयेत्तम्॥

अर्थ—इच्छानाश अथवा भय से उत्पन्न अरुचि पर सुख होने के वास्ते इच्छि
पदार्थ जो मिल सके वो देवे और उस के भय को दूर करे और द्रव्यनाश के ।
से जो अरुचि प्रगट हुई पुराण (भागवत वेदांत आदि शास्त्रों को) सुने जिस
ज्ञान प्रकट होवे ॥

पित्तजन्यअरोचकनिदान

कट्वाम्लमुष्णं विरसं च पूति पित्तेन विद्याल्लवणं च वक्रम् ॥

अर्थ—पित्त की अरुचि से कडुआ, खट्टा, गरम, विरस, दुर्गंधयुक्त ऐसा मुख होय

कफजन्यअरोचकनिदानं

माधुर्यैपिच्छिल्यगुरुत्वशैत्यविवद्धसंबद्धयुतं कफेन ॥

अर्थ—कफ की अरुचि से खारा, मीठा, पिच्छल, भारी, शीतल मुख होय है अर्
मुख बंधा सरीखा अर्थात् स्वाय नहीं और आंत कफ से लिप्त होय ॥

अरोचके शोकभयातिलोभक्रोधाद्यहृद्याऽशुचिगंधजे स्यात् ।

स्वाभाविकं चास्यमथारुचिश्च त्रिदोषजे नैकरसं भवेत् ॥

हृच्छूलपीडनयुतं पवनेन पित्ततृट्दाहशोपबहुलं सकफप्र-

सेकम् । श्रेष्ठात्मकं वदुरुजं बहुभिश्च विद्याद्वैगुण्यमोहजडता-

भिरथापरं च ॥

अर्थ—शोक, भय, अतिलोभ, क्रोध, अहृद्य (अर्थात् मन को बुरी लगे ऐसे
वस्तु) अपक्विन्न वास इन से प्रगट हुई अरुचि में मुख स्वाभाविक रहे अर्थात् वात
जादिकों के सदृश कसेला, खट्टा आदि नहीं होय. सन्निपात की अरुचि में अन्न र
अरुचि तथा मुख में अनेक रस मालूम हो. वात की अरुचि से हृदय में शूल और
वेदना होती है. पित्त से प्यास, दाह और चूपने के सदृश पीडा ये लक्षण होते हैं
कफ की अरुचि में मुख से कफ गिरे, सन्निपात की अरुचि में पीडा अत्यन्त होय
वैगुण्य कहिये मन की ध्याकूलता, मोह, जडत्व इन लक्षणों से अपर कहिये वागं-
तुज अरोचक जाने. भूख होय परंतु खाने की सामर्थ्य न होना इस को अरुचि कहते
हैं. आप को प्रिय भी अन्न किसी ने दिया हो परंतु खाप नहीं उस को अन्नाभिमन्दन

कहते हैं. अन्न के स्मरण, श्रवण, दर्शन और वास इन से जिस को भ्रास होय, उस को भक्तद्रेष कहते हैं इस प्रकार ये रोग तीन प्रकार का है. इसी वास्ते चरक सुश्रुत ने अरोचक शब्दकरके संग्रह करा है ॥

गंडूष

किंचिल्लवणसंयुक्तमारनालं विपाचयेत् ।

तेन गंडूषमात्रेण आस्यवैरस्यमृच्छति ॥

अर्थ—कांजी में थोडासा निमक डालके औटावे फिर इस के कुल्ले करे तो मुख की विरसता अर्थात् जायके कान आना दूर होवे ॥

कवलग्राह

सिताव्योषकपित्थानां चूर्णं क्षौद्रेण तद्गटी ।

सर्वारोचकशांत्यर्थं धारयेद्भदनांबुजे ॥

अर्थ—मिश्री, सोंठ, मिरच, पीपल और कैथ इन का चूर्ण करके सहत में गोली बनावे इस को मुख में रखे तो अरुचि दूर होवे ॥

विडंगचूर्ण

विडंगचूर्णकर्पेकं क्षौद्रेश्चतुर्गुणैर्युतम् ।

असाध्यमपि संहन्यादरुचिं वक्रधारणात् ॥

अर्थ—वायविडंग का चूर्ण १ तोले, सहत ४ तोले डालके गोली बनावे तो असाध्य भी अरुचि होवे तो उस का भी नाश होय ॥

अम्लिकाकवल

अम्लिकागुडतोयं च त्वगेलामरिचान्वितम् ।

अभक्तच्छंदरोगेषु शस्तं कवलधारणम् ॥

अर्थ—जिस प्राणी की अन्न पर अरुचि होवे उस को इमली के पत्ते में गुड, जल, डालचीनी, इलायची और मिरच इन का चूर्ण डालके पीवे तो अरुचि दूर हो ॥

कुष्ठादिकवल

कुष्ठसौवर्चलाजाजीशर्करामरिचं विडम् । धान्यैलापन्नकोशीर-
पिप्पल्यश्चंदनोत्पलम् ॥ लोभ्रतेजोवती पथ्या त्र्यूपणं सयवा-
ग्रजम् । आर्द्रदाडिमनिर्यासः साजाजीशर्करायुतम् ॥ सतैल-
माक्षिका ह्येते चत्वारः कवलग्रहाः । चतुरो रोचकान् प्रंति
वाताधिकजसर्वजान् ॥

अर्थ—कूठ, संचरनिमक, जीरा, मिश्री, काली मिरच और विडानिमक इन का चूर्ण तथा धनिया, इलायची, पन्नाख, खस, पीपल, चंदन सपेद कमल इन का चूर्ण, लोध, मालकांगनी, हरड, सांठ, मिरच, पीपल, जवाखार इन का चूर्ण. अदरस, अनारदाना, इन के रस में जीरा और मिश्री मिलावे ये चार योग सरसों का तेल और सहत के साथ खाय तो कवळ यानी गस्ते खाने की शक्ति हो. और वात, पित्त, कफ और सन्निपात इन से उत्पन्न ४ प्रकारकी अरुचि को नाश करे ॥

नींबू का पन्हा

भागैकं निंबुजं तोयं पट्टभागं शर्करोदकम् । लवंगमरिचोन्मिश्रं
पानकं पानकोत्तमम् ॥ निंबूरसभवं पानमत्यम्लं वातनाशनम् ।
वह्निदीतिकरं रुच्यं समस्ताहारपाचकम् ॥

अर्थ—नींबू का रस १ भाग, मिश्री का सरवत ६ भाग लेकर उस में लैंग का और काली मिरचों का चूर्ण डालके पन्हा करे यह सब पन्हों में उत्तम है. यह नींबू का पन्हा अत्यंत खट्टा, वादीनाशक, आग्नि प्रदीप्त करता, रुचिकारक तथा सर्वआहार का पाचक है ॥

मुखधावन

अजाजीमिरिचं कुष्ठं विडं सौवर्चलं तथा ।

मधुकं शर्करा तैलं वातिके मुखधावनम् ॥

अर्थ—जीरा, काली मिरच, कूठ, विडानिमक, संचरनिमक, मूलहटी, मिश्री और सरसों का तेल इन सब को एकत्र करके मुख को धोवे अर्थात् कुष्ठे करे तो घादी की अरुचि दूर हो ॥

दूसरा प्रकार

कारंजं दंतकाष्ठं च विधेयमरुचौ सदा । किंचिल्लवणसंयुक्तमार-

नालं विपाचयेत् ॥ तेन गंडूपकं कुर्यादास्यवैरस्य शांतये ॥

अर्थ—मुख की रुचि चली गई हो तो कंजे की दांतन से दांतों को धिसे अर्थात् दांतन करे तथा कांजी में थोडा निमक मिलायके कुष्ठे करे तो फिर रुचि हो जावे ॥

तीसरा प्रकार

त्रिन्धूपणानि त्रिफलारजनीद्वयं च चूर्णाकृतानि यवशूकविमि-

श्रितानि । क्षौद्रान्वितानि वितरेन्मुखधावनार्थमन्यानि तिक्तक-
टुकानि च भेषजानि ॥

अर्थ—दालचीनी, इलायची, पत्रज, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, हलदी, दारुहलदी, जों के कांटे इन का चूर्ण सहत में मिलायके मुख को धोवे तथा यह कडुए चरपरी औषध लेवे. तो अरुचि इन का नाश होवे ॥

शर्करादिभक्ष

शर्करा-दाडिमं चाथ द्राक्षा खर्जूरमेव च । केसरं मातुलिङ्गस्य
सिंधुना मधुनापि वा॥आस्यवैरस्यश्मनं भक्षयेत्कर्षसंमितम्॥

अर्थ—मिथ्री, अनारदाना, मुनक्का, खजूर, बिजोरे की केशर, सेंधा निमक अथवा सहत से युक्त इन में के किसी एक के साथ तोले भर भोजन करने से मुख में रुचि होवे ॥

पानक

पक्वाम्लिका सिता शीतवारिणा वस्त्रगालितम् । एलालवंगकर्पू-
रमरीचैरवधूलितम्॥ पानकस्यास्य गंडूपं धारयित्वा मुखेतुरः।
अरुचिं नाशयत्येव पित्तं प्रशमयेद्यथा ॥

अर्थ—पकी हुई इमली को जल में भिगोकर मसल कर छान लेवे फिर इस में मिथ्री, शीतल जल, इलायची, लौंग, कपूर और मिरच इन का चूर्ण डालके पन्हा बनावे इस को मुख में धारण करने से अरुचि का नाश होवे तथा पित्त शांत हो ॥

तालीसादिचूर्ण

तालीसं मरिचं शुंठी पिप्पली वंशरोचना । एकद्वित्रिचतुः पंच
कर्पैर्भागान् प्रकल्पयेत् ॥ एलात्वचोस्तु कर्पाधै प्रत्येकं भाग-
मावहेत् । मृतं वंगं मृतं ताम्रं समभागानि कारयेत् ॥ द्वात्रिंश-
त्कर्पतुलिता प्रदेया शर्करा बुधैः । तालीसाद्यमिदं चूर्णं रोचनं
पाचनं स्मृतम् ॥ कासश्वासज्वरहरं छर्द्यतीसारनाशनम् । शो-
पाध्मानहरं प्लीहाग्रहणीपांडुरोगजित् ॥

अर्थ—तालीसपत्र १ तोला, काली मिरच २ तोले, सोंठ ३ तोले, पीपल ४ तोले, वंशलोचन ५ तोले, इलायची, दालचीनी ये दोनों छः छः मासे लेवे. वंग की भस्म और तामे की भस्म दोनों आठ आठ तोले. मिथ्री ३२ तोले इस को कूट पीस चूर्ण

बनावे. उस में पूर्वोक्त मिश्री को मिलायके सेवन करे तो मुखमें रुचि प्रगट हो. तथा अन्न पचे तथा खांसी, श्वास, ज्वर, वमन, अतिसार, शोष, पेटका फूलना, कामला, संग्रहणी और पांडुरोग ये दूर हो ॥

खांडवचूर्ण

तुल्यं तालीसचव्योषणलवणगजाद्विः कणाग्रंथ्यजातीवृक्षाम्ला-
ग्नित्वचं त्रिर्घनवदरधनैलाजमोदाम्लविश्वम् । सार्धश्वेतोप्रिसारो
तिसृत्तिकृमिवमीखांडवोरुच्यजीर्णे गुल्माध्मानानलास्योदरग-
लगुदहन्मृद्गदश्वासकासे ॥

अर्थ-तालीसपत्र १, चव्य १, मिरच १, सेंधानिमक १, नागकेशर १, पीपल २, पीपरामूल २, जीरा २, इमली २, चित्रक २, दालचीनी २, नागरमोथा ३, सुखेचेर ३, धनिया ३, इलायची ३, अजमोद ३, अमलवेत ३, सोंठ और मिश्री १९ तोले लेवे तथा अनारदाना ९ ॥ तोले इन सब औषधों का बारीक चूर्ण करके अनुपान के साथ अतिसार, कृमि, वांति, अरुचि, अजीर्ण, गोला, पेट का फूलना, मंदाग्नि, मुखरोग, उदररोग, गलरोग, बवासीर, हृदयरोग, मृत्तिकाजन्य रोग, श्वास और खांसी इनपर देवे ॥

यवानीखांडवचूर्ण अरोचकादिपर

यवानी दाडिमं शुंठी तित्तिडीकाम्लवेतसौ । वदराम्लं च
कुर्वीत चतुःशाणमितानि च ॥ सार्धद्विशाणं मरिचं पिप्प-
ली दशशाणिका । त्वक्सौवर्चलधान्याकं जीरकं द्विद्विशाणक-
म् ॥ चतुःपष्टिमितैः शाणैः शर्करामत्र योजयेत् । चूर्णितं
सर्वमेकत्र यवानीखांडवाभिधम् ॥ चूर्णं जयेत्पांडुरोगं हृद्भोगं
ग्रहणीज्वरम् । छर्दिशोपातिसारांश्च घृहीहानाहविवंधताम् ॥ अ-
रुचिं शूलमंदाग्निमशौजिह्वागलामयान् ॥

अर्थ-अजमोद, अनारदाना, सोंठ, इमली, अमलवेत, चेर की खटाई, ये छः औषध चार चार शाण लेवे. काली मिरच २ ॥ शाण, पीपल १० शाण, दालचीनी, संचरानिमक, धनिया, जीरा ये प्रत्येक दो दो शाण लेवे. मिश्री ६४ शाण, इन सब औषधों को कूट पीसके चूर्ण करे इस चूर्ण को यवानीखंड कहते हैं. इस चूर्ण के सेवन करने से पांडुरोग, हृदयरोग, संग्रहणी, ज्वर, छर्दि (वमन), शोष, अतिसार, घृहीहा, अफरा, मल का रुकना, अरुचि, शूल, मंदाग्नि, बवासीर, जीभ और गले के विकार इन सब को दूर करे ॥

कारव्यादिगुटिका

कारव्यजाजीमरिचं द्राक्षावृक्षाम्लदाडिमम् । सौवर्चलं गुडः क्षौ-
द्रमेपां कार्या वटी शुभा ॥ बदरास्थिमिता सास्ये धार्यारोच-
कनाशिनी ॥

अर्थ—कलोजी, जीरा, काली मिरच, दाख, अमलवेत, अनारदाना, संचरनिमक, गुड और सहत ये सब को एकत्र खरल करके बेर की गुठली के बराबर गोली बना-
यके मुख में रखे तो अरुचि रोग दूर होय ॥

खंडार्द्रकयोग

आर्द्रकस्य सितायाश्च द्विगुणाष्टपलानि च । निष्कद्वादशकं
तीक्ष्णमष्टनिष्का च मागधी ॥ अष्टनिष्कं च तन्मूलं पंचनिष्कं
च नागरम् । जातीफलैलादहनवंशाख्याः पंच निष्ककाः ॥
सर्वाण्येतानि शुष्काणि चूर्णं कृत्वा पृथक् पृथक् । आर्द्रकं खं-
डशः कृत्वा गोघृतेष्टपले पचेत् ॥ शर्करापूर्णचूर्णं च आर्द्रकं सह
मेलयेत् । मंडलं सेवयेन्नित्यं महापित्तविनाशनम् ॥ अम्लपित्तं
निहंत्याशु सर्वपित्तविकारजित् । सर्वारुचिं वातरोगं मंदाग्निं च
नियच्छति ॥

अर्थ—अदरख ६४ तोले, मिश्री ६४ तोले, काली मिरच ४ तोले, पीपल ३
तोले, पीपरापूल ३ तोले, सोंठ १॥ तोला, जायफल, इलायची, चित्रक, वंशलोचन
ये प्रत्येक डेढ २ तोला लेवे इन सूखी हुई औषधोंका पृथक् २ चूर्ण करे फिर अद-
रख के टुकड़े बारीक करके ३२ तोले घी में गरके तल लेवे फिर मिश्री और सब
चूर्ण को खटाई में मिछाय नित्यप्रति ४० दिनपर्यंत सेवन करे तो यह खंडार्द्रक
लेह घोर पित्त का नाश करनेवाला है. अम्लपित्त को बहुत जल्दी दूर करे और
सर्वपित्त के विकारों को नष्ट करे तथा सर्व प्रकार की अरुचि, वादी के रोग, मंदाग्नि
इन सब को नष्ट करे ॥

राजिकादिशिखरिणी

राजिका जीरको कुष्ठो भृष्टर्हिण्यु च नागरम् । सेंधवं दधि गोः
सर्वं वस्त्रपूतं प्रकल्पयेत् ॥ तावन्मानं क्षिपेत्तत्र यथा स्याद्बु-
चिरुत्तमा । तक्रमेतद्भवेत्सद्यो रोचनं वह्निदीपनम् ॥

अर्थ—राई, जीरा, कूट, भुनी हुई हींग, सोंठ, सेंधा निमक और गौ का दही ये सब पदार्थ यथायोग्य एकत्र कर बख में डालके छान लेवे यहाँछाल अरुचि को नाश करे और जठराग्नि को दीपन करे है यह राजिकादि शिखरन कहाती है ॥

आर्द्रकयोग

धौतं खंडितमार्द्रकं च सलिलैः क्षिप्तं सुतप्ते घृते सिंधूत्थं म-
रिचं सुजीरयुगुलं चूर्णीकृतं प्रक्षिपेत् । चूर्णं भृष्टयवोद्भवं च
वितुषं हिंवाज्यधूमे दहेदित्थं दोषविहीनमार्द्रकवरं सुस्वाद्
संजायते ॥

अर्थ—अदरख को जल से धोय स्वच्छ करके उस के टुकड़े २ कर लेवे फिर ६ को कटाई में चढाय उस में इस अदरख को डालके परिपक करे. फिर सेंधानिमक काली मिरच, जीरा, काला जीरा इन का चूर्ण उस में डालके कुछ गरम करे फि जौओं को भूनके उन के चून को घी में हींग डालके भून लेवे और सब में मिला देवे. इस प्रकार बना हुआ अदरख दोषहीन, स्वादिष्ट और अरुचिनाशक होता है ।

ताम्राशिखरिणी

गव्यमावर्तितं दुग्धं निबद्धं दधि माहिपम् । एकीकृत्य पटे घृष्टं
शुभ्रशर्करया शुभम् ॥ एलालवंगकर्पूरमरिचैश्च समन्विता ।
ताम्रा शिखरिणी कुर्याद्भुचिं सकलवल्लभा ॥

अर्थ—गौ का दूध, भैंस का दही इन दोनों को एकत्र करके कपडे में डाल और सपेद बूरा मिलायके धीरे २ हाथ से मलके छान लेवे उस में इलायची, लींग, कपूर और काली मिरच ये पदार्थ यथायोग्य डालके शिखरन बनावे. इस का नाम ताम्रा-शिखरिणी है. यह रुचि को उत्पन्न करे तथा सर्व प्राणियों को प्यारी है ॥

आमलकादि चूर्ण

आमलं चित्रकः पथ्या पिप्पली सैंधवं तथा । चूर्णितोयं गणो
ज्ञेयः सर्वज्वरविनाशनः ॥ भेदी रुचिकरः श्लेष्मजेता दीपन-
पाचनः ॥

अर्थ—भांवले १, चित्रक २, छोटी हरड ३, पीपल ४, सेंधा निमक ५ इन पांचों को समान समान भाग लेकर चूर्ण करे यह सर्वज्वरों को दूर करे. तथा मलादिक को भेदन करे और रुचिदाई तथा कफ दूर होय, अग्नि प्रदीप्त होय और अन्न पचे ॥

कपूरादिचूर्ण

कपूरचोचकंकोलजातीफलदलैः समैः । लवंगं नागमरिचं कृष्णा
शुंठी विवर्धिताः ॥ चूर्णं सितासमं ग्राह्यं रंजनं क्षयकासजित् ।
वैस्वर्यश्वासगुल्मार्शश्छर्दिंकंठामयापहम् ॥ प्रयुक्तं चात्रपानेषु
भिषजा रोगिणां हितम् ॥

अर्थ—कपूर, दालचीनी, कंकोल, जायफल और पत्रज ये सब प्रत्येक एक २ तोला लेवे. लोण २ तोले, नागकेशर ३ तोले, काली मिर्च ४ तोले, पीपल ५ तोले और सोंठ ६ तोले इस प्रकार लेके चूर्ण करे फिर मिश्री मिलायके सेवन करे तो रुचि करे रांसी, स्वरभेद, श्वास, मोला, बवाषीर, छर्दि, कंठरोग इन को नाश करे, इस को भोजन में मिलायके अथवा जल में मिलायके देवे ॥

चव्यादिचूर्ण

चव्याम्लवेतसकटुत्रयतिंतिडिकतालीसजीरकतुगादहनैः समांशैः ।
चूर्णं गुडप्रमुदितं त्रिसुगंधियुक्तं वैस्वर्यपीनसकफारुचिषु प्रशस्तम् ॥

अर्थ—चव्य, अमलवेत, सोंठ, मिर्च, पीपल, अमलवेत, तालीसपत्र, जीरा, वंश-
लोचन, चित्रक, दालचीनी, पत्रज, इलायची इन का चूर्ण गुड में मिलायके देवे तो स्वरभेद, पीनस, कफ, अरुचि को नष्ट करे ॥

आर्द्रकमातुलुंगावलेह

आर्द्रकस्वरसं प्रस्थं तदर्धांशं गुडं क्षिपेत् । कुडवं बीजपूराम्लं
गालयित्वा विचक्षणः ॥ सर्वं मंदाग्निना पक्त्वा तत्रेमानिविनिः-
क्षिपेत् । त्रिजातकं त्रिकटुकं त्रिफलायासमेव च ॥ चित्रकं ग्रंथिकं
धान्यं जीरकद्वयमेव च । कर्पांशं श्लक्ष्णचूर्णं तु मेलयित्वा तु
भक्षयेत् ॥ अरोचकक्षयहरमग्निदीप्तिकरं परम् । कामलापांडु-
शोकघ्नं कासश्वासहरं परम् ॥ आघ्नानोदरगुल्मांश्च घ्नीदं शूलं
च नाशयेत् ॥

अर्थ—६४ तोले अदरसका रस, गुड ३२ तोले, बिजोरे का रस १६ तोले इन
सब को मंदाग्निपर पचावे फिर इस में दालचीनी, पत्रज, इलायची, सोंठ,
मिर्च, पीपल, हरद, बहेडा, आंवला, धवासा, चित्रक, पीरामुड, घनिपा, जीरा
इन प्रत्येक का चूर्ण तोले २ भर लेवे सब को पत्रज रस में मिलायके गाय तो

अरुचि, क्षय, मंदाग्नि, कामला, पांडुरोग, शोष, खांसी, श्वास, अफरा, उदर, गोला, प्लीहा और शूल इन को नष्ट करे ॥

जीरकादिघृत

पिष्ट्वाजाजी सधान्याकं घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।

कफपित्तारुचिहरं मंदानलवर्षिं जयेत् ॥

अर्थ—जीरा और धनिया इन का कल्क ६४ तोले घी में डालके घृत को पक्व करे यह घृत कफपित्त से हुई अरुचि को नाश करे तथा मंदाग्नि और वमन इन को नष्ट करे है ॥

सूतादिगुटिका

सूतं गंधाभ्रमगधाम्लीकामगधसैधवैः ।

गुटिकारोचकहरी जिह्वावदनशुद्धिकृत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, पीपल, इमली, पीपरामूल और सैधा निमक इन सब की गोली बनायके मुख में रखे तो अरुचि को नष्ट करे तथा जिह्वा और मुख की शुद्धि करे ॥

लघुचुक्रसंधान

गुडक्षौद्रारनालानि समस्तानि यथोत्तरम् । शंसन्ति द्विगुणा-

न्भागान्सम्यक् सूक्तस्य सिद्धये ॥ यन्मस्त्वादिशुचौ भांडे

सक्षौद्रं गुडकांजिकम् । त्रिरात्रं धान्यराशिस्थं सूक्तं चुक्रं तदुच्यते ॥

अर्थ—गुड १ भाग, सहत २ भाग और कांजी ४ भाग इस प्रकार लेकर चिकने वासन में भरके धान की राशि में तीन दिन रख देवे. इस को सूक्तचुक्र कहते हैं यह सर्व प्रकार की अरुचिरोग को नाश करे ॥

केसरादिलेह

केसरं मातुलुंगस्य सैधवं मधुनापि वा ।

आस्यवैरस्यंशमनं भक्षयेत्कर्पसंमितम् ॥

अर्थ—विजोरे की केसर को सैधा निमक अथवा सहत इन के साथ एक तोला ख.य तो मुख की विरसता (बुरा स्वाद) दूर होवे ॥

शमयति केसरंरुचिं सलवणघृतमाशु मातुलुंगस्य ।

दाडिमचर्वणमथवा चरको रुचिकारि सूचयामास ॥

अर्थ—बिजोरे की केसर, सेंधा निमक इन को सहत में मिलायके सेवन करे तो अरुचि को दूर करे अथवा अनार का चवाना रुचि करता है इस प्रकार चरक ऋषि ने कहा है ॥

आर्द्रकदाडिमयोग

जिह्वाकंठविशोधनं तदनु च स्याच्छृंगवेरान्वितं सिंधूत्थं हित-
मत्र चाथ मधुना शस्तो रसो दाडिमः । अग्न्युद्बोधकराण्यजी-
र्णशमनान्याहुस्तथा भेषजान्यन्नारोचकहृत्प्रयोगमसकृत्त-
त्प्रदेयानि च ॥

अर्थ—प्रथम जिह्वा और कंठ इन को शुद्धि करनेवाली औषध लेकर फिर अदरक और सेंधा निमक खाय अथवा अनारदाना और सहत खाय तथा अग्नि प्रदीप्त करने-
वाली और अजीर्णनाशक औषध सेवन करने से अरुचि रोग दूर होय ॥

दाडिमचूर्ण

द्वे पले दाडिमादष्टौ खंडाब्जोपात्पलत्रयम् । त्रिसुगंधिपलं चैकं
चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ दीपनं रोचनं हृद्यं पीनसश्वासकासजित् ॥

अर्थ—अनारदाना ८ तोले, मिश्री ३२ तोले, सोंठ, मिरच, पीपल ये चार २
तोले, दालचीनी, इलायची और पत्रज ये ४ तोले इन सब को एकत्र चूर्ण करके
खाय यह दीपन, रोचन और हृदय को हितकारी है तथा पीनस, श्वास और सांसी
इन को नाश करे ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः । मरिचं दीप्यकं चैव
वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् ॥ एलालवंगशाळूकदधित्यं चेति का-
पिकम् । प्रदेयं चातिशुद्धायाः शर्करायाश्चतुः पलम् ॥ चूर्ण-
मग्निप्रसादः स्यात्परमं रुचिवर्धनम् । ष्टीहकार्श्यमथाशांसि
श्वासं शूलं ज्वरं वमिम् ॥ निहंति दीपयत्याग्निं बलवर्णरुचि-
प्रदम् । वातानुलोमनं हृद्यं जिह्वाकंठविशोधनम् ॥

अर्थ—पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, काली मिरच, अजमायन, अमल-
वेत, डासरा, इलायची, लौंग, जाफळ और कैय ये एक एक तोला, मिश्री १६
तोले इन को कूट पीस चूर्ण बनाये यह अग्नि को प्रदीप्त करता, रुचिकारी तथा ष्टीह,

कार्य (कृशता), बवासीर, श्वास, शूल, ज्वर और वमन इन को दूर करे तथा वायु का अनुलोमन करे अर्थात् बिगड़ी हुई वायु को शुद्ध करे और हृदय, जीभ और कंठ इन को शुद्ध करे है ॥

छत्रादिचूर्ण

छत्राबीजं तिन्तिडीकं द्राक्षा दाडिमजीरकम् ।

सौवर्चलं गुडं क्षौद्रं सर्वारोचकनाशनम् ॥

अर्थ—आंवले, इमली, दाख, अनारदाना, जीरा, संचरनिमक, गुड और सहत इन सब को एकत्र करके सेवन करे तो अरुचि को नाश करे ॥

अम्लिकादिपेय

सौवर्चलं गुडं क्षौद्रं सर्वारोचकनाशनम् ॥

अर्थ—संचरनिमक, गुड और सहत इन सब को मिलायके सेवन करे तो सर्व प्रकार का अरुचिरोग दूर हो ॥

शुंघ्यादिचूर्ण

त्रुटित्वक्केसरं पुष्पं वल्लिजं सकणौपधम् । समखंडं भागवृद्धं

चूर्णितं भक्षयेद्गदी ॥ श्वासकासप्रसेकेषु हृत्पार्श्वरुचिजे गदे ।

गलामये प्रशस्तं च मुखपाकविधौ हितम् ॥

अर्थ—इलायची, दालचीनी, नागकेशर, लौंग, काली मिरच, पीपर और सोंठ ये पदार्थ एक से दूसरा वृद्धि के क्रम से लेवे. तथा सब चूर्ण के समान मिश्री मिलावे इस चूर्ण को सेवन करे तो श्वास, खांसी, मुख से पानी का छूटना और हृदय, पार्श्व, अरुचि, गले का रोग और मुखपाक (छाले) इन सब रोगों को दूर करे ॥

त्र्यूपणादिवटी

त्र्यूपणकपित्थशर्करारोचकेन च साधयेद्गदी ।

सेविता च सा जायते जरो भीमसेनवद्भक्षयेच्छालसः ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, कैथ, मिश्री और संचरनिमक इन की गोली बनायके खाये तो वृद्धावस्था दूर हो तथा भीमसेन के समान भूख लगे ॥

अमृतप्रभावटी

मरिचं पिप्पलीमूलं लवंगं च हरीतकी । यवानी तिन्तिडीकं च

दाडिमं लवणत्रयम् ॥ एतानि पलमात्राणि मागधीक्षारचित्र-

कम् । त्रिजाजिनागरं धान्य एला धात्रीफलं समम् ॥ एतान्द्रि-
पलिकान् भागान् भावयेद्वीजपूरकैः । भावनात्रितयं दत्त्वा गुटि-
कां कारयेद्बुधः ॥ छायाशुष्कां प्रकुर्वीत अजीर्णस्य प्रज्ञांतये ।
अग्निं च कुरुते घोरं गुटिका चामृतप्रभा ॥

अर्थ—मिरच, पीपलामूल, लौंग, हरड, अजमायन, इमली, अनारदाना, विडनि-
मक, कचिया निमक और साह्वर ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इन सब का चूर्ण
करके इस में बिजोरे के रस की तीन भावना देकर गोली बनाय ले इन को छाया
में सुखायके देवे तो अजीर्ण को नष्ट करे. तथा अग्नि को बढावे इस को अमृतप्रभा
गुटिका कहते हैं ॥

आकलकादिचूर्ण

आकलकं सेंधववह्लिशुंठीधात्र्यूपणं दीप्यसमांशपथ्या । असेन
भाव्यं फलपूरकेन मंदानलत्वे ह्यमृतप्रभेयम् ॥ कासे गैलीमये
श्वासे प्रतिश्याये च पीनसे । अपस्मारे तथोन्मादे सन्निपाते
सदा हिता ॥

अर्थ—अकरकरा, सेंधानिमक, चीता, सोंठ, आंवले, काली मिरच, अजमायन
और हरड ये बराबर लेवे इन सब का चूर्ण करके बिजोरे के रस की भावना देवे तो
यह मंदाग्नि रोगपर अमृतप्रभा चूर्ण बने यह खांसी, कंठ के रोग, श्वास, सरकमा,
पीनस, अपस्मार (मृगी) उन्माद और सन्निपात रोग इनपर सदैव हित है ॥

लवणार्द्रकयोग

भोजनादौ सदा पथ्यं लवणार्द्रकभक्षणम् ।

रोचनं दीपनं वह्लेर्जिह्वाकंठविशोधनम् ॥

अर्थ—भोजन करने के थोड़ी देर पहले सेंधानिमक और अदरस को मिलायके
खाने से रुचि करे, अग्नि को दीपन करे तथा जीभ और कंठ को शोधन करे ॥

शृंगवेरादिलेह

शृंगवेररसं चापि मधुना सह योजयेत् ।

अरुचिश्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥

अर्थ—अदरस के रस में सहत डालके देवे तो अरुचि, श्वास, खांसी, पीनस
और कफ के विकारों को नष्ट करे ॥

त्वङ्मुस्तादिचूर्ण

त्वङ्मुस्तमेलाधान्यानि मुस्तामामलकत्वचा । त्वक् च दावी
यवान्याश्च पिप्पली तेजवत्यपि ॥ यवानी तित्तिडीकं च पंचैते
मुखशोधनाः । श्लोकपादैरभिहिताः सर्वारोचकनाशनाः ॥

अर्थ—दालचीनी, नागरमोथा, इलायची, धनिया अथवा नागरमोथा, आंवले, दालचीनी, दारुहलदी, अजमायन अथवा पीपर और जलपीपर अथवा अजमायन और इमली ये पांच योग मुख की शुद्धि और अरुचि इन को नाश करे ॥

दाडिमरस

विडंगचूर्णसंयुक्तो रसो दाडिमसंभवः ।

असाध्यामपि संहन्यादरुचिं वक्रधारितः ॥

अर्थ—अनारदाने के रस में वायुविडंग का चूर्ण डालके इस रस को मुख में रखे तो असाध्य भी अरुचि का रोग नष्ट होवे ॥

जीरकादिचूर्ण

अजाजिनिष्कमात्रं च कर्पूरकं सितशर्करा ।

पलं क्षौद्रेण संयुक्तं पीतं रुचिकरं मुखे ॥

अर्थ—जीरा ४ मासे और मिश्री १ तोला दोनों को एकत्र करके और सहत ४ तोले मिलायके मुख में रखे तो यह रुचि को प्रगट करे ॥

कपित्थादिचूर्ण

कपित्थमज्जात्रिकटुचूर्णं क्षौद्रसितायुतम् ।

अरोचकेषु सर्वेषु प्रशस्तं धारयेन्मुखे ॥

अर्थ—कैथ का गूदा, सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण सहत और मिश्री में मिलायके मुख में रखे तो सर्व अरुचि पर उत्तम है ॥

शुंघ्यादिगुटी

शुंघ्येकभागा द्विगुणा च कृष्णा निशोत्र पथ्या त्रिगुणा तथा

च । सार्धैकभागामलकी च तीक्ष्णं चतुर्गुणं सैधवमम्लमर्द्यम् ॥

शाणैकमात्रा गुटिका निपेठ्या निहंति मंदानलजं प्रकोपम् ॥

अर्थ—सोंठ १, पीपल २, निसोय ३, हरड ३, आंवला १॥, मिरच ४ और सैधानिमक ४ भाग लेवे. इन सब का चूर्ण करके नींबू के रस में खरल करे फिर चार २ मासे की गोली बनावे ये गोली मंदाग्नि को नष्ट करे है और रुचि प्रगट करे ॥

अरुचि रोग में पथ्य

वस्तिर्विरेको वमनं यथावलं धूमोपसेवा कवलग्रहस्तथा । ति-
क्तानि काष्ठानि च दंतघर्षणे चित्रान्नपानानि हितैः कृतान्यपि ॥
गोधूममुद्गाढकिशालिपष्टिकामांसं वराहालिशशैणसंभवम् । वे-
गो झषांडं मधुरालिकेलिशः प्रोष्ठी खलेशः कवची च रोहितः ॥
कर्कारुवेत्रायनवीनमूलकं वार्त्ताकसौभांजनमोचदाडिमम् ।
भव्यं पटोलं रुचकं पयो घृतं बालानि तालानि रसो-
नसूरणम् ॥ द्राक्षा रसालं ललदंबु कांजिकं मद्यं रसालां दधि
तक्रमाद्रकम् । कंकोलखजूरप्रियालतिंदुकं पक्वं कपित्थं बदरं
विकंकतम् ॥ तालास्थिमज्जाहिमवालुकासितापथ्यायवानी-
मरिचानि रामठम् । स्वाद्मलतिक्तानि च देहमार्जनं वर्गो-
यमुक्तोऽरुचिरोगिणां हितः ॥

अर्थ—रोगी के बलानुसार वस्तिकर्म, विरेचन, वमन का करना तथा धूमपान
मुख में औषध का कवल रखना तथा कडुए काष्ठ की दांतन करना और अनेक
प्रकार के हितकारी ऐसे अन्न, पान, गेहूँ, मूँग, अरहर, शालीधान, सांठी चावल और
बुअर, बकरा, शशा, काला मृग इन का मांस, चेकु जात की मछली, झषांड, मधु-
तालिका, इल्लिश, प्रोष्ठी, खलेश, कवची और रोहू इतने प्रकार की मछली. लाल
जात की घीया, वेत की आगे की कोपल, नई कोमल मूली, बैगन, सहजना, केला,
अनार, भव्य, परवल, सैधा निमक, दूध, घी, कोमल ताल के फल, लहसन, जमी-
रुंद, दाख, आम, खस का अथवा क्षरने का वहता हुआ जल, कांजी, मदिरा (दाह),
सिखरन, दही, छाछ, अदरक, कंकोल, खजूर, चिरोंजी, तेदू (अथवा टेडस का
साग), पका कैथ फा फल, बेर, विकंकत (कटाई), ताड के भीतर की गिरी,
शीतल बाहू, मिश्री, हरड, अजमायन, काली मिरच, हीग, स्वादिष्ठ (मीठे), खट्टे
और कडुए रस तथा स्नान ये सब अरुचि रोगवाले को पथ्यवर्ग कहा है ॥

अरुचिपर अपथ्य

तृष्णोद्गारक्षुधानेत्रवारिवेगविधारणम् । अहृद्यान्नमसृङ्मोक्षं
क्रोधं लोभं भयं शुचम् ॥ दुर्गंधारूपसेवां च न कुर्यादरुचौ नरः ॥

अर्थ—प्यास, डकार, भूख और रुदन इन के वेग को रोकना, अप्रिय अन्न का भोजन, फस्त खोलना, क्रोध, लोभ, भय, शोक, दुर्गंध और कुरूप पदार्थों का देखना ये अरुचि रोगवाले को सेवन नहीं करने चाहिये ॥

इति श्रीघृहनिघण्टुरत्नाकरे अरुचिरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

छर्दिरोगकर्मविपाकः ।

यो ब्राह्मणाय केशकीटकाकसारमेयाद्युपहतमन्नं

जानन्नेव प्रमादात्प्रयच्छति स च्छर्दिमानन्यजन्मनि ॥

अर्थ—जो प्राणी ब्राह्मण के अर्थ घाल, कीट, कौआ और कुत्ता इन से विगड़े हुए अन्न को अर्थात् निषिद्ध अन्न को उन्मत्तपने से जान कर जो देता है वह दूसरे जन्म में वमन रोग करके पीडित होय ॥

अन्यच्च

विश्वासघातकी च्छर्दियुक्तो भवति तद्रुपशांतये

पंचाशद्ब्राह्मणभोजनं कारयेत् । अन्नदानं च यथा-

शक्त्या आज्ययुक्तं च कुर्यात् । तेनोपशांतिर्भवति ॥

अर्थ—जो प्राणी विश्वासघात करे है वह वमनरोग से पीडित होता है उस को उस दोष के दूर करने को पचास ब्राह्मणों को भोजन करावे और घृतयुक्त अन्न का दान करे तो यह रोग शांत होय ॥

ज्योतिषशास्त्राभिप्राय

रिपुस्थाने यदा स्यातां चंद्रशुक्रौ ततो भवेत् । छर्दिमान्मनु-

जस्तृष्णापक्षं वा इव लोकिते ॥ क्षीणचंद्रावलोकी तु पृष्ठस्थान-

स्थितो बुधः ॥ शुक्रवाधोपशांतये बुधस्य पूर्वोक्तमेव सकलं

जपादि विदध्यात् ॥

अर्थ—जन्म के समय छठे स्थान में चंद्रमा और शुक्र पड़े हों अथवा इन की दृष्टि होवे तो वह वमनरोगी होय अथवा तृष्णा (प्यास) रोगी होवे अथवा छठे स्थान में बुध पड़ा होवे और उस को क्षीणचंद्रमा पूर्ण दृष्टिसे देखता होय तो यत्ति अथवा तृष्णारोगी होय उस को शुक्र और बुध इन की शांति करने को पूर्वोक्त जपादिक संपूर्ण करे ॥

छादिनिदान संप्राप्ति व लक्षण

दुष्टदोषैः पृथक् सर्वैर्बीभत्सालोकनादिभिः । छर्दयः पंच विज्ञेयास्तासां लक्षणमुच्यते ॥ अतिद्रवैरतिस्निग्धैरह्वैर्लवणैरपि । अकाले चातिमात्रैश्च तथा सात्म्यैश्च भोजनैः ॥ श्रमाद्भयात्तथोद्वेगादजीर्णात्कृमिदोषतः । नार्याश्चापन्नसत्त्वायास्तथातिद्रुतमश्रतः ॥ बीभत्सैर्हेतुभिश्चान्यैर्द्रुतमुत्केशितो वलात् । छादयन्नाननं वैगैर्दयन्नङ्गभञ्जनैः ॥ निरुच्यते छादिरिति दोषो वक्रं प्रधावति ॥

अर्थ-दुष्ट हुए पृथक् और सब दोषों करके तथा दुष्ट वस्तुके देवने से आदिशब्द-करके दुष्ट गंध के सूंघने से पांच प्रकार की छादि जाननी अर्थात् जिस को रद्द धमन, उलटी कहते हैं उस के लक्षण आगे कहते हैं. अत्यन्त पतले अथवा चिकने अह्वय (अप्रिय) वस्तु, खार के पदार्थ, इन के सेवन करने से, कुसमय भोजन करने से, अथवा अत्यन्त भोजन करने से, अथवा जो न पचे ऐसे भोजन करने से, श्रम, भय, उद्वेग, अजीर्ण, कृमिदोष इन कारणों से गर्भिणी स्त्री के गर्भ की पीडासे तथा जल्दी जल्दी भोजन करने से और बीभत्स (खोटे) कारणों से जैसे विषा, राध, आदि का देसना इन से तीनों दोष कुपित हो चल से मुख को आच्छादन करे और अंगों को पीडा कर मुखद्वारा भोजन हुआ सब निकाल देय इस को (छादि) उलटी ऐसे मनुष्य कहते हैं. इस जगह उदान वायु वमन कराती है ॥

पूर्वरूप

हृत्सासोद्गारसंरोधैः प्रसेको लवणस्तनुः ।

द्वेषोन्नपाने च भृशं वमीनां पूर्वलक्षणम् ॥

अर्थ-हृदय से खारा, खट्टा, प्रथमही निकले अथवा सूती रद्द होय, डकार आवे नहीं, खार गिरे, खारी मुख हो जाय, अन्न और पानी से अत्यन्त अरुचि होय ये छादि (छाट) के पूर्वरूप हैं ॥

वातछादिलक्षण

हृत्पार्श्वपीडामुखशोषशीर्षनाभ्यर्तिकासस्वरभेदतोदैः । उद्गारशब्दं प्रवलं सफेनं विभिन्नकृष्णं तनुकं कपायम् ॥ कृच्छ्रेण चालपं महता च वेगेनाऽतोऽनिलाच्छर्दयतीह दुःखम् ॥

अर्थ-हृदय और पसवाडे में पीडा होय, मुखशोष, मस्तक और नाभि इन में शूल होय, खांसी, स्वरभेद, सुई चुभने की सी पीडा होय, डकार का शब्द प्रबल होय, वमन में ज्ञाग आवे, ठहर २ कर वमन होय, तथा थोड़ी होय, वमन का रंगकाला हो पतली और कसेली होय, वमन का वेग बहुत होय, परंतु वमन थोडा होय अ वेग-के प्रभाव से दुःख बहुत होय ये लक्षण वायु की छर्दि के हैं ॥

सैधवयोग

सैधवं सर्पिषा पीतं वातच्छर्दिनिवारणम् ॥

अर्थ-यी में सैधा निमक डालके पीवे तो वादी की छर्दि रोग दूर हो ॥

लवणत्रययोग

लवणत्रयसंयुक्तं संयुक्तं लवणेन वा ।

हन्यात्क्षीरोदकं पीतं छर्दिं पवनसंभवाम् ॥

अर्थ-सैधानिमक, विडनिमक, कचियानिमक इन के साथ अथवा केवल निमक को दूध और जल में मिलायके पीवे तो वादी से प्रगट हुई छर्दि को नष्ट करे ॥

धान्याकशूप

धान्याकविश्वदशमूलकपायसिद्धान् यूपान् रसान् पवनवम्य-
रुचिप्रशांत्यै । पीत्वा सुखानि लभते मधुमिश्रितं वा शंखाह्व-
यास्वरसमूपणचूर्णयुक्तम् ॥

अर्थ-धानिया, सोंठ और दशमूल इन के काढे, मंड अथवा रस ये वादी की छर्दि तथा वादी की अरुचि इन की शांति करने को लेय तो सुख होय अथवा शंखाह्वली के रस में सहत और काली मिरचों का चूर्ण डालके देवे तो सुप्त होय ॥

पित्तच्छर्दिलक्षण

मूर्च्छापिपासामुखशोपमूर्धताल्वक्षिसंतापतमोभ्रमार्तः ।

पीतं भृशोष्णं हरितं सतिक्तं धूम्रं स पित्तेन वमेत्सदाहम् ॥

अर्थ-मूर्च्छा, प्यास, मुखशोष, मस्तक, तलुआ, नेत्र इन में सन्ताप अर्थात् तपायमान रहें, अंधेरा आवे, चक्कर आवे, रोगी पीला गरम हारा कडुआ धूर्मा के रंग का और दाहयुक्त ऐसा पित्त को वमन करे यह पित्त की छर्दि का लक्षण है ॥

तंदुलजलपान

पित्तच्छर्दिर्ब्रजेदूर्वातंदुलोदकदानतः ।

धात्रीरसेन वा पीताः सितालाजाश्च प्रंति ताम् ॥

अर्थ—चावल के घोवन के जल में दूध का रस ढालके पीवे तो अथवा आवले कारस, मिश्री और खील इन को एकत्र करके सेवन करे तो पित्त की छर्दि दूर हो ॥

लाजादियूप

लाजामसूरयवमुद्गकृता यवागूश्छर्द्या हिता मधुयुता बहुपित्तजायाम् । यूपाः सुगंधिमधुतित्तरसाः प्रयुक्ता मृष्टृष्टलो-
ष्टभवमंबु हितं तृपायाम् ॥

अर्थ—खील, मसूर, जौ और मूंग इन की यवागू बनाय उस में सहत ढालके पीवे तो अत्यंत पित्त से जो छर्दि होती है वह दूर होय अथवा सुगंधित पदार्थ, सहत और कडुए रस इन करके युक्त जो मंड वह भी उत्तम है तथा मिट्टी के डेले को आग्नि में ढाल करके जल में बुझाय देवे यह जल प्यास में उत्तम है ॥

पर्पटादिकाढा

क्वाथः पर्पटजः पीतः सक्षौद्रः शिशिरीकृतः ।

पित्तच्छर्दिशिरस्तापचक्षुर्दाहानपोहति ॥

अर्थ—पित्तपापडे के काढे को शीतल कर सहत ढालके पीवे तो पित्त की छर्दि, मस्तक की गरमी, नेत्रों का दाह इन को दूर करे ॥

मक्षिकाविडवलेह

सिताचंदनमध्वाढ्यं विलिहेन्मक्षिकाशकृतम् ।

सोपद्रवा पित्तभवा च्छर्दिरेतेन शाम्यति ॥

अर्थ—मिश्री, चंदन और सहत इन के बराबर मक्खी की बीट लेवे सब को एकत्र करके चाटे तो उपद्रवयुक्त भी पित्त की छर्दि शांत होवे ॥

गुडूच्यादिकाढा

गुडूचीत्रिफलारिष्टपटोलैः कथितं जलम् ।

क्षौद्रयुक्तं निहंत्याशु च्छर्दिं पित्तसमुद्भवाम् ॥

अर्थ—गिलोय, त्रिफला, नीम की छाल और पटोलपत्र इन के काढे में सहत ढालके पीवे तो पित्त की छर्दि का नाश होवे ॥

लाजसक्तुपान

सर्पिःक्षौद्रसितोपेतान् लाजसक्तून् लिहेत्ततः ।

पित्तच्छर्दिश्च तेनाशु प्रशाम्यति सुदुस्तरा ॥

अर्थ—खीलों का चूर्ण, घी, मिश्री और सहत इन सब को एकत्र करके चाटे तो घोर दुस्तर पित्त की छर्दि शांत होवे ॥

कफछर्दिलक्षण

तंद्रास्यमाधुर्यकफप्रसेकं संतोपनिद्राऽरुचिगौरवार्तः ।

स्निग्धं घनं स्वादु कफाद्विशुद्धं सरोमहर्षोऽल्परुजं वमेत्तु ॥

अर्थ—तन्द्रा, मुख में मिठास, कफ का पडना, संतोप, अन्न में अरुचि, निद्रा, अरुचि, भारीपना इन से पीडित हो. चिकना, गाढा, मीठा, सफेद ऐसे कफ को वमन करे. जब रह करे तब पीडा थोडी होय, रोमांच होय ये कफकी छर्दि के लक्षण हैं ॥

सामान्यचिकित्सा

छर्द्या कफोद्भवायां तु वमनं कारयेद्विपक्व । तोयैः सर्पपसिंधू-

त्थराठनिवकणायुतैः ॥ शस्यंते शालिगोधूमयवमुद्गमकुष्ठकाः ।

पट्टिकास्तत्र यूषश्च पटोल्याद्याश्च भोजनम् ॥

अर्थ—कफ से उत्पन्न हुई छर्दिरोगपर सरसों, सेंधानिमक, मैनफल, नीम की छाल और पीपल इन के काटे से वमन करावे और शालिचावल, गेहूं, जौ, मूंग, मोर और साठी चावल इन के बने पदार्थ और मंड, परवल इत्यादिक भोजन में देवे ॥

शालिभक्त

आरक्तशालिभक्तं गोदधिर्शर्कराविमिश्रं च ।

कुर्याद्भोजनमेतत्कफच्छर्दिच्छिदं जंतोः ॥

अर्थ—छाल चावलों का भात, गौ का दही और मिश्री इन का भोजन करे तं उपद्रवयुक्त कफ की छर्दि शांत होवे ॥

विडंगादिचूर्ण

विडंगान्निफलाव्योपचूर्णं मधुयुतं लिहेत् ।

शाम्यत्यनेन कफजा छर्दिः सोपद्रवा नृणाम् ॥

अर्थ—वायविडंग, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल इन के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो उपद्रवयुक्त भी कफ की छर्दि शांत होवे ॥

जांबवादियोग

सजांबवं वादरचूर्णमम्लं मुस्तायुतं कर्कटकं सशृंगि ।

दुरालभा वा मधुना च युक्ता लिह्यात्कफच्छर्दिविनिग्रहार्थम् ॥

अर्थ-जामुन, बेर, बिजौरा और नागरमोथा इन का चूर्ण ईख के रस में मिला-यके देवे अथवा काकडासिंगी और धमासा इन का चूर्ण सहत में मिलायके चाटे तो कफ की छादिं को बंद करे ॥

सन्निपातच्छदिंलक्षण

शूलाविपाकारुचिदाहृत्पणाश्वासप्रमोहप्रबलाप्रसक्तम् ।

छदिंस्त्रिदोपालवणाम्लनीलं सांद्रोष्णरक्तं वमतां नृणां स्यात् ॥

अर्थ-शूल, अजीर्ण, अरुचि, दाह, प्यास, श्वास, मोह इन लक्षणों से प्रबल हुई जो वमन से सन्निपात से होय है. रद्द करनेवाले की वमन खारी, खट्टी, नीली, संघट्ट (जिस को देशवारी मनुष्य जाडी कहे हैं), गरम, लाल ऐसी होय है ॥

विल्वादिकाढा

विल्वत्वचो गुडूच्या वा काथः क्षौद्रेण संयुतः ।

जयेत्रिदोपजां छादिं पपटः पित्तजां तथा ॥

अर्थ-बेल की छाल का अथवा गिलोय का काढा सहत डालके पीवे तो त्रिदोप की छादिं को नाश करे अथवा पित्तपापडे के काढे को पीवे तो पित्तकी छादिं दूर हो ॥

कोलाद्यवलेह

कोलामलकमज्जानौ मक्षिकाविट् सिता मधु ।

सकृष्णातंदुलो लेहश्छदिंमाशु व्यपोहति ॥

अर्थ-बेर और आंवला इन की मज्जा (गुठली), मक्खी की विष्टा, मिश्री, सहत, पीपल, चांवलों का धोवन इन की बनी हुई अवलेह छादिं को तत्काल दूर करे ॥

सुरसापान

सुरसास्वरसैर्युक्तं तृटिका मर्दिता भृशम् ।

वांतिं शमयाति क्षिप्रं वातपित्तकफोद्भवाम् ॥

अर्थ-तुलसी के स्वरस में छोटी इलायची का चूर्ण डालके पीवे तो इस प्राणी की वातपित्तकफ की वांति शमन होवे ॥

मनःशिलादियोग

मनःशिलामागधिकोपणानां चूर्णं कपित्थाम्लरसेन युक्तम् ।

लाजैः समांशैर्मधुनावलीढं छादिं प्रसक्तामसकृन्निहंति ॥

अर्थ—मनसील, पीपल और काली मिरच ये समान भाग ले और इन को बराबर ३ भाग खीलों का चूर्ण ले सब को एकत्र कर कैथ के और बिजैरे के रस में सहत मिलायके चाटे तो तत्काल छर्दि को बंद कर देवे ॥

अश्वत्थवल्कलादियोग

अश्वत्थवल्कलं शुष्कं दग्धं निर्वापितं जले ।

तज्जलं पानमात्रेण छर्दिं जयति दुर्जयाम् ॥

अर्थ—पीपल की छाल को जलाय के भस्म कर लेवे. फिर इस राख को जल में गेर नितारके छान लेवे. इस जल के पीते ही दुर्जय छर्दि भी नष्ट होय ॥

लाजादियोगत्रय

लाजाकपित्थमधुमागधिकोपणानां क्षौद्राभयात्रिकटुधान्यकजी-
रकाणाम् । पथ्यामृतामरिचमाक्षिकपिप्पलीनां लेहास्त्रयः स-
कलवम्यरुचिप्रशांत्यै ॥

अर्थ—खील, कैथ, सहत, पीपल और काली मिरच इन का अवलेह उसी प्रकार सहत, हरड, त्रिकुटा, धनिया और जीरा इन का अवलेह तथा हरड, गिलोय, काली मिरच, सहत और पीपल इन का अवलेह ये तीन योग सर्व प्रकार की वमन और अरुचि इन को शांत करनेवाले हैं ॥

धात्रीफलपान

पिष्ट्वा धात्रीफलं द्राक्षां शर्करां च पलोन्मिताम् । दत्त्वा मधु-
पलं चैव कुडवं सलिलस्य च ॥ वाससा गालितं पीतं हंति
छर्दिं त्रिदोषजाम् ॥

अर्थ—आंवले, दात, मिश्री और सहत ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इन को ६४ तोले जल में डालके खूब मसलके कपडे में छान ले फिर इस को पीवे तो त्रिदोष की छर्दि दूर होवे ॥

मसूरसक्तु

मसूरसक्तवः क्षौद्रमर्दिता दाडिमांभसा ।

पीता निवारयंत्याशु छर्दिं दोषत्रयोद्भवाम् ॥

अर्थ—मसूर और सक्तु तथा सहत इन को अनार के रस में मिलायके देवे त्रिदोष की छर्दि को निवारण करे ॥

एलायचूर्ण

एलालवंगगजकेसरकोलमज्जालाजाप्रियंगुधनचंदनपिप्पलीनाम् ।
चूर्णं सितामधुयुतं मनुजो विलिह्य छर्दिं निहंति कफमारुत-
पित्तजाताम् ॥

अर्थ—इलायची, लोंग, नागकेशर, बेर की गुठली, खील, फूलप्रियंगु, नागरमोथा, चंदन और पीपल इन के चूर्ण में मिश्री और सहत मिलायके चाटे तो कफ, वादी और पित्तकी छर्दि को दूर करे ॥

पद्मकादिघृत

पद्मकामृतनिधानां धान्यचंदनयोः पचेत् ।

कल्के काथे च हविपः प्रस्थं छर्दिनिवारणम् ॥

अर्थ—पद्मास, गिलोय, नीम की छाल, धनिया और चंदन इन के काढे में अथवा कल्क में ६४ तोले घी मिलायके सिद्ध करे तो यह घी छर्दि को दूर करे ॥

चंदनादिपान

चंदनं च मृणालं च बालकं नागरं वृषम् ।

सतंदुलोदकक्षौद्रैः पीतः कल्को वर्मि जयेत् ॥

अर्थ—चंदन, कमलकंद, नेत्रवाला, नागरमोथा और अहूसा इन को चावलों के जल में पीसके और उस में सहत ढालके पीवे तो छर्दि (उलटी) का होना दूर होवे ॥

उदीच्यजल

सोदीच्यगैरिकं देयं सेव्यं वा तंदुलांबुना । जातीपत्र-

रसं कृष्णा मरिचं शर्करान्वितम् ॥ एतानि मधुयुक्तानि

घ्नन्ति छर्दिं चिरोद्भवाम् ॥

अर्थ—नेत्रवाला और गेरू इन को चावल के धोवन में पीस सहत ढालके पीवे अथवा चमेली के पत्तों के रस में पीपल, मिरच इन का चूर्ण, सहत और मिश्री ढालके पीवे तो बहुत दिन की छर्दि दूर होवे ॥

चंदनपान

चंदने ह्यक्षमात्रे च संयोज्यामलकीरसम् ।

पिवेन्माक्षिकसंयुक्तं छर्दिरतेन निवार्यते ॥

अर्थ-१ तोले चंदन का चूर्ण कर उस में आवले का रस और सहत डालके पीवे तो यह होती हुई वमन को बंद कर देवे ॥

मुद्रकाढा

कपायो भृष्टमुद्गानां सलाजमधुशर्करः ।

छर्वतीसारदाहघ्नो ज्वरघ्नः संप्रकाशितः ॥

अर्थ-भूने हुए मूंगों का काढा, खील और सहत तथा मिश्री मिलायके पीवे तो वमन, अतिसार, दाह और ज्वर इन को दूर करे ॥

कोलमज्जा

कोलमज्जाकणावर्हिपक्षभस्म सशर्करम् ।

मधुना लेहयेच्छर्दिहिक्काकोपस्य शांतये ॥

अर्थ-बेर की गुठली की मिर्गी, पीपल, मोर के पंख की राख, मिश्री, सहत इन सब को एकत्र करके चाटे तो वमन का होना और हिचकी इन के कोप को शांत करे ॥

बीजपूरादिपुटपाक

बीजपूराभ्रजंबूनां पल्लवानि जटाः पृथक् । विपचेत्पुट-
पाकेन क्षौद्रयुक्तश्च तद्रसः ॥ छर्दिं निवारयेत्सद्यः सर्व-
दोषसमुद्भवाम् ॥

अर्थ-बिजौरा, आम, जामुन इन के पत्ते अथवा इन की जड़ को पुटपाक विधि से पक करके इन का रस सहतयुक्त सत्रिपात की छर्दिं को शीघ्र निवारण करे ॥

हरीतकीचूर्ण

हरीतकीनां चूर्णं तु लिह्यान्माक्षिकसंयुतम् ।

अधोभागीकृते दोषे छर्दिस्तेन निवार्यते ॥

अर्थ-हरड के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो दोष (वात कफ) के अधोभाग जाने से वमन का होना बंद होय ॥

मृद्भृष्टलोष्टप्रभवं सुशीतं सलिलं पिबेत् ॥

अर्थ-मिट्टी के डेले को आग में तपायके जल में सुहावे जब वह जल शी हो जावे तब पीवे तो छर्दि बंद होय ॥

जंवात्रपल्लवरस

जंवात्रपल्लवोशीरवटशृंगावरोहजः । काथः क्षौद्रयुतः
शीतः पीतो वा विनियच्छति ॥ छर्दिं ज्वरमतीसारं
मूर्च्छां तृष्णां च दुर्जयाम् ॥

अर्थ-जामुन, आम इन के नवीन पल्लव (पत्ते), रस, बड़ की कली, अथवा पल्लव इन का काटा करे जब शीतल हो जावे तब शीतल करके सहत मिठायके पीवे तो घमन, ज्वर, आतिसार, मूर्च्छा और तृषा ये दुर्जय होय तो भी इन का नाश होय ॥

हिंवादिपान

हिंयुना सारिवामूलं सर्ववांतिहरं परम् ।
जातीफलं वमौ शोपे जागरे विप्रयोजयेत् ॥

अर्थ-सारिवा की जड़ को हींग में मिठायके पीसे इस के सेवन से सर्ष प्रकार की घमन नाश करे अथवा जायफल घमन, शोष और जागरण इन पर उत्तम है ॥

उग्रगंधादियोग

उग्रगंधारनालेन पीता छर्दिं निवारयेत् ॥

अर्थ-वच को पीसके कांजी में मिठायके पीवे तो छर्दि को बंद करे ॥

सामान्यचिकित्सा

आमाशयोत्क्लेशभवा हि सर्वाः स्युश्छर्दयो लंघनमेव तस्मात् ।

प्रकारयेन्मारुतजां विना तु संशोधनं वा कफपित्तहारि ॥

अर्थ-आमाशय के उत्क्लेशित होने से संपूर्ण वांति उत्पन्न होती है, इस वारते लंघन करे. परंतु वातजन्य वांती के विना लंघन करे अथवा घमन विरेचन द्वारा देह को शुद्ध करे तो यह कफ और पित्त का नाश करे ॥

हितं न लंघनं पुरा वमोषु मारुताभिधे ।

अथापि वामयेदमुं विरेचयेद्यथार्हतः ॥

अर्थ-वादी की घमन पर प्रथम लंघन नहीं करने. किंतु उस रोगी को उलटी करानेवाली और दस्त लानेवाली औषध देवे ॥

जातीपत्रचूर्ण

जातीपत्ररसं कृष्णा मरिचं शर्करान्वितम् ।

एतानि मधुयुक्तानि घृति छर्दिं चिरोद्भवाम् ॥

अर्थ—चमेली के पत्तों का रस, पीपल, काली मिरच, मिश्री और सहत इन को एकत्र करके देवे तो बहुत दिन की भी वांति का नाश होय ॥

असाध्यच्छर्दिलक्षण

विट्स्वेदमूत्रांबुवहानि वायुः स्रोतांसि संरुद्धय यदोर्ध्वमेति ।
उत्पन्नदोपस्य समाचितं तं दोषं समुद्भूय नरस्य कोष्ठात् ॥ वि-
ण्मूत्रयोस्तत्समगन्धवर्णं तृदश्वासकासारित्युतं प्रसक्तम् । प्रच्छ-
र्दयेद्दुष्टमिहातिवेगात्तयार्दितश्चाशु विनाशमेति ॥

अर्थ—जिस समय यह वायु पुरीष, पसीना, मूत्र और जल इन के वहनेवाली नाड़ी के मार्ग को रोककर ऊपर आवे तब ऊपर आनेवाला दोष (मलमूत्रादि) को कोठे से बाहर निकाल वमन करावे, उस वमन में मलमूत्र की सी दुर्गंध आवे तथा वर्ण भी मलमूत्र के सदृश होय, प्यास, श्वास, खांसी और शूल ये होय और यह वमन वारंवार बड़े वेग से होय हैं इस वमन से पीडित मनुष्य थोड़े काल में नाश को प्राप्त हो, यह भी सन्निपात की है ऐसे कोई आचार्य कहते हैं और अन्य आचार्य कहते हैं कि सब छर्दि प्रबल हैं परंतु ऐसी छर्दि असाध्य है ॥

आगंतुकच्छर्दिलक्षण

बीभत्सजा दौर्हृदजाऽमजा च याऽसात्म्यजा वा कृमिजा च या
हि । सा पंचमी ताश्च विभावयेत्तु दोषोच्छ्रयेणैव यथोक्तमादौ ॥
शूलहृत्सासबहुला कृमिजा च विशेषतः । कृमिहृद्रोगतुल्येन
लक्षणेन च लक्षिता ॥

अर्थ—बीभत्स पदार्थ कहिये मल, राध, रुधिर आदि अपवित्र वस्तु के देखने से, गंध से, स्वाद से, स्त्री के गर्भ रहने से, आम से, असमान भोजन से अथवा कृमि-रोग से इन कारणों से प्रगट भई, आगंतुज पांचवीं छर्दि होय है. उस में पूर्वोक्त लक्षणों में से जिस दोष के अधिक लक्षण मिलें उसी दोष को प्रबल जाने. कृमि की छर्दि में शूल, सखी रद्द ये विशेष होते हैं और बहुधा कृमि और हृदयरोग इन के लक्षण सदृश लक्षण जानने. जैसे पिछाड़ी कह आये हैं. “ उत्क्लेदः छीयनं तोदः शूलं हृत्सासकस्तमः । अरुचिः श्याचनेत्रत्वं शोषश्च कृमिजे भवेत् ॥ ”

असाध्यलक्षण

क्षीणस्य या च्छर्दिरतिप्रसक्ता सोपद्रवा शोणितपूययुक्ता ।
सचंद्रिकां तां प्रवदेदसाध्यां साध्यां चिकित्सेन्निरुपद्रवां च ॥

अर्थ-क्षीण पुरुष की अथवा बारंबार एकसी होनेवाली और कासादि उपद्रवयुक्त और रुधिर राध मिली मोरचंद्रिका के समान ऐसी छर्दि असाध्य है और जो उपद्रव-पराहित हो उस को साध्य समझकर उपाय करे ॥

उपद्रव

कासश्वासौ ज्वरो हिक्का तृष्णा वैचित्यमेव च ।

हृद्रोगस्तमकश्चैव ज्ञेयाश्छर्दिरूपद्रवाः ॥

अर्थ-खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, प्यास, बेचेत, हृदयरोग, अंधेरा आना ये छर्दिरोग के उपद्रव हैं ॥

सामान्यचिकित्सा

बीभत्सनामबीभत्सैर्हेतुभिः संहरेद्भूमिम् ।

दौर्हृदोत्थां वामिं हृद्यैः कांक्षितैर्वस्तुभिर्जयेत् ॥

अर्थ-प्राणियों को घिनाने से अथवा दुष्ट पदार्थ के देखने से अथवा दुर्गंध के सूंघने से जो घमन होती होय उस को उत्तम स्वच्छता और पवित्रता आदि कारणों से दूर करनी चाहिये और स्त्रियों के जो दौर्हृद के कारण होती है उस को उत्तम हृदय को प्रिय सुंदर ऐसे पदार्थों के देने कके जीते ॥

लंघनैर्वमनैर्वापि सात्म्यैर्वासात्म्यसंभवाम् ।

कृमिहृद्रोगवच्चापि साधयेत्कृमिजां वमिम् ॥

अर्थ-जो वस्तु अप्रिय अर्थात् न रुचे उस से हुए छर्दिरोगको लंघन, वमन और अपनी प्रकृति को रुचे ऐसे पदार्थों करके जीते तथा कृमिरोग होने से जो छर्दि होवे वह कृमि और हृदयरोग इन के ऊपर जो उपचार कहे है उन उपचारों से बंद करे ॥

यथादोषं च विचरेच्छस्तं विधिमन्तरम् ।

पवनघ्नी चिरोत्थासु प्रयोज्या छर्दिषु क्रिया ॥

अर्थ-कहे हुए उपचार जैसे २ दोष होवे उसी २ के अनुसार विचारपूर्वक यत्न करे और जो बहुत दिनों का छर्दिरोग है उसपर वातनाशक उपचार करने चाहिये ॥

आम्रास्थिकाढा

आम्रास्थिविल्वनिर्व्यूहः पीतः समधुशर्करः ।

निहंति च्छर्द्यतीसारं वैश्वानर इवाहुतिम् ॥

अर्थ—आम की गुठली और बेलगिरी इन के काढ़े में सहत और मिश्री डालके देवे तो छर्दि, अतिसार इन को नष्ट करे जैसे अग्नि होमी हुई आहुति को नष्ट करे ॥

जबूपल्लवादिकाढा

जंन्वाम्रपल्लवशतं क्षौद्रं दत्त्वा सुशीतलं तोयम् ।

लाजैरवचूर्ण्य पिबेच्छर्द्यतिसारे परं सिद्धम् ॥

अर्थ—जामुन और आम इन दोनों के सौ कोमल २ पत्ते लें उन का काढ कर उस में खीलों का चूर्ण और सहत डालके पीवे तो वमन और अतिसार इन प हितकारी होय ॥

मयूरपक्षभस्मावलेह

मयूरपक्षं निर्दग्ध्वा तद्भस्म मधुमिश्रितम् ।

लीढं निवारयत्याशु च्छर्दिं सोपद्रवामपि ॥

अर्थ—मोर की पांख जलायके भस्म करे इस भस्म को सहत में मिलाय कर चाटे तो उपद्रवयुक्त भी छर्दि नष्ट होवे ॥

गोण्याद्यभस्मयोग

पुराणगोणिभस्मांभो मधुयुक्तं निपीय तु ।

छर्दिं छिनत्ति मनुजस्तृणान्येव हुताशनः ॥

अर्थ—पुरानी टाट की गोन (थैली) को जलाय ले इस भस्म को जल में मिलायके छान ले फिर सहत डालके पीवे तो छर्दि को नाश करे जैसे अग्नि तृणों को नाश करे ॥

पटोलाद्यघृत

पटोलशुंध्योः कल्काभ्यां केवलं कुलकेन वा ।

घृतप्रस्थं विपक्तव्यं कफपित्तवार्मि हरेत् ॥

अर्थ—परवल और सोंठ इन के कल्क के साथ अथवा केवल परवल के कल्क के साथ ६४ तोले घी को औटावे जब कल्क जलकर केवल घी मात्र शेष रहे तब घृतारके पीवे तो कफपित्त से प्रगट हुई वांति बंद होवे ॥

दधित्थरसादिलेह

दधित्थरससंयुक्तं पिप्पलीमाक्षिकं तथा ।

मुहुर्मुहुर्नरो लिह्याच्छर्दिभ्यः प्रतिमुच्यते ॥

अर्थ-कैय के रस में सहत और पीपल डालके बारंबार चाटे तो छर्दिरोग से छूट जावे ॥

रंभाकंदयोग

रंभाकंदरसो वापि मधुना छर्दिनाशकृत् ॥

अर्थ-केले के कंद के रस में सहत डालके पीवे तो यह छर्दिनाशक है ॥

करंजादिलेह

कोमलकरंजपत्रं सलवणमम्लेन संयुक्तम् ।

यः खादति दीनवदनो च्छर्दिकफौ तस्य कुत्रेह ॥

अर्थ-करंज के कोमल २ पत्ते, विजोरा और सेंधा निमक इन का कल्क करके खाय तो जो उलंठी करते २ दीनवदन हो गया हो उस के छर्दि और कफ कदाचित् नहीं रहे ॥

करंजबीजादियोग

ईपत् भृष्टं करंजस्य बीजं खंडीकृतं पुनः ।

मुहुर्मुहुर्नरो भुक्त्वा छर्दिं जयति दुस्तराम् ॥

अर्थ-करंज के बीजों को कुछ भूनके टुकड़े २ करके बारंबार खाय तो दुस्तर छर्दि को निवारण करे ॥

शंखपुष्पीरसादिपान

शंखपुष्पीरसं टंकद्वयं समरिचं मुहुः ।

सक्षौद्रं मनुजः पीत्वा छर्दिभ्यः किल मुच्यते ॥

अर्थ-संताहली का रस दो तोले सहत और काली मिरच का चूरा डालके पीवे तो छर्दिरोग से निश्चय मुक्त होवे ॥

जीरफादिधूप

जीरान्वितं पट्टवस्त्रं वर्ति कृत्वाथ धूपयेत् ।

आघ्राणाद्विलयं यांति सर्वाश्छर्द्यश्चिरोद्भवाः ॥

अर्थ-पट्टवस्त्र (पीतांबर) में जीरा बांधके पत्ती बनाने फिर इस की धूनी देवे इस धूनी के संपत्ते ही बहुत दिन की भी सर्व प्रकार की छर्दि नष्ट होवे ॥

वांतिहृद्रस

अयः शंखवली सूतः खल्वे तुल्यं विमर्दयेत् । कन्याकनकचांगेरी-

रसैर्गोलं विधाय च ॥ तप्तमृत्कर्पटैर्लिप्त्वा पुटितो वांतिहृद्रसः ।
द्विवल्लः कृमिरोगेपि साजमोदः सवेल्लकः ॥ वांतिहारेण मुनिना
प्रोक्तोयं मधुना युतः । पिप्पलक्षारपानीयं पाययेद्वांतिहृद्रिपक्व ॥

अर्थ—लोहचूर्ण, शंख का चूर्ण, गंधक, पारा ये सब समान भाग लेवे खरल में डाल घीगुवार के रस में धतूरा और चूका इन के रस में पृथक् २ खरल करके गोला बनावे उस गोले के चारों तरफ सात कपडमिट्टी करके गजपुट में रखके फूंक देवे तो यह वांतिहाररस बने इस में से ४ रत्ती रस अजमोदा और वायविडंग इन के साथ कृमिरोग में और सहत के साथ वांति पर देवे तथा पीपल वृक्ष के खार का पानी ऊपर से पिटावे तो वांति को नष्ट करे यह रस वांतिहार नामक ऋषि ने कहा है ॥

जातीरसपान

जात्या रसः कपित्थस्य पिप्पलीमरिचान्वितः ।
शौद्रेण युक्तः शमयेल्लेहोयं छर्दिमुल्बणाम् ॥

अर्थ—चमेली का रस, कैय का रस, पीपल और काली मिरच इन का अबलेह भीतर सहत डालके देवे तो घोर उग्रवांति को नाश करे ॥

यष्ट्यादिपान

यष्ट्याह्वा चंदनोपेतं सम्यक् क्षीरेण पेपितम् ।
तेनैवालोढ्य पातव्यं रुधिरच्छर्दिनाशनम् ॥

अर्थ—मुलहठी और चंदन इन दोनों को दूध में पीसे और दूध में ही मिलायके पी जावे तो रुधिर की छलटी होना बंद होवे ॥

गुडूच्यादिहिम

गुडूच्यारचितं हंति हिमं मधुसमन्वितम् ।
दुर्निवारामपि च्छर्दिं त्रिदोषजनितां बलात् ॥

अर्थ—गिलोय का हिम करके उस में सहत डालके देवे तो दुर्निवार वांति का नाश होवे ॥

पारदादिचूर्ण

रसवलिघनसारकोलमज्जामरकुसुमांबुधरप्रियंगुलाजाः । मल-
यजमगधात्वगेलपत्रं दलितमिदं परिभाव्य चंदनाद्भिः ॥ मधु-
मरिचयुतं रजोस्य मापं जयति वामिं प्रचलां विलिह्य मर्त्यः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, कपूर, बेर की गुठली, लौंग, नागरमोथा, फूलप्रियंगु, खीर, काली अगर, पीपल, दालचीनी, इलायची और तमालपत्र इन के चूर्ण को चंदन के काटे में भावना देकर फिर सहत और काली मिरचों का चूर्ण डालके १ मासा नित्य सेवन करे तो घोर प्रबल वमन का नाश होवे ॥

जीरकादिरस

अजाजीधान्यपथ्याभिः सक्षौद्रैः सकटुत्रिकैः ।

एतैः सार्धं सूतभस्म सद्यो वांतिं विनाशयेत् ॥

अर्थ—जीरा, धनिया, हरड और त्रिकुटा (साँठ, मिरच, पीपल) इन का चूर्ण और सहत इन के साथ पारे की भस्म सेवन करे तो तत्काल रद्द होने की बंद कर देवे ॥

वमनामृतयोग

गंधकः कमलाक्षश्च यष्टी मधु शिलाजतु । रुद्राक्षो टंकणश्चैव
सारंगस्य च शृंगकम् ॥ चंदनं च तवक्षीरी गीरोचनमिदं स-
मम् । वित्त्वमूलकपायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ मात्रां चैव प्रकु-
र्वीत वल्लस्यैव प्रमाणतः । नानाविधानुपानेन च्छर्दिं हंति त्रिदो-
पजाम् ॥ वमनामृतयोगोयं कमलाकरभाषितः ॥

अर्थ—गंधक, कमलाक्ष, मुलहठी, शिलाजीत, रुद्राक्ष, सुहागा, हिरन का साँग, चंदन, तवाखीर और गीरोचन ये सब समान भाग लेके चूर्ण करे फिर बेल की जड़ के काटे में एक प्रहर खरल करे पश्चात् २ रत्ती की मात्रा अनेक प्रकार के अनुपानों के साथ देवे तो त्रिदोष की छर्दि नष्ट होय. इस को वमनामृत योग कहते हैं. यह योग कमलाकर नामक आचार्य ने कहा है ॥

छर्दिपथ्य

विरेचनं छर्दनलंघनानि स्नानं जपो लाजकृतश्च मंडः । पुरात-
ना शालिकपट्टिसुद्रा कलायगोधूमयवा मधूनि ॥ शशाहिभु-
क्तित्तिरिलावकाद्या मृगद्विजा जांगलसंज्ञिताश्च । मनोज्ञनानार-
सगंधरूपा रसाश्च यूपा अपि खांडवाश्च ॥ गवां जलं कांवल्लि-
काः सुरा च वेत्राप्रकुस्तुंबरिनारिकेरम् । जंजीरघात्रसिहकार-
कोलद्राक्षाकपित्यानि पचेलिमानि ॥ हरीतकीदाडिमवजिपूरं जा-

तीफलं बालकनिबवासा । शिताशताह्वारिकेशराणि भक्ष्या
मनःप्रीतिकरा हिताश्च ॥ भुक्तस्य वक्त्रे शिशिरांबुसेकः कस्तू-
रिकाचंदनमिंदुपादाः । मनोज्ञगंधान्यनुलेपनानि पानानि पु-
ष्पाणि फलानि चापि ॥ रूपाणि शब्दाश्च रसाश्च गंधाः स्पर्शाश्च योज्याः स्वमनोनुकूलाः । दाहश्च नाभेस्त्रिकपार्श्वपृष्ठे श-
स्तं हि पथ्यं वमनातुरस्य ॥

अर्थ-विरेचन (जुल्लाव), वमन, लंघन, स्नान, जप, खीलों का मंड त पुराने सांठी चावल और लाल चावल, मूंग, मटर, गेहूँ, जौ ये सब पुराने, सह शशा, मोर, तीतर, लवा इत्यादि, जंगली जीवोंमें मृग और पक्षी इन का मांस त उत्तम २ अनेक प्रकार के रस तथा सुगंधित रस, यूप, रागखांडव, गोमूत्र का कांबलिक (मूल और फल की पेज बनायके उसमें समान भाग तिल के फूलों खटाई डाले वह), मद्य, वांस की कोपल, धनिया, नारियल, जंभीरी, आमले, आं बेर, दाख, पका हुआ कैथ, हरड, अनार, विजौरा, जायफल, नेत्रवाला, नी अड्डसा, खांड, सांफ, नागकेशर और मन को शीति करता पदार्थ तथा हितक पदार्थ सेवन करे. भोजन करने के उपरांत मुख में शीतल जल का भरना, कस्तू चंदन, चांदनी, उत्तम अतर आदि की सुगंध तथा मन को अनुलोमन करता प और फल, फूल, मन को प्रिय ऐसे शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये देवे तथा नाभ त्रिकस्थान, पसवाडे और पीठ में दाहकर्म करना ये संपूर्ण वस्तु वांतिरोगवा को पथ्य कही हैं ॥

अपथ्य

नस्यं वस्तिस्वेदनं स्नेहपानं रक्तस्रावं दंतकाष्ठं द्रवान्नम् । बी-
भत्सेच्छाभीतिमुद्रेगमुष्णं स्निग्धासात्म्यं हृद्यवैरोचकान्नम् ॥
रम्भा [लंबा] विधीकोशवत्यौ मधूकं चित्रामलीसर्पपदेवदा-
ली । व्यायामं वा सात्म्यदुष्टान्नपानं छर्द्यां सद्यो वर्जयेदप्रमत्तः ॥

अर्थ-नस्य, वस्तिकर्म, पसीने निकालना, स्नेहपान, रक्तस्राव, दांतन करना पतला अन्न, बीभत्स पदार्थ को देखना, भय, उद्रेग, गरम, स्निग्ध, असात्म्य, अ प्रिय, अरुचिकारी ऐसे अन्न, केला, घीया कंदूरी, तोरई, मुलहटी वा महुआ मजीठ, इलायची, सरसों, बंदाळ, दंड कसरत, अहित तथा दुष्ट अन्न जल का सेवन इन सब को छर्दिरोग में प्रमादरहित होके त्याग कर देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे छर्दिरोगस्य निदानधिकारिता समाप्ता ।

तृष्णाकर्मविपाकः ।

पथि चाध्वपरिश्रांतं ब्राह्मणं गामथापि वा ।

न पाययेज्जलं यस्तु स तृष्णामूर्च्छितो भवेत् ॥

अर्थ—जो प्राणी ब्राह्मण अथवा गौ को मार्ग (रास्ते) में थककर तृषा से पीड़ित को जल नहीं पिलावे उसके तृष्णारोग उत्पन्न होता है ॥

शांति

पानीयं पायसं भुक्त्वा शर्करा घृतसंयुता ।

इदमावश्यतो देयं मूर्च्छातृष्णोपशान्तये ॥

अर्थ—जल, दूध अथवा धी और रांड ये पदार्थ ब्राह्मण को अवश्य देवे और आप भी भक्षण करे तो तृष्णाजनित मूर्च्छा का नाश होय ॥

तृष्णानिदान

भयश्रमाभ्यां बलसंक्षयाद्वाप्यूर्ध्वं चित्तं पित्तविवर्धनैश्च । पित्तं
सवातं कुपितं नराणां तालुप्रपन्नां जनयेत्पिपासाम् ॥

अर्थ—भय से, श्रम से, बल के क्षय से और पित्त के बढ़ानेवाले क्रोध उपवासा-दिकों से अपने स्थान में संचित हुआ जो पित्त और वात ये कुपित होकर ऊपर तालु (पिपासास्थान) में जाय तृष्णा (प्यास) को उत्पन्न करे. इस जगह तालु-का तो उपलक्षणमात्र है तालु के कहने से कुमस्थान (हृदय में जो प्यास का स्थान है उस का भी ग्रहण है क्यों कि वह भी प्यास का स्थान है) सो चरक मँलिसा है ॥

तृष्णादित का स्वरूप

सततं यः पिबेत्तोयं न तृप्तिमधिगच्छति ।

पुनः कांक्षति तोयं च तं तृष्णादितमादिशेत् ॥

अर्थ—जो आदमी वारंवार जल पीने से तृप्त नहीं होता और वारंवार जल पीने की इच्छा करता है उस को तृषारोगी कहते हैं ॥

तृष्णासंप्राप्ति

स्रोतःस्वपांवाहिषु दूषितेषु दौषैश्च तृष्णा भवतीह जंतोः । ति-
स्रः स्मृतास्ताः क्षतजा चतुर्थी क्षयात्तथा ह्यामसमुद्भवा च ॥
भक्तोद्भवा सप्तमिकेति तासां निबोध लिगान्यनुपूर्वशश्च ॥

अर्थ—जल के बहनेवाली नस के दूषित होने से दोष (अन्न, कफ और आम) इन से तृष्णा रोग होय है सो तीन है और चौथी क्षतज तृष्णा जो व्रणवाले पुरुष के होती है, पांचवीं क्षय से होती है, छठी आम से होय है, सातवीं अन्न से होय है, उन्हीं के लक्षण क्रम से कहता हूं, इन में पहिली चार तृष्णा सुखसाध्य हैं और बाकी की तीन कष्टसाध्य हैं. शंका—क्योंकी इस श्लोक में स्रोतःसु यह बहुवचन क्यों धरा ये विरुद्ध है क्योंकि सुश्रुत में तो जल के बहनेवाली दो ही नाडी मानी हैं. उत्तर—अन्न, कफ, आम को दुष्ट करने से तथा दुष्ट रोगों के सम्बन्ध होने से अन्न, आम, कफ को दोषत्व ग्रहण है यह गयदास का मत है अथवा दोष के कहने से वात, पित्त, कफ का ही ग्रहण करना चाहिये ॥

वातजतृष्णानिदान

क्षामास्यता मारुतसंभवायां तोदस्तथा शंखशिरःसु चापि ।
स्रोतोनिरोधो विरसं च वक्त्रं शीताभिरद्भिश्च विवृद्धिमेति ॥
ताल्वोष्ठकंठस्य च तोददाहसंतापमोहभ्रमविप्रलापाः । पूर्वाणि
रूपाणि भवंति तासामुत्पत्तिकालेषु विशेषतो हि ॥

अर्थ—वात की तृषा (प्यास) से मुख उतर जाय अथवा दीन होय, कनपटी और मस्तक इन ठिकाने नोचने के समान पीडा होय, रस और जल बहनेवाली नाडियों का मार्ग रुक जाय, मुख से स्वाद जाता रहे और शीतल जल के पीने से प्यास बढे ये अनुपशय के लक्षण हैं. चकार से निद्रा का नाश होय और तालु, होंठ और कंठ इन में शूल व दाह और संताप, मोह, भ्रम और प्रलाप इत्यादि वाततृष्णा का लक्षण समझना ॥

वाततृष्णाजयप्रकार

वातघ्नमन्नपानमिष्टं लघु शीतं च वाततृष्णायाम् ।
स्याज्जीवनीयसिद्धं क्षीरघृतं वातजे तर्पे ॥

अर्थ—वातनाशक, हलके और शीतल ऐसे अन्न, पान और जीवनीय गण करके सिद्ध करे हुए दूध और घी ये वाततृष्णा पर उत्तम हैं ॥

दूसरा प्रकार

वातोद्भवायां तृष्णायां पानान्नं वातमुद्धतम् ।
स्वर्णरूप्यैरग्नित्रैलौष्टैः सोष्टाजलं तथा ॥

अर्थ—वादी की तृष्णा पर वातनाशक जल, अन्न अथवा सुवर्ण के लोष्ट (मिट्टीका

डेला) अथवा चांदी को अग्निपर गरम करे हुए को जल में बुझायके पिलावे तो वादी की तृषा दूर होवे ॥

तेल

देयं सुगंधि तैलं शिरसि च गात्रेषु सर्वेषु ॥

अर्थ—मस्तक पर और संपूर्ण अंगों में सुगंधित तेल की मालिस करे तो वादी की तृष्णा दूर हो ॥

जल

सुवर्णरौप्यादिभिरग्नितप्तैर्लोष्टैः कृतं वा सिकतोत्करैर्वा ।

जलं सुखोष्णं शमयेत्तु तृष्णां सशर्करं क्षौद्रयुतं जलं वा ॥

अर्थ—सुवर्ण, रूपा, मिट्टी का डेला और बालू (रेत) इन में से किसी एक को आग में तपायके जल में बुझाय देवे. इस जल को कुछ गरम २ पीवे अथवा जल में सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो तृषा शांत होय ॥

पित्ततृष्णानिदान

मूर्च्छान्नविद्वेषविलापदाहरत्तेक्षणत्वं प्रततश्च शोषः ।

शीताभिनंदा मुखतित्कता च पित्तात्मिकायां परिद्वयनं च ॥

अर्थ—पित्त की तृषा में मूर्च्छा, अन्न में अरुचि, बडबड, दाह, नेत्रों में लाली, अत्यंत शोष, शीत पदार्थ की इच्छा, मुख में कड़वाट और सन्ताप यह लक्षण होते हैं ॥

पित्ततृष्णाचिकित्सा

पित्तजायां सितायुक्तः पक्वोदुंबरजो रसः ॥

अर्थ—यदि पित्तजन्य तृषा होवे तो पके हुए गूलर का रस मिश्री मिलायके पीवे तो शांति हो ॥

स्वादु तिक्तं द्रवं शीतं पित्ततृष्णापहं परम् ।

आतपात्संशृतं पथ्यमुदकं लाजसक्तुभिः ॥

अर्थ—मिष्ट, कड़ुए, पतले और शीतल ऐसी जो वस्तु हैं वो सब तृष्णानाशक हैं तथा घूप में तपे हुए जल में खीलों का जूरा मिलायके पीवे तो हितकारी होय ॥

तंडुलोदकपान

जीर्णे भुक्ते पिबेद्वापि सक्षौद्रं तंडुलोदकम् ॥

अर्थ—भोजन पचने के पश्चात् तृषा लगे तो घाबलों के धोवन में सहत डाल-के पीवे ॥

मधुकादिफांट

मधूकपुष्पं गंभारी चंदनोशीरधान्यकैः । द्राक्षया च कृतः
फांटः शीतः शर्करया पुनः ॥ तृष्णापित्तहरः प्रोक्तो दाहमूर्च्छा-
भ्रमान् जयेत् ॥

अर्थ—महुआ के फूल, कंभारी, चंदन, खस, धनिया और दाख इन के फांट को शीतल करके उस में मिश्री मिलायके पीवे तो तृषा, पित्त, दाह, मूर्च्छा, भ्रम इन को नष्ट करे ॥

कफतृष्णानिदान

वाष्पावरोधात्कफसंवृतेग्रौ तृष्णाबलांशेन भवेत्तथानु ।

निद्रा गुरुत्वं मधुरास्यता च तृष्णादितः शुष्यति चातिमात्रम् ॥

अर्थ—अपने कारण से कुपित कफ करके जठराग्नि आच्छादित होय, तब अग्नि की गरमी अधोगत जल के वहनेवाली नाडियों को सुखाय कफ की तृषा को प्रगट करे केवल कफ से तृष्णा को प्रगट होना असंभव है केवल कफ बड़े भय का द्रवीभूत धर्म पतला होने से प्यासकर्तृत्व असंभव है और वात पित्त को तृषा करनेवाले होने से होय है सो ग्रंथांतर में लिखा भी है। इसी से चरकाचार्य ने कफ की तृष्णा नहीं कही, सुश्रुत ने चिकित्सा में भेद होने से कही है और हारीत ने भी सपित्त कफ की तृषा मानी है, केवल कफ की नहीं मानी, इस तृषा में निद्रा, भारीपना, मुख में मिठास यह लक्षण होते हैं इस तृषा से पीडित पुरुष अत्यन्त सूख जाय है ॥

कफतृष्णासामान्यचिकित्सा

तित्तं द्रवं कटुष्णं च कफतृष्णानिवारणम् ।

अन्नपानोपधं सर्वं प्रदद्यात्कफतृड्युते ॥

अर्थ—कटुए, पतले किंचित् उष्ण, कफ और तृषानिवारक ऐसे अन्नपान और औषध कफ को तृष्णापर देवे ॥

विल्वादिकाढा

विल्वाढकीधातकिपंचकोलदर्भेषु सिद्धं कफजां निहंति ।

हितं भवेच्छर्दनमेव चात्र तप्तेन निवप्रसवोदकेन ॥

अर्थ—वेलगिरी, अरहर, घाय के फूल, पीपल, पीपरामुल, चव्य, चित्रक, सोंड़ डाम की जड़ इस का काढा करके देवे और नीम के काढे का घमन देवे तो कफ की घमन नष्ट होय ॥

कफतृष्णाप्रयोग

यथोक्तं कफतृष्णायां दृष्ट्या तथैव कार्यं स्यात् । स्तंभारुच्य-
विपाकालस्यच्छर्दिषु कफानुगां तृष्णाम् ॥ ज्ञात्वा मधुदधित-
र्षणलवणेन जलैर्वमनमश्लक्ष्णम् । दाडिममम्लफलं वा न्यास-
कपायमवलेहम् ॥ पयोथ वा प्रदद्याद्रजनीमधुशर्करायुक्तम् ॥

अर्थ—जैसी कफ की छर्दि में औषधि कही है वही कफतृष्णा पर देवे तथा स्तंभ, अरुचि, अजीर्ण, आलस्य और छर्दि इन में जो तृष्णा होती है वह कफसंबंधी होती है इस वास्ते सहित और दही ऐसे तृप्ति करती वस्तु देवे तथा निमक और जल इन से वमन करावे और अनार, कोकम अथवा और जो कपेले पदार्थ है उन को चटावे अथवा हलदी और मिश्री डालके दूध पिळावे ॥

क्षतजन्यतृष्णानिदान

क्षतस्य रुक् शोणितनिर्गमाभ्यां तृष्णा चतुर्थी क्षतजा मता तु ॥

अर्थ—शस्त्रादिक के लगने से घाव होय तब उस पुरुष के पीडा और रुधिर का स्राव होने से जो तृष्णा होय यह चौथी क्षतज तृष्णा जाननी ॥

क्षतजतृष्णाचिकित्सा

क्षतोद्भवां रुग्निवारणेन जयेद्रसानामसृजश्च पानैः ॥

अर्थ—घाव के कारण जो तृष्णा लगती है उस को घाव दूर करने से दूर करे तथा औषधीय रसों के पत्रों करके खून को रोके ॥

क्षयजतृष्णानिदान

रसक्षयाद्या क्षयसंभवा सा तथाभिभूतस्तु निशादिनेषु । पेपी-
यतेभः समुखं न याति तां सन्निपातादिति केचिदाहुः ॥ रस-
क्षयोक्तानि च लक्षणानि तस्यामशेषेण भिषग्व्यवस्येत् ॥

अर्थ—रसक्षय से जो तृष्णा होय उस में जो लक्षण होय वे सो सब क्षयजतृष्णा में होते है, तिस से पीडित पुरुष रात्रि दिन वारंवार पानी पीवे, परंतु संतोष नहीं होय. कोई आचारी इस को सन्निपात से प्रगट कहते है. रसक्षय के जो लक्षण कहे वे सत्य होते है सो वैद्यों को जानने चाहिये (रसक्षयलक्षण सुश्रुत में कहे है) सो इस प्रकार रसक्षय होने से हृदय में पीडा, कंप, शोष, बधिरता (बहरापना) और प्यास होय है ॥

क्षयजतृष्णा

क्षयोत्थितां क्षीरजलं निहन्यान्मांसोदकं वा मधुकोदकं वा ॥

अर्थ—क्षयजन्य तृषा को उस को दूध और जल के काढे से अथवा मांसरसों रके अथवा मुलहठी के काढे से शांत करे ॥

आमजतृष्णानिदान

त्रिदोषलिंगाऽमसमुद्भवा तु हृच्छूलनिष्ठीवनसादकर्त्री ॥

अर्थ—आमज कहिये अजीर्ण से जो तृष्णा होय उस में तीनों दोषों के लक्षण होते हैं सो सुश्रुत में लिखा भी है और हृदय में शूल, छार का गिरना, ग्लानि ये सब होय हैं ॥

आमजतृष्णा

आमोद्भवां विल्ववचायुतानां जयेत्कपायैरपि दीपनानाम् ।

उल्लेखनेर्गुर्वशनप्रजातां जयेत्क्षतोत्थां तु विना पिपासाम् ॥

अर्थ—आमांश से जो तृषा होती है वह बेलगिरी और वच इन करके युक्त जो दीपन काढे उन से जीते तथा भारी पदार्थों के खाने से जो तृषा होवे उस को लेखन पदार्थ देकर जीते परंतु वह क्षतजन्य न होवे ॥

अन्नजातृष्णानिदान

स्निग्धं तथाम्लं लवणं च भुक्तं गुर्वन्नमेवाशु तृषां करोति ॥

अर्थ—चिकना, सटा, खारा, (चकार से कडुआ, कपेला आदि जानना) ऐसे भोजन से तथा मात्राधिक और भारी ऐसा अन्न खाने से अवश्य ही शीघ्र प्यास को प्रगट करे. दृढबल आचारी ने पांच ही प्रकार की तृष्णा कही हैं. वात की, पित्त की, क्षय की, आम की, उपसर्ग की. तहां कफ की आम की तृषा के अंतर्गत कही है और क्षतजा वात की तृषा के अंतर्गत जाननी और अन्नजा भी वात की तृषा के अंतर्गत कही है क्योंकि भोजन से वात का कोप होय है * शंका—क्योंकी सुश्रुत ने मद्य के प्रकरण में मद्य की तृष्णा कही है फिर माधवाचार्य ने सात ही तृष्णा कैसे कही हैं * उत्तर—दृढबलाचारी के मत से मद्य की तृषा को वात की तृषा के अन्तर्गत होने से माधवाचार्य ने सात ही कही हैं ॥

अन्नजाचिकित्सा

स्निग्धान्ने भुक्ते या तृष्णा स्यात्तां गुडांबुना शमयेत् ।

अतिरूक्षकदुर्बलानां तृषां शमयेन्नृणामिहांबुपयः ॥

अर्थ—स्निग्ध (चिकने) अन्न के सेवन से जो तृषा होय उस को गुड के पानी से शांत करे और अतिरूक्ष तथा दुर्बल मनुष्य की तृषा नेत्रवाले के काटे से दूर करे ॥

उपद्रव व असाध्यलक्षण तृष्णा

दीनस्वरः प्रताम्यन्दीनाननशुष्कहृदयगलतालुः । भवति खलु
सोपसर्गा तृष्णा सा शोषिणी कष्टा ॥ ज्वरमोहक्षयकासश्वा-
साद्युपसृष्टदेहानाम् । सर्वास्त्वतिप्रसक्ता रोगकृशानां वमिप्र-
सक्तानाम् ॥ घोरोपद्रवयुक्तास्तृष्णा मरणाय विज्ञेयाः ॥

अर्थ—हीनस्वर, मोह, मन में ग्लान होय, मुख दीन हो जाय, हृदय, गला और तालु सूख जाय यह तृष्णा के उपद्रव से होय है. यह मनुष्य को सुखाय डाले और व्याधि से शरीर कृश होने से यह कष्टसाध्य हो जाय है. वे उपद्रव यह हैं ज्वर, मोह, क्षय, खांसी, श्वास, आदिशब्द से अतिसारादिकोंका ग्रहण है. ये रोग जिस के होय उस के तृष्णा कष्टसाध्य जाननी. वातजादि सब प्रकार की तृष्णा अत्यन्त बढी हुई अथवा रोग से कृश भया ऐसे पुरुष के जो तृष्णा है सो अथवा छाँदें से प्रगट भई जो तृषा और जो भयंकर उपद्रव करके युक्त ऐसी तृष्णा मारने का कारण होय है ॥

जलपाननियम

सात्म्यान्नपानभैषज्यैस्तृष्णार्तस्य जयेत्तृषाम् । तस्यां जिता-
यामन्योपि व्याधिः शक्यश्चिकित्सितुम् ॥ तृपितो मोहमायाति
मोहात्प्राणान्विमुञ्चति । तस्मात्सर्वास्ववस्थासु न क्वचिद्भारि
वार्यते ॥ अत्रेनापि विना जंतुः प्राणान्संधारयेत्क्वचित् । तो-
याभावे पिपासार्तः क्षणात्प्राणैर्विमुच्यते ॥

अर्थ—अपनी प्रकृति को जो रुचे ऐसे अन्न, पान और औषध इन से तृषार्त रोगी की तृषा जीते. यह तृषा के जीतने से और दूसरी व्याधि सहज में जीती जाती है. अन्यथा तृषावाला मनुष्य मोह को प्राप्त होता है और मोह से प्राणों को छोड देता है इसी वास्ते किसी अवस्था में जल का देना बंद न करे. विना अन्न के एक घडी जी सकता है परंतु जल के विना यह प्राणी एक क्षणमात्र भी नहीं जीवे इस वास्ते प्यासे को जल पिलाना ही चाहिये ॥

गंडूप

पटोली मूलिका सार्द्रा तुवरी मधुयष्टिका । क्रमुकं चिकणं

कंदश्छली च खदिरान्विता ॥ कटुकीरवराजोत्थक्वाथोमी-
पां सुशीतलः । गंडूपधारणाद्धंति गलशोपं सुदारुणम् ॥

अर्थ—परवल, हरे की जड़, अरहर, मुलहठी, चिकनी सुपारी, तृपा बंद करने-
वाला कंद, खैर तथा कुटकी, गठोना इन का काढा करके शीतल करे इस को मुख में
रखे तो दारुण गलशोप (गले का सूखना) इन को नष्ट करे ॥

गंडूप

श्रीखंडं पद्मकं मुस्तधान्यकं निववल्कलम् । कूष्मांडं खदिरो
दूर्वामूलं कितवराजकम् ॥ अष्टावशोपितोमीपां क्वाथः शीतल-
तां गतः । गंडूपकरणाद्धंति रोगिणः शोकमुल्बणम् ॥

अर्थ—चंदन, पद्मास, नागरमोथा, धनिया, नीम की छाल, पेठा, खैर, दूर्व की
जड़, गठोना इन का अष्टावशोप काढा करके शीतल कर लेवे. फिर इस काढे के
कुछे करे तो रोगी के बढे हुए शोप का नाश करे ॥

लेप

जलं मलयजं रक्तचंदनं पद्मकेसरम् ।

उशीरेणांचितैर्लेपो मस्तके तृड्निवारणः ॥

अर्थ—नेत्रवाला, चंदन, लाल चंदन, कमल की केशर और खस इन को जल
पीस मस्तक पर लेप करे तो तृपा को दूर करे ॥

चूर्ण

कृष्णा जीरं सिता नागकेसरं दाडिमीफलम् ।

मधुना भक्षणादेपां रोगो गच्छति रोगिणः ॥

अर्थ—पीपल, जीरा, मिश्री, नागकेशर और अनारदाना इन का चूर्ण करके सहत
में मिलायके चाटे तो तृपा जाती रहे ॥

कुष्ठादिचूर्ण

कुष्ठं कासोद्भवं मूलं मधुकं पिष्टमंजसा ।

भक्षितं तं द्रुतं हंति पिपासां चिरकालजाम् ॥

अर्थ—कूठ, कसौंदी की जड़ और मुलहठी इन को जल में पीसके देय तो कुछ
दिनों की भी तृपा शीघ्र शांत होय ॥

चूर्ण

कुशः कुष्ठजतुर्यष्टी लाजातप्तेन वारिणा ।

पीतशूर्णस्तृपां हन्ति शोकसंतापसंभवाम् ॥

अर्थ—कुसा, कूठ, लाख, मुलहठी और खील इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो शोक और संताप के कारण से प्रगट तृपा को शांत करे ॥

वटाद्यवलेह

वटवाला शिवा कृष्णा मधुकं मधुना सह ।

अवलेहः कृतोमीपां तृपारोगो विनश्यति ॥

अर्थ—वड की कोपल, नेत्रवाला, हरड, पीपल और मुलहठी इन का अवलेह बनाय उस में सहत मिलायके सेवन करे तो तृपारोग नष्ट होय ॥

दूसरा प्रकार

वटशृंगा सिता लोध्रं दाडिमं मधुकं मधु ।

पिवेत्तंदुलतोयेन तृष्णाच्छर्दिनिवारणम् ॥

अर्थ—वड की कोपल, मिश्री, लोध, अनारदाना और मुलहठी इन का काढा करे छिल होने पर सहत डालके पीवे और चावलों के धोवन में मिलायके पिलावे तो प्यास और वमन का होना ये बंद होवे ॥

अवलेह

अर्धावर्तितपानीयं सलजैः शीतलं मधु ।

तवराजयुता द्राक्षा मुखे क्षिता तृपां जयेत् ॥

अर्थ—जल में खीलों को डालके औटावे जब आधा जल रहे तब उत्तारके शीतल करे फिर सहत मिलायके देवे अथवा दाख और मिश्री मिलायके गोली बनाय ले इस को मुख में रखे तो तृष्णानाश होवे ॥

ताम्रादिरस

ताम्रं चक्रिकया बद्धं सूतं तालं सतुत्थकम् ।

वटांकुररसेर्मथं तृष्णानुलवमात्रया ॥

अर्थ—तामे की भस्म, पारा, हरताल और लीला योथा इन को वड की कोपल के रस में रखल कर टिकिया बनायके संगुट में धरके पूंक देवे इस में से लवमात्र की मात्रा देय तो प्यास दूर होय ॥

श्रीखंडयोग

अर्धाढकं रुचिरपर्युषितस्य दध्नः खंडस्य षोडश पलानि
शशिप्रभस्य । सर्पिः पलं मधु पलं मरिचं द्विकर्पं शुंक्र्या पला-
र्धमपि चार्धपलं तृटेश्च ॥ श्लक्ष्णे पटे ललनया मृदुपाणिघृष्टे
कर्पूरधूलिसुरभीकृतचारुभांडे । एषा वृकोदरकृता सुरसा
रसाला सुस्वादिता भगवता मधुसूदनेन ॥

अर्थ—पहली दिन का जमा हुआ गाढा २ सुंदर चिकना दही दो सेर लेय
बहुत सपेद बूरा १ सेर, घी ४ तोले, सहत ४ तोले, काली मिरच २ तोले, सोंठ २
तोले तथा छोटी इलायची के दाने २ तोले इतने पदार्थों को उस दही में मिलायके
पतले कपड़े में डाल और कपूर के चूर्ण करके सुगंधित ऐसे पात्र में स्त्री अपने
कोमल हाथों से उसे छाने, इस को श्रीखंड कहते हैं. इस के सेवन करने से
मनुष्यों की तृषा शांत होय इस को कोई रसाला अथवा सिखरन भी कहते हैं
इस प्रकार श्रीखंड प्रथम भीमसेन ने बनाई उस को श्रीकृष्ण ने बड़े स्वादपूर्वक
भोग लगाई ॥

आमलक्यादिगुटिका तृष्णादिपर

आमलं कमलं कुष्ठं लाजाश्च वटरोहकम् । एतच्चूर्णस्य मधुना
गुटिकां धारयेन्मुखे ॥ तृष्णां प्रवृद्धां हंत्येषा मुखशोषं च दारुणम् ॥

अर्थ—आंवले, कमल, कूट, खील, वड की कोंपल इन पांच औषधों का चूर्ण
करके सहत में मिलायके गोली बनावे. इस को मुख में रखे तो बहुत प्यास का
लगना तथा मुख का अत्यन्त सूखना इन दोनों को दूर करे ॥

वटी

उत्पलं मधु लाजाश्च वटरोहो गदस्तथा ।

एतैः कृता वटी नित्यं तृष्णां नाशयति क्षणात् ॥

अर्थ—नीला कमल, सहत, खील, वड के अंकुर और कूट इन को कूट पीसके
गोली बनावे. इस गोली को मुख में रखे तो क्षणमात्र में तृषा का नाश करे ॥

गुटी

खर्जूरमृद्धीकमधुः सखंडं पृथक् पञ्च मागधिका त्रिगंधे ।

तथार्धविल्वे मधुना गुटीयं तृष्णोहपित्तास्रजयेति शस्ता ॥

अर्थ-खजूर, दाख, मुलहठी, मिश्री ये प्रत्येक चार २ सोले लेवे. पीपल, दाल-चीनी, पत्रज और इलायची ये दो २ पल लेवे इन सब को कूट पीस सहत से शोली बनावे यह तृषा, मोह और रक्तपित्त इन को नाश करे ॥

काश्मर्यादिकाढा

काश्मर्यशर्करायुक्तं चंदनोशीरपद्मकम् ।

द्राक्षामधुकसंयुक्तं पित्ततृष्णो जलं पिबेत् ॥

अर्थ-कंभारी के फल, मिश्री, चंदन, खस, पन्नाख, मुनक्का और मुलहठी इन का काढा पित्तजन्य तृषावाले को हितकारी है ॥

जीरकादिकूर्ण

सजीरधान्यार्द्रकशृंगवेरसौवर्चलान्यर्धपरिप्लुतानि ।

मद्यानि हृद्यानि च गंधवंति पीतानि सद्यः शमयन्ति तृष्णाम् ॥

अर्थ-जीरा, धनिया, अदरख, चांछ, संचरनिमक इन के चूर्ण को आधा भीगे इतना मद्य (दारु) उत्तम सुगंध युक्त पीने से तृषा की शांति होवे ॥

आम्रादिकाढा

आम्रजंबूकयायं वा पिबेन्माक्षिकसंयुतम् ।

छर्दिं सर्वां प्रणुदति तृष्णां चैवापकर्षति ॥

अर्थ-आम और जामुन की छाल का काढा सहत मिलायके पीने से सब प्रकार शांति, तृषा इन को शमन करे ॥

द्राक्षादिनस्य

गोस्तनीक्षुरसक्षीरयष्टीमधुमधूत्पलैः ।

नियतं नस्यतो पीतैस्तृष्णा शाम्यति तत्क्षणात् ॥

अर्थ-काली दाख, ईख, दूध, मुलहठी, सहत और कमल इन का नस्य लेने से नियमपूर्वक उसी क्षण में तृषा शांति होवे ॥

जीरकादिकाढा

जीरकुस्तुंबरीद्राक्षाचंदनोत्पलशीतलम् ।

शीतलेन समं दद्यात्तृष्णां हन्त्यतिशीतलम् ॥

अर्थ-जीरा, धनिया, मुनक्का दाख, चंदन, कमल, कपूर ये सब पीस शीतल जल के साथ पीने से तृषा का नाश होय ॥

कोष्ठादियोग

रुग्लाजाब्दवटप्ररोहमधुकैर्मध्वन्वितैः कल्पितान्यु-
ग्रामाशु तृपां भृशं प्रशमयेदास्यांतरस्था गुटी ॥

अर्थ—कूठ, खील, नागरमोथा, बड के अंकुर, मुलहटी और सहत इन सब को एकत्र पीस गोली बनायके मुख में रखे तो अत्यंत तृष्णा भी होवे तो शीघ्र शांत होवे ॥

तप्तलोष्ठादियोग

निर्वापितं तप्तलोष्टकपालसिकतादिभिः ।
तृष्णायां वमनोत्थायां सगुडं दधि शस्यते ॥

अर्थ—मिट्टी का डेला, खीपडा और वाळू (रेत) में से किसी एक को अग्नि में गरम करके दही में गुड ले. फिर इस में गुड डालके पीवे तो वमन के होने से जो तृष्णा उत्पन्न हुई वह शांत होवे ॥

मंदादियोग

आतपात्ससितं मथं यवकोलजसक्तुभिः ।
सर्वाण्यंगानि विलिपेत्तिलपिण्याककांजिकैः ॥

अर्थ—यदि धूप में रहने से तृष्णा लगी होवे तो छाछ में मिश्री, सत्तू और बेर का चूर्ण इन को मिलाय के पीवे. तथा सब देह में तिल के खल का और कांजी का लेप करे ॥

रोगोपसर्गजातायां धान्यांबु ससिता मधु । वटप्ररोहयष्ट्याह्वक-
णामधुकृता वटी ॥ मुखस्था चिरकालोत्थां तृष्णां हन्यात्सु-
दुस्तराम् ॥

अर्थ—रोग के कारण यदि प्यास लगे तो धनिये का जल, सहत और मिश्री डालके पीवे और बहुत देर की प्यास लगकर दुःसाध्य होवे तो बड के पल्लव अथवा कोमल अंकुर, मुलहटी, पीपल और सहत इन की गोली बनायके मुख में रखे ॥

रसादिगुटी

रसरजतगुटीं पटीयसीं यो वदनसरोरुहमध्यगां दधाति ।
स जयति तृपितस्त्रृपां मनुष्यो भृशमघमिव त्रिमार्गगांभः ।

अर्थ-पारा और चांदी इन दोनों को खरल करके गोली बनावे इस को मुख में रखे तो तृपित मनुष्य अपनी तृषा को दूर करे जैसे त्रिपथगा गंगाजी पापों को नष्ट करे है ॥

रसादित्चूर्ण

रसगंधककपूरैः शैलोशीरमरीचकैः । रसितैः क्रमवृद्धैश्च
सूक्ष्मं कृत्वा त्वहर्मुखे ॥ त्रिगुंजाप्रमितं खादेत्पिप्पेत्यु-
पितांबु च । भृशं तृष्णां निहंत्येवमश्विभ्यां च प्रकाशितम् ॥

अर्थ-पारा १ , गंधक २ , कपूर ३ , शिलाजीत ४ , खस ५ , काली मिरच ६ और मिश्री ७ भाग, इस प्रकार लेकर बारीक चूर्ण करे इस में से तीन रत्ती के अनुमान प्रातःकाल सेवन करे फिर शीतल जल पीवे तो अत्यंत तृषा का नाश होवे यह अश्विनीकुमार ने प्रकाश करा है ॥

लेप

अरुणचंदनचंदनवालकैर्नलदपद्मकतुल्यकृतांशकैः ।

शिरसि लेपनमाचरतां नृणां तृडपयात्युपशांतिमसंशयम् ॥

अर्थ-लाल चंदन, चंदन, नेत्रवाला, खस, पद्मास ये समान भाग लेवे सब को जल में पीसके मस्तकपर लेप करे तो निश्चय तृषा शांत होय ॥

गुटी

नीलांबुजान्दमधुलाजवटावरोहैः श्लक्ष्णीकृतैर्विराचिता गुटिका
मुखस्था । तृष्णां निवारयति तत्क्षणमेव तीव्रां मृत्योः स्पृहा-
मिव यतेः परमार्थचिंता ॥

अर्थ-नीला कमल, नागरमोषा, सहत, सील और वट के अंकुर इन सब को पीसके गोली बनावे इस को मुख में रखे तो तत्क्षण तृषा दूर होवे जैसे संन्यस्त (संन्यासी) परमार्थविषय में चिंता, मृत्यु की इच्छा निवारण करे उसी प्रकार ॥

उपसर्गतृष्णासामान्यविधि

तृष्णातिवृद्धाबुदरे च पूर्णं संछर्दयेन्मागधिकोदकेन ।

विलोमसंचारहितं विधेयं स्याद्वाडिमाप्रातकमातुल्लिगैः ॥

अर्थ-यदि प्यास अधिक बढ़ गई हो और जल पीते २ पेट अफर गया होवे तो पीपल के काटे से लट्टी करावे और वायु का अनुलोम संचार होय ऐसे हितकारी अनार, अंबाडा और बिजोरा इन को सेवन करे, अभ्यंजन और सेक करे ॥

जंगली जीवों के मांस का रस, खांडव, मिश्री, रागखांडव (सहत, मीठा दही इन दोनों को मिलायके बनाया हुआ पदार्थ) तथा मूंग का, मसूर का अथवा चने का रस, केले के फूल, छाछ (तैल) कूर्च, दास, पित्तपापडा, घेल, कैय, कमरस, बेर, पेठा, पोई का साग, खजूर, अनार, आंवले, ककडी, बहता जल, जँभीरी, कमरस, विजोरा, गौ का दूध, महुआ के फूल, नेत्रवाला, कडुए रस, मीठे रस, छोटे २ ताल-फलों का जल अथवा खस और ताडीरस, शीतल जल, दूध, पना, सहत, तालाव का जल, सतावर, नागकेशर, इलायची, जायफल, हरड, धनिया, लालचंदन, कपूर, कपूरकचरी, चाँदनी, शीतलपवन, चंदन लगाए हुए स्त्री, मोती के आभूषण, नदी में स्नान करना तथा लेपन ये तृषा (प्यास) रोगवाले को पथ्य में देवे ॥

तृषारोगअपथ्य

स्नेहांजनं स्वेदनधूमपानं व्यायामनस्यातपदंतकाष्ठम् । गुर्वन्न-
मम्लं लवणं कपायं कटुत्रिकं दुष्टजलानि तीक्ष्णम् ॥
एतानि सर्वाणि हिताभिलाषी तृष्णातुरो नैव भजेत्कदाचित् ॥

अर्थ—स्नेहन, अंजन, स्वेदन, धूमपान, दंड कसरत, नस्यकर्म, धूप का सेवन, दांतन करना, भारी अन्न, खट्टा, निमकीन, कपेला ऐसे रस, त्रिकुटा (साँठ, मिर-च, पीपल), दूषित जल, तीक्ष्ण पदार्थ, इन संपूर्ण पदार्थों को हित की इच्छा करनेवाला तृषा (प्यास का) रोगी कदाचित् सेवन न करे ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे तृष्णारोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

मूर्च्छाभ्रमनिद्रासंन्यासनिदानम् ।

क्षीणस्य बहुदोषस्य विरुद्धाहारसेविनः । वेगाघातादभीघाता-
द्धीनसत्वस्य वा पुनः ॥ करणायतनेपूत्रा वाह्येष्वाभ्यंतरेषु च ।
निविशंते यदा दोषास्तदा मूर्च्छति मानवाः ॥

अर्थ—तृषा में मोह होय है, इसी से तृषा के अनन्तर मूर्च्छा को कहते हैं. क्षीण पुरुष के बहुत दोष के संचय होने से, विरुद्ध आहार क्षीर मत्स्यादिक के सेवन करने से, मलमूत्रादि वेग के धारण करने से, लकड़ी आदि के चोट लगने से अथवा जिस पुरुष का सतो गुण क्षीण हो गया होय, ऐसे पुरुष की बाहर की और भीतर की मन के पहनेवाली नाडियों में दोष प्रवेश करे तब मनुष्य को मूर्च्छा आती है ॥

संप्राप्ति

संज्ञावहासु नाडीपु पिहितास्वनिलादिभिः । तमोभ्युपैति सहसा
सुखदुःखव्यपोहकृत् ॥ सुखदुःखव्यपोहाच्च नरः पतति काष्ठवत् ।
मोहो मूर्च्छेति तामाहुः पङ्क्तिं सा प्रकीर्तिता ॥ वातादिभिः
शोणितेन मद्येन च विषेण च । पदस्वप्येतासु पित्तं तु प्रभुत्वे-
नावतिष्ठते ॥

अर्थ—अर्थात् संज्ञा के बहनेवाली नाडियों में वातादि दोषों करके आच्छादित होने से सुखदुःख का ज्ञान नष्ट होय, तब मनुष्य पृथ्वीपर काष्ठ की सी तरह गिरे इस रोग को मूर्च्छा अथवा मोह ऐसे कहते हैं अथवा बाहर की इन्द्रिय नेत्र, कान आदि कर्मेन्द्रिय और बुद्धीन्द्रिय इन में बलवान् दोष (वात, पित्त, कफ) प्रवेश कर संज्ञा की बहनेवाली जो नाडी तिन को वह घात, पित्त, कफ रोक अंधकार को प्रगट करे तब मनुष्य काष्ठ की भांति पृथ्वीपर गिरे उस को मूर्च्छा कहते हैं अथवा मोह कहते हैं सो मूर्च्छा छः प्रकार की है. वात, पित्त, कफ से तीन प्रकार की और रुधिर, विष और मद्य इन भेदों से तीन प्रकार की. इन तीनों मूर्च्छा में पित्त है सो मुख्य (प्रधान) है अथवा व्यापक है ॥

पूर्वरूप

हृत्पीडा जंभणं ग्लानिः संज्ञानाशो बलस्य च ।

सर्वासां पूर्वरूपाणि यथास्वं तं विभावयेत् ॥

अर्थ—हृदय में पीडा, जंभाई, ग्लानि, भ्रांति ये मूर्च्छा के पूर्वरूप हैं. आगे उस मूर्च्छा के वातादि भेद जानने. यह प्रगट अवस्था के पूर्वरूप अवस्था के भेद नहीं यह जैष्यटाचार्य का मत है ॥

वातादिमूर्च्छालक्षण

नीलं वा यदि वा कृष्णमाकाशमथवाऽरुणम् । पश्यंस्तमः

प्रविशति शीघ्रं च प्रतिबुद्धयते ॥ वेपथुश्चांगमर्दश्च प्रपीडा

हृदयस्य च । काश्यं श्यावारुणा च्छाया मूर्च्छांगे वातसंभवे ॥

अर्थ—जो मनुष्य नीले रंग का अथवा काले रंग का तथा लाल रंग का आकाश को देखे पीछे मूर्च्छा को प्राप्त होय और जलदी होश हो जाय, देह में कंप, अंगों का टूटना, हृदय में पीडा होय, शरीर कृश हो जाय शरीर का रंग काञ्ज छाल पड जाय, उस को घात की मूर्च्छा जाननी ॥

पित्तमूर्च्छानिदान

रक्तं हरितवर्णं वा वियत्पीतमथापि वा । पश्यंस्तमः प्रविश
सस्वेदश्च प्रबुद्धयते ॥ सपिपासः संतापो रक्तपीताकुलेक्षण
जातमात्रे च पतति शीघ्रं च प्रतिबुध्यते ॥ संभिन्नव
पीताभो मूर्च्छांगे पित्तसंभवे ॥

अर्थ—जिस को आकाश लाल, हरा, पीला दीखे पीछे मूर्च्छा आवे और साव-
धान होते समय पसीना आवे, प्यास होय, संताप होय, नेत्र लाल, पीछे होंय, मल
पतला होय, देह का वर्ण पीला होय ये लक्षण पित्त की मूर्च्छा के हैं ॥

कफमूर्च्छा

मेघसंकाशमाकाशमावृतं वा तमोघनैः । पश्यंस्तमः प्रविशति
चिराच्च प्रतिबुद्धयते ॥ गुरुभिः प्रावृत्तैरंगैर्यथैवाद्र्देण चर्मणा ।
सप्रसेकः सहलासो मूर्च्छांगे कफसंभवे ॥

अर्थ—कफ की मूर्च्छा में आकाश को मेघ के समान अथवा अंधकार के समान
अथवा बादल इन से व्याप्त देखकर मूर्च्छागत होय, देर में सावधान होय, भारी
बोझासा देहपर भार मालूम होय अथवा गीला चमडा धारण करासा मालूम होय,
मुख से पानी गिरे, रद होयगी ऐसा मालूम होय ॥

संनिपातमूर्च्छानिदान

सर्वाकृतिः सन्निपातादपस्मार इवापरः ।
स जंतुं पातयत्याशु विना वीभत्सचेष्टितैः ॥

अर्थ—सन्निपात की मूर्च्छा में सब दोषों के लक्षण होते हैं, ये रोग दूसरा अप-
स्मार (मृगी) जानना चाहिये. परन्तु अपस्मार में दातों का चवाना, मुख से श्ला-
ग का गेरना, नेत्रों का हाल और ही प्रकार का हो जाना, इत्यादिक लक्षण होते हैं
सो इस रोग में नहीं होते, इतना ही भेद है. * शंका—क्योंजी पूर्व तो छः प्र-
कार की मूर्च्छा कह आये फिर सन्निपात की मूर्च्छा कैसे कही. * उत्तर—चरक
की अष्टोत्तरीयाध्याय में लिखा है, जैसे अपस्मार चार प्रकार का है. घात का, पि-
त्त का, कफ का, सन्निपात का, उसी प्रकार मूर्च्छारोग भी चार प्रकार का है इसी म-
त को ग्रहण कर माधवाचार्य ने सन्निपात की मूर्च्छा कही है ॥

रक्तमूर्च्छानिदान

पृथिव्यापस्तमोरूपं रक्तगंधश्च तन्मयः । तस्माद्रक्तस्य गंधेन

मूर्च्छति भुवि मानवाः ॥ द्रव्यस्वभाव इत्येके दृष्ट्वा यदि
च मूर्च्छति ॥

अर्थ—पृथ्वी और जल ये दोनों तमोगुणविशिष्ट हैं सो सुश्रुत में लिखा है।
गीर रुधिर की गंध भी उन दोनों से अर्थात् पृथ्वी और जल से प्रगट है। तो रुधिर
की गंध भी तमोगुण विशिष्ट हुई इसी से जो तामसी पुरुष है सो रुधिर की गंधी
में मूर्च्छित होते हैं और जो राजसी, सात्विकी पुरुष हैं सो मूर्च्छित नहीं
होते * शंका—क्योंजी चंपक (चम्पा) पुष्प की गंध से भी मूर्च्छा होनी चाहिये
योंकि उस में भी पार्थिव अर्थात् तामसगुणविशिष्ट गंध है इस वारते कहते हैं। (द्र-
व्यस्वभावमित्येके) अर्थात् कोई आचार्य कहते हैं कि ये द्रव्य का ही स्वभाव है
अर्थात् रुधिर का यही स्वभाव है कि जिस की गंध से ही मनुष्य मूर्च्छित होय है।
यव प्रभाव को और भी दृढ करते हैं (दृष्ट्वा यदभिमुह्यति) अर्थात् रक्त के देखने से
ही मूर्च्छित होय है सो लिखा है ॥

विपमद्यमूर्च्छानिदान

गुणास्तीव्रतरत्वेन स्थितास्तु विपमद्ययोः ।

त एव तस्मादाभ्यां तु मोहौ स्यातां यथेरितौ ॥

अर्थ—तेलादिकों में जो दश गुण हैं वे ही गुण विष और मद्य में अत्यंत तीव्रता
रहते हैं। इसी से विष और मद्य के सेवन करने से मोह होय है, इस में भी मद्य
में तीव्र रहे और विष में तीव्रतर रहे इसी से विष का मोह स्वयं शांत नहीं होय।
योंकि विष अपाकी है और मद्य का मोह, मद्य के नशा उतरे पर शांत हो जाय
: यह भेद विष और मद्य में रहता है ॥

रक्तादिमूर्च्छाओं के लक्षण

स्तब्धांगदृष्टिस्त्वसृजा गृढोच्छ्वासश्च मूर्च्छितः । मद्येन विलप-
च्छते नष्टविभ्रांतमानसः ॥ गात्राणि विलिपन्भूमौ जरां यावन्न
याति तत् । वेपथुस्वप्रतृष्णाः स्युस्तमश्च विपमूर्च्छिते ॥ वेदि-
तव्यं तीव्रतरैर्यथास्वं विपलक्षणैः ॥

अर्थ—रुधिर की मूर्च्छा में अंग और नेत्र निश्चल हो जाय और श्वास अच्छे
प्रकार आवे नहीं। बहुत मद्य के पीने से जो मूर्च्छा हो उस के ये लक्षण हैं। बहुत
रुके, सोय जाय, संज्ञा जाती रहे, भ्रमयुक्त होय और जबतक मद्य न पवे तबतक
पृथ्वी में हाथ पैर पडके। विपजन्य मूर्च्छा में कांपे, सोवे, प्यास लगे और अंधे

आवे, एवं मूत्र, पत्र, दूध इन के भेदकर जो विषभक्षण से लक्षण होते हैं सो सब लक्षण होते हैं ॥

मूर्च्छाभेदकारण विशेषकरके कहता हूँ

मूर्च्छा पित्ततमः प्राया रजःपित्तानिलाद्भ्रमः । तमोवातकफा-
तन्द्रा निद्रा श्लेष्मतमोभवा ॥ इन्द्रियार्थेष्वसंवृत्तिर्गौरवं जृम्भणं
कुमः । निद्रार्तस्यैव यस्यैते तस्य तन्द्रा विनिर्दिशेत् ॥ योना-
यासः श्रमो देहे प्रवृद्धश्वासवर्जितः । कुमः स इति विज्ञेयो इन्द्रि-
यार्थप्रबोधकः ॥

अर्थ—मूर्च्छा में पित्त और तमोगुण अधिक रहे हैं. रजोगुण पित्त और वायु इन से भ्रम होय है. तमोगुण, वायु और कफ इन से तन्द्रा और कफ तथा तमोगुण इन से निद्रा उत्पन्न होती है. इन्द्रिय अपने अपने विषय को ग्रहण न करे, देह भारी हो जाय अर्थात् सुस्त हो जाय, जंभाई और कुम होय, ये लक्षण निद्रार्त पुरुष के सदृश जिस के होंय उस को तन्द्रा कहते हैं. इस में आधे नेत्र खुले रहते हैं, निद्रा में इन्द्रिय और मन को मोह होय है, तन्द्रा में केवल इन्द्रियों को ही मोह होय है. निद्रा और भ्रम ये दोनों अतिप्रसिद्ध होने से माधवाचार्य ने नहीं कहे, परंतु चरक में कहे हैं. सो इस प्रकार की जिस समय मन और इन्द्रिय खेद को प्राप्त होंय और अपने अपने विषय (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) को त्याग देंय, तब यह मनुष्य को निद्रा आती है और शरीर के आयास विना देह को श्रम होवे और अन्य आयास में जो बड़ा श्वास होता है वह नहीं होता और विषय में इन्द्रियों की प्रवृत्ति होती है इस को कुम कहते हैं ॥

संन्यासकथन

दोषेषु मदमूर्च्छाद्यागतवेगेषु देहिनाम् ।

स्वयमेवोपशाम्यन्ति संन्यासो नोपधैर्विना ॥

अर्थ—दोषों के वेग नष्ट होने से मदमूर्च्छादिक अपने आप शांत हो जाय हैं परंतु संन्यास यह औषध के विना शांत नहीं होय है ॥

संन्यासलक्षण

वाग्देहमनसां चेष्टा आशिष्यातिबलान्मलाः । संन्यस्यंत्यवलं
जंतुं प्राणायतनमाश्रिताः ॥ स ना संन्याससंन्यस्तः काष्ठभ्रूतो
मृतोपमः । प्राणैर्विमुच्यते त्रींशं मुक्त्वा सद्यःफलां क्रियाम् ॥

अर्थ—अत्यंत बलिष्ठ भये जो दोष, सो वाणी, देह और मन इन के व्यापार को बंद कर हृदय में प्राप्त हो निर्मल मनुष्य को मूर्च्छित करे, वह संन्यास से पीडित मनुष्य काष्ठ की भांति पृथ्वी पर गिरे उस की सद्यःफल चिकित्सा अर्थात् सुई से छेदना, तीखे अंजन का लगाना, अनामिका को पीडित करना, कोंच की फली लगाना, दाह देना, नास देना इत्यादिक क्रियान करे तो वह रोगी प्राणविशुक्त कहिये मरण को प्राप्त हो, अन्यथा बचे है ॥

मूर्छा

मूर्छा मोहो द्विधा स्यात्प्रभवति सहजागंतुभेदेन भिन्नस्त-
त्रागंतुस्त्रिधा स्याद्बुधिरविपसुराजन्मभेदाद्विभिन्ना । प्रत्येकं
दोषभेदाद्भवति च सहजा सा त्रिधा पट्सु पित्तं प्रधान्येनेह ति-
ष्टेदभिदधति च तां द्रंज्जां सन्निपातात् ॥

अर्थ—मूर्छासंबंध से मोह दो प्रकार का होता है सहज और आगंतुक इन में से आगंतुक रक्त, विप और मद्य इन से तीन प्रकार का है और सहज मूर्छा में पित्त-प्रधान होता है व यह मूर्छा द्रंज्ज और सन्निपात इन से भी होती है ॥

चिकित्साक्रम

सेकावगाहा मणयः सहाराः शीताः प्रदेहा व्यजनानिलाश्च ।

शीतानि पानानि च गंधवंति सर्वासु मूर्छास्वनिवारितानि ॥

अर्थ—अंग पर जल का तरडा देना, स्नान करना, रत्न और रत्नों के हार धारण करना, शीतल चंदनादिक लेप करना, पंखे से पवन करना, सुगंधित और शीतल पने ये उपचार संपूर्ण मूर्च्छा पर अबाध हैं ॥

दुरालभादिकाढा

दुरालभाकपायस्य घृतयुक्तस्य सेवनात् ।

भ्रमः शाम्यति गोविंदचरणस्मरणादिव ॥

अर्थ—धमासे का काढा कर उस में घी डालके देवे तो भ्रम की शान्ति होय जैसे गोविंदचरणस्मरण से पाप नष्ट होते हैं ॥

पंचमूलकाढा

पंचमूलकपायं च मधुना सितया पिबेत् ।

ज्वरघ्नांस्तु कपायांश्च तान्यथास्वं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—मूर्छा पर पंचमूल काढा, सहत और मिश्री मिलाय ले देवे और जो ज्वरनाशक काढे हैं वह भी यथादोष देखकर देवे ॥

क्षुद्रादिकाढा

क्षुद्रामृताग्रंथिकनागराणां मूर्छां जयेद्दारुणकाकपायः ॥

अर्थ—कटेरी, गिलोय, पीपरामूल, सोंठ और बरना इन का काढा मूर्छा का नाश करे है ॥

द्राक्षादिकाढा

द्राक्षासितादाडिमलाजवंति कङ्गारनीलोत्पलपद्मवंति ।

पिबेत्कपायाणि च शीतलानि पित्तज्वरं यानि च यापयन्ति ॥

अर्थ—दाख, मिश्री, अनारदाना, लजालू, लाल कमल, नीले कमल और कमल इन का काढा करके देवे अथवा जो पित्तज्वर पर काढा देना चाहिये सो इसपर देवे ॥

रक्तजादि का मूर्च्छापर शास्त्रार्थ

रक्तजायां च मूर्च्छायां हितः शीतक्रियाविधिः । मद्यजायां वमे-
न्मद्यं निद्रां सेवेद्यथासुखम् ॥ विपजायां विपद्धानि भेषजानि
प्रदापयेत् ॥

अर्थ—रुधिर के कारण मूर्छा होवे तो शीतल औषध हितकारी होती है. म पीने के कारण मूर्च्छा होय तो मद्य को रद्द करके निकाल देवे और सोय जावे. यां विषभक्षण से मूर्च्छा होवे तो विषनाशक औषध सेवन करे ॥

कोलादियोग

कोलमज्जाकणोशीरकेसरं शीतवारिणा ।

पीतं मूर्छां जयेल्लीङ्गा कृष्णां वा मधुसंयुताम् ॥

अर्थ—बेर की गुठली की मिर्गी, पीपल, खस, नागकेशर इन को जल में पीसके पीवे, अथवा सहत में मिलायके पीपल का चूर्ण सेवन करे तो मूर्च्छा दूर होय ॥

त्रिफलादियोग

मधुना हंत्युपयुक्ता त्रिफला रात्रौ गुडार्द्रकं प्रातः ।

सप्ताहात्पथ्यभुजो मदमूर्च्छाकासकामलामोहान् ॥

अर्थ—रात्रि के समय सहत में हरड, बहेडा, आवला इन के चूर्ण को मिलायके खाय और गुड, अदरक मिलायके प्रातःकाल खाय, पथ्य से रहे इस प्रकार सात दिन करे तो मद, मूर्च्छा, कामला और मोह इन का नाश होवे ॥

मूर्च्छादिकर्मविपाकः ।

महौषधामृताद्राक्षौष्करग्रंथिकोद्भवम् ।

पिवेत्कणायुतं काथं मूर्च्छायां च मद्देषु च ॥

अर्थ—साठ, गिलोय, मुनक्का, पोहकरमूल और पीपरामूल इन के काठे में का चूर्ण डालके पीवे तो मूर्च्छा और मद् इन को दूर करे ॥

दुरालभादिकाढा

पिवेद्दुरालभाक्काथं सघृतं भ्रमशांतये ।

अंजनान्यपि पीडाश्च धूमाः प्रथमनानि च ॥

अर्थ—धमासे के काठे में धी मिलायके पीवे अथवा तीव्र अंजन लगावे रोगी को (नोचने आदि से) पीडा करना, धूमपान अथवा प्रथमन नस्य मूर्च्छा शांत होवे ॥

सामान्य

सूचिभिस्तोदनं शस्तं दाहपीडा नखांतरे ।

लुंचनं नखलोम्रां च दंतैर्दशनमेव च ॥

अर्थ—मूर्च्छारोगी को सुई से चोटना, दाहकर्म करना, नख आदि को खूब दाबना और नखों को खेचना तथा दांतों से काटना ये सब कर्म मूर्च्छारोग पर कारी है ॥

आत्मगुप्तादियोग

आत्मगुप्तावघर्षश्च हितस्तस्यावबोधने ॥

अर्थ—मूर्च्छावाले रोगी के देह में कौच की फली घिस देवे तो उस को हो जावे ॥

नारिकेलादियोग

नारिकेलांबुना पीताः सक्तवः समशर्कराः ।

पित्तहृत्कफतृष्णामूर्च्छाभ्रमादीन्हन्ति दारुणान् ॥

अर्थ—नारियल के जल में सक्तु और खांड मिलायके पीवे तो पित्त, हृदय का तृष्णा, मूर्च्छा, भ्रम ये यदि भयंकर भी हों तो इन का नाश होय ॥

प्रकारांतर

अंडयोर्घर्षणं चापि हितमेतैर्विवाधनम् । नासावदनरोधेन
नस्यैर्मरिचिर्निमित्तैः ॥ नरं जागरयेद्भूमौ मूर्च्छितं मंदमारुतैः ॥

अर्थ—अंडकोशों में कौंच की फली आदि का लगाना मूर्च्छारोग में हितकारी है।
मूर्च्छा आनकर पृथ्वी में गिरे हुए मनुष्य को मिरचों की नस्य देकर उस के मुख
और नाक को बंदकर देवे अर्थात् श्वास रोक देवे तो मूर्च्छावाला रोगी तत्काळ
जाग उठे ॥

मृणालाद्यवलेह

शीतेन तोयेन भृशं मृणालं कृष्णा च पथ्या मधुनावलिह्यात् ।
कुर्याच्च नासावदनावरोधं क्षीरं पिवेद्वाप्यथ मानुषीणाम् ॥

अर्थ—शीतल जल से कमलकंद, पीपल और हरड इन को पीस सहत डालके
चाटे अथवा मुख, नाक इन में वायु का कुछ प्रतिबंध करे अर्थात् इन को रोक देवे
अथवा किसी स्त्री का दूध देवे तो मूर्च्छित मनुष्य जाग उठे ॥

अंजन

शिरीषबीजं गोमूत्रं कृष्णामरिचसैधवैः ।
अंजनं स्यात्प्रबोधाय सरसोनशिलावचैः ॥

अर्थ—सिरस के बीज, पीपल, काली मिरच और सैधानिमक इन को गोमूत्र
पीस इस का अथवा लहसन, मनसिल और वच इन को पीसके अंजन करे ।
मूर्च्छित मनुष्य जगे ॥

दूसरा प्रकार

अंजनं सम्यगारब्धं मधुसिंधुशिलोपणैः ।
प्रमोहद्रोहि भवति भापितं भिपजां वरैः ॥

अर्थ—सहत, सैधानिमक, मनसिल और काली मिरच इन का अंजन करे
मोह को नाश करे ऐसा उत्तम वैद्यां ने कहा है ॥

सामान्य उपचार अंजन

धूमांजनप्रथमनान्यवपीडनानि निस्तोददाहकचलोमविलुंठ-
नानि । संदंशितानि दशनैः कपिकण्डुपर्यश्चैतद्धितं सकलमोह-
विनाशनाय ॥

अर्थ—और अंजन नाक में तथा कान में फूंकना, पीडा देना, दुखाना,
छोम (रुआं) का उराटना, दांतों से काटना, कौछ की
मोहनाश करने में अर्थात् मूर्च्छा दूर करने में हित

स्विन्नमामलकादिलेह

स्विन्नमामलकं पिष्ट्वा द्राक्षया सह संसृजेत् । विश्वभेषजसंयुक्तं
मधुना सह लेहयेत् ॥ तेनास्य शाम्यते मूर्च्छा कासः श्वास-
स्तथैव च ॥

अर्थ—औटायके नरम करे हुए आंवलों को पीस दाख और सोंठ तथा सहत मि-
लायके चाटे तो मूर्च्छा, खांसी और श्वास ये शांत हों ॥

पथ्यादिघृत मदजन्यमूर्च्छापर

पथ्याक्राथेन संसिद्धं घृतं धात्रीरसेन वा ।

सर्पिः कल्याणकं वापि मदमूर्च्छापहं पिबेत् ॥

अर्थ—हरड के काठे से अथवा आंवले के रस से सिद्ध करा हुआ घी अथवा
कल्याण घृत पीवे तो यह मद और मूर्च्छा का नाश करे ॥

रस

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत् ।

शीतसेकावगाहादि सर्वं वा पीडनं हितम् ॥

अर्थ—पीपल, सहत और पारा इन को एकत्र खरल करके सेवन करे तथा शीतल
जल अंग पर छिड़के तथा नेत्रों पर छिड़का देना इत्यादिक पीडा हितकारी है ॥

ताम्रादिचूर्ण

ताम्रचूर्णसमोशीरं केसरं शीतवारिणा ।

पीतं मूर्च्छां द्रुतं हन्यादृक्षमिद्राशनिर्यथा ॥

अर्थ—लाल चंदन, लस और नागकेशर इन का चूर्ण करके शीतल जल के साथ
पीवे तो शीघ्र मूर्च्छा का नाश करे जैसे वज्र वृक्ष का नाश करे ॥

शुंक्वादिगुटी

शुंठीकणशताह्वानां साभयानां पलं पलम् ।

गुडस्य पद् पलान्येषां गुटिका भ्रमनाशिनी ॥

अर्थ—सोंठ, पीपल, सतावर और हरड इन प्रत्येक को चार २ तोले छेके चूर्ण
करे और गुड २४ तोले मिलायके गोली बनावे. इस को सेवन करे तो भ्रम को
निवारण करे ॥

मूर्च्छारोग में पथ्य

धूमोजनं नावनरक्तमोक्षो दाहश्च सूचीपरितोदनानि । रोम्णां
 कचानामपि लुंचनानि नखांतपीडा दशनोपदंशः ॥ नासामुख-
 द्वारमरुन्निरोधो विरेचनं छर्दनलंघनानि । क्रोधो भयं दुःख-
 करी च शय्या कथा विचित्रा सुमनोहराश्च ॥ छाया नभोम्भः
 शतधौतसर्पिर्मृदुश्च तित्तानि च लाजमंडः । जीर्णा यवा लो-
 हितशालयश्च कौंभं हविर्मुद्गसतीनयूपाः ॥ धन्वोद्भवा मांसर-
 साश्च रागाः सखांडवा गव्यपयः सिता च । पुराणकूष्मांड-
 पटोलमोचहरीतकी दाडिमनारिकेरम् ॥ मधूकपुष्पाणि च
 तंदुलीयस्तुपोदकान्नानि लघूनि वापि । निरंतरं चंदनचर्चनं
 च कर्पूरनीरं हिमवालुका च ॥ अत्युच्चशब्दोद्भुतदर्शनानि
 गीतानि वाद्यान्यपि चोत्कटानि । श्रमः स्मृतिश्चिन्तनमात्म-
 बोधो धैर्यं च मूर्च्छावति पथ्यवर्गः ॥

अर्थ—जल के छींटे देना, स्नान, माणियों का और हारों का पहनना, शीतल लेप,
 पंखे की पवन, शीतल और सुगंधित पानवस्तु, धारागृह अर्थात् जिस में फव्वारे लगे
 हुए ऐसा मकान, चंद्रमा की किरण, धूमपान, अंजन, नस्य, रक्तमोक्ष, दागना, सुई
 का चुभाना, छोटे २ बाल और बड़े २ बालों का उखाड़ना, नख (नाखून) को
 दवाना, दांतों से काटना, नाक, मुख इन से निकलनेवाली पवन का रोकना, दस्त,
 वमन का कराना, लंघन, क्रोध कराना, भय (डरपाना), दुःख देनेवाली सेज पर
 सुलाना, चित्रविचित्र और मनोहर कहानियों का कहना, छाया, वर्षा का जल, सौ
 वार धुला हुआ घी, नरम और तीखे खीलों के मंड [अथवा नरम और कड़ुए
 खीलों के मंड], पुराने जौं, लाल चावल, बड़े का घी, मूंग और मटर इन का यूप,
 जंगली जीवों के मांस का रस, रागखांडव, गौ का दूध, मिश्री, पुराना पेठा, परवल,
 केला, हरड, अनार, नारियल, महुए के फूँड, चौलाई, तुपोदक, हलके अन्न, नदी-
 कांठ का जल, सपेद चंदन, कपूर, नेत्रवाला, शीतल बालू रेत, अत्यंत ऊंचे स्वर से
 पुकारके बोलना, अद्भुत पदार्थ का देखना, उत्तम गीत, उत्तम बाजे, उत्कट कमें के
 करना, परिश्रम का न करना, भूख का सोचना, आत्मज्ञान और धीरज का धारण
 करना इत्यादि मूर्च्छारोगी को पथ्य पदार्थों का वर्ग कहा है ॥

मूर्छाअपथ्य

तांबूलं पत्रशाकानि दंतघर्षणमातपम् । विरुद्धान्यन्नपानानि

व्यवायं स्वेदनं कटु ॥ विण्मूत्रवेगरोधं च तक्रं मूर्च्छामयी त्यजेत् ॥

अर्थ—तांबूल (पान का बीडा), पत्तों का साग, दांतों का घिसना, धूप खाना, विरुद्ध अन्न पानों का सेवन, मैथुन करना, पसीने निकालना, चरपरे पदार्थों का सेवन, मलमूत्र आदि वेगों का रोकना (तृषा, निद्रा, इन के वेग को धारण करना), छाछ पीना, इतनी वस्तु मूर्छारोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्वारे बृहन्नियदुरत्नाकरे मूर्छारोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

पानात्ययपरमदपानाजीर्णपानविभ्रमनिदानम् ।

ये विपस्य गुणाः प्रोक्तास्तेपि मद्ये प्रतिष्ठिताः ।

तेन मिथ्योपयुक्तेन भवत्युग्रो मदात्ययः ॥

अर्थ—विप के जो गुण कहे हैं सोई गुण मद्य में हैं अर्थात् यही मद्य अविधि से सेवन करा भया घोर भयंकर मदात्यय रोग प्रगट करे हैं ॥

किंतु मद्यं स्वभावेन यथैवान्नं तथा स्मृतम् ।

अयुक्तियुक्तं रोगाय युक्तियुक्तं तथाऽस्मृतम् ॥

अर्थ—कोई ऐसी शंका करे कि विप के गुण मद्य में है इस से विपके समान मद्य को सेवन न करे इस विषय में कहते हैं मद्य यह स्वभाव से ही जैसे अन्न देहघारक है ऐसा ही है, परंतु वह मद्य अविधि से पीवे तो रोगकारक होय है और विधि से सेवन करे तो अमृत के समान गुण करे ॥

प्राणाः प्राणभृतामन्नं तद्युक्तं तु हंत्यसूत्र ।

विपं प्राणहरं यत्तु युक्तियुक्तं रसायनम् ॥

अर्थ—मनुष्य आदि सब जीव अन्न के आश्रय से रहते हैं इस से “प्राणाः अन्नं” अर्थात् प्राण ही अन्न है परंतु वह अन्न अप्रमाण सेवन करने से प्राण का नाश करता है. वस्तुतः विप प्राणनाशक है परंतु यथाशास्त्र सेवन करने से रसायन होता है ॥

मद्य का सेवनप्रकार

विधिना मात्रया काले हितैरन्नैर्यथावलम् । प्रहृष्टो यः पिबेन्मद्यं

तस्य स्यादमृतं यथा ॥ स्निग्धैः सदन्नैर्मासैश्च भक्ष्यैश्च सह
सेवितम् । भवेदायुः प्रकर्षाय बलायोपचयाय च ॥

अर्थ—विधिपूर्वक प्रमाण के संग योग्य काल में, चिकना आदि अच्छे अन्न के संग, बलाबल के अनुसार, अत्यंत हर्ष के साथ, जो मद्यपान करे, उस को अमृत के तुल्य गुण करे इस के पीने की विधि मदात्यय के दूसरे श्लोक की टिप्पणी में लिखा आये है तथा और ग्रन्थान्तरों में विधि तथा मात्रा काल का नियम लिखा है अर्थात् शुद्धशरीर होकर प्रातःकाल सोपदंश (अर्थात् मद्यपान करने के बाद जो चटनी आदि पदार्थ खाये जाय हैं सो) करके सहित सो दो पल पीवे, मध्यान्ह को चार पल पीवे, तदनंतर चिकना पदार्थ भोजन करे और सायंकाल को आठ पल पीवे इस जगह पल नाम जैपुरसाई १ टका पके को कहते हैं अथवा चिकने अन्न के साथ, मांस के साथ अथवा और भक्ष्य हैं उन के साथ मद्य को सेवन करे तो मनुष्य की आयुष्य बड़े, बल बड़े तथा देह पुष्ट होय, इस श्लोक में "स्निग्धैः सदन्नैः" यह जो पद धरा सो स्निग्ध का एक उपलक्षण मात्र है अर्थात् जो मद्य से विपरीत गुण रखते हैं जैसे तीक्ष्णादि दश गुण हैं उन से विपरीत होय उस के साथ मद्य पीना चाहिये सो तीक्ष्णादि दशगुण ग्रन्थान्तरों में लिखे है और विशेष देखना होय तो भावप्रकाश में देख लेवे, इस स्थल में ग्रन्थविस्तारभय से हम ने त्यागे हैं ॥

विधि से मद्य पीने के दूसरे गुण

काम्यता मनसस्तुष्टिस्तेजो विक्रम एव च ।

विधिवत्सेव्यमाने तु मद्ये सन्निहिता गुणाः ॥

अर्थ—मद्य को विधिपूर्वक पीने से सुन्दर स्वरूप, मन को संतोष, उत्साह, दूसरे को जीतने की सामर्थ्य इत्यादि हितकारक गुण होय हैं कहीं हुई विधि से विरुद्ध मद्यपान करने से मदात्यय रोग होय है सो मदात्यय तीन प्रकार का है, पूर्वमद मध्यमद और अन्त्यमद ॥

शुद्धकायः पिबेत्प्रातः सोपदंशं पलद्वयम् । मध्याह्ने द्विगुणं
तच्च स्निग्धाहारेण पाययेत् ॥ प्रदोपेष्टपलं तद्वन्मात्रामद्य
रसायने ॥

अर्थ—प्रातःकाल में दंतौन आदि शरीरशुद्धि करके ८ तोले मद्य सेवन करना-
दुपहरे में स्निग्ध पदार्थों के साथ द्विगुणित अर्थात् सोलह तोले और सायंकाल में
चौगुना अर्थात् ३२ तोले सेवन करने से रसायन होता है ॥

त्रिविधमद के लक्षण

बुद्धिस्मृतिप्रीतिकरः सुखश्च पानान्ननिद्रारतिवर्धनश्च ।

संपाठगीतस्वरवर्द्धनश्च प्रोक्तोऽतिरम्यः प्रथमो मदो हि ॥

अर्थ—बुद्धि, स्मरण और प्रीति इन को करे सुख करे, पान (पीना), अन्न, निद्रा और रति इन को बढ़ावे, सुन्दर पाठ और गीत गाने को बढ़ावे, ऐसा प्रथम मद अति रमणीय कहा है * शंका—क्योंजी मद ती मन में विकार उत्पन्न करे है फिर आप इस को रमणीय कैसे कहते हो ? * उत्तर—आप ने कहा सो ठीक है परंतु दुःख को दूर करने से इस को रमणीयता है, इसी कारण मुश्रुत ने हर्ष को मन के विकारों में कहा है ॥

मध्यममद के लक्षण

अव्यक्तबुद्धिस्मृतिवाग्बिचेष्टः सोन्मत्तलीलाकृतिरप्रशांतः ।

आलस्यनिद्राभिहतो मुहुश्च मध्येन मत्तः पुरुषो मदेन ॥

अर्थ—मध्यम मद से मतवाले पुरुष की बुद्धि, स्मरण और वाणी यथार्थ नहीं होय, विरुद्ध चेष्टा करे और बावले की सी चेष्टा करे, प्रचंड हो जाय, बारंबार आलस और निद्रा से पीडित हो जाय ॥

तृतीयमद के लक्षण

गच्छेदगम्यां न गुरुन्न मन्येत्त्वादेदभक्ष्याणि च नष्टसंज्ञः ।

ब्रूयाच्च गुह्यानि हृदि स्थितानि मदे तृतीये पुरुषोऽस्वतंत्रः ॥

अर्थ—तीसरे मद से पुरुष मद के स्वाधीन होकर अगम्या (गुरु की स्त्री आदि) से गमन करे, बड़ों का तिरस्कार करे, जो वस्तु खाने के योग्य नहीं है उस को खाय, संज्ञा जाती रहे और जो गुप्त बात हृदय में है उन को कहने लगे ॥

चतुर्थमद लक्षण

चतुर्थे तु मदे मूढो भग्नदारुविनिष्क्रियः । कार्याकार्यविभा-

गाज्ञो मृतादप्यपरो मृतः ॥ को मदं तादृशं गच्छेदुन्मादामिव

चापरम् । बहुदोषमिवाखूढः कांतारं स्ववशः कृती ॥

अर्थ—चतुर्थ मद से मनुष्य मूढ होकर टूटे शृङ्ग के समान क्रियारहित होय, कार्य (करने योग्य), अकार्य (नहीं करने योग्य) इन को न समझे, वह पुरुष मरे से भी अधिक मरा भया है कौन ऐसा स्ववश अथवा मुकृती पुरुष ऐसे निध मद (अमल)का

सहनशील होय है किंतु कोई नहीं होय कैसे कि जैसे सिंह व्याघ्रादि हिंसक पशु जिस वन में बहुत हैं ऐसे निर्जन वन में मार्ग में कौन चतुर मनुष्य जायगा. * शंका-चरक, विदेह, वाग्भट आदि आचार्यों ने तो चतुर्थ मद कहा ही नहीं है और सुश्रुत ने कहा है इन में विरोध क्यों है ? * उत्तर-चरक में जो दूसरे और तीसरे में अन्तर कहा है सोई सुश्रुत ने तृतीयमद को मानकर उस के लक्षण कहे हैं और जो चरक में तृतीय मद के लक्षण कहे हैं सो सुश्रुत ने चतुर्थ मद के लक्षण कहे हैं ऐसे विरोध नहीं है वास्तव में तीन ही मद हैं. * शंका-क्योंजी एक मद्य से प्रकार के मद होय हैं इस में क्या कारण है ? * उत्तर-मद्य यह अग्नि के समान है जैसे अग्नि में सुवर्ण (सोना) तपाने से उत्तम, मध्यम, अधम की परीक्षा होय है ऐसे ही मद्य भी सतोद्युण, रजोद्युण, तमोद्युणवाले पुरुषों की प्रकृतिसूचक है अर्थात् सतोद्युणवाले पुरुष को प्रथम मद, रजोद्युणवाले पुरुष को दूसरा मद, तमोद्युणवाले पुरुष को तीसरा मद प्राप्त होय है. सो चरक में लिखा है ॥

अविधि से सेवित मद्य के अन्य विकारों को कहता हूं

निर्भुक्तमेकान्तत एव मद्यं निपेव्यमाणं मनुजेन नित्यम् ।

आपादयेत्कष्टतमान्विकारानापादयेच्चापि शरीरभेदम् ॥

अर्थ-जिस पुरुष ने अन्नरहित निरंतर मद्यपान करा होय, वे अत्यंत दुःखदायक विकार (पानात्ययादिक) उत्पन्न करे है और शरीर का विनाश करे है ॥

अन्न के साथ मद्यपान करने के विकार

ऋद्धेन भीतेन पिपासितेन शोकाभितप्तेन बुभुक्षितेन । व्याया-
मभाराध्वपरिक्षतेन वेगावरोधाभिहृतेन चापि ॥ अत्यम्लभ-
क्ष्यावततोदरेण साजीर्णभुक्तेन तथाऽवलेन । उष्णाभितप्तेन च
सेव्यमानं करोति मद्यं विविधान्विकारान् ॥

अर्थ-क्रोधयुक्त, भय से पीडित, प्यासा, शोकवान्, क्षुधायुक्त, दंड कसरत और भार से जो क्षीण हो गया होय, मलमूत्र आदि वेग से पीडित हो, अत्यंत अम्लरस लाने से जिस का पेट भर रहा होय, अजीर्ण में भोजन करनेवाले पुरुष के, निर्बल पुरुष के, गरमी से तपायमान ऐसे मनुष्य के मद्य सेवन करने से अनेक विकार उत्पन्न होते हैं ॥

उन विकारों को कहते हैं

पानात्ययं परमदं पानाजीर्णमथापि वा ।

पानविभ्रममुग्रं च तेषां वक्ष्यामि लक्षणम् ॥

अर्थ—पानात्यय, परमद, पानाजीर्ण और पानविभ्रम इत्यादिक भयंकर विकार होते हैं उन के लक्षण कहता हूँ ॥

वातादिसंबंधमदात्ययलक्षण

हिक्काश्वासशिरःकंपपार्श्वशूलप्रजागरैः ।

विद्याद्बहुप्रलापस्य वातप्रायं मदात्ययम् ॥

अर्थ—हिचकी, श्वास, मस्तक का कंप होना, पसवाडों में पीडा, निद्रा का नाश और अत्यंत बकवाद ये लक्षण जिस में हों उस को वातप्रधान मदात्यय जानना ॥

पित्तजन्यमदात्ययनिदान

तृष्णादाहज्वरस्वेदमोहातीसारविभ्रमैः ।

विद्याद्धरितवर्णस्य पित्तप्रायं मदात्ययम् ॥

अर्थ—प्यास, दाह, ज्वर, पसीना, मोह, अतीसार, विभ्रम (कुछ कुछ ज्ञान भ्रम), देह का वर्ण हरा होय इन लक्षणों से पित्तप्रधान मदात्यय जानना ॥

कफमदात्ययनिदान

छर्द्यरोचकृच्छ्रासतन्द्रास्तैमित्यगौरवैः ।

विद्याच्छीतपरीतस्य कफप्रायं मदात्ययम् ॥

अर्थ—वमन (रद्द), अन्न में अरुचि, खाड़ी रद्द (ओकारी), तन्द्रा, देह गीली और भारी और शीत लगे, इन लक्षणों से कफप्रधान मदात्यय जानना ॥

त्रिदोषमदात्ययनिदान

ज्ञेयस्त्रिदोषजश्चापि सर्वालिंगैर्मदात्ययः ॥

अर्थ—जिस में तीनों दोषों के लक्षण मिलते हों उस को सान्निपातप्रधान मदात्यय जानना ॥

परमदलक्षण

श्लेष्मोच्छ्रयोंऽगगुरुता मधुरास्यता च विष्मूत्रसक्तिरथ तंद्रि-
रोचकश्च । लिंगं परस्य तु मदस्य वदन्ति तज्ज्ञास्तृष्णा रुजा
शिरसि संधिषु चातिभेदः ॥

अर्थ—कफ का कोप (यह नासास्त्रावादि जानना), देह का जड होना, मुँह में ठास, मलमूत्र का अवरोध, तन्द्रा, अरुचि, प्यास, मस्तक में पीडा और संधि में ठारी से तोडने सरीखी पीडा होय, ये परमद के लक्षण जानने ॥

वातमदात्यय में सौवर्चलादि

मद्यं सौवर्चलं व्योपयुक्तं किञ्चिज्जलान्वितम् ।

जीर्णमद्याय दातव्यं वातपानात्ययापहम् ॥

अर्थ—मद्य (दारु), संचर निमक और त्रिकुटे का चूर्ण इन को एकत्र करके थोडासा जल मिलायके जिसके मद्य पिया हुआ जीर्ण हो गया हो उसको देवे तो वातपानात्यय का नाश होय ॥

सूक्तशृंग्यादि

सूक्तं सौवर्चलं शृंगीश्रूषणार्द्रकदीपकैः ।

मद्यं पीत्वा जयत्युग्रं पवनोत्थं मदात्ययम् ॥

अर्थ—कांजी, संचर निमक, कांकडासिंगी, त्रिकुटा, अदरस और चित्रक इनके साथ मद्य पीवे तो वातपानात्यय को नाश करे ॥

आम्लस्निग्धादि

आम्लं स्निग्धोष्णलवणं रसा जांगलजा हिताः ।

पानकानि च मद्यानि हन्युर्वातमदात्ययम् ॥

अर्थ—खटाई, चिकने, गरम, जांगलदेशज जीवों का मांस, पने और मद्य ये वातमदात्यय को दूर करते हैं ॥

पित्तमदात्यय

पित्तपानात्यये येयं वटशृंगं हिमांडुना ।

सशर्करं पुनर्मद्यं हन्युर्वातमदात्ययम् ॥

अर्थ—पित्तके पानात्यय रोगमें वटके कोपल को पीस शीतल जलमें छान पीवे तथा मिश्री मिलाय दारु पीवे तो वातमदात्यय दूर होय ॥

क्षुद्रामलकादिपान

क्षुद्रामलकखर्जूरपरूपकहिमं पिबेत् ।

सिताविमिश्रितं पीतं पानात्ययविकारनुत् ॥

अर्थ—कटेरी, आमले, छुहारे, फालसे इनको शीतल जलमें छान मिश्री मिके पीवे तो सर्व पानात्ययोंको दूर करे ॥

सामान्य

पित्तोत्थे तु हितं मद्यं मधुरौपधिसाधितम् ।

उल्लिखेदथवा मद्यं पीत्वेशुरससंयुतम् ॥

अर्थ—पित्तजन्य मदात्यय में मिष्ट औषधों करके बना मद्य पीना हितकारी है अथवा ईस के रस को मिलायके मद्य पीवे फिर उस को उलटी कर देवे ॥

कफमदात्ययसामान्य

पानात्यये कफोत्थे तु तत्पीत्वोल्लेखनं चरेत् ।

यथावलं लंघनं च दीपनीयौषधानि च ॥

अर्थ—कफ के पानात्यय में मद्य पीकर वमन कर देवे तथा बलाबल के अनुसार लंघन करावे तथा दीपनीय औषधों को सेवन करे ॥

अष्टांगलवण

सौवर्चलमजाजी च वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् । त्वगेलामरिचा-

र्धांशं शर्कराभागयोजितम् ॥ एतल्लवणमष्टांगमग्निसंदीपनं परम् ।

मदात्यये कफोत्थे तु दद्यात्स्रोतोविशोधनम् ॥

अर्थ—संचर निमक, जीरा, तित्तडीक, अमलवेत, तज, इलायची और काठी मिरच प्रत्येक तोले २ छेवे और मिश्री २ तोले छे. यह अष्टांगलवण अग्नि को दीपन करे इस को कफमदात्यय में स्रोतःशुद्धि के लिये देवे ॥

सुपारी के मदपर

पूगान्मदः प्रशमयत्यचिरेण जंतोराघ्राय शंखरजसः प्रबलस्य

गंधम् । पानेन वा शिशिरपुष्करणीजलस्य संसेवितैरतिहितै-

र्व्यजनानिलैश्च ॥

अर्थ—सुपारी के खाने से प्रगट मद छोटे शंख के चूर्ण की प्रबल धूनी के संपने से नष्ट होवे अथवा शीतल पुष्करणी के जल पीने से अथवा अत्यंत हितकारी पंने की पवन करके तत्काल शांत होय ॥

दूसरा प्रकार

अवघ्राणेन धूमस्य सितालवणभक्षणात् ।

शर्करा केवला हंति दुःसहां पूगजां रुजम् ॥

अर्थ—सुपारी के मदपर नासिका द्वारा धूँआ पीवे अथवा मिश्री अथवा निमक खाय अथवा केवल मिश्री के खाने से सुपारी का दुःसह मद दूर होवे ॥

कोद्रवधत्तूर

कूष्मांडरसः सगुडः शमयति मदमाशु कोद्रवजः ।

धत्तूरजं च दुग्धं सर्करं पानयोगेन ॥

अर्थ—पेठे के रस में गुड डालके पीवे तो कोदों अन्न का मद नष्ट होवे और धत्तूरे के मदपर दूध में मिश्री मिलायके पीवे तो धत्तूरे का मद तत्काल नष्ट होय ॥

जायफल के मदपर

जातीफलेषु नवनीतसिताप्रयुक्तां पत्रां तथा मसृणचंदनशकरां वा ।

रंभाजलेन मदिरां विधमुष्टिगव्यं हन्यान्मदं सकलशीघ्रमिदं प्रयुक्तम् ॥

अर्थ—जायफल के उन्माद पर मक्खन, मिश्री और जावित्री खाय अथवा मक्खन, चंदन और मिश्री खाने को देवे तथा मद्य (दारू) के मद में केले का निकाला हुआ जल पिलावे और कुचले के नसे दूर करने को गौ का मक्खन देवे तो बुद्धिगत यह मद तत्काल दूर हो ॥

दूसरा प्रकार

जातीफलमदं शीघ्रं हंति पथ्या निपेविता ।

शीततोयावगाहश्च शर्करा दधियोजिता ॥

अर्थ—जायफल के मदपर हरड भक्षण करे तो मद शीघ्र दूर हो अथवा शीत जल से स्नान करे अथवा दही घृसा मिलायके भक्षण करे तो जायफल का मद शीघ्र दूर हो ॥

कज्जलीरस

धात्री स्वरसनिर्घाता रसगंधककज्जली सितासहिता ।

हरति मदात्म्यरोगान् गरुत्मानिवोरगान् सहसा ॥

अर्थ—आवले के रस में पारे और गंधक की कजली करके देय ऊपर से मिश्री का सरबत पीवे तो मदात्म्य रोग का नाश करे, जैसे गरुड सर्प का नाश करे है ॥

सामान्य

सर्वजे सर्वमेवेदं प्रयोक्तव्यं चिकित्सितम् ।

आभिः क्रियाभिः सिद्धाभिः शान्तिं याति मदात्म्यः ॥

अर्थ—त्रिदोषजन्य मदात्ययं पर ये पूर्वोक्त सर्व कर्म करे. ये सर्व क्रिया सिद्ध होने से मदात्यय शांति को प्राप्त होवे ॥

पानाजीर्ण के लक्षण

आध्मानमुग्रमथवोद्गिरणं विदाहः पाने त्वजीर्णमुपगच्छति लक्षणानि । ज्ञेयानि तत्र भिपजा सुविनिश्चितानि पित्तप्रकोपजनितानि च कारणानि ॥

अर्थ—अत्यंत पेट का फूलना, वमन अथवा डकार का आना, जलन होना, ये लक्षण जब मद्याजीर्ण होय हैं तब होते हैं. इस का कारण पित्तप्रकोप है ऐसा वैद्यों ने जानना ॥

पानविभ्रमलक्षण

हृद्गात्रतोदकफसंस्त्रवकंठधूममूर्च्छावमिज्वरशिरोरुजनप्रदाहाः ।
द्वेषः सुरान्नविकृतेष्वपि तेषु तं पानविभ्रममुशंत्यखिलेन धीराः ॥

अर्थ—हृदय और गात्र इन में सुई चुभाने की सी पीड़ा होय, कफ का स्राव होय, कंठ से धुआंसा निकलने की सी पीड़ा, मूर्च्छा, वमन, ज्वर, सिर में पीड़ा, मुख कफ से लिहसासा होय. अनेक प्रकार की भैरेय, पेटिक इत्यादिक सुराविकृति और लड्ड, पेडा आदि अन्नविकृति इन में द्वेष होय, ये सर्व लक्षण से इस रोग को पानविभ्रम ऐसे कहते हैं. सन्निपात के अंतर्गत होने से ये परमदादिक तीनों चरक ने नहीं कहे और पूर्वोक्त मदात्यय के लक्षणों से विलक्षण होने से सुश्रुत ने उक्त त्रिदोषज मदात्यय को पृथक् कहा है ॥

असाध्य लक्षण

हीनोत्तरौष्ठमतिशीतममन्ददाहं तैलप्रभास्यमतिपानहतं त्यजेत्तु । जिह्वौष्ठदंतमसितं त्वथवापि नीलं पांते च यस्य नयने रुधिरप्रभे वा ॥

अर्थ—ऊपर के होठ से नीचे का होठ कुछ लम्बा होय, देह के बाहर अति शीत लगे और भीतर अत्यन्त दाह होय, तेल से लिप्त सदृश मुख हो, जीभ, होठ, दांत ये काले अथवा नीले होय जाय, नेत्र पीले अथवा रुधिर के समान लाल होय ऐसा अतिपान से अर्थात् अतिमद्य पीने से नष्ट मनुष्य को वैद्य त्याग देय. (चरक में) ध्वंसक, विक्षेपक दो मद्यविकार और कहे हैं ॥

पानोपद्रव

हिक्काज्वरौ वमथ्रुवेपथुपार्श्वशूलाः

कासभ्रमावपि च पानहतं त्यजेत्तम् ॥

अर्थ—हिककी, ज्वर, वमन, कम्प, पसवाडों में पीडा होय, खांसी, भ्रम ये उपद्रव जिस के होय उस को वैद्य त्याग दे परन्तु जैज्जट आचारी कहते हैं कि असाध्य लक्षण से पृथक् पाठ होने से यह लक्षण होने से रोगी कुछसाध्य जानना, असाध्य न जानना ॥

मथिततैल

मथितं गोदधिसहितं तैलं कर्पूरसंमिश्रम् ।

आस्वाद्य पीतमाशु क्षपयति पानात्ययं रोगम् ॥

अर्थ—गौ का दही और तेल दोनों को एकत्र करके मथ लेवे. फिर इस में कपूर मिलायके धीरे २ स्वाद ले लेकर चाटे तो पानात्यय रोग का तत्काल नाश करे ॥

मद्योपशम

मद्यं पीत्वा यदि वा तत्क्षणमेव लेह्या शर्करा सघृता ।

मदयति न जातु मद्यं मनागपि प्रथितवीर्यमपि ॥

अर्थ—मद्य पीकर फिर घी मिश्री मिलायके चाटे तो चढी हुई भी दारु हो तथापि कदाचित् उस का मद नहीं आवे ॥

कृष्णादिपने

कृष्णाधान्यपरूपकामरतृटीजैरैः सनागोपणैः संपन्नं ससितं

मधूकसहितं युक्तं दधित्थद्रवैः । कर्पूरेण सुवासितं मदगदा-

न्पीतं जयेत् पानकं हृद्यं रोचनमग्निदीपनामिदं पूर्वाभिपग्भिः

स्मृतम् ॥

अर्थ—पीपल, घनिया, फालसा, देवदारु, इलायची, जीरा, नागकेशर, काली मिरच, मिश्री, मुलहठी और कैय कारस इन का पना करके उस को कपूर से वासित करके पीवे तो यह पना हृदय को प्रिय, रोचक, दीपक और मदनाशक है इस प्रकार प्राचीन वैद्यों ने कहा है ॥

सर्वजमदात्यय में त्रिफलादिपान

मधुना हंत्युपयुक्ता त्रिफला रात्रौ गुडार्द्रकं प्रातः ।

सप्ताहात्पथ्यभुजा मदमूर्च्छाकामलोन्मादान् ॥

अर्थ—त्रिफले के चूर्ण को सहत में मिलायके रात्रि के समय साय और अदरख गुड प्रातःकाल खावे इस प्रकार सात दिन साय और पथ्य भोजन करे तो यह मद, सूर्छा और कामला इन को जीते ॥

दुःस्पर्शादियोग

दुःस्पर्शनं समुस्तेन मस्तपर्पटकेन वा । जलमुस्तैः शृतं वापि
दद्याद्दोषविपाचनम् ॥ एतदेव च पानीयं सर्वत्रापि मदात्यये ।
निरंतरं पीयमानं पिपासाज्वरनाशनम् ॥

अर्थ—धमासे और नागरमोये का काढा अथवा नागरमोया और पित्तपापडा इन का काढा अथवा केवल नागरमोये का काढा दोषों के पचाने को देवे और जल पीने के ऐंज में इसी काढे को मदात्यय रोग में पिलावे. इस को निरंतर पीने से प्यास और ज्वर इन का नाश होय ॥

चव्यादिचूर्ण

चव्यं सौवर्चलं हिंगु पूरकं विश्वभेषजम् ।
चूर्णं मद्येन पातव्यं पानात्ययरुजापहम् ॥

अर्थ—चव्य, संचर निमक, हींग, बिजोरा और सांठ इन का चूर्ण मद्य के साथ पीवे तो पानात्यय व्याधि को नाश करे ॥

शतावरीपुनर्नवाघृत

शतावरीरसक्षीरयष्टीकल्कैः शृतं घृतम् ।
पुनर्नवाक्काथपयो पानात्ययमपोहति ॥

अर्थ—शतावर का काढा दूध और मुलहठी का चूर्ण इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी अथवा पुनर्नवा के काढे के साथ औंटे हुए दूध को पीवे तो पानात्यय रोग दूर हो ॥

मापघृत

कट्फलमुस्तगुडूचीमापैः क्रमवर्धितैश्च तत्सर्वैः ।
घृतमर्दितैर्मापघृतं हन्याद्गंधं सुराभवं सपदि ॥

अर्थ—कायफल १, नागरमोया २, गिलोय ३ और रट्टद ४ भाग इस प्रकार सय को लेकर घी में खरल करे तो इसे मापघृत कहते हैं यह मद्य की दुर्गंध को दूर करनेवाला है ॥

सामान्यशास्त्रार्थ

अहानि सप्त चाष्टौ वा नृणां पानात्ययः स्मृतः । पानं हि मज्ज-
ते जीर्णमत ऊर्ध्वं विमार्गगम् ॥ पानाजीर्णविनाशाय कुर्यात्क-
फहरं विधिम् ॥

अर्थ—मनुष्य को पानात्यय सात दिन अथवा आठ दिन होता है. आठ दिन के बाद पानाजीर्ण होकर अंगों में प्रवेश होवे और कुत्सित मार्ग में जाता है. उस को पानाजीर्ण कहते हैं. इस पानाजीर्ण के दूर करने को कफहरणकारी क्रिया करनी चाहिये ॥

खर्जूरादिमंथ

मंथः खर्जूरमृद्धीकावृक्षाम्लाम्लीकदाडिमैः ।

परूपकैः सामलकैर्युक्तो मद्यविकारनुत् ॥

अर्थ—खर्जूर, दाख, अमलवेत, जलवेत, अनारदाना, फालसा और आवले इन से बना हुआ मंथ सरबत के समान होता है. यह मद्यविकारों को नाश करे ॥

मदात्ययपथ्य

संशोधनं संयमनं स्वपनं लंघनं भ्रमः । संवत्सरसमुत्पन्नाः
शालयः पष्टिका यवाः ॥ मुद्गाश्च मापगोधूमा लावतिस्तिरका-
दयः । वेसवारो विचित्रान्नं हृद्यं मद्यं पयः सिता ॥ तंदुलीयं
पटोलं च मातुलुगं परूपकम् । खर्जूरं दाडिमं धात्री नारिकेरं
च गोस्तनी ॥ सर्पिः पुराणं कर्पूरं प्रतीरं शिशिरोनिलः । धारा-
गृहं चन्द्रपादा मणयो मित्रसंगमः ॥ क्षौमांबरं प्रियाश्लेषो गीतं
वादित्रमुद्धतम् । शीतांबु चंदनं स्नानं सेव्यमेतन्मदात्यये ॥

अर्थ—मदात्यय रोग होने से उस को दस्त करावे, वेगों का नियमन, निद्रा, लंघन, भ्रम, (भ्रम), एक वर्ष के पुराने चावल, सांठी चावल, जौ, मूंग, उडद, गेरू, लबापक्षी, तीतरआदि [मटर, रागसांडव, काला हिरण, बकरा, मुर्गा, मोर, और शशा इन का मांस], वेसवार (गरम मसाला), चित्र विचित्र अन्न, प्रियमद्य, दूध, सांड, चौलाई, परवल, बिजोरा, फालसे, खर्जूर (खुहारे), अनार, आवले, नारियल, मुनक्का दाख, पुराना घी, कपूर, नदी सरोवर आदि का तप्त, शीतल, पवन, फव्वारेवाला घर, चंद्रमा की चांदनी, मणिपों का धारण, इष्टमित्रों से मिलाप,

रेसमी बच्चों का धारण, प्यारी स्त्री का आलिंगन करना, गीत गाना, अत्यंत बाजे बजाना, शीतल जल, चंदन और स्नान ये उपचार करे, ये मदात्ययनाशक हैं ॥

मदात्यय अपथ्य

स्वेदोजनं धूमपानं नावनं दंतघर्षणम् ।

तांबूलं चाप्यपथ्यं स्यान्मदात्ययविकारिणाम् ॥

अर्थ—पसीने निकालना, अंजन, धूमपान, नस्य, दातों का घिसना, चीड़ा चवाना ये सब मदात्ययरोगवाले को अपथ्य जानना ॥

इति श्रीबृहत्त्रिघटुरत्नाकरे पानात्ययरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

दाहरोगकर्मविपाकः ।

पुनरग्नौ ष्ठीवति तं कपिलनामग्रहो गृह्णाति । तत्क्षणाज्ज्वरशूलसर्वांगदाहपीतनयनश्च भवति ॥ बलिं च निशि चतुष्पथे पिष्टलाजपिण्याकरुधिरतिलाश्वगंधपुष्पैर्मिश्रेण दद्यात् । गृहीष्व च बलिं चेमं कपिलाख्यमहाग्रह । आतुरस्य सुखं सिद्धिं प्रयच्छ त्वं महाबल ॥

अर्थ—जो प्राणी अग्नि में धूकता है उस को कपिल नामक ग्रह पीडा करे है तथा तत्क्षण ज्वर, शूल, सर्वांग मे दाह और नेत्रों में पीडापन ये उपद्रव होते हैं. उन उपद्रवों के दूर करने को चौराहे में रात्रि के समय जून, खील, खल, रुधिर, तिल, असगंध और फूल इन को एकत्र करके 'गृहीष्व च बलिं चेमम्' इस मंत्र करके बलिदान देवे तो दाहरोग शांत होवे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

तनौ भवति भूपुत्रो रंध्रे भवति भास्करः ।

जन्मकाले यदा यस्य स दाहज्वरवान्भवेत् ॥

अर्थ—जिस के जन्मलग्न में मंगल और अष्टम स्थान में सूर्य बैठा होय वह प्राणी दाह और ज्वररोगी होता है ॥

दाहनिदान

त्वचं प्राप्तः समानोष्मा पित्तरक्ताभिमूर्च्छितः ।

दाहं प्रकुरुते घोरं पित्तवत्तत्र भेषजम् ॥

अर्थ—दाहरोग सात प्रकार का है. तिस में प्रथम मद्यजन्य दाह के लक्षण कहते हैं. मद्यपान करने से कुपित भया जो पित्त उस पित्त की उष्णता पित्तरक्त को बढ़ाय भयंकर दाहरोग उत्पन्न करे. इस में पित्त के समान औषध करे ॥

सामान्यचिकित्सा

उत्तुंगकुचसंसर्गवीणानां हरिणीदृशाम् । गायनं सुकुमारीणां
दाहमुत्सादयेद् द्रुतम् ॥ रसौषधसमुद्भूते तापेपि सकले हितम् ॥

अर्थ—उठे हुए कठोर कुचों का संबंध जिस वीणा को हैं उस वीणा को लेकर गान करनेवाली सुकुमार स्त्री के गान करके, रस और औषध से उत्पन्न हुआ सर्व प्रकार का ताप दूर होय ॥

कोलामलकयुक्तैर्वा धान्याम्लैरपि बुद्धिमान् । छादयेत्तस्य
सर्वागमारनालाद्रैवाससा ॥ लामज्जेन युक्तेन चंदनेनानुलेपयेत् ।
चंदनांबुकणस्यांदितालवृंतोपवजिनम् ॥

अर्थ—चेर, आवले इनकरके युक्त खटाई को अंग में लगाने से अथवा इस खटाई को वस्त्र में लगायके उस वस्त्र से सब देह को लपेट देवे अथवा कांजी में भीगे हुए कपड़े से सब देह को ढक देवे अथवा रोहिस तृण और चंदन इस का लेप देह में करे अथवा चंदन के जल को छिडकके उस पंखे की पवन करे तो दाहरोग दूर हो ॥

दूसरा प्रकार

सुप्यादाहादित्तोभोजकदलीदलसंस्तरे । परिपेकावगाहौ च
व्यजनानां च सेवनम् ॥ शस्यते शिशिरं तोयं दाहत्पणोप-
शांतये ॥

अर्थ—दाहपीडित मनुष्य को कमलके केले के पत्तों की शय्या बनाकर उस पर शयन करावे अंगों में जल छिडके, जल में गोते मारे, पंखे की पवन करावे तथा शीतल जल पीवे तो दाह और तृपारोग शांत होवे ॥

रक्तजदाहलक्षण

कृत्स्नदेहानुगं रक्तमुद्रितं दहति ध्रुवम् । संब्रूयते तृप्यते वा ता-
म्राभस्ताम्रलोचनः ॥ लोहगंधांगनयनो वह्निनैवावकीर्यते । पि-
तज्वरसमः पित्तात्स चाप्यस्य विधिः स्मृतः ॥

अर्थ—सर्व देह का रुधिर कुपित होकर अत्यन्त दाह करे और वह रोगी अग्नि के समीप रहने से जैसा तपे है ऐसा तपे, प्यासयुक्त ताम्र के रंगसदृश देह का रंग होय, और नेत्र भी लाल होय, तथा मुस से और देह से तप्त लोहेपर जल डालने की सी गंध आवे और अंगों में मानों किसी ने अग्नि लगाय दीनी ऐसी वेदना होय, पित्त से जो दाह होय उस में पित्तज्वर के से लक्षण होते हैं. उसपर पित्तज्वर की चिकित्सा करनी चाहिये. पित्तज्वर में और पित्त के दाह में इतना अन्तर है कि पित्तज्वर में अग्नि और आमाशय का दुष्ट होना होय है और पित्त के दाह में नहीं होय और सय लक्षण होते हैं ॥

रसादिगुटी

रसवलिघनसारचंदनानां सनलदसेव्यपयोदजीवनानाम् ।

अपहरति गुटी मुखस्थितेयं सकलसमुत्थितदाहमाश्रयेत्ताम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, कपूर, चंदन, रस, नागरमोथा और घी इन की गोली बनायके मुस में रखे. तो त्रिदोषजन्य दाह को नाश करे ॥

चंद्रकलारस

गगनदरदयुक्तं शुद्धसूतं च गंधं प्रहरमधुसुपिष्टं वल्लयुग्मं नरो-
द्यात् । ज्वरहरगदासिंहः शृंगवेरोदकेन प्रथमजनितदाहं तक्र-
भक्तं च भोज्यम् ॥

अर्थ—अप्रक भस्म, हिंगलू, पारा और गंधक इन सय को एकत्र कर सहत में १ प्रहर सरल करे फिर इस में से दो वल्ल के अनुमान अदरस के रस से चाटे तो घादी के कोप से हुआ दाह शांत हो. इस प्राणी को छाछ भात पय्य में देवे. यह ज्वरनाशक भी है इस रस को गदासिंहरस कहते हैं ॥

तृष्णानिरोधजदाहलक्षण

तृष्णानिरोधादग्धातौ क्षीणे तेजःसमुद्धतम् । सवाद्याभ्यंतरं देहं
प्रदहेन्मंदचेतसः ॥ संशुष्कगलताल्योष्टौ जिह्वां निष्कृष्य वैपते ॥

अर्थ—प्यास के रोकने से जलरूप घातु क्षीण होकर तेज काहिये पित्त की गरमी को बढ़ावे तब वह गरमी देह के बाहर और भीतर दाह करे, इस दाह से रोगी वेसुध होय और गला, तालू, होठ यह अत्यंत सुख और जीभ को बाहर बाढ दे, कापे ॥

तृष्णानिरोधजदाह

सशर्करं सेंदुशैलं शीतमंभः पिवेत्ररः ।

तृष्णानिरोधजं दाहं हंति तोयमिवानिलम् ॥

अर्ध-मिश्री, कपूर, शिलाजीत इन का चूर्ण शीतल जल में मिलायके पीवे तो तृषाके निरोध से उत्पन्न हुए दाह का नाश करता है जैसे पानी अग्नि का नाश करता है ॥

यवादिमंथ

पाचितैः शीतनीरेण सघृतैर्यवसक्तुभिः ।

नातिसांद्रवैर्मथस्तृषादाहार्तिपित्तहा ॥

अर्ध-जौ के सत्तू को शीतल जल और घी में मिलाय के पचावे फिर इस को बहुत गाढा न होवे ऐसे मंथ करके पीवे तो तृषा, दाह और पित्त को दूर करे ॥

मृतसंजीवनीगुटी

यष्टीमधुलवंगं च शिलाकल्कं वृट्तिस्तथा । सहस्रभावनाः कार्या
नवतंदुलवारिणा ॥ याममात्रं दृढं मर्द्य वटी कोलसमा स्मृता ।
कृष्णकार्पासनीरेण तृष्णादाहज्वरान् जयेत् ॥ मूर्च्छाद्यमुग्ररोगं
च वातं पित्तं च नाशयेत् । मृतसंजीवनी प्रोक्ता पूज्यपादैरुदीरिता ॥

अर्ध-मुलहठी, लौंग, शिलाजीत और इलायची इन के चूर्ण को नवीन चांवलों के घोंघन की हजार भावना देवे फिर एक प्रहर उत्तम खरल करके घेर के बराबर गोली बनावे फिर इस गोली को काले कपास के जल में मिलायके सेवन करे तो तृषा, दाह, ज्वर, मूर्च्छादि उग्ररोग तथा वातपित्त इत्यादि रोगों को नाश करे इस को मृतसंजीवनी गोली श्रेष्ठ पुरुषों ने कही है ॥

रक्तपूर्णकोष्ठजदाह

असृजः पूर्णकोष्ठस्य दाहोन्यः स्यात्सुदुस्तरः ॥

अर्ध-शुद्ध कहिये तलवार आदि के लगने से प्रगट रुधिर उस रुधिर से कोष्ठ कहिये हृदय भर जाय तब दाह अत्यन्त दुःसह प्रगट होय ॥

रक्तपूर्णकोष्ठजदाह

धान्याकधात्रीवासानां द्राक्षापर्पटयोर्हिमः ।

रक्तपित्तं ज्वरं दाहं तृष्णां शोषं च नाशयेत् ॥

अर्ध-घनिया, आवले, अहूसा, दास और पित्तपापडा इन का हिम रक्तपित्त, ज्वर, दाह, तृषा और शोष इन को नाश करे ॥

दूसरा प्रकार

पीत्वा वेणुत्वचः काथं सक्षौद्रं शिशिरं नरः ।

रक्तसंपूर्णकोष्ठोत्थदाहं जयति दुस्तरम् ॥

अर्थ—बांस की त्वचा का काटा करके शीतल करे और उस में सहत डालके पीवे तो रुधिर से संपूर्ण कष्ट से उत्पन्न घोर दाह दूर होवे ॥

दशसारचूर्ण

यष्टीधात्रीफलाद्राक्षएलाचंदनवालकम् । मधूकपुष्पं खजूरं
दाडिमं पेपयेत्समम् ॥ सर्वतुल्या सिता योज्या पलार्धं
भक्षयेत्सदा । दशसारमिदं ख्यातं सर्वपित्तविकारनुत् ॥

अर्थ—मुलहटी, आवला, मुनक्का, इलायची, चंदन, नेत्रवाला, महुआ के फूल, खजूर, अनारदाना इन को समभाग लेकर चूर्ण करे फिर इस चूर्ण के बराबर मिश्री मिलाय सब को मिलाय दो तोले के प्रमाण सेवन करे इस को दशसार चूर्ण कहते हैं. यह सर्व पित्तविकारों को दूर करे ॥

धातुक्षयजन्यदाह

धातुक्षयोत्थो यो दाहस्तेन मूर्च्छात्तृपान्वितः ।

क्षामस्वरः क्रियाहीनः स सीदेदृशपीडितः ॥

अर्थ—धातु के क्षय होने से जो दाह होय उस से रोगी मूर्च्छा प्यास इन से युक्त होय, स्वरभंग और चेष्टाहीन होय और इस दाह से पीडित होकर यदि चिकित्सा न करावे तो वह रोगी मरण को प्राप्त होय ॥

खजूरादिचूर्ण

खजूरामलवीजानि पिप्पली च शिलाजतु । एलामधुकपापाण-
चंदनैर्वारुवीजकम् ॥ धान्यकं शर्करायुक्तं पातव्यं ज्येष्ठिवारिणा ।
अंगदाहं लिगदाहं गुदजं क्षीणशुक्रजम् ॥ शर्कराश्मरिशूलघ्नं
वृष्यं बलकरं परम् । नाशयेन्मूत्ररोगांश्च तथा शुक्रभवानपि ॥

अर्थ—खजूर, आंवले, पीपल, शिलाजीत, इलायची, मुलहटी, पापाणभेद, चंदन, कांकडी के बीज, धनिया और मिश्री इन का चूर्ण मुलहटी के काटे के साथ पीवे तो अंगों का दाह, लिगदाह, गुददाह, क्षीणशुक्रदाह, शर्करा, पयरी और शूल इन का नाश होवे. तथा यह वृष्य तथा बल का देनेवाला है और मूत्ररोग, शुक्र से उत्पन्न हुए रोग इन को नाश करे ॥

धातुक्षयजदाह

धातुक्षयोत्थं 'दाहं तु जयेदिष्टार्थसाधनैः ।

क्षीरमांसरसाहारैर्विधिनोक्तेन तत्र च ॥

अर्थ-धातुक्षय से जो दाह होता है वह इष्टसाधनों करके अथवा क्षीर, मांसरस इन का आहार इत्यादि विधि से जीते ॥

पित्तदाह

पित्तज्वरहरः सर्वो पित्तदाहे विधिर्मतः ॥

अर्थ-पित्तदाहपर संपूर्ण पित्तज्वरनाशक विधि करनी चाहिये ॥

औदुंबरस्य निर्यासः सितया दाहनाशनः ॥

अर्थ-गूलर का दूध मिश्री डालके देवे तो दाह का नाश करता है ॥

छिन्नासारः सितायुक्तः पित्तज्वरनिषूदनः ॥

अर्थ-गिलोय के सत्व को मिश्री में मिलायके खाय तो पित्तज्वर को दूर करे ॥

क्षतजदाह

क्षतजोनश्नतश्चान्यः शोचतो वाप्यनेकधा ।

तेनांतर्दह्यतेत्यर्थं तृष्णामूर्च्छाप्रलापकम् ॥

अर्थ-क्षत (घाव) के होने से जो दाह होय उस से आहार थोडा रह जावे, और अनेक प्रकार के शोक कर दाह होय और इस दाहकरके अभ्यन्तर दाह होय; तथा प्यास, मूर्च्छा और प्रलाप (बकवाद) ये लक्षण हों ॥

चंदनादिचूर्ण

चंदनोशीरकुष्ठाद्धान्नीचोरकमुत्पलम् । मधुकं मधुपुष्पं च

द्राक्षा खजूरकं तथा ॥ चूर्णं कृत्वा समसितं प्रातः शीतांबुना

पिवेत् । रक्तपित्तं तथा श्वासं पित्तं गुल्मं समुद्धरेत् ॥ अंगदाहं

शिरोदाहं शिरोविभ्रममेव च । कामलां च प्रमेहांश्च पित्तज्वरवि-

नाशनम् ॥ चंदनाद्यमिदं चूर्णं पूज्यपादेन भापितम् ॥

अर्थ-चंदन, खस, कूठ, नागरमोया, आवले, गटोना, कमल, मुलहटी, महुआ के फूल, दास और खजूर इन का चूर्ण कर चूर्ण के बराबर मिश्री मिलावे. प्रातःकाल शीतल जल के साथ खाय तो रक्तपित्त, श्वास, पित्तजन्य गोला, अंगों का दाह, मस्तकदाह, मस्तक का घूमना, कामला, प्रमेह और पित्तज्वर इन को दूर करे ॥ इन को चंदनाद्य चूर्ण कहते हैं यह श्रेष्ठ पुरुष ने कहा है ॥

रक्तजदाहपर

शाखाश्रयां यथान्यायं रोहिणीं व्यधयेच्छिराम् ।

रक्तजातस्ततो दाहः प्रशाम्यति न संशयः ॥

अर्थ—हाथ में रोहिणी नाम की शिरा (नस) है उस को शस्त्र से छेदकर रुधिर निकाले तो रक्तजन्य दाह शांत होवे. इस में संशय नहीं है ॥

चंदनादिकाढा

चंदनं पर्पटोशीरनीरनीरदनीरजैः । मृणालमिसिधान्याकपञ्ज-
कामलकैः कृतः ॥ अर्धशिष्टः सितासीतः पीतः क्षौद्रसमन्वितः ।
काथो विपोथयेदाहं तत्क्षणं परमोल्बणम् ॥

अर्थ—चंदन, पित्तपापडा, रस, नेत्रवाला, नागरमोया, कमल, भसीडा, सोंफ, निया, पन्नास और आंवले इन का काढा करे जब जल दो भाग जल जावे अर्थात् पाधा रहे उस में मिथी मिलाय जब शीतल हो जावे तब सहत ढालके पीवे तो तक्षण बड़े भारी बड़े हुए दाह का नाश करे ॥

योग

रसौपधिसमुद्भूते तापेपि सकले हितम् । पानीयामलकी द्राक्षा
नारिकेलेशुशर्करा ॥ सेवनाय हिता तापे कोमलं मूत्रलं फलम् ॥

अर्थ—रस सेवन से अथवा औषध के राने से यदि दाह भगट हुआ होवे तो उस दूर करने को जल, आंवले, दास, नरियल, ईस मिथी अथवा ककड़ी ये पदार्थ लेन करे तो हित होवे ॥

लाजादिकाढा

लाजाह्वचंदनोशीरकाथोन्तःशर्करान्वितः ।

शीतः पीतो निहंत्याशु दाहं पित्तज्वरं नृणाम् ॥

अर्थ—नेत्रवाला, लालचंदन और रस इस का काढा करके उस में मिथी मिलाके पीवे तो दाह और पित्तज्वर इन को दूर करे ॥

शीतांबुचंदनसुगंधिकपाययुक्तमाश्लिष्य चार्द्रवसनोपहृतांबु-
पूर्णाः । तैलेर्मधूककुसुमारुकचंदनाद्यैर्द्राणीं प्रपूर्य शिशिरव-
गाहयेत्तम् ॥

येत् । धूपं षोडशभागं च मरीचाष्टवरालकम् ॥ कचोरमुशिरं
 श्वेतं कृष्णोशीरस्तथैव च । मंजिष्टं रंगचूर्णं च श्रीगंधं रक्तचंद-
 नम् ॥ कृष्णागुरुं च रुद्राक्षान् पलमेकं प्रयोजयेत् । तच्चूर्णं
 तैलमध्ये च निक्षिपेत्पाचयेत्सुधीः ॥ मेहारिकाष्टयुक्तेन पाचये-
 त्कोमलाग्निना । सुपक्वं तैलमुद्धृत्य रात्रौ वंगं च मर्दयेत् ॥
 अंगशूलमंगदाहात्रेत्ररोगान्सपीनसान् । पांडुकामलमुष्णानि
 सूतिकासन्निपातजित् ॥ करदाहान्पाददाहान् तंद्रां कटिसमीर-
 जान् । क्षयकुष्ठादिकंद्दूश्च गजकर्णादिकं तथा ॥ शिरोरोगान्
 भ्रमान् पित्तं नेत्राणां दृष्टिगोचरम् । अमृतं मात्रतश्चैव ज्वराणां
 जीर्णिनामपि ॥ अस्थिगतं ज्वरं चैव मेहज्वरप्रशांतये । सर्वांगे
 मर्दनं चैव मंगलस्नानमाचरेत् ॥ शिवोदितमिदं तैलमश्विभ्यां
 गोचरीकृतम् । सर्वरोगहरं चैव दुर्लभं भिषजैर्भुवि ॥ साधयेद्गुरु-
 मुखेनैव सिद्धिर्भवति नान्यथा ॥

अर्थ—श्वेत पुनर्नवा अर्थात् विपक्षपरा की जड ४०० तोले को काली गौ के
 ५६ तोले घी और दूध में पीसे तथा ४०० तोले तिलों का तेल और धूप १६,
 ली मिरच और राल ८ भाग, कचूर, खस, नेत्रवाला, मजीठ, करया, चंदन, ला-
 चंदन, काली अंगूर और रुद्राक्ष ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे इन सब के चूर्ण को
 स तेल में डालके मेहारी नामक लकड़ी की अग्नि के योग से मंदाग्निपरं पचन करे
 व तैल सिद्ध हो जावे तब उस को उतार लेवे इस तेल को रात्रि में देह में मालिस
 रे तो देह का शूल, अंगदाह, नेत्ररोग, पीनस, पांडुरोग, कामला, गरमी, प्रसूत के
 ग, संनिपात, हाथ पैरों का दाह, तंद्रा, कमर की वादी, क्षय, कृच्छ्र, खुजली, गज-
 र्ण, मस्तकरोग, भ्रम (भौर), पित्त, नेत्ररोग, दृष्टिरोग, जीर्णज्वर, अस्थिज्वर
 र मेहज्वर इन रोगों में इस तेल को सब देह में मालिस करके मंगलस्नान करे।
 ह तैल प्रथम शिव ने कहा है और अश्विनीकुमारों ने प्रासिद्ध करा है यह संपूर्णरो-
 मांशक है. यह वैद्यों को पृथ्वीपर दुर्लभ है. इस तेल को सिद्ध करने से प्राणी सिद्ध
 ता है. इस को गुरु के बताये हुए मार्ग से बनावे तो सिद्ध होय और विनागुरु के
 ताए इसकी सिद्धी नहीं होवे. इस में संदेह नहीं है ॥

धान्यहिम

प्रातः पर्युषितं धान्यं लुलितं सितया युतम् ।

अंतर्हाहं हरेत्पीतं दुःखं मृत्युंजयो यथा ॥

अर्थ—रात्रि में कोरकुहड़े में कटे हुए धानिये को भिगोय देवे प्रातःकाल उस ो मलके कपड़े में छान लेवे इस जल में मिश्री मिलायके पीवे तो देह के भीतर । दाह नष्ट होवे जैसे मृत्युंजय के स्मरण से दुःख ॥

घृतलेप

सहस्रधौतेन घृतेन दिग्धदेहस्य दाहः कृशतां विभर्ति ।

अन्यांगनासंगमसादरस्य स्वीयेषु दारेषु यथाभिलापः ॥

अर्थ—हजारवार धुले हुए घी की मालिस देह में करे तो दाह नष्ट होवे. इस में दृष्टांत है कि जैसे परखी से जिस का मन लगा है उस का अपनी घर की स्त्री में जैसे इच्छा नष्ट हो जाती है ॥

निंबप्रवाललेप

तृड्दाहमोहाः प्रशमं प्रयांति निम्बप्रवालोलिथितफेनलेपात् ।

यथा नराणां धनिनां धनानि समागमाद्धारविलासिनीनाम् ॥

अर्थ—नीम के कोमल २ पत्तों को पीस जल में गेरके रई से मथ डाले उस में जो झाग उठे उन का लेप देह में करे तो तृषा, दाह और मोह ये दूर हों. जैसे बेश्या-गामी धनी मनुष्य का धन चला जाता है ॥

दाहेतिशिशिरं तोयं क्रिया कार्या सुशीतला ॥

अर्थ—अतिशीतल जल पीवे और शीतल ही उपचार करे तो दाह शांत होवे ॥

अन्य उपाय

सर्वांगे चंदनालेपश्चंद्रकस्तूरिकायुतः ।

सितनीरजलेपो वा धारागारनिवेशनम् ॥

अर्थ—कपूर और कस्तूरीयुक्त चंदन का सर्ब देह में लेप करे. अथवा सपेद कमल को पीस के लेप करे और तलगृह (तहखाने) में रहे तो दाहशांति होय ॥

वालआलिगन

सहजस्नेहसोत्साहमुग्धमंजुललापिनाम् ।

वालकानां समाश्लेषस्तापं निर्वापयेज्जवात् ॥

अर्थ—स्वाभाविक प्रीतियुक्त और उत्साह करके भेरे और मनोहर बोलनेवाले बालकों के आलिंगन करने से ताप शांत होय ॥

उशीरागारशयनं तालवृंतालुवर्तनम् ।

साहित्यसरसा वाणी कवीनां तापहृत्रयम् ॥

अर्थ—खसखस के पडदे पडे हों ऐसे घर मे शयन करना तथा ताड़ के पंखों का पवन, कवी के साहित्ययुक्त वचन, सुरस भाषण ये तीनों वस्तु ताप को शमन करे ॥

पानीयामलकी द्राक्षा नारिकेलं सुशर्करम् ।

गायनं सुकुमारीणां दाहमूच्छीं हरेद् द्रुतम् ॥

अर्थ—जलआंवला और दाख इन का रस पीवे. अथवा नारियल का जल मिश्री मिलायके पीवे. सुकुमार छियों का गान सुनना ये सब ताप मूच्छी इन को हरण करे ॥

सेवनाय हितं तापे कोमलं मूत्रलं फलम् ॥

अर्थ—जिस के अधिक दाह होता हो वे यह मूत्रकारी (खीरा, ककडी आदि) फलों का सेवन करे ॥

दूसरा चंद्रकलारस

प्रत्येकं तोलमादाय सूतं ताम्रं तथाभ्रकम् । द्विगुणं गंधकं चै-
कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ॥ मुस्तादाडिमदूर्वातैः केतकीस्त-
नजद्रवैः । सहदेव्याः कुमार्याश्च पर्पटस्यापि वारिणा ॥ रामशी-
तलिकातोयैः शतावर्या रसेन च । भावयित्वा प्रयत्नेन दिवसे
दिवसे पृथक् ॥ तिक्तागुडूचिकासत्वं पर्पटोशीरमाधवी । श्रीगंधं
सारिवा चैषां समानं सूक्ष्मचूर्णितम् ॥ द्राक्षादिककपायेण
सप्तधा परिभावयेत् । ततो धान्याश्रयं कृत्वा बन्धः कार्याश्व-
णोपमाः ॥ अयं चंद्रकलानाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः । सर्व-
पित्तगदध्वंसी वातपित्तगदापहः ॥ अंतर्बाह्यमहादाहविध्वंसन-
महाघनः । श्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ॥ कुरुते
नाग्निमाद्यं च महातापज्वरं हरेत् । भ्रमं मूच्छीं हरत्याशु स्त्रीणां
रक्तं महाशुतिम् ॥ ऊर्ध्वाधोरक्तपित्तं च रक्तवातिं विशेषतः ।
मूत्रकूच्छ्राणि सर्वाणि नाशयेन्नात्र संशयः ॥

अर्ध-पारा, तामे की भस्म और अब्रक की भस्म ये प्रत्येक एक २ तोले छेय गंधक २ तोले इन की बारीक कजली करके फिर नागरमोथा, अनार, दूब, केतकी, सहदेई, धीगुवार, पित्तपापडा, आराम, शीतला और सतावर इन के रसों की एक २ दिन पृथक् २ भावना देय. फिर कुटकी, पित्तपापडा, नेत्रवाला, माधवी, चंदन, सारिवा इन का चूर्ण और गिलोय का सत्व इन को समान भाग लेकर भावना दिये हुए औषधों में मिलाय फिर द्राक्षादि काठे की सात भावना देवे फिर इस को धान की राशि में रख देवे जब गाढी हो जावे तब निकालके गोली चने के समान बनाय लेवे. यह चंद्रकलानामक सर्वरसों का राजा है. यह सब पित्त के विकारों को तथा वातपित्त के विकारों को अंतर्दाह और बाहर का दाह इन सब को नष्ट करे. इस को गरमियों में और शरद ऋतु में सेवन करे. यह मंदाग्नि नहीं करे घोरज्वर के ताप को हरण करे. भ्रम, मूर्छा, स्त्रियों के रुधिर का जाना, ऊर्ध्वगामी और अधोगामी रक्तपित्त, वमन और सर्व प्रकार के मूत्रकृच्छ्र इन सब रोगों को नष्ट करे इस में संदेह नहीं है ॥

मर्माभिघातज दाह

मर्माभिघातजोप्यास्ति सोसाध्यः सप्तमो मतः ॥

अर्थ-मर्मस्थान (हृदय, शिर, बस्ति) में चोट लगने से जो दाह होय सो सातवां असाध्य है अर्थात् और जो छः दाह है सो साध्य है ॥

असाध्य लक्षण

सर्वे एव च वर्ज्याः स्युः शीतलात्रस्य देहिनः ॥

अर्थ-सब दाहों में शीतल देहवाला रोगी त्याज्य है ॥

दाह रोग में पथ्य

शाल्यः पट्टिका मुद्गा मसूराश्चणका यवाः । धन्वमांसं रसालाजमंडं वै सक्तुवासिता ॥ शतधौतं घृतं दुग्धं नवनीतं पयोद्भवम् । कूष्मांडं कर्कटी मोचा पनसः स्वादुदाडिमम् ॥ पटोलं पर्पटी द्राक्षा धात्रीफलपरूपकम् । विंबी तुंबी पयःपेटी खजूरं धान्यकं मिशी ॥ बालतालं प्रियालं च शृंगाटं च कसेरुकम् । मधूकपुष्पं ञ्हीवेरं पथ्या तिक्तानि सर्वशः ॥ शीताः प्रदेहा भूवेश्म सेकोभ्यंगोवगाहनम् । फुल्लोत्पलदलक्षौमशय्याशीतलकाननम् ॥ कथा विचित्रा गीतानि वाद्यं मंजुलभाषणम् ।

उशीरचंदनो लेपः शीतांशुः शिशिरोऽनिलः ॥ धारागृहं प्रि-
यास्पर्शः प्रतीरं हिमवालुकम् । सुधांशुरश्मयः स्नानं मणयो
मधुरो रसः ॥ पुरो यानि विधेयानि पित्तहारीणि तानि च ।
इति दाहवतां नृणां पथ्यवर्ग उदाहृतः ॥

अर्थ—शाली धान्य, सॉठी चावल, मूंग, मसूर, चने, जौ, जंगली जीवों के मांस का रस, खील, सच् [खांड], वासित (सुगंधित) मंड, सौवार धुला हुआ घृत, दूध, दूध का मक्खन, पेठा, ककड़ी, केला, फनस, मीठा अनार, परवल, पापड़ी, दाख, आंवले, फालसे, कंदूरी (गुलकांख), लुंधी, नारियल का जल, खिजूर, धनिया, सॉफ, छोटा ताड़फल, चिरोंजी, सिंघाडे, कसेरू, महुए का फूल, नेत्रवाला, हरड, कुटकी ये सब पदार्थ, तथा शीतल चंदनादे लेप और मालिस, तहखाने में रहना, स्नान, उबटना, जल में धसके स्नान, फूले कमल के पत्ते, रसमी कपडे, शीतल सेज, शीतल ही वन, चित्र विचित्र कथा, गीत (गान), मनोहर बाजे और सुंदर मिष्ट भाषण, खस, चंदन का लेप, कपूर [शीतल जल] शीतल पवन, फुहारों का घर, प्यारी का स्पर्श, नदी का तीर, शीतल बालुका, शीतल चंद्रमा की चांदनी, स्नान, हीरा आदि मणि, मिष्ट रस और जो पहले पित्तहरण कर्त्ता पदार्थ कह आये हैं ये सब दाहरोगवाले को पथ्य कहा है ॥

दाहरोग में अपथ्य

विरुद्धान्यन्नपानानि क्रोधो वेगविधारणम् । श्रमं व्यवायमाध्मानं
क्षारं पित्तकराणि च ॥ व्यायाममातपं तक्रं तांबूलं मधु राम-
ठम् । व्यवायं कटुतिक्तोष्णं दाहवान् परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—विरुद्ध अन्न पान, क्रोध, वेगों का धारण करना, परिश्रम, मैथुन, अफरा करनेवाले पदार्थ, खार के पदार्थ, पित्तकारी पदार्थ, व्यायाम, धूप, छाछ, तांबूल, सहत, हींग, चरपरे, कडए और गरम पदार्थ ये सब दाहरोगवाले को वर्जित कहे हैं ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे दाहरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

उन्मादरोगकर्मविपाकः ।

मोहयित्वा परान्यस्तु भुंक्ते वस्तु विगर्हितम् । सोन्मादवात-
युक्तः स्यात्कृच्छ्रं चांद्रायणं तथा ॥ कुर्यात्सारस्वतं नाम जपे-
द्राह्मणतर्पणम् ॥

अर्थ—जो प्राणी दूसरे को मोहित (बेहोस) करके निंद्य वस्तु (जो नहीं खाने योग्य है उस) को खाय वह उन्माद तथा वायु इनकरके पीडित होता है. इस पाप के भूल करने के वास्ते चांद्रायण और कृच्छ्रचांद्रायण प्रायश्चित्त करे अथवा सरस्वतीमंत्र का जप करे और ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥

उन्माद व भूतोन्मादनिदान

मदयंत्युद्धता दोषा यस्मादुन्मार्गमाश्रिताः ।

मानसोऽयमतो व्याधिरुन्माद इति कीर्त्यते ॥

अर्थ—दोष कहिये (वात, पित्त, कफ) बढकर अपने अपने मार्ग को छोड अन्य मार्ग अर्थात् मनोवह धमनियों में प्राप्त होकर मन को उन्मत्त करे और यह व्याधि मानसी है अत एव इस को (उन्माद) ऐसे कहते हैं ॥

उन्मादभेद व निदान के हेतु कहते हैं

एकैकशः सर्वशश्च दोषैरत्यर्थमुद्धितैः । मानसेन च दुःखेन स

पंचविध उच्यते ॥ विपाद्भवति पष्टश्च यथास्वं तत्र भेषजम् ।

स चाप्रवृद्धस्तरुणो मदसंज्ञां विभर्ति च ॥

अर्थ—अत्यन्त क्रुपित भये पृथक्पृथक् दोषों से ३ सत्रिपात और मानसिक दुःख से यह रोग पांच प्रकार का और विष खाने से ६ छटा इन में यथादोषानुसार औषध देनी चाहिये, जबतक यह रोग बढे नहीं और जबतक तरुण रहे तबतक इस रोग को मद ऐसे कहते हैं ॥

विरुद्धदुष्टाशुचिभोजनानि प्रधर्षणं देवगुरुद्विजानाम् ।

उन्मादहेतुर्भयहर्षपूर्वो मनोविधातो विपमाश्च चेष्टाः ॥

अर्थ—विरुद्ध दुष्ट कहिये जहर मिला अन्न आदि, अशुचि चांडालादि से स्पर्श करा ऐसा भोजन, देवता, गुरु, ब्राह्मण इन का तिरस्कार करने से भय और हर्ष के होने से मन को विगढा, सब चेष्टा विपरीत करे (अर्थात् टेढा तिरछा चले बलवान से बैर करे बकने लगे) इस श्लोक में पूर्व शब्द करण का है और चकारसे काम क्रोध लोभादिक भी उन्माद रोग के कारण हैं यह जैयट का मत है ॥

संप्राप्तिकथन

तैरल्पसत्त्वस्य मलाः प्रदुष्टा बुद्धेर्निवासं हृदयं प्रदुष्य ।

स्रोतांस्यधिष्ठाय मनोवहानि प्रमोहयंत्याशु नरस्य चेतः ॥

अर्थ—इन में कहे जो कारणों से अल्प (थोड़ा) मल गुण पुरुष के वातादिक दोष कुपित होकर बुद्धि का निवासस्थान (रहने का ठिकाना) को हृदय कहिये मन उस को बिगाड़ मन के बहनेवाली नसों में प्राप्त हो मनुष्य के अंतःकरण के मोहित करे ॥

उन्माद का रूप

धीविभ्रमः सत्वपरिप्लवश्च पर्याकुला दृष्टिरधीरता च ।

अवद्धवाक्यं हृदयं च शून्यं सामान्यमुन्मादगदस्य चिह्नम् ॥

अर्थ—बुद्धी में भ्रम, मन का चञ्चल होना, दृष्टि का सर्वत्र चलना, अधीरजपना (डरपना), कुछ का कुछ बोलना, हृदय शून्य हो जाय, (अर्थात् विचार शक्ति का नाश होना) ये उन्माद रोग के सामान्य लक्षण हैं ॥

वातोन्मादलक्षण

रूक्षाल्पशीतान्नविरेकधातुक्षयोपवासैरनिलोतिवृद्धः । चिंतादि
दुष्टं हृदयं प्रदुष्य बुद्धिं स्मृतिं चाप्युपहंति शीघ्रम् ॥ अस्थान-
हासस्मितनृत्यगीतवागंगविक्षेपणरोदनानि । पारुष्यकाश्यारु-
णवर्णता च जीर्णं वलं चानिलजस्वरूपम् ॥

अर्थ—रूखा, थोड़ा और ' शीतल ' ऐसा अन्न ' विरेक ' इस शब्द जगह दस्त और वमन जानना, धातुक्षय और उपवास इन कारणों से अ जो वायु, सो चिन्ता शोकादि करके युक्त होकर हृदय (मन को) अपान कर, बुद्धि और स्मरण इन का शीघ्र नाश करे और हँसने के कारण विनास-मुसकान करे, नाचे विना प्रसंग के गीत और बोलना करे, हायों को सर्वत्र रोवे और शरीर रूखा तथा कृश और लाल हो जाय और आहार का परिपाक पर ज्यादा जोर होय, यह वातज उन्माद के लक्षण हैं ॥

पित्तोन्मादनिदान

अजीर्णकटुम्लविदाह्यशीतैर्भोज्यैश्चितं पित्तमुदीर्णवेगम् । उन्मा-
दमत्युग्रमनात्मकस्य हृदि स्थितं पूर्ववदाशु कुर्यात् ॥ अमर्ष-
संरंभविनम्रभावाः संतर्जनाभिद्रवणौष्ण्यदोषाः । प्रच्छायशी-
तान्नजलाभिलापाः पीतास्यता पित्तकृतस्य लिंगम् ॥

अर्थ—अधकच्ची, कड़वी, खट्टी, दाह करनेवाली और गरम ऐसा भोजन करने से संचित भया जो पित्त सो तीव्र वेग होकर अजितेंद्रिय पुरुष के हृदय में प्रवेश व

पूर्ववत् आति उग्र उन्माद तत्काल उत्पन्न करे. इस उन्माद से असहनशील, हाथ पैरों को पटकना, नग्न हो जाय, डरपे, भाजने लगे, देह गरम हो जाय, क्रोध करे, छाया में रहे, शीतल अन्न और शीतल जल इन की इच्छा, पीला मुख हो जाय, यह लक्षण पित्तज उन्माद के हैं ॥

कफोन्माद

सम्पूरणैर्मन्दविचेष्टितस्य सोष्मा कफो मर्मणि संप्रवृद्धिः बुद्धिः स्मृतिं चाप्युपहन्ति चित्तं प्रमोहयन्संजनयेद्विकारम् ॥ वाक्चेष्टितं मंदमरोचकश्च नारी विविक्तप्रियताऽतिनिद्रा । छर्दिश्च लाला च बलं च भुंक्ते नखादिशौक्ल्यं च कफात्मके स्यात् ॥

अर्थ—मंद भूख में पेटभर भोजन कर कुछ परिश्रम न करे, ऐसे पुरुष के पित्त-युक्त कफ हृदय में अत्यन्त बढ़कर बुद्धि, स्मरण और चित्त इन की शक्ति का नाश करे और मोहित कर उन्मादरूप विकार को उत्पन्न करे, उस विकार से वाणी का व्यापार कहिये बोलना इत्यादि मन्द होय, अरुचि होय, स्त्री प्यारी लगे, एकांत वास करे, निद्रा अत्यंत आवे, वमन होय, मुख से लार बहे, भोजन करे पिछाड़ी इस रोग का जोर हो, नख, आदिशब्द से त्वचा, मूत्र नेत्रादिक यह सफेद हों यह उन्माद कफ के उन्माद के हैं ॥

से यह रा

सन्निपातज उन्मादनिदान

औषध देन
रोग को

सन्निपातप्रभवोऽतिघोरः सर्वैः समस्तैरपि हेतुभिः स्यात् । वाणि रूपाणि विभर्ति तादृक् विरुद्धभैषज्यविधिर्विवर्ज्यः ॥

अर्थ—जो उन्माद वातादिक दोषकरके अथवा तीनों दोषों के कारणकरके होय, सन्निपातजन्य उन्माद बहुत भयंकर होय है. उस में सब दोषों के लक्षण होते हैं इस में विरुद्ध औषध की विधि वर्जित है. यह उन्माद वैद्योंकरके त्याज्य है ऐस्यारण यह कि असाध्य है ॥

मन

दुःखोन्मादलक्षण

व
भ

चौरैर्नरेन्द्रपुरुषैररिभिस्तथान्यैर्वित्रासितस्य धनवांधवसंक्षयाद्वा । गाढं क्षते मनसि च प्रियया रिरंसोर्जापेत चोत्कटतमो मनसो विकारः ॥ चिन्नं ब्रवीति च मनोनुगतं विसंज्ञो गायत्यथो हसति रोदिति चा । ७० ॥

अर्थ—चोरों ने, राज के मनुष्यों ने अथवा शत्रुओं ने, उसी प्रकार सिंह, व्याघ्र, हाथी आदि किसी ने त्रास दिया होय, अथवा धन, बंधु के नाश होने से, ऐसे पुरुष का अन्तःकरण अत्यन्त दूखे, अथवा प्यारी स्त्री से संभोग करने की इच्छावाले पुरुष के मन में भयंकर विकार उत्पन्न होय, वह पुरुष गुप्त बात को भी कहने लगे और अनेक प्रकार का बोले, विपरीत ज्ञान होय, वह गावे, हंसों और रोवे तथा मूर्ख हो जाय ॥

विषजउन्मादलक्षण

रत्तेक्षणो हतवलेन्द्रियभाः सुदीनः श्यावाननो विपकृतेन भवेद्विसंज्ञः ॥

अर्थ—विष से प्रगट उन्माद में नेत्र लाल होंय, बल इन्द्रि और शरीर की कान्ति नष्ट हो जाय, अति दीन हो जाय, उस के मुखपर कालोंच आ जाय और संज्ञा जाती रहे ॥

असाध्यलक्षण

अवाङ्मुखस्तून्मुखो वा क्षीणमांसवलो नरः ।

जागरूको ह्यसन्देहमुन्मादेन विनश्यति ॥

अर्थ—जिस का मुख नीचे को होय अथवा ऊपर को होय और जिस का मांस और बल क्षीण हो गया होय, तथा जिस की निद्रा जाती रही हो, ऐसा मनुष्य निश्चय इस उन्मादकरके नाश को प्राप्त हो ॥

उन्मादशास्त्रार्थ

कामशोकभयक्रोधहर्षेर्ष्यालोभसंभवात् ।

परस्परप्रतिद्वन्द्वैरेभिरेव शमं नयेत् ॥

अर्थ—काम, शोक, भय, क्रोध, हर्ष, ईर्ष्या, लोभ इन से प्रगट हुए उन्माद (बावले पने) को उस के विपरीत जो कामशांति आदि उपायों से निवारण करे जैसे कामज्वर में कामशांति होने से चला जाता है उसी प्रकार शोक को हर्षादिक कर्मों से दूर करे ॥

सामान्य उपचार

वार्तिके स्नेहपानं प्राग्विरेकः पित्तसंभवे ।

कफजे वमनं कार्यं परो वस्त्यादिकः क्रमः ॥

अर्थ—बादी के उन्माद में प्रथम स्नेहपान, पित्तोन्माद पर विरेचन (जुलाब देना) और कफोन्माद पर वमन और जो उन्माद हैं उनपर बस्तिकाकिया इत्यादि कर्म करे ॥

सामान्यचिकित्सा

यच्चोपदिश्यते किञ्चिदपस्मारे चिकित्सितम् ।

उन्मादे तच्च कर्तव्यं सामान्याहोपदूष्ययोः ॥

अर्थ—जो कायचिकित्सा अपस्मार (मृगीरोग) पर कही है वह सब उन्मादरोग पर करे इस का यह कारण है कि इन दोनों रोगों में दोष और दूष्य पदार्थ एक ही हैं इस वास्ते दोनोंपर एकसा यत्र करे ॥

सामान्यउपचार

स्नेहादिना क्रमेणादाबुन्मादे समुपाचरेत् ।

वस्तिभिः स्नेहकल्कैश्च निरूहैः स्वेदनाजनैः ॥

अर्थ—स्नेहपानादिक क्रम करके, वस्ति, स्नेह और कल्क निरूहवस्ति पसीने निकालना तथा अंजन इत्यादि उपचार करना उन्मादरोग पर हितकारी है ॥

शास्त्रार्थ

आश्वासयेत्सुहृद्वाक्यैर्वृयादिष्टविनाशनम् ।

दर्शयेदद्भुतं कर्म ताडयेच्च कशादिभिः ॥

अर्थ—जो प्राणी बावला हो गया हो उस को मीठे २ हितभरे वाक्यों को कहकर आश्वासन (दिलासा) देवे. तथा उसी की प्यारी वस्तु का नाश कहे अथवा अद्भुत चेष्टा तथा कोडेन पीटना इत्यादि उपचार करे ॥

सुबद्धं विजने गेहे त्रासयेदहिभिर्धिया ।

बद्धं सर्पपतैलात्तं न्यसेदुत्तानमातपे ॥

अर्थ—उन्मादी (बावले) मनुष्य को एकांत स्थान में बांधके त्रास देवे. सर्प दिखायके डरावे तथा देह में सरसों का तेल लगायके धूप में चीता छेटावे तो उन्माद दूर हो ॥

कपिकच्छाथ वा तप्तलोहतैलजलैः स्पृशेत् ।

वक्राभिधाने कूपे वा सततं च निवेशयेत् ॥

अर्थ—बावले मनुष्य को कौछ की फली अथवा तपाये हुए छाल लोह की सलाई, गरमतेल, जल इन का स्पर्श करावे अथवा मुख में तपे हुए लोहादिक ढालने का भय दिखावे तो रोगी अच्छा होवे ॥

सततं धूपयेच्चैनं गोमांसैश्च सपूर्तिभिः ।

कामशोकभयक्रोधपैर्प्यालक्षसंभवात् ॥

अर्थ—उन्मादरोगी को गौ के मांस की तथा दूषित मांस की धूनी देवे तथा क्रम, शोक, भय, क्रोध, हर्ष और ईर्ष्या इत्यादि मनोविकार उत्पन्न करावे तो यह रोग दूर हो ॥

परस्परप्रतिद्वन्द्वैरोभिरेव शमं नयेत् । जलाग्निद्रुमशैलेभ्यो विपमे-
भ्यश्च तं सदा ॥ रक्षेदुन्मादिनं चैव सद्यः प्राणहरं हि तत् ॥

अर्थ—ऊपर कही हुई परस्पर विरुद्ध चेट्टाओं करके उस को अपने आधीन कर लेना और जल, अग्नि, वृक्ष, पर्वत तथा विपमस्थान (पहाड़ चोटी आदि) इन से उस बावले मनुष्य का संरक्षण करे. क्योंकि ये स्थान तत्काल उन्मादरोगी के प्राण हरणकर्ता हैं ॥

लशुनादिघृत

लशुनस्य विनष्टस्य तुलार्धं निस्तुपीकृतम् । तदर्धं दशमूल्या-
स्तु चाढके वा विपाचयेत् ॥ पादशोषे घृते प्रस्थं लशुनस्य रसं
तथा । कोलामलकवृक्षाम्लमातुलिगार्द्धकै रसैः ॥ दाडिमांबु
सुरा मस्तु कांजिकाम्लैस्तदर्धकै । साधयेत्त्रिफलादारुलवणव्यो-
पदीप्यकैः ॥ यवानीचव्याहिंगवाम्लवेतसैश्च पलार्धकैः । सिद्धमे-
तत्पिबेच्छूलगुल्माशौजठरापहम् ॥ व्रणपांड्वामयप्लीहयोनिदो-
पकृमिज्वरान् । वातश्लेष्मामयं चान्यमुन्मादं चापकर्षति ॥

अर्थ—उत्तम लहसन छिली हुई २०० तोले और दशमूल १०० तोले दोनों को एकत्र कर १०२४ तोले जल में डालके चतुर्थांश काढा करे. फिर इस को छानके इस में घी और लहसन का रस प्रत्येक ६४ तोले तथा बेर, आवले, अमलवेत, विजोरा, अदरक और अनार इन का रस प्रत्येक ३२ तोले तथा त्रिफला, देवदारु, निमक, सोंठ, मिरच, काली पीपल, अजमोद, अजमायन, चव्य, हींग और अमलवेत ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सब का कल्क करके डाले फिर घृत सिद्ध करे. इस घृत के खाने से शूल, गोला, बवासीर, उदर, व्रण, पांडुरोग, प्लीहा, योनिदोष, कृमि, ज्वर और वायु तथा कफ इन के रोग और उन्माद इन को नाश करे ॥

चंदनातितैल

चंदनांबु नखं याव्यं यष्टिशैलेयपद्मकम् । मंजिष्ठा सरलं दारु-
पद्मबला पूतिकेसरम् ॥ पत्रं तैल्यं सुरामांसी कंकोलं वनितांबु-
दम् । हरिद्रे सारिवा तित्ता लवंगागरुकुंकुमम् ॥ त्वग्नेणुनलि-

काश्चेति तैलान्मस्तु चतुर्गुणम् । लाक्षारसं समं सिद्धं ग्रहघ्नं
परमं मतम् ॥ अपस्मारहरोन्मादकृत्यालक्ष्मीविनाशनम् ।

७ आयुःपुष्टिकरं चैव वशीकरणमुत्तमम् ॥

अर्थ—चंदन, नेत्रवाला, नख (सुगंधद्रव्य), जवाखार, मुलहटी, शिलाजीत, पन्नाख, मजीठ, सरल, देवदारु, पद्वला (छः प्रकार की बला), जवाद, नागकेशर, पत्रज, लोध, मुरा, जटामांसी, कंकोल, प्रियंगु, नागरमोथा, हलदी, दारुहलदी, सारिवा, कुटकी, लौंग, अगर, केशर, दालचीनी, पित्तपापडा, नल्लिका और तिलि का तेल तथा तेल से चौगुनी छाछ का जल और लाख का रस इन सब को ढालके तेल बनावे. यह ग्रह, अपस्मार, कृत्याउन्माद अलक्ष्मी इन को नाश करे और आयुष्य, पुष्टि तथा लोक को वशीभूत करे है ॥

अंजन

त्र्युपणं हिंयु लवणवचाकटुकरोहिणी । शिरीषनक्तमालानां बीजं
श्वेतांश्च सर्पपाः ॥ गोमूत्रपिष्टैरेतैस्तु वर्तिनेत्रांजने हिता । चा-
तुर्थिकमपस्मारमुन्मादं च नियच्छति ॥

८ अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, सैंधानिमक, वच, कुटकी, सिरस, कंजे के बीज तथा सफेद सरसों इन सब को गोमूत्रमें पीस उसमें बत्ती को भिगोयके उस बत्तीसे नेत्रों में अंजन करे तो चातुर्थिक ज्वर, अपस्मार और उन्माद इन को दूर करे ॥

शिरीषादिनस्य

शिरीषं लशुनं हिंयु नागरं मधुकं वचा ।

कुष्ठं च वस्तमूत्रेण पिष्टं स्यान्नावनांजनम् ॥

अर्थ—सिरस के बीज, लहसन, हींग, सोंठ, मुलहटी, वच और कूठ इन सब को बकरे के मूत्र में पीस के नस्य अथवा अंजन करे तो उन्मादरोग दूर हो ॥

व्योपाद्यंजन

तद्ब्रह्मोपं हरिद्रे द्वे मंजिष्ठा गौरसर्पपाः ।

शिरीषबीजमुन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥

९ अर्थ—उसी प्रकार सोंठ, मिरच, पीपल, दारुहलदी, हलदी, मजीठ, सफेद सरसों और सिरस के बीज इन को पीसके अंजन करे तथा नस्य देवे तो उन्माद, ग्रह और अपस्मार इन को नाश करे ॥

धूप

कर्पासास्थिमयूरपिच्छबृहतीनिर्माल्यपिंडीतकत्वङ्मांसीवृषदंश-
विद्रुषवचाकेशाहिनिमोचनैः । नागेंद्रद्विजशृंगार्हिंगुमारिचैस्तुल्यै-
स्तु धूपः कृतः स्कंदोन्मादपिशाचराक्षससुरावेशज्वरघ्नः स्मृतः ॥

अर्थ—कपास के बीज (विनोले), मोर की पांख, कटेरी, शिवनिर्माल्य, मैनफल, दालचीनी, जटामांसी, पिछी की सूखी विष्टा, तुस, वच, मनुष्य के बाल, सांप की कांचली, हाथीदांत, साबरसींग, हींग और काली मिरच समान भाग लेके धूप बनावे। इस धूप से स्कंदोन्माद, पिशाचोन्माद, राक्षसोन्माद देवोन्माद, तथा ज्वर इन सब का नाश होवे ॥

पर्पटीरस

कृष्णाधत्तूरजैर्बीजैः पंचभिः पर्पटीरसः ।

साज्यो योज्यः प्रशांत्यर्थमुन्मादस्य शुभानने ॥

अर्थ—पीपल, घतूरे के पांच बीज और पर्पटीरस इन को घी में मिलायके देवे तो हे शुभानने ! उन्माद रोग का नाश करे ॥

शिरीषाद्यंजन

सिद्धार्थकवचाहिंगुकरंजो देवदारु च । मंजिष्ठा त्रिफला श्वेता
कटभी त्वक् कटुत्रिकाः ॥ समांशं च प्रियंगुश्च शिरीषो रजनी-
द्वयम् । वस्तमूत्रेण विद्वेदमगदं पानमंजनम् ॥ नस्यमालेपनं
चैव स्नानमुद्रतनं तथा । अपस्मारविपोन्मादकृत्यालक्ष्मीज्वरा-
पहम् ॥ भूतेभ्यश्च भयं हंति राजद्वारे च शस्यते । सर्पिरेतेन
सिद्धं वा सगोमूत्रं तदर्थकृत् ॥

अर्थ—सपेदासिरसों, वच, हींग, कंजे के बीज, देवदारु, मजीठ, हरड, बहेडा, आवला, फिटकूरी, छोटी कांगनी, दालचीनी, सोंठ, मिरच, पीपल, प्रियंगु, सिरस के बीज, दारुहलदी इन सब को बकरे के मूत्र में पीसके पीवे तथा अंजन, नस्य, लेप और स्नान करे तथा अंग में लगावे तो अपस्मार, विष, उन्माद, कृत्या, दुर्दशा, ज्वर और भूतबाधा इन का नाशक है और राजा के सन्मुख जाय तो इस योग को करे इन्हीं औषधों से सिद्ध करा हुआ घी गोमूत्र के साथ सेवन करने से गुण करे हैं ॥

ब्राह्म्यादिरस

ब्राह्मीकूष्मांडविलपट्टग्रंथाशंखपुष्पिकास्वरसाः ।

दृष्ट्वा उन्मादहराः पृथगेते कुष्ठमधुमिश्राः ॥

अर्थ—ब्राह्मी, पेठा, वच और शंखाहूली इन की पृथक् रस कूठ और सहत इन में मिलायके सेवन करे तो उन्माद को दूर करे ॥

ब्राह्म्यादिकल्क

ब्राह्मीरसः स्यात्सवचः सकुष्ठः सशंखपुष्पः ससुवर्णचूर्णः । उन्मा-
दिनामुन्मदमानसानामपस्मृतो भूतहतात्मनां हि ॥ नस्येजने
पानविधौ च शस्तो ब्राह्मीरसोयं सवचादिचूर्णः ॥

अर्थ—ब्राह्मी के रस को वच, कूठ, शंखाहूली और नागकेशर, इन के चूर्ण करके युक्त कर उस के नस्य, अंजन किवा पीना इन में देवे तो उन्माद, अपस्मार और भूतोन्माद ये रोग दूर हों ॥

सितकुसुमबलादियोग

सितकुसुमबलायाः सार्धकर्पत्रयं यः शिखरिचरणकेन क्षीरपा-
केन पक्वम् । पिबति तदनु नित्यं प्रातरुत्थाय शीतं जयति ।
श्रुतिघोरं व्याधिमुन्मादसंज्ञम् ॥

अर्थ—सपेद फूल का गरियारा ३॥ तोले का चूर्ण करके दूध में डाल उस दूध को आंगी की जड़ के साथ औटावे. जब शीतल हो जावे तब नित्य प्रातःकाल पीवे तो उन्मादरोग को तत्काल पराजय करे ॥

दशमूलादियोग

दशमूलांबु सघृतं युक्तं मांसरसेन वा ।

ससिद्धार्थकचूर्णं वा केवलं नावनं घृतम् ॥

अर्थ—दशमूल का काढा घृतयुक्त अथवा मांसरस युक्त उन्मादपर हितकारक है अथवा सपेद सरसों का चूर्ण घी में मिलायके नस्य देवे तो हितकारी होय ॥

उन्मादशांतये पेयो रसो वा कालशाकजः ।

प्रयोज्यं सार्पपं तैलं नस्याभ्यंजनयोः सदा ॥

अर्थ—उन्मादरोग शांत करने को शंखपुष्पी का रस पीवे अथवा सरसों के तेल की नस्य और देह में मालिस करे ॥

भूतोन्मादलक्षण

अमर्त्यवाग्विक्रमवीर्यचेष्टाज्ञानादिविज्ञानबलादिभिर्यः ।

उन्मादकालो नियतश्च यस्य भूतोत्थमुन्मादमुदाहरेत्तम् ॥

अर्थ—वाणी, पराक्रम, शक्ति, देह का व्यापार, तत्त्वज्ञान, शिल्पादि ज्ञान अथवा ज्ञान कहिये शास्त्रज्ञान और विज्ञान नाम तदर्थ निश्चय आदिशब्द से स्मृत्यादिक ये जिसकी मनुष्य की सी न होय और जिस का उन्मत्त होने का काल निश्चय होय, ऐसे उन्माद को भूतोन्माद कहते हैं भूतशब्द से यहां आगे कहेंगे सो सब देवता जानने ॥

देवजुष्टउन्मादलक्षण

सन्तुष्टः शुचिरितिदिव्यमाल्यगंधो निस्तंद्रिस्त्ववितथसंस्कृत-
प्रभापी । तेजस्वी स्थिरनयनो वरप्रदाता ब्रह्मण्यो भवति नरः
स देवजुष्टः ॥

अर्थ—सदा संतोषयुक्त रहे, पवित्र रहे, देह में दिव्यपुष्प के समान सुगंध, नेत्रों के पलक लगे नहीं, सत्य और संस्कृत का बोलनेवाला हो, तेजस्वी, स्थिरदृष्टी, वर का देनेवाला, (तेरा कल्याण हो ऐसे वर देय) ब्राह्मण से प्रीति राखे, ऐसा मनुष्य (देवग्रह) पीडित जानना, देवशब्द से गण मात्रिकादि ग्राह्य है सो विदेह ने कहा भी है ॥

असुरउन्माद

संस्वेदी द्विजगुरुदेवदोषवक्ता जिह्वाक्षो विगतभयो विमार्गदृष्टिः ।

संतुष्टो न भवति चाद्रपानजातैर्दुष्टात्मा भवति स देवशत्रुजुष्टः ॥

अर्थ—पसीने युक्त देह, ब्राह्मण, गुरु और देव, इन में दोषारोपण करनेवाला, टेढ़ी दृष्टि से देखनेवाला, निर्भय, वेदविरुद्ध मार्ग का चलनेवाला और बहुत अन्न जल से भी जिस को संतोष न होय और दुष्टबुद्धि, ऐसा मनुष्य दैत्यग्रह पीडित जानना ॥

गंधर्वजुष्टउन्माद

दृष्टात्मा पुलिनवनांतरोपसेवी स्वाचारः प्रियपरिगीतगंधमा-
ल्यः । नृत्यन्वै प्रहसति चारु चालपशब्दं गंधर्वग्रहपरिपीडित-
मनुष्यः ॥

अर्थ—गंधर्व ग्रह से पीडित मनुष्य प्रसन्नचित्त, पुलिन और बाहर बगीचा में रहनेवाला, अनिन्दित आचार का करनेवाला, गान, सुगंध और पुष्प, ये जिस को प्यारे लुगें वह पुरुष नाचे हंसे, सुन्दर बोले, थोडा बोले ॥

यक्षग्रस्त उन्मादलक्षण

ताम्राक्षः प्रियतनुरक्तवस्त्रधारी गम्भीरो द्रुतगतिरल्पवाक् स-
हिष्णुः । तेजस्वी वदति च किं ददामि कस्मै यो यक्षग्रहपरि-
पीडितो मनुष्यः ॥

अर्थ—यक्षग्रह से पीडित मनुष्य के नेत्र लाल हों, सुंदर बारीक ऐसे रक्त वस्त्र का धारण करनेवाला, गंभीर, बुद्धिवान्, जलदी चलनेवाला, प्रमाण का बोलनेवाला, सहनशील, तेजस्वी, किस को क्या देऊं ऐसे बोलनेवाला ऐसा होय ॥

पितृग्रहग्रस्त उन्मादलक्षण

प्रेतानां स दिशति संस्तरेषु पिंडान्भ्रान्तात्मा जलमपि चापस-
व्यवस्त्रः । मांसेप्सुस्तिलगुडपायसाभिकामस्तद्भक्तो भवति
पितृग्रहाभिजुष्टः ॥

अर्थ—कुशा के ऊपर प्रेतों को (पितरों को) पिंड देय, चित्त में भ्रान्ति रहे और उत्तरीय वस्त्र अपसव्य करके तर्पण भी करे, मांस खाने की इच्छा होय, तथा तिल, गुड, खीर इनपर मन चले (इस कहने का प्रयोजन यह है कि जिस की जिस पदार्थपर इच्छा होय उस को उसी पदार्थ की बली देने से उस ग्रह की शांति होती है ऐसे ही सर्वत्र जानना) ये डल्लन का मत है, और वह मनुष्य पितरों की भक्ति करे ये लक्षण पितृग्रहपीडित मनुष्य के हैं ॥

सर्पग्रहग्रस्त उन्मादलक्षण

यस्त्वूर्या प्रसरति सर्पवत्कदाचित्सृक्किण्यौ विलिहति जिह्वया
तथैव । क्रोधात्मधुगुडदुग्धपायसेप्सुर्विज्ञेयो भवति भुजंग-
मेन जुष्टः ॥

अर्थ—जो मनुष्य सर्प के समान पृथ्वी से लोटा करे, अर्थात् छाती के बल चले, तथा सर्प के समान अपने ओष्ठप्रांत (होठों को) चाटा करे, सदा क्रोधी रहे, सहत, गुड, दूध और खीर की इच्छा रहे वह सर्पग्रहग्रस्त जानना ॥

राक्षसजुष्ट उन्मादलक्षण

मांसासृग्विविधसुराधिकारलिप्सुर्निर्लज्जो भृशमतिनिद्रुरोऽति-

शूरः । क्रोधालुर्विपुलबलो निशाविहारी शौचद्विद् भवति च
राक्षसैर्गृहीतः ॥

अर्थ—जो मनुष्य मांस, रुधिर, नानाप्रकार के मद्य पीने की इच्छा करे और
निर्लज्ज, अतिनिष्ठुर, अत्यन्त शूर, क्रोधी, बडा बली, रात्रि में डोलनेवाला, अपवित्र
ऐसा होय वह राक्षस करके ग्रस्त जानना ॥

ब्रह्मराक्षस उन्मादलक्षण

देवविप्रगुरुद्वेषी वेदवेदांगनिन्दकः ।

आशु पीडाकरोऽहिंस्रो ब्रह्मराक्षससेवितः ॥

अर्थ—देव, ब्राह्मण, गुरु से द्वेषकर्त्ता, वेद और वेद के अंग (शिक्षा, कल्प व्या
करणादि) का निन्दक, शीघ्र पीडा का कर्त्ता, हिंसा करे नहीं ये लक्षण ब्रह्मराक्षस
सेवी मनुष्य के हैं ॥

पिशाचजन्य उन्माद लक्षण

उद्धस्तः कृशपरुषश्चिरप्रलापी दुर्गंधो भृशमशुचिस्तथाऽति-
लोलः । वहाशी विजनवनांतरोपसेवी व्याचेष्टन्भ्रमति रुद-
न्पिशाचजुष्टः ॥

अर्थ—जो अपने हाय ऊपर को करे, उद्धस्त्र, ऐसा भी पाठ है उस जगह
उद्धस्त्र नाम (नंगा हो जाय) तेजरहित, बहुत देरपर्यंत बकनेवाला, जिस के देह में
दुर्गंध आवे, अपवित्र, तथा अति चंचल कहिये सब अन्नपान में इच्छा करनेवाला,
खाने को मिले तो बहुत भोजन करे, एकांत वनांतरो में रहनेवाला, विरुद्ध चेष्टा
करनेवाला, रुदन करता, डोलनेवाला ऐसा मनुष्य पिशाचग्रस्त जानना ॥

असाध्य लक्षण

स्थूलाक्षो द्रुतमटनः सफेनलेही निद्रालुः पतति च कंपते च
योऽति । यश्चाद्रिद्विरदनगादिविच्युतः स्यात्सोऽसाध्यो भवति
तथा त्रयोदशोऽब्दे ॥

अर्थ—नेत्र भयानक हो जाय, शीघ्र चले, मुख में जो क्षाग हैं उनको चाटनेवाला
और जिसको निद्रा बहुत आवे, तथा गिर पड़े, कँपे और जो पर्वत, हाथी, अन्ध
मग नाम वृक्ष आदिशब्द से भीत्ति, मन्दिर आदि जानने, इनसे गिरकर ग्रहग्रस्त

होय, वह असाध्य हैं, तैसे ही तेरवे वर्ष में सर्व देवादि, उन्मादी, असाध्य, जानने, (विदेह) ने विशेष लक्षण कहे है सो ग्रन्थान्तरों से जान लेने ॥

देवादीनामावेशसमयः

देवग्रहाः पौर्णमास्यामसुराः संध्ययोरपि ।

गन्धर्वाः प्रायशोऽष्टम्यां यक्षाश्च प्रतिपद्दिने ॥

अर्थ-देवग्रह पूर्णमासी को प्रवेश करते हैं, असुरग्रह, सायंकाल में अपिशब्दसे पूर्णमासी को भी प्रवेश करते हैं, गंधर्वग्रह बहुधा अष्टमी को, प्रायःशब्द से संध्या को भी गंधर्व ग्रह प्रवेश करते हैं, यक्ष ग्रह पडवा को ॥

पितृग्रहास्तथा दर्शे पंचम्यामपि चोरगाः ।

रक्षांसि रात्रौ पैशाचाश्चतुर्दश्यां विशंति हि ॥

अर्थ-पितृग्रह अमावास्या को सर्पग्रह पंचमी को अपिशब्द से अमावास्या को भी प्रवेश करते हैं, राक्षस रात्रि में और पिशाच चतुर्दशी को, मनुष्य के देह में प्रवेश करते हैं, तिथि कहने का यह प्रयोजन है कि जिस जिस तिथि को जो ग्रह मनुष्य को ग्रस्त करे उस को उसी उसी तिथि में शांति के निमित्त बलिदानादिक कराने चाहिये । * शंका-क्योंजी जब ग्रहग्रस्त मनुष्यों को उन्माद होता है तो वह ग्रह मनुष्य की देह में प्रवेश करते क्यों नहीं दीखते हैं इस वास्ते कहते हैं ॥

दर्पणादीन्यथा छाया शीतोष्णं प्राणिनो यथा । स्वमणौ भास्करांशुश्च यथा देहं च देहधृक् ॥ विशंति न च दृश्यंते ग्रहास्तद्वच्छरीरिणाम् ॥

अर्थ-जैसे दर्पण में मनुष्य का प्रतिबिंब पडे है, आदिशब्द इस जगह प्रकारवाची है, अर्थात् जल, तैल आदि में जैसे छाया पडती है और सरदी, गरमी जैसे मनुष्यों को लगती है अथवा जैसे सूर्यकिरण सूर्यकान्त मणि (आतसीकाच) में प्रवेश करे है अथवा जैसे जीव देह में प्रवेश करे हैं, इसी प्रकार सब ग्रह मनुष्य के शरीर में प्रवेश करते हैं परंतु दीखते नहीं हैं, इस श्लोक के पोषक दृष्टांत जयंत आचारी ने बहुत दीने हैं, परंतु हम ने ग्रन्थ बढने के भय से नहीं लिखे. इस उन्मादरोग में सर्वत्र देवशब्दकरके देवतान के से आचरणवाले देवतान के अनुचर (दास) जानने चाहिये, क्योंकि देवतान को मनुष्यन के अपवित्र देह में प्रवेश होना असंभव है सो (सुश्रुत) में लिखा है ॥

निशादिघृत

निशायुक्त्रिफलाश्याभावचासिद्धार्थहिंयुभिः । शिरीषकटभि-

श्वेतामंजिष्टाव्योपदारुभिः ॥ समैः कृतं घृतं मूत्रे सिद्धमुन्माद-
नाशनम् ॥

अर्थ—हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आवला, सारिखा, वच, सपेद सरसों, हींग, सिरस, मालकांगनी, सपेद कचनार, मजीठ, सोंठ, मिरच, पीपल और देवदारु ये सब समान भाग ले. गोमूत्र में डाल इस में घी डालके सिद्ध करे यह निजादिघृत उन्मादरोग को नाश करे ॥

कल्याणघृत

विशाला त्रिफला कौन्ती देवदाव्यैलवालुकम् । स्थिरानंता हरिद्रे
द्वे सारिवे द्वे प्रियंगुका ॥ नीलोत्पलैलामंजिष्टा दंती दाडिमवल्क-
लम् ॥ विडंगं पृश्निपर्णी च कुष्ठचंदनपद्मकैः ॥ तालीसं बृह-
तीपत्रं मालत्याः कुसुमं नवम् । एतैः कर्पसमैः कल्कौर्विंशत्य-
ष्टाभिरेव च ॥ चतुर्गुणं जलं दत्त्वा घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
अपस्मारे ज्वरे शोषे कासे मंदानले क्षये ॥ वातरक्ते प्रतिश्याये
तृतीयकचतुर्थके । वाताशौ मूत्रकृच्छ्रे च विसर्पोपहतेषु च ॥
कंडूपांड्वामयोन्मादविषमेहगदेषु च । भूतोपहतचित्तानां गंड-
दानामचेतसाम् ॥ शस्तं स्त्रीणां च बंध्यानां धन्यमायुर्वलप्र-
दम् । अलक्ष्मीपापरक्षोभं सर्वग्रहनिवारणम् ॥ कल्याणकमिदं
सर्पिः श्रेष्ठं पुंस्त्वप्रदं नृणाम् ॥

अर्थ—इन्द्रायन, हरड, बहेडा, आवला, रेणुकबीज, देवदारु, एलवालुक, सालपर्णी, धमासा, हरदी, सपेद कोयल, कोयल, फूलप्रियंगु, नीला कमल, इलायची, मंजीठ, दंती की जड़, अनार की छाल, वायविडंग, पृष्ठपर्णी, कूठ, चंदन, पद्मास, तालीसपत्र, कटेरी, पत्रज और चमेली के ताजे फूल ये प्रत्येक तोले २ लेवे. सब का कल्क कर और कल्क से चौगुना जल डाल उस में ६४ तोले घी डालके औ-
टावे. जब सब रसादिक जलके घृतमात्र शेष रहे तब उतार ले. यह अपस्मार, ज्वर, शोष, खांसी, मंदाग्नि, क्षय, वातरक्त, पीनस, तृतीयक, चातुर्थिकज्वर, वादी की बवासीर, मूत्रकृच्छ्र, विसर्प, खुजली, पांडुरोग, उन्माद, विष, प्रमेह, भूतोन्माद इत्यादि रोगों का नाशक तथा बंध्या स्त्री को संतान का देनेवाला, आयुष्य और बलको देकर तथा दरिद्र, पाप और राक्षसादि सर्व ग्रह इन को दूर करे इस को कल्याणघृत कहते हैं यह बहुत श्रेष्ठ है पुरुषों को पुरुषार्थ देता है ॥

हिंवादिघृत

हिंयुसौवर्चलव्योपद्विपलांशैर्घृतं शृतम् ।

चतुर्गुणे गवां क्षीरे सिद्धमुन्मादनाशनम् ॥

अर्थ—हींग, संचरनिमक और त्रिकुटा (सांठ, मिरच, पीपल) सब मिलायके ८ तोले लेवे और घी तथा घी से चौगुना गौ का दूध लेवे इन सब को एकत्र करके घी सिद्ध करे यह हिंवादिघृत उन्माद को दूर करे ॥

सारस्वतघृत

त्रिफला लक्ष्मणानंता समंगा सारिवा वचा । ब्राह्मी पाठा बृह-
तिका द्विः स्थिरा द्विः पुनर्नवा ॥ सहदेवी सूर्यवल्ली वयस्था
गिरिकर्णिका । तोयकुंभे पचेदेतत्पलांशं पादशेषिते ॥ न तं
कौंति वचा कुष्ठं कृष्णा सेंधवसर्पिपम् । नीरुक् स्वर्णवत्सायाः
संसिद्धं पयसा च गोः ॥ पुण्ययोगे घृतप्रस्थं सुस्नेहकलशे स्थि-
तम् । पानाभ्यंजनतो मेधास्मृत्यायुःपुष्टिवर्धनम् ॥ रक्षोघ्नं च
विपघ्नं च सारस्वतमिदं घृतम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आवला, लक्ष्मणा (सपेद कटेरी), धमासा, मजीठ, सारिवा, वच, ब्राह्मी, पाठ, छोटी कटेरी, बडी कटेरी, मुद्गपर्णी, मापपर्णी, सपेद पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा, सहदेई, सूर्यवल्ली, हरड, सपेद कोयल इन सब को चार २ तोले लेवे १ घडे जल में काढा करे जब चतुर्थांश रहे तब उतार लेवे. इस को कपडे में छान लेवे. फिर छड, रेणुक, वच, कूठ, पीपल, सेंधा निमक, सरसों और रोगरहित तथा जीवित बछडेवाली एक वर्ण गौ का दूध डालके उस में ६४ तोले घी डालके पुण्य नक्षत्र में इस घी को बनावे और चिकने पात्र में भरके रख देवे. फिर इस को पीवे अथवा लगावे तो वाणी, बुद्धि, स्मृति, आयुष्य और पुष्टि इन को बढ़ावे. तथा राक्षसबाधा और विपबाधा इन को नाश करे इस को सारस्वत घृत ऐसे कहते हैं ॥

उन्मादगजकेसरीरस

सूतगंधं शिलातुल्यं स्वर्णबीजं विचूर्ण्य च । भावयेदुग्रगंधायाः
क्वाथे मुनिदिनं पृथक् ॥ रास्त्राक्वाथेन सप्तैव भावयित्वा विचूर्-
णयेत् । रसः संजायते नूनमुन्मादगजकेसरी ॥ अस्य मापः

ससर्पिष्को लीढो हन्ति हठाद्गदम् । उन्मादाख्यमपस्मारं भूतो-
न्मादमपि ज्वरम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, मनसिल और इन सब की बराबर घट्टे के बीज इन-रुख को एकत्र खरल करके बच और रास्ना इन के काठे की पृथक् २ सात २ भावना देवे फिर सुखायके चूर्ण कर लेवे तो उन्मादगजकेसरी नामक रस बने इस को धी में मिलायके १ मासे के अनुमान चाटे तो घोर उन्माद, अपस्मार, भूतोन्माद और ज्वर इन को हठपूर्वक दूर करे ॥

उन्मादे पर्पटीं दद्यात्सा चाविषयसान्विताम् ।

अपस्मारोपि तत्प्रोक्तमेतत्पाराशरेण च ॥

अर्थ—उन्मादरोग पर पर्पटी रस को बकरी के दूध में देवे तो मृगी और उन्माद रोग (बावलापना) नाश होवे ॥

विगतोन्मादलक्षण

प्रसादश्चेन्द्रियार्थानां बुद्ध्यात्ममनसामपि धातूनां प्रकृतिस्थत्वं
विगतोन्मादलक्षणम् ॥ यच्चोपदेशतः किञ्चिदपस्मारे चिकित्स-
तम् । उन्मादे तच्च कर्तव्यं दोषसामान्यदृष्ययोः ॥

अर्थ—अपस्मार और उन्माद इन दोनों के दोष और दृष्य एकसे हैं इस वास्ते अपस्मार को जितने यत्र कहे हैं वह सब उन्मादरोग पर करने चाहिये ॥

भूतोन्मादपर अंजन व नावन

शिरीषपुष्पं लशुनं शुंठी सिद्धार्थकं वचा । मंजिष्ठरजनी कृष्णा
वस्तमूत्रेण पेपयेत् ॥ वटी छायासु शुष्का या सा हिता न-
वनांजने ॥

अर्थ—सिरस के फूल, लहसन, सोंठ, सपेद सरसो, वच, मजीठ, हलदी और पीपर इन सब को बकरे के मूत्र में पीसके गोली बनावे और छाया में सुखाय ले। इस को नस्य अथवा अंजन रस विषय में योजना करे तो हितकारी होवे ॥

भूतभैरवरस

रसः सतालः सशिलः सलोहः स्रोतोऽंजनं सार्कमिदं हि गंधम् ।
पिष्ट्वाजमूत्रेण समं समस्तादेयो द्विभागोथ वलिः पचेच्च ॥ लो-
हेक्षणं हन्ति घृतेन मापोपस्मारमस्योन्मदमानसत्वम् । पिबेदनु

त्र्युपणहिंशुयुक्तं सर्पिर्नृमूत्रं रुचकेन सार्द्धम् ॥ भूतोन्मादेषु स-
र्वेषु रसोयं भूतभैरवः । स्वर्णजैः पंचभिर्वीजैर्देयः सर्पिर्विमिश्रितः ॥

अर्थ—पारा, हरताल, मनसिल, लोहे का भस्म, सुरमा, तामे की भस्म और गंधक इन सब को समान भाग लेके बकरे के मूत्र में खरल करे और सब से दूनी गंधक लोहे के पात्र में डालके और इन सब औषधों को मिलायके अग्नि पर रखके थोड़ी देर पचावे फिर एक मासे भर ले घी के साथ खाय तो अपस्मार और उन्माद इन को नाश करे यह औषध सेवन करने त्रिकुटा और हींग इनका चूर्ण घी में मिलायके खाय अथवा मनुष्य के मूत्र में संचरनिमक डालके पिलावे. यह सर्वभूतोन्मादोंपर भूतभैरवरस घतूरे के पांच बीज का चूर्ण और घी इन के साथ खाय ॥

भूतरावघृत

फलत्रिकव्योपकलिंगजोग्रा निशाद्रयैला चविका सुराह्वा । तुत्थं
प्रियंग्वामपकालमेपी मनःशिलापद्मककंटकार्याः ॥ यवाह-
यष्टीकटुकुंकरमांभोरिष्टाव्हसिद्धार्थपुगच्छदानि । रसांजनं ग्रंथि-
मधूकसारं बला रसोनाह्वनतानि चूर्णात् ॥ एषामजामूत्रदधिप्र-
युक्तात्संजातमाज्यं ननु भूतरावम् । लोकेषु नाम्ना विदितं सम-
स्तैर्वैद्यैः समुक्तं जगतां हिताय ॥ पानेन नस्येन च मर्दने-
नानेकोग्रभूतग्रहजातिपीडाम् । निहंति रक्षांसि च डाकिनीनां
मंत्रा यथा तारकनामधेयम् ॥

अर्थ—हरड, घहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल, इन्द्रजो, वच, हलदी, दाह-
हलदी, इलायची, चविका, सुराह (देवदारु), लीलायोथा, फूलप्रियंगु, कूठ, मजीठ,
मनसिल, पञ्जाख, कटेरी, धमासा, गुलहटी, परबल, केशर, नेत्रवाला, रीठा, सपेद
सरसों, रसोत, पीपरामूल, महुए के फूल, कत्या, वरियारा, लहसन और तगर इन
के चूर्ण और बकरी का मूत्र और दही इन को एकत्र कर तथा इस में घी मिलायके
पाक करे. जब सिद्ध हो जावे तब इसे भोजन नस्य और मर्दन इत्यादि प्रयोगों में
देवे तो भूत, ग्रहजाति, राक्षस और डाकिनी इन की पीडा को नाश करे यह वैद्यों
ने संसार के कल्याण करने को प्रासिद्ध करा है और यह अनुभव करा हुआ है ॥

धूप

ऋक्षजंबुकरोमाणि शल्लकीलसमं तथा । हिंशु मूत्रं च वस्तस्य धू-
पमस्य प्रयोजयेत् ॥ धूपेन शाम्यति क्षिप्रं बलवानपि यो ग्रहः ॥

अर्थ—रीछ, स्यार इन के बाल, सेह के कांटे, हींग और चकरे का मूत्र इन की धूनी से तत्काल बलवान् भी ग्रह शांति होवे ॥

ये च स्युर्भुवि गुह्यकाश्च प्रमथास्तेपां समाराधनम् ।

देवब्राह्मणपूजनं च शमयेदुन्मादमागंतुकम् ॥

अर्थ—इस पृथ्वी में गुह्यक, प्रमथ इत्यादिकों के आराधन तथा देव, ब्राह्मण इन का पूजन करे तो उन का आगंतुक उन्माद की शांति शीघ्र होवे ॥

शिरापनक्तमालानां बीजानि मधुसर्पिपा ।

भक्ष्याश्च सर्वे सर्वेषां सामान्यो विधिरुच्यते ॥

अर्थ—सिरस के बीज और कंजा के बीज इन को सहत और घी के साथ खाय और भक्ष पदार्थ संपूर्ण आरोग्य करते हैं यह सामान्य विधि कही है ॥

भूतोन्मादचिकित्साशास्त्रार्थ

बुद्धा दोषं वयःसात्म्यं देशं कालं बलाबलम् ।

चिकित्सितमिदं कुर्यादुन्मादे भूतदोषजे ॥

अर्थ—वैद्य को उचित है कि भूतोन्माद रोगी का दोष अवस्था और प्रकृति को माने ऐसे देश, काल, बल और अशक्तता इन को विचारके भूतोन्माद की विस्ते कित्सा करे ॥

देवर्षिपितृगंधर्वैरुन्मत्तेषु च बुद्धिमान् । त्यजेन्नस्यांजनादीनि

तीक्ष्णानि क्रूरकर्म च ॥ सर्पिःपानं सूर्यजपहोममंत्रादिरिष्यते ॥

अर्थ—देव, ऋषि, पितर और गंधर्व इन की वाधा से उत्पन्न हुए मनुष्य को नस्य और अंजन इत्यादि क्रूर कर्म कदाचित् न करे. उस को घृतपान करावे तथा सूर्य का जप, होम, गायत्रीमंत्र इत्यादिक कर्म करे ॥

पूजाबल्युपहारशांतिविषयो होमेष्टिमंत्रक्रियादानं स्वस्त्ययनं

व्रतादिनियमः सम्यग्र जपो मंगलम् । प्रायश्चित्तविधानमंजलि-

रथो रत्नौषधीधारणं भूतानामधिपस्य विष्टरपतेर्गौरीपतेरर्चनम् ॥

अर्थ—पूजा, बलि (भेट), नैवेद्य शांतिनिमित्त होम, मंत्र, दान, पुण्याहवाचन, व्रत, नियम, जप, मंगल, प्रायश्चित्त, नमस्कार, मणि और औषधी इन का धारण विष्णु और शिव का पूजन इत्यादि भूतोन्माद पर उपचार करे ॥

महापैशाचिकघृत

जटिला पूतना केशी चारटी मर्कटी वचा । त्रायमाणा जया
 वीरा चोरकंकडुरोहिणी॥कायस्था सूकरी छत्रा सातिपत्रा पलं-
 कपा । महापुरुषदंता च वयस्था नाकुलीद्वयम् ॥ कटंभरा वृ-
 श्विकाली स्थिरा चैतैर्घृतं पचेत् ॥ तच्च चातुर्थिकोन्मादग्र-
 हापस्मारनाशनम् ॥ महापैशाचिकं नाम घृतमेतद्यथामृतम् ।
 बुद्धिमेधास्मृतिकरं बालानां चांगवर्धनम् ॥

अर्थ—जटामांसी, सुगंध जटामांसी, छोटी नीली, कौछ के धीज, वच, त्रायमाण,
 सेवती, भूयआवला, मडोता, कुटकी, हरड, बाराहकंद, सोफ, सालघृत, गोखरू,
 बडी सतावर, ब्राह्मी, दो प्रकार की नाकुली, कटंभरा, छोटी किवाच और सालपर्णी
 इन सब के कल्क में घी डालके सिद्ध करे यह चातुर्थिक ज्वर, उन्माद, ग्रहनाधा
 और अपस्मार इन को नाश करे यह महापैशाचघृत अमृत के समान है यह बुद्धि,
 मति और स्मृति को उत्पन्न करे तथा बालको के देह को पुष्ट करे है ॥

कल्याणकघृत

कल्याणकं प्रयुंजीत महद्वा चोत्तमं घृतम् ।

तैलं नारायणं वापि बृहन्नारायणं तथा ॥

अर्थ—कल्याण घृत अथवा नारायण तैल अथवा बृहन्नारायण तैल ये उन्मादरोग
 पर देने चाहिये ॥

उन्मादपथ्य

गोधूममुद्गरुणशालयश्च धारोष्णदुग्धं शतधौतसर्पिः । घृतं
 नवीनं च पुरातनं च कूर्मामिषं धन्वरसा रसाला ॥ पुराणकू-
 प्मांडफलं पटोलं ब्राह्मीदलं वास्तुकतंदुलीयम् । द्राक्षा, कपित्थं
 पनसं च वैद्यैर्विधेयमुन्मादगदेषु पथ्यम् ॥

अर्थ—गेहूं, मूंग, लाल चावल, धारोष्ण अर्थात् तत्काल का दुहा हुआ दूध, सौ
 बार धुला हुआ घी, नवीन घी अथवा पुराना घी, कछुए का मांस, जंगली जीवों
 का मांसरस, सिल्वरन, पुराना पेठा, पटोलपत्र, ब्राह्मी के पत्ते, बथुर का साग, चीलाई,
 का साग, दाख, केथ, कटहर, सब फल वैद्यों ने उन्मादरोगों में पथ्य कहे है ॥

उन्माद अपथ्य

मद्यं विरुद्धाशनमुष्णभोजनं निद्राक्षुधातृदृकृतवेगधारणम् ।

तिक्तानि तीक्ष्णानि भिषक्समादिशेदुन्मादरोगेषु विगर्हितानि ॥

अर्थ—मद्य, विरुद्ध पदार्थ भोजन, उष्ण पदार्थ भोजन, निद्रा, भूख, प्यास इन के वेगों को रोकना, चरपरे पदार्थ सब उन्मादरोग में वर्जित कहे हैं ॥

इतिश्री बृहन्निघण्टुरत्नाकरे उन्मादरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

अपस्मारकर्मविपाकः ।

गुरौ स्वामिनि वस्ते यः प्रतिकूलं समाचरेत् ॥

सोपस्मारी भवेत्तत्र कुर्याच्चन्द्रायणं नरः ॥

अर्थ—जो प्राणी गुरु और स्वामी इन के समीप रहकर इन के प्रतिकूल कार्य करे अर्थात् इन की आज्ञा पालन न करे किंतु इन का अहित करे है उस को अपस्मार (मृगी) रोग होता है इस के दूर करने को चांद्रायण व्रत करे ॥

ब्राह्मणश्वासरोधेन ह्यपस्मारी भवेन्नरः ।

वक्ष्ये तस्य प्रतीकारं दानहोमक्रियाविधिः ॥

अर्थ—जो प्राणी ब्राह्मण की श्वास रोकता है वह अपस्मार रोगी होता है उस के दूर करने को यज्ञ और दान होम आदि क्रिया कहता हूँ ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

शनिभूसुतदिननाथा निधनस्था यस्य जन्मकाले स्युः । ना-

नाव्याधिवधाद्यैः पीडां चापस्मारसंभवां तस्य ॥ अष्टमस्थान-

नस्थशनिमंगलसूर्यजनितापस्मारशांतये ग्रहप्रीतये पूर्वोक्तमेव

सकलं जपादि कुर्यात् ॥

अर्थ—जिस के जन्मकाल में शनि, मंगल और सूर्य ये अष्टमस्थान में पड़े हों तो उस के अनेक प्रकार की व्याधि किंवा अपस्मार इन में से कोई पीडा हो. उस प्राणी को अष्टम स्थानस्थ शनि, मंगल और सूर्य इन से उत्पन्न हुए अपस्मार की शांति करने को तथा ग्रहों की प्रसन्नता के अर्थ पूर्वोक्त जपादिक सर्व उपचार करे ॥

अपस्मारनिदान

तमःप्रवेशः संरंभो दोषोद्रेकहतस्मृतिः ।

अपस्मार इति ज्ञेयो गदो घोरश्चतुर्विधः ॥

अर्थ—अन्धकार में प्रवेश करने के समान ज्ञान का नाश होना, नेत्र टेढ़े बाँके फिरे, दोषों के बढ़ने से ज्ञान का नष्ट होना, ये लक्षण जिस रोग में होंय ऐसा यह भयंकर (अपस्मार) रोग चार प्रकार का है इस को लौकिक में मिरगी ऐसे कहते हैं॥

पूर्वरूपं

हृत्कंपः शून्यता स्वदो ध्यानं मूर्च्छा प्रमूढता ।

निद्रानाशश्च तस्मिंस्तु अपस्मारे भविष्यति ॥

अर्थ—जब अपस्मार होनेवाला होय है तब ये लक्षण होते हैं. हृदय कांपे और शून्य पड जाय (कुछ सूझे नहीं), चिंता, मूर्च्छा, पसीना आवे, ध्यान लग जाय, मूर्च्छा कहिये मन का मोह और प्रमूढता कहिये इन्द्रिय का मोह होय, निद्रा जाती रहे॥

वातजन्य अपस्मार

कंपते प्रदशेदंतांफेनोद्गामी श्वसत्यपि ।

परुपारुणकृष्णानि पश्येद्रूपाणि चानिलात् ॥

अर्थ—वात के अपस्मार से रोगी कांपे, दाँतों को चंवावे, मुख से झाग मेरे और आस भरे तथा कर्कश अरुणवर्ण और काले वर्ण मनुष्यों को देखे अर्थात् कोई नीलवर्ण का मनुष्य मेरे पास दौडा आता है. इसी प्रकार पित्त से पीले वर्ण का पुरुष दौडा आता है और कफ में सपेद रंग का पुरुष मेरे सामने दौडा आता है ऐसे जानना ॥

पैत्तिक अपस्मार

पीतफेनांगवक्राक्षः पीतासृष्टूपदर्शनः ।

सत्पृष्णोष्मानिलव्याप्तलोकदर्शी च पैत्तिकः ॥

अर्थ—पित्त की मिरगीवाले के झाग, देह, मुख और नेत्र पीले होते हैं और वह पीले रुधिर के रंग की सी सब वस्तु देखे, प्यासयुक्त और गरमी के साथ अग्नि से व्याप्त भया ऐसा सब जगत् को देखे ॥

कफापस्मार

शुक्लेफेनांगवक्राक्षः शीतहृष्टांगजो गुरुः ।

पश्येच्छुक्लानि रूपाणि मुच्यते श्लैष्मिकश्चिरात् ॥

अर्थ—कफ की मृगीवाले के श्लेष्मि, भ्रूण, और नेत्र सपेद होय, देह शीतल होय, तथा देह के रोमांश सखे रहें, भारी होय और, सब पदार्थ सपेद दीखें यह अपस्मार (मिरगी) रोग देह में छोड़े या से यह सूचना करी कि वातपित्त की मृगी जलदी रोगी को छोड़ देती है ॥

संनिपातापस्मारनिदान

सर्वैरैः समस्तैश्च लिंगैर्ज्ञेयस्त्रिदोषजः ।

अपस्मारः स चासाध्यो क्षीणश्चानश्रतश्च यः ॥

अर्थ—जिस में तीनों दोषों के लक्षण मिलते हों वो त्रिदोषज अपस्मार जानना यह असाध्य है और जो क्षीण पुरुष के होय वहभी असाध्य है तथा पुराना पड गया होय वहभी अपस्मार (मिरगी) रोग असाध्य है ॥

असाध्य लक्षण

प्रस्फुरन्तं च बहुशः क्षीणं प्रचलितध्रुवम् ।

नेत्राभ्यां च विकुर्वाणमपस्मारो विनाशयेत् ॥

अर्थ—बारंवार कंपयुक्त होय, क्षीण हो गया हो, झुकुटी (भौंह) को चलानेवाला और नेत्र टेढे बांके करनेवाला ऐसा अपस्मारी रोगी जीवे नहीं ॥

अपस्मार का कालनियम कहते हैं

पक्षाद्वा द्वादशाहाद्वा मासाद्वा कुपिता मलाः ।

अपस्माराय कुर्वन्ति वेगं किञ्चिदथोत्तरम् ॥

अर्थ—कोप को प्राप्त भये जो दोष सो पंद्रहवें दिन अथवा बारहवें दिन अथवा ब्रह्मिनाभर में मिरगी रोग प्रपट करे, तिन में पैत्तिक १५ दिन, वातिक १२ दिन और श्लेष्मिक ३० दिन में आती है. इस जगह बारहवें दिन के पिछाडी पक्ष कहना ठीक था फिर पहिले पक्ष धरने का यह प्रयोजन है कि अधिक काल करके ही दोष वेग करते हैं यह कहा. ' किञ्चिदथोत्तरम् ' इस पद से यह सूचना करी है कि जिस जिस दोष का जो जो काल कहा है उससे पहिले भी दोषों के तारतम्य से मिरगी रोग होय है ऐसे जानना. शंका—वेग उत्पन्न करे अपस्मार के प्रगट कर्ता दोष देह में सदा रहते हैं, फिर वह सर्वकाल में वेग क्यों नही करते द्वादशादि दिन में क्यों करते हैं ? इस विषय में दृष्टांतरूप समाधान कहते हैं ॥

देवैर्वर्षत्यपि यथा भूमौ बीजानि कानिचित् ।

॥ ८ ॥ शरदि प्रतिरोहन्ति तथा व्याधिसमुच्छ्रयः ॥

- अर्थ—जैसे चातुर्मास मे इन्द्र वर्ष भी है परंतु कोई जब गेहूं चना आदि बीज शरदऋतु मे ही उगते है तैसे ही सर्व रोग के बीजरूप वातादिक दोष कदाचित् किसी अपस्मारादि व्याधिविशेष के निदानादिक का संगम होने से उस रोग को प्रगट करते है अथवा इस को मुख्य प्रयोजन यह है कि बीज के अंकुर फूटने में तेज, वायु, पृथ्वी, जल ये सहायक भी है परन्तु वे सब कालविशेष की प्रतीक्षा (इच्छा) करते है अंकुर आने को काल ही सहाय चाहिये अर्थात् जिस काल में जिस अंकुर का बीज आता है वह उसी काल में आवेगा बीच में कभी नहीं आनेवाला यही न्याय चातुर्थिक ज्वरादि कों मे भी जानना ॥

मधुकघृत

मधुकद्विपले कल्के द्रोणे चामलकीरसे ।

तस्मिन् सिद्धं घृतप्रस्थं पित्तापस्मारभेषजम् ॥

अर्थ—आठ तोले मुलहठी का चूर्ण और १०२४ तोले आवले का रस इस मे ६४ तोले घृत को मिलायके पक करे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके छान लेवे यह पित्त के अपस्मार रोग को नाश करे ॥

काशघृत

काशक्षीरेक्षुरसयोः काश्मर्यपृगुणे रसे । कार्पिकैर्जीवनियैश्च सर्पिः

प्रस्थं विपाचयेत् ॥ वातपित्तोद्भवं क्षिप्रमपस्मारं नियच्छति ॥

अर्थ—काससंज्ञक वृण का काढा और ईख का रस इन से अठगुना कंभारी का रस ले इन में जीवनीयगणोक्त प्रत्येक औषध का चूर्ण तोले २ भर मिलावे फिर इस में ६४ तोले घी डालके औटावे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके सेवन करे. यह वातपित्त से प्रगट हुए अपस्मार रोग को तत्काल नाश करे ॥

कफअपस्मारपर वचाद्यघृत

वचाशम्याककैडर्यवयस्थाहिंगुचौरकैः ।

सिद्धं पलं कपायुक्त वातश्लेष्मात्मिकं घृतम् ॥

अर्थ—वच, अमलतास, कैडर्य (कंजा का भेद), आवला, हींग, गटोना और और छोटे गोखरू इन के कल्क के साथ सिद्ध करा हुआ घी अपस्मारनाशक है ॥

मधुवचायोग

यः खादेत्क्षीरभक्ताशी माक्षिकेन वचारजः ।

अपस्मारं महाघोरं सुचिरोत्थं जयेद्ध्रुवम् ॥

अर्थ—दूधभात का भोजन करनेवाला मनुष्य यदि वच के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो बहुत दिन का घोर अपस्मार निश्चय दूर हो परंतु वच को देखके छे इधर मथुराआदि देश में नहीं मिलती. इस में सुगंध आती है और रंग में कुछ २ काली होती है ॥

मुस्तकमूलयोग

उत्तरदिग्गतमुस्तकमूलं बुद्ध्यासमुद्धृतं पेप्य ।

पीतं पयसा हन्यादपस्मृतिं गोः सवर्णवत्सायाः ॥

अर्थ—नागरमोथे के उत्तर के तरफ की जड़ को बछरेवाली और एकरंग की गौ के दूध में पीसके पीवे तो अपस्मार (मृगी) का नाश करे ॥

कूष्मांडकादियोग

कूष्मांडकगिरोत्थेन रसेन परिपेपितम् ।

अपस्मारविनाशाय यष्ट्याह्वं स पिबेत्स्यहम् ॥

अर्थ—कुह्लडे के गीर के रस में जेठीमध घिसके पीवे तो तीन दिन में अपस्मारा का नाश होता है ॥

भैरवरसायन

वचामृताव्योपमधूकसाररुद्राक्षसिंधूद्भववार्हतानि । फलं समुद्र-
स्य रसोनकल्कं घ्मातं हि नासापुटमध्यदेशे ॥ अपस्मृतिःश्ले-
ष्ममरुच्छिरोरुक्प्रलापतंद्राभ्रमजाब्जमोहान् । ससंनिपातश्रुति-
काक्षिभंगान् सपीनसं हंति हलीमकं च । रसायनं भैरवनामधेयं ।
ज्ञातं विचारात्कविविद्वलेन ॥

अर्थ—वच, गिलोय, सोंठ, मिरच, पीपल, महुए का गोद, रुद्राक्ष, सेंधा निमक, कोटरी के फल, समुद्रफल और लहसन इन सब को पीसके कल्क कर लेवे. इस को नाक में टपकावे तो अपस्मार रोग नष्ट होय तथा वादी, कफ, मस्तकपीडा, प्रलाप, तंद्रा, भ्रम, जडता, मोह, सन्निपात, कर्णरोग, नेत्रभंग, पीनस और हलीमक इन सब को नाश करे इस को भैरवरसायन ऐसे कहते हैं इस को विद्वलवैद्य ने विचार करके जाना है ॥

स्मृतिसागररस

रसगंधकतालानां सशिलाताम्रभस्मनाम् । शुद्धानां मूर्च्छि-
तानां च चूर्णं भाव्यं वचामृतैः ॥ एकाविंशतिधा पश्चाद्ब्राह्मी

वारा तथैव च । कटभीषिजतैलेन भावयेदेकवारकम् ॥ स्मृति-
सागरनामायं रसोपस्मारनाशनः । सर्पिषा मापमात्रेयं भुक्तो
हन्यादपस्मृतिम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, हरताल, मनसिल और तामे की भस्म ये शुद्ध मूर्च्छित कर इन के चूर्ण में वच और ब्राह्मी इन प्रत्येक की इक्कीस २ भावना देवे. फिर मालकांगनी के तेल की एक भावना देय तो यह स्मृतिसागर नामक रस अपस्मार नाशक बने इस को १ मासे के अनुमान धी के साथ नित्य भक्षण करे तो अपस्मार रोग निवारण होवे ॥

पानीयकल्याणघृत आपस्मारादिकों पर

त्रिफला द्वे निशे कौंती सारिवे द्वे प्रियंगुका । शालपर्णी पृष्ठ-
पर्णी देवदारुवैलवालुकम् ॥ न तं विशाला दंती च दाडिमं ना-
गकेशरम् । नीलोत्पलैलामंजिष्ठा विडंगं कुष्ठपद्मकम् ॥ जातीपुष्पं
चंदनं च तालीसं बृहती तथा । एतैः कर्पसमैः कल्कैर्जलं दत्त्वा
चतुर्गुणम् ॥ घृतप्रस्थं प्रचेद्धीमानपस्मारे ज्वरे क्षये ॥ उन्मादे वात-
रक्ते च कासे मंदानले तथा । प्रतिश्यायकटीशूले तृतीयकच-
तुर्थके ॥ मूत्रकृच्छ्रे विसर्पे च कंठूपांड्वामये तथा ॥ विपद्भये प्रमे-
हेषु सर्वथैवोपयुज्यते ॥ वंध्यानां पुत्रदं भूतयक्षरक्षोहरं स्मृतम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आवला, हलदी, दारुहलदी, रेणुकबीज, सारिवा, कालीसर फूल प्रियंगु, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, देवदारु, एलवालुक, तगर, इन्द्रायन की जड, अनार, की छाछ, दंती की जड, नागकेशर, नीला कमल, इलायची, मजीठ, वापविडंग, कूठ, पद्मास, चमेली के फूल, चंदन, तालीसपत्र और कटेरी ये प्रत्येक एक २ तोले लेकर कल्क करे और कल्क से चौगुना जल ले तथा धी ६४ तोले डाले सब को एकत्र कर मंदाग्नि से पचावे. जब जल जर जावे केवल घृत रहे तब उतार ले. वह मृगी, ज्वर, क्षई, उन्माद, वातरक्त, खांसी, मंदाग्नि, पीनस, कमर का शूल, तृतीय और चातुर्थिक ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, विसर्प, खुजली, पांडुरोग, सर्पादिक जंगम त्रिप और बच्छनागादिक स्यावर विष और प्रमेह ये सब रोग दूर हों. वंध्यास्त्रियो को संतान देवे. तथा भूत, यक्ष, राक्षस के दोष को हरण करे है ॥

शंखपुष्पीघृत

शंखपुष्पीवचाकुष्ठैः सिद्धं ब्राह्मीरसे घृतम् ।
पुराणं हंत्यपस्मारं मेध्यमुन्मादनाशनम् ॥

अर्थ—संखाहूली, वच, कूठ और ब्राह्मी का रस इन के कल्क में घृत मिलायके बनावे. यह पुराने अपस्मार को नष्ट करे बुद्धि बढ़ावे और उन्माद रोग को दूर करे ॥

सैधवादि घृत

घृतसैधवाहिंशुभ्यो कर्पैर्वातैश्चतुर्गुणैः ।

मूत्रैः सिद्धमपस्मारं हृद्ग्रहाग्रामनाशनम् ॥

अर्थ—घृत, सैधा निमक और हींग ये एक एक तोले और गोमूत्र चारह तोले ले सब को एकत्र कर सिद्ध करे जब मूत्र जल जावे तब उतार ले. यह घी अपस्मार रोग और हृदय रोग इन का नाश करे ॥

ब्राह्मीघृत

ब्राह्मीरसे वचाकुष्ठशंखपुष्पीभिरेव च ॥

पक्वं पुरातनं सर्पिरपस्मारहरं घृतम् ॥

अर्थ—ब्राह्मी के रस में वच, कूठ, संखाहूली, पुराना घी मिलायके सिद्ध करे. यह घी अपस्माररोग को हरण करता है ॥

कुष्मांडघृत

कुष्मांडकरसे सर्पिरष्टादशगुणे पचेत् ।

यष्ट्याव्हकल्कैस्तत्पानादपस्मारविनाशनम् ॥

अर्थ—एक भाग घी और अठारह भाग पेटे का रस इस प्रकार लेकर अग्निपर पक करे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके मुलहठी के चूर्ण से भक्षण करे तो अपस्मार को नाश करे ॥

पंचगव्यघृत

गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैः समं घृतम् ।

सिद्धं चातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥

अर्थ—गौ के गोबर का पानी, दही खट्टा, दूध और गौ का मूत्र तथा इन सब की बराबर गौ का घी लेवे सब को मिलायके अग्निपर घी सिद्ध करे तो यह चातुर्थिक ज्वर, उन्माद, ग्रह और अपस्मार रोग इन को दूर करे ॥

अपस्मारनस्य

अरण्यत्रपुसीचूर्णं नस्येनापस्मृतिं जयेत् ॥

अर्थ—वन के, खीरे के चूर्ण की नस्य लेने से मृगीरोग दूर होवे ॥

निर्गुडीभवमक्रूरं नावनांजनयोगतः ।

उपैति सहसा नाशमपस्मारो न संशयः ॥

अर्थ-निर्गुडी के रस में अखरोट को पीस नस्य अथवा अंजन करने से तत्काल अपस्माररोग को नाश करे इस में संशय नहीं है ॥

श्वशृगालविडालानां कपिलानां गवामपि ।

पित्तातिनस्यतो हन्युरपस्मारं पृथक् पृथक् ॥

अर्थ-कुत्ता, स्यार, बिलाव, कपिला गौ इन प्रत्येक के पित्त को पीसके नस्य देवे तो अपस्मार नाश होय परंतु इन सब को एक न करे ॥

अंजन

पुष्योद्धृतं शुनः पित्तमपस्मारघ्नमंजनम् ।

तदेव सर्पिषा युक्तं धूपनं परमं हितम् ॥

अर्थ-पुष्यनक्षत्र में कुत्ते का पित्त निकालके अंजन करे अथवा घी मिलायके धनी देवे तो अपस्मार को नाश करे ॥

मनोव्हा ताक्ष्यकं चैव शकृत्पारावतस्य च ।

अंजनं हंत्यपस्मारमुन्मादं च विशेषतः ॥

अर्थ-मनसिल, रसात और कबूतर की बीट इन का अंजन अपस्मार और उन्मादोग इन को नाश करे ॥

यष्टिहिंशुवचावज्रीशिरीपलशुनामयैः ।

साजमूत्रैरपस्मारे सोन्मादे नावनांजने ॥

अर्थ-मुलहठी, हींग, वच, धूहर का दूध, सिरस के बीज, लहसन और कूठ इन को बकरे के मूत्र में पीस अंजन और नस्य देवे तो अपस्मार और उन्मादरोग दूर हो ॥

करंजदारुसिद्धार्थकंभी रामठं वचा । समंगा त्रिफला व्योपप्रि-
यंगुश्च समांशकः ॥ वस्तमूत्रेण संपिष्ट्वा नस्यपानांजनादिषु ।

योज्यो योगोयमुन्मादेपस्मारे भूतरोगिषु ॥

अर्थ-कंजा, देवदारु, सपेद सरसों, मालकांगनी, हींग, वच, मजीठ, हरड, बहेडा, शोबला, सांठ, मिरच, पीपल, फूलप्रियंगु ये सब समान भाग लेवे. सब को बकरे के मूत्र में पीसके पीवे तो वा नस्य करे अथवा अंजन करे तो ग्रहयोग, अपस्मार, उन्माद तथा भूतोन्माद इन पर देवे ॥

नकुलोलूकमार्जारगृध्रकीटाहिकाकजैः ।

तुंडैः पक्षैः पुरीषैश्च धूपनं कारयेद्भिषक् ॥

अर्थ—नोला, घूघू, बिलाव, गीध, कीडा, सांप और कौआ इन के मुस, पासू और विष्टा की घूनी अपस्माररोगनाशक है ॥

दुश्चिकित्स्यो ह्यपस्मारश्चिरकारी महागदः । तस्माद्रसायनैरेतैः
प्रायशः समुपाचरेत् ॥ हृत्कंपोक्षिरुजा यस्य स्वदो हस्ता-
दिशीतता । दशमूलीजलं तस्य कल्याणाज्यं च योजयेत् ॥

अर्थ—अपस्माररोग कष्टसाध्य, बहुत दिन रहनेवाला है. इसी वास्ते अपस्मार रोग प्रकरण पर जो जो रसायन कही है उन को बहुधा उपचार करे तथा हृदय का कंप, नेत्रों की पीडा, देह में पसीने, हाथ पैरों का ठंडा होना ऐसे लक्षण हों उस को दशमूल का काढा और कल्याणघृत पीने को देवे ॥

त्रिकत्रयलेह

त्रिकत्रयसमायुक्तं जीवनीययुतं तथा ।

हंत्यपस्मारमुन्मादं वातव्याधिं सुदुस्तराम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची, पत्र और जीवनीयगण की सब औषध इन का अवलेह करे तो अपस्मार, उन्माद अं दुस्तर वातरोग इन का नाश करे ॥

कल्याणचूर्ण

पंचकोलं समरिचं त्रिफलाविडसैधवम् । कृष्णा विडंगपूतीक-
यवानीधान्यजीरकम् ॥ पीतमुष्णांबुना चूर्णं वातश्लेष्मामया-
पहम् । अपस्मारे तथोन्मादे दुर्नामग्रहणीगदे ॥ एतत्कल्याणकं
चूर्णं नष्टस्याग्रेश्च दीपनम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपलामूल, चवप, चित्रक की छाल, त्रिफला, विड निमक सैधा निमक, पीपल, वायविडंग, कंजा, अजमायन, धनिया और जीरा इन का चूर्ण गरम जल के साथ पीवे तो वातकफ का रोग, अपस्मार, उन्माद, बवासीर संग्रहणी इन को नाश करे और अग्निदीपक है इस को कल्याणचूर्ण कहते हैं ॥

लेप व दाग

गोमूत्रयुक्तैः सिद्धार्थैः प्रलेपोद्धर्तनं हितम् ।

धूमस्तीक्ष्णानि नस्यानि दाहः सूच्या कपोलयोः ॥

अर्थ—अपस्माररोगवाले के गोमूत्र में सपेद सरसों पीसके देह में लेप करे अथवा मालिस करे अथवा घूप, तीक्ष्णनस्य अथवा कपोल (गालों) के ऊपर सूई का दाग देना ये उपचार करने चाहिये ॥

द्वौ कीटमेपौ विधिवदानीय रविवासरे ।

कंठे भुजे वा संधार्य जयेदुग्रामपस्मृतिम् ॥

अर्थ—मेढा के बाल में से दो कीड़ों को रविवार के दिन ले उन को कंठ में अथवा भुजा में यंत्र में रखके बांधे तो वे अपस्मार रोग को जीतते हैं ॥

चंदनादि अवलेह

चंदनं तगरं कुष्ठं त्रिसुगंधी च वास्तुकम् । मंजिष्ठाभीरुमृद्धी-
कापाठाश्यामाप्रियंगुभिः ॥ स्वयंगुप्ता पीलुपर्णी विपरास्त्रा
गवादनी । कंकोली जीवकोमेदपुष्करं धनवालकम् ॥ शाल्मली
तस्य निर्यासस्तुगा कालीयकं तथा । तित्तिडीकं च वृक्षाम्लं
त्रिफला काश्मरीफलम् ॥ जातीफलं तु गोक्षीरी कृष्णागरु च
नागरम् । खर्जूरं च समांशानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ भा-
वितं बीजपूरस्य स्वरसेन च सप्तधा । समशर्करया युक्तमाटूर-
परसेन तु ॥ भावितं सप्तधा तच्च नात्र कार्या विचारणा । एष
लेहः सदा शस्तो ह्यपस्मारे सुदारुणे ॥ उन्मादे कामलारोगे पांडु-
रोगे हलीमके । रक्तपित्ते राजरोगे पित्तातीसारपीडिते ॥ रक्ता-
तिसारशोथे च शिरोरोगे सदाज्वरे । तमके स्तन्यरोगे च च्छर्दौ
दाहे मदात्यये ॥ अष्टादशसु मेहेषु कासे श्वासे सपीनसे ।
वालानां च हितं तच्च शृणु मात्रामतः परम् ॥ उत्तमा कर्ममात्रा
तु पादहीना तु मध्यमा । बलवीर्यकरी प्रोक्ता सद्यः सर्वगुणा
भवेत् ॥ नरकुंजरवाहानां चोपयुक्तो हितो मतः । चंदनाद्यो
महायोगः कृष्णात्रेयेण पूजितः ॥

अर्थ—चंदन, तगर, कूठ, दालचीनी, इलायची, पत्रज, बधुआ, मजीठ, सतावर, दास, पाठ, हरड, फूलप्रियंगु, कौच के बीज, मूर्वा, अतीस, रास्ना, इन्द्रायन, कंकोळ, जीवक, मेदा, पुहकरमूल, नागरमोथा, नेत्रवाला, सेमर का गाँद, मोचरस, वंशलो-

चन, दारुहलदी, तंतडीक, अमलवेत, त्रिफला, कंभारी का फल, जायफल, तवा-
खीर, काली अगर, साँठ और खजूर ये समान भाग लेवे सब का वारीक चूर्ण कर
विजोरे के रस की सात भावना देवे और अङ्गुसे के रस की सात भावना देवे परंतु
सब चूर्ण के समान मिश्री मिलायके भावना देवे। यह अवलेह दारुण अपस्मार रोग,
उन्माद, कामला, हलीमक, रक्तपित्त, राजरोग, पित्तातिसार, रक्तातिसार, शोथ, मस्त-
करोरोग, सदैव रहनेवाला ज्वर, तमक श्वास, स्त्री के दूध का विकार, छर्दि, दाह, मदा-
त्यय, अठारह प्रकार का कुष्ठरोग, प्रमेह, खांसी, श्वास, पीनस इन को दूर करे है।
यह बालकों को हितकारी है। इस की उत्तम मात्रा १० मासे की है ७॥ मासे की
मध्यम है यह मात्रा बल वीर्य करे तत्काल सर्वगुणदायक है। यह मनुष्य, हाथी,
घोडे इन सब को परमोपयोगी है। यह चंदनादि अचलेह कृष्णात्रिय महार्पि
करके पूजित है ॥

द्राक्षाद्यवलेह

द्राक्षादारुनिशायुतं समधुकं कृष्णा विशाला त्रिवृत्पृथ्वीका त्रि-
फला विडंगकटुकं श्रीचंदनं बालकम् । चातुर्जातकनिंबकां-
चनतुगातालीसपत्रं धनं मेदौ द्वौ सुरदारुकुष्ठकमलं धात्री
समंगा बला ॥ भाङ्गी कोलकदाडिमाम्लसहितं काश्मर्यशृंगा-
टकं काचाह्वामलघंटिकालघुतरा क्षुद्रा च रास्ना युतम् । चूर्णं
शर्करया समं मधु घृतं खजूरकैः संयुतं लिह्यात्कर्पमिदं समस्त-
बलवान् हन्यादपस्मारकम् ॥ उन्मादं च सुदारुणं क्षयमथो गुल्मं
सपांडुं तथा कासश्वासमसृक्प्रवाहमुदरं स्त्रीणां हितं शस्यते ॥

अर्थ—दास, दारुहलदी, मुलहटी, पीपल, इन्द्रायन, निसोय, इलायची, हरड,
बहेडा, आवला, पायविडंग, कुटकी, चंदन, नेत्रवाला, दालचीनी, पत्रज, इलायची,
नागकेशर, नीम की छाल, कचनार की छाल, वैशलोचन, तालीसपत्र, नागरमोया,
मेदा, महामेदा, देवदारु, कूठ, कमल, आवले, मजीठ, खिरेटी, भारंगी, बेर, अनार,
कंभारी, सिंघाडे, हलदी, कपूर, सन, बडा सन, कटेरी और रास्ना ये सब पदार्थ
समान भाग लेके चूर्ण करे और चूर्ण के समान मिश्री मिलावे तथा सहत, पी और
खजूर मिलायके अवलेह के समान करके धर रखे। इस में से १० मासे खाने को देवे
तो बलवान् अपस्मार, उन्माद, क्षय, गोला, पांडुरोग, खांसी, श्वास, प्रदर, उदर,
और प्रदररोग इन को दूर करे ॥

शास्त्रार्थ

पूर्वं युंज्यादपस्मारे बुद्धिमान् छर्दनादिकम् । वातिकं वस्तिभिः

प्रायः पौत्तिकीयं विरेचनैः ॥ कफजं वमनप्रायैरपस्मारमुपाचरेत् ॥

अर्थ—अपस्माररोग पर प्रथम बुद्धिमान् वैद्य को वमनादिक कर्म करवाव्य है. वातिक अपस्मार पर वस्तिकर्म करे. पौत्तिक अपस्मार में विरेचन देवे और कफ के अपस्मार में वमन प्रायः देना चाहिये ॥

पलंकपातैल

पलंकपावचापथ्यावृश्चिकाल्यर्कसर्पपैः । जटिला पूतना केशी
लांगली हिंगुरोचकैः ॥ लशुनातिरसश्चित्रः कुष्ठैरेभिश्च पक्षि-
णाम् । मांसाशिनां यथालाभं वस्तमूत्रे चतुर्गुणे ॥ सिद्ध-
मभ्यंजनं तैलमपस्मारविनाशनम् ॥

अर्थ—लास, वच, पथ्या, कौच, आक, सरसों, जटामांसी, सुगंध जटामांसी, कलियारी, हींग, संचरानिमक, लहसन, मूर्वा, चित्रक और कूठ इन का काटा वा कल्क करके तथा मांस खानेवाला पक्षियों का मांसरस और बकरी का मूत्र सब से चौगुना मिलाय उस में तेल डालके सिद्ध करे तो अपस्मार को नाश करे ॥

कटभ्यादितैल

कटभीनिंबकटुंगमधुशिशुत्वचारसे ।

सिद्धं मूत्रयुतं तैलमभ्यंगार्थं प्रशस्यते ॥

अर्थ—मालकांगनी, नीम की छाल, सहजना मीठा और दालचीनी इन के काटे तथा गोमूत्र इन में तेल डालके सिद्ध करे तो यह तेल अपस्मार रोगपर मालिस करने पर उत्तम है ॥

शिशुतैल

शिशुकुष्ठवचाजाजिलशुनव्योपहिंगुभिः ।

वस्तमूत्रे शृतं तैलं नावनं स्यादपस्मृतौ ॥

अर्थ—सहजना, कोष्ठ, वचा, जीरा, लहसन, त्रिकटु, (सोंठ, पिरच, पीपल,) हींग ये सब समभाग लेकर मेढे के मूत्र में डालकर उस में तेल औटावे इस तेल का नस्य करने से अपस्मार दूर होता है ॥

तैलप्रस्थं घृतप्रस्थं जीवनीयैः प्रलेपनैः ।

क्षीरद्रोणे पचेत्सिद्धमपस्मारविमोक्षणम् ॥

अर्थ—तेल अथवा घी ६४ तोले लेकर जीवनीय गणोक्त औषधों के साथ १०२५ तोले दूध में औटायके सिद्ध करे तो यह अपस्मार रोग को दूर करे ॥

अभ्यंगे सार्पपं तैलं वस्तमूत्रे चतुर्गुणे ।

सिद्धं स्याद्गोशकून्मूत्रे स्नानाच्छादनमेव च ॥

अर्थ—सरसों के तेल को बकरे के मूत्र में अथवा गौ के गोबर में अथवा गौमूत्र के साथ पचायके सिद्ध करे फिर इस की मालिस करे तो अपस्मार को नष्ट करे ॥

अपस्मार पथ्य.

लोहिताः शालयो मुद्गा गोधूमाः प्रतनं हविः । कूर्मामिपं धन्व-
रसो दुग्धं ब्राह्मीजलं वचा ॥ पटोलं वृद्धकूष्माण्डं वास्तुकं स्वादु
दाडिमम् । सौभाजनं पयःपेटी द्राक्षा धात्री परूपकम् ॥ अप-
स्मारे गदे नृणां पथ्यमेतदुदीरितम् ॥

अर्थ—छाल चावल, सूंग, गेहूं, पुराना घी, कछुए का मांस, घमरसे का जल, दूध, ब्राह्मी, खस, वेखंड, परवल, पुराना कुम्हडा, चाकवत, अनारदाना, शैवगो, पयःपेटी, दाख, आंवला और फालसा यह अपस्माररोग पर पथ्य कहा है ॥

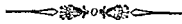
अपस्मार अपथ्य

चिंताशोकभयक्रोधमद्भुतं दर्शनानि च । मद्यमत्स्याविरुद्धान्नं
तीक्ष्णोष्णगुरुभोजनम् ॥ अतिव्यवायमायासं पूज्यपूजाव्याति-
क्रमम् । पत्रशाकानि सर्वाणि विंवीमापाढकं फलम् ॥ तृपानि-
द्राक्षुधावेगानपस्मारी नरस्त्यजेत् ॥

अर्थ—चिंता, शोक, भय, क्रोध, अद्भुत प्रकार की वस्तु का दर्शन, मद्यपान, मछली, विरुद्ध अन्न, तीखा, गरम, भारी भोजन, अत्यंत मैथुन, परिश्रम करना, गुरु ब्राह्मण माता पिता आदि पूज्यों की पूजा न करना और भूत भेतादि दुष्ट देवों का पूजन करना, सब पत्तों के साग, कंदूरी, आपाढ महिने में होनेवाले फल, सोने और धूप के वेग को रोकना ये सब अपस्मार (मृगी) रोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे अपस्माररोगस्य निदानं चिकित्सा समाप्ता ।

वातव्याधिकर्मविपाकः ।



देवानां ब्राह्मणानां वा धनापहरणात्तथा ।

स्वामिद्रोहाद्वातरोगी भवेदस्यापि निष्कृतिः ॥

अर्थ—जो प्राणी देवता, ब्राह्मण इन के धन को हरण (चोरी) करे अथवा देव, ब्राह्मण और अपने स्वामी से द्रोह (वैर) करे उस के इस पाप के प्रभाव से वातरोग होता है उस की भी निष्कृति इस प्रकार करे ॥

वातरोगहर

गुरुप्रत्यर्थितां यातो वातरोगी भवेन्नरः ।

नाममंत्रेण कुर्वीत जपं होमं च शान्तये ॥

अर्थ—ग्रंथांतर में लिखा है कि जो अपने गुरु से द्वेष (वैर) करता है वह वात-रोगी होय उस को उस वात रोग के शमन करने के वास्ते अच्युत, हरि, नारायण इत्यादि नाममंत्र का जप करे अथवा पढक्षरी, अष्टाक्षरी, द्वादशाक्षरी मंत्र से जप करे और होम करे ॥

धनुर्वातहर

अनिच्छन्त्यक्षतां यस्तु उपभुंक्ते परस्त्रियम् । बलादाक्रम्य स

नरः सर्वसंधिषु वेदनाम् ॥ तीत्रामाप्रोत्यरुचिमान्धनुर्वातयुतो

भवेत् । ज्वरी तदुपशान्त्यर्थं महिषीदानमाचरेत् ॥ कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ

कुर्वीत चांद्रायणमथापरम् । सूर्यनामजपं चैव शक्त्या ब्राह्मण-

तर्पणम् ॥ नामत्रयं जपेन्मर्त्यो रोगशान्त्यर्थमात्मनः । सहस्रना-

मकं चापि स्तोत्रं सम्यग्विधानतः ॥ अच्युतानंत गोविंदेत्ये-

तन्नामत्रयं द्विजः । अयुतत्रितयावृत्त्या जपेद्रोगस्य शान्तये ॥

अर्थ—बिना इच्छा करनेवाली स्त्री से जो बलात्कार मैथुन करे अथवा अज्ञाता योनि (जिस ने किसी से मैथुन न कराया हो) ऐसी परस्त्री से जो बलात्कार मैथुन करे उस के सर्व संधियों में घोर पीडा और अरुचि धनुर्वायु तथा ज्वर ये रोग होते हे. उस की शांति के अर्थ-महिषीदान, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र और चांद्रायण ग्रंथों का करना तथा सूर्यनारायण के नाम का जप, गायत्रीजप, ब्राह्मण भोजन कराना,



विष्णुसहस्रनाम का पाठ ये विधिपूर्वक करे तथा अच्युत, अनंत और गोविंद इन नामों को तीस हजार जपे तो यह प्राणी वादी के रोग से मुक्त होय ॥

पक्षवातहर

सभायां पक्षपाती च जायते पक्षघातवान् । निष्कत्रयमितं हेम
स दद्याच्च द्विजातये ॥ श्राद्धं च वैष्णवं कुर्यादात्मनो हितमि-
च्छता । सप्त धान्यानि दद्याच्च गोदानं तत्र कारयेत् ॥

अर्थ—जो प्राणी सभा में बैठकर पक्षपात करे, धर्म को न कहे वह पक्षाघातरोगी होता है. उस के दूर करने को तीन निष्क सुवर्ण वेदसंपन्न ब्राह्मण को दान करे. तथा विष्णुश्राद्ध तथा सप्त धान्य (सतनजा) और गौ दान करे ॥

रक्तवातहर

रक्तवह्निप्रवालानां हारी स्याद्रक्तवातवान् ।

सवस्त्रां मुहिर्षीं दद्यात्पद्मरागसमन्विताम् ॥

अर्थ—जो प्राणी लाल वस्त्र और मूंगा इत्यादिक चुराता है वह वातरक्तरोगी होय यह पद्मराग(पुखराज)के साथ वस्त्रसहित भैस का दान करे तो वातरक्तरोग दूर हो ॥

रक्तवातपित्तहर

सवर्णागमने वातरक्तवान् जायते नरः । सवर्णागमने वातपित्त-
वानपि जायते ॥ लक्ष्मीनारायणं रूपं सुवर्णेन प्रकल्पयेत् ।
पलेन वा तदर्धेन तदर्धेनाथ वा पुनः ॥ लक्ष्मीनारायणं रूपं
सर्वदा सर्वकामिकम् ॥

अर्थ—अपने जाति की परस्त्री से जो गमन करता है वह वातरक्त अथवा वात-पित्तरोगी होता है उस को चार तोले वा दो तोले अथवा एक तोले सुवर्ण की लक्ष्मी-नारायण की मूर्ति बनायके दान करे. तथा यह लक्ष्मीनारायण की मूर्ति सदैव और सर्वकामना के देनेवाली है ॥

वातपित्तहर

लशुनं गृजनं तालफलं वाश्नाति यो द्विजः ।

स वातपित्तरोगी च भवेच्चांद्रायणं चरेत् ॥

अर्थ—लहसन, गाजर, ताड़ के फल इन को जो ब्राह्मण खाता है वह वातपित्त-रोगी होता है वह चांद्रायण प्रायश्चित्त करे तो यह रोग दूर होय ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्रायेण वातव्याधिनिदान
अतिमारुतरोगार्तः परस्वहारी विलोलमतिचेष्टः ।
कर्कटसंस्थे भानौ स्वपुत्रदृष्टे पुमान् पिशुनः ॥

अर्थ—जन्मकाल में सूर्य कर्कराशि पर स्थित हो और शनिश्चर देखता होय तो वह प्राणी पिशुन (चुगल) अत्यंत वादी से पीडित पराये धन का चुरानेवाला और चंचल मतिवाला होता है ॥

वातपित्तोद्भवा पीडा हीनजैरुग्रविग्रहः ।

विदेशगमनं चापि सौरीमध्ये यदा शिखी ॥

अर्थ—जन्म के समय शनि की दशा में केतु का अंतर आता है तब इस प्राणी के वातपित्त के रोग, हीनजाति से लड़ाई, परदेश में डोलना इत्यादि फल होता है ॥

वायुरायुर्वलं वायुर्वायुर्धाता शरीरिणाम् । वायुर्विश्वमिदं सर्वं प्र-
भुर्वायुः प्रकीर्तितः ॥ अशीतिवातजा रोगा जायन्ते तत्प्रकोपतः ।
सामान्यं भेषजं तेषां स्नेहनं स्वेदनं तथा ॥ विशेषेण तु यद्द्र-
ष्टमुच्यतेऽत्र समासतः ॥

अर्थ—प्राणियों की वायु (पवन) आयु है वायु बल, आधार, पालन पोषणकर्ता सर्वविश्व का आत्मा तथा प्रभु (सामर्थ्यवान्) ऐसा है इसी वायु के कुपित होने से प्राणियों की देह में अस्ती प्रकार के वातरोग होते हैं उन की सामान्यचिकित्सा स्नेहन स्वेदन करना है. परंतु मैं ने जो विशेष देखा है उस को कहता हूँ ॥

वातव्याधिनिदान

रूक्षशीताल्पलध्वन्नव्यवायातिप्रजागरैः । विपमादुपचाराच्च दो-
पासृक्स्त्रवणादपि ॥ लंघनप्लवनात्यध्वव्यायामातिविचेष्टनैः ।
धातूनां संक्षयाच्चिन्ताशोकरोगार्तिकर्षणात् ॥ वेगसंधारणादा-
मादभिघाताद्भोजनात् । मर्मवाधाद्गजोद्ग्राश्वशीप्रयानादिसेव-
नात् ॥ देहे स्रोतांसि रिक्तानि पूरयित्वाऽनिच्छो बली । करोति
विविधान्व्याधीन्सर्वाङ्गैकाङ्गसंश्रयान् ॥

अर्थ—रूखा, शीतल, घोडा और हलका ऐसे अन्न खाने से, अति मैयुन खाने से, बहुत जागने से, विपम उपचार करने से दोष (कफ, पित्त, मल, मूत्र त्यादि) और रुधिर इन के निकलने से, अर्थात् वमन विरेचन से. लंघन, अर्थात्

अखाडे आदि में कला खेलने से, नदी आदि में तैरने से, बहुत चलने से, अति दंड, कसरत आदि श्रम के करने से, अत्यंत विरुद्ध चेष्टा करने से, रस रुधिर आदि धातुन के क्षय होने से, चिन्ता, शोक और रोगद्वारा कृश होने से मल मूत्रादिकों के वेग रोकने से, आगे से लकड़ी आदि की चोट लगने से, उपवास (व्रत) के करने से आदि छे सब मर्मस्थानों में के लगने से, हाथी, ऊंट, घोडा इत्यादि जल्दी चलनेवाली सवारीपर बैठने से, कोप को प्राप्त भई जो बलवान् वायु सो देह में खाली जो नस उन में प्राप्त हो सर्वांग अथवा एक अंग में व्याप्त होनेवाली ऐसी अनेक प्रकार की वातव्याधि उत्पन्न करे ॥

वायुका पूर्वरूप

अव्यक्तं लक्षणं तेषां पूर्वरूपमिति स्मृतम् ॥

अर्थ—उस वक्ष्यमाण वातव्याधि के जो प्रगट लक्षण उस को पूर्वरूप ऐसे कहते हैं ज्वरादिकों के सदृश विशिष्ट नहीं है और जो रूप प्रगट होय अर्थात् दोषादि भेदकरके यथार्थ दीखे उस को उस व्याधि का लक्षण जानना ॥

रूपकथन

आत्मरूपं तु तद्व्यक्तमपायो लघुता पुनः । संकोचः पर्वणां स्तंभो भंगोऽस्थ्यां पर्वणामपि ॥ लोमहर्षः प्रलापश्च पार्श्वपृष्ठशिरोग्रहः । खाज्यपांगुल्यकुब्जत्वं शोथोगानामनिद्रता ॥ गर्भशुक्ररजोनाशः स्यंदनं गात्रसुप्तता । शिरोनासाक्षिजत्रूणां ग्रीवायाश्चापि हुंडनम् ॥ भेदस्तोदातिराक्षेपो मोहश्चायास एव च । एवंविधानि रूपाणि करोति कुपितोनिलः ॥ हेतुस्थानविशेषाच्च भवेद्रोगविशेषकृत् ॥

अर्थ—अपानवायु को चंचल होने से स्तंभ संकोच कंपादिक का कदाचित् अभाव होय है और लघुता (शरीर की उस वायुकरके धातु शोषण करने से) अथवा अपायलघुता कहिये सब वातविकारों का अपाय कहिये अभाव होय और वातविकारों की लघुता कहिये अल्पत्वकरके जो स्थिति है सो निःशेष निवृत्ति नहीं होय. अब नानाप्रकार की व्याधि करे है ये जो कहि आये हैं उस को आगे के श्लोक में कहते हैं संधीन का संकोच और स्तंभ हड्डीन की और संधीन की फूटने की सी पीडा, रोमांच, बाह्यात् बकना, हाथ पैर और मुख इन का जकड जाना, खंजत्व, पांगुरा होना, कुबडापना, अंगों का सृजना, निद्रा का नाश, गर्भ का न रहना, शुक्र और रज (स्त्री का) वार्त्तव)

इन का नाश, कंप, अंगों में शून्यता, मस्तक, नाक, मुख, जत्रु और नाड इन का भीतर जाना, अथवा टेढे हो जाय, भेदसदृश पीडा, नोचने की सी पीडा, शूल, आक्षेपरोग जो आगे कहेंगे, मोह, श्रम, कुपित भई जो वायु या प्रकार लक्षण करे है, वह वायु हेतु और स्थान इन भेद से विशिष्ट रोग उत्पन्न करनेवाली होती है, जैसे कफाघृत होने से मन्यास्तंभ रोग करे यदि पकाशय में वात स्थित होय तो आंतों का गूंजना इत्यादि रोग करे है ॥

वातचिकित्सोपक्रम

अभ्यंगं स्वेदनं वस्तिर्नस्यं लेहो विरेचनम् । स्निग्धाम्ललवण-
स्वादुवृष्यं वातामयापहम् ॥ स्वाद्म्ललवणैः स्निग्धैराहारैर्वात-
रोगिणः । अभ्यंगस्नेहवस्त्याद्यैः सर्वानेवोपपादयेत् ॥ पित्ते सा-
वरणे वातरोगे शीतोष्णभेषजम् । कफसावरणे वायौ रूक्षोष्णं
भक्ष्यभेषजम् ॥ केवले पवनव्याधौ स्निग्धोष्णं भक्ष्यभेषजम् ।
स्निग्धोष्णरूक्षशीताद्यैर्वातजो यो न शाम्यति ॥ विकारास्तत्र
विज्ञेया दुष्टशोणितसंभवाः ॥

अर्थ—देह में तैलादिक लगाना, पसीने निकालना, वस्तिकर्म, नस्य, अवलेह, जुलाब कराना, यह तथा चिकने, खट्टे, खारी, और मिष्ट ये रस, वृष्यपदार्थ तथा वातनाशक पदार्थ, मीठे, खट्टे, खारी और स्निग्ध पदार्थों का भोजन तथा देह में तेल की मालिस, स्नेहन तथा वस्ति इत्यादिक उपचार करे और पित्तयुक्त वायु होय तो शीतोष्ण (मातदिल) औषध देवे. यदि वह वातकफाधिक होवे तो रूक्ष और गरम ऐसी औषध और आहार वैद्य देय केवल वातविकारपर स्निग्ध और उष्ण ऐसे अन्न और औषध देवे. जो वातव्याधि स्निग्ध, उष्ण, रूक्ष, शीतल इत्यादि उपचारों से शांति नहीं हो तो उस को वैद्य दुष्टरक्ताश्रित विकार जाने ॥

दूसरा प्रकार

मधुरलवणमम्लं स्निग्धमस्योष्णनिद्रागुरुरविकरवस्तिस्वेदसंत-
र्पणानि । दहनदलविशेषाभ्यंगसंमर्दनानि प्रकुपितपवमानं शांत-
मेतानि कुर्युः ॥

अर्थ—मिष्ट, लवण, खट्टे, स्निग्ध, उष्ण, निद्रा, घूप, वस्ति, पसीने, तर्पण, अग्नि, गरम जल, मालिस और अंगमर्दन ये उपचार कुपितवायुके शांत करने को करे ॥

तीसरा प्रकार

वातरोगस्त्वसाध्योयं देवयोगात्सुसिद्धयति ।

अनुमानेन कुर्वति वैद्यकं तत्प्रतिज्ञया ॥

अर्थ—वादी का रोग असाध्य है यह देवेच्छासे दूर होता है वैद्य इस का अनुमान (अंदाजन) से करते हैं कोई प्रतिज्ञापूर्वक औषधी नहीं देते ॥

कोष्ठगत वातलक्षण

वाते कोष्ठाश्रिते दुष्टे निग्रहो मूत्रवर्चसोः ।

वर्ध्महृद्गोगुल्मार्शःपार्श्वशूलं च मारुते ॥

अर्थ—कोठे में स्थित वायु दुष्ट होने से मलमूत्र का अवरोध होय. बदरोग, हृदय-रोग, गोला, बवासीर और पसवाडों में पीडा इतने रोग उत्पन्न करे ॥

कोष्ठलक्षण

स्थानान्यामाग्निपक्वानां मूत्रस्य रुधिरस्य च ।

हृदुंदुकः फुफ्फुसश्च कोष्ठ इत्यभिधीयते ॥

अर्थ—आमाशय, पकाशय, अत्रयाशय, मूत्राशय, रुधिराशय, हृदय, उदुक (पेट) और फुफ्फुस इन को कोष्ठ ऐसी संज्ञा है ॥

आमाशयोक्त

अत्र द्वितीयं दिनमारभ्य पञ्चदिनपर्यन्तमाशाशयोक्तपट्चरण-
योगो देयः ॥

अर्थ—दूसरे दिन से लेकर इस ज्याघिपर आपाशयोक्त पट्चरणयोग देना चाहिये ॥

कोष्ठवातचिकित्साक्रम

विशेषतस्तु कोष्ठस्य वाते क्षीरं पिबेन्नरः । व्योपसौवर्चलाजा-
जीपथ्यालवणपंचकम् ॥ सारिवा बृहती पाठा कलिंगाग्रियवा-
ग्रजम् । चूर्णीकृतं दधिसुरातन्मंडोष्णांबुकांजिकैः ॥ पिबे-
दग्निविवृद्धयर्थं कोष्ठवातहरं परम् ॥

अर्थ—कोष्ठगत वातविकार के होने से विशेषता करके दूध पिलावे और सोंठ, मिरच, पीपल, संचरनिमक, जीरा, हरड, निमक, सुहागा, सैधानिमक, बिडनोन, संचरनोन, सारिवा, कटेरी, पाठ, इन्द्रजो, चित्रक और जवाखार इन का चूर्ण दही, मद्य, दहीका

पट्चरणयोग

चित्रकेंद्रयवा पाठा कटुकातिविषाभया ।

महाव्याधिप्रशमनो योगः पट्चरणः स्मृतः ॥

अर्थ—चित्रक की छाल, इन्द्रजो, पाठ, कुटकी, अतीस और हरड यह पट्चरण योग महान् व्याधि को शमन करे है ॥

तीन काढे

भूतीकपथ्याशठिपुष्कराणि विल्वामृतादारुकनागराणि ।

उग्रा विषा मागधिका विडानि काथास्त्रयः सामसमीरणघ्नाः ॥

अर्थ—अजमायन, हरड, कचूर और पुहकरमूल इन का अथवा बेलगिरी, गिलोय, देवदारु और सोंठ इन का अथवा वच, अतीस, पीपल और विडनोन इन का काढा देवे. ये तीन काढे आमवातनाशक हैं ॥

प्रातः पिवेदुण्णजलेन यत्नाच्छिन्नामरीचं हृदयानिलघ्नम् ।

गुडेन वा नागरदारुचूर्णं हृद्घातपीडापरिपीडितस्तु ॥

अर्थ—गिलोय और काली मिरच इन के चूर्ण को प्रातःकाल गरम-जल के संग पीवे अथवा सोंठ, देवदारु इन का चूर्ण गुड के साथ खाय तो हृदय वायु की पीडा को नाश करे ॥

पक्काशयवायु

पक्काशयस्थोऽत्रकूजं शूलाटोपौ करोति च ।

मूत्रकृच्छ्रपुरीपत्वंमानाहं त्रिकवेदनाम् ॥

अर्थ—वायु पक्काशय में होय तो आंतों का गूजना, शूल, आटोप (गुडगुडाशब्द) मलमूत्र कष्ट से निकले, अफरा, त्रिकस्थान में पीडा इन लक्षणों को करे ॥

चिकित्सा

वह्नेः संवर्धनं कार्यं कर्मोदावर्तिकं तथा ।

देयः स्नेहविरेश्च पक्काशयगतेनिले ॥

अर्थ—पक्काशयगत वायु के कुपित होने से अग्नि को प्रदीप्त करके उदावर्तरोगपर जो उपचार कहे हैं वे करने चाहिये तथा स्निग्ध विरेचन देवे ॥

वाते जठरगे दद्यात्क्षारचूर्णादिदीपनम् ।

शुंठीकुटजबीजाग्निचूर्णं कोष्णांबु कुक्षिगे ॥

अर्थ—उदर का वायु कुपित होने से क्षार चूर्णादिक दीपन औषध देवे तथा कुक्षि-
गत वादी के कुपित होने से सौंठ, इन्द्रजो और चित्रक इन के चूर्ण को गरम जल
के साथ पीवे ॥

पक्काशयगते वाते हितं स्नेहैर्विरेचनम् ।

वस्तयः शोधनीयाश्च प्राश्याश्च लवणोत्तराः ॥

अर्थ—पक्काशयगत वादी के कुपित होने से स्निग्ध, विरेचन, शोधन करनेवाले,
स्ती और लवणयुक्त प्राश्यसंज्ञक औषध देवे ॥

हृदयवात

हृदयानिलनाशाय गुडूचीं मरिचान्विताम् ।

पिवेत्प्रातः प्रयत्नेन सुखतप्तांभसा सह ॥

अर्थ—हृदय की वादी दूर करने को गिलोय, काली मिरच इन के चूर्ण को गरम
जल के साथ प्रातःकाल पीवे तो पीडा दूर हो ॥

पिवेदुष्णांभसा पिष्टं साश्वगंधं त्रिभीतकम् ।

गुडयुक्तं प्रयत्नेन हृदयानिलनाशनम् ॥

अर्थ—असगंध, बहेडा और गुड इन को गरम जल में पीसके पीवे तो हृदय में
रहनेवाले दुष्ट वायु नष्ट होवे ॥

देवदारुसमायुक्तं नागरं परिपेपितम् ।

हृद्वातवेदनायुक्तः पीत्वा सुखमवाप्नुयात् ॥

अर्थ—देवदारु और सौंठ इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो हृदय में
रहनेवाले दुष्ट वायु की पीडा दूर होकर सुख पावे ॥

सर्वांगवातलक्षण

सर्वांगपवने क्रुद्धे गात्रस्फुरणभंजनम् ।

वेदनाभिः परीतस्य स्फुटंतीवास्य संघयः ॥

अर्थ—सब अंग की वायु कुपित होने से अंगों का फरकना, जंभाई और संघि
वेदनायुक्त हो, फूटने की सी पीडा होय ॥

चिकित्सा

सर्वांगगतमेकांगगतं वास्य समीरणम् ।

तेलावगाहनं हन्ति तोयवेगमिवाचलः ॥

अर्थ—दुष्ट वात सर्वांग में होय अथवा एकांग में होय उसपर देह में तेल की मालिस करायके गरम जल से स्नान करे तो सर्वांग तथा एकांगवादी दूर हो. जैसे पर्वत जल के वेग को रोक देता है ॥

अवशिष्टवात

प्रलापे भीरुतापे च प्रसुप्तौ चित्तवैकृते ।

स्वेदनाशे बलक्षैण्ये कौशिकः सघृतो हितः ॥

अर्थ—प्रलाप (बकवाद), भीरु (डरना), ताप (ज्वर), प्रसुप्ति (सो जाना), चित्त की विकृति, स्वेदनाश तथा बलक्षीणता इन रोगोंपर घृतयुक्त शुद्ध गूगल का सेवन करना हितकारी है ॥

शब्दाज्ञतामये चापि लेहः कल्याणको हितः । शीततां रोम-
हर्षं च शिरापूरणमेव च ॥ कटुतिक्तैर्जयेद्वैद्यः स्नेहस्वेदनमर्दनैः ॥

अर्थ—शब्द को न जानना इस रोगपर पूर्वोक्त कल्याणावलेह हितकारी है और शीत का लगना, रोमहर्ष, शिरापूरण इनपर कटु (चरपरा), तिक्त, (कडुआ) ऐसे स्नेह और स्वेदन इत्यादि औषधी तथा मर्दन ये उपचार करे ॥

वाताप्रवृत्तिरुद्गारमंत्रकूजनमेव च ।

निरूहवस्तिनाथांगकाठिन्यं स्नेहगाहनात् ॥

अर्थ—अधोवायु का न निकालना, डकारों का आना और आंतों का बोलना इनपर निरूहवस्ति देवे. तथा शरीर की कठिनता स्निग्धपदार्थों से स्नान करके दूर करे ॥

कुरंटकादिकाढा

सहचरामरदारु सनागरं कथितमंभसि तैलविमिश्रितम् ।

पवनपीडितदेहगतिः पिवन् द्रुतविलंबितगो भवतीच्छया ॥

अर्थ—पियावांसा, देवदारु और सांठ इन के काठे में अंडी का तेल मिलायके पीवे तो जिस का देह वादी से जकड गया हो वह तत्काल सुख जावे और शीघ्र अथवा मंद जैसी इच्छा हो ऐसा चलने लगे ॥

महाराज्ञादिकाढा

रास्त्रैरंडामृतोग्रासहचरचविकारामसेनाव्दभार्ङ्गीदीप्यानंतायवा-
नीवृक्सुरकूमिजिच्छृंगिशुंठीबलाभिः । मूर्वात्तिकासमंगाद्विवि-
पशठिवरापिप्पलीयावंशुकै रक्तथ्रीखंडकारग्वधकटुकफलैर्धत्स-

वृश्चीकयुक्तैः ॥ सर्वैरेतैर्दशाग्निप्रयुतसमलवैः साधितोष्ठावशेषः
 काथो रास्नादिरादौ महदुपपदवान्कौशिकोक्तो निहन्ति । सर्वा-
 गैकांगवातान् श्वसनकसनहृत्स्वेदशैत्यातितन्द्राशूलं तूर्नीं प्रतूर्नीं
 गलगदनिखिलांगव्यथाकंपखल्लीः ॥ विश्वाचीश्लीपदामानिलनि-
 खिलमहासूतिकारोहसुतिर्जिह्वास्तंभापतानं स्फुटनविमथनः
 क्लीबताक्षेपकौब्जम् । शोभाटोपापतंत्रार्दितखुडनहनुगृध्रसीपाद-
 शूलं वायुं श्लेष्मोत्थरोगानपि गिरितनयावल्लभेनोपदिष्टः ॥

अर्थ-रास्ना, अंड की जड़, गिलोय, वच, पीयावांसा, चव्य, कौच के बीज, नागरमोथा, भारंगी, किरमानी अजमायन, धमासा, अजमायन, पाद, देवदारु, वायविडंग, काकडासिंगी, सोंठ, खिरेटी, मूर्वा, कुटकी, मजीठ, काली और सपेद अतीस, कचूर, हरड, बहेडा, आवला, पीपल, जवाखार, लाल चंदन, अमलतास का गूदा, कायफल, इन्द्रजो, लालघंटाळी और दशमूल ये सब समान भाग ले जल में डालके अष्टमांश काढा करे यह महारास्नादि काथ कौशिकऋषि ने कहा है यह सर्वांगवात, एकांगवात, श्वास, खाँसी, पसीना, शीत का छगना, अतितन्द्रा, शूल, तूर्नी, प्रतूर्नी, गले का रोग, सर्वांग की पीडा, कंपवात, खल्लीवात, विश्वाची, श्लीपद, आमवात संपूर्ण प्रसूत के रोग, सुतिवात, जिह्वास्तंभ, अपतान वायु, हडफूटन, मयने की सी पीडा, क्लीबवात, आक्षेपक, कुब्जवात, सूजन, आटोप, अपतंत्र, अर्दित, खुडवात, हनुग्रह, गृध्रसी, पादशूल और वातश्लेष्मव्याधि इन को नाश करे इस प्रकार श्रीशिव ने कहा है ॥

दूसरा प्रकार

रास्ना द्विगुणभागा स्यादेकभागास्तथापरे । धन्वयासवलैरंडदे-
 वदारुशठी वचा ॥ वालको नागरं पथ्या चव्यमुस्ता पुनर्नवा ।
 गुडूची वृद्धदारुश्च शतपुष्पा च गोक्षुरः ॥ अश्वगंधा प्रतिविपा
 कृतमालः शतावरी । कृष्णा सहचरश्चैव धान्याकं बृहतीद्रियम् ॥
 एभिः कृतं पिवेत्काथं शुंठीचूर्णेन संयुतम् । कृष्णाचूर्णेन वा
 योगराजगुग्गुलुनाथवा ॥ अजमोदादिना वापि तैलेनैरंडजेन
 वा । सर्वांगकंपे कुब्जत्वे पक्षाघातेववाहुके ॥ गृध्रस्यामामवाते
 च श्लीपदे चापतानके । अंत्रवृद्धौ तथाध्माने जंघाजानुगदे-

दिते ॥ शुक्रामये मेदूवाते वंध्यायोन्यामयेषु च । महारास्नादिरा-
ख्यातो ब्रह्मणा गर्भधारणे ॥

अर्थ—रास्ना २ भाग, धमास्ता १ भाग, खिरेटी, अंड की जड़, देवदारु, कचूर, वच, अडूसा, सोंठ, हरड, चव्य, नागरमोया, पुनर्नवा, गिलोय, विधायरा, सोंफ, गोखरू, असगंध, अतीस, अमलतास, सतावर, पीपल, पियावासा, धनिया, कटेरी और बडी कटेरी ये सब समानभाग लेवे अर्थात् एक २ भाग लेवे. सब कूटकरके काढा करे जब अष्टमांश रहे तब उतारके छान ले फिर इस में सोंठ का अथवा पीपल का चूर्ण अथवा योगराज गूगल, अजमोदादि चूर्ण, किंवा अंड का तेल डालके पीवे तो सर्वांगकंप, कुब्जवात, पक्षाघात. अवचाहुक, गृध्रसी, आमवात, क्षीपद, अपतानवायु, अंत्रवृद्धि, अफरा, जंघा की वादी, जानु की वादी, अर्दित (लकवा), शुक्रदोष, मेदूवात, वंध्या के योनिरोग इनपर यह महारास्नादि काढा कहा है, यह गर्भधारक है इस प्रकार ब्रह्मदेव ने कहा है ॥

महाबलादिकाढा

महाबलामूलमहौपधाभ्यां काथं पिबेन्मिश्रितपिप्पलीकम् ।

शीतं सकंपं परिदाहयुक्तं विनाशयेत् द्वित्रिदिनप्रयुक्तः ॥

अर्थ—कगही की जड़ और सोंठ इन के काढे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे तो शीतवात, कंपवात और दाह ये दो तीन दिन में नष्ट हो जावें ॥

पंचमूलादियोग

पंचमूलीकृतः काथो दशमूलीकृतोथ वा ।

रूक्षस्वेदस्तथा नस्यं मन्यास्तंभे प्रशस्यते ॥

अर्थ—पंचमूल का काढा अथवा दशमूल का काढा, रूक्ष, स्वेद तथा नस्य ये मान (गरदन) के जकड़ जानेपर यत्र करे ॥

वाजिगंधादि काढा

वाजिगंधाबलास्तिस्रो दशमूली महौपधम् ।

गृध्रनख्यौ च रास्ना च गणो मारुतनाशनः ॥

अर्थ—असगंध, खिरेटी, कंगही, गगेरन, दशमूल, सोंठ, गृध्रनखी, छोटा बेर, रास्ना इन का काढा वादी को नाश करनेवाला है ॥

समीरदावानल

भ्रूतकानां शकलानि कृत्वा त्रिकोलमानं परिगृह्य वैद्यः ।
चतुःपलं तोयसमन्वितोयं काथो चतुर्थांशमितं प्रगृह्य ॥ सिता
हविर्गोपयमिश्रितं च कोलं पलार्धं पलमेकयुक्तम् । क्रमेण पीतो
खलु हन्ति वातान् समीरदावानलनामधेयः ॥

अर्थ—भिलाए के टुकड़े १॥ तोला और जल ४ तोले इन का काढा चतुर्थांश
रहनेपर उतार ले. इस काढे में मिश्री छः मासे, घी २ तोले, गी का दूध ४ तोले
डालके फिर औटावे फिर इस में पंचकोल का चूर्ण डालके पीवे तो सर्वथात नाश
करे. इस को समीरदावानल अवलेह कहते हैं ॥

गुदस्थितवायुकार्य

ग्रहो विष्णुमूत्रवातानां शूलाध्मानाश्मशर्कराः ।

जंघोरुत्रिकहृत्पृष्ठरोगशोफो गुदे स्थिते ॥

अर्थ—वायु गुदा में स्थित होने से मल मूत्र और वायु का रुकना, शूल, अफरा,
पथरी, जंघा ऊरु त्रिकस्थान हृदय पीठ इन में पीडा और सूजन ये रोग होते हैं ॥

चिकित्सा

वाते गुदाश्रिते दुष्टे कर्मोदावर्तिकं हितम् ॥

अर्थ—गुदाश्रित वादी के दुष्ट होनेपर जो उदावर्तरोग में चिकित्सा कही है वह
चिकित्सा करे ॥

चिकित्सा

दशमूलीकपायेण मातुलंगरसेन वा ।

पिबेदैरंडतैलं वा वस्तिकुक्षिगुदे श्रिते ॥

अर्थ—दशमूल के काढे से अथवा बिजोरे के रस के साथ अंडी का तेल पीवे
तो वस्ति, कोख और गुदा की दूषित पवन को नष्ट करे ॥

श्रोत्रादिगतलक्षण

श्रोत्रादिष्विन्द्रियवधं कुर्यात्क्रुद्धः समीरणः ॥

अर्थ—कर्णादिक इन्द्रियों में क्रुद्ध हुई वायु इन्द्रियों का नाश करे ॥

चिकित्सा

श्रोत्रादिष्वनिले दुष्टे कार्यों वातहरः क्रमः ।

स्नेहाभ्यंगोपनाहश्च मर्दनालेपनानि च ॥

अर्थ—कर्णादिक इन्द्रियों में दुष्ट हुई वायुपर वातनाशक उपचार करे जैसे, स्नेह-पान, अभ्यंग, उपनाह, मर्दन और छेप इत्यादिक जानो ॥

जृम्भा (जंभाई)

पीत्वैकं श्वासमालिनः पुनस्त्यजति-वेगवान् ।

आलस्यनिद्रायुक्तश्च स जृम्भ इति कथ्यते ॥

अर्थ—एकदफे श्वास लेके वह शांत हुआ न हुआ इतने में दूसरा श्वास आ जावे तिस से रोका हुआसा छोड़ देवे और आलस्य, निद्रा इन से युक्त हो उस को जृम्भा कहते हैं ॥

चिकित्सा

शुंठी पिप्पल्यूषणं दीप्यकश्च सिंधूद्रूतं चेति सर्वं पृथग्वा ।

तद्रूपं वा सूक्ष्मचूर्णीकृतं वा जृम्भाभंगस्तत्कृतस्यात्तदेव ॥

अर्थ—सोंठ, पीपल, मिरच, अजमायन, सैंधानिमक ये सब अथवा एक २ का चूर्ण कर सब का सेवन करे तो तत्काल जंभा (जंभाई) के वेग को नाश करे ॥

जृम्भावेगे समुत्पन्ने शोभने शयने नरम् ।

स्वापयेत्तेन नियमाज्जृम्भावेगः प्रशाम्यति ॥

अर्थ—जंभा वेग के उत्पन्न होनेपर उस प्राणी को उत्तम शय्यापर सुलावे तो निश्चय करके जंभाई का वेग शांत होवे ॥

जृम्भाचिकित्सा

जृम्भावेगः क्षयं याति कटुतैलेन मर्दनात् ।

भोजनात्स्वादुभोज्यानां तथा तांबूलभक्षणात् ॥

अर्थ—सरसों के तेल की देह में मालिस करने से जंभाइयों का आना दूर होवे-अथवा खादु पदार्थों के भोजन से अथवा तांबूल (पान की बीड़ी) खाने से जंभाई दूर हो ॥

प्रलापक

स्वहेतुकुपिताद्वातादसंबद्धं निरर्थकम् ।

वचनं यत्रो ब्रूते स प्रलापः प्रकीर्तितः ॥

अर्थ—अपने हेतुन से कुपित भई जो वात तिस से असंबद्ध (अर्थरहित) वाणी बोले, अर्थात् बकवाद करे अथवा बडबड शब्द करे उस को प्रलाप कहते हैं ॥

चिकित्सा

सतगरवरतिका रेवतांभोदतिका नलदतुरगगंधा भारती हार-
- हूराः । मलयजदशमूलशंखपुष्प्यः सुपक्वाः प्रलपनमतिहन्युः
पानतो नातिदूरात् ॥

अर्थ—तगर, पित्तपापडा, अमलतास, नागरमोया, कुटकी, नेत्रवाला, असगंध, ब्राह्मी, दाख काली, चंदन, दशमूल और शंखाहुली इन का काढा लेय तो तत्काल प्रलापक का नाश करे ॥

रसाज्ञाननिदान

भुंजानस्य नरस्यान्नं मधुरप्रभृतीत्रसान् ।

रसना यन्न जानाति रसाज्ञानं तदुच्यते ॥

अर्थ—जो मनुष्य भोजन करे उस की जीभ को मधुर (मीठा) खटा इत्यादिक रसों का ज्ञान न होय उस रोग को रसाज्ञान कहते हैं ॥

चिकित्सा

घर्षेजिह्वां जडां सिंधुयूपणेः साम्लवेतसैः । आम्लवेतसका-
भावे चुक्रं दातव्यमीरितम् ॥ किराततित्तकः कट्टी कुटकस्य
फलं त्वचा । ब्राह्मी फलं च पालाशं राजिकां कृष्णजीरकम् ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रं नागरमूपणम् । एषां कल्कैर्मुहुर्घ-
र्षेजिह्विकामार्द्रिकारसैः ॥ तेन सम्यग्विजानाति रसना सक-
लान् रसान् ॥

अर्थ—जीभ के जकड़ने पर सेंधा निमक, त्रिकुटा और अमलवेत इन के चूर्ण से जीभ को रगड़े, यदि अमलवेत न मिले तो चूका लेवे. अथवा कहुआ चिरापता, कुटकी, इन्द्रजो, कुडा की छाल, ब्राह्मी, पलासपापडा, राई, काळा जीरा, पीपळ, पीपरामूल, चित्रक, सोंठ और काली मिरच इन के चूर्ण से अथवा कही हुई औषधों का अदरख के रस में कल्क करके उस से बारंबार जीभ को पिसे. तो जिह्वा सब रसों को जानने लगे ॥

किरातादिकल्क

कल्कः किराततित्तादिर्जिह्वायाः शून्यतां हरेत् ॥

अर्थ—किराततित्तादि कल्क जो पिछाड़ी कह आए हैं वह जिह्वा की शून्यता को हरण करे है ॥

त्वक्शून्यतानिदान

स्पृश्यमाना त्वचा या तु शीतोष्णं मृदु कर्कशम् ।

न जानाति बुधैस्त्वक्सा शून्येति परिकीर्त्यते ॥

अर्थ—त्वचा को स्पर्श करने से शीत, गरम, मृदु और कठीण इन का ज्ञान नहीं होता, इस को त्वक्शून्यता कहते हैं ॥

चिकित्सा

सुप्तवाते त्वसृङ्मोक्षं कारयेद्बहुशो भिषक् ।

दिह्याच्च लवणागारधूमैस्तैलसमन्वितैः ॥

अर्थ—सुप्त वातपर वारंवार रुधिर को निकलवावे और संधानिमक, धर का धुंआ और तेल इन को मिलायके लेप करे ॥

रसगतवायु के लक्षण

त्वग्रूक्षा स्फुटिता सुप्ता कृशा कृष्णा च तुद्यते ।

आतन्यते सरागा च मर्मरूक्त्वगतेऽनिले ॥

अर्थ—वायु त्वग्गत अर्थात् घातुरूप त्वचा में प्राप्त होने से त्वचा रूखी और फटी, शून्य, पतली और काली हो जाय और उस में चमका चले, तथा तन जाय, कुछ ताँबे के समान लाल रंग हो जाय और हृदयादि मर्मों में पीडा होय ॥

रक्तगतवायु के लक्षण

रुजस्तीव्राः ससंतापा वैवर्ण्यं कृशतारुचिः ।

गात्रे चारूंपि भुक्तस्य स्तंभश्चासृग्गतेऽनिले ॥

अर्थ—वायु रुधिरमिश्रित होने से सन्तापयुक्त तीव्र वेदना होय, देह का विवर्ण होय, कृशता, अरुचि और देह में फोडा तथा भोजन करने के उपरांत देह का जकड़ जाना ये लक्षण है ॥

मांसगत वायु

गुर्वगं तुद्यते स्तब्धं दंडमुष्टिहतं यथा ।

सरूक् स्तिमितमत्यर्थं मांसमेदोगतेऽनिले ॥

अर्थ—मांस और मेद में वायु के पहुँचने से अंग भारी हो जाय, चोटने के समान पीडा होय, अथवा निश्चल हो जाय, अथवा मुझा मारने की सी तथा लकड़ी मारने की सी पीडा होय ॥

मेदाश्रित वातलक्षण

तथा मेदाश्रितः कुर्याद्ग्रंथीन् मंदरुजो व्रणान् ॥

—अर्थ—वायु मेदगत हुआ हो तो अंगपर गांठ अथवा अल्प दुःख देनेवाले घ्रणों को उत्पन्न करे है ॥

अस्थिवातलक्षण

मेदोऽस्थिपर्वणां सन्धिशूलं मांसवलक्षयः ।

अस्वप्नं संततारुक् च मज्जास्थिकुपितेऽनिले ॥

अर्थ—मज्जा और हड्डी इन ठिकानेपर वायु कोप होने से हडफूटनी हो, संधि-धि में पीडा होय मांस और बल ये क्षीण हो जाय, निद्रा आवे नहीं और अन्तर पीडा होय, इस जगह सुश्रुत ने कुछ विशेष लिखा है ॥

मज्जागत वातलक्षण

वाते मज्जागते पीडा न कदाचित्प्रशाम्यति ॥

अर्थ—दुष्ट वात मज्जाश्रित हुआ हो तो अंग की वेदना कभी भी शांत नहीं होती है ॥

शुक्रगत वातलक्षण

क्षिप्रं मुंचति वध्नाति शुक्रं गर्भमथापि वा ।

विकृतिं जनयेच्चापि शुक्रस्थः कुपितोऽनिलः ॥

अर्थ—शुक्रस्थान की वायु का कोप होने से वह शुक्र को जल्दी पतन करे और बंधन करे, अथवा गर्भ को जलदी छोड़े और बंधन करे और गर्भ का अथवा शुक्र का विकार प्रगट करे ॥

सप्तधातुगत वातचिकित्सा

वायौ त्वगाश्रिते स्नेहोभ्यंगः स्वेदश्च कारयेत् ।

रक्तस्थे शीतलाल्लेपान्चिरेकं रक्तमोक्षणम् ॥

अर्थ—त्वचागत वायु के दुष्ट होने से, स्नेहपान, अभ्यंग और पसीने निकालना. ये पचार करे रक्तगतवातपर शीतल लेप, विरेचन और रक्तमोक्ष ये उपचार करे ॥

मांसमेदोगत

मांसमेदोगते वाते सविरेकं निरूहणम् ॥

अर्थ—मांसगत और मेदोगत वायु कुपित होने से विरेक, निरूह्यस्ति ये पचार करे ॥

अस्थिमज्जागत

अस्थिमज्जागते स्नेहं वहिरंतश्च योजयेत् ॥

अर्थ—अस्थिगत तथा मज्जागत वायु कुपित होने से स्नेहपान तथा स्नेहमर्दन ये उपचार करने चाहिये ॥

केतकादि तैल

केतकनागबलातिवलानां यद्बहुलेन रसेन विपक्वम् ।

तैलमनल्पतुषोदकसिद्धं मारुतमस्थिगतं विनिहंति ॥

अर्थ—केतकी, खिरेटी और गगेरन इन का पुष्कल रस और तुसों का पुष्कल (बहुतसा) जल में तेल डालके सिद्ध करे यह तेल अस्थिगत वायु का नाश करे ॥

शुक्रगत

हर्षोन्नपानं शुक्रस्थे बलशुक्रकरं हितम् ॥

अर्थ—शुक्रगत वायु कुपित होने से हर्षोत्पादन और बल तथा धातु इन के बढानेवाले ऐसे अन्न और पान देवे तो हितकारी होय ॥

शिरागतवायु

कुर्याच्छिरागतः शूलं शिराकुंचनपूरणम् ।

स बाह्याभ्यंतरायामं खल्लीं कुब्जत्वमेव च ॥

अर्थ—वायु शिरा (नाडी) गत होने से शूल, नाडी का संकोच और स्थूलत्व करे और बाह्यापाम आभ्यंतरायाम, खल्ली और कुबडापना इन रोगों को उत्पन्न करे ॥

चिकित्सा

स्नेहाभ्यंगोपनाहांश्च मर्दनालेपनानि च ।

वाते शिरागते कुर्यात्तथा चासृग्विमोक्षणम् ॥

अर्थ—शिरागत वायु पर स्नेहपान, अंग में तेल की मालिस, उपनाह, मर्दन, लेप और रुधिर निकालना ये उपचार करे ॥

स्नायुगत वातलक्षण

शूलमाक्षेपकः कंपः स्तंभः स्नाय्वनिले भवेत् ॥

अर्थ—स्नायुगत वात में शूल, वातरोग, कंप और स्तंभ यह लक्षण होते हैं ॥

सर्वांगैर्कांगरोगांश्च कुर्यात्स्नायुगतो निलः ॥

अर्थ—वायु स्नायुगत होने से सर्वांग और एकांग रोगों को करे ॥

चिकित्सा

स्वेदोपनाहाग्निकर्मबंधनोन्मर्दनानि च ।

क्रुद्धे स्नायुगते वाते कारयेत्कुशलो भिपक् ॥

अर्थ—स्नायुगत वायुपर पसीने निकालना, उपनाह, दाग देना, बांधना, मर्दन करना ये संपूर्ण उपचार करे ॥

संधिगतवातनिदान

हंति संधिगतः संधीन् शूलशोथौ करोति च ॥

अर्थ—संधिगत होने से संधि का विश्लेष (जुदा जुदा होना) और संधि का जकड़ जाना तथा शूल और सूजन इन रोगों को प्रगट करे ॥

सामान्यचिकित्सा

कुर्यात्संधिगते वाते दाहस्वेदोपनाहनम् ॥

अर्थ—संधिगत वादीपर दागना, पसीने निकालना तथा उपनाहन कर्म करना चाहिये ॥

इंद्रवारुणिचूर्ण

इंद्रवारुणिकामूलं मागधीगुडसंयुतम् ।

भक्षयेत्कर्पमात्रं तत्संधिवातं व्यपोहति ॥

अर्थ—इन्द्रायन की जड़, पीपल औ गुड इन को एकत्र कर इस में से एक तोले भर सेवन करे तो संधिवात को नष्ट करे ॥

पित्तकफाश्रित प्राण

प्राणे पित्तावृते छर्दिर्दाहश्चैवोपजायते ।

दौर्बल्यं सदनं तंद्रा वैरस्यं कफकावृते ॥

अर्थ—प्राणवायु पित्तसंयुक्त होने से धमन और दाह उत्पन्न हो और कफसंयुक्त होने से दुर्बलपना, ग्लानि, तंद्रा और मुख में विरसता ये होंग ॥

पित्तकफाश्रित उदान

उदाने पित्तयुक्ते तु दाहो मूर्छा भ्रमः क्रमः ।

अस्वेदहर्षो मंदाग्निः शीतता च कफावृते ॥

अर्थ—उदानवायु पित्तयुक्त होने से दाह, मूर्च्छा, भ्रम, अनायास, भ्रम ये होंग और कफयुक्त होय तो पसीना नहीं आवे, रोमांच, अग्नि मंद होय और शीत लगे ॥

पित्तकफाश्रित समान

स्वेददाहौष्ण्यमूर्च्छाः स्युः समाने पित्तसंयुते ।

कफेन संगो विण्मूत्रे गात्रहर्षश्च जायते ॥

अर्थ—समानवायु पित्तयुक्त होने से पसीना, दाह, गरमी और मूर्च्छा ये होते हैं। पित्तकफयुक्त होने से मलमूत्र का रुकना और रोमांच होय ॥

पित्तकफाश्रित अपान

अपाने पित्तयुक्ते तु दाहौष्ण्यं रक्तमूत्रता ।

अधःकाये गुरुत्वं च शीतता च कफावृते ॥

अर्थ—अपानवायु पित्तयुक्त होने से दाह, उष्णता और लाल मूत्र होय तथा कफयुक्त होने से कमर के नीचे के भाग में भारीपना और सरदी का लगना होते हैं ॥

पित्तकफाश्रित व्यान

व्याने पित्तावृते दाहो गात्रविक्षेपणं क्लमः ।

स्तंभनो दंडकश्चापि शोथशूलौ कफावृते ॥

अर्थ—व्यानवायु पित्तयुक्त होने से दाह, गात्रों का विक्षेप अर्थात् इधर उधर को फेरना और थ्रम होय, कफयुक्त होने से शरीर लकड़ी के समान स्तंभ होय, सूजन और शूल होय, इस जगह प्राणादि पंच वायुन के परस्पर मिलने से वीस प्रकार के आवर्ण चरकोक्त जान लेने और वाग्भट के मत से आवर्ण बाईस प्रकार के हैं हमने ग्रंथ के विस्तारभय से छोड़ दिये हैं ॥

चिकित्सा

वाते सपित्ते कुर्वीत वातपित्तहरीं क्रियाम् ।

सकफे तत्र कुर्वीत वातश्लेष्महरीं क्रियाम् ॥

अर्थ—पित्तयुक्त वात का कोप होने से वातपित्तनाशक क्रिया करे और वही वायु कफाश्रित दुष्ट होने से वातकफनाशक चिकित्सा करनी चाहिये ॥

आक्षेप के सामान्य लक्षण

यदा तु धमनीः सर्वाः कुपितोऽभ्येति मारुतः । तदाक्षिपत्याशु

मुहुर्मुहुर्देहं मुहुश्चरः ॥ मुहुर्मुहुस्तदाक्षेपादाक्षेपक इति स्मृतः ॥

अर्थ—जिस काल में वायु कुपित होकर सब धमनी (नाडीन) में जायकर मात होय, तब उस जगह यह वारंवार संचार करके देह को वारंवार आक्षिप्त करती है,

अर्थात् हाथीपर बैठनेवाले पुरुष के समान सब देह को चलायमान करे उस देह के वारंवार चलाने को आक्षेपक रोग कहते हैं ॥

आक्षेप के चार भेद

पित्तश्लेष्माचितो वायुर्वायुरेव च केवलः ।

कुर्यादाक्षेपकं चान्यश्चतुर्थमभिघातजः ॥

अर्थ—पित्तवात, श्लेष्मवात और केवल वात इन से उत्पन्न भये तीन आक्षेप और चौथा अभिघात से उत्पन्न हुआ ऐसे चार आक्षेप हैं ॥

केवल वातजाक्षेप

पाणिपादशिरःपृष्ठश्रोणीः स्तभ्नाति मारुतः ।

दंडवत् स्तब्धगात्रस्य दंडकः सोनुपक्रमः ॥

अर्थ—हाथ, पांव, पीठ, शिर, कमर इन को वायु स्तब्ध करता है और दंड के माफिक अंग को ँटाता है यह दंडक नाम आक्षेप चिकित्सा करने योग्य है ॥

सामान्य चिकित्सा

आक्षेपके शिरां विध्येत्कुर्याद्वातहरीं क्रियाम् ।

तीक्ष्णैः प्रथमनैर्नस्यैस्तथा संज्ञां स विदति ॥

अर्थ—आक्षेपक वायुपर फस्त खोले और वातनाशक तथा तीक्ष्ण ऐसी औषधी कर्म में फूँके तथा प्रथमन नस्य करे तो उस को संज्ञा हो आवे ॥

आक्षेपक चिकित्सा

बलामूलकपायस्य दशमूलीशतस्य च । यवकोलकुलित्यानां
क्वाथस्य पयसस्तथा ॥ अष्टावष्टौ स्मृता भागास्तैलादेक-
स्तदेकतः । पचेदवाप्य मधुरं गणं संधवसंयुतम् ॥ तथागुरुं
सर्जरसं सरलं देवदारु च । मंजिष्ठां पद्मकं कुष्ठमेलां कालां च
सारिवाम् ॥ मांसीं शैलेयकं पत्रं तगरं सारिवां वचाम् । शता-
वरीमश्वगंधां शतपुष्पां पुनर्नवाम् ॥ तत्साधु सिद्धं सौवर्णे रा-
जते मृन्मयेपि वा । प्रक्षिप्य कलशे सम्यक् स्वनुगुप्तं निघाप-
येत् ॥ एतन्महाबलातैलं प्रयुक्तमविलंबितम् । सर्वानाक्षेपका-
दींस्तु वातव्याधीन्व्यपोहति ॥ द्विक्रां श्वासमधीमंयं गुल्मं कासं

सुदुस्तरम् । पण्मासादुपयुक्तं तदंत्रवृद्धिं च नाशयेत् ॥ यथा-
वलमलं मात्रां सूतिकायै प्रदापयेत् । या च गर्भार्थिनी नारी
क्षीणशुक्रश्च यः पुमान् ॥ वातक्षीणे मर्महते मथितेभिहते तथा ।
भग्ने श्रमाभिपन्ने च सर्वथैतत्प्रयुज्यते ॥ एतद्धि राज्ञा कर्तव्यं
कर्तव्यं राजपूजितैः । सुखिभिः सुकुमारैश्च धनिभिर्मानवैः सदा ॥

अर्थ—खिरेटी की जड़ का काटा, दशमूल का काटा, जौं, बेर और कुलथी इन के काटे और दूध ये सब आठ २ भाग लेवे. तेल १ भाग, मधुर गण, सैधा निमक, अमर, राल, सरल, देवदारु, मजीठ, पद्मास, कूठ, इलायची, नागबला, सारिवा, जटामांसी, शिलाजीत, तमालपत्र, तगर, कालीसर, वच, शतावर, असगंध, सोंफ, पुनर्नवा ये प्रत्येक एक २ तोले लेवे. इन सब का काटा करके मिलावे. फिर इसमें तेल डालके पचावे जब तेल सिद्ध हो जावे तब उतारके इस को सुवर्ण के अथवा चांदी के अथवा मिट्टी के चिकने बरतन में भरके रख देवे इस महाबलादितैल के सेवन करने से तत्काल संपूर्ण आक्षेपक वायु तथा वातव्याधि इन को नाश करे तथा हिचकी, श्वास, अधिमंथ, गोला और घोर खांसी इन को दूर करे इस को छः महिने पर्यंत मालिस करने से अंत्रवृद्धि को नाश करे. तथा प्रसूता स्त्री का बल और दोष काल विचारके मात्रा देवे. जिस स्त्री को गर्भ की इच्छा-होवे और क्षीणवीर्य पुरुष किंवा वायु से क्षीण हुआ, मर्मस्थान में जिस के चोट लगी हो, जिस के हड्डी मुड़ गई हो तथा परिश्रमी इन सब को यह तैल देवे, यह तैल राजाओं को अथवा राजपुरुष हैं उन को तथा सुखी पुरुष, सुकुमार, धनवाले इत्यादि को देना चाहिये ॥

आक्षेप के भेद अपतंत्रक

कुद्धः स्वैः कोपनैर्वायुः स्थानादूर्ध्वं प्रवर्तते । पीडयन् हृदयं
गत्वा शिरःशंखौ च पीडयेत् ॥ धनुर्वन्नामयेत् गात्राण्याक्षिपे-
न्मोहयेत्तथा । स कूच्छ्रादुच्छ्रसेचापि स्तब्धाक्षोऽथ निमीलकः ॥
कपोत इव कूजेच्च निःसंज्ञः सोपतंत्रकः ॥

अर्थ—रूक्षादि स्वकारणों से कोप को प्राप्त भई जो वायु सो अपने स्वस्थान को छोड़ ऊपर जायकर प्राप्त हो और हृदय में जायकर पीडा करे, मस्तक और कन-पटी इन में पीडा करे और देह को धनुष के समान नवाय देवे और चले हो, मूर्च्छित कर दे, वो रोगी बड़े कष्टसे श्वास लेय, नेत्र मिच जावें, अथवा टेढ़े हों जाय कश्तर के समान गूंजे, तथा बेहोस होय, इस रोग को अपतंत्रक कहते हैं ॥

चिकित्सा

अथापतंत्रकेनार्तमातुरं नापतर्पयेत् । निरूहवस्ति वमनं सेवयेन्न
कदाचन ॥ श्वसनाः कफवाताभ्यां रुद्धास्तस्य विमोक्षयेत् ।
तीक्ष्णैः प्रथमनैः संज्ञां तासु मुक्तासु विंदति ॥

अर्थ—अपतंत्र वात से पीडित मनुष्य को रेचन, निरूह वस्ति और वमन ये कदाचित् न करावे कफ वायु से रुके हुए श्वास के बहनेवाले मार्गों को तीक्ष्ण नस्य आदि से शुद्ध करे जब श्वास लेने के मार्ग खुल जाते हैं तब इस प्राणी को होस होता है ॥

हरीतक्यादि लेह

हरीतकी वचा रास्ना सैधवं साम्लवेतसम् । घृतमाद्रिकसंयुक्तम-
पतंत्रकनाशनम् ॥ अम्लवेतसकाभावे चुक्रं दातव्यमीरितम् ॥

अर्थ—हरड़, वच, रास्ना, सैधानिमक, अमलवेत और घी. तथा अदरस इन का अवलेह अपतंत्रक वायु को नाश करे है यदि अमलवेत न मिले तो चूका डाले ॥

मरीचादि चूर्ण

मरिचं शिशुबीजानि विडंगं च फणिज्जकम् ।

एतानि सूक्ष्मचूर्णानि दद्याच्छीर्षविरेचनम् ॥

अर्थ—काली मिरच, सहजने के बीज, वायविडंग और फणिज्जग इन का चूर्ण मस्तकरेचनार्थ देवे ॥

दंडापतानक

कफान्वितो यदा वायुर्धमनीष्वेव तिष्ठति ।

स दंडवत्स्तंभयति कूच्छो दंडापतानकः ॥

अर्थ—वायु अत्यंत कफयुक्त होकर सब धमनी (नाडी) में प्राप्त होय तब सब देह को दंड (लकड़ी) के समान तिरछा कर दे यह दंडापतानक कष्टघायक है ॥

अपतानक

दृष्टिं संस्तभ्य संज्ञां च हत्वा कंठेन कूजति । हृदि मुक्ते नरः
स्वास्थ्यं याति मोहं वृते पुनः ॥ वायुना दारुणं प्राहुरेके तम-
पतानकम् ॥

अर्थ—दृष्टीका स्तंभन हो जाय, संज्ञा जाती रहे, गले में घुरघुर शब्द होय, वायु जब हृदय को छोड़े तब रोगी को होश होय और वायु हृदय को व्याप्त करै तब फेर मोह हो जाय इस भयङ्कर रोगी को कोई अपतानक ऐसे कहते हैं ॥

असाध्यत्व कहते हैं

गर्भपातनिमित्तश्च शोणितातिस्रवाच्च यः ।

अभिघातनिमित्तश्च न सिद्धच्यत्यपतानकः ॥

अर्थ—गर्भपात के होने से अथवा अतिरक्तस्राव के होने से अथवा अभिघात कहिये दंडादिकों की चोट लगने से जो प्रगट अपतानक रोग से असाध्य है ॥

चिकित्सा

अथापतानकेनार्तमस्रस्ताक्षमवेपनम् ।

अखट्टापातिनं चैव त्वरया समुपाचरेत् ॥

अर्थ—जो रोगी अपतानकवायु से व्याप्त तथा जिस के नेत्र शिथिल और कंप रहित. तथा जो खाट में न पडा हो ऐसे रोगी का बहुत जल्दी यत्न करे देरी करने से रोगी असाध्य हो जाता है ॥

अपतानकिने शस्तं दशमूलीशृतं जलम् ।

पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं जीर्णं मांसरसौदनम् ॥

अर्थ—अपतान रोग पर दशमूल के काठे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे जब काढा पच जावे तब मांसरस पथ्य में देवे तो अपतानवायु नष्ट हो ॥

चिकित्साप्रक्रिया

तैलेन मर्दनं स्वेदस्तथा तीक्ष्णेन नावनम् ।

स्रोतोविशोधनं पश्चात्सर्पिःपानं हितं स्मृतम् ॥

अर्थ—अपतानवातवाले रोगी के तेल का मर्दन करे, पसीने निकाले. तीक्ष्ण औषधों की नस्य देवे. फस्त खोले फिर घृतपान करावे ॥

हंत्यभुक्तवता पीतमम्लं दध्यपतानकम् ।

मरीचेन समायुक्तं स्नेहवस्तिरथापि च ॥

अर्थ—भोजन के प्रथम खट्टे दही में कालीमिरचों का चूर्ण डाल के पीवे. किंवा स्नेह वस्ती करे. तो अपतानक वायु नष्ट होवे ॥

धनुस्तंभलक्षण

धनुस्तुल्यो नमेद्यस्तु स धनुस्तंभसंज्ञितः । विवर्णवद्धवदनः

स्रस्तांगो नष्टचेतनः ॥ प्रस्विद्यंश्च धनुस्तंभी दशरात्रं न जीवति ॥

अर्थ—धनु के समान टेढ़े होने को धनुस्तंभ कहते हैं. उस में वर्णका बदलना, दांतों का जकड़ना, अंग शिथिल होना, मूर्छित होना और खेद ये विकार होते हैं. धनुस्तंभरोगी दश दिनतक बचता नहीं. इस में अंतरायाम और माहायाम इन के लक्षण न होनाही पहलेसे विशेष कहा है ॥

दूसरा प्रकार

कंठावरोधो धनुराकृतिः स्याद्धृदि व्यथा दंतनिबंधनं च ।

मुखस्य शोषः शिशिरस्य कांक्षा यस्मिन् धनुर्वायुरुदाहृतःसः॥

अर्थ—कंठ का अवरोध, धनु के समान टेढ़ा होना, हृदय में शूल, दांतों का जकड़ना, मुखशोष और ठंडी की इच्छा ये लक्षण जिस में हों वह धनुर्वीत कहलाता है ॥

कुब्जलक्षण

हृदयं यदि वा पृष्ठमुन्नतं क्रमशः सरूक् ।

कुब्धो वायुर्यदा कुर्यात्तदा तं कुब्जमादिशेत् ॥

अर्थ—वायु कुपित होकर जब हृदय या पीठ को वेदना के साथ ऊंचा करे तब वह कुब्ज कहलाता है ॥

वातघ्नैर्दशमूलया च नवं कुब्जमुपाचरेत् ।

स्नेहैर्मांसरसैश्चापि प्रवृद्धं तं विवर्जयेत् ॥

अर्थ—वातनाशक औषध, दशमूल का काढा, स्नेहपान और मांसरस इत्यादिक उपचार करे. परंतु जो अत्यंत बड़ा होवे उस का यत्र न करे ॥

अंतरायामलक्षण

अंगुलीगुल्फजठरहृद्भ्रशोगलसंश्रितः । स्नायुप्रतानमनिलो यदा

क्षिपति वेगवान् ॥ विष्टव्याक्षः स्तब्धहनुर्भग्नपार्श्वः कफं वम-

न् । अभ्यंतरं धनुरिव यदा नमति मानवः ॥ तदासौऽभ्य-

न्तरायामं कुरुते मारुतो बली ॥

अर्थ—पैर की अंगुली, घाँटू, हृदय, पेट, उरःस्थल और गला इन ठिकानों में रहे जो वायु वो वेगवान् होकर जो वहां नसों के जाल उस को सुखाय बाहर निकाल

दे, उस मनुष्य के नेत्र स्थिर हो जाय, मेढो रहिजाय, पसवाडों में पीडा होय, मुख से कफ गिरे और जिस समय मनुष्य धनुष के सदृश नीचे को नमजाय तब वह बली वायु (अंतरायाम) रोग को करे ॥

बाह्यायामलक्षण

महाहेतुर्वली वायुः शिराः सस्नायुकंडराः । मन्यापृष्ठाश्रिता
बाह्याः संशोष्यानामयेद्ब्रहिः ॥ यत्र तं वहिरायामं प्रवदंति भिप-
ग्वराः । तमसाध्यं बुधाः प्राहुर्वक्षःकट्यूरुभंजनम् ॥

अर्थ—बड़े कारणों से कुपित हुआ वायु कंधरा और पीठ इन के स्नायु और कंडरों को सुखाकर टेढा करता है. इसी से वैद्यलोग इस वायु को वहिरायाम कहते हैं. यह उर, कमर और जंघा इन को नष्ट करता है. यह असाध्य है ॥

सामान्य

बाह्यायामंतरायामे विधेयादितवत् क्रिया ॥

अर्थ—बाह्यायाम और अंतरायाम वायु पर अदितवायु पर जो चिकित्सा कही है वह करे ॥

दूसरा प्रकार

बाह्यायामांतरायामपार्श्वशूलकटिग्रहान् ।

खल्लीदंडापतानौ च स्नेहस्वेदपुरैर्जयेत् ॥

अर्थ—बाह्यायाम, अंतरायाम, पसवाडे का शूल, कटिग्रह (कमर का रह जाना), खल्लीवात और दंडापतानक इन को स्नेहन तथा पसीने निकालना इत्यादि उपायों से जीते ॥

चिकित्सा

बाह्यायामंतरायामे धनुस्तंभे च कुब्जके । योज्यं प्रसारिणीतैलं
तेन तेषां शमो भवेत् ॥ वातव्याधिषु सामान्या याः क्रियाः
कथिताः पुरा । कर्तव्या एव ताः सर्वास्तैलमेतद्विशेषतः ॥

अर्थ—बाह्यायाम, अंतरायाम, धनुस्तंभ और कुब्जकवात इन पर आगे कही प्रसारिणीतैल की मालिस करे तो इन की शांति होवे. तथा वातव्याधि की सामान्य चिकित्सा जो पहले लिख आये हैं वो करे, परंतु प्रसारणी तैल की मालिस विशेष करके करनी चाहिये ॥

सर्जतैल

धनुर्वायुः शमं याति सर्जतैलस्य मर्दनात् ।

दशमूलीकपायो वा पाने नस्ये च शस्यते ॥

अर्थ—राठ से बने हुए तेल की मालिस करने से धनुर्वात दूर हो, अथवा दशमूल के काटे को पीवे अथवा दशमूल के काटे की नस्य देवे तो धनुर्वात दूर हो ॥

एरंडादिकाठा

एरंडविल्वं बृहतीद्वयं च सौवर्चलं व्योपविरामठं च ।

समातुलुंगीलवणोत्तमं च काथं धनुर्वातहरं प्रशस्तम् ॥

अर्थ—अंड की जड़, बेलगिरी, छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी, संचरनिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, विजोरे की जड़ और संधानिमक इन का काटा करके पीवे तो धनुर्वात दूर होवे ॥

पक्षवध

गृहीत्वार्धं तनोर्वायुः शिराः स्नायूर्विशोप्य च । पक्षमन्यतरं

हंति संधिवंधान्विमोक्षयन् ॥ कृत्स्नोर्धकायस्तस्य स्यादकर्मण्यो

विचेतनः । एकांगरोगं तं केचिदन्ये पक्षवधं विदुः ॥

अर्थ—वायु आधे शरीर को पकड़ सब शरीर की नसों को सुखापकर दहने अंग को अर्धनारीश्वर के समान कार्य करने को असामर्थ्य कर दे और संधि के बंधनों को शिथिल कर दे, पीछे उस रोगी के सब वा आधे अङ्ग हल्ले चलें नहीं और उस को थोड़ा भी देखने का स्पर्शआदि का ज्ञान नहीं रहे इस को एकांगरोग कहते हैं। दूसरे पक्षवध कहते हैं इसी को पक्षाघात कहते हैं ॥

सर्वांगरोगलक्षण

सर्वांगरोगं तं केचित्सर्वकायस्थितेनिले ॥

अर्थ—तद्रत् कहिये शिरास्नायुर्विशोप्य इत्यादि सम्प्राप्तिलक्षण इस से जानने. सर्व शिरा (नाडी) में वायु प्राप्त होने से उस को सर्वांगरोग कोई कहते हैं. अब साध्यासाध्य के ज्ञानार्थ और दोषों का सम्बन्ध कहते हैं ॥

दाहसंतापमूर्च्छाः स्युर्वायौ पित्तसमन्विते । शैत्यशोथगुरुत्वानि

तस्मिन्नेव कफान्विते ॥ शुद्धवातहतं पक्षं कृच्छ्रसाध्यतमं विदुः ।

साध्यमन्येन संसृष्टमसाध्यं क्षयहेतुकम् ॥ गर्भिणीसूतिकावाल-

बृद्धक्षीणेप्वसृक्ष्युतौ । पक्षाघातं परिहरेद्देदनाराहितो यदि ॥

अर्थ—पक्षवध की वायु कफपित्तयुक्त होय तो दाह, संताप और मूर्च्छा होय और वही वायु कफयुक्त होय तो शीत, सूजन, भारीपन ये लक्षण होंय । और केवल वायु से प्रगट पक्षाघात अत्यंत कष्टसाध्य होय है और दोषों से संसृष्ट होने से साध्य होय है । क्षय से प्रगट भया पक्षाघात असाध्य होय है । गर्भिणी, बालक, वृद्ध और क्षीण इन के भया तथा रुधिर के स्राव से प्रगट पक्षाघात पीडारहित होय तो उस को वैद्य त्याग दे अर्थात् असाध्य जानकर चिकित्सा न करे ॥

मापादि काढा

मापात्मगुप्तावातारिवात्थालकजलश्रितम् । हिंगुसैधवसंयुक्तं प-
क्षाघातं विनाशयेत् ॥ मापके हिंगुसिंधूत्थे जरणाद्यास्तु शाणिकाः ॥

अर्थ—उडद, कौंच के बीज, अंड की जड़ और खिरेटी की जड़ इन का काढा करके उन में हींग और सैधानिमक डाल के पीवे तो पक्षाघात का नाश करे इस में हींग और सैधानिमक ये एक २ मासे तथा जीरा और जीरे आदि तीन २ मासे डाले. (परंतु मूल में जीरे आदि का नाम भी नहीं है) ॥

ग्रंथिकादि तैल

ग्रंथिकाग्रिकणाशुंठीरास्त्रासैधवकल्कितम् ।
मापकाथाश्रितं तैलं पक्षाघातं व्यपोहति ॥

अर्थ—पीपरामूल, चित्रक, पीपल, सोंठ, रास्त्रा और सैधानिमक इन का कल्क करके उडदों के काढे से अथवा पूर्वोक्त कल्क में तेल सिद्ध करे इस को देह में लगावे तो पक्षाघात वायु को नष्ट करे ॥

मापादि तैल

मापात्मगुप्तातिविपात्रबूकरास्त्राशताव्हालवणैः सुपिष्टैः ।
चतुर्गुणे मापबलाकपाये तैलं शृतं हति हि पक्षाघातम् ॥

अर्थ—उडद, कौंच के बीज, अतीस, अंड की जड़, रास्त्रा, शतावर, सैधानिमक उडद और खिरेटी इन के काढे में चतुर्थांश तेल डालके सिद्ध कर तो वह पक्षाघात को दूर करे ॥

मापादि सप्तक

मापबलाशूकविंवीकद्रुत्तरास्त्राश्वगंधोरुबूकाणाम् । काथः प्रातः
पीतो रामठलवणान्वितः कोष्णः ॥ अपनयति पक्षाघातं म-
न्यास्तंभं सकर्णनादरुजम् । दुर्जयमर्दितवातं सप्ताहाज्जयति
चावश्यम् ॥

अर्थ—उडद, खिरेटी, कौंच के बीज, रोहिण तृण, रास्ना, असगंध और अंड की जड़ इन का काढ़ा हींग और सेंधानिमक ढालके प्रातःकाल पीवे तो पक्षाघात, मन्यास्तंभ, कर्णनाद तथा अर्दितवायु इन को सात दिन में जीत लेवे ॥

मापतैल

ग्रंथिकाम्निकणारास्त्राकुष्ठं नागरसैंधवम् ।

मापं क्वाथेन तत्तैलं पक्षाघातविनाशनम् ॥

अर्थ—पीपरामूल, चित्रक की छाल, पीपल, रास्ना, कूठ, सोंठ, सेंधानिमक और उडद इन के काढ़े में सिद्ध करा हुआ तैल पक्षाघात नाश करे ॥

कपिकच्छादि काढा

कपिकच्छुवलैरंडमापनागरसाधितम् । ससैंधवं पिबेत्क्वाथं ना-
सारंश्रेण मानवः ॥ पक्षाघातं निहंत्याशु शिरोरोगं हनुग्रहम् ।
अर्दितं संधिवातं च मन्यास्तंभं सुदारुणम् ॥

अर्थ—कौंच के बीज, खिरेटी, अंड की जड़, सोंठ, उडद इन का काढ़ा सेंधा-
निमक ढालके नाक के द्वारा पीवे तो पक्षाघात, मस्तकरोग, हनुग्रह, अर्दित, संधिवात
और दारुण मन्यास्तंभ इन को नाश करे ॥

गुग्गुल पक्षाघातपर

कृष्णाजटानागरचव्यवह्निपाठाविडंगेंद्रयवैः समांशैः । हिंगूग्र-
ग्रंधाद्विजयटिकौंतीमातंगकृष्णातिविपान्वितश्च ॥ ससर्पपाजा-
जियुगाजमोदान्वितैः समस्तौस्त्रिफला द्विभागा । एभिः समो
गुग्गुलुराजमिथो भुक्तो हरेत्पक्षभवानिलार्तिम् ॥

अर्थ—पीपरामूल, सोंठ, चव्य, चित्रक, पाठ, वापविडंग, इन्द्रजी, हींग, वच,
भारंगी, रेणुकीबीज, गजपीपल, अतीस, सरसों, जीरा, काला जीरा और अजमोद ये
सब समान भाग लेवे और सब औषधों से दूना त्रिफला, तथा सब के समान गुग्गुल
मिलायके गोली बनाय लेवे इस को बलाबल विचारके देवे तो पक्षाघात-
वायु को नष्ट करे ॥

रालतैल

समुद्धरेत्सर्जतैलं यंत्रे च नलिकाभिधे ।

विमर्दनं तेन तनौ पक्षाघातं विनाशयेत् ॥

अर्थ—राज का चूर्ण करके उस का नलिकापत्रद्वारा तेल निकाल लेवे और देह में मालिस करे तो पक्षाघात वायु को नाश करे ॥

पक्षाभिघाते कटुतुंबुविबीजं तैलं तथा निवफलोद्भवं च ।

गोमायुपारावतकुङ्कुटानां पित्तैः प्रलेपः प्रशमाय वायोः ॥

अर्थ—पक्षाघात वादी पर कहुए सपेद (तुंबा) के बीजों को पीस उन का अथवा निवोरी के तेल का अथवा स्यारिया, कबूतर और मुरगा इन के पित्ते का लेप करे तो पक्षाघात दूर होवे ॥

शुंठीचूर्ण

लघुशुंठीकृतं चूर्णं पलसप्तमितं बुधैः । तत्समं गोघृतं दत्त्वा
भर्जयित्वा ततो बुधः ॥ शुंठीसमं रसोनं च पिष्ट्वा तत्र विनि-
क्षिपेत् । पक्षाघातं हनुस्तंभं कटिभंगं तथैव च ॥ बाहुपीडां
जयेत्तीव्रां वातरोगं च नाशयेत् ॥

अर्थ—सोंठ का चूर्ण २८ तोले, गौ का घी २८ तोले ढालके उस सोंठ को भून लेवे. फिर लहसन को छील और पीसके २८ तोले ले, उस सोंठ में मिलाय देवे फिर बलाबल विचारके खाने को देवे तो यह सोंठ पक्षाघात, हनुस्तंभ, कटिभंग, बाहुपीडां और वातरोग इन को नाश करे ॥

अर्दितनिदान

उच्चैर्व्याहरतोऽत्यर्थं खादतः कठिनानि च । हसतो जृंभमा-
णस्य विपमाच्छयनासनात् ॥ शिरोनासौष्ठुबुकललाटेक्षण-
संधिगः । अर्दयत्यनिलो वक्रमर्दितं जनयेत्ततः ॥ वक्रो भवति
वक्रार्थं ग्रीवा चास्यात्प्रवर्तते । शिरश्चलति वाक्स्तंभो नेत्रा-
दीनां च वैकृतम् ॥ ग्रीवाचुबुकदंतानां तस्मिन्पार्श्वे सवेदना ।
तमर्दितमिति प्राहुर्व्याधिं व्याधिविशारदाः ॥ वातात्पित्तात्कफा-
च्चास्यात्रिविधं तं समासतः ॥

अर्थ—ऊंचे स्वर से वेदादिक का पाठ करने से अथवा कठिन पदार्थ सुपारी आदि के खाने से, बहुत हँसने से, बहुत जंभाई के लेने से, ऊंचे नीचे स्थान सोने से, विषमाशन (भोजन) के करने से कोप को प्राप्त भई जो वायु मस्तक, नाक, होठ, ठोड़ी, ललाट और नेत्र इन की सन्धीन में प्राप्त हो मुख में पीडा करे

अर्थात् अर्दित रोग को उत्पन्न करे उस पुरुष का मुख आधा टेढा हो जाय, उसकी नाड मुड़े नहीं, मस्तक हिला करे, अच्छीतरह बोल्यो जाय नहीं, नेत्र, भृकुटी, गाल इन की विकृति कहिये पीडा, फरकना, टेढा होना, इत्यादि होय. और जिस-तरफ अर्दित रोग होय उस तरफ नार, ठोडी और दांत इन में पीडा होय. व्याधि जानने में जो कुशल वैद्य है वह इस व्याधि को अर्दितरोग ऐसे कहते हैं. शंका-क्योंजी अर्दितरोग में और पक्षाघात में क्या भेद है ? उत्तर-अर्दित से गर्भ में भी पीडा होय है कभी नहीं होय है और पक्षाघात में सदा पीडा होती है । अर्दितरोग चार प्रकार का है ॥

वातार्दित

लालास्रावो व्यथा कंपः स्फुरणं हनुवाग्रहः ।

ओष्ठयोः श्वयथुः स्थूलश्चार्दिते वातजे भवेत् ॥

अर्थ-लार गिरना, पीडा होना, कंप, फुरफुरना, ठोडी और भापण इन का प्रति-बंध व ओष्ठ को बहुत सूजन इतने लक्षण वातार्दित के जानने ॥

पित्ताश्रित व कफाश्रित अर्दितलक्षण

पीतमास्यं ज्वरस्तृष्णा पित्तजे मोहधूपने ।

गंडे शिरसि मन्यायां शोथः स्तंभः कफात्मके ॥

अर्थ-पित्ताधिक अर्दितवायु में मुख को पीलापन, ज्वर, तृषा, मोह और कफ ये विकार होते हैं और कफात्मक अर्दित में गाल, मस्तक और गरदन इनपर सूजन और स्तंभ ये विकार होते हैं ॥

चिकित्सा

स्नेहपानानि नस्यं च भोज्यान्यनिलहंति च ।

उपनाहाश्च शस्यंते स्वेदनं च तथार्दिते ॥

अर्थ-स्नेहपान, नस्य, वातनाशक भोजन के पदार्थ तथा पसीने निकालना इत्या-दिक उपचार अर्दितवादी पर करे ॥

दशमूलीकपायेण मातुलुंगरसेन वा ।

बलायाः पंचमूल्या वा क्षीरं वातात्मके हितम् ॥

अर्थ-दशमूल के काटे के साथ अथवा विजेरे के रस के साथ अथवा खिरेटी के काटे के साथ अथवा पंचमूल के काटे के साथ दूध पीवे तो वातात्मक अर्दित रोगपर हित करे ॥

पिष्टं मापकृतं जग्ध्वा नवनतिन सोर्दिती ।
क्षीरं मांसरसैर्भुक्त्वा दशमूलीरसं पिबेत् ॥

अर्थ—उडद का चूरन मक्खन के साथ खाकर अथवा मांसरस के साथ दूध पीकर दशमूल का काढा पीवे तो अर्दितवातपर परमोत्तम है ॥

पित्तार्दित

अर्दिते पित्तजे शीतान्त्रेहोत्थांश्चैव निर्दिशेत् ।
घृतवस्तिप्रसेकं च रक्तस्रावं तथैव च ॥

अर्थ—पित्तजन्य अर्दितवातपर स्निग्ध पदार्थों से उत्पन्न हुए शीतल उपचार करे और घृत से वस्ति तथा सिंचन अथवा रक्तस्राव करे ॥

जिह्वाभूताननो मूको दाह्वान्योर्दिती भवेत् ।
कुर्यात्प्रतिक्रियां तस्य वातपित्तविनाशिनीम् ॥

अर्थ—अर्दितवात करके जिस का मुख टेढा हो गया हो और गूंगा हो गया हो तथा दाह होता हो इन उपद्रवों के नाश करने को वातपित्तनाशक उपचार करे ॥

कफार्दित

श्लेष्मभागे क्षयं नीते बृंहणैः समुपाचरेत् ।
अर्दिते शोथसंयुक्ते वमनं च प्रशस्यते ॥

अर्थ—अर्दितवायुकरके कफ क्षीण होने से बृंहण उपचार करे और शोथयुक्त अर्दितवातपर वमन कराना उत्तम है ॥

रसोनकल्कं तिलतैलमिश्रं खादेन्नरो योर्दितरोगयुक्तः ।

तस्यार्दितं नाशमुपैति शीघ्रं वृद्धं घनानामिव वायुवेगात् ॥

अर्थ—लहसन के कल्क में तिल का तेल मिलायके खाये तो अर्दित वायु नष्ट हो. जैसे मेघों का समुदाय पवन के वेग से नष्ट होता है ॥

फलत्रिकं निवफलो रसश्च वासापटोलीकथितं तु सर्वम् ।

सकौशिकं रात्र्यवसानकाले पीतं भवेदर्दितवातहारि ॥

अर्थ—हरद, बहेडा, आवला, निबोरी का रस, अहूसा और पटोलपत्र इन का काढा करके उस में गूगल मिलायके प्रातःकाल देवे तो अर्दितवायु का नाश होय ॥

अर्दितसाध्यासाध्य

क्षीणस्याऽनिमिपाक्षस्य प्रसक्ताव्यक्तभापिणः ।

न सिद्धचत्यर्दितं गाढं त्रिवर्षं वेपनस्य च ॥

अर्थ—क्षीण पुरुष के, पलक नहीं लगें ऐसे पुरुष के, अत्यंत शुद्ध बोले नहीं ऐसे पुरुष के, अर्दित रोग को प्रगट भये तीन वर्ष व्यतीत हो गये हों, अथवा त्रिवर्ष कहिये मुख, नाक और नेत्र इन तीनों का स्राव होय ऐसा और कंपयुक्त पुरुष का अर्दित रोग साध्य नहीं होय ॥

गते वेगे भवेत्स्वास्थ्यं सर्वेष्व्वाक्षेपकादिषु ॥

अर्थ—सब आक्षेपकादि वायु में वात का वेग न्यून होने से रोगी स्वस्थ अर्थात् प्रसन्न होता है ॥

दूसरा प्रकार

नवनीतेन संयुक्तां खादेन्मापेंडरीं नरः ।

दुर्वारमर्दितं हन्ति सप्तरात्रान्न संशयः ॥

अर्थ मक्खन के साथ उडद के बड़ा स्राय तो दुर्निवार अर्दितरोग सात दिन में दूर होवे इस में संदेह नहीं है ॥

लशुनविधि

पलमर्धपलं वापि रसोनस्य सुकुट्टितम् । हिंजुजीरकसिंधूत्थ-

सौवर्चलकटुत्रिकैः ॥ चूर्णितैर्मापकोन्मानैरवचूर्ण्य विलोडितम् ।

यथाग्निभक्षितं प्राता रुबुक्काथानुपानतः ॥ दिने दिने प्रयोक्तव्यं

मासमेकं निरंतरम् । वातामयं निहत्येव मर्दितं चापतंत्रकम् ॥

एकांगरोगिणां रोगं तथा सर्वांगरोगिणाम् । ऊरुस्तंभं गृध्रसीं

च शूलद्रंद्रं कृमीनपि ॥ कटिपृष्ठामयं हन्याज्जाठरं च समीरणम् ॥

अर्थ—चार तोले अथवा दो तोले लहसन के रस में हींग, जीरा, सेंधानिमक, संचरानिमक और त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल) ये प्रत्येक एक एक मासे ले चूर्ण करके डाले. फिर यथाशक्ति भक्षण करे इस का अनुपान अंड की जड़ का काढ़ा है । प्रह प्रातःकाल नित्य एक महिने पर्यंत सेवन करनेसे सामान्य वातरोग, अर्दित, अपतंत्रक, एकांगवात, सर्वांगवात, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, शूल, द्रंद्रजरी, कृमि, कमर का रोग, पीठ का रोग तथा पेट का वायु इन को नाश करे ॥

हनुग्रहनिदान

जिह्वानिलैखनाच्छुष्कभक्षणादभिघाततः । कुपितो हनुमूलस्थः
संसयित्वाऽनिलो हनुम् ॥ करोति विवृतास्यत्वमथवा संवृता-
स्यताम् । हनुग्रहः स तेन स्यात्कृच्छ्राच्चर्वणभाषणम् ॥

अर्थ—जिह्वा के अतिघर्षण करने से, चना आदि सूखी वस्तु के खाने से अथवा किसी प्रकार चोट के लगने से, हनुमूल (कपोल) के अर्थात् डाढ़ की जड़ में रहे जो वायु सो कुपित होकर हनुमूल को नीचेकर मुख को खुला ही रख दे अथवा मुख को बंद कर दे, उस से हनुग्रहरोग कहते हैं तब उस मनुष्य को खाना, बोलना, कठिनता से होय ॥

हनुग्रहे हनुस्तंभे मन्यास्तंभेर्दिते पिवेत् ।

दशमूल्या समा कृष्णा अश्वत्थस्वरसेन च ॥

अर्थ—हनुग्रह, हनुस्तंभ, गरदन का रह जाना और अर्दित वायु इन पर दशमूल और पीपल इन का काढा देवे. अथवा पीपल के वृक्ष के छाल के काढे में पीपल का चूर्ण डालके देवे ॥

चिकित्सा

संवृतं चुबुकं स्निग्धं स्विन्नमुन्नमयेद्भिषक् ।

विवृतं नमयित्वा तु कुर्यात्प्राप्तामिह क्रियाम् ॥

अर्थ—मिचे हुए मुख को वैद्य स्निग्धपदार्थों को चुपडकर बफारा देकर उपाह देवे और यदि रोगी का मुख खुला रह गया हो तो पूर्वोक्त उपचारों से उस के मुख को दाब देवे अर्थात् बंद करे ॥

पिप्पली चार्द्रकं चापि संचर्व्यं च मुहुर्मुहुः ।

निष्टीवेत्तप्ततोयेन शोधयेद्ददनांतरी ॥

अर्थ—पीपल और अदरक इन को वारंवार चावकर धूक देवे तथा गरम जल से मुख को धोवे तो मुख का खुलना बंद होना ठीक २ होने लगे ॥

हनुग्रह चिकित्सा

निष्कुप्य लशुनं सम्यक् संक्षुद्य तिलतैलके ।

सैधवेनांचितं खादेद्दनुस्तंभार्दितो नरः ॥

अर्थ—लहसन को छीलके तिल के तेल में पीस सैधानिमिक मिलायके राय ३ हनुस्तंभ रोग दूर होवे ॥

रसोनवटक

रसोनगुटिकां मापविदलं परिपेच्य च । योजयेत् पिष्टिकां कांतां
सैधवार्र्कहिंशुभिः ॥ ततस्तु वटकान्कृत्वा तिलतैले पचेच्छ-
नैः । भक्षयेत्तान्यथावह्नि हनुस्तंभी सुखी भवेत् ॥

अर्थ—लहसन का गोला और उडद की पीसी हुई दाल इन को एकत्र करके
स में सैधानिमक, हींग और अदरख डालके तेल में बड़े बनावे ये बड़े खाने से
हनुस्तंभ (ठोड़ी का जकड़ जाना) नाश होय ॥

अभ्यंजन

अभ्यज्य पक्वतैलेन स्वेदयेन्मृदुनाग्निना ।

वस्ति विधारयेन्मूर्ध्नि तैलेन परिपूरयेत् ॥

अर्थ—औटाए हुए तेल से देह में मालिस करे और मंद २ सेके अर्थात् पसीने
नेकाले और शिरोवास्ति देवे तो हनुस्तंभ दूर हो ॥

प्रसारणीतेल वातकफजन्यवायुपर

प्रसारणीपलशतं जलद्रोणेन पाचयेत् । पादशिष्टः शृतो ग्राह्य-
स्तैलं दधि च तत्समम् ॥ कांजिकं च समं तैलात्क्षीरं तैलाच्च-
तुर्गुणम् । तैलात्तथाष्टमांशेन सर्वकल्कानि योजयेत् ॥ मधुकं
पिप्पलीमूलं चित्रकः सैधवं वचा । प्रसारणी देवदारु रास्ना
च गजपिप्पली ॥ भल्लातः शतपुष्पा च मांसी चैर्भिर्विपाच-
येत् । एतत्तैलं वरं पक्वं वातश्लेष्मामयान् जयेत् ॥ कौञ्जत्वं
खंजपंगुत्वं गृध्रसीमर्दितं तथा । हनुपृष्टशिरोग्रीवाकटिस्तंभं
च नाशयेत् ॥ अन्यांश्च विषमान्वातान् सर्वांशु च्यपोहति ॥

अर्थ—प्रसारणी १०० पल को एक द्रोण जल में डालके औटावे जब काटा धीयाई
हे सब उतारके उस को कपड़े में छान लेवे. फिर इस में तेल, दही और कांजी
हाटे के समान मिलायके तेल से चौगुना गौ का दूध मिलावे फिर इस में कल्क करके
ढालने की जो औषध हैं उन को में लिखता हूं. मुल्हटी, पीपरामूल, चित्रक की
छाल, सैधानिमक, प्रसारणी, देवदारु, रास्ना, गजपीपल, भिलाये, सौंफ और जटा-
मांसी ये बारह औषध तेल से अष्टमांश ले कल्क करके उस तेल में मिलाय देवे फिर
तेल को अग्रपर चढाके मंद २ अग्नि से तेलमात्र शेष करे फिर इस को उतारके

छान लेवे और उत्तम शीशी आदि में भरके धर रखे. इस के लगाने से वातश्लेष्म-जन्य विकार, कुब्जवायु, खंजवायु, पंगुवायु, गृध्रसी, अर्दित, हनुस्तंभ, पीठ की वायु, मस्तक, ग्रीवा, कमर इन की वायु को नाश करे इस के सिवाय दूसरे जो विष छोटे बड़े वादी के रोग हैं वे सब इस तेल लगाने से दूर होते हैं ॥

मन्यास्तंभ

दिवा स्वप्नाशनस्नानविकृतोर्ध्वनिरीक्षणैः ।

मन्यास्तंभं प्रकुरुते स एव श्लेष्मणा युतः ॥

अर्थ—दिन में सोने से, अन्न, स्नान, ऊंचे को विकृतिपूर्वक देखने से इन कारणों से कोप को प्राप्त भई जो वात से कफयुक्त होकर मन्या (नाडी) स्तंभन करे इस रोग को मन्यास्तंभन रोग कहते हैं ॥

चिकित्सा

दशमूलीकृतं काथं पंचमूल्यापि कल्पितम् ।

रूक्षं स्वेदं तथा नस्यं मन्यास्तंभे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—दशमूल का अथवा पंचमूल का कल्क देवे और रूक्षपदार्थों से स्वेदन करे, नस्य देवे. ये उपाय मन्यास्तंभ (गरदन का जकड़ जाने) पर करने चाहिये.

तैलेनाज्येन वा ग्रीवामभ्यज्यार्कदलैरथ ।

एरंडपत्रैर्वाच्छाद्य स्वेदयेद्बहुशो भिषक् ॥

अर्थ—गरदनपर तेल अथवा घी लगाय आक के पत्ते अथवा अंड के पत्तों को आगपर सेकके बहुतवार सेके तो मन्यास्तंभ दूर हो ॥

कुष्ठुटांडद्रवैरुष्णैः सैधवाज्यसमन्वितैः ।

ग्रीवां संमर्दयेत्तेन मन्यास्तंभः प्रशाम्यति ॥

अर्थ—मुरगे के अंडे का रस, सैधानिमक और घी इन को गरम करके गर्दनपर मले तो मन्यास्तंभ दूर होवे ॥

जिह्वास्तंभ

वाग्वाहिनी शिरासंस्थो जिह्वां स्तंभयतेऽनिलः ।

जिह्वास्तंभः स तेनान्नपानवाक्येष्वनीशता ॥

अर्थ—वायु वाणी के बहनेवाली नाडीन में प्राप्त हो जिह्वा का स्तंभन कर दे, उस को जिह्वास्तंभरोग कहते हैं. यह अन्नपान की तथा बोलने की सामर्थ्य का नाशकरे ॥

चिकित्सा

जिह्वास्तंभे यथावस्थं वातव्याधिचिकित्सितम् ।

सामान्योक्ताः क्रियाश्चात्रार्दितस्यापि हिता मताः ॥

अर्थ—जिह्वास्तंभपर जैसे दोष होवे उसी को विचारके वातव्याधि के ऊपर जो चिकित्सा कही है वो करे और घातव्याधिपर तथा अर्दित वादीपर जो सामान्य क्रिया कही है वह हितकारी है ॥

दूसरा प्रकार

जिह्वास्तंभे क्रिया श्रेष्ठा सामान्योक्ता तु यार्दिते ॥

अर्थ—जो अर्दितवायुपर सामान्य क्रिया कही वह जिह्वास्तंभपर श्रेष्ठ है ॥

कल्याणकावलेह

सहरिद्रा वचा कुष्ठं पिप्पली विश्वभेषजम् । अजाजी चाजमोदा

च यष्टीमधुयुतं घृतम् ॥ एकविंशतिरात्रेण भवेच्छ्रुतधरो नरः ।

मेघदुंदुभिनिर्घोषो मत्तकोकिलनिःस्वनः ॥ जडवागादिमूकत्वं

लेहो कल्याणको जयेत् ॥

अर्थ—हलदी, वच, कूठ, पीपल, सोंठ, जीरा, अजमोद, मुलहठी और घी इन का अवलेह २१ दिन सेवन करे तो बहरापना, तोतलापना और गूंगापना दूर होय तथा मेघ के समान अथवा दुंदुभी (नौबत) के समान गंभीर तथा कोकिल के समान प्रिय बोलनेवाला होय और सर्वशास्त्रों का धारणकर्ता होये ॥

शिरोग्रह

रक्तमाश्रित्य पवनः कुर्यान्मूर्धधराः शिराः ।

रूक्षाः सवेदनाः कृष्णाः सोऽसाध्यः स्याच्छिरोग्रहः ॥

अर्थ—वायु रुधिर का आश्रय कर मस्तक के धारण करनेवाली नाड़ी को रूखी पीढायुक्त और काली कर दे यह शिरोग्रहरोग असाध्य है. शिरोग्रह ऐसा भी पाठ है ॥

चिकित्सा

शिरोग्रहे तु कर्तव्या शिरागतमरुत्क्रिया । दशमूलीकपायेण

मातुलुंगरसेन च ॥ शतेन तैलेनाभ्यंगः शिरोवस्तिश्च युज्यते ॥

अर्थ—शिरोग्रह वायुपर शिरागत वायु का उपचार करे और दशमूलकाढा तथा पिजोरे का रस इन के साथ तेल को औदायके उस की मालिस अथवा शिरोवस्ति करे ॥

गृध्रसीलक्षण

स्फिक्पूर्वाकटिपृष्ठोरुजानुजंघापदं क्रमात् । गृध्रसीस्तंभरुक्तो-
दैर्गृह्णाति स्पंदते मुहुः ॥ वाताद्वातकफात्तन्द्रा गौरवारोच-
कान्विता ॥

अर्थ—प्रथम स्फिक् कहिये कमर के नीचे का भाग जिस को कूला कहते हैं उस को स्तंभित कर दे, पीछे क्रम से कमर, पीठ, ऊरु, जानू, जंघा और पग इन को स्तंभित कर दे अर्थात् ये रह जाय, वेदना और तोड़ कहिये चोंटने की सी पीडा होय और वारंवार कम्प होय, यह गृध्रसीरोग वादी से होय है और वातकफ से होय तौ इस में तंद्रा और भारीपना और अरुचि ये विशेष होंय. इस प्रकार गृध्रसी रोग दो प्रकार का है ॥

वातज गृध्रसीनिदान

वातजायां भवेत्तोदो देहस्यातीव वक्रता ।

जानुजंघोरुसंधीनां स्फुरणं स्तंभता भृशम् ॥

अर्थ—वातजगृध्रसी में वेदना, देह की वक्रता, जंघा, पींडरी और ऊरु इन के संधि में स्फुरण और स्तंभता होती है ॥

वातश्लेष्मज गृध्रसीनिदान

वातश्लेष्मोद्भवायां तु गौरवं वह्निमार्दवम् ।

तंद्रा मुखप्रसेकश्च भक्तद्वेषस्तथैव च ॥

अर्थ—कफ से उत्पन्न गृध्रसी में भारीपन, अग्निमांघ, तंद्रा, छार का गिरना, अन्न का द्वेष ये लक्षण होते हैं ॥

गृध्रसीचिकित्सा

गृध्रस्यां तु नरं सम्यग्रेकेण वमनेन वा ।

ज्ञात्वा निरामं दीप्ताग्निं वस्तिभिः समुपाचरेत् ॥

अर्थ—गृध्रसीरोगवाले को प्रथम रेचन और वमन देवे जब वमन विरेचन से दी-
प्ताग्नि हो जावे तब वस्त्यादिक उपचार करने चाहिये ॥

नादौ वस्तिविधिः कुर्याद्यावदूर्ध्वं न शुद्ध्यति ।

स्नेहो निरर्थकः स स्यात् भस्मन्येव हुतं तथा ॥

अर्थ—गृध्रसीरोग में जयतक ऊर्ध्वभाग की शुद्धि न होवे तयतक वस्तिकर्म न

करे यदि प्रमाद वैद्य करे तो स्नेहवस्ति निरर्थक होती है जैसे भस्म में हवन करा हुआ व्यर्थ जाता है ॥

एरंडतैलयोग

तैलमेरंडजं प्रातर्गोमूत्रेण पिवेत्ररः ।

मासमेकं प्रयोगोयं गृध्रस्यूग्रहापहः ॥

अर्थ-गोमूत्र में अंडी का तेल डालके प्रातःकाल १ महिने पर्यंत नित्य पीवे तो गृध्रसी तथा ऊरुस्तंभ इन को नाश करे ॥

तैलं घृतं सार्द्रकमातुलुंगं रसं सचुक्रं सगुडं पिवेद्वा ।

कट्युरुपृष्ठत्रिकशूलगुल्मगृध्रस्युदावर्तहरः प्रयोगः ॥

अर्थ-तेल अथवा घी इन में से कोई एक के साथ अदरस और विजोरे का रस अमलवेत और गुड इन सब को एकत्र करके पीवे तो कमर, जांघ, पीठ, त्रिकस्थान इन में होनेवाला दर्द, गोला, उदावर्त और गृध्रसी वायु इन को नष्ट करे ॥

निष्कुप्यैरंडबीजानि पिष्ट्वा क्षीरे विपाचयेत् ।

तत्पायसं कटीशूले गृध्रस्यां परमौपधम् ॥

अर्थ-अंडीन को छीलके कूट डाले. फिर इस को दूध में डालके औटावे जब लपसी हो जाय तब सेवन करे तो कमर का शूल और गृध्रसी इन पर उत्कृष्ट औषधी है ॥

गृध्रसीहरतैल

द्वे पले सैंधवात्पंच शुंठ्या ग्रंथिकचित्रकात् । द्वे पले भल्लका-

स्थीनि विंशति द्वे तथाढके ॥ आरनाले पचेत्प्रस्थं तैलस्यैतैर-

पत्यदम् । गृध्रस्यूग्रहाशौतःसर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ-सैंधानामक ८ तोले, सोंठ, पीपरामूल और चित्रक ये प्रत्येक २०-तोले भिलाए की गुठली ८ तोले, कांजी ८८ तोले और तेल ६४ तोले सब को एकत्र करके तेल सिद्ध करे. इस को यथाशक्ति पीवे तो यह संतान देवे तथा गृध्रसी, ऊरुस्तंभ, बवासीर और सर्ववात के विकारों को नाश करे ॥

शिरावेध गृध्रसीपर

विध्योच्छिरां मेद्रवस्तेरधस्ताच्चतुरंगुले ।

यदि नोपशमं गच्छेद्देहत्पादकनिष्ठिकाम् ॥

अर्थ-लिंगवस्ति के नीचे चार अंगुलपर शिरावेध करे तो गृध्रसी नष्ट होय यदि नष्ट न होवे तो पैर की छोटी पंगली में दाग देवे तो गृध्रसी अवश्य दूर हो ॥

निंबकल्क

महानिंबजटाकल्को गृध्रसीनाशनः स्मृतः ॥

अर्थ—बकापन के पत्तों का कल्क गृध्रसीवातनाशक है ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं भ्रष्टातकफलानि च ।

एतत्कल्कश्च सक्षौद्र ऊरुस्तभनिवारणः ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल और भिलाए इन का कल्क सहत के साथ सेवन करे तो ऊरुस्तंभ को दूर करे ॥

पंचमूलीकपायं तु सुखोष्णं त्रिवृतायुतम् ।

गृध्रसीं गुल्ममूलं च सद्यः पीतो नियच्छति ॥

अर्थ—पंचमूल के काढ़े में निसोथ का चूर्ण डालके पीवे तो गृध्रसी और गोले का रोग इन को तत्काल नाश करे ॥

गृध्रसीचिकित्सा

एरंडमूलं विल्वं च बृहती कंटकारिका । कपायो रुचकोपेतः

पीतो वृषणवस्तिजम् ॥ गृध्रसीजं हरेच्छूलं चिरकालानुबंधि च ॥

अर्थ—अंड की जड़, वेल की जड़, कटेरी बड़ी, कटेरी छोटी इन के काढ़े में संचरनिमक डालके पीवे तो वृषण (अंडकोश), वस्ति गृध्रसीवात इन में होनेवाले बहुत दिन के दर्द को नाश करे ॥

गोमूत्रैरंडतैलाभ्यां कृष्णाचूर्णं पिबेन्नरः ।

दीर्घकालस्थितां हन्ति गृध्रसीं कफवातजाम् ॥

अर्थ—गोमूत्र, अंडों का तैल और पीपल का चूर्ण सब को एकत्र करके पीवे तो बहुत दिन की कफवातजन्य गृध्रसी को नाश करे ॥

सिंहास्यदंतीकृतमालकानां पिबेत्कपायं ऋभुतैलमिश्रम् ।

यो गृध्रसीनष्टगतिः प्रसुप्तः स शीघ्रगः स्याद्धि किमत्र चित्रम् ॥

अर्थ—अहूसा, दंती और अमलतास इन का काढ़ा करके उस में अंडी का तैल मिलायके पीवे तो जिस का चलना हलना बंद हो गया हो, स्पर्श प्रतीत न हो ऐसा गृध्रसी का रोगी शीघ्र-गमन करनेवाला होवे इस में आश्चर्य नहीं ॥

बृहन्निंबतरोः सारो वारिणा परिपेपितः ।

स पीतो नाशयेत्क्षिप्रमसाध्यामपि गृध्रसीम् ॥

अर्थ—वकायन के सार को जल में पीसके पीवे तो असाध्य भी गृध्रसी रोग शीघ्र नष्ट होय ॥

शेफालिकादलैः काथो मृद्वग्निपरिपाचितः ।

दुवारं गृध्रसीरोगं पीतमात्रः प्रणाशयेत् ॥

अर्थ—काली निर्गुडी के पत्तों का काढा मंदाग्निपर करके पीवे तो दुर्निवार गृध्रसी रोग तत्क्षण दूर हो ॥

रास्नागुग्गुलु

रास्नायास्तु पलं चैकं पंचकर्पाणि गुग्गुलोः ।

सर्पिपा वटिकां कृत्वा भक्षयेद्गृध्रसीहरीम् ॥

अर्थ—रास्ना ४ तोले और गुग्गुलु ५ तोले दोनों को सरल करके गोली करके क्तिप्रमाण खाय तो गृध्रसीरोग को नष्ट करे ॥

रास्नाकाढा

रास्नामृतारग्वधदेवदारुत्रिकंठकैरंडपुनर्नवानाम् ।

काथं पिवेन्नागरचूर्णमिश्रं जंघोरुपृष्ठत्रिकपार्श्वशूली ॥

अर्थ—रास्ना, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखरू, अंड की जड़ और पुनर्नवान के काढे में सोंठ का चूर्ण डालके पीवे तो जंघरा, ऊरु, पीठ, त्रिकस्थान इन के रोगों को दूर करे ॥

पथ्यागुग्गुलु

पथ्याविभीतामलकीफलानां शतं क्रमेण द्विगुणाभिवृद्धम् ।

प्रस्थेन युक्तं च पलं कपाणां द्रोणे जले संस्थितमेकरात्रम् ॥

अर्धावशेषं कथितं कपायं भांडे पचेत्तत्पुनरेव लौहे । अमूनि

वह्नेरवतार्य दद्याद् द्रव्याणि संचूर्ण्य पलार्धकानि ॥ विडंगदंती-

त्रिफलागुडूचीकृष्णात्रिवृन्नागरकोपणानि । यथेष्टचेष्टस्य नरस्य

शीघ्रं हिमांबुपानानि च भोजनानि ॥ निपेव्यमाणो विनिहंति

रोगान् सगृध्रसीं नूतनखंजतां च । प्रीहानमुग्रं जठराणि पंगु-

पांडुत्वकंदूवमिवातरक्तम् ॥ पथ्यादिको गुग्गुलुरेप नाम्ना

ख्यातः क्षितावप्रतिमप्रभावः । वलेन नागेंद्रसमं मनुष्यं जवेन

कुर्यात्तुरगेन तुल्यम् ॥ आयुःप्रकर्षं विदधाति चक्षुर्वलं तथा
पुष्टिकरो विषघ्नः । क्षतस्य संधानकरो विशेषाद्रोगेषु शस्तः
सकलेषु तज्ज्ञैः ॥

अर्थ—हरड १००, बहेडा २००, आवले ४००, शुद्ध गूगल ६४ तोले
इन को १०२४ तोले जल में रात्रि के समय भिगो देवे. प्रातःकाल चूल्हेपर चढापके
औटावे. जब जल आधा रहे तब इस काढे में वायविडंग, दंती, त्रिफला, गिलोय,
पीपल, निसोथ, सोंठ और काली मिरच, इन प्रत्येक का चूर्ण दो दो तोले डाले.
जब गाढा हो जावे तब घी से गूगल को कूटके गोली बनाय लेवे तो यह गूगल
तयार हो. यह यथेष्ट आचरण तथा यथेष्ट भोजन करनेवाले मनुष्य के सेवन करने से
रोग नाश करे. यह गृध्रसी, नवीन खंजता का रोग, प्लीहा, उग्रजठर, पंगुता, पांडुत्व,
कंडु, वमन और वातरक्त इन को नाश करनेवाला है. पथ्यादि गुग्गुलु पृथ्वीपर आदि-
तीय सामर्थ्य रखनेवाली है और बल में हाथी के समान वेग में घोडे के समान
मनुष्य को करे. आयुष्य, चक्षुर्वल और पुष्टि को करे. तथा विषनाशक, घाव को
भरनेवाला तथा सर्व रोगोंपर उत्तम है ऐसा वैद्यों ने कहा है ॥

तुरंगगंधा सितखंडयुक्ता घृतेन भुक्ता कटिपृष्ठहन्त्री ॥

अर्थ—असगंध और मिश्री इन का चूर्ण घृत के साथ देने से कटिशूल
नाश करता है ॥

एरंडतैलयोग

वाजिगंधा बला विश्वा दशमूलं विसाधितम् ।

गृध्रस्यां तैलमैरंडं वस्तौ पाने च शस्यते ॥

अर्थ—असगंध, खिरेटी, सोंठ और दशमूल इन के काढे में अयवा कल्क में अंडी
का तेल डालके सिद्ध करे यह गृध्रसीवायुपर वस्तीविषय में किंवा पीने में उत्तम है ॥

विश्वाचीलक्षण

तलं प्रत्यंगुलीनां याः कंडरा बाहुपुष्टतः ।

बाव्होः कर्मक्षयकरी विश्वाचीतीह सोच्यते ॥

अर्थ—बाहु के पिछाडी से लेकर हाथ के ऊपरले भागपर्यंत प्रत्येक उंगली
मीचे मोटी नस है उन को दुष्ट कर हाथ से लेना, देना, पसारना, मुट्टी मारनी
इत्यादिक कार्यों का नाशकर्ता जो रोग होय उस को विश्वाची रोग कहते हैं ॥

चिकित्सा

दशमूलीबलामापकाथं तैलाज्यमिश्रितम् ।

सायं भुक्त्वा चरेन्नस्यं विश्वाच्यामववाहुके ॥

अर्थ—दशमूल, खिरेटी और उडद इन का काढा, तेल अथवा घी मिलापके सायंकाल के समय भोजन करने के पश्चात् नस्य देवे तो विश्वाची तथा अपवाहुक इन को नाश करे ॥

मापतैल

मापसिंधुवलारास्रादशमूलकहिंयुभिः । वचाशतजटाख्याभिः

सिद्धं तैलं सनागरम् ॥ ऊर्ध्वं भक्ताशनाद्धन्याद्राहुशोपाववा-

हुकौ । विश्वाचीमुद्धतां चापि पक्षाघातं तथार्दितम् ॥

अर्थ—उडद, सेंधानिमक, खिरेटी, रास्रा, दशमूल, हींग, वच और शतावर इन के काढे के साथ सिद्ध करा हुआ तेल साँठ के साथ भोजन करके सेवन करे तो बाहुशोष, अपवाहुक, विश्वाची, पक्षाघात और अर्दितवायु इन को नष्ट करे ॥

क्रोष्टुशीर्षलक्षण

वातशोणितजः शोथो जानुमध्ये महारुजः ।

ज्ञेयः क्रोष्टुकशीर्षस्तु स्थूलः क्रोष्टुकशीर्षवत् ॥

अर्थ—वातरक्त से जानु, घेंटू इन दोनों की संधि में अत्यंत पीडाकारक सूजन हो और स्यार के मस्तकसमान मोटी हो उन को क्रोष्टुशीर्ष ऐसे कहते हैं ॥

चिकित्सा

गुग्गुलुं क्रोष्टुशीर्षे तु गुडूर्ची त्रिफलांभसा ।

क्षीरेणैरंडतैलं वा पिवेद्वा वृद्धदारुकम् ॥

अर्थ—क्रोष्टुशीर्षपर गिलोय और त्रिफला इन के काढे में गुग्गुलु डाल पीवे अथवा ४ तोले दूध में १ तोले अंडी का तेल डालके पीवे अथवा वृद्धदारु का चूर्ण सेवन करे ॥

सामान्यचिकित्सा

रसैस्तिक्तिरिमांसस्य पतैर्गुग्गुलुसंस्थितैः ।

वातरक्तक्रियाभिश्च जयेजंबुकमस्तकम् ॥

अर्थ—तीतर के मांसरस में गूगल डालके पीवे तथा वातरक्त पर जो उपाय कहे हैं वह इसपर करे तो क्रोष्टुशीर्षक नाश होय ॥

खंज व पंगु के लक्षण

वायुः कट्याश्रितः सक्थः कंडरामाक्षिपेद्यदा ।

खंजस्तदा भवेजंतुः पंगुः सक्थोर्द्रयोर्वधात् ॥

अर्थ—कमर में रहे जो वात से जंघा की नसों को ग्रहण कर एक पग को स्तंभित कर देय, उस को खोडोरोग कहते हैं और दोनों जंघान की नसों को पकड दोनों पैरों को स्तंभित कर दे उस को पांगुलो कहते हैं ॥

चिकित्सा

उपाचरेदभिनवं खंजं पंगुमथापि वा ।

विरेकस्थापनस्वेदगुग्गुलुस्नेहवस्तिभिः ॥

अर्थ—खंज और पंगु यदि नवीन होवे तो विरेचन आस्थापन करावे, पसीने निकाले, गूगल, स्नेहपान और वस्ति इत्यादिक उपचार करे ॥

कलायखंजलक्षण

कंपते गमनारंभे खंजन्निव च लक्ष्यते ।

कलायखंजं तं विद्यान्मुक्तसंधिप्रबंधनम् ॥

अर्थ—जो पुरुष चलते समय थरथर कांपे और खंज अर्थात् एक पैर से ही न मालूम होय, इस रोग में संधि के बंधन शिथिल होते हैं इस रोग को कलाय-खंज कहते हैं ॥

चिकित्सा

क्रमः कलायखंजस्य खंजपंग्वोरिव स्मृतः ।

विशोपात्स्नेहनं कर्म कार्यमत्र विचक्षणैः ॥

अर्थ—कलायखंजपर खंज और पंगुपर जो चिकित्सा कही है वह करे तथा विचक्षण वैद्य को विशेषकरके स्निग्ध उपचार करे ॥

चिकित्साक्रम

जयेत्कलायखंजं तु हेतुत्यागरसनतः ॥

अर्थ—कलायखंजवादीशाले को निदान परिवर्जन करे अर्थात् जिस कारण से हुआ होवे उस को त्याग देवे. तथा लहसन भक्षण से जीते ॥

वातकंटकनिदान

रूपपादे विपमे न्यस्ते श्रमाद्वा जायते यदा ।

वातेन गुल्फमाश्रित्य तमाहुर्वातकंटकम् ॥

अर्थ—उंची नीची जगह में पैर पडने से अथवा श्रम के होने से वायु कुपित टकना में प्राप्त होकर पीडा करे तो इस रोग को वातकंटक ऐसे कहते हैं ॥

चिकित्सा

रक्तावसेचनं कुर्यादभीक्षणं वातकंटके ।

पिवेद्वैरंडतैलं वा दहेत्सूचीभिरेव च ॥

अर्थ—वातकंटक रोग में वारंवार रुधिर को निकाले, अंडी का तेल पीवे तथा सुई उे दाग देना चाहिये यह उपाय वातकंटक रोग के नाश करनेवाले हैं ॥

पाददाहलक्षण

पादयोः कुरुते दाहं पित्तासृक्सहितोऽनिलः ।

विशेषजश्चक्रमणात् पादहर्षं तमादिशेत् ॥

अर्थ—जिस के पैर हर्षयुक्त (कहिये इनझनाहट पीडायुक्त) होय और अत्यंत उोय जावे, उस को पादहर्ष रोग कहते हैं यह कफवात के कोप से होय है ॥

चिकित्सा

वातरक्तक्रमं कुर्यात्पाददाहे विशेषतः । मसूरविदलैः पिष्टैः

शृतशीतेन वारिणा ॥ चरणौ लेपयेत्सम्यक् पाददाहप्रशांतये ।

नवनीतेन संलितौ वह्निना परितापितौ ॥ सुच्येते चरणौ क्षिप्रं

परितापात्सुदारुणात् ॥

अर्थ—पाददाहपर विशेषतःकरके वातरक्त का क्रम करे और मसूर की डाल को औटायके शतिल करे हुए जल में पीसके पैरों के लेप करे अथवा पैरों में मक्खन हो चुपडके अग्नि से तपावे तो एक क्षणमात्र में पैरों का दाह शांत होय ॥

पाददाहपर लेप

गुडूच्यैरंडवीजानि दध्ना पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ।

पाददाहे हितं प्रोक्तं महानिर्वफळानि च ॥

अर्थ—गिलोय और अंडी के बीजों को दही में पीसके इन का अथवा बकायन के हलों को जल में पीसके पैरों में लेप करे तो पाददाह शांत होवे ॥

पादहर्षलक्षण

दृष्येते चरणौ यस्य भवतश्च प्रसुप्तकौ ।

पादहर्षः स विज्ञेयः कफवातप्रकोपजः ॥

अर्थ—चरण रोमांचयुक्त होके स्पर्श न समझा जाय उस को पादहर्ष कहते हैं वह कफवात के कोप से होता है ॥

चिकित्सा

पादहर्षे तु कर्तव्यः कफवातहरो विधिः ॥

अर्थ—पादहर्ष रोगपर वातकफनाशक यत्र करने चाहिये ॥

बाहुशोपनिदान

अंसदेशे स्थितो वायुः शोपयेदंसबंधनम् ।

शिराश्चाकुंच्य तत्रस्थो जनयेदपवाहुकम् ॥

अर्थ—कंधा में रहे जो वायु सो कुपित होकर उस के बंधनको सुखाय दे, तब अंसशोपरोग प्रगट होय और कंधा में रहे जो वायु सो नसों को संकोच करके अपवाहुकरोग प्रगट करे ॥

चिकित्सा

बाहुशोपे पिवेद्भुक्त्वा सर्पिः कल्याणकं महत् । बलामूलशृतं

तोयं सैंधवेन समन्वितम् ॥ बाहुशोपकरे वाते मन्यास्तंभे

च शस्यते ॥

अर्थ—बाहुशोप रोग होनेपर भोजन करके पश्चात् बृहत्कल्याणक घृत पीवे अथवा खिरेटी के जड़ का काटा करके उस में सैंधानिमक मिलायके पीवे यह बाहुशोप और मन्यास्तंभ नामक वादीपर उत्तम है ॥

रसोनकल्क

क्षीरेण तैलेन घृतेन वापि मांसेन सार्धं लशुनानि खादेत् ।

शाल्योदनेनापि च पष्टिकेन पलाध्वंश्या दिवसानि सप्त ॥

वातोत्थरोगान् विपमज्वरांश्च शूलान् सगुल्मान् दहनस्य

मांद्यम् । पृष्ठानमुग्रं भुजपाश्वंशूलं शिरोव्यथां कृंतति

शुकदोषान् ॥

अर्थ—दूध, तेल, घी अथवा मांस इन में से किसी एक के साथ अथवा सांठी चावल के भात के संग दो दो तोले लहसन को चाटे इस प्रकार सात दिन भक्षण करे तो वादी से हुए रोग, विषमज्वर इन का शूल, गोला, मंदाग्नि, प्रीहा और भुजा, पीठ और मस्तक इन का शूल और शुरुदोष इन को नाश करे ॥

बाहुशोपचिकित्सा

बलामूलभवक्त्राथः संधवेन समन्वितः ।

बाहुशोपगदं नस्याद्धन्यान्मापरसोथ वा ॥

अर्थ—खिरेटी के जड़ का काटा करके उस में संधानिमक डालके देवे. अथवा उददों के काटे की नस्य देवे तो बाहुशोपवात को नष्ट करे ॥

अवबाहुकलक्षण

शिराः संकोच्य बाहुस्थः स कुर्यादवबाहुकः ॥

अर्थ—बाहु का आश्रय करके जो शिराओं का संकोचन करता है उस को अव-बाहुक कहते हैं ॥

चिकित्सा

परमौपधमवबाहुकमन्यास्तंभोर्ध्वजञ्जुगतरोगे ।

शीतलजलेन नस्यं तदुपशमे जिगिनी च पुरः ॥

अर्थ—अवबाहुक, मन्यास्तंभ और हसली के ऊपर के रोग इनपर मंजीठ और गुल को शीतल जल में पीसके उस की नस्य देवे. यह उत्तम औषधी है ॥

मूलं बलायास्त्वथ पारिभद्रात्तथात्मगुप्तास्वरसं पिबेद्वा ।

युंजीत यो मापरसेन नस्यं भवेदसौ वज्रसमानबाहुः ॥

अर्थ—खिरेटी की जड़ और नीम की छाल इन का काटा अथवा कौच का रस लेवे. अथवा उददों के काटे की नस्य देवे तो वज्र के समान भी बाहुशोप को नष्ट करे ॥

मापतैल

मापातसीयवकुरंतककंटकारीगोकंटटुंठुकजटाकपिकच्छुतोयैः ।

कार्पासकास्थिशण्वीजकुलत्थकोलक्वाथेन वस्तपिशितस्य रसे-

न चापि ॥ शुंक्र्या समागधिकया शतपुष्पया च सैरंडमूलकपु-

नर्नवया हरण्या । रास्त्राबलाभृतलताकटुकैर्विपक्वं मापाख्यमे-

तदवबाहुहरं हि तैलम् ॥

अर्थ—उडद, अलसी, जौ, पीयावांसा, कटेरी, गोखरू, टेंदू, जटामांसी, कौंछ, नेत्रवाला, कपास के बीज (विनाला), सन के बीज, कुलथी और वेर इन का काढा वकरे के मांस का रस, सोंठ, पीपल, सोंफ, अंड की जड, पुनर्नवा, हरणवेळ, राम्ना, खिरेटी, गिलोप और कुटकी इन का कल्क करे. इस कल्क में तेल डालके सिद्ध करे तो यह मापाख्यतैल अपवाहुक हरण करे. इस को तैल बनाने की क्रिया से वैद्य बनावे ॥

अतसीखल्लिविश्वरजोगुडेन संमर्द्य मोदको भुक्तः ।

अपहरत्यवश्यमववाहुकृतकौतुकं नात्र संदेहः ॥

अर्थ—अलसी, देवदारु और सोंठ इन का चूर्ण गुड में मिलायके इस की गोली करके खाय तो अवश्य अववाहुक वादी का नाश करे यह कौतुक (तमासा) है इस में संदेह नहीं ॥

मापतैलादिमर्दन

मापतैलरसोनाभ्यां वाहोश्च परिमर्दनात् ।

दशांघ्रिमापक्वाथेन जयेद्वैद्योववाहुकम् ॥

अर्थ—पूर्वोक्त मापतैल और लहसन इन को एकत्र कर भुजा (हाथ) पर मालिस करे अथवा दशमूल और उडद इन का काढा पीवे तो अववाहुक का नाश होय ॥

मूक मिम्मिण व गद्गदनिदान

आवृत्य वायुः सकफो धमनीः शब्दवाहिनीः ।

नरान्करोत्यक्रियकान्मूकमिम्मिणगद्गदान् ॥

अर्थ—कफयुक्त वायु शब्द के वहनेवाली नाडी में प्राप्त होकर मनुष्यों का वचन क्रियारहित मूक, मिम्मिण और गद्गद, ऐसा कर दे मूक कहिये जिस से बोला न जाय, मिम्मिण कहिये गिनगिनायकर नाक से बोले और गद्गद बोलते समय बीच के पद और व्यंजनों को न बोले और मंद बोले इन रोगों के कारण सदृश होकर रोगों के भिन्न भिन्न प्रकार होते हैं यह दोषों के उत्कर्षकरके अथवा प्रारब्धवश से होते हैं ऐसा जानना ॥

सारस्वतघृत

प्रस्थं घृतस्य पलिकैः शिशुवचालवजधातकीलोध्रैः । आज्ञे प-

यसि विपक्वं सिद्धं सारस्वतं नाम्ना ॥ विधिवदुपयुज्यमानं जड-

गद्गदमूकतां क्षणान्जित्वा । स्मृतिमतिमेधाप्रतिमाः कुर्यात्स

स्पष्टवाग्भवति ॥

अर्थ—घी ६४ तोले और सहजना, वच, सैंधानिमक, धाय के फूल और लोधये प्रत्येक ४ तोले ले सब को कूट पीसके घी में डाले तथा घी की बराबर बकरी का दूध डालके पक करे तो यह सारस्वत घृत सिद्ध होय. इस को यथाविधि सेवन करने से सर्ववाणी के दोष दूर करके बुद्धि, स्फूर्ती तथा स्पष्ट भाषण को करे ॥

दशमूलस्य निर्यहो हिंगुपुष्करचूर्णितः ।

शमयेत्परिपीतस्तु वाणी मिम्मिणसंज्ञिताम् ॥

अर्थ—दशमूल के काठे में हींग और पुहकरमूल इन का चूर्ण मिलायके पीवे तो वाणी का मिम्मणता दोष (गिनगिनायके बोलना) दूर होय ॥

तूनीलक्षण

अधो या वेदना याति वचोमूत्राशयोत्थिता ।

भिन्दतीव गुदोपस्थं सा तूनी नामतो मता ॥

अर्थ—पक्काशय और मूत्राशय से उठी जो पीडा सो नीचे जायकर प्रात हो और गुदा तथा उपस्थ कहिये स्त्रीपुरुषों के गुदास्थान इन में भेद करे, अर्थात् पीडा करे उस को तूनीरोग कहते हैं ॥

प्रतूनीलक्षण

गुदोपस्थोत्थिता चैव प्रतिलोमं विधाविता ।

वेगैः पक्काशयं याति प्रतूनी चेह सोच्यते ॥

अर्थ—गुदा और उपस्थ इन से उठी जो पीडा उलटी ऊपर जायकर प्रात हो और जोर से पक्काशय में प्रात हो और तूनी के समान पीडा करे उस को प्रतूनी कहते हैं ॥

इन दोनोंपर चिकित्सा

तून्यां च प्रतितून्यां च प्रशस्ताः स्नेहवस्तयः । पिवेद्वा स्नेह-
लवणं पिप्पल्यादिमथांबुना ॥ उष्णेन रामठक्षारप्रगाढमथ
वा घृतम् ॥

अर्थ—तूनी और प्रतूनी वादीपर स्नेहवस्ति देवे. अथवा निमक और घी ये पीवे अथवा पीपल के चूर्ण को पानी के साथ पीवे अथवा गरम जल के साथ हींग और सैंधानिमक सेवन करे अथवा घृत पीना चाहिये ॥

आध्मानलक्षण

साटोपमत्युग्ररुजमाध्मातमुदरं भृशम् ।

आध्मानमिति जानीयादोरं वातनिरोधजम् ॥

अर्थ—गुडगुड शब्दयुक्त अत्यंत पीडायुक्त ऐसा उदर (पक्काशय) अत्यंत फूल अर्थात् वादी से भरकर चाम की थैली के समान हो जाय इस भयंकर रोग को आध्मानरोग कहते हैं. यह वातके रुकने से होय है ॥

चिकित्सा

आध्माने लंघनं पूर्वं दीपनं पाचनं ततः ।

फलवर्तिकाक्रियां कुर्याद्भस्तिकर्म च शोधनम् ॥

अर्थ—अफरा रोग में प्रथम लंघन करे फिर दीपन और पाचन देवे तथा फलवर्ती बस्तीकर्म तथा दस्त करावे ये उपाय करने चाहिये ॥

नाराचूर्ण

कर्पमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृता स्यात्पलोन्मिता । खंडादपि
पलं ग्राह्यं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ मधुनाक्षमितं लिह्याच्चूर्णमा-
ध्माननाशनम् ॥

अर्थ—पीपल १ तोले, निसोय ४ तोले, मिश्री ४ तोले इस प्रकार ले चूर्ण करके तीन मासे के अनुमान सहस्र के साथ सेवन करे तो पेट का फूलना दूर होय ॥

दारुपट्कलेप

दारुहैमवतीकुष्ठशताव्हाहिगुसैधवैः ।

लिपेत्कोणैरम्लपिष्टैः शूलाध्मानयुतोदरम् ॥

अर्थ—देवदारु, चोक, कूठ, सतावर, हाँग और सैधानिमक ये पदार्थ निबू दे. रस में पीस गरम करके पेटपर लेप करे तो शूल और पेट का फूलना इन को नाश करे ॥

महानाराचरस

अभयारग्वधो धात्री दंती तिक्ता सुही त्रिवृत् । मुस्ता प्रत्येक-
मेतानि ग्राह्याणि पलमात्रया ॥ तानि संक्षुद्य सर्वाणि जलाढ-
कयुगे पचेत् । तत्र तोयेष्टमं भागं कपायमवशेषयेत् ॥ निस्त्व-
ग्जैपालबीजानि नवानि पलमात्रया । तनुवस्त्रधृतान्येव तस्मि-
न्काथे शनैः पचेत् ॥ ज्वालयेदनलं मंदं यावत् काथो घनो
भवेत् । ततः खल्वे क्षिपेद्भागानष्टौ जैपालबीजतः ॥ भागां-
स्त्रीन्नागराद् द्वौ च मरिचाद्द्वौ च पारदात् । गंधकाद् द्वौ च
तानीह यावद्यामं विमर्दयेत् ॥ रसो नाराचनामायं भक्षितो

रक्तिकामितः । जलेन शीतलेनैव रोगानेतांविनाशयेत् ॥
आध्मानं शूलमानाहं प्रत्याध्मानं तथैव च । उदावर्तं तथा
गुल्ममुदराणि हरत्यसौ ॥ वेगे शांते च भुञ्जीत शर्करासहितं
दधि । ततस्तत्सैंधवेनापि ततो दध्योदनं मनाक् ॥

अर्थ—हरड, अमलतास का गूदा, आमले, जमालगोटा, कुटकी, थूहर, निसोय
रीर नागरमोथा ये प्रत्येक चार २ तोले ले सब को कूटके ५१२ तोले जल में डालके
गाढा करे जब अष्टावशेष काढा हो जावे तब उतारके छान लेय. फिर इस काढे में
जमालगोटे के बीज छिले हुए ४ तोले कपडे की पोटली में बांधके दोलायंत्र की
।धिसे छटकाय देवे और मंद २ अग्निसे सिजावे जबतक काढा गाढा होवे तबतक औटावे.
फेर खरल में उन जमालगोटे के ८ भाग, सोंठ ३ भाग, काली मिरच, पारा और
धक ये दो दो भाग लेवे. सब को एकत्र करके एक प्रहर खरल करे. यह नाराच-
स शीतल जल के साथ एक रत्ती सेवन करे तो अफरा, शूल, वादी का अवरोध,
प्रत्याध्मान, उदावर्त, गोले का रोग तथा सर्व प्रकार के उदररोग इन को नाश करे।
जब दस्त हो चुके तब दहीभात भोजन करे अथवा दहीभात और सैंधानिमक ये
द्वय में थोड़े देवे. जब दस्त बंद करने होय तो गरम जल पिलाय देवे ॥

प्रत्याध्माननिदान

विमुक्तपार्श्वहृदयं तदेवामाशयोत्थितम् ।

प्रत्याध्मानं विजानीयात्कफव्याकुलितानिलम् ॥

अर्थ—और वही आध्मान रोग आमाशय में उत्पन्न होय तो उस को
प्रत्याध्मान कहते हैं. इस में पसवाडे और हृदय इन में पीडा नहीं होय और वायु
कफकरके व्याकुल हो ॥

चिकित्सा

प्रत्याध्माने समुत्पन्ने कुर्याद्भ्रमनलंघने ।

दीपनादीनि युञ्जीत पूर्ववद्भस्तिकर्म च ॥

अर्थ—प्रत्याध्मान रोग उत्पन्न होने से भ्रमन और लंघन करे. फिर दीपनादिक
रूपचार तथा भस्ति इत्यादिक उपचार करे ॥

वाताग्नीलानिदान

नाभेरधस्तात्संजातः संचारी यदि वाऽचलः । अष्टीलावद्यवो ग्रंथि-

रूध्वमायत उन्नतः ॥ वाताष्टीलां विजानीयाद्बहिर्मागवरोधिनीम् ॥

अर्थ-नाभी के नीचे उत्पन्न भई और इधर उधर फिरे, अथवा अचल अष्टीला (गोलपापाण) के समान कठिन और ऊपर का भाग कुछ लंबा होय और आड़ी कुछ उंची होय और बहिर्माग कहिये अधोवायु मल मूत्र इन का अवरोध कहिये (रुकना) हो ऐसी गाठ को वाताष्टीला कहते हैं ॥

प्रत्यष्टीला

एतामेव रुजोयुक्तां वातविण्मूत्ररोधिनीम् ।

प्रत्यष्टीलामिति वदेज्जठरे तिर्यगुत्थिताम् ॥

अर्थ-वाताष्टीला अत्यंत पीडायुक्त वात मूत्र मल के रोध करनेवाली और जो तिरछी प्रगट भई होय उस को प्रत्यष्टीला कहते हैं ॥

हिंवादिचूर्ण

हिंगुग्रंथिकधान्यजीरकवचाचव्याग्निपाठाशठीवृक्षाम्लं लवणत्रयं
त्रिकटुकं क्षारद्वयं दाडिमम् । पथ्यापौष्करवेतसाम्लहृपुपाजा-
ज्यस्तदेभिः कृतं चूर्णं भावितमेतदाद्रंकरसैः स्याद्बीजपूरद्रवैः ॥

अर्थ-भूनी हींग, पीपरामूल, धनिया, जीरा, वच, चव्य, चित्रक की छाल, पकचूर, इमली, सेंधानिमक, विडानिमक, काला निमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीख जवाखार, अनारदाना, हरड, पुहकरमूल, अमलवेत, हीऊबेर और जीरा इन के चूर्ण में अदरक के रस की तथा विजोरे के रस की भावना देवे और ययायोग्य अनुपान के साथ अष्टीलारोग पर वैद्य देवे ॥

प्रत्यष्टीलादि चिकित्सा

प्रत्यष्टीलाष्टीलकयोर्गुल्मेभ्यंतरविद्रधौ ।

क्रिया हिंवादिचूर्णं च शस्यतेत्र विशेषतः ॥

अर्थ-प्रत्यष्टीला, अष्टीला, गुल्म और अंतरविद्रधि इनपर हिंवादि चूर्ण जो ऊपर लिख आये हैं सो देय. विशेषता करके यही क्रिया उत्तम है ॥

दूसरा प्रकार

हिंवाम्लत्रिकटूपट्टकटुशठीवृक्षाम्लदीप्यालकापाठाजाज्यज-
गंधमूलहृपुपाद्विक्षारसाराभया । हिंवाध्मानवित्रंधवर्धकसन-
श्वासाग्निसादारुचिष्टीहाशौखिलशूलगुल्मगदहृद्रोगाश्मपांडुप्रगुत् ॥

अर्थ—भूनी हींग, अमलवेत, सोंठ, मिरच, पीपल, वच, पट्टकटू (सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक, पीपरामूल,) कचूर, चूक, अजमायन, कंकाल, पाठ, जीरा, असगंध, पुहकरमूल, हीऊवेर, सज्जीखार, जवाखार, चिरोंजी और हरड इन का समानेभाग चूर्ण करे इस के सेवन से हिचकी, अफरा, मलबद्धता, बद, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, अरुचि, ग्रीहा, बवासीर, गोले के रोग, हृदयरोग, पथरी और पांडुरोग इन सब को दूर करे ॥

हिंवादियोग

हिंगूग्रगंधाविडशुंध्यजाजीहरीतकीचित्रकमूलकुष्ठम् ।

भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदराष्टीलिषूपिचिकासु ॥

अर्थ—भूनी हींग, वच, विडनोन, सोंठ, जीरा, हरड, चीते की छाल और कूठ ये सब औषध भागोत्तर वृद्धि से लेके चूर्ण करे यह गोला, उदर, अष्टीला और विपूचिका इनपर हितकारी है ॥

नादेयादिकाढा

नादेयीकुटजार्केशिष्टबृहतीस्नुगविल्वभल्लातकव्याघ्रीकिंशुक-
पारिभद्रकरजोपामार्गनीपात्रिकान् । वासामुस्तकपाटलासल-
वणान् जग्ध्वा रसं पाचितं हिंवादिप्रतिवापमेतदुचितं गुल्मो-
दराष्टीलिषु ॥

अर्थ—भूयजामुन, कूडे की छाल, आक, सहजना, कटेरी बडी, धूहर, बेलगिरी, भिलाए, छोटी कटेरी, पलासपापडी, नीम की छाल, पित्तपापडा, आंगा, कदंब, चित्रक, अडूसा, नागरमोथा, पाठ इन का काढा करके इस में संधानिमक और हींग डालके पीवे. यह गोला, उदर और अष्टीला इन पर उत्तम है ॥

विडंगासव

विडंगं पिप्पलीमूलं पाठा धात्र्येलवालुकम् । कुटजत्वक्फलं
रास्त्रा भार्ङ्गी पंचपलोन्मितान् ॥ अष्टद्रोणैर्भसः पक्त्वा द्रोण-
शेषं तु कारयेत् । पूते शीते क्षिपेत्तस्मिन् माक्षिकस्य शत-
त्रयम् ॥ धातक्या विंशतिपलं चूर्णं कृत्वा तु दापयेत् । व्यो-
पस्य च तुलान्वाष्टौ त्रिजातं द्विपलं तथा ॥ फलिनीहेमतोयानां
सलोघ्राणां पलं पलम् । घृतभांडे समाधाय मासमेकं विधा-

स्येत् ॥ एष योगो हरत्येव प्रत्यष्ठीलाभगंदरान् । ऊरुस्तंभा-
श्मरीमेहगंडमालां सविद्रधिम् ॥ आढ्यवातं हनुस्तंभं विडं-
गाख्यो महासवः ॥

अर्थ—वायविडंग, पीपामूल, पाठ, आवले, एलवालुक, कूडा की छाल, इन्द्रजोः
रास्त्रा, भारंगी ये प्रत्येक बीस २ तोले लेवे. इस में १४ मन १३ सेर जल डालके
औटावे जब ३६ सेर १६ तोले जल बाकी रहे तब उत्तारके छान लेय. फिर इस
में ३०० तोले सहत, घाय के फूल ८० तोले, सांठ, मिरच, पीपल ये ३२०० तोले
तथा दालचीनी, इलायची, पत्रज ये प्रत्येक आठ २ तोले लेके और फूलप्रियंगु, धतूरे
के बीज, नेत्रवाला और लोध ये प्रत्येक चार २ तोले, डालके इन सब को घी के
चिकने घासन में भरके एक महिनेपर्यंत दाबके धरा रहने दे यह प्रयोग प्रत्यष्ठीला,
भगंदर, ऊरुस्तंभ, पयरी, प्रमेह, गंडमाला, विद्रधि, आढ्यवात और हनुस्तंभ इन
को नाश करे. इस को विडंगासव कहते हैं ॥

वस्तिवातलक्षण

मारुते विगुणे वस्तौ मूत्रं सम्यक्प्रवर्तते ।

विकारा विविधाश्चापि प्रतिलोमे भवन्ति हि ॥

अर्थ—वस्ती (मूत्रस्थान) में वायु अनुलोमगति से गमन करे तो मूत्र अच्छे
रूप से उतरे ऐसे प्रतिलोम से गमन करे तो अनेक प्रकार के पयरी मूत्रच्छेदां
विकार उत्पन्न होय ॥

चिकित्सा

चलामूलत्वचशूर्णं ससितं कर्पसंमितम् ।

पिप्पेत्कुडवदुग्धेन मुहुर्मूत्रेण शान्तये ॥

अर्थ—गिरेटी की जड़ की छाल का चूर्ण एक तोले और मिश्री एक तोले इ-
को १६ तोले दूध के साथ पीवे तो पारंपार सूना दूर होय ॥

द्वरितक्यादिकूर्ण

पथ्यं चूर्णं चूर्णं मृत्पायसः ।

मधु ५ शान्तिकृन् ॥

अर्थ—इस में मिट्टापस ५
में मिट्टापस

यवक्षारचूर्ण

यवक्षारस्य चूर्णं तु संयोज्य सितया सह ।

भक्षयेन्नियतं तस्य प्रशाम्येन्मूत्रनिग्रहः ॥

अर्थ—जवाखार के चूर्ण में मिश्री मिलायके सेवन करे तो मूत्रग्रह (मूत्र का रुकना) शांति होवे ॥

कूष्मांडबीजयोग

कूष्मांडस्य तु बीजानि बीजानि त्रपुसस्य च ।

वस्तौ संधारयेत्तेन प्रशाम्येन्मूत्रनिग्रहः ॥

अर्थ—पेटे के बीज और कांकडी के बीज इन दोनों को एकत्र पीसके बस्ती (मसाने) पर लगावे तो मूत्र की रुकावट दूर हो ॥

आमलक्यादि योग

आमलक्याश्च कल्केन वस्तिभागं प्रलेपयेत् ।

तेन प्रशाम्यति क्षिप्रं नियमान्मूत्रनिग्रहः ॥

अर्थ—आंवले का कल्क करके बस्तीपर गाढा २ लेप करे तो निश्चय करके मूत्र की रुकावट दूर होय ॥

चंदनादिवर्ति

मेहनस्याथ वा योनेर्मुखस्याभ्यंतरे शनैः ।

घनसारयुतां वर्ति धारयेन्मूत्रनिग्रहे ॥

अर्थ—मूत्र की रुकावट दूर करने को लिंग में अथवा योनि के मुख में चंदन में भीगी हुई बत्ती को धारण करे तो मूत्र उतरे ॥

वस्तिगतवायुचिकित्साक्रम

अथ वस्तिगते वाते कार्यो वस्तिविशोधनः ॥

अर्थ—वस्तिगत वात कुपित होने से बस्ती का शोधन करे ॥

कंपवायु

सर्वांगकंपः शिरसो वायुर्वेपथुसंज्ञकः ॥

अर्थ—सब अंगों को और मस्तक को जो कंपाये उस वायु को वेपथु (कंप) वायु कहते हैं ॥

रयेत् ॥ एष योगो हरत्येव प्रत्यष्टीलाभगंदरान् । ऊरुस्तंभा-
श्मरीमेहगंडमालां सविद्रधिम् ॥ आढ्यवातं हनुस्तंभं विडं-
गाख्यो महासवः ॥

अर्थ—वायुविडंग, पीपरामूल, पाठ, आवले, एलवालुक, कूडा की छाल, इन्द्रजो-
राम्ना, भारंगी ये प्रत्येक बीस २ तोले लेवे. इस में १४ मन १३ सेर जल डालके
औटावे जब ३६ सेर १६ तोले जल बाकी रहे तब उतारके छान लेय. फिर इस
में ३०० तोले सहत, घाय के फूल ८० तोले, सोंठ, मिरच, पीपल ये ३२०० तोले
तथा दालचीनी, इलायची, पत्रज ये प्रत्येक आठ २ तोले लेके और फूलप्रियंगु, धतूरे
के बीज, नेत्रवाला और लोध ये प्रत्येक चार २ तोले, डालके इन सब को घी के
चिकने वासन में भरके एक महिनेपर्यंत दाबके धरा रहने दे यह प्रयोग प्रत्यष्टीला,
भगंदर, ऊरुस्तंभ, पथरी, प्रमेह, गंडमाला, विद्रधि, आढ्यवात और हनुस्तंभ इन
को नाश करे. इस को चिडंगासव कहते हैं ॥

वस्तिवातलक्षण

मारुते विगुणे वस्तौ मूत्रं सम्यक्प्रवर्तते ।

विकारा विविधाश्चापि प्रतिलोमे भवन्ति हि ॥

अर्थ—वस्ती (मूत्रस्थान) में वायु अनुलोमगति से गमन करे तो मूत्र अच्छी
रीति से उतरे ऐसे प्रतिलोम से गमन करे तो अनेक प्रकार के पथरी मूत्रकृच्छ्रादि
विकार उत्पन्न होय ॥

चिकित्सा

बलामूलत्वचशूर्णं ससितं कर्पसंमितम् ।

पिबेत्कुडवदुग्धेन मुहुर्मूत्रेण शान्तये ॥

अर्थ—खिरेटी की जड़ की छाल का चूर्ण एक तोले और मिश्री एक तोले इन
को १६ तोले दूध के साथ पीवे तो वारंवार मूतना दूर होय ॥

हरीतक्यादिचूर्ण

पथ्याविभीतधात्रीणां चूर्णं चूर्णं मृतायसः ।

मधुना सह संलीढं मुहुर्मूत्रस्य शान्तिकृत् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आवला इन का चूर्ण करके इस में लोहभस्म मिलाय सह
में मिलायके चाटे तो वारंवार मूतने को बंद करे ॥

यवक्षारचूर्ण

यवक्षारस्य चूर्णं तु संयोज्य सितया सह ।

भक्षयेन्नियतं तस्य प्रशाम्येन्मूत्रनिग्रहः ॥

अर्थ—जवाखार के चूर्ण में मिश्री मिलापके सेवन करे तो मूत्रग्रह (मूत्र का रुकना) शांति होवे ॥

कूष्मांडबीजयोग

कूष्मांडस्य तु बीजानि बीजानि त्रपुसस्य च ।

वस्तौ संधारयेत्तेन प्रशाम्येन्मूत्रनिग्रहः ॥

अर्थ—पेठे के बीज और कांकडी के बीज इन दोनों को एकत्र पीसके वस्ती (मसाने) पर लगावे तो मूत्र की रुकावट दूर हो ॥

आमलक्यादि योग

आमलक्याश्च कल्केन वस्तिभागं प्रलेपयेत् ।

तेन प्रशाम्यति क्षिप्रं नियमान्मूत्रनिग्रहः ॥

अर्थ—आंवले का कल्क करके वस्तीपर गाढा २ लेप करे तो निश्चय करके मूत्र की रुकावट दूर होय ॥

चंदनादिवर्ति

मेहनस्याथ वा योनेर्मुखस्याभ्यंतरे शनैः ।

घनसारयुतां वर्ति धारयेन्मूत्रनिग्रहे ॥

अर्थ—मूत्र की रुकावट दूर करने को लिंग में अथवा योनि के मुख में चंदन में भीगी हुई वस्ती को धारण करे तो मूत्र उतरे ॥

वस्तिगतवायुचिकित्साक्रम

अथ वस्तिगते वाते कार्यो वस्तिविशोधनः ॥

अर्थ—वस्तिगत वात कुपित होने से वस्ती का शोधन करे ॥

कंपवायु

सर्वाङ्कंपः शिरसो वायुर्वेपथुसंज्ञकः ॥

अर्थ—सब अंगों को और मस्तक को जो कंपाये उस वायु को वेपथु वायु कहते हैं ॥

खल्ली के लक्षण

खल्ली तु पादजंघोरुकरमूलावमोटनी ॥

अर्थ—और जो वायु पैर, जंघा, ऊरु और हाथ के मूल में कंपन करे उस को खल्ली (मूलामना) रोग कहते हैं ॥

चिकित्सा

कुष्ठसैधवयोः कल्कशुक्रतैलसमन्वितः ।

सुखोष्णो मर्दने योज्यः खल्लीशूलनिवारणः ॥

अर्थ—कूट और सैधानिमक इन का कल्क चुक्रतैल (जो पीछे लिख आए हैं) उस के साथ मिलाय गरम करके सुहाता २ लगायके मालिश करे तो खल्ली वात और शूल इन को दूर करे ॥

स्थान नाम लक्षण वातव्याधिनिदान

स्थाननामानुरूपैश्च लिंगैः शेषान्विनिर्दिशेत् ।

सर्वेष्वेतेषु संसर्गं पित्तादेरुपलक्षयेत् ॥

अर्थ—स्थान और नाम इन के अनुरूप कहिये तुल्य ऐसे लक्षणों से शेष वातव्याधि जाननी. स्थानानुरूप कहिये जैसे कुक्षिशूल, नखभेद इत्यादिक. नामानुरूप कहिये जैसे शूल के कहने से कीलनिखातवत् पीडा जाननी उसी प्रकार तोदभेदादिकं करके भी पीडा विशेष जाननी चाहिये और पित्त, कफ, रुधिर इन के संसर्ग से द्विदोषजव्याधि जाननी चाहिये ॥

प्रथमं ह्रस्वकेशत्वं ततो वाचालतापि च । आटोपः पार्श्वशूलं
च पुरीपस्यातिगाढता ॥ तथा मलाप्रवृत्तिश्च कंपः स्तंभश्च
रूक्षता । काश्यं काष्ण्यं च शैत्यं च लोमहर्षो व्यथा तथा ॥
तोदोभेदः शिरास्फूर्तिरंगमर्दो गशुष्कता । संकोचश्चांगविभ्रंशो
मोहश्चंचलचित्तता ॥ निद्रानाशः स्वेदनाशो बलहानिश्च भी-
रुता । शुक्रक्षयो रजोनाशो गर्भनाशः परिश्रमः ॥ एवंविधानि
रूपाणि करोति कुपितोनिलः । हेतुस्थानविशेषेण भवेद्रोग-
विशेषकृत् ॥

अर्थ—अब वातभेद कहता हूँ. केश छोटे होना, बकवाद करना, गुडगुड शब्द, पार्श्वशूल, मल दृढ हो जाना, मल का अवरोध, कंप, निश्चल रहना, छत्तापन,

कृशपन, कालेपन, शीत होना, रोमांच, वेदना, शूल, भेद, शिराओं का फुरना, अंग का मर्दन, अंग सूख जाना, अंग सकोडना, अंगभ्रंश, मोह, मन की चंचलता, निद्रा का नाश, पसीने का नाश, बल की हानि, भय पाना, वीर्यक्षय, शुकृक्षय, गर्भ का नाश, श्रम इस प्रकार वायु कुपित होने से हेतु और स्थान इन के योग से अनेक प्रकार की व्याधि उत्पन्न करता है ॥

चिकित्सा

सामान्यवातरोगाणां या चिकित्सा प्रवर्तते ।

एषां सैव विधातव्या ततस्ते यांति संक्षयम् ॥

अर्थ—सामान्यवातरोगों पर जो चिकित्सा कही है वोही चिकित्सा ह्रस्वकेशादि वातोंपर करे तो इन सब का नाश होय ॥

लशुनसेवन

अन्नप्रकारैः पल्लप्रकारैर्गोधूमकैर्वा यवसक्तुभिर्वा ।

दुग्धेन तैलेन घृतेन चापि युक्तानि शीते लशुनानि खादेत् ॥

अर्थ—भोजन करने के जो पदार्थ (रोटी, दाल, भात इत्यादिक) अथवा मांस के पदार्थों से किंवा गेहूं, जौ, सज्ज, दूध, तेल और घी इन के साथ शीत दूर करने को लहसन भक्षण करे ॥

शुंज्यादिकाढा

विश्वैरंडशिफादारुगुडूचीसहचरास्तथा ।

एतत्काथोस्ति संधिस्थं वातं हन्ति निपेवितः ॥

अर्थ—सोंठ, अंड की जड़, देवदारु, गिलोय और पियावांसो इन का काढा सेवन करने से अस्थिगत और संधिगत वायु को नाश करे ॥

दशमूलादिकाढा

दशमूलीकपायेण पिषेद्वा नागरांभसा ।

कटिशूलेषु सर्वेषु तैलमैरंडसंभवम् ॥

अर्थ—दशमूल के काढे से अथवा सोंठ के काढे से अंडी का तेल पीवे तो कमर में जो दर्द होता है वह सब नष्ट होय ॥

कटिवातपर लड्डू

आलिषं खाखसं खाद्यं खर्जूरं मेथिका तिलाः । मिशिद्वयं च

भल्लास्थि वातामं वव्वुलं तथा ॥ सारं चैव पलं ग्राह्यं गुडो
द्विकुडवस्तथा । घृतं द्विकुडवं चैवलडुकान् कारयेद्विषक् ॥
द्विकर्षं भक्षयेत्प्रातः कट्वातविनाशनम् । धातुस्तंभं धातु-
वृद्धिं कुरुते नात्र संशयः ॥

अर्थ—आलिव, ससखस, खजूर, मेथी, तिल, सोंफ, बडीसोंफ, भिलाए की गुठली, बदाम, गोंद और चिरोंजी प्रत्येक चार २ तोले छेवे. गुड और घी ये प्रत्येक ३२ तोले डाले. सब को एकजीव कर दो दो तोले के लड्डू बनावे. इस में से प्रातः-काल एक भक्षण करे-तो कमर की वायु को नाश करे तथा धातु का स्तंभन करे और धातु की वृद्धि करे इस में संदेह नहीं है ॥

ऊरुस्तंभपर सामान्यविशेषचिकित्सा

ऊरुस्तंभं जयेद्रूक्षस्वेदमर्दनकौशिकैः । पिप्पली पिप्पलीमूलं
भल्लातकफलानि च ॥ एतत्कल्कश्च सक्षौद्र ऊरुस्तंभनिवारणः ॥

अर्थ—ऊरुस्तंभ व्याधिको रूक्षस्वेद, मर्दन और गूगल सेवन करना इन उपायों से शमन करे. तथा पीपल, पीपरामूल और भिलाए इन के कल्क को सहत के साथ देवे तो ऊरुस्तंभ को दूर करे ॥

सामान्यसंज्ञा

वामनत्वांगसंकोचभंगभेदग्रहव्यथाः । मर्दनैर्वस्तिभिः क्वाथैः
स्वेदनैश्च भिषक् जयेत् ॥ अपतानत्रणायामो स्नेहैर्व्रणकि-
त्सितैः । अंगरौक्ष्यस्तंभकंपकार्श्यं कपिशतोदनैः ॥ दौर्बल्य-
स्फुरणे भ्रंशो स्नेहैर्मर्दनमिष्यते । शुक्रकार्श्यं शुक्रनाशे शुक्रस्या-
त्तिप्रवर्तने ॥ विड्यग्रहे वद्धविट्के च स्नेहपानं हितं मतम् ॥

अर्थ—वामन (बोनापना), अंगों का संकोच (कुचडापना), देह में पीडा तथा अंगों का जकड़ जाना इत्यादिकों को मर्दन, वस्ति, काटे इत्यादिक देना पसीने निकालना इत्यादि उपायों से जीते और अपतान, तथा त्रणायाम इन को स्नेह और त्रणचिकित्सा करके दूर करे तथा अंगों की रूक्षता, अंगस्तंभ, कंप, कृशता, देह की कालीच, पीडा, दुर्बलता, अंगस्फुरण और अंगभ्रंश इनपर स्नेहादिक का मर्दन करे और धातुक्षीण, धातुनाश, धातु का अत्यंत गिरना, विट्ग्रह और वद्धविट्क इनपर स्नेहपान हितकारी तथा मान्य है ॥

ऊर्ध्ववातलक्षण

अधः प्रतिहतो वायुः श्लेष्मणा मारुतेन च ।

करोत्युद्गारबाहुल्यमूर्ध्ववातः स उच्यते ॥

अर्थ—कफवात करके पीडित नीचे की वायु ढकार बहुत लावे उस वात को ऊर्ध्व कहते हैं, परंतु टोडरानंद ने कुछ विलक्षण लिखा है ॥

शुंज्यादिचूर्ण

भागा दश विश्वायास्तत्तुल्या वृद्धदारुकस्यापि । पथ्यात्र पंच-
भागा चतुरंशं हिंयु संभृष्टम् ॥ एकः सैंधवभागस्तत्तुल्यं चित्रकं
चात्र । संवृद्धमूर्ध्ववातं हंत्येतच्चूर्णितं भुक्तम् ॥

अर्थ—सोंठ और विषायरो दोनों दश दश तोले, हरड पांच तोले, भूनी हींग चार तोले, सैंधानिमक, और चित्रक एक २ तोले इन सब का चूर्ण तयार करके सेवन करे तो अत्यंत बढी हुई ऊर्ध्ववात (बहुत ढकारों का आना) नाश होय ॥

शामामूलं क्षीरपिष्टं निपीतं वासायुक्तं नाशयेदूर्ध्ववातम् ॥

अर्थ—पीपरा के मूल को दूध में पीसके उस में अदूसे का रस ढालके देवे तो ऊर्ध्ववात का नाश करे ॥

त्रिकशूललक्षण

स्फिक्सक्त्रोः पृष्ठवंशाश्चोर्ध्वः संधिस्तत्रिकं स्मृतम् ।

तत्र वातेन या पीडा त्रिकशूलं तदुच्यते ॥

अर्थ—गले के समीप और कटि के त्रिक में जो वायु से शूल होता है उस को त्रिकशूल कहते हैं ॥

चिकित्सा

कारयेद्बालुकास्वेदं त्रिकशूली प्रयत्नतः ।

खट्वाधस्तत्करीपार्णि धारयेत्सततं नरः ॥

अर्थ—त्रिकशूल रोगवाले रोगी के बालू से सेक करे और खट के नीचे अग्नि रखकर सोवे कि जिस से कमर में सेक पहुँचे इस प्रकार करने से त्रिकपीडा दूर होय ॥

आभादित्रयोदशांगुगुलु

आभाश्वगंधाहपुपा गुडूची शतावरी गोक्षुरकश्च रास्त्रा । श्या-
मा शताह्वा च शठी यवानी सनागरा चेति समं विचूर्ण्य ॥

सर्वैः समं गुग्गुलुमत्र दद्यात्क्षिपेदिहाज्यं च तदर्धभागम् । तद्भ्र-
क्षयेदर्धपिचुप्रमाणं प्रभातकाले सुरयाऽथ यूपैः ॥ मद्येन वा को-
ष्णजलेन वाथ क्षीरेण वा मांसरसेन वापि । त्रिकग्रहे जानुहनुग्रहे
च वाते भुजस्थे चरणस्थिते च ॥ संधिस्थिते चास्थिगते च
तस्मिन्मज्जास्थिते स्नायुगते च कोष्ठे । रोगान् हरेद्वातकफानु-
विद्धान्वातेरितान्हेद्ग्रहयोनिदोषान् ॥ भग्नास्थिविद्धेषु च खंज-
तायां सगृध्रसीके खलु पक्षवाते । महौषधं गुग्गुलुमेतमाहुस्त्र-
योदशांगं भिपजः पुराणाः ॥

अर्थ—बनूर के बीज, असगंध, हौडवेर, गिलोय, सत्तावर, गोखरू, रास्ता, पीपल
सोंफ, कचूर, अजमायन, और सोंठ इन सब का समान भाग चूर्ण करे और स
चूर्ण के बराबर शुद्ध करी हुई गूगल डाले और गूगल से आधा घी डाले तो य
सिद्ध होय. इस में से एक २ तोले की गोली बनावे. एक गोली प्रातःकाल सु
(मद्य) के साथ अथवा यूप के साथ अथवा मद्य के साथ गरमजल, दूध अथवा
मांसरस इन से कीसी एक साथ सेवन करे तो त्रिकपीडा, जानुग्रह (घोटुओं का र
जाना), भुज की वात, चरण की वात, स्नायुगत, कोष्ठगत और वातकफ से उत्प
व्याधि, वातजन्य हृदय का शूल, योनिदोष, भग्नास्थि, टूटी हुई हड्डी, खंजवात
गृध्रसी, पक्षवात इन सब को नाश करे यह त्रयोदशांग गूगल महौषधी है. ऐं
पूर्वाचार्यों ने कहा है ॥

रसोनाएक

रसोनपक्ककंदस्य गुलिका निस्तुपीकृताः । पाटयित्वा च मध्यस्थं
दूरीकुर्यात्तदंकुरम् ॥ निश्युग्रगंधनाशाय दध्ना संनीय रक्षयेत् ।
ततः प्रक्षाल्य संशोष्य शिलायां परिपेपयेत् ॥ कल्कस्य पंचमं
भागं चूर्णमेपां विनिःक्षिपेत् । सौवर्चलं यवानी च भर्जितं हिंशु
सैधवम् ॥ कटुत्रिकं जीरकं च समभागं विचूर्णयेत् । तिलतैलं
च कल्कस्य तुर्यांशं तत्र मिश्रयेत् ॥ खादेत्कर्पमितं प्रातः
किंवा दोषाद्यपेक्षया । अनुपानं प्रकुर्वीत वातारिथृतमन्वहम् ॥
सर्वांगैकांगजं वातमर्दितं चापतंत्रकम् । अपस्मारं तथोन्माद-
मूरुस्तंभं च गृध्रसीम् ॥ उरःपृष्ठकटीपाश्वकुक्षिपीडां कृमीन्द्-

रेत् । मद्यं मांसं तथा म्लं च रसं सेवेत नित्यशः ॥ व्यायाममा-
तपं रोपमतिनीरं गुडं स्त्रियम् । रसोनमश्रन्पुरूपस्त्यजेदेतन्निरं-
तरम् ॥ वर्जयेत्तदतीसारी प्रमेही पांडुरोगवान् । अरोचकी
गर्भिणी च मूर्च्छाशोरोरोगसंयुतः ॥ रक्तापिती च शोपी च यक्ष्मी
छर्द्यार्दितो नरः । पित्ते तु पथ्यया कुर्यात् प्रयोगांते विरेचनम् ॥
अन्यथा तस्य जायंते कुष्ठपांड्वामयादयः । स्त्रीस्तन्यांतरितं
दद्याद्रालानामप्यनिच्छताम् ॥ तथापि लभते सिद्धिं महावीर्या-
द्रसोनतः ॥

अर्थ—पकी हुई लहसन की गांठ के छिलके दूर कर टुकड़े करे और भीतर जो
उन के अंकुर हैं उस को निकालके फेंक देवे. फिर इस की घोर गंध नाश करने को
रात्रि के समय दही में भिगोय देवे. प्रातःकाल धोय स्वच्छ करके पौछ लेवे. फिर
इस को सिलापर पीसके कल्क कर लेवे. इस कल्क में संचरनिमक, अजमायन,
भूनी हुई हॉंग, सैधानिमक, सांठ, मिरच, पीपल और जीरा इन का समान भाग
चूर्ण करके कल्क का पंचमांश मिलावे. तथा तिल का तेल कल्क का चतुर्थांश डाल
के सब को एकत्र करके प्रातःकाल एक तोले भक्षण करे अथवा दोप और बल
विचार करके मात्रा देवे. और ऊपर से अंड की जड का काटा पीवे तो सर्वांग तथा
एकांगगत वात, अर्दित, अपतंत्रक, अपस्मार, उन्माद, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, उर, पीठ, कमर,
पसवाडा और कूख, इन की पीडा तथा कृमिरोग इन का नाश करे. इस औषध के
सेवन करनेवाले को मद्य, मांस, अम्ल (खट्टा) रस ये जरूर २ सेवन करने चाहिये और
व्यायाम, धूप, क्रोध, बहुत जल का पीना, गुड, स्त्रीसेवन ये लहसन खानेवाले को कदा-
चित् नहीं करने चाहिये. यह औषध अतिसारी, प्रमेही, पांडुरोगी, अरोचकी, गर्भिणी,
मूर्च्छावान्, अर्शरोगी, रक्तापित्तवान्, क्षयरोगी, शोषशाला, वमन का रोगी इन को कदा-
चित् नहीं खानी चाहिये. यदि इस औषध के सेवन करने से पित्त की प्रकृता होवे
तो छोटी हरड खाकर दस्त करावे. यदि बड़े हुए पित्त में यदि दस्त न लेवे तो
कुष्ठ और पांडु इत्यादि रोग होते हैं स्त्री के दूध से जो बालक न पीता हो उस को
पिलावे. इस रसोनाष्टक औषध सेवन करने से रोगशांति होय ॥

व्रणायाम कहते हैं

मर्माश्रितं व्रणं प्राप्य वायुर्यः सर्वदेहगः ।

वेगैरानामयेदेहं व्रणायामं तु तं त्यजेत् ॥

अर्थ—सर्वशरीरगत वात मर्मस्थान के व्रण में जाकर अपने वेग से देह को नष्ट करता है तिस को व्रणायाम कहते हैं. वह असाध्य समझना ॥

हृदयं यदि वा पृष्ठमुन्नतं क्रमितः सह ।

क्रुद्धो वायुर्यदा कुर्यात्तदा तं कुब्जमादिशेत् ॥

अर्थ—हृदय वा पीठ ये क्रुद्ध होके ऊंचे होते हैं उस को कुब्ज कहते हैं ॥

कृच्छ्रसाध्यत्व

हनुस्तंभार्दिताक्षेपपक्षाघातापतानकाः । कालेन महता वाता
यन्नात्सिध्यन्ति वा न वा ॥ नवान्वलवतस्त्वेतान्साधयेन्निरूप-
द्रवान् ॥

अर्थ—हनुस्तंभ, अर्दित, आक्षेप, पक्षाघात, अपतानक ये वातव्याधि बहुत दिन में बड़े परिश्रम से और यत्न से साध्य होती हैं. अथवा कभी साध्य नहीं होय. परंतु बलवान् पुरुष के ये वातव्याधि नई प्रगट भई हो और उपद्रवरहित होय तौ उस की चिकित्सा करनी चाहिये ॥

वातरोग के असाध्यत्व

विसर्पदाहरुक्संगमूर्च्छारुच्यग्निमार्दवैः । क्षीणमांसवलं वातात्
घ्नन्ति पक्षवधादयः ॥ शूनं सुप्तत्वचं भग्नं कंपाध्मानानिपीडितम् ।
रुजार्तिमंतं च नरं वातव्याधिर्विनाशयेत् ॥ अव्याहतगतिर्यस्य
स्थानस्थः प्रकृतिस्थितः । वायुः स्यात्सोधिकं जीवेद्धीतरोगः
समाः शतम् ॥

अर्थ—विसर्परोग, दाह, शूल, मलमूत्र का निरोध, मूर्च्छा, अराचि, मंदाग्नि इन् लक्षणयुक्त जो होय और बलक्षीण होय ऐसे पुरुषों को पक्षवधादिक विकार मारक अर्थात् प्राण के हरणकर्ता होते हैं ॥ शूननवाला, जिस की त्वचा सोड़ गई होय अर्थात् जिस को स्पर्श होने का ज्ञान न होय, जिस की हड्डी टूट गई होय, कंफ और अफरा इन से अत्यन्त पीडित होय, रुजा और आर्ति कहिये शूलयुक्त ऐसे मनुष्य को यह वातव्याधिरोग नाश करता है जिस पुरुष की वायु अव्याहतगति और अपने आश्रय से रहनेवाली और प्रकृतिस्थित कहिये न वृद्ध न क्षीण होय, वह पुरुष निरोधी होकर (अधिकं समाः शतं) कहिये एक सौ बीस वर्ष और पांच दिन पर्यंत जीवे ॥

वत्तिसीकाढा

रास्ना गुडूची ह्येरंडो देवाह्वा चाभया सठी । वलोग्रगंधा पाठा
 च शतपुष्पा पुनर्नवा ॥ पंचमूली विपा मुंडी सौर्यकश्च दुरा-
 लभा । यवानी पौष्करं मूलमश्वगंधा प्रसारिणी ॥ गोक्षुरं चा-
 टरूपं च वपुषा वृद्धदारुकम् । शतावरी तथा ब्राह्मी गुग्गुली
 क्षीरकंचुका ॥ समभागैरिमैः सर्वैः कपायमुपकल्पयेत् । कृष्णा-
 चूर्णेन वा योगराजगुग्गुलुनाथ वा ॥ अजमोदादिना वापि
 तैलेनैरंडजेन वा । वातरोगेषु सर्वेषु कफशोपेपतानके ॥ म-
 न्यास्तंभे तथा शोपे पक्षाघाते सुदारुणे । अर्दिताक्षेपकुब्जे च
 हनुग्रहस्वरग्रहे ॥ आढ्यवाते तथा भूके खंजे चैवाववाहुके ।
 गृध्रस्यां जानुभेदे च गुल्मे शूले कटिग्रहे ॥ सामे चैव निरामे
 च सप्तधातुगतेनिले । आवृते चानावृते च वातरक्ते विशे-
 पतः ॥ एष द्वात्रिंशकः काथः कृष्णात्रेयेण भापितः ॥

अर्थ—रास्ना, गिलोय, अंड की जड़, देवदारु, हरड, कचूर, खिरेटी, वच, पाठ,
 िफ, पुनर्नवा, पंचमूल, अतिविप (अतीस), गोरखमुंडी, विजसार, धमासा, अजमा-
 न, पोहकरमूल, असगंध, प्रसारणी, गोरख, अडूसा, कांटेदार खिरनी, विधायरो,
 तावर ब्राह्मी, गुग्गुल, और क्षीरकंचुका इन सब को समानभाग लेकर काथ
 नावे। इस में पीपल का चूर्ण अथवा योगराजगुग्गुल अथवा अजमोदादि चूर्ण
 अथवा अंडी के तेल के साथ पीवे। यह संपूर्णवादी के रोग, कफशोप, प्रतानकवायु,
 न्यास्तंभ, शोप, घोरपक्षाघात, अर्दितरोग, आक्षेपक, कुब्ज, हनुग्रह, स्वरग्रह, आ-
 षवात, मूल, खंज, अववाहुक, गृध्रसी, घोटुओं की पीडा, गोलें का रोग, शूलरोग,
 मर का दर्द, साम और निराम ऐसी सप्तधातुगत वायु, आवृत अनावृत और वातरक्त
 नपर देवे तो सब को नष्ट करे। यह द्वात्रिंशक काढा कृष्णात्रेयनामक ऋषि ने कहा है ॥

लघुरास्नादिकाढा

रास्नागुडूचीवातारिदेवदारुमहोपधैः ।

पिपेत्सर्वांगिके वाते समजास्थिसमांसगे ॥

अर्थ—रास्ना, गिलोय, अंड की जड़, देवदारु और सोंठ इन को समभाग ले,
 ाढा करके पीवे तो सर्वांगवात, मज्जागत वात, अस्थिगत वात और मांसगत वात
 ते दूर करे ॥

कुष्ठादिचूर्ण

कुष्ठकेंद्रयवा पाठा पावकोतिविषा निशा ।

एतेषां चूर्णमुष्णांबुपीतं हंत्यनिलान्वहून् ॥

अर्थ—कूठ, इंद्रजो, पाठ, चित्रक की छाल, अतीस और हलदी इन का बारीक चूर्ण करके गरम जल के साथ पीवे तो अनेक प्रकार की वायु दूर करे ॥

शुंठ्यादिचूर्ण

शुंठीमरिचदारूणां चूर्णं काथस्य पानतः ।

सर्वे वाता विनश्यन्ति देहोपद्रवकारिणः ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच और देवदारू इन का चूर्ण कर इन्ही के काठे के साथ देवे तो देह में उपद्रव करनेवाले संपूर्ण वादियों को नष्ट करे ॥

रास्नादिचूर्ण

रास्ना पुनर्नवा शुंठी गुडूच्येरंडजं शृतम् ।

सप्तधातुगते वाते वाते सर्वांगगे पिबेत् ॥

अर्थ—रास्ना, पुनर्नवा, सोंठ, गिलोय और अंड की जड़ इन का काढा सप्तधातुगते वात, आमवात और सर्वांगवात इनपर देवे ॥

द्वात्रिंशकगुग्गुलु

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडंगं चव्यचित्रकौ । वचैला पिप्पली-
मूलं हृषुपा सुरदारु च ॥ तुंबरुं पौष्करं कुष्ठं विषा च रजनी-
द्वयम् । वाष्पिका जीरकं शुंठी शतपत्रा डुरालभा ॥ सौवर्चलं
विडंगं च क्षारौ द्विरदपिप्पली । सैधवं च समानेन तुल्यं दत्त्वा च
गुग्गुलुम् ॥ साधयित्वा विधानेन कोलमात्रां वर्टीं चरेत् । घृतेन
मधुना वापि भक्षयेत्तामहर्मुखे ॥ आमं हन्यादुदावर्तमंत्रवृद्धिं
गुदकृमीन् । महाज्वरोपसृष्टानां भूतोपहतचेतसाम् ॥ आनाहो-
न्मादकुष्ठानि पार्श्वशूलहृदामयान् । गृध्रसीं च हनुस्तंभं पक्षा-
घातापतानकान् ॥ शोफपीडानमत्युग्रं कामलामपर्ची तथा ।
नाम्ना द्वात्रिंशको ह्येष गुग्गुलुः कथितो महान् ॥ धन्वंतारिकृतो
योगः सर्वरोगनिवृत्तनः ॥

अर्ध-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोया, वायविडंग, चव्य, चित्रक, दालचीनी, इलायची, पीपरामूल, हळुवेर, देवदार, तुंबळ, पोहकर-मूल, कूठ, असीस, दारुहलदी, हलदी, बबूर, जीरा, सोंठ, कमल, धमासा, संचर-निमक, वायविडंग, सजीखार, जवाखार, गजपीपल और संधानिमक ये सब एक २ भाग लेवे और सब की बराबर गुग्गुलु लेय सब विधिपूर्वक सिद्ध करके बेर के गुटिका समान करके इस को घृत अथवा सहत के संग प्रातःकाल खाय तो आम, उदावर्त, अंत्रवृद्धि, गुदा की कृमि इन को नाश करे तथा महाज्वर से पीडित, भूतबाधावाला, अनाह, उन्माद, कोठ, पसवाडे का शूल, हृदयरोग, गृध्रसी, हनुस्तंभ, पक्षाघात, अपतानक, शोफ, ग्रीहा, कामला और अपची इन सब रोगवाओं को हितकारी है- इस को बड़ा द्वात्रिंशनामा गुग्गुलु कहते हैं- यह धन्वंतरी का करा हुआ है ॥

योगराजगुग्गुलु वातादिरोगोपर

नागरं पिप्पली चव्यं पिप्पलीमूलचित्रकैः । भृष्टं हिंश्वजमोदं
च सर्पपा जीरकद्वयम् ॥ रेणुकेंद्रयवाः पाठा विडंगं गजपिप्पली ।
कटुकार्तिविपा भार्ङ्गी वचा मूर्ध्वेति भागतः ॥ प्रत्येकं शाणि-
कानि स्युर्द्रव्याणोमानि विंशतिः ॥ द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रि-
फला द्विगुणा भवेत् ॥ एभिश्चूर्णीकृतैः सर्वैः समो देयस्तु
गुग्गुलुः । वंगं रौप्यं च नागं च लोहसारं तथाभ्रकम् ॥ मंडूरं
रससिंदूरं प्रत्येकं पलसंमितम् । गुडपाकसमं कृत्वा इमं दद्याद्य-
थोचितम् ॥ एकपिंडं ततः कृत्वा धारयेद्वृतभाजने । गुटिकाः
शाणमात्रास्तु कृत्वा ग्राह्या यथोचिताः ॥ गुग्गुलुयोगराजोपं
त्रिदोषघ्नो रसायनः । मैथुनाहारपानानां त्यागो नैवात्र विद्यते ॥
सर्वान्वातामयान्कुष्ठानशीति ग्रहणीगदम् । प्रमेहं वातरक्तं च
नाभिःशूलं भगंदरम् ॥ उदावर्तं क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ॥
मंदाग्निश्वासकासांश्च नाशयेदरुचिं तथा ॥ रेतोदोषहरः पुंसां
रजोदोषहरः स्त्रियाम् । पुंसामपत्यजनको वंप्यानां गर्भदस्तथा ॥
रास्त्रादिकाथसंयुक्तो विविधं हंति मारुतम् ॥ कांकोल्यादिश्रुता-
त्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥ दार्वीश्रुतेन मेहांश्च गोमूत्रेणैव पां-

डुताम् । मेदोवृद्धिं च मधुना कुण्डं निवशृतेन वा ॥ छिन्नाव
थेन वाताह्नं शोथं शूलं कणाश्रितात् । पाटलाक्वाथसहितो हि
मूषकजं जयेत् ॥ त्रिफलाक्वाथसहितो नेत्रार्तिं हन्ति दारुणाम्
पुनर्नवादेः क्वाथेन हन्यात्सर्वोदराण्यपि ॥

अर्थ—सॉठ, पीपल, चव्य, पीपरामूल, चित्रक, भुनी होंग, अजमोद, सरसो,
दोनो जीरे, रेणुक, इन्द्रियव, पाट, वायविडंग, गजपीपल, कुटकी, अतीस, भारंगी,
वच, मूर्वा ये बीस औषध एक एक शाण लेवे. और सब औषधों से दूना त्रिफला
लेवे. इन सब का चूर्ण करे तथा सब चूर्ण के बराबर शुद्ध हुआ गूगल मिला के सब
को बारीक करके गुड के पाक के समान पतला करके पूर्वोक्त चूर्ण मिलाय दे. फिर
वंगभस्म, रौप्यभस्म, नागभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, मंडूरभस्म और रसासिंदूर ये
सात भस्म एक एक पल लेवे. सब को उस गूगल में मिलाय देवे फिर सब को
कूटके एक जीवकर गोला बनाय लेवे फिर उस में से एक एक शाण की गोली बनावे
इन को घी के चिकने बरतन में भरके रख देवे इस को योगराज गूगल ऐसे
कहते हैं. यह गूगल के सेवन करने से त्रिदोष दूर होवे तथा यह रसायन है. इसपर
मैथुन और खाने पीने का निषेध नहीं है. विना पथ्य के भी गुण करे है इस से सर्व
प्रकार के वादी के रोग, कुष्ठ, बवासीर, संग्रहणी, प्रमेह, वातरक्त, नाभी का शूल,
भगंदर, उदावर्त्तवायु, क्षयरोग, गोला, अपस्मार, उरोग्रह, मंदाग्नि, खासी, श्वास और
अरुचि ये रोग दूर हों यह योगराज गूगल पुरुष के धातुविकारों को दूर करे स्त्रियों
के रजदोष को दूर करे पुरुषों की धातु बढ़ायके पुत्र देता है. वांश स्त्रियों को गर्भ
देय है रास्नादि काढे के साथ खाय तो अनेक प्रकार की वादी दूर हो. कांकोल्यादि
काढे के साथ सेवन करे तो पित्तरोग दूर हो आरग्वधादि काढे के साथ पांडुरोग दूर
हो शरीरमें मेद दुष्ट होकर शरीर बढने से सहत में मिलायके देवे कुष्ठरोग में निम
के काढे के साथ देवे रक्तवातपर गिलोय के काढे से । शूल और सूजन इनपर
पीपल के काढे से, मूषे के विषपर पाटल के काढे में देवे, नेत्ररोगपर त्रिफला के
काढे से, पुनर्नवादि काढे के साथ संपूर्ण उदररोगपर सेवन करे इस प्रकार
अनुपान जानना ॥

पडशीतिगुग्गुल

सैर्ययासविपा दारु व्याघ्रीयुक् चविका वृषः । कृष्णाद्दोश्राध-
नाभीरुवात्वालमिशिवल्लरी ॥ पथ्या शुंठी छिन्नरुहा शक्यार-
ग्वधगोक्षुरम् । विशाखा मोदकी तिक्तग्रंथिभाङ्गी विदारिका ॥

अलंबुषा हस्तिकर्णी वस्तगंधा विपाणिका । शिवाक्षं मुसली
 कौंती काकोली दीप्ययुग्मकम् ॥ त्रिवृद्धंती शिखी शृंगी को-
 किलाक्षो दुरालभा । पंचमूलं महद्भीरतरुः कुष्ठं च जौगकम् ॥
 जातिपत्रीफलैलं च केसरं त्वक् किरातकम् । कुंकुमं देवकुसुमं
 विशाला निशिसैंधवम् ॥ मंदारमूलं कृमिजिद्धेमदुग्धा रवि-
 प्रिया । गजपिप्पल्यपामार्गवानरी नक्तमूलकम् ॥ एतैः समा-
 रसा चाभा द्विगुणा तैः पुरः समः । सूतगंधकहिंशूलं टंकणं
 लोहमभ्रकम् ॥ शुल्वं वंगं सूतभस्म नागं ताप्यमयोरजः ।
 मीलितं पुरपादं च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ पचेच्चतुर्गुणे काथे पुरं
 पद्कडुजे पुरा । तुर्यांशशोपिते काथे पूते चात्र विनिक्षिपेत् ॥
 चूर्णानि पुरमुख्यानि पाचयेन्मृदुवह्निना । यावदनतरं तावद्द-
 टिकाः कारयेत्ततः ॥ स्वर्णप्रमाणाः सेव्यास्ता मधुसर्पिःसमन्वि-
 ताः । सप्तधातुगतान्वातान् शिरास्त्राण्यस्तिसंधिगान् ॥ सामा-
 त्रिरामान्संसृष्टान् श्लेष्मजान् हंति केवलान् । यद्भागमग्निमाद्यं
 च ज्वरं धातुगतं तथा ॥ गुल्मजानूरुकटूप्रोदरहृत्कुक्षिक-
 क्षगान् । अंसमन्याहनुश्रोत्रमूललाटाक्षिशंखगान् ॥ प्रमेहं मूत्र-
 कृच्छ्रं च शूलमाध्मानमश्मरीम् । किं पुनर्भेदकान्वातान्प्रत्यं-
 गस्थान् जयत्यलम् ॥ गुग्गुलुः पडशीतिवं नाम्ना भोजेन
 कीर्तितः । क्षीयमाणेन शिष्येण प्रार्थितेन पुनः पुनः ॥ स एष
 राजयोगोयं न देयो यस्य कस्यचित् । वत्सरेणास्य योगेन पं-
 टोपि प्रमदाप्रियः ॥ वाजीकरणमन्यच्च परं नास्माद्विशेषतः ।
 गुणोस्य सेवनात्रित्यं यः स्यात्स स्याद्द्वीमि किम् ॥

अर्ध-सपेद विपाणिका, पनासा, अनीस, देवदारु, कटेरी, परी कटेरी, चप्य,
 प्रुसा, पीपल, नागरमोषा, बच, धनिया, शनावर, कगरी, गोंफ, देवदारु, हरद,
 सैंध, गिलोय, कूर, अमलतास का गूदा, गोमरु, पुनर्ना, मोदकी, मुटकी,
 पीपामूल, भारंगी, विदारीकंद, मुंडी, कासाट्ट, अननोद, कांठ्यासिगी, सावरा,

मूसली, रेणुकबीज, काकोली, अजमायन, खुरासानी, अजमायन, निसोय, दंती, चित्रक, काकडासिंगी, तालमखाना, लाल धमासो, बडा पंचमूल, बेलतर, कूठ, काली अगर, जावित्री, जायफल, इलायची, नागकेशर, दालंचिनी, चिरायता, केशर लौंग, इंद्रायन, हलदी, सैधानिमक, मंदारमूल, वायविडंग, चोक, पाढ, गज पीपल, आंगा की जड, कौंच के बीज, कंजा की जड, सब औषध समान भा लेवे और सब को बराबर रासना, बबूर के बीज सब से दूने और इन सब क बराबर गूगल, पारा, गंधक, हिंगूल, सुहागा, लोहे की भस्म, अभ्रकभस्म, ताम्र, वंग रसासिंदूर, शीशा, सुवर्णमाक्षिक, मंडूर इन सब की भस्म गूगल की चतुर्थांश इ प्रकार सब का एकत्र कर पट्टकट्ट के काढे में गूगल शोधकर उस काढे को जब च तुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इस में ऊपर की संपूर्ण औषधों के चूर्ण को ढालके मंद २ अग्निपर पचन करे. जब गाढा हो जाय तब उतारके गोली बनाय लेवे. फिर इन को बलाबल विचारके सहत और धी इन के साथ देवे. तो सप्तधातु गत वात, शिरा, स्नायु, अस्थि और संधि इन की वायु सामवात, निरामवात, सत्रि पातजन्य वात, केवल स्नेहवात, क्षय, मंदाग्नि, धातुगत ज्वर, गोला, जानु, ऊरु, कमर, उर, हृदय, कूख, कंधा, मन्या, हनु, कान, भ्रुकुटि, ललाट, नेत्र, कनपटी, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शूल, अफरा और पथरी इन को नाश करे. तथा यह भेद करने वाली बात को जीते. तथा प्रत्यंग, वात को जीते. इस में संशय नहीं है. यह पट्टकट्टि नामक गूगल भोजराज ने अपने शिष्य क्षीण होनेवाले की प्रार्थना से रचा है, यह राजयोगरूप औषध जिस किसी को नहीं देनी चाहिये। एक वर्षपर्यंत सेवन करे तो नपुंसक भी स्त्रियों को प्रिय होय। इस से परे दूसरा प्रयोग वाजीकरण करता नहीं है। इस औषध के सेवन करने से जो गुण होते हैं उन को मैं क्या कहूँ कहे नहीं जावे ॥

विश्वाद्यगुग्गुलु

विश्वैरंडशिफाशुंठीदारुकुष्टं ससैधवम् । रास्त्रामृतोद्भवं चूर्णं
गुग्गुलुर्द्विगुणस्तथा ॥ एकैका गुटिका तस्य प्रत्यहं भक्षिता
सती । पथ्याशिनोतिवेगेन हंति विभ्रममारुतम् ॥

अर्थ—सॉठ, अंढ की जड, सॉठ, देवदार, कूठ, सॉठ, रासना और गिलोय ये सब समान लेवे तथा गूगल दूनी लेवे सब को एकत्र कर तोले २ की गोली बनावे। एक गोली नित्य भक्षण करे और पथ्य सेवन करे तो तत्काल विभ्रमसंज्ञक वात को दूर करे ॥

दूसरा प्रकार

शुंठीकणा कणामूलं विडंगं दारु सैधवम् । रास्ना वह्निर्यवानी
च मरिचोयभया समम् ॥ द्विगुणं गुग्गुलुशूर्णमाज्ययुक्तं
निहन्ति तान् । वातं विषूचिकां गुल्मं शूलं कंपं च गृध्रसीम् ॥

अर्थ—सोंठ, पीपरामूल, वायविडंग, देवदार, सैधानिमक, रासना, चीते की छाछ, अजमायन, काली मिरच, वच और हरड ये समानभाग ले और सब से दूनी गूगल ले सब को घी में सान के अनुमानमाफिक्र सेवन करे तो वादी, विषूचिका (हैजा), गुल्म पांच प्रकार का शूल और गृध्रसी इन को दूर करे ॥

रास्नादिगुग्गुलु

रास्नामृतैरंडसुराह्वविश्वं तुल्येन गाढं पुरुणा विमर्द्य ।

खादेत्समीरी सशिरोगदी च नाडीत्रणी चापि भगंदरी च ॥

अर्थ—रास्ना, गिलोय, अंड की जड, देवदारु और सोंठ समानभाग ले सब की बराबर शुद्ध गूगल डालके खरल करे इस को वादीवाला, मस्तकरोगी, नासूर और भगंदररोगी खाये तो आराम होवे ॥

दूसरी योगराजगुठी

नागरं पिप्पलीमूलं चव्यमूपणचित्रकम् । भृष्टहिंवाजमोदा च
सर्पपा जीरकद्वयम् ॥ रेणुकेंद्रयवा पाठा विडंगं गजपिप्पली ।
कटुकातिविषा भाङ्गी वचा सूर्वा च पत्रकम् ॥ देवदारु वचा
कुष्ठं रास्ना मुस्ता च सैधवम् । एला त्रिकंटकः पथ्या धान्यकं
च विभीतकम् ॥ धात्री च त्वगुशीरं च यवक्षारस्तिलान्यपि ।
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ यावंत्येतानि
सर्वाणि तावद्देयोत्र गुग्गुलुः । संमर्द्य सर्पिपा पश्चात्सर्वं संमि-
श्रयेच्च तत् ॥ एकपिंडं ततः कृत्वा धारयेद्दृतभाजने । गुट्टि-
काष्टंक्रमात्रास्तु खादेत्ताश्च यथोचिताः ॥ गुग्गुलुयोगराजोयं
महान् मुख्यो रसायनम् । मैथुनाहारपानानां नियमो नात्र
विद्यते ॥ सर्वान् वातामयान् हन्यादामवातमपस्मृतिम् । वात-
रक्तं तथा कुष्ठं तथा दुष्टव्रणानपि ॥ अर्शासि ग्रहणीरोगं श्लिह-

गुल्मोदराण्यपि । आनाहमग्निमांघं च श्वासं कासमरोचकम् ॥
 प्रमेहं नाभिशूलं च कृमिक्षयमुरोग्रहम् । शुक्रदोषमुदावर्तभगं-
 दरविनाशनः ॥ आदौ शाणोन्मितं खादेत्ततः कर्षार्धमात्रकम् ।
 ततः कर्षमिदं खादेद्गुगुलुं क्रमतो नरः ॥ दिनानां सप्तकं पूर्वं
 गुग्गुलुः शाणमावहेत् । द्वितीये कर्षमर्धं तु पूर्णकर्षं ततः प-
 रम् ॥ रास्नादिकाथसंयुक्तो सर्ववातामयान् हरेत् । कांकोल्या-
 दिशतात्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥ दार्वीशतेन मेहांश्च गोमू-
 त्रेण च पांडुताम् । मधुना मेदसो वृद्धिं कुष्टं निवश्रुतेन च ॥
 छिन्नाक्काथेन वातास्रं शूलं मूलकजं शृतम् । पाटलाक्काथ-
 सहितो विपं मूषकसंभवम् ॥ त्रिफलाक्काथसंयुक्तो दारुणा
 नेत्रवेदना । पुनर्नवादिकाथेन हन्ति सर्वोदराण्यपि ॥

अर्थ—सोंठ, पीपरामूल, चव्य, काली मिरच, चित्रक, भुनी हुई हिंग, अजमोद सरसों, सपेद जीरा, काला जीरा, रेणुक बीज, इन्द्रजौं, पाट, वायविडंग, गजप्रीपल कुटकी, अतीस, भारंगी, वच, मूर्वा, पत्रज, देवदारु, वच, कूठ, रास्ना, नागरमोथा संधानिमक, इलायची, गोखरू, हरड, धनिया, चहेडा, आवले, दालचीनी, खस जवाखार और तिल, ये सब समानभाग लेके बारीक चूर्ण करे और सब की बराबर शोधा हुआ गूगल लेवे. सब को वी डालके कूट लेवे सब एकजीव हो जावे तब एक चार २ मासे की गोली बनायके घी के चिकने वासन में भर के रख देवे. इस को यथोचित भक्षण करे. यह योगराजगूगल महान् मुख्य रसायन है. इसपर मैथुन करना, खट्टा, चिरपर खाने पीने की मनाही नहीं है. यह संपूर्ण वात के विकार, आमवात, अपस्मार, वातरक्त, कोड, दुष्टग्रण, बवासीर, संग्रहणी, ग्रीह, गोला, उदररोग, अफरा, मंदाग्नि, श्वास, खांसी, अरुचि, प्रमेह, नाभीशूल, कृमिरोग, क्षय, उरोग्रह, शुक्र के दोष, उदावर्त, और भगंदर, इन को नाश करे. प्रथम इस को ७ दिन चार २ मासे खाय फिर ७ दिन छः मासे फिर एक एक तोले सेवन करे । यह इस के खाने का क्रम है । इस को रास्ना के काटे से खाय तो सर्व वातविकारों को दूर करे कांकोल्यादि काटे के साथ सेवन करे तो पित्तरोगों को, अमलतास के काटे से कफ के रोगों को, दारुहलदी के काटे के साथ संपूर्ण प्रमेहों को, गोमूत्रद्वारा पांडुरोग को, सहत के साथ मेदरोग को नीम के काटे से कोड को, गिठोप के काटे से वातरक्त को, मूली के काटे से शूल रोग को, पाटल के काटे से सेवन करे

सो मूत्रे का विष दूर होवे. त्रिफले के काढे के साथ पीवे तो दारुण नेत्र की पीडाको शमन करे और पुनर्नवादि काढे के साथ सर्ष उदर के विकारों को नष्ट करे हैं ॥

रसोनसंधान

रसोनस्य तु तत्क्षुण्णं तदर्धं लुंचितास्तिलाः । पादे तु तत्रे ग-
व्यस्य पृष्ठे द्रव्यैस्तु संक्षिपेत् ॥ त्रिकटु धान्यकं चव्यं चित्रको
हस्तिपिप्पली । त्वगेला ग्रंथिकं पत्रं तालीसं च पलांशकम् ॥
शर्करायाः पलान्यष्टौ पंचाजाज्याः पलानि च । कृष्णाजाज्याश्च
चत्वारि मधूकस्य गुडस्य वा ॥ आर्द्रकस्य च चत्वारि सर्पि-
पोष्टौ प्रकल्पयेत् । तिलतैलस्य तावंतः सूक्तस्यापि च विंशतिः ॥
सिद्धार्थकस्य चत्वारि राजिकायास्तथैव च । कर्पप्रमाणं दा-
तव्यं रामठं लवणानि च ॥ एकीकृत्य दृढे भांडे धान्यराशौ
विनिःक्षिपेत् । द्वादशाहं समुद्धृत्य ततः खादेद्यथाबलम् ॥
सुरा सौवीरकं चैव मधुरं च पिबेदनु । जीर्णं यथेप्सितं भोज्यं
दधिपिष्टविवर्जितम् ॥ एकमासप्रयोगेण सर्ववातान् व्यपोहति ।
अशीतिं वातजान् रोगान् चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥ विंशतिश्चे-
ष्मजांश्चैव प्रमेहानां च विंशतिम् ॥ श्वयथौ योनिशूले च सर्वा-
न्यातान् व्यपोहति ॥ च्युतसंधेश्च भग्नस्य संधानकरणं भवेत् ।
बलवर्णकरं हृद्यं वृष्यं बीजविवर्धनम् ॥

अर्थ—लहसन को छीलके पीस लेवे फिर लहसन से आधे धुले हुए तिष्ठ मिलावे और उस का चतुर्थांश गौ की छाल मिलावे फिर इन में सोंठ, मिरच, पीपल, धानिया, चव्य, चित्रक, गजपीपल, तज, इलायची, पीपरामूल, पत्रज और तालीसपत्र ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे, मिश्री ३२ तोले ले, जीरा २० तोले ले, काला जीरा, मुलहठी, गुड और अदरस प्रत्येक १६ तोले लेवे, घी ३२ तोले, तिलों का तेल ३२ तोले, कांजी ४० तोले, सपेद सरसों १६ तोले, राई १६ तोले और हिंग तथा सब निमक एक तोले डाले सब को एकत्र कर किसी चिकने वासन में भरके धान की राशि में गाढ देवे जब १२ दिन बीत जावे तब निकाल अग्निबलविचार के खाने को देय और इन के ऊपर मद्य अथवा कांजी अथवा मधुर रस पीवे जब यह पच जावे तब दही और पिठी के पदार्थों को त्यागके जो इच्छा होवे सो साथ इस

प्रकार एक महिने पर्यंत सेवन करने से संपूर्ण वादी के रोग नष्ट होंगे, तथा अस्ती प्रकार के वातरोग, चालीस प्रकार के पित्तरोग और बीस प्रकार के कफरोग, बीस प्रकार की प्रमेह, सूजन, योनिशूल और संपूर्ण वातों को नाश करे तथा छूटी हुई संधी, टूटी हुई हड्डी आदि इन को अच्छा करे बल वर्ण इन को उत्पन्न करे तत्त्व हितकारक है तथा यह धातुओं को बढ़ाता और वृष्य है ॥

भुजंगीगुटिका

एषा कर्षमिता वटी सुघटिता जीर्णे गुडे युक्तितो द्विघ्नं दीप्य-
तुषं पलद्वयमितं शुंठी तथा तेजनी । भक्ष्यैकानिलरोगिणा घृ-
तयुता पथ्याशिना तत्वतो वातत्रातविनाशिनी सुमतिभिः
ख्याता भुजंगी वटी ॥

अर्थ—अजमायन का फूल १६ तोले तथा सोंठ और तेजबल ८ तोले इन का चूर्ण करके उस की पुराने गुड से युक्ति के साथ १० मासे की गोली बनावे, यह वातरोगी को घी के साथ खानी चाहिये और पथ्य से रहे तो यह वादी के समूह को नाश करे, इस को पंडितजन भुजंगीवटी कहते हैं ॥

दूसरा प्रकार

तेजोह्वाप्रस्थमेकं पयसि गजगुणे पाकयुक्त्या विपाच्य व्योषं
पथ्या शताह्वा कृमिरिपुमनलं ग्रंथिकं चाजमोदाम् । उग्रा कुष्ठा-
श्वगंधौ सुरतरुममृतं पालिकानि प्रदद्यात्सर्वान्वातान्वटीयं घृत-
मधुसहिता नास्ति भावान्करोति ॥

अर्थ—तेजबल ६४ तोले और दूध ५१२ तोले दोनों को मिलायके पाक के समान खोहा करे. उस में सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, शतावर, वायविडंग, चित्रक, पीपरा-मूल, अजमोद, वच, कूठ, असगंध, देवदार और घी ये प्रत्येक चार २ तोले डालके उस की गोली बनावे इस को सहत और घी इन के साथ बलाबल विचार के देवे तो सर्व वातव्याधियों का नाश करे ॥

निर्गुंड्यादिवटी

निर्गुंडी दीप्यकं वह्निर्हरिद्रा विश्वभेषजम् ।

तक्रकांजिकसंपक्वं वातघ्नं वह्निवर्धनम् ॥

अर्थ—निर्गुंडी, अजमायन, चित्रक, हलदी और सोंठ इन के छाल और कांजाने पचाय के सेवन करे तो यह वातनाशक और अग्निवर्द्धक है ॥

कणादिगुटी

कणामूलं कणा दारु विडंगं वह्निसैधवम् । सपुष्पा ह्यजमोदा च
मरीचं समचूर्णकम् ॥ गुडाचितस्य तस्याथ गुटिका एकविं-
शतिः । भक्षितास्तास्त्रिसप्ताहं मारुतं घ्नन्ति सर्वतः ॥

अर्थ-पीपरामूल, पीपल, देवदारु, वायविडंग, चित्रक, सैधानिमक, अजमायन का फूल, अजमोद और मिरच ये समान भाग लेवे, चूर्ण करके गुड मिलाय एकजीव करके २१ गोली कर लेवे, नित्यप्रति एक गोली भक्षण करे तो सर्व वातव्याधि को नाश करे ॥

अमरसुंदरवटी

त्रिकटु त्रिफला चैव ग्रंथिका रेणुकानलम् । मृतलोहं चतुर्जातं
पारदं गंधकं विपम् ॥ विडंगा कलकं मुस्ता सर्वेभ्यो द्विगुणो
गुडः । चणकप्रमाणगुटिका नाम्ना अमरसुंदरी ॥ अपस्मारे स-
न्निपाते श्वासे कासे गुदामये । अशीतिवातरोगेषु उन्मादेषु
विशेषतः ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, पीपरामूल, रेणुकबीज, चित्रक, लोहे की भस्म, पत्रज, इलायची, दालचीनी, नागकेशर, पारा, गंधक, सिंगियाविप, वायविडंग, अकरकरा और मोथा सब समानभाग ले और सब से दूना गुड डाले, फिर चने के प्रमाण गोली बना ले यह अमरसुंदरी गुटिका अपस्मार, सन्निपात, श्वास, खांसी, गुदा के रोग, अस्ती प्रकार की वादी और उन्मादरोग इन सब को दूर करे ॥

अजमोदादिवटी

अजमोदा कणा वेल्लं शतपुष्पा सनागरम् । मारिचं सैधवादेव
भागैकं च पृथक् पृथक् ॥ पंचभागा हरीतक्याः शुंठी च दश-
भागिका । वृद्धदारुर्दशांशः स्यात्पट्टत्रिंशद्भभागिकाः ॥ गुड-
पाकैर्वटीं कृत्वा मात्रा कर्पप्रमाणतः । संधिवाते प्रदेयं तदाम-
वाते सुदारुणे ॥ उष्णोदकानुपानेन सर्ववातान्निघ्नच्छति । आन्व-
वाते हनुस्तंभे शिरोवातापतानके ॥ भूशंखकर्णनासाक्षिजिह्वा-

स्तंभे च दारुणे । कलायखंजतापंगुसर्वाङ्गैकाङ्गमारुते ॥ अर्दिते
पादहर्षे च पक्षाघाते प्रशस्यते ॥

अर्थ—अजमायन, पीपल, वायविडंग, सोंफ, नागरमोया, मिरच और सैंधानिमड़
ये प्रत्येक एक एक भाग, हरड ५ भाग, सोंठ १० भाग, विधायरो १० भाग और
भारंगी ३६ भाग इस प्रकार सब औषधी लेकर चूर्ण करके गुडके पाक में मिलायके
गोली बनाय लेवे. इस गोली को गरम जल के साथ सेवन करे तो संधिवात, आमवात,
संपूर्णवात, आढ्यवात, हनुस्तंभ, शिरोवात, अपतानक वात तथा भ्रुकुट, कनपटी,
कान, नाक, नेत्र और जीभ इन का स्तंभ, कलायखंज, पंगुवात, सर्वाङ्गवात, एकाङ्गवात,
अर्दितवात, पादहर्ष और पक्षाघात इन के दूर करने में श्रेष्ठ है ॥

लघुराजमृगाङ्क

घृततीक्ष्णयुतः सुरसास्वरसो लघुराजमृगाङ्क इति प्रथितः ।

अपहंत्यनिलान् सबलान् बहलान्निजभक्तमलानिव चक्रधरः ॥

अर्थ—काली मिरचों का चूर्ण, घी और तुलसी का रस इस को लघुराज
मृगाङ्क कहते हैं. यह संपूर्ण वातरोगों को नाश करे जैसे भगवान् अपने भक्त
पातक दूर करे इसी प्रकार यह रोगों को नाश करे ॥

चूर्णाः कपाया गुटिका घृतानि तैलानि भाग्येन वियोजितानाम् ।

विलासिनां वातविनाशनाय विलासिनीनां परिरंभणानि ॥

अर्थ—चूर्ण, काय, गोली, घृत और तेल इन की योजना करने से न बन स
तो यह विलासी पुरुषों के वातव्याधि नाश करने को सुंदररूपवती स्त्रियों
आलिंगन करना ही ठीक है ॥

दूसरा एरंडपाक

निस्तुपं बीजमैरंडं पयस्यष्टगुणे पचेत् । तस्मिन् पयसि सं-

शोष्य तद्वीजं परिपेपयेत् ॥ पश्चाद्दृतेन संयुक्तं संपचेन्मृदुव-

ह्निना । कटुत्रिकं लवंगं च एलात्वक् पत्रकेसरम् ॥ अश्वगंधा

शिफा रास्ना पद्मगंधा रेणुका वरी । लोहं पुनर्नवा श्यामा

उशीरं जातिपत्रकम् ॥ जातीफलमभ्रकं च सूक्ष्मचूर्णं तु कार-

येत् । शीतीभूतेवलेहोयं तस्मिन् खंडसमोदयम् ॥ वातारि-

पाकनामायं प्रातरुत्थाय भक्षयेत् । अशीतिवातरोगांश्च

चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥ उदराणि तथा चाष्टौ स्वयं
रोगान्निहन्ति च । विंशतिं मेहजान् रोगान् षष्टिनाडीव्रणानि च ॥
हंत्यष्टादश कुष्ठानि क्षयरोगांश्च सप्त च । पंचैव पांडुरोगांश्च
पंच श्वासान् प्रणाशयेत् ॥ चतुरो ग्रहणीरोगान् दृष्टिरोगं गल-
ग्रहम् । अनेकवातरोगांश्च तान् सर्वांश्च विनाशयेत् ॥ शुक्ल-
पाकमिदं ख्यातं सर्वरोगनिवारकम् ॥

अर्थ—छीले हुए अंडी के बीजों को अठगुने दूधमें औटावे. जब दूध का खोहा हो जावे तब उतारके उन बीजों को पीस डाले. फिर इन को घी में डालके मधुरी आग्निसे पचावे और सोंठ, मिरच, पीपल, लौंग, इलायची, दालचीनी, पत्रज, नागकेशर, अस-
गंध, रास्ना, पङ्गुधा, रेणुकबीज, सतावर, लोहभस्म, पुनर्नवा, हरड, खस, जावित्री, जायफल, अभ्रक की भस्म इन सब को मिलायके बारीक चूर्ण कर उस पाक में डाल देवे. फिर आग्निपर से उतार ले. जब शीतल हो जावे तब उस खोहे को अलग धर ले और खोहे की बराबर मिश्री की चासनी कर इस में पूर्वोक्त खोहा मिलाय के पाक बनाय लेवे. यह वातारिपाक प्रातःकाल उठके नित्य भक्षण करे तो अस्सी प्रकार के वातरोग, चालीस प्रकार के पित्तरोग, आठ प्रकार के उदर, बीस प्रकार की प्रमेह, साठ प्रकार के नाडी व्रण, अठारह प्रकार के कुष्ठ, सात प्रकार के क्षयरोग, पांच प्रकार के पांडुरोग और श्वासरोग, चार प्रकार की संग्रहणी, दृष्टिरोग, गलग्रह, अनेक प्रकार के वातरोग इन सब को यह दूर करे. इस को शुक्लपाक कहते हैं ॥

एरंडपाक

वातारिबीजं प्रस्थं तु सुपक्वं निस्तुपीकृतम् । क्षीरद्रोणार्द्धसंयुक्तं
भिषग्मंदाग्निना पचेत् ॥ घृतप्रस्थार्द्धयुक् पक्वं खंडप्रस्थद्वयं
क्षिपेत् । त्र्यूपणं सचतुर्जातं ग्रंथिकं वह्निचव्यकम् ॥ शत्रा
मिशी शठी विल्वदीप्यौ जीरे निशायुगम् । अश्वगंधा बला पाठा
हपुषा वेल्हपुष्करम् ॥ श्वदंष्ट्रारुग्धरा दारुवेलेर्या वालुकावरी ।
एतानि पिचुमात्राणि चूर्णितानि विनिक्षिपेत् ॥ वातव्याधिं च
शूलं च शोफं वृद्धिं तथोदरम् । आनाहं वस्तिरुग्गुल्ममामवातं
कट्टियग्रहम् ॥ ऊरुग्रहं हनुस्तंभं नाशयेदपि योगतः ॥

अर्थ—६४ तोले अंडी के बीज लेकर छील लेवे फिर उन को ५१२ तोले दूध में डालके मंदाग्नि से पचन करे. फिर इस में ३२ तोले घी डालके भून लेवे और १२८ तोले मिश्री की चासनी करके उस खोहे में मिलाय देवे तथा सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, चित्रक, चव्य, सोंठ, कचूर, बेलगिरी, अजमायन, जीरा, काला जीरा, हलदी, दारुहलदी, असगंध, खिरेटी, पाठ, हैसवेर, वायविडंग, पुहकरमूल, गोखरू, कूठ, त्रिफला, देवदारु, विधायरा और सतावर ये सब एक एक तोले लेवे. सब का चूर्ण करके उसी पाक में डाल देवे. इस पाक के सेवन करने से वातव्याधि, शूल, सृजन, अंत्रवृद्धि, उदरविकार, अफरा, बस्तिशूल, गोला, आमवात, कमर की पीड़ा, ऊरुग्रह और हनुस्तंभ इन सब को यह नष्ट करे ॥

रसोनपाक

तेषूग्रगंधनाशाय रात्रौ तत्रे विनिःक्षिपेत् । प्रातर्निष्कास्य त-
त्पिप्पला ततो दुग्धे विपाचयेत् ॥ निस्तुपं लशुनं प्रस्थं क्षीरं प्रस्थ-
चतुष्टयम् । विपाच्य सांद्रीभूतेस्मिन् सर्पिपः कुडवं क्षिपेत् ॥
रास्ना वटी वृषा छिन्ना शठी विश्वा सुरद्रुमम् । वृद्धदारुकदी-
प्याग्निशताह्वा सपुनर्नवा ॥ फलत्रयं पिप्पली च कृमिघ्नः कर्प-
सम्मितम् । विचूर्ण्य शीते मधुनः कुडवं तत्र योजयेत् ॥ सितया
भक्षयेन्मात्रामाव्यवाते हनुग्रहे । आक्षेपकादिभ्यो च कट्यूरुस्तं-
भहृद्ग्रहे ॥ सर्वांगे संधिभंगे च वातजाशीतिरोगिणः । पथ्यो
लशुनपाकोयं वर्णायुःपुष्टिकारकः ॥

अर्थ—लहसन को छील टुकड़े करे उन की गंध दूर करने को रात्रि में छाछ में भिगोय देवे प्रातःकाल निकालके स्वच्छ जल से धोयके पीस डाले. फिर उस को गौ के घी में तल लेवे इस प्रकार भूनी हुई लहसन ६४ तोले होवे तो दूध २५६ तोले में डालके औटावे जब गाढा हो जावे तब १६ तोले घी और रास्ना, शतावर, अहूसा, गिलोय, कचूर, सोंठ, देवदारु, विधायरा, अजमायन, चीते की छाल, शतावर, पुनर्नवा, हरद, बहेडा, आमला, पीपल और वायविडंग ये प्रत्येक एक एक तोले लेवे. सब का चूर्ण करके उस में मिलाय देवे. तथा शीतल होने पर १६ तोले सहत डाले. फिर इस को योही मिश्री के संग भक्षण करे तो आव्यवात, हनुग्रह, आक्षेपक, भ्रमरात, कटिवात, ऊरुस्तंभ, हृदयरोग, सर्वांगवात, संधिभंगवात और अस्सी प्रकार की वात इन सब को नष्ट करे वह पथ्यरूप लहसनपाक वर्ण, आयु और पुष्टि इन को करे ॥

कुवेरपाक

कुवेरं प्रस्थनीरे च क्षिप्वा रात्रौ चतुर्गुणम् । क्षीरे प्रातः पचे-
त्सम्यग्घृतेन मृदुवह्निना ॥ शीतं कृत्वा सुनिष्पन्नं मध्ये मधुनि
योजयेत् । चातुर्जातं त्रिकटुकं जातिपत्रफलं तथा ॥ देवपुष्पं
विडंगं च मिश्री बीरं घनं वला । निशाद्वयं तथा लोहं शुल्बं
वंगं पलार्धकम् ॥ प्रत्येकं चूर्णितं क्षिप्वा भक्षयेच्च पलं बुधः ।
सर्वान्वातमयान्हन्ति अग्निमाद्यं बलक्षयम् ॥ प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रं
च अश्मरीगुल्मपाण्डुनुत् । पीनसं ग्रहणीदोषमतीसारमरो-
चकम् ॥ मधुपक्कः कुवेरोयं भक्षयेन्नितरां बुधः । कामवृद्धि-
करस्तस्य धातुवृद्धिश्च जायते ॥ कांतिपुष्टिकरो बल्यः
कुवेराख्यो रसोत्तमः ॥

अर्थ—लताकरंज को रात्रि के समय जल में भिगोय देवे. प्रातःकाल उन को फोड़
के भीतर की मींगी निकाल लेवे. उन से चौगुना दूध लेके और घी डालके धीरे २
पेद २ अग्नि से पचावे. जब शीतल हो जावे तब उस में शहत, दालचीनी, पत्रज,
इलायची, नागकेशर, सोंठ, भिरच, पीपर, जावित्री, जायफल, लौंग, वायविडंग,
सौंफ, जीरा, नागरमोथा, खिरेटी, हलदी, दारुहलदी, लोहे की भस्म, तामे की भस्म
और वंगभस्म ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे सब को उसी पाक में डालके पाक तयार
कर लेवे इस में से चार तोले नित्य भक्षण करे तो सम्पूर्ण वादी के रोग, मंदाग्नि, बल-
हय, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, गोला, पाण्डुरोग, पीनस, संग्रहणी, आतिसार और अरु-
चि इन को नाश करे यह मधुपक्क कुवेरपाक भक्षण करने से कामवृद्धि, धातुवृद्धि,
कांति, पुष्टि और बल इन को करे है ॥

लशुनपाक

निस्तुपं लशुनं प्रस्थं क्षीरकुंभे पचेत्सुधीः । घृतं पलचतुष्कं
च पचेच्च मृदुवह्निना ॥ सुनिष्पन्नो मधुनिभो खंडं प्रस्थद्वयं
क्षिपेत् । त्र्यूपणं च चतुर्जातं ग्रंथिकं चव्यचित्रकम् ॥ विडंगं
रजनीयुग्मं हृषुपा वृद्धदारुकम् । पौष्करं दीप्यपुष्पं च सुर-
दारु पुनर्नवा ॥ श्वदंश निंबरास्त्रा च शतपुष्पा वरी सठी ।

अश्वगंधात्मगुप्ता च द्रव्याणि पिचुमात्रया ॥ शुक्रे यथाबलं
 सेव्यं रसोनाख्यं रसायनम् । सर्वान्वातामयान् शूलमपस्मार-
 मुरःक्षतम् ॥ गुल्मोदरवमिष्टीहवध्मवृद्धिकृमान् जयेत् । विवं-
 धानाहशोफांश्च बन्धिमाद्यं बलक्षयम् ॥ हिकां श्वासं च कासांश्च
 अपतंत्रकमेव च । धनुर्वातं तथा यामं पक्षघातापतानकम् ॥
 अर्दिताक्षेपकं कुब्जं हनुग्रहशिरोग्रहम् । विश्वाची गृध्रसी खल्ली
 पंगुवातं च संधिजम् ॥ बाधिर्यं सर्वशूलं च नाशयेदतिवेगतः ।
 वातव्याधिगर्जेद्रस्य केसरीव कृतः शुभः ॥ कफव्याधिप्रश-
 मनो बलपुष्टिकरः स्मृतः ॥

अर्थ—उत्तम प्रकार से छीली और कतरी हुई लहसन ६४ तोले को १०२४ तोले
 दूध में १६ तोले घी डालके मंद २आग्निपर पचावे जब इस का उत्तम पाक हो जावे
 अर्थात् लाल रंग हो जावे तथा १२८ तोले मिश्री मिलावे और सोंठ, मिरच, पीपल,
 दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, वायविडंग, हलदी,
 दारुहलदी, हाउवेर, विधायरा, पुहकरमूल, अजमायन, लौंग, देवदारु, पुनर्नवा,
 गोखरू, नीम, राम्ना, सोंफ, शतावर, कचूर, असगंध, कोंछ के बीज ये प्रत्येक तोले
 २ ले चूर्ण करके उसमें डाल पाक सिद्ध करे। यह रसोनाख्य पाक आग्नि और बल
 को देखकर सेवन करे तो संपूर्ण वातरोग, शूल, अपस्मार, उरक्षत, गोला, उदर, वमन,
 ग्रीह, बद, अंडवृद्धि, कृमिरोग, विबंध, अफरा, सूजन, मंदाग्नि, बलक्षय, हिचकी,
 श्वास, खांसी, अपतंत्रकवात, धनुर्वात, अन्तरायाम, पक्षवात, अपतानक वायु, अर्दित
 वायु, आक्षेपक वायु, कुब्जवात, हनुग्रह, शिरोग्रह, विश्वाची, गृध्रसी, खल्लीवात, पंगु-
 वात, संधिवात, बाधिरत्व और संपूर्ण शूल इन को बहुत जल्दी नाश करे यह लहसन
 पाक वातव्याधिरूप हाथी को सिंह के समान नाश करे है और कफ व्याधि को शांत
 करे तथा बल और पुष्टि इन को करे है ॥

लेप

प्रच्छित्त्वा च क्षुरेणांगं केवलानिलपीडितः । तत्र प्रदेहं दद्याच्च
 पिष्ट्वा गुंजाफलैः कृतम् ॥ तेनाववाहुजा पीडा विश्वाची गृ-
 ध्रसी तथा । अन्यापि वातजाः पीडाः प्रशमं यांति वेगतः ॥

अर्थ-जिस जगे वादि का उपद्रव होता होय उस जगेपर छुरे से पछना लगा-
यके उसपर घूँघचीन को पीसके उस का लेप करे तो अपवाहुक, विश्वाची, गृध्रसी
और अन्य वातसंबंधी रोग तत्काल शांत होवे ॥

मर्दन व नस्य

यवानीचूर्णसंमिश्रः शृंगवेररसस्तनौ ।

मर्दनान्नस्यतो हंति कुपितं मारुतं द्रुतम् ॥

अर्थ-अदरस के रस में अजमायन का चूर्ण मिलायके देह में मालिस करे और
नास देवे तो कुपितवात को तत्काल नष्ट करे ॥

स्वेदविधि

कार्पासास्थिकुलत्थकातिलयवैश्रैरंडमापातसीवर्पाभूशणवीजकां-
जिकयुतैरेकीकृतैर्वा पृथक् । स्वेदः स्यादतिकूर्परोदरहनुस्फि-
क्पाणिपादांगुलीगुल्फस्तंभकटीरुजो विजयते सामाः समीरोद्भवाः ॥

अर्थ-विनोले, कुलथी, तिल, जो, अंड, उडद, अलसी, पुनर्नवा और सन के
बीज इन को कांजी में पीसके अथवा दूसरे योग से पसीने निकाले तो कूर्पर (पडुचे
के ऊपर का भाग), पैट, हनु, नितंब, हाथ, पैर इन की उंगली और गुल्फ का स्तंभ,
कटिशूल और आमाश्रित वायु इन को नाश करे ॥

पेड बंधाना

रास्ना शताह्वा सुरदारु कुष्ठं मापार्द्रकं तैलवचाकुलत्थाः ।

एतैः प्रदेहोनिलरोगिणां हितः स्नेहैश्वतुर्भिर्दशमूलयुक्तैः ॥

अर्थ-रास्ना, शतावर, देवदारु, कूठ, उडद, अदरस, तैल, वच, कुलथी और
दशमूल इन को पीस गरम करके गाढा लेप करे तो वातरोगी को हितकारी होय ॥

स्वेद व लेप

उष्णोष्णमत्स्यादिकवेसवारैः स्वेदस्तथा वातविनाशनः स्यात् ।

फाणिज्जकोत्थेन रसेन वातं ग्रस्तं प्रदेशं परिलेपयेत् ॥

अर्थ-गरम २ मछली और वेसवार इन को सेककर मनुष्य की देह से पसीने
निकाले तो वादी को नाश करे. अथवा फाणिज्जक के रस से वातयुक्त स्थानपर लेप
करे तो वादी जाय ॥

लेप व स्वेद

सारं नवं सैधवकृष्णबोलं विपं समुद्रस्य फलानि कुष्ठम् । जेषा-
लमजा त्वहिजो बला च जंवीरनीरेण विमर्दनीयम् ॥ संस्वेद्य
तल्लेपनमात्रकेण अशीतिवातान् सहजान्निहंति ॥

अर्थ—नौसहर, सैधा निमक, काला बोल, विप, समुद्रफल, कूठ, जमालगोटे की
मींगी, अफीम और खिरेटी की जड़ इन के चूर्ण को जंभीरी नीबू के रस में खरल
गरम करके उस का लेप करे तो अस्सी प्रकार की वादी को सहज में ही नाश करे ॥

शतपुष्पादिलेप

शतपुष्पसुरद्रुदिनेशपयो गदरामठसिंधुभवं हरति ।

अपि लेपनतोस्थिगतं मरुतं कटिसंधिभवं त्रिदिनात्सततम् ॥

अर्थ—सोंफ, देवदारु, कूठ और सैधा निमक इन के चूर्ण को आक के दूध में
भिगोके लेप करे तो अस्थिगत वात, कटिवात और संधिवात इन को तीन दिन
में नाश करे ॥

लेप

सुरतरामठशुंठीशतपुष्पासैधववचार्कपयसा ।

अस्थिगतानपि वातान् निहंति चैकेन लेपेन ॥

अर्थ—देवदारु, हींग, सोंठ, सोंफ, सैधा निमक और वच इन के चूर्ण को आंक के
दूध से पीसके लेप करे तो अस्थिगत वादी को नाश करे ॥

वातहा पोटली

पुन्नागैरंडनिर्वैर्वकुलधवनटं नारिकेलैः करंजैः कार्पासैः शिगुडो-
लाफलसुनिपणकैः सर्पपाकोलबीजैः । रास्नाकुष्ठैः कुलित्थैस्ति-
लशुनवचारिगुसिद्धार्थविश्वैः सर्वैः स्नेहैः कृतं तत्सकलपटुयुतैः
पोटली वातभंजी ॥

अर्थ—पुंनाग, अंड की जड़, नीम की छाल, मौलसिरी, धी और अशोक इन
की छाल, नारियल, कंजा, विनोले, सहजने की छाल, दोलाफल, चौपतिया, सरसो,
अंकोलफल, रास्ना, कूठ, कुलथी, तिल, लहसन, वच, हींग, सवेद सरसो और सोंठ
इन सब का चूर्ण कर इन में निमक डालके पी अथवा तेल में मिलायके उस की
पोटली बांधके देवे तो यह वादी को नष्ट करे ॥

महाशाल्वणयोग

कुलित्थमापगोधूमैरतसीतिलसर्पपैः । शतपुष्पादेवदारुशोफा-
लीस्थूलजीरकैः ॥ एरंडविल्वमूलैश्च रास्त्रामूलैश्च शिशुभिः ।
मिशीकृष्णाकुठेरैस्तु लवणैरम्लसंयुतैः ॥ प्रसारण्यश्वगंधाभ्यां
बलाभिर्दशमूलकैः । गुडूचीवानरीबीजैर्यथालाभं समाहृतैः ॥
क्षुण्णैः स्वित्रैश्च वस्त्रेण बद्धैः संस्वेदयेन्नरम् । महाशाल्वणसंज्ञोयं
योगः सर्वानिलार्तिजित् ॥

अर्थ—कुलथी, उडद, गेहूं, अलसी, तिल, सरसों, सोंफ, देवदारु, निर्गुंडी, कलौंजी,
अंड की जड़, बेल की जड़, रास्त्रा की जड़, सहजना, जटामांसी, पीपल, कुठेर, सैंधानिमक,
समुद्रलवण, विडानिमक, संचरनिमक, अमलवेत, प्रसारणी, असगंध, खिरेटी, कगडी,
गगेरन, दशमूल, गिलोय और कोंच के बीज इन में से जो जो वस्तु मिले उन को
लेकर कूटकर जल में औटावे। फिर इन की पोटली बांधके गरम गरम सेके इस को
महाशाल्वण योग कहते हैं। यह संपूर्ण वातपीडानाशक है ॥

कठी

प्रियंगु पिप्पलीमूलं चंदनं चव्यदीपकम् । वरालं चंपकं कुष्ठं
मंजिष्ठाभिःशिसर्पपाः ॥ निर्गुंडी दीप्यकं वह्निर्हरिद्रा विश्वभेष-
जम् । तक्रकांजिकसंपकं वातघ्नं वह्निवर्धनम् ॥

अर्थ—फूलप्रियंगू, पीपरामूल, चंदन, चव्य, चित्रक, लौंग, चंपा, कूठ, मजीठ,
सोंफ, सरसों, निर्गुंडी, अजमायन, नीबू, हलदी, सोंठ, छांछ और कांजी इन में
ऊपर लिखे पदार्थों को ढालके औटावे तो यह कठी वातनाशक तथा वह्निदीपक है ॥

स्वेदलेपविधि

एरंडार्ककरंजमोरटबलातकारिसोमसुहीनिर्गुंडीतलपोटशिशुल-
वणास्फोताश्वगंधादिजैः । पत्रैः कांजिकमूत्रचुक्रसहितैः स्वित्रै-
र्घटस्थैः कृतः स्वेदः क्रुद्धसमीरणार्तवपुषां सद्यः सुखोत्पादकः ॥

अर्थ—अंड, आक, कंजा, मूवां, खिरेटी, अरनी, लालचंदन, थूहर, निर्गुंडी, ताड़,
नरसल, सहजना, चूका, सपेद अपराजिता और असगंध इन औषधों के पत्ते ले
कांजी, गोमूत्र, चूका ये एकत्र करके पीस उन पत्तोंपर लेप करे उन को एक

गगरे में भरके चूल्हेपर रखके आग्नि देवे जब गरम हो जावे तब उन पत्तों से
करे तो वात कोप शांति होकर रोगी को तत्काल सुख होय ॥

लेप

निर्गुड्या चोपनाहं च सकरंजैः सपित्तलैः ।

भेषजैः सेकलेपादि अभिपेकादिकं चरेत् ॥

अर्थ—निर्गुडी का लेप करे अथवा करंज और पित्तकर्ता औषध इन से सेचन,
लेप और स्नान इत्यादिक उपचार करे ॥

दूसरा रसोनकल्क वातरोग के ऊपर

पक्ककंदरसोनस्य लिका निस्तुपिका कृता।पाटयित्वा च मध्यस्थं
दूरीकुर्यात्तदंकुरम् ॥ तदुग्रगंधनाशाय रात्रौ तत्रे विनिःक्षिपेत् ।
अपनीय च तन्मध्याच्छिलायां पेपयेत्ततः ॥ तन्मध्ये पंचमां-
शेन चूर्णमेपां विनिःक्षिपेत् । सौवर्चलं यवानी च भर्जितं हिंशु
सैधवम् ॥ कटुत्रिकं जीरकं च समभागानि चूर्णयेत् । एकी-
कृत्य ततः सर्वं कल्कं कर्पप्रमाणतः ॥ खादेदग्निबलापेक्षी ऋतु-
दोषाद्यपेक्षया । अनुपानं ततः कुर्यादेरंडसृतमन्वहम् ॥ सर्वा-
गैकांगजं वातमर्दितं चापतंत्रकम् । अपस्मारगदोन्मादमू-
रुस्तंभं च गृध्रसीम् ॥ उरःपृष्ठकटीपार्श्वकुक्षिपीडां कृमीन्
जयेत् । अजीर्णमातपं रोपमतिनीरं पयो गुडम् ॥ रसोनमश्र-
णुरूपस्न्यजेद्देतन्निरंतरम् । मद्यं मांसं तथाम्लं च रसं से-
वेत नित्यशः ॥

अर्थ—उत्तम पकी हुई लहसनके ऊपर का छिलका दूर कर और उस को चीर
भीतर के अंकुरोंको निकाल डाले फिर उस लहसनकी वास निकालने को रात्रि
छाछमे भिगो देवे. प्रातःकाल उस को निकालके सिलपर चारीक पीस डाले इस प्रका
कल्क करके फिर संवर निमक, अजमोद, भुनी हींग, सेंधा निमक, सोंठ, मिरच
पीपल, जीरा इन आठ औषधों का चूर्ण उस लहसन के कल्क का पांचवां हिस्स
लेकर उस कल्क में मिलाये. सब को एकत्र करके फिर अंड की जड़ के काटे में इ
कल्क को एक तोले मिलायके पीये. तथा अपनी शक्ति और ऋतु कौनसी दे
देसके जैसा अपने को हित होये उसी प्रकार पीये तो सर्वांगवायु तथा एकांगवायु

मुख का टेढ़ा होना, ऐसी अर्दितवायु और धनुर्वायु, अपस्मार और उन्मादरोग तथा ऊरुस्तंभवायु और गृध्रसी वायु तथा उर, पीठ, कमर और कूख इन का शूल तथा कृमिरोग ये दूर हों। लहसन खानेवाले को अजीर्ण, धूप, क्रोध, अत्यन्त जल का पीना, दूध, गुड़ ये त्याग देने चाहिये । और मद्य; मांस तथा खट्टे पदार्थ सदा सेवन करने चाहिये ॥

रसोनकल्क वायु वा विपमज्वर ऊपर
शुद्धकल्को रसोनस्य तिलतैलेन मिश्रितः ।
वातरोगान् जयेत्तीव्रान् विपमज्वरनाशनः ॥

अर्थ—लहसन का कल्क करके उस में तिल का तेल डालके पीवे तो दारुण वादी के रोग और विपमज्वर ये दूर हों ॥

चौथा लहसनकल्क

पिष्ट्वा तु सूक्ष्मं लशुनं घृतेन विलिह्य हन्यात्पवनोत्थरोगान् ।

तथेद्रवीजाग्निमहौषधानां चूर्णं हरेद्वातभवान् विकारान् ॥

अर्थ—लहसन को पीसके घी के साथ खाय अथवा इन्द्रजो, चित्रक और सोंठ इन का चूर्ण घी के साथ खाय तो संपूर्ण वात के विकारों को नाश करे ॥

स्वच्छन्दभैरवरस

शुद्धसूतं मृतं लोहं ताप्यं गंधकतालकम् । पथ्याग्निमंधानिर्गु-

डीऽयूपणं टंकणं विपम् ॥ तुल्यांशं मर्दयेत्खल्वे दिनं निर्गु-

डिकाद्रवैः । मुंडीद्रावैर्दिनैकं तु द्विगुंजं वटकीकृतम् ॥ भक्षये-

द्वातरोगातो नाम्ना स्वच्छन्दभैरवः । रास्त्रामृतादेवदारुशुंठीवा-

तारिजं शृतम् ॥ सगुगुलुं पिबेत्कोष्णमनुपानं सुखावहम् ॥

अर्थ—शुद्ध पारा, लोहभस्म, सुवर्णमासिक भस्म, गंधक, हरताल, छोटी हरड, अंड की जड, निर्गुडी, सोंठ, मिरच, पीपल, मुहागा, सिंगिया विष ये सब समान भाग लेवे सब को १ दिन निर्गुडी के रस में खरल करे। फिर १ दिन गोरखमुंडी के रस में खरल करके दो रत्ती की गोली बनावे। यह स्वच्छन्दभैरवरस है। यह भैरवरस रास्त्रा, गिलोय, देवदारु, सोंठ और अंड की जड इन पांच औषधों के काढ़े में गुगलु डालके पीवे तो संपूर्ण वादी के रोग दूर हों ॥

समीरपन्नग

अभ्रगंधविषयोपरसटंकान् समांशकान् । भावयेत्सप्तधा भृंगर-

सेन स्यात्समरिहा ॥ आर्द्रद्रवेण वल्लो वा खंडव्योपेण योजितः ।

महावातान् जयत्याशु नासाध्मातं सुसंज्ञकृत् ॥

अर्थ—अभ्रकभस्म, गंधक, सिंगियाविप, सोंठ, मिरच, पीपर, पारा और सुहागा ये सब समान भाग लेकर खरल में डालके भांगरे के रस की सात भावना देवे. तो यह वातनाशक रस सिद्ध होय इस को अदरख के रस से अथवा मिश्री और त्रिकुटा के चूर्ण से एक वल्ल खाय तो घोर वादी को एक क्षणमात्र में जीत लेवे. नास देने से संज्ञाकारक है ॥

वातविध्वंसन

रसं गंधकं नागवंगं च लोहं तथा ताम्रजं व्योम निश्चंद्रिकं च ।

कणा टंकणं त्र्यूपणं नागरं वै पृथक् भागमेकं विमर्द्यैकयामम् ॥

ततो वत्सनाभं चतुःसार्धभागं दृढं मर्दयेद्भावना व्योपजात्रिः ।

वराचित्रकैर्माकैर्वैः कुष्ठजात्रिस्त्रिभिर्भावयेत्त्रिगुंडीभानुदुग्धैः ॥

महाधात्रिजैश्चार्द्रैर्निबुनीरैः समं भावयेद्वातविध्वंसनो यत् । स-

मीरे च शूले महाइलेष्मरोगे ग्रहण्यां तथा सन्निपाते च मौढ्ये ॥

स्त्रियाः सूतिकावातरोगेषु दद्यान्निपेवेत गुंजाद्वयं सूतमेनम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, शीशे की भस्म, वंगभस्म, लोहभस्म, तामे की भस्म, निश्चंद्र अभ्रक की भस्म, पीपल, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल और सोंठ ये प्रत्येक एक एक भाग ले एक प्रहर खरल करके इस में सिंगियाविप ४ ॥ भाग मिलायके फिर अधिक खरल करे. पश्चात् इस में त्रिकुटा, त्रिफला, चित्रक और भांगरा तथा कूट इन प्रत्येक के कांटे की तीन २ भावना देवे और त्रिगुंडी के रस की तीन, आक के दूध की तीन, बड़े आंवले, अदरख और नीबू इन के रस की पृथक् २ भावना देवे तो यह वातविध्वंसरस बने यह दो रस्ती के प्रमाण वादी, शूल, कफरोग, संग्रहणी, सन्निपात, मौढ्यवात और प्रसूतरोग इनपर देवे ॥

वातराक्षस

मृतं सूतं तथा गंधं कांतं चाभ्रकमेव चाताम्रभस्म कृतं सम्यक्

मर्दयित्वा समांशकम् ॥ पुनर्नवा गुडूच्यग्निसुरसा त्र्यूपणं तथा ।

एतेषां स्वरसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥ दत्त्वा लघुपुटं सम्यक्

स्वांगशीतं समुद्धरेत् । वातराक्षसनामायं वातरोगे प्रयोजयेत् ॥

तत्तद्रोगानुपानेन द्विगुंजामात्रसेवनात् । ऊरुस्तंभं वातरक्तं
गात्रभंगं तथैव च ॥ आमवातं धनुर्वातं वेदनावातमेव च । प-
क्षाघातं कंपवातं सर्वसंधिगतं तथा ॥ सुप्तवातं वातशूलमुन्मादं
च विनाशयेत् । तत्तद्रोगानुपानेन वाताशीतिविनाशनः ॥

अर्थ—पारे की भस्म, गंधक, कांतभस्म, अन्नकभस्म और ताम्रभस्म ये समान भाग लेकर एकत्र कर खरल करे फिर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, त्रिकुटा इन के स्वरस में तीन दिन भावना पृथक् २ देवे फिर लघुपुट देवे जब शीतल हो जावे तब निकाल लेय- इसे चातराक्षस रस कहते हैं इस को वातरोगपर देवे- पृथक् रोग के अनुपान के साथ दो रत्ती देवे तो ऊरुस्तंभ, वातरक्त, गात्रभंग, आमवात, धनुर्वात, वेदनावात, पक्षाघात, कंपवात, सर्वसंधिगत वात, सुप्तवात, वातशूल और उन्माद इन को नाश करे अलग २ अनुपानों के साथ देवे तो अस्सी प्रकार के वातरोगों को दूर करे ॥

वातारिरस

रसो गंधो वरावह्निगुग्गुलुः क्रमवर्धितः । तत्रैकभागः सूतः
स्याद्रंधको द्विगुणस्ततः ॥ त्रिभागा त्रिफला योज्या चतुर्भा-
गस्तु चित्रकः । गुग्गुलुः पंचभागः स्याद्बुबुतैलेन मर्दितः ॥
क्षिप्वा तत्रोदितं चूर्णं तेन तैलेन मर्दयेत् । गुटिकां कर्पमात्रां तु
भक्षयेत्प्रातरेव हि ॥ नागरैरंडमूलानां कपायं प्रपिवेदनु । अभ्य-
ज्यैरंडतैलेन स्वेदयेत्पृष्ठदेशकम् ॥ विरेकपरिणामेन स्निग्ध-
मुष्णं च भोजयेत् । वातारिसंज्ञको ह्येष रसो निर्वातसेवितः ॥
मासेन मरुतो रोगान्हरेत्सुरतवर्जितः ॥

अर्थ—पारा १, गंधक २, त्रिफला ३, चित्रक ४, गुग्गुलु ५ इस प्रकार भाग ले-
कर चूर्ण करे फिर इस को अंडी के तैल में खरल कर एक २ तोले की गोली बनावे-
एक गोली नित्य प्रातःकाल भक्षण करे और ऊपर से सोंठ और अंड की जड़ का
काढा पीवे- तथा पीठपर अंडी के तैल को लगायके सेक देवे- ऐसा करने से
रोगी को दस्त होते हैं जब दस्त हो चुके तब इस को स्निग्ध और गरम भोजन
करावे- यह वातारिसंज्ञकरस सेवन करनेवाला हवा न खाय, मैथुन न करे
तो एक महिनेभर में संपूर्ण वातरोग हरण करे ॥

समीरगजकेसरी

नवाहिफेनं कुचिलं नवानि मरिचानि च । समभागानि सर्वाणि
रक्तिकाप्रमितानि च ॥ देयात्समीरे चैतानि पुनस्तांबूलचर्व-
णम् । कुब्जे च खंजवाते च सर्वजे गृध्रसीग्रहे ॥ अववाहौ
प्रयोक्तव्यः शोफे कंपे प्रतानके । विषूच्यामरुचौ देयमपस्मारै
विशेषतः ॥

अर्थ—नई अफीम, कुचला के बीज, नवीन काली मिर्च इन को समान भाग
लेकर चूर्ण करे फिर एक २ रत्ती की गोली बनाय लेवे एक गोली रोगी को देय और
इस को खायके ऊपर से वीडी खाय तो कुब्जवात, खंजवात, सर्वजवात, गृध्रसी, अववा-
हुक, सूनन, कंप, प्रतानकवायु, विषूचिका, अरुचि और अपस्मार इन को नाश करे ॥

मृतसंजीवनीरस

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारो तदर्धं विपसंयुतम् । टंकणं दंतिवीजं
च आर्द्रकस्य रसेन वै ॥ एतत्सर्वं क्षिपेत्खल्वे मर्द्यं यामद्वयं
भिषक् । भानुदुग्धैर्महौदर्या द्विगुंजं भक्षयेत्सदा ॥ वातव्या-
धिमुस्तंभमामवातं विशेषतः । ग्रहण्यशौं विकारेषु ज्वरमष्ट-
विधं तथा ॥ निहंति तत्क्षणादेव तमः सूर्योदयो यथा । मृत-
संजीवनो नाम प्रख्यातो रससागरः ॥

अर्थ—हिंगुल ३ भाग, सिंगिया विप २ भाग, सुहागा और जमालगोटा एक
एक भाग लेवे. इस प्रकार सब को एकत्र करके उस को अदरख के रस से दो प्रहर
खरल करे. फिर आक का दूध और सतावर के रस की उस को भावना देवे. यह
रस दो रत्ती के प्रमाण देने से वातरोग, ऊरुस्तंभ, आमवात, संग्रहणी, चवासीर और
आठ प्रकार के ज्वर इन को नाश करे. इस को मृतसंजीवन रस कहते हैं यह
रससागरग्रंथ में लिखा है ॥

वातारिरस

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लोहं च माक्षिकम् । तालं नीलांजनं
तुत्थमहिफेनं समांशकम् ॥ पंचानां लवणानां च भागमेकं
विमर्दयेत् । वज्रक्षीरैर्दिनैकं तु रुध्वा तं भूधरे पचेत् ॥ मापै-

कमार्द्रकद्रावैलेहयेद्वातनाशनम् । पिप्पलीमूलजं काथं सकृष्ण-
मनुपानकम् ॥ सर्ववातविकारांस्तु निहन्यात्क्षेपकादिकान् ।

रसः सर्वत्र विख्यातो नाम्ना वातारि च स्मृतः ॥

अर्थ—पारा, सुवर्ण, हीरा, तामा, लोहा, सुवर्णमाक्षिक, हरताल इन की भस्म, सुरमा, लीलाथोथा और अफीम ये समान भाग लेवे; और पांचों निमक मिलाकर एक भाग लेवे. इस प्रकार सब को एकत्र कर थूहर के दूध में एक दिन खरल करे, फेर संपुट में रख कपडामिट्टी करके भूधरयंत्र में रखके फूंक देवे यह वातारिरस १ पासे अदरख के रस से देवे और पीपरामूल के काठे में पीपर का चूर्ण डालके ऊपर से पीवे, तो संपूर्ण वात के विकार, आक्षेपकादिकों को नाश करे यह वातारिरस सर्वत्र प्रसिद्ध है ॥

वातगजांकुश

मृतं सूतं मृतं लोहं गंधं तालं च माक्षिकम् । पथ्या शृंगी विपं
त्र्यूपमग्निमथं च टंकणम् ॥ तुल्यं खल्वे दिनं मर्द्यं मुंडीनिर्गु-
डिजैर्द्रवैः । द्विगुंजां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशांतये ॥ साध्या-
साध्यं निहंत्याशु रसो वातगजांकुशः ॥

अर्थ—पारे की भस्म, लोहभस्म, गंधक, हरताल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, हरड, कांकडा-
संगी, विष, सोंठ, मिरच, पीपल, अरनी, सुहागा ये सब समान भाग ले चूर्ण करे
कर गोरखमुंडी और निर्गुडी इन के रस में एक २ दिन खरल कर दो दो रत्ती
ती गोली बनावे. इन को खाय तो सर्ववादी के रोग शांति होवे. यह वातगजां-
कुशरस साध्यासाध्यरोगों को दूर करे ॥

व्याधिगजकेसरी

पारदं गंधकं तालं विपं त्र्यूपणकं समम् । त्रिफलाटंकणक्षारं
प्रत्येकं शाणमात्रकम् ॥ दंतिबीजं च टंकैकं सूक्ष्मचूर्णानि का-
रयेत् । भृंगराजरसेनैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ काकमाचीरसेनैव
निर्गुडीरसकं तथा । मरिचाभा वटी कार्या द्रोपमापेक्ष्य दाप-
येत् ॥ क्षीरेण सह दातव्या चाष्टज्वरानिवृत्तये । अशीतिर्वात-
जान्हन्ति निर्गुडीवस्तुकेन वा ॥ गुडेन सह दातव्या चत्वारिंशच्च
पैत्तिकान् । अनुपानेन संयुक्तस्तत्तद्रोगहरः स्मृतः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, हरताल, सिंगियाविप, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, मुहागा ये प्रत्येक आधे २ तोले और जमालगोटा १ तोले लेवे. सब का बारीक चूर्ण करके उस को भांगरा, काकमाची (मकोय), निर्गुंडी इन के रस में सात २ दिन खरल करे. फिर मिरच के बराबर गोली बनावे और दोपों के विचारके देवे जैसे आठ प्रकार ज्वरों में दूध के साथ, अस्ती प्रकार की वायुप निर्गुंडी और नागरमोथा इन के काठे से, चालीस प्रकार के पित्तव्याधिपर गुड वं साथ और सर्वव्याधिपर योग्य अनुपान के साथ देने से उसी २ व्याधि का नाश करे।

सूर्यप्रभा गुटी

चित्रकं त्रिफला निंबं पटोलं मधुयष्टिका । वरांगं केसरं चैव
 यवानी चाम्लवेतसम् ॥ भूर्निवकं च दाव्यैला मुस्ता पर्पटकं
 तथा । तुत्थकं कटुका भार्ङ्गी चव्यपद्मकदीप्यकैः ॥ पिप्पली
 मरिचं दंती शठी शुंठी सपुष्करम् । विडंगं पिप्पलीमूलं जीरकं
 देवदारु च ॥ पत्रकं कुटजं रास्ना दुरालंभामृता त्रिवृत् । लता-
 रुष्करतालीसं वृक्षाम्लं लवणत्रयम् ॥ धान्यकं चाजमोदा च
 कारवी धातुमाक्षिकम् । जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगंधा सदा-
 डिमम् ॥ कंकोलकमुशीरं च द्विक्षारं मरिचं तथा । एतानि
 पलमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ गिरिजस्य पलान्यष्टौ द्वे
 पले चैव गुग्गुलोः । प्रस्थमेकं सितायाश्च घृतस्य कुडवं तथा ॥
 गिरिजस्य समं लोहं प्रस्थार्धं माक्षिकस्य च । सर्वमेकत्र सं-
 मिश्र्य स्निग्धभांडे निधापयेत् ॥ वातव्याधिमुखरुस्तंभमार्दितं
 गृध्रसीं तथा । विद्रधि श्लिषदं गुल्मं पांडुरोगं हलीमकम् ॥
 कासं पंचविधं घोटं मूत्रकृच्छ्रं गलग्रहम् । आनाहमश्मरीव-
 र्धग्रहणीमववाहुकम् ॥ अरोचकं पार्श्वशूलमुदरं सभगंदरम् ।
 हृद्रोगं शूलमुत्कंपविपमज्वरनाशनम् ॥ उरःक्षते च ये दोषा
 मुखरोगे च दारुणे । प्राशयेद्भुटिकां चापि चूर्णं पाणितलोन्मि-
 तम् ॥ विविधान्नानि भुंजति यथेष्टं च यथासुखम् । गुटिका
 भास्करी नाम्ना सृष्टा देवेन शंभुना ॥ प्रमेहं रक्तपित्तं च पांडु-

रोगं सकामलम् । अग्निसंदीपनं हृद्यं दीर्घायुःपुष्टिदो भवेत् ॥
 ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः । कफरोगाश्च ये के-
 चित् द्वंद्वजाः सान्निपातिकाः ॥ ते सर्वे प्रशमं यांति भास्करेण
 तमो यथा । रोगविद्राविणी कार्या गुटिका सूर्यवत्प्रभा ॥

अर्थ—चित्रक, हरद, बहेडा, आवला, नीम की छाल, पटोलपत्र, मुलहठी, दाल-
 चीनी, नागकेशर, अजमायन, अमलवेत, चिरायता, दारुहलदी, इलायची, नागर-
 मोथा, पित्तपापडा, नीला योथा, कुटकी, भारंगी, चव्य, पन्नाख, सुरासानी अजमा-
 यन, पीपल, मिरच, दंती, सोंठ, पुहकरमूल, वायविडंग, पीपरामूल, जीरा, देवदारु,
 पत्रज, कूडा की छाल, रास्ता, धमासा, गिलोय, निसोथ, कौंच के बीज, तालीसपत्र,
 चूका, सेंधानिमक, विडनिमक, कचियानिमक, धनिया, अजमोद, सोंफ, सुवर्णमाक्षिक,
 जायफल, वंशलोचन, असगंध, अनार की छाल, कंकौल, खस, जवाखार, सज्जीखार और
 काली मिरच ये प्रत्येक चार २ और शिलाजीत ३२ तोले, गूगल शुद्ध ८ तोले, लोहे
 की भस्म ३२ तोले, सुवर्णमाक्षिक भस्म ८ तोले इन सब का एकत्र चूर्ण कर इस में
 मिश्री ६४ तोले और धी १६ तोले डाले सब को एकत्र मिलाय धी के चिकने बासन
 में भरके रख देवे. इस में से १ तोले अथवा बलाबल विचारके न्यूनाधिक मात्रा
 देवे तो वातव्याधि, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, विद्राधि, श्लीपद, गोला, पांडुरोग, हलीमक,
 पांच प्रकार की खांसी, मूत्रकृच्छ्र, गलग्रह, अफरा, पथरी, बद का रोग, संग्रहणी, अव-
 बाहुक, अरुचि, पसवाड़े का शूल, उदर, भगंदर, हृदयरोग, शूल, कंप, विपमज्वर,
 उरक्षत, मुख के रोग, प्रमेह, रक्तापित्त, पांडुरोग, कामला, वादी के रोग, पित्तजन्य रोग,
 कफ के रोग, द्वंद्वज, सान्निपातजन्य रोग इत्यादिक रोग इस सूर्यप्रभागुटिका के
 प्रभाव से नष्ट होंगे. रोगों को भगानेवाली इस का प्रभाव सूर्य के समान है. एक तोले
 की गोली बनावे अथवा एक तोले इस के चूर्ण को ही भक्षण करे इस के ऊपर
 अनेक प्रकार के यथेष्ट अन्न भोजन करने चाहिये इस को श्रीशिव ने निर्माण करी है ॥

लघुवातविध्वंसमात्रा

पारदष्टकणो गंधपापाणभिद्रत्सनागो वराटस्तथा तालकश्च ।
 त्र्यूपणं हेमनीरेण तन्मर्दयेद्रक्तिकाभा वटी वातविध्वंसकः ॥
 सान्निपातके मारुते कफे शीतमाद्यके श्वाससंभवे । संग्रहाभिधे
 शूलजे गदे काससंसृतौ योजयेत्सदा ॥

अर्थ—पारा, सुहागा, गंधक, पापाणभेद, वत्सनागविप, कौडी की भस्म, हरताल,
 सोंठ, मिरच, पीपल इन सब का चूर्ण करके धतूरे के रस से खरल करे और एक

२ रत्ती की गोली बनावे इस को वातविध्वंसनी कहते हैं. यह सन्निपात, कफ, वायु, शीत, मंदाग्नि, श्वास, संग्रहणी, शूल और खांसी इनपर देनी चाहिये ॥

वह्निकुमार

टंकणः पारदो गंधशंखौ कपर्दः समो वत्सनाभस्त्रिभागस्तथा ।
वल्लिजं अष्टभागं वह्निपूर्वः कुमारः स्मृतो भृंगनीरेण समर्दितः ॥
वातरोगेषु सर्वेषु श्वसने वह्निमांथके । कफामये घृहकासे शूले
त्वग्रिकुमारकः ॥

अर्थ—सुहागे का चूर्ण, पारा, गंधक, शंखभस्म और कौडी की भस्म ये समान लेवे तथा सिंगियाविप ३ भाग और काली मिरच ८ भाग सब को एक करके भांगरे के रस में सरल करे इस की चन्हिकुमाररस कहते हैं. यह संपूर्ण वातरोग, श्वास, मंदाग्नि, कफ, घृहा, खांसी और शूल इन पर देवे ॥

वातविध्वंस

रसं गंधं विपं चैव ताम्रं लोहं समाक्षिकम् । एतत्सर्वं समं
योज्यं विपं च द्विगुणं भवेत् ॥ जेपालं तालकं चैव रसेन सह
योजयेत् । त्र्यूपणं च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ निर्गु-
डीसूरणद्रावैर्भानोश्च पयसस्तथा । तर्कारी भृंगराजश्च तथोन्म-
त्तरसस्य च ॥ भावना खलु दातव्या सप्तसप्तक्रमादितः । द्विगुंजं
भक्षयेत्प्रातर्मरिचैश्च समन्वितम् ॥ जानुजंघाकटिस्थूणपादगु-
ल्फौष्ठशीर्षकम् । मन्यास्तंभं हनुस्तंभं त्रिकस्तंभं च शुष्क-
कम् ॥ जिह्वास्तंभं बाहुभवं त्रिकस्तंभं च पादजम् । अधो-
भागे च ये वाताः सर्वांगे विचरन्ति ये ॥ सर्वान्वातान् जयेदाशु
दैन्यं नारायणो यथा ॥

अर्थ—पारा १, गंधक १, वच्छनाग विप २, तामे की भस्म १, लोहे की भस्म १ सुवर्णमाक्षिक की भस्म १, जमालगोटा १, हरताल १, सोंठ, मिरच, पीपल सब मिलायके १ भाग लेवे. इन सब औषधों को एकत्र करके इस में निर्गुडी, जमीकंद आक, अरनी, भांगरा और धत्रा इन प्रत्येक की सात २ भावना देवे. यह वात विध्वंसन दो रत्ती के अनुमान काली मिरचों के चूर्ण के साथ देवे तो जानु जंघा, कमर, पीठ, पैर, होंठ, मस्तक और गरदन इन का स्तंभ, हनुस्तंभ, त्रिकस्तंभ

शुष्कवात, जिह्वास्तंभ, वाहुस्तंभ, पादस्तंभ और अधोभाग में होनेवाली वादी तथा सर्वांग में संचार करनेवाली वायु इस प्रकार संपूर्ण वातरोगों का नाश करे. जैसे भगवान् भक्तों की दीनता को हरण करते हैं ॥

दूसरा समीरपत्रग

सूतं तालकमाक्षिकायसरजो गंधं समांशं कृतं पथ्या त्र्युपण-
वह्निमंथसुरसाशुंगी विपं टंकणम् । क्षिप्त्वा खल्वतले च वारि-
सुरसामुंडीरसे मर्दितं मात्रा वल्लमिता ससैधवयुता शुंघ्या
तथा चित्रकैः ॥

अर्थ—पारा, हरताल, सुवर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म, गंधक, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, अरनी, रास्ना, कांकडासिंगी, विप, सुहागा ये समानभाग ले. सब को तुलसी और गोरखमुंडी के रस में खरल कर इस की दो दो रत्ती की गोली करे. इस को सैधवनिमक, सोंठ और चित्रक के साथ वादी पर देवे ॥

वातारिरस

रसभस्म च भागैकं गंधको द्विगुणो भवेत् । त्रिगुणं च विपं
ग्राह्यं कणा चैव चतुर्गुणा ॥ वृतात्रयं तथा प्रोक्तं सर्वमेकत्र का-
रयेत् । गुंजा मात्रा प्रदातव्या सर्ववातविकारिणाम् ॥

अर्थ—पारे की भस्म १ भाग, गंधक २ भाग, सिंगिया विप ३ भाग, पीपल ४ भाग और रेणुकबीज ३ भाग ये सब पदार्थ एकत्र करके चूर्ण करे इस को वादी के विकारों पर १ रत्ती देय ॥

दूसरा प्रकार

भागैकं च विपं चैव द्विभागं टंकणं तथा । चतुर्भागं च मरिचं
सहैकत्र प्रयोजयेत् ॥ आर्द्रकस्य रसैर्मथै वल्लमेकं प्रमाणतः ।
मरिचैश्च समायुक्तं सर्ववातनिकृंतनम् ॥

अर्थ—सिंगिया विप १ भाग, सुहागा २ भाग और काली मिरच ४ भाग ले सब को एकत्र कर अदरक के रस में खरल कर इस में से २ रत्ती रस मिरचों के साथ देवे तो सर्व वायु के रोग नाश करे ॥

६७

रसैर्द्रचितामणि

सूतात्पंचार्कतश्चैकं कृत्वा पिष्टं सगंधकम् । सूतांशं नागव-

ल्याश्च द्रवैः पिड्वा प्रलेपयेत् ॥ ताम्रपृष्ठे प्रलिप्यैतां रुद्धा
गजपुटे पचेत् । द्विगुंजं त्र्युपणेनार्धं वपुवातं सकंपकम् ॥ नि-
हंति दाहसंतापं मूर्च्छापित्तसमन्विताः ॥

अर्थ—पारा ५ भाग, तांबे के पत्र १ भाग और गंधक ५ भाग इन की कजली करके नागरवेल के पान के रस में खरल कर तांबे के पत्रोंपर लेप कर एक के ऊपर दूसरा जमाय संपुट में रख गजपुट में रखके फूंक देवे. इस भस्म को २ रत्ती ले और सोंठ, मिरच, पीपल इन के चूर्ण से देवे तो अर्धांगवात, कंपवात, दाह, संताप, मूर्च्छा और पित्त इन को नाश करे ॥

कालकंटकरस

वज्रसूताभ्रहेमार्कतीक्ष्णमंडं क्रमोत्तरम् । मारितं मर्दयेदम्ल-
वर्गेण दिवसत्रयम् ॥ त्रिक्षारं पंचलवणं मर्दितस्य समं समम् ।
दत्त्वा निर्गुंडिकाद्रवैर्मर्दयेद्विषसत्रयम् ॥ शुष्कमेतद्विचूर्ण्यार्थ
विषं चास्याष्टमांशतः । टंकणं विपतुल्यांशं दत्त्वा जंवीरजैर्द्र-
वैः ॥ भावयेद्दिनमेकं तु रसोयं कालकंटकः । दातव्यः सर्वरो-
गेषु सन्निपाते विशेषतः ॥ द्विगुंजमार्द्रकद्रवैर्घृतैर्वा वातरो-
गिणाम् । निर्गुंडीमूलचूर्णं तु माहिषारख्यं च गुग्गुलुम् ॥ समांशं
मर्दयेदाज्ये तद्गृही कर्पसंमिता । अनुयोज्या घृतैर्नित्यं स्निग्ध-
मुष्णं च भोजनम् ॥ मंडलान्नाशयेत्सर्वान्वातरोगान्न संशयः ।
सन्निपाते पिवेच्चानु रविमूलकपायकम् ॥

अर्थ—हीरा, पारा, अभ्रक, सुवर्ण, तांबा, रोडीलोह और मुंडलोह इन की भर एक से दूसरी अधिक २ के क्रम से लेवे फिर इस को तीन दिन अम्लवर्ग व भावना देवे. फिर तीनों क्षार और पांचों निमक ये उक्त भस्मों के समान मिलायें फिर निर्गुंडी के रस में उस को तीन दिन खरल करे जब सूख जावे तब अष्टमांश सिंगियाविष और सुहागा डालके नींबू के रस में १ दिन खरल करे इस को काल कंटकरस कहते हैं यह संपूर्ण रोगों पर देवे परंतु विशेषकरके सन्निपातपर देना चाहिये अदरख के रस से अथवा घी के साथ दो रत्ती वातरोगपर देवे निर्गुंडी क जड के चूर्ण और भैसा गुग्गुलु ये समान ले घी से खरल करके एक तोले की गोल के साथ देवे और स्निग्ध तथा उष्ण भोजन करे तो यह ४० दिन में संपूर्ण वात व

रोगों को नाश करे तथा इस रस को खायके ऊपर से आंक की जड का काटा पीवे तो सन्निपात को नष्ट करे ॥

त्रिगुणारख्यरस

गंधकाष्टगुणं सूतं शुद्धं मृद्धग्निना क्षणम् । पक्त्वावतार्यं संचूर्ण्य
चूर्णतुल्याभयायुतम् ॥ सप्तगुंजमिदं खादेद्धर्षयेच्च दिने दिने । गुंजै-
कैकं क्रमेणैव यावत्स्यादेकविंशतिः ॥ क्षीराज्यशर्करामिश्रं शा-
ल्यन्नं पथ्यमाचरेत् । कफवातप्रशांत्यर्थं निर्वाते निवसेत्सदा ॥

त्रिगुणारख्यो रसो नाम त्रिपक्षात्कफवातनुत् ॥

अर्थ—गंधक आठ भाग लेकर उस को मंदाग्निपर पतली कर लेवे फिर इस में पारा १ भाग मिलावे थोड़ी देर अग्नि पर रहने दे फिर पारे गंधक की बराबर हरड का चूर्ण मिलायके प्रथम दिन सात रत्ती देवे और २१ रत्ती होनेपर्यंत नित्यप्रति एक २ रत्ती बढ़ाता जावे और दूध, घी, सांड और भात ये पथ्य में देवे और पवन में रहे नहीं तो यह त्रिगुणारख्यरस तीन पक्ष में कफ वादी को नाश करे ॥

अर्केश्वर

रसस्य गंधं द्विगुणं विमर्द्य ताम्रस्य चक्रेण सुतापितेन । आ-
च्छादयित्वा च ततः प्रयत्नाच्चक्रे विलग्नं च ततः प्रगृह्य ॥
संचूर्ण्य च द्वादशधार्कदुग्धैः पुटेत वह्नित्रिफलाजलेन । संभा-
वितार्केश्वर एष सूतो गुंजाद्वयं चास्य फलत्रयेण ॥ ददेत्
मानत्रितयेन सुप्तिवाताद्विमुक्तो हि भवेद्धिताशी । क्षारं सुतीक्ष्णं
दधिमांसमापं वृताकमध्वादि विवर्जनीयम् ॥

अर्थ—पारा १ भाग और गंधक २ भाग दोनों को एकत्र करके ताम्र के पात्र को गरम करके उस में घोंटे फिर ढक देवे. फिर ताम्र के चक्र में लगे उस को निकास लेवे फेर खरल में डालके उस को आंक के दूध और चित्रक तथा त्रिफला इन के जूटे की दश दश भावना देवे. इस को अर्केश्वररस कहते हैं. यह दो रत्ती त्रिफला ३ साथ देवे और पथ्य हितकारी अन्न भोजन करे तथा खारी, तीक्ष्ण, दही, मांस, ढद, बेंगन और सहत ये पदार्थ खाय नहीं तो सुप्तिवात दूर होय ॥

एकांगवीर

शुद्धगंधं मृतं सूतं कांतं वंगं च नागकम् । ताम्रं चाभ्रं मृतं

तीक्ष्णं नागरं मरिचं कणा ॥ सर्वमेकत्र संचूर्ण्य भावयेच्च पृथक्
त्रयम् । वराव्योपकनिर्गुंडीवह्निमार्द्रकजैर्द्रवैः ॥ शिष्टकुष्ठद्रवे-
णापि ततो धात्र्या द्रवेण च । विपमुष्ट्यार्कहाटैश्च आर्द्रकस्य
रसैस्तथा ॥ रसश्चैकांगवीरोसौ सुसिद्धो रसराड् भवेत् । पक्ष-
घातं चार्दितं च धनुर्वातं तथैव च ॥ अर्धांगं गृध्रसीं वापि
विश्वाचीमववाहुकम् । सर्वान्वातामयान्हन्ति सत्यं सत्यं न संशयः ॥

अर्थ—शुद्ध गंधक, पारे की भस्म, कांतलोह, वंग, शीशा, तामा, अभ्रक, पोलाद
लोह इन की भस्म, सांठ, मिरच, पीपल इन सब को एकत्र चूर्ण करके त्रिफला का
काढा, त्रिकुटे का काढा, निर्गुंडी, अदरस, चित्रक, सहजना, कूठ, आवले, कुचला,
आक, थूहर और अदरस इन प्रत्येक की तीन तीन भावना देवे तो यह एकांग-
वीर रस सिद्ध होय. यह पक्षाघात, धनुर्वात, अर्धांगवात, गृध्रसी, विश्वाची,
अववाहुक और सर्व प्रकार के वातरोग इन को नाश करे इस में संशय नहीं है ॥

वातरक्तपर रस

पारदं च क्रियाशुद्धं तत्तुल्यं शुद्धगंधकम् । अभ्रकं तु द्वयोस्तु-
ल्यं त्रिभिस्तुल्यं तु गुग्गुलुम् ॥ सर्वांशमृतासत्त्वं भावयेदौषधैः
पृथक् । निर्गुंडीगोक्षुरच्छिन्नाकोकिलाख्यांत्रिजै रसैः ॥ सप्तवारं
ततो युंज्याद्वातरक्ते त्रिवल्लकम् । कोकिलाख्यस्य मूलानां
पानीयमनुपाययेत् ॥

अर्थ—पारा, शुद्ध गंधक समान भाग ले और दोनों की बराबर अभ्रकभस्म तीनों
की बराबर गुग्गुलु और सब की बराबर गिलोयसत्त्व इन सब को एकत्र कर निर्गुंडी,
गोखरू, गिलोय, काकोली इन के काढे की सात २ भावना देवे फिर इस में से ६
रत्ती की मात्रा वातरक्त रोग पर देवे और ऊपर से काकोली की जड़ का काढा पीवे ॥

तालकभस्म

तालं रसं तुवरिकां नयनेंदुवाणभागैर्विशुद्धवसुजातरसे विमर्द्य ।
दत्त्वा शरावयुगले प्रविधाय मुद्रां दद्याद्गजाह्वपुटमस्य भवे-
त्सुभस्म ॥ दृष्ट्वाकृतिं प्रकृतिमप्यखिलामवस्थां दृष्ट्वा पुनश्च
बहुधा बहुधा विचार्य । दद्याच्च तंदुलमितां हरितालमात्रां विद्या
मया यतिवरादियमाप यत्नात् ॥

अर्ध-हरताल ३, पारा १ और फिटकरी ५ भाग ये शुद्ध ले सब को एकत्र करके सपेद पुनर्नवा के रस में खरल करे. जब सूख जाय तब इस की टिकिया बनाय ले इस को खिपडे की पैदी में रखके उस के ऊपर दूसरा औधा खिपडा ढक देवे फिर संधीलेप करके गजपुट में फूंक देवे तो सुंदर भस्म होय. यह हरताल की मात्रा जिस रोगी को देनी होय उस की आकृति, प्रकृति और रोग की सर्व अवस्था वारं-वार विचारके चावल के बराबर देवे. यह विद्या मैं ने एक महान् संन्यासी के पास से बडे यत्न से सीखी है ॥

गंधकरसायन

शुद्धो बलिर्गोपयसा विभाव्य ततश्चतुर्जातगुडूचिकाभिः । प-
थ्याक्षधात्र्यौपधभृंगराजैर्भाव्योष्टवारं पृथगार्द्रकेण ॥ सिद्धे सितां
योजय तुल्यभागां रसायनं गंधकपूर्वकं स्यात् । कर्पोन्मितं
सेवितमेति मर्त्यो वीर्यं च पुष्टिं दृढदेहवृद्धिम् ॥ कुष्ठं सकंडुं वि-
पदोपमुग्रं मासद्वयं योजयती च योगः । घोरतिसारं ग्रहणी-
गदं च सवातरक्तं सहशूलयुक्तम् ॥ जीर्णज्वरं मेहगणं च
तीव्रं वातामयानां ग्रहणे समर्थः । प्रज्ञाकरं केशमतीव कृष्णं
ससोमरोगं सहमुष्कवृद्धिम् ॥ हरति सकलरोगान् गंधकारयो-
तियोगो मृतसदृशनराणां प्राणदो दीर्घमायुः । तदनुविहितयोगं
भस्म सूतं सहेम रमयति त्रिदशानां दीप्तिरूपं सुखं च ॥

अर्थ-शुद्ध गंधक को गौ का दूध, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, गिलोय, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, भांगरा और अदरक इन प्रत्येक की आठ २ भावना देवे. जब सिद्ध हो जावे तब बराबर की मिश्री मिलाय ले इस को गंधक-रसायन कहते हैं. यह दश मासे नित्य सेवन करने से वीर्यपुष्टी, देह की दृढता, अग्निदीप्ति इन को करे तथा कुष्ठ, सुजली, विपदोप, घोर अतिसार, संग्रहणी, वात-रक्त, शूल, जीर्णज्वर, सर्व प्रमेह, तीव्रवातव्याधि, अंडवृद्धि, सोमरोग और संपूर्ण रोगों का नाश करे है. तथा बुद्धि, आयुष्य, केशों का कालापना और सर्व रोगों के नाश करे. यह मनुष्यों को प्राण और आयुष्य देने में समर्थ है और इस में पारे को भस्म का योग करने से कांति करे और अनेक स्त्रियों के भोगने की सामर्थ्य करे ॥

लघुविपगर्भतैल

तैलाढकं समतुपांबुहयारिहेमनिर्गुंडिभास्करशिफासृतया तु

सिद्धम् । धत्तूरकुष्ठफलिनीविपहेमदुग्धारास्त्रा हयारिकटभी
मरिचोपचित्रा ॥ मांसी वचा दहनसर्पपदेवदारु दावीं निशा ऋ-
बुजतुत्रिफला समंगा । पिष्ट्वा क्षिपेत्पलमितां विपगर्भमेतत्तैलं
समस्तपवनामयनाशनं स्यात् ॥

अर्थ—२५६ तोले तेल में इस के बराबर को तुप की कांजी और कनेर
धतूरा, निर्गुडी और आंक की जड़ का काटा डालके तेल सिद्ध करे. फिर धतूरे वे
बीज, कूठ, कलियारी, सिंगिया विप, गूलर, रास्त्रा, कनेर, मालकांगनी, मिरच
बडी दंती, जटामांसी, वच, चित्रक, सरसो, देवदारु, दारुहलदी, अंड की जड़
लाख, त्रिफला, मजीठ ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे सब का चूर्ण करके उस तेल में
डाल देवे तो यह विपगर्भतैल बने. यह सर्व घातरोगनाशक है ॥

दूसरा प्रकार

धत्तूरस्य रसस्य पंच कुडवं तैलं तथा कांजिकं प्रस्थानां च
चतुष्टयं गदवचाचित्रात्परं शाणकाः । हृद्धात्रीमरिचात्पृथङ्-
नवविपात्पट् स्वर्णबीजात्पटोः स्युः सप्ताधिकविंशतिः परिमितं
तीत्रानिलध्वंसनम् ॥ पक्षाघातं हनुस्तंभं मन्यास्तंभं कटिग्र-
हम् । पृष्टत्रिकशिरःकंपं सर्वाग्रहणं तथा ॥

अर्थ—धतूरे का रस ८० तोले, तेल ८० तोले, कांजी ८० तोले, कूठ, वच, चित्रक
ये प्रत्येक एक एक तोले लेवे. हितवल्ली, मिरच, दोनों नौ नौ तोले ले, सिंगिया विप
६ तोले, धतूरे के बीज २७ तोले और सैधानिमक २७ तोले इन सब को एकत्र
करके तेल सिद्ध करे. यह त्रिवादी, पक्षाघात, हनुस्तंभ, गर्दन का स्तंभ, कटिग्रह,
पीठ, त्रिक और मस्तक इन का कंप और सर्वाग्रहण वात इन को नाश करे ॥

महाविपगर्भतैल

कनकं तु च निर्गुडी तुंविनी च पुनर्नवा । वातारिश्वाश्वगंधा च
प्रपुत्राटं सचित्रकम् ॥ सौभाजनं काकमाची कलिकारी च
निबकम् । महानिवेश्वरी चैव दशमूलं शतावरी ॥ कारवेल्ली
सारिवा च श्रावणी च विदारिका । वज्र्यकौ मेपशृंगी च कर-
वीरद्वयं वचा ॥ काकजंघा त्वपामार्गवला चातिबलाद्वयम् ।
व्याथ्री, महाबला वासा सोमवल्ली प्रसारिणी ॥ पलोन्मितानि

चैतानि द्रोणैर्भसि विनिःक्षिपेत् । पचेत्पादावशेषेस्मिन्कल्कस्य
कुडवं क्षिपेत् ॥ त्रिकटुं विपत्तिदुं च रास्ना कुप्टं विपं घनम् ।
देवदारुर्वत्सनाभो द्वौ क्षारौ लवणानि च ॥ तुत्थकं कट्फलं
पाठा भार्ङ्गी च नवसागरम् । त्रायंती धन्वयासं च जीरकं
चंद्रवारुणी ॥ तैलप्रस्थं समादाय पाचयेन्मृदुवह्निना । विपग-
र्भमिदं नाम्ना सर्वान्वातान्व्यपोहति ॥ वक्षोरूकटिजंघानां सं-
धानं श्रेष्ठमेव च । गृध्रसीं च महावातान्सर्वाग्रहणं तथा ॥ दं-
डापतानकं चैव कर्णनादं च शून्यताम् । वनमध्ये यथा सिंहा-
त्पलायंते यथा मृगाः ॥ तथाश्वगजभयानां नराणां च चतुष्प-
दात् । नाशयेन्नात्र संदेहो विपगर्भप्रलेपनात् ॥

अर्थ—घृत्तरा, निर्गुडी, सपेद तुंबी, पुनर्नवा, अंड, असगंध, पवाड, चित्रक, सह-
जना, मकोय, बहेडा, नीम की छाल, बकायन, वांश ककोडी, दशमूल, शतावर,
हरेला, सारिवा, सपेद कोयल, मुंडी, विदारीकंद, थूहर, आक, मेडासिंगी, लाल और
उपेद कनेर. वच, काकजंघा, आंगा, बला, अतिबला, नागबला, कटेरी, महाबला, अडूसा,
ओमवल्ली और प्रसारणी ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. सब को जोंकूट करके १०२४
तोले जल में औटायके जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेवे और इस में
त्रेकुटा, कुचला, रास्ना, कूठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, सिंगिया विप, जवाखार,
गुहागा, सैंधानिमक, बिडानिमक, संचरनिमक, समुद्रनिमक, लीला योथा, कायफल,
गढ की जड, नोसदर, त्रायमाण, धमासा, जीरा और इन्द्रायण इन का चूर्ण प्रत्येक
१६ तोले डाठके इस में ६४ तोले तेल डाल मंदाग्निर पर पक करे. इस को विप-
गर्भतैल कहते हैं. यह सब वातरोगों को नाश करे और ऊरु, वक्षस्थल, जंघा तथा
शंघि इन ठिकाने की वायु, आख्यवात, गृध्रसी, महावात, सर्वांगवात, दंडापतानक,
कर्णनाद तथा शून्यता इन को नाश करे और जैसे वन में सिंह से मृग डरकर भाग
ताते हैं उसी प्रकार घोडा और हाथी इन से गिरने से दूटे हुए हाड अथवा पशु इन
की व्याधि को नाश करे इस में संदेह नहीं है ॥

प्रसारिणीतैल

७ समूलपत्रां पुष्पाढ्यां जातसारां प्रसारिणीम् । कुट्टयित्वा पल-
शतं कटाहे समधिश्रयेत् ॥ दध्नस्तत्राढकं दद्यात् द्विगुणं चा-

म्लकांजिकम् । भेषजानि तु पेप्याणि तत्रेमानि समावपेत् ॥
 शुंठी पलानि पंचैव रास्नायाश्च पलद्वयम् । प्रसारिणीपले द्वे च
 द्वे पले मधुकस्य च ॥ एतत्सर्वं समालोच्य शनैर्मृद्वाग्निना पचेत् ।
 एतत्प्रभञ्जने श्रेष्ठं नस्यकर्मणि शस्यते ॥ एकांगग्रहणं वापि
 सर्वांगग्रहणं तथा । अपस्मारं तथोन्मादं विद्रधि मंदवह्निताम् ॥
 त्वग्गताश्चापि ये वाताः शिरासंधिगताश्च ये । अस्थिसंधिगता
 ये च ये च शुक्रार्तवे स्थिताः ॥ सर्वान्वातामयान्नूनं नाशय-
 त्येव सर्वथा । ह्यं नरं गजं वापि वातजर्जरितं भृशम् ॥ सद्यः
 प्रशमयेत्तैलमेतन्नात्र विचारणा । इंद्रियस्य प्रजननं बंध्यानां च
 प्रजाकरम् ॥ वृद्धानां बालकानां च स्त्रीणां राज्ञां हितं परम् ।
 पंगुर्वा पीठसर्पिर्वा पीत्वैतत्संप्रधावति ॥

अर्थ—जड़, पत्ता और फूलसहित तथा जिस में सत्व हो गया हो ऐसी प्रसारणी
 ४०० तोले को कूट एक कडाही में सिजावे. उस में २५६ तोले दही, ५१२ तोले
 खट्टी कांजी डालके फिर सोंठ २० तोले, रास्ना ८ तोले, प्रसारणी ८ तोले, मुळ-
 हटी ८ तोले इस प्रकार उस में डालके मिलाय देवे. फिर इस में तेल डालके मंदा-
 ग्निपर पक करे. यह वादीपर नस्य करने में उत्तम है. एकांगग्रहण, सर्वांगग्रहण, अप-
 स्मार, उन्माद, विद्रधि, मंदाग्नि, त्वचा, मस्तक, शिरा, आस्थि, शुक्र, आर्तव इतने
 ठिकाने की पवन, सर्व वादी के रोग इन को निश्चय करके नाश करे. तथा घोडा,
 हाथी, मनुष्य इन में से कोई भी वादी से जर्जरित होवे तो तत्काल यह तेल आ-
 रोग्य करे. इस में संशय नहीं है. इंद्रियजनक, बंध्या स्त्री के संतान देनेवाला, वृद्ध,
 बालक, स्त्री और राजा इन को हितकारी है. तथा पांगुला किंवा कूख को टेढ़ा करके
 चलनेवाला ऐसा मनुष्य इस तेल को पीकर दौड़ने लगे ॥

नारायणतैल

विल्वोद्भिर्मथः स्योनाकपाटलापारिभद्रकाः । प्रसारिण्यश्वगंधा
 च बृहती कंटकारिका ॥ बला चातिबला चैव श्वदंष्ट्रा सपुन-
 र्नवा । एषां दश पलान् भागान् चतुर्द्वीणांभसा पचेत् ॥ पाद-
 शेषं परिस्त्राव्य तैलपात्रे प्रदापयेत् । शतपुष्पा देवदारु मांसी

शैलेयकं वचा ॥ चंदनं तगरं कुष्ठमेलापर्णीचतुष्टयम् । रास्त्रा
 तुरगगंधा च सैंधवं सपुनर्नवम् ॥ एपां द्विपलिकान् भागान् पेप-
 यित्वा विनिःक्षिपेत् । शतावरीरसं चैव तैलतुल्यं प्रदापयेत् ॥
 आजं वा यदि वा गव्यं क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम् । पाने वस्तौ
 तथाभ्यंगे भोज्ये नस्ये प्रयोजयेत् ॥ अश्वो वा वातभग्नो वा
 गजो वा यदि वा नरः । पंगुर्वा भग्नहस्तो वा भग्नपादोथ वा
 नरः ॥ अधोभागे च ये वाताः शिरामध्यगताश्च ये । दंतशूले
 हनुस्तंभे मन्यास्तंभेपतंत्रके ॥ एकांगग्रहणे वापि सर्वांगग्रहणे
 तथा । क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा ज्वरक्षीणाश्च ये नराः ॥ लाल-
 जिह्वाश्च वधिरा विखरा मंदमेधसः । मंदप्रजा च या नारी
 या च गर्भं न विंदति ॥ वातातौ वृषणौ येषामंत्रवृद्धिश्च
 दारुणा । एतत्तैलं वरं तेषां नाम्ना नारायणं स्मृतम् ॥

अर्थ—बेलगिरी, अरनी, टेढ़, पाट, नीम की छाल, प्रसारिणी, असगंध, बंडी क-
 टेरी, छोटी कटेरी, बला, अतिबला, गोखरू, पुनर्नवा ये प्रत्येक चालीस २ तोले लेकर
 १०९६ तोले जल में डालके आँटावे जब जल चतुर्धाश रहे तब उतारके जल को छान
 लेवे और इस को तेल के पात्र में डाल देवे फिर इस में सोंफ, देवदारु, जटामांसी,
 शिलाजीत, वच, चन्दन, तगर, कूट, इलायची, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, सुद्रपर्णी, माप-
 पर्णी, रास्त्रा, असगंध, सैंधानिमक, सपेद पुनर्नवा इन प्रत्येक को आठ २ तोले
 चूर्ण करके डाले तथा तेल की बराबर शतावर का रस डाले। बकरी का अथवा गौ
 का दूध तेल से चौगुना डाले इस प्रकार सब को एकत्र करके तेल को सिद्ध करे यह
 सिद्ध हुआ तैल पान, वस्ती, मालिस, भोज्य पदार्थ के साथ सेवन तथा नस्य इन
 में योजना करने से घोडा, हाथी, मनुष्य, पंगुए अथवा हाथ पैर जिस के भुंड गये
 हों वह अच्छा होय और अधोभाग की वादी, शिरामध्यगत, दंतशूल, हनुस्तंभ, मन्या-
 स्तंभ, अपतंत्रक, एकांगग्रहण, सर्वांगग्रहण, क्षीणेन्द्रिय, नष्टशुक्र, ज्वर से क्षीण, लाल-
 जिह्व, बहरे, बुरे स्वरवाले, अल्पबुद्धि, अल्पप्रजा स्त्री, वन्ध्या स्त्री, वृषणवात, अन्त्रवृद्धि
 इन पर यह नारायण तैल अतिहितकारी है ॥

दूसरा प्रकार

अश्वगंधा बला विल्वं पाटला बृहतीद्वयम् । श्वंद्रातिबला निंबः

स्योनाकं च पुनर्नवा ॥ प्रसारिणीमग्निमंथः कुर्याद्दशपलं पृ-
थक् । चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा पादशेषं सृतं नयेत् ॥ तैलाढकेन
संयोज्य शतावर्या रसाढकम् । क्षिपेत्तत्र च गोक्षीरं तैलात्तस्मा-
च्चतुर्गुणम् ॥ शनैर्विपाचयेदेभिः कल्कैर्द्विपलिकैः पृथक् । कुष्ठैला
चंदनं मूर्वा वचा मांसिससैंधवैः ॥ अश्वगंधा बला रास्ना शत-
पुष्पेद्रदारुभिः । पर्णीचतुष्टयेनैव तगरेणैव साधयेत् ॥ ततैलं
नावनेभ्यंगे पाने वस्तौ च योजयेत् । पक्षघातं हनुस्तंभं मन्या-
स्तंभं गलग्रहम् ॥ खल्लत्वं बधिरत्वं च गतिभंगं गलग्रहम् । गा-
त्रशोषेन्द्रियध्वंसे असृक्शुक्ले ज्वरे क्षये ॥ अंडवृद्धिकुरंडं च दं-
तरोगं शिरोग्रहम् । पार्श्वशूलं च पांगुल्यं बुद्धिं हानिं च गृध्र-
सीम् ॥ अन्यांश्च विपमान्वातान् जयेत्सर्वांगसंश्रयान् । अस्य
प्रभावाद्ब्रंध्यापि नारी पुत्रं प्रसूयते ॥ मर्त्यो गजो वा तुरगस्तैला-
भ्यंगात्सुखी भवेत् । यथा नारायणो देवो दुष्टदैत्यविनाशनः ॥
तथैवं वातरोगाणां नाशनं तैलमुत्तमम् ॥

अर्ध-असगंध, खिरेटी, बेलगिरी, पाठ, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, अतिबला,
नीम की छाल, टेंदू, पुनर्नवा, प्रसारिणी, अरनी ये तेरह औषध दश दश पल लेवे-
जौ कूटकर चार द्रोण जल में डालके औटावे जब चतुर्याश जल रहे तब उता, एक
छान लेय और तिल का तेल इस में एक आढक डाले तथा सतावर का स्वरस एक
आढक तथा गौ का दूध चार आढक उस तेल में डालके इस में कल्क करके डाले, अने
की दवाई इस प्रकार डाले. कूठ, इलायची, सपेद चंदन, वच, जटामांसी, सेंधा, कति-
मक, असगंध, खिरेटी की जड़, रास्ना, सौंफ, देवदारु, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी, नी-
मापपर्णी, ताम्रपर्णी और तगर ये सत्रह औषधि दो दो पल लेवे. सब का कल्क करके
उस काठे में डाल देवे. फिर इस को भट्टी पर चढाय मंद अग्नि से परिपक करे. जब
केवल तेल मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे. इसको नारायण तैल कहते हैं.
यह तैल नाक में डालना, देह में लगाना तथा पीना और वस्तिकर्म इन में देना
चाहिये. इस से पक्षाघात, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ और गलग्रह, देह का सुखना, इन्द्रि-
का नाश, रुधिर वीर्य के क्षय में तथा ज्वर के क्षय में, खल्ली, बहरा, गतिभंग, गलग्रह,
अंडवृद्धि, कुरंड, दंतरोग, शिरोग्रह, पार्श्वशूल, पांगुलापन, बुद्धि की हानि, गृध्रसी

और जो अन्य विषमवात है उन सब को यह दूर करे इस के प्रभाव से वन्ध्या के पुत्र होय हाथी, घोड़े, मनुष्य इस तेल की मालिस करने से सुखी होवे. जैसे नारायण देव दुष्ट दैत्यों का नाश करे है उसी प्रकार वह नारायण तेल सर्व दुष्ट रोगों का नाश करे है॥

शतावरीतैल

शतावरी बलायुग्मं पर्ण्यौ गंधर्वहस्तकः । अश्वगंधाश्वदंष्ट्रा च
विल्वः काशः कुरंतकः ॥ एतान् सार्धपलान् भागान् कल्पयेच्च
विपाचयेत् । चतुर्गुणेन नीरेण पादशेषं सृतं नयेत् ॥ नियोज्य
तैलप्रस्थे च क्षीरप्रस्थं विनिःक्षिपेत् । शतावरीरसप्रस्थं जलप्र-
स्थं च योजयेत्॥शतावरी देवदारु मांसी तगरचंदनम् । शतपु-
ष्पा बला कुष्ठमेला शौलेयमुत्पलम् ॥ ऋद्धिमेदा च मधुकं कां-
कोली जीवकस्तथा । एषां कर्षसमैः कल्कैस्तैलगोमयवन्हि-
ना ॥ पचेत्तेनैव तैलेन स्त्रीषु नित्यं वृषायते । नारी च लभते
पुत्रं योनिशूलं च नश्यति ॥ अंगशूलं शिरःशूलं कामलां पां-
डुतां गरम् । गृध्रसीं ष्टीहशोपांश्च मेहान् दंडापतानकम् ॥
सदाहं वातरक्तं च वातपित्तगदादितम् । असृग्दरं तथाध्मानं
रक्तपित्तं च नश्यति ॥ शतावरीतैलमिदं कृष्णात्रेयेण भापितम् ॥

अर्थ—शतावर, खिरेटी, गगेरन, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, अंड की जड़, असगंध, बेल-
गिरी, कास, कुश, पियावासा ये ग्यारह औषध डेढ२पल लेवे. सब औषधों से चौगुना
जल डालके काढा करे. जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. इस काढे में
तिली का तेल १ प्रस्थ मिलावे और गौ का दूध १ प्रस्थ तथा शतावर का रस १
प्रस्थ, एवं जल १ प्रस्थ उस तेल में डालके उस में कल्क करके डालने की औ-
षध आगे लिखी है उन को डाले. जैसे शतावर, देवदारु, जटामांसी, तगर, सपेद
चंदन, सोंफ, खिरेटी की जड़, कूठ, इलायची, पत्थर का फूल, कमल, ऋद्धि के
अभाव में वाराहीकंद, मेदा के अभाव में मुलहठी, महुआ की छाल, कंकोली के
अभाव में असगंध और जीवक इन सब का तोले २ भर कल्क करके तथा इन से चौ-
गुना अंडी का तेल लेकर उस में उस कल्क को डालके पाक करने के वास्ते कल्क से
चौगुना जल डाले. जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके तैल को छान लेवे. यह तेल
जिस मनुष्य के वातरक्त होय उस के देह में मालिस करे तो वातरक्त दूर होय ॥

मापतैल

मापप्रस्थं समावाप्य पचेत्सम्यग्जलाढके । पादशोपे रसे तस्मिन्
क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् ॥ प्रस्थं च तिलतैलस्य कल्कं दत्त्वा-
क्षसंमितम् । जीवनीयानि यान्यष्टौ शतपुष्पा ससंधवा ॥
रास्नात्मगुप्ता मधुकं वला व्योपं त्रिकंटकम् । पक्षाघातादिते
वाते कर्णशूले च दारुणे ॥ मंदश्रुतौ च श्रवणे तिमिरे च विदो-
पजे । हस्तकंपे शिरःकंपे बाहुशोपेवबाहुके ॥ शस्तं कला-
यखंजे च पानाभ्यंजनवस्तिभिः । मापतैलमिदं श्रेष्ठमूर्ध्वज-
शुगदापहम् ॥

अर्थ—उदद ६४ तोलों को २५.६ तोले जल में डालके ओटावे. जब जल चतु
र्थांश रहे तब उस में चौगुना दूध तथा तिलों का तेल ६४ तोले और जीवनीयग
की आठ औषधी, सोंफ, संधानिमक, रास्ना, कौंच के बीज, मुलहठी, खिरेटी, सोंठ
मिरच, पीपल और गोखरू ये तोले २ भर लेवे. सब का कल्क करके उस तेल में
डालके तेल सिद्ध करे. यह पक्षाघात, आदितवायु, दारुण कर्णशूल, बहरापना
तिमिररोग, संनिपातज रोग, हस्तकंप, शिरःकंप, बाहुशोप, अपबाहुक और कलायखंज
इन रोगों पर इस तेल को पीवे तथा लगावे. वस्तिकर्म इन में योजना करे यह माप
तैल संपूर्ण ऊर्ध्वजत्रु के रोगों का नाश करने में श्रेष्ठ है ॥

चौथा विपगर्भतैल

तैलं कृष्णातिलोद्भूतं सर्पपैरंडसंभवम् । उभावपि च तुल्यांशं
सर्वं क्षोणमितं पचेत् ॥ तक्ष्यमाणौषधीभिस्तु लोहपात्रे क्रमा-
ग्निना । पश्चान्मानद्रवं क्वाथे वस्त्रपूतं विधाय च ॥ गर्भे विषं
प्रदातव्यं तस्मात्तद्विपगर्भकात् । धत्तूरकरवीरार्कं लांगल्यं
कोष्णवज्रकम् ॥ महानिंबत्रिवृहंती देवदाली प्रसारिणी । ज्यो-
तिष्मती शिशुमूलं केतकी च पुनर्नवा ॥ कुलित्यमापकार्पास-
बीजं भृंगरसान्वितम् । लाक्षारसं छागमांसं शणबीजं समं पृ-
थक् ॥ व्याघ्रवाराहजंबूकवसाप्रस्थद्वयं द्वयम् । विपमष्टपलं
ज्ञेयमन्यत्सर्वं पलद्वयम् ॥ प्रत्येकमौषधं ग्राह्यं मंजिष्ठाया द्विप्र-

स्थकम् । त्रिकटु त्रिफला कुष्ठं रास्ना मांसी सठी वचा ॥ चित्रकं
 देवदारुश्च वाकुचीन्द्रियवामृता । विडंगं रेणुका मुस्तं पंचकोलं
 यवानिका ॥ शम्याकं खदिरं सारं मधूकद्रुमबीजयोः । अज-
 मोदा च तगरं सैंधवं रक्तचंदनम् ॥ हरिद्राद्वयसिक्थं च चतुर्जातं
 सचंदनम् । लोहभस्माभ्रकं वंगं पाकं कौसीसमेव च ॥ मनः-
 शिला लेदरदकृष्णागरुनखांडिकम् । सिल्हारं रसगोधूमं कुंकु-
 मेदमृगांडजम् ॥ सर्वमेतत्सुगंधार्थं सिद्धतैले विनिःक्षिपेत् ।
 अशीतिर्वातजान् रोगानामवातान् सुदुस्तरान् ॥ वातश्लेष्मसमु-
 द्भूतान् कटिजान् रूजंघजान् । गृध्रसीं च हनुस्तंभं मन्यास्तंभं
 प्रकंपनम् ॥ पक्षाघातं पंगुतां च नाशयेदववाहुकम् ॥

अर्थ—काले तिलों का तेल, सरसों का तेल और अंडी का तेल इन सब को
 मिलायके १०२४ तोले लेय. फिर उस को लोह के कटाव में डालके उस में
 घवरा, कनेर, आक, कल्यारी, कूठ, धूर, बकायन, निसोय, जमालगोटा, बंदाल,
 प्रसारणी, मालकांगनी, सहजने का कंद, केतकी, पुनर्नवा, कुलथी, उडद, विनोले
 ये प्रत्येक आठ २ पल लेवे सब का काटा और भांगरे का रस, लाख का सीरा,
 बकरे का मांस तथा सन के बीज ये प्रत्येक १२८ तोले तथा वघेरा, सूअर और
 स्यार इन प्रत्येक की चर्बी १२८ तोले और सिंगियाविप ८ तोले, मजीठ १२८
 तोले और सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला, कूठ, रास्ना, जटामांसी,
 कजूर, वच, चित्रक, देवदार, वावची, इंद्रजो, गिलोय, वायविडंग, रेणुकबीज,
 नागरमोथा, पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, अजमायन, अमलतास का
 गूदा, खैरसार, मौआ की छाल, अजमोद, तगर, सैंधानिमक, लालचंदन, हलदी,
 दारुहलदी, मोम, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, सपेद चंदन ये प्रत्येक
 आठ २ तोले लेवे. इन के काटे में तेल मिलायके सिद्ध करे. उस में लोहभस्म,
 बंगभस्म, सैंधानिमक, हीराकसीस, मनसील, हींगलू, काली अगर, नख, जवादा,
 शिलारस, गेंहू, केशर और कस्तूरी ये पदार्थ सुगंधार्थ उस सिद्ध तेल में डाले. यह
 तेल अस्सी प्रकार की वादी, आमवात, वातकफ, कमर, जानू, ऊरु, जंघा इन में
 रहनेवाली वादी, गृध्रसी, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ, कंप, पक्षाघात, पांगुला (लंगडा)
 पना और अपवाहुक इन को नाश करे ॥

लघुनारायणतैल

एलावलानतकुचंदनदारुसौम्याशैलेयकुष्ठकुटिलावरुणश्रितेन ।

तैलं सदुग्धमिति सिद्धमभिरुक्तं दतोयेन तेन लुलितेन समारणम् ॥

अर्थ—इलायची, खिरटी, तगर, लालचंदन, दारुहलदी, इन्द्रायन, पत्थर का फूल, कूठ, कुल्लिजन, मूवा और बर्ना इन के काटे से तिल के तेल दूध मिलायके पकावे. जब सिद्ध हो जावे तब उतार ले. इस में शतावर के कंद का रस डालके उपयोग करे तो वादी का नाश करे ॥

शतावरी नारायणतैल

शतावरी चांशुमती पृश्निपर्णी सठी बला । एरंडस्य च मूलानि

बृहत्यो पूतिकस्य च ॥ गवेषुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य

च । एतान्दशपलान्भागान् जलद्रोणे पचेद्दुधः ॥ पादावशेषे

पूते च गर्भे चैतान्समावपेत् । पुनर्नवा वचा दारु शताह्वा चं-

दनागरुः ॥ शैलेयं तगरं कुष्ठं त्रुटी मांसी स्थिरा बला । अश्वह्वा

सैधवं रास्ना मंजिष्ठा घनचोरकम् ॥ कौंतीप्रियंगुस्थौणेयं

पलाथै कल्पयेत्पृथक् । गव्याजपयसोः प्रस्थौ द्वौ द्वावत्र प्रयोज-

येत् ॥ शतावरीरसप्रस्थं तैलप्रस्थं भिषक् पचेत् । लवंगनखकं-

कोलवेलेकं जीरकं भिषक् ॥ त्वक्कटुकं च कर्पूरं तुरुष्कश्रीनि-

वासकम् । स्पृक्का कुंकुमकस्तूरी दद्यादत्रावतारिते ॥ अश्वतैल-

स्य सिद्धस्य शृणु वीर्यमतः परम् । अश्वानां वातरुग्णानां कुंज-

राणां तथा नृणाम् ॥ तैलमेतत्प्रयोक्तव्यं सर्ववातविकारनुत् । आ-

युष्मांश्च नरः पीत्वा निश्चयेन दृढो भवेत् ॥ गर्भमश्वतरी विद्या-

त्किं पुनर्मानुषी तथा । हृच्छूलं पार्श्वशूलं च तथैवार्धावभेद-

कम् ॥ अपर्ची गंडमालां च वातरक्तं हनुग्रहम् । कामलाम-

श्मरीं पांडुमुन्मादं च नियच्छति ॥ नारायणेन गदितं तैलमेत-

त्कृपालुना । नारायणमिति ख्यातं नाम्ना तस्मादिदं भुवि ॥

अर्थ—शतावर, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कचूर, खिरहटी, अंड की जड़, कटेरी, बड़ी कटेरी

कंजा, कसौंदी की जड़, पियावासे की जड़ ये प्रत्येक ४० तोले लेवे. जल ५०२४ तोले

इस में डालके काटा करे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय और इस में पुनर्नवा, वच, दारुहलदी, शतावर, चंदन, काली अगर, शिलाजीत, तगर, कूठ, छोटी इलायची, जटामांसी, तुलसी, खिरेटी की जड़, असगंध, सैंधानिमक, रास्ना, मजीठ, नागरमोया, गठोना, रेणुकबीज, फूलप्रियंगु, स्थौण्य (ग्रंथिपर्णी का भेद) ये प्रत्येक ५ पांच तोले लेवे. इन का कल्क, गौ का और बकरी का दूध प्रत्येक दो दो सेर, शतावर का रस १ सेर और तेल १ सेर लेवे. इन सब को एकत्र करके तेल सिद्ध करे. फिर उतारके इस में लौंग, नख, कंकाल, वायविडंग, जीरा, दालचीनी, कुटकी, कपूर, शिलारस, सरल का गोंद, स्पृका, केशर, कस्तूरी ये औषध डाले तो यह तेल सिद्ध होवे. यह वादी से पीडित घोडा, हाथी और मनुष्य इन को देने से सर्व वातविकार नाश करे. जो पुरुष इस को पीवे तो दीर्घायु होकर बली होय. इस तेल से घोड़ी के गर्भ रहे. फिर मनुष्यों की क्या कहना है. यह हृदयशूल, पार्श्वशूल, आधासीसी, अपची, गंडमाला, वातरक्त, हनुग्रह, कामला, पथरी, पांडुरोग, उन्माद इन को नाश करे. यह तेल कृपालु नारायण ने कहा है इसी वास्ते इस को नारायणतैल कहते है ॥

दूसरा शतावरीतैल

रुग्दारु द्रविडी प्रियंगु तगरत्वक्पत्रकोतीनखैर्मत्सी सर्जरसांबु
चंदनवचाशैलेयलामज्जकैः । मंजिष्ठा सरलागुरु द्विपत्रला रास्ना-
श्वगंधा वरी वर्षाभूमिसिसिंधुभिश्च सकलैरेभिः पचेत्कलिकृतैः ॥
तुल्यं गोपयसा वरीरससमं तैलं विपकं मुदु स्याद्वातघ्नमिदं
नृणामिति वरीतैलं भिषक्पूजितम् ॥

अर्थ—कूठ, दारुहलदी, इलायची, प्रियंगु, तगर, दालचीनी, पत्रज, रेणुकबीज, नख, जटामांसी, सर्जरस, नेत्रवाला, चंदन, वच, शिलाजीत, लामज्जक (पीला सुगंधित तृण), मजीठ, देवदारु, अगर, नागबला, रास्ना, असगंध, शतावर, पुनर्नवा, सोंफ और सैंधानिमक इन का कल्क करके उस में शतावर का रस और उतना ही गौ का दूध डालके पचन करे तो मनुष्य को उत्तम वातनाशक है. यह वैद्यांकरके पूजित हो गया है ॥

दशमूलदितैल

दशमूलकपायविपक्वमथो पयसा च समेन बलाब्दनलैः ।
शुटिचंदनदारुलतानलदैररुणाजतुकुष्ठवचाकुटिलैः ॥ इति

पक्वमिदं तिलजं जयति प्रसभं पवनामयमाशु नृणाम् । बल-
शुक्रविभारुचिवह्निकरं नृपवृद्धशिशुप्रमदासु हितम् ॥

अर्थ—दशमूल का काढा और दूध दोनों समान भाग ले. बला, नागरमोथा, तालीसपत्र, इलायची, चंदन, दारुहलदी, मालकांगनी, वाला, मजीठ, लाख, कूठ, वच और तगर इन का कल्क, तिलों का तेल इन सब को एकत्र करके पचावे तो तेल सिद्ध होय. यह तेल अपने बल से संपूर्ण वातरोगों को नष्ट करे और बल, धातु, कांति, रुचि और अग्नि इन को बढ़ावे तथा राजा, वृद्ध, बाल और स्त्रियों को हितकारी है ॥

तीसरा प्रसारिणीतैल

समूलदलशाखायाः प्रसारण्याः शतत्रयम् । शतमेकं शतावर्या
अश्वगंधाशतं तथा ॥ केतकीनां शतं चैकं दशमूलं शतं
शतम् । वाड्यालकस्यापि शतं शतं सहचरस्तथा ॥ जलद्रोण-
शतं दत्त्वा शतभागावशेषतः । ततस्तेन कषायेण कषायद्वि-
गुणेन च ॥ सुव्यक्तेनारनालेन दधिमंडाढकेन तु । क्षीरशुक्लेक्षु-
निर्यासछागमांसरसाढकैः ॥ तैलद्रोणसमायुक्तं दृढे पात्रे निधा-
पयेत् । द्रव्याणि यानि क्षेप्याणि तानि वक्ष्याम्यतः परम् ॥
भल्लातकं नतं शुंठी पिप्पली चित्रकं सठी । वचा स्पृक्का प्रसा-
रिण्या पिप्पलीमूलमेव च ॥ देवदारु शताह्वा च सूक्ष्मैला
त्वचफालकम् । कुंकुमं मंदमजिष्टारूपकरं नखिकागुरु ॥ कर्पूरं
कुंदरुनिशालवंगं ध्यामचंदनम् । कंकोलं नलिका मुस्ता का-
लियोत्पलपत्रकम् ॥ सठी हरेणुशैलेयं श्रीवासं च सकेतकम् ।
त्रिफला कच्छुरा भीरु सरलं पद्मकेसरम् ॥ प्रियंगुशीरबलदं
जीवकाद्यं पुनर्नवा । दशमूलानि गंधं च नागपुष्पं रसांजनम् ॥
कटुका जातिपुत्रागो फलानि सल्लकीरसम् । भागांस्त्रिपलिकान्
दत्त्वा शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥ विस्तीर्णं सुदृढे पात्रे पाच्यैषा तु
प्रसारिणी । प्रयोगः षड्विधश्चात्र रोगार्तानां प्रशस्यते ॥ अभ्यं-
गात्त्वग्गतं हंति पानात्कोष्ठगतं तथा । भोजनात्सूक्ष्मनाडी-

स्थान्नस्यादूर्ध्वगतांस्तथा ॥ पक्षाथ्रयगते वस्तिर्निरूहः सार्व-
कायिके । एतद्धि वटुकार्तानां किशोराणां यथामृतम् ॥ एतदेव
मनुष्याणां कुंजराणां गवामपि । अनेनैव च तैलेन शुष्यमाणा
महाद्रुमाः ॥ सिक्ताः पुनः प्ररोहंति भवंति फलशालिनः ।
वृद्धोप्यनेन तैलेन पुनश्च तरुणायते ॥ न प्रसूयेत या नारी पाय-
यित्वा प्रसूयते । अप्रजाः पुरुषो यस्तु पीत्वाशु लभते सुतम् ॥
अशीतिं वातजान् रोगान् पैत्तिकान् श्लैष्मिकानपि । सन्निपात-
समुत्थांश्च नाशयेत्क्षिप्रमेव च ॥ एतेनांधकवृष्णीनां कृतं पुंस-
वनं महत् । कृत्वा विष्णोर्वलिं चापि तैलमेतत्प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-प्रसारणी का पंचांग ३०० तोले, शतावर ४०० तोले, असगंध ४००
तोले, केतकी ४०० तोले, दशमूल की औषधि प्रत्येक ४०० तोले, खिरेटी ४००
तोले, पियावासा ४०० तोले और जल १०० द्रोण लेवे. सब को जल में डालके
काढा करे जब जल का शतांश शेष रहे अर्थात् १०२४ तोले जल बाकी रहे तब
उस काढे में काढे से दूनी कांजी डाले. दही का पानी १०२४ तोले, दूध, सपेद ईख
का रस और बकरे का मांसरस ये प्रत्येक १०२४ तोले और तिलों का तेल १०२४
तोले डालके फिर उस में भिलाए, तगर, सोंठ, पीपल, चित्रक, कचूर, वच, मूर्वा,
लजालू, पीपरामूल, देवदारु, शतावर, इलायची, दालचीनी, नेत्रवाला, केशर, क-
स्तूरी, मजीठ, भिलाए, नखद्रव्य, अगर, कपूर, कुंदरू, हलदी, लौंग, रोहिपट्टण,
चंदन, कंकोल, नलिका द्रव्य, नागरमोथा, दारुहलदी, कूठ, पत्रज, कचूर, रेणुक-
बीज, शिलारस, काली अगर, केतकी, हरड, बहेडा आमला, कपूरकचरी, शतावर,
सरल, देवदारु, कमल की केशर, प्रियंगु, सप्त, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा,
काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, मापपर्णी, सपेद मुसली, काली मुसली, पुनर्नवा,
दशमूल, लाल बोल, नागकेशर, रसोत, कुटकी, जाई, पुत्राग के फल, सल्लकी का
रस ये प्रत्येक बारह २ तोले लेवे. इन सब का कल्क करके उस में भिलाय देवे.
फिर भट्टीपर चढायके मंद २ अग्नि से पचन करे. जब सब रस जलके केवल तेलमात्र
आय रहे तब उत्तारके छान लेवे. इस के मालिस करने से त्वचागत वात, पीने से
कोष्ठगत वात, भोजन के साथ सेवन करने से नाडीगत, नस्य से ऊर्ध्वगत,
वस्तीद्वारा पक्षाश्रित और निरूहवस्तिद्वारा सर्वातर्गतवायु इस प्रकार छः प्रकार की
वायु को उपयोगी है. तथा बालक, किशोरों को अमृत के समान है. तथा यह हाथी,
घोडा, गौ इन को भी देवे तथा जो वृक्ष सूख गया हो उस के इस को लगावे तो

फिर उत्तम रीति से हरा हो जावे तथा फलपुष्पयुक्त हो. वृद्ध पुरुष इस के लगाने से तरुण होय. जिस के बालक न होता होय उस के बालक प्रगट करे. लगाने से जिस के पुत्र न होता हो वह पीवे तो उस के पुत्र होय. यह वात, पित्त, कफ और सन्निपात संबंधी व्याधि को तत्काल नाश करे. इसी तैल के प्रताप से अंधक, वृष्णी-जाति के यादवों को पुत्रोत्पत्ति हुई इस तेल को प्रथम विष्णुवली करके तयार करे ॥

चौथा प्रसारिणीतैल

प्रसारिणीकाथपयोंबु तक्रं मस्त्वारनालं दधिभिस्तु तैलम् ।
कल्कीकृतं विश्वघनांबु कुष्ठं मांसी शताह्वामरदारुसेव्यैः ॥ शै-
लेन रास्नागुडसारिवाभिः सिंधूत्थविल्वानिलमंथमोचैः । सामृ-
ग्लतां सोजपुनर्नवास्यस्योनाकयष्ट्याह्वकुटंनटैश्च ॥ छिन्नोद्भवा
दाव्यंभयाकरंजमेदा निशा द्वे सफलत्रयैश्च । एरंडमेकं कटुजी-
विताश्च तत्साधितं हंत्यनिलोत्थरोगान् ॥ सर्वांश्च दीप्तानपि
पक्षघातान्वाताश्रितानाहहनुग्रहादीन् । मृगध्रसीविश्वविवाहु-
शोपं हृन्मूर्धसंस्थांश्च गदांश्च तांस्तान् ॥ संशुष्कभग्नं प्रथलां-
गयष्टिं योसाध्यतामुल्बणमारुतेन । नीतः पुमांस्तस्य भवेद-
वश्यं प्रसारिणीतैलमिदं हिताय ॥

अर्थ—प्रसारणी का काढा, दूध, छाछ, दही का जल, कांजी, दही और तेल ऐसे एकत्र करे फिर सोठ, नागरमोथा, नेत्रवाला, कूठ, जटामांसी, शतावर, देवदारु, खस, शिलाजीत, रास्ना, गुड, सारिवा, सैधानिमक, बेलगिरी, अंड की जड, मोचरस, मुद्गप-
णों, पुननैवा, रुद्राक्ष, अमलतास का गूदा, मुलहठी, टैटू, गिलोय, दारुहलदी, हरड, कंजा, मेदा, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आमला, अंडी और चित्रक इन का कल्क करके तेल सिद्ध करे यह वातरोग, संपूर्ण पक्षवात, वातसंबंधी व्याधि, अफरा, हनुग्रह, गृध्रसी, विश्वाची, अपवाहुक, शोप और हृदय मस्तक इन के रोग, शुष्क-
वात, भग्नवात और मोडनेवाली वात तथा उल्बण वात रोग इन पर हितकारी है ॥

पंचम प्रसारिणीतैल

चतुःप्रस्थं प्रसारिण्याः पचेत्तोयार्मणे शुभे । पादे शिष्टे समं
तैलं दधि दद्यात्सकांजिकम् ॥ द्विगुणं च पयो दद्यादन्येषां क-
ल्ककांस्तथा । चित्रकं पिप्पलीमूलं मधुकं सैधवं वचा ॥ शत-

पुष्पा देवदारु रास्ना वारणपिप्पली । प्रसारिण्याश्च मूलानि मां-
सीभल्लातकानि च ॥ पचेन्मृद्वाग्निना तैलं वातश्लेष्मामयाञ्जयेत् ।
अशीतिर्नरनार्युत्थान्वातरोगान्व्यपोहति ॥ कुब्जं स्तिमितपंगुं
च गृध्रसीं खंडकार्दितम् । हनुपृष्ठशिरोश्रीवास्तंभं चापि
नियच्छति ॥

अर्थ-प्रसारणी २५६ तोले को १०२४ तोले जल में काढा करे. जब चतुर्थांश
रहे तब उस के समान भाग तेल, दही, कांजी ये मिलायके दूध के काढे से दूना
ढाले और चित्रक, पीपरामूल, मुलहठी, सेंधानिमक, सोंफ, देवदारु, रास्ना, गजपी-
पल, प्रसारणी की जड़, जटामांसी और भिलाए इन का कलक ढालके तैल को
सिद्ध करे यह वात के रोग स्त्रियों के और पुरुषों के वात के रोग इन को नाश करे ॥

छठा विपगर्भतैल

विपं च पुष्करं कुष्ठं वचा भार्ङ्गी शतावरी । शुंठी हरिद्रा लशुनं
विडंगं देवदारु च ॥ अश्वगंधाजमोदा च मरिचं ग्रंथिकं बला ।
रास्ना प्रसारिणी शिशु गुडूची हपुषाभया ॥ दशमूलानि नि-
गुंडी मिशी पाठा च वानरी । निशाला शतपुष्पा च प्रत्येकं
पलिकानिमान् ॥ चतुर्गुणे जले पक्त्वा पादशेषं समुद्धरेत् ।
पलमेकं विपं चात्र सूक्ष्मं कृत्वा विनिक्षिपेत् ॥ सर्वेषु वातरोगेषु
सदाभ्यंगो विधीयते । संधिवाते सन्निपाते त्रिकपृष्ठकटिग्रहे ॥
पक्षाघाते तथाधंगे गात्रकंपेतिदारुणे । कुब्जके च धनुर्वाते
गृध्रस्यां चापतानके ॥ विपगर्भमिदं तैलं योजनीयं सदा बुधैः ॥

अर्थ-सिंगियाविप, पुडकरमूल, कूठ, वच, भारंगी, शतावर, सोंठ, हलदी, लह-
सन, वायविडंग, देवदारु, असगंध, अजमोद, काली मिरच, पीपरामूल, खिरेटी, रास्ना,
प्रसारणी, सहजने की छाल, गिलोय, हंसपदी, हरड, दशमूल, निगुंडी, कलौं-
जी, पाठ, कौच के बीज, इन्द्रायन और सोंफ ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इन को
चौगुने जल में ढालके काढा करे. जब चतुर्थांश रहे तब उत्तारके छान लेय. फिर
इस में सिंगिया विप ४ तोले को बारीक करके ढाले और तेल मिलायके सिद्ध करे;
इस का संपूर्ण वातरोगोंपर मालिस करे तो संधिवात, सन्निपात, त्रिकग्रह, पृष्ठग्रह,
कटिग्रह, पक्षाघात, अर्द्धांग, कंप, कुब्जक, धनुर्वात, गृध्रसी और अपतानक इन को
नाश करे, इस को विपगर्भतैल कहते हैं ॥

सातवां विपगर्भतैल

निर्गुंडिकारसप्रस्थं प्रस्थमार्कवजाद्रसात् । रसो धतूरोजः प्रस्थो
गोमूत्रं प्रस्थसंमितम् ॥ वचा कुष्ठं हेमवीजं तेजोह्वा कट्फलं
तथा । पलाशानि सर्वैस्तु वत्सनागः समो मतः ॥ तैलप्रस्थं
पचेद्युक्त्या वातरोगेषु शस्यते । हेमंते हरिणाक्षीणां गाढमा-
लिंगनं तथा ॥

अर्थ—निर्गुंडी का रस, भांगरे का रस, धतूरे का रस, गोमूत्र ये प्रत्येक ६४ तोले
लेवे और वच, कूठ, धतूरे के बीज, कांगनी के बीज और कायफल ये प्रत्येक औषध
दो दो तोले लेय तथा वच्छनाग विप सग के समान भाग लेकर डाले इनकेकाठे में
तथा कल्क में तिल का तैल ६४ तोले डालके युक्ति से पचावे तो यह वातव्याधि
को दूर करे ॥

दाव्यादितैल

दारु कुष्ठं कणा रास्ना विश्वाग्निबृहतीपुरम् । भागोत्तरमिदं सर्वं
रंभानिर्यासपाचितम् । संक्राथ्य दुग्धतैलाभ्यां पक्वस्याभ्यंगतो
ध्रुवम् । सर्वे वाता विनश्यन्ति प्रत्यंगं भंगकारिणः ॥

अर्थ—देवदारु, कूठ, पीपल, रास्ना, सोंठ, चित्रक, फटेरी और गूगल भागवृद्धि
के क्रम से लेकर काटा करे. फिर केले का रस, दूध और तेल इन को एकत्र
करके तैल बनावे. इस तेल की मालिस करने से संपूर्ण वात के रोग दूर होवे ॥

दशमूलतैल

श्रीपर्णी वह्निमंथश्च विल्वः स्योनाकपाटला । गोक्षुरः शालिपर्णी
च बृहती कंटकारिका ॥ पृष्ठिपर्णी च एतेषां दशमूलानि तद्यु-
तम् । तैलं पक्वं प्रलेपेन हन्ति वाताननेकधा ॥

अर्थ—कंभारी, अरनी, वेल, टेटू, पाटल, गोखरू, शालपर्णी, बड़ी फटेरी, छोटी
फटेरी और पृष्ठपर्णी इन दश औषधों की जड़ का काटा अथवा कल्क में तेल डा-
लके सिद्ध करे इस की मालिस देह में करे तो अनेक प्रकार के वायुरोग नाश करे ॥

चरणैरंडवातारिमुंडिशिश्रु शतावरी । कांडवेली बृहत्यौ द्वे ना-
गकर्णी शिफा दश ॥ एषां तैलप्रलेपेन त्वगस्थिस्रायुसंभवम् ।
सर्वाङ्गकुपितो वायुर्विनश्यति हि वेगतः ॥

अर्थ—अंड की जड़, निगुंडी का रस, मुंडी, सहजने की जड़, शतावर, कीड़बेल, कटेरी, बड़ी कटेरी तथा लाल अंड की जड़ ये प्रत्येक दश २ तोले लेवे. इन के काढ़े में तिलों का तेल डालके सिद्ध करे. इस की मालिस करे तो त्वचा, हाड, वायु और सर्वांग में कुपित वात का नाश होय ॥

ज्योतिष्मती चंद्रसूरा कलाजाजी यवानिका । मेथी तिलांश्च
संपिप्य यंत्रे तैलं समुद्धरेत् ॥ अभ्यंगान्मारुतव्याधिं समस्तं
संप्रणाशयेत् ॥

अर्थ—मालकांगनी, हालो, काला जीरा, अजमायन, मेथी और तिल इन का चूर्ण करके इस को यंत्र में डालके तेल काढ़े और अंग में लगावे तो सर्व वातव्याधियों का नाश करे ॥

लघुमापादितैल

मार्षसिंधुवलारास्नादशमूलकहिंशुभिः ।

वचाशतजटाख्याभिः सिद्धं तैलं सनागरम् ॥

अर्थ—उडद, सैधानिमक, खिरेटी, दशमूल, हींग, वच, शतावर और सोंठ इन सब का कल्क कर तेल डालके सिद्ध करे तो यह तैल सर्ववातनाशक होय है ॥

विजयभैरवतैल

रसं गंधं शिलां तालं सर्वं कुर्यात्समांशकम् । चूर्णयित्वा ततः
श्लक्ष्णमारनालेन पेपयेत् ॥ तेन कल्केन संलिप्य सूक्ष्मवस्त्रं
ततः परम् । तैलाक्तां कारयेद्द्वर्तिमूर्ध्वभागे च वापयेत् ॥ वर्त्यधः
स्थापयेत्पात्रं तैलं पतति शोभनम् । लेपयेत्तेन गात्राणि भक्ष-
णाय च दापयेत् ॥ नाशयेत्तसुखं तैलं वातरोगानशेषतः ।
बाहुकंपं शिरःकंपं जंघाकंपं ततः परम् ॥ एकांगं च तथा
वातं हन्ति लेपात्र संशयः । रोगशांत्यै प्रदातव्यं तैलं विजयभै-
रवम् ॥ द्रव्यतस्ति लजं तैलं दातव्यं च चतुर्गुणम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, मनसिल और हरताल ये सब समान भाग लेकर इन का बारीक चूर्ण करे और कांजी में पीसके इस कल्क को बारीक वस्त्रपर लेप कर देवे. फिर उस कपड़े को सुखायके बत्ती बनावे. उस बत्ती को पारे आदि द्रव्यों से बाँधने तेल में डुबोकर ओधी कर देवे और आग जलाय देवे तो उस बत्ती में से तेल

टपक २ कर नीचे के पात्र में गिरेगा. इस तेल को देह में मालिस करने से अथवा खाने से अनेक वातव्याधि, बाहुकंप, शिरःकंप, जंघाकंप तथा एकांगवात इन को नाश करे. इस को विजयभैरव तेल कहते हैं ॥

दूसरा प्रसारिणीतैल

समूलपत्रामुत्पात्य शरत्काले प्रसारिणीम् । शतं वाय्यालकां-
तं द्वे शतावर्याः शतं तथा ॥ बलाश्वगंधात्मगुप्ता केतकीनां
शतं शतम् । चतुर्द्रोणेन तोयेन द्रव्यैस्तैलाढकं पचेत् ॥ मस्तु-
मांसरसैर्युक्तं दधि दुग्धं तथाढकम् । एतैः सर्वैः समायुक्तं पाच-
येन्मृदुनाग्निना ॥ द्रव्याणां च प्रदातव्या मात्रा चार्धपलोन्मिता ।
तगरं मदनं कुष्ठं केसरं मुस्तकं वचा ॥ रास्त्रासिंधवपिप्पल्यो
मांसीमंजिष्ठयष्टिका । जीवकर्पभकौ मेदा महामेदा तथा नतम् ॥
शतपुष्पा व्याघ्रनखं शुंठी देवाह्वमेव च । कांकोली क्षीरकां-
कोली बला भल्लातकं तथा ॥ पेपयित्वा समं चैतान्साधनीया
प्रसारिणी । नातिसिद्धं नातिपक्वं सिद्धं पूतं निधापयेत् ॥ यत्र
यत्र प्रदातव्यं तन्मे निगदतः शृणु । कुब्जानामथ पंगूनामवता-
नां तथैव च ॥ यस्य शुष्यति चैकांगं ये च भग्नास्थिसंधिजाः ।
वातशोणितदुष्टानां वातोपहतचेतसाम् ॥ स्त्रीभिश्च क्षीणशुक्राणां
वाजीकरणमुत्तमम् । पाने वस्तौ तथाभ्यंगे भोज्ये चैव प्रदा-
पयेत् ॥ प्रयुक्तं श्मयत्याशु वातजान्विविधान् गदान् ॥

अर्थ—शरदऋतु में प्रसारिणी का पंचाग ४०० तोले लेवे और महाबला ४०० तोले, शतावर ८०० तोले तथा खिरेटी की जड़, असगंध, कौंच के बीज और के-
तकी ये प्रत्येक चार २ सौ तोले लेवे. इन को ९०९६ तोले जल में डालके काढा
करे उस में २५६ तोले तेल और दही का पानी, मांसरस, दही और दूध ये प्रत्येक
२५६ तोले और तगर, मैनफल, कूठ, नागकेशर, नागरमोथा, वच, रास्त्रा, सिंधानि-
मक, पीपल, मजीठ, मुलहठी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, छड, सोंफ, धूहर,
सोंठ, देवदारु, कांकोली, क्षीरकांकोली, खिरेटी और भिलाए ये प्रत्येक दो दो तोले
लेवे. सब का कल्क करके उस तेल में डाल देवे. फिर इस को न अधिक पक्व हो
म न्यून ऐसे मध्य प्रकार से मंदाग्निपर तैल सिद्ध करे यह तैल कुब्जवात, पंगुवात,

धनुर्वात, शुष्कांगवात, संधिभग्नवात, वातरक्त और वादी इन को नाश करे. तथा क्षीणशुक्रवालों को स्त्रीसंग में उत्तम वाजीकरण करता है. इस को पीना. बस्तिकर्म, मालिस और भोजन में देवे तो शीघ्र सर्व प्रकार की वादियों को शमन करे इस में संदेह नहीं है ॥

व्याघ्रतैल

व्याघ्रं शिरः समादाय कुट्टयित्वा जले बहु । काथ्य पादावशेषं
तु रसं नीत्वा सुगालितम् ॥ तैलमर्धजलं दत्त्वा छागगव्यपयो-
न्वितम् । मदिरा मस्तु धान्याम्लं तैलमानेन दापयेत् ॥ दत्त्वा
कटाहे सुदृढे पचेत्पाकविधानतः । द्रव्याण्येतानि मतिमान्
पादमानेन दापयेत् ॥ देवदारु वचा कुष्ठं तगरं चंदनं घनम् ।
मंजिष्ठा पौष्करं रास्ना चतुर्जातं च सैधवम् ॥ पिप्पली मरिचं
शुंठी मांसी सहचरं जलम् । अश्वगंधात्मगुप्ता च चित्रकं वंशजं
वरी ॥ श्वदंष्ट्रा केतकी मूर्वा यष्टी मधुगिरेर्मृदा । जातीफलं
च सुमनः पत्रिकं कटुरोहिणी ॥ ग्रंथिकं शुक्लकंदा च शत-
पुष्पा पुनर्नवा । जीवनीयो गणश्चैव रालं बोलं सकेसरम् ॥ नखं
च कृष्णसारं च वत्सनागं सुचूर्णितम् । अस्य तैलस्य पक्वस्य
शृणु वीर्यमतः परम् ॥ अशीतिवातजान् रोगान् हन्यादाशु जरा-
मपि । अश्वानां वातभग्नानां गजानां शुष्यतामपि ॥ वृष्यं
तुष्टिप्रदं पुष्टिमेधाग्निबलवर्धनम् । श्रुतिभ्रंशे खंजवाते क्रोष्टुशीर्षे
कटिग्रहे ॥ मन्यास्तंभे हनुस्तंभे वाते मेदस्तथांतरे । वंध्यानां
पुत्रजननं पंडानां कामवर्धनम् ॥ अश्विभ्यां निर्मितं चैतत्प्र-
जानां हितकाम्यया । अनेनैव विधानेन मृताक्षं विपचेद्भिषक् ॥

अर्थ—व्याघ्र (बघेरे) के स्तिर को कूटकर उस को जल में औटावे फिर उस का चतुर्थांश काटा हो जावे तब उस को छान लेवे फिर उस जल में उस जल से आधा तेल डालके बकरी और गौ इन का दूध, मद्य, दही का पानी, कांजी ये सब तेल के बराबर मिलावे. फिर कटाई में चढावके देवदारु, वचा, कूठ, तगर, चंदन, नागरमोथा, मजीठ, पुहकरमूल, रास्ना, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर,

सैंधानिमक, पीपल, मिरच, सोंठ, जटामांसी, पियावांसा, नेत्रवाला, असगंध, कोंच के बीज, चित्रक, वंशलोचन, शतावर, गोखरू, केतकी, मूर्वा, मुलहठी, गेरू, जायफल, लौंग, तेजपात, कुटकी, पीपरामूल, सफेद अतीस, सोंफ, पुनर्नवा, जीवनीय गण की संपूर्ण औषध, राउ, बोल, नागकेशर, नख, काली अगर और वच्छनाग विष इन का कल्क तैल का चतुर्थांश लेवे. सब को एकत्र कर मंदाग्निपर रखके परिपक्व करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके किसी उत्तम शीशी आदि में भरके धर रखे. यह अस्सी प्रकार की वायु तथा वृद्धपना इन को नाश करे. तथा वायु से जकडे हुए घोडे, सूखे हाथी इन को देवे तो वह वृष्य, तुष्टि, पुष्टि, बुद्धि और अग्निबल इन को बढ़ावे और यह श्रुतिभ्रंश, खंजवात, कोष्ठशीर्ष, कटिग्रह, मन्पास्तंभ, हनुस्तंभ तथा स्वेदगत वायु इन सब को तथा बंध्या स्त्री को पुत्र देवे. पंड (नपुंसक) को कामबुद्धि करे, यह व्याघ्र तैल लोकहितार्थ अश्विनीकुमारों ने उत्पन्न करा इसी प्रकार मृत रीछ का भी तैल बनावे॥

महाबलातैल

बलामूलकपायस्य दशमूलीशृतस्य च । यवकोलकुलित्थानां
क्वाथस्य पयसस्तथा ॥ अष्टावष्टौ शुभान्भागान् तैलादन्यं त-
देकतः । पचेदावाप्य मधुरं गणं सैंधवसंयुतम् ॥ तथागरु सर्ज-
रसं सरलं देवदारु च । मंजिष्ठा चंदनं कोष्ठमेला कोलांजनं
वरा ॥ मांसी शैलेयकं पत्रं तगरं सारिवा वचा । शतावरीम-
श्वगंधं शतपुष्पा पुनर्नवा ॥ तत्साधु सिद्धं सौवर्णं राजते वाथ
मृन्मये । प्रक्षिप्य सकलं सम्यक् सुगुप्तं स्थापयेद्बुधः ॥ बला-
तैलमिदं ख्यातं सर्ववातविकारनुत् । यथावलं भिषङ्मात्रां
सूतिकायै प्रदापयेत् ॥ या च गर्भार्थिनी नारी क्षीणशुक्रश्च यः
पुमान् । क्षीणे वांते मर्महते मथिते पीडिते तथा ॥ भग्नेस्थि-
न्यभिपत्रे च सर्वथैव प्रयोजयेत् । सर्वानाक्षेपकादींश्च वातव्या-
धीन्व्यपोहति ॥ प्रत्युग्रधातुपुरुषो भवेच्च स्थिरयौवनः । राज्ञा-
मेतद्धि कर्तव्यं राजमान्यैस्तथा नरैः ॥

अर्थ—खिरेटी की जड़ का काढा तथा दशमूल का काढा और जों, बेर तथा कुलथी इन का काढा और दूध इन प्रत्येक के आठ २ भाग ले. तैल १, मधुरगण और सैंधानिमक डालके फिर अगर, राउ, सरल, देवदारु, मंजिठ, चंदन, कूठ,

इलायची, बेर, अंजनवृक्ष, हरड, बहेडा, आवला, जटामांसी, शिलारस, तमालपत्र, तगर, सारिवा, वच, शतावर, असर्गंध, सॉफ और पुनर्नवा इन का कल्क डालके तेल को पचावे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके किसी उत्तम सोने, चांदी के मिट्टी के पात्र में भरके बड़े घत्र से धर रखे. यह महावलातैल संपूर्ण वातविकारों का नाश करे. इस को प्रसूता स्त्री का बलावल विचारके मात्र देवे. तथा वंध्या स्त्री तथा धातुक्षीण पुरुष, क्षयी, यमन कराया हुआ, मर्म में जिस के चोट लगी हो, हत, मथित, पीडित, हड्डी टूटा हुआ ऐसे रोगियों को देवे यह संपूर्ण आक्षेपकादि वादियों को नाश करे, तथा इस का सेवन करने से धातुपुष्ट और तरुणता होती है. यह तेल राजा को अथवा राजमान्य पुरुष (सेठ, साहूकारों) को बनावे ॥

दूसरा शतावरीतैल

वह्निंश्रिकामूलरसोथ तैलं दुग्धं पलं प्रस्थयुतं क्रमेण । सश्वेत-
पुष्पा नवदेवदारु शैलेयमांसीमिलितं समांशम् ॥ तैलावशेषं
कथितं समस्तं नारायणं तैलमिदं वदन्ति । नानानिलापीडित-
मानुषाणामभ्यंगयोगाद्धितमेतदेव ॥

अर्थ—शतावर की जड़ का रस, तेल और दूध ये प्रत्येक ६४ तोले लेवे और वरना, टेंडू, देवदारु, शिलाजीत और जटामांसी ये प्रत्येक चार २ तोले ले कल्क करके तेल में मिलाय तेल सिद्ध करे. इस को नारायण तैल कहते हैं. यह अनेक प्रकार के वातव्याधिपर मालिस करने से हितकारी होवे ॥

तीसरा प्रकार

दुग्धं प्रस्थद्वयं तैलमेकप्रस्थं तथा रसम् । शतावरी वचा कुष्ठं
चंदनं देवदारु च ॥ कांकोली धिंडुला रास्त्रा मंजिष्ठैलारुदंतिका ।
शैलेयमश्वगंधा च मांसी चिकणिका खिलम् ॥ अर्धार्धपलमानं
स्यात्पक्वं मृद्भिना शनैः । एकांगयुग्मभग्नास्थिभग्नसंधिं तृपां
तथा ॥ कुब्जवामनपंगूनां पानादभ्यंगतस्तथा । वातान्नाना-
विधान्ति तैलमेतन्न संशयः ॥ शतावरीतैलमिदं प्रोक्तं बुद्धि-
विशारदैः ॥

अर्थ—दूध १२८ तोले, तेल ६४ तोले और शतावर का रस ६४ तोले तथा वच, कूठ, चंदन, देवदारु, कांकोली, धिंडुली, रास्त्रा, मजीठ, इलायची, रुदंती, शिला-

जीत, असगंध, जटामांसी और खिरेटी ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. इन का काढ़ा अथवा कल्क करके अर्ध २ पल डालके मंदाग्नि से पचन करावे तो एकांगगत वात, सर्वांगगत वात, भ्रामास्थि, संधिभ्रम, टृषा, कुञ्जवात, वामनत्व तथा पंगुवात इनके पीने से तथा अभ्यंग करने से नाश होय. यह शतावरी तैल अनेक प्रकार के वायु को नाश करे ॥

चौथा प्रकार

शतावरीजातरसं गृहीयाद्यंत्रपीडितम् । प्रभूतं तद्रसं लीढ्वा
तैलस्याढकमेव च ॥ दधिक्षीरेण विपचेत् द्रव्याण्येतानि दाप-
येत् । शतपुष्पा वचा कुष्ठमांसीशैलेयचंदनैः ॥ प्रियंगु पद्मकं
मुस्तं ह्रीवेरोशीरकटफलम् । सेंधवं मधुकं लोभ्रं व्रणयककुचं-
दनम् ॥ चंडा एला मुरा स्पृक्का नालिकं पद्मकेशरम् । श्रीवे-
ष्टकं सर्जरसं जीवकपर्पभकौ सठी ॥ पतंगरेणुका दावी कचूरं
सारिवा तथा । मंजिष्ठा मधुकं चैव द्रव्यैरैतैः पलोन्मितैः ॥
मध्यपादं विजानीयात्तत्र तदवतारयेत् । पथ्ये पाने तथाभ्यंगे
नस्ये भोज्ये च दापयेत् ॥ पीड्यमाने तथा वायौ पक्षाघाताधि-
मंथके । अर्दिते कर्णशूले च ऊरुस्तंभे कटिग्रहे ॥ पवने च
शिरःकंपे सूतिकायां प्रदापयेत् । मन्यास्तंभे धनुःकंपे अस्थि-
भंगे च दारुणे ॥ तथा सर्वांगे वायौ शुष्यमाणेषु धातुषु ।
अनार्तक्षीणरेतस्सु वंध्यायां गर्भिणीषु च ॥ वृष्यं पुनर्नवकूरं
बल्यमारोग्यदं महत् । शतावरीतैलमिदं सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ-शतावर की जड़ का यंत्र में निकाला रस बहुतसा लेकर उस में २५६ तोले तेल, दही, दूध और वच, कूठ, जटामांसी, शिलाजीत, चंदन, प्रियंगु, पद्मास, मोथा, नेत्रवाला, खस, कायफल, सेंधानिमक, मुलहटी, लोध, कालियारी, लालचंदन, मूपाकर्णी, इलायची, एकांगीमुरा, स्पृक्का, भसीडा, कमल की केशर, श्रीवेष्टक (धूप), राल, जीवक, ऋषभक, कचूर, पतंग, रेणुकबीज, दारुहलदी, कचूर, सारिवा, मजीठ, मुलहटी ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इन का कल्क अथवा कोढ़ को मिलायके मध्यम भाव से तैल सिद्ध करे. यह तैल वादी की पीडा को, पक्षाघात, अधिमंथ, अर्दित, कर्णशूल, ऊरुस्तंभ, कटिग्रह, कंपवायु,

प्रसृत, मन्यास्तंभ, धनुर्वात, कंपवात, अस्थिभंग. सर्वांगवात, धातु का सूखना, धातु-
क्षीणत्व तथा बंध्यात्व इनपर पथ्य के साथ पीने से देह में मालिस करने से नस्य और
भोजन इन में देवे तथा यह शतावरीतैल वृष्य, वयस्थापक, बल और आरोग्य
का देनेवाला तथा गर्भिणी को हितकारी है ॥

चंदनादितैल

चंदनं पद्मकं कुष्ठमुशीरं देवदारु च । नागकेसरपत्रैलात्वङ् मांसी
तगरं जलम् ॥ जातीफलं घोटफलं कुंकुमं जातिपत्रिका । नखं
कुंदरु कस्तूरी चंडा शैलेयमार्द्रकम् ॥ पतंगं पुष्करं मुस्ता रक्त-
चंदनसारिवा । सठी कर्पूरमंजिष्ठा लाक्षा यष्टिप्रियंगुभिः ॥ श-
तपुष्पा वरी मूर्वा अश्वगंधा महौषधम् । पद्मकेसरश्रीवेष्टरसा-
गरुहरेणुभिः ॥ स्पृक्कालवंगकंकोलद्रव्यैरोभिर्द्विकार्पिकैः । दश-
मूलकपायस्य पद्म भागाः पयसस्तथा ॥ यवकोलकुलित्थानां
बलामूलस्य चैकतः । निक्काथ्य काथो भागश्च तैलस्य च च-
तुर्दश ॥ ततः पक्वं विजानीयात् क्षिप्रं तद्वतारयेत् । शुभे
पात्रे विनिक्षिप्यमौषधैः ससुगंधिभिः ॥ प्रतिवासं ततः कार्यमेपां
संयोजने विधिः । प्रायोयं सुकुमारीणामीश्वराणां सुखात्मनाम् ॥
स्त्रीणां स्त्रीवृंदगर्भाणामलक्ष्मकलिनाशनम् । अशीतिं वातजा-
न्रोगान्वातरक्तं विशेषतः ॥ सूतिकावालमर्मास्थिहतक्षीणेषु
पूजितम् । जीर्णज्वरं सदाहं वा शीतं वा विषमज्वरम् ॥ शो-
षापस्मारकुष्ठघ्नं बंध्यायां च सुखप्रदम् । व्याधितानां हितार्थाय
ये तु कंडूतिपीडिताः ॥ विशेषाद्रूक्षदेहानां श्वित्रिणां च विशेष-
पतः । सर्वकालप्रयोगेण कांतिलावण्यपुष्टिदम् ॥ विनिर्मित-
मिदं तैलमात्रेण महर्षिणा । न चास्मात्सहस्रा रोगः प्रभव-
त्यूर्ध्वजत्रुजः ॥ अस्य प्रयोगात्तैलस्य जरा न लभते नरम् ।
चंदनाद्यमिदं तैलं लोकानां च हितं मतम् ॥

अर्थ—चंदन, पद्मास, कूठ, खस, देवदारु, नागकेशर, पत्रज, इलायची, तन,
जटामांसी, तगर, नेत्रवाला, जायफल, घोटफल, केशर, जावित्री, नख, कुंदरु,

कस्तूरी, अजमायन, पत्थर का फूल, अदरक का रस, पतंग, पुहकरमूल, नागरमोथा, लाल चंदन, सारिवा, कजूर, कपूर, मजीठ, लाख, मुलहठी, कुटकी, सोंफ, शतावर, मूर्वा, असगंध, सोंठ, कमल की केशर, श्रीवेष्ट, पाठ, काली अगर, रेणुकवीज, स्पृका, लोंग और कंकोल ये प्रत्येक दो दो तोले लेय. इन के काटे में दशमूल का काटा छः भाग, दूध ६ भाग और जों, बेर, कुलथी और खिरेटी ये एक एक भाग. तथा काटे का चौथा भाग तेल डाले. सब को एकत्र कर आग्निपर पचन करे तो यह तैल सिद्ध होय. इस को उत्तारके उत्तम पात्र में भरके रख देवे बहुधा यह चंदनादि तैल सुकुमार, घनाढ्य (सिंठ साहूकार) और सुखी मनुष्यों को, स्त्रियों को तथा स्त्रियों के गर्भ के विषयमें उत्तम है. यह अस्ती प्रकार के वातरोग, वातरक्त, प्रसूतरोग, चालक, मर्महत, अस्थी जिस की टूट गई हों और क्षीण इन को हितकारी है. तथा जीर्णज्वर, दाहज्वर, शीतज्वर, विषमज्वर, शोष, मृगी और कुष्ठ इन को नाश करे. तथा बंध्या स्त्रियों को हितकारी, व्याधि, खुजली, देह की रूक्षता और सपेद कीटवाला इन को विशेष करके हितकारक है. इस का सर्वकाल उपयोग करने से लावण्य और पुष्टि इन को देवे. यह आत्रेय ऋषि ने निर्माण करा है इस तैल के सेवन करने से गरदन के ऊपर के भाग के रोग और बुढापा ये कदाचित् नहीं होते. यह लोको को परमहितकारी है॥

मापादितैल

मापस्याद्धाढकं देयं तुलाद्धं दशमूलतः । पलानि छागमांसस्य
त्रिंशद् द्रोणेभसः पचेत् ॥ चतुर्भागावशेषं तं कपायमवतार-
येत् । प्रस्थे द्वे तिलतैलस्य पयो दद्याच्चतुर्गुणम् ॥ जीवनीयानि
मंजिष्ठचव्यचित्रककट्फलम् । सव्योषं पिप्पलीमूलं रास्त्रामल-
कगोक्षुरम् ॥ आत्मगुप्ता तथैरंडः शताह्वा लवणत्रयम् । देव-
दार्वमृता कुष्ठमश्वगंधा वचा शठी ॥ एतैरक्षमितैः कल्कैः पाच-
येन्मृदुनाग्निना । पक्षाघातादिते पुंसि हनुस्तंभे तथादिते ॥
कर्णशूले शिरःशूले तिमिरे च त्रिदोषजे । पाणिपादशिरोश्रीवा-
श्रवणे मंद एव च ॥ कलायखंजे पंगौ च गृध्रस्यामववाहुके ।
पाने वस्तौ तथाभ्यंगे नस्ये कर्णादिपूरणे ॥ तैलमेतत्प्रशंसन्ति
सर्ववातविकारनुत् ॥ महामापादिनामेदं भापितं मुनिभिः पुरा ॥

अर्थ—उडद १२८ तोले, दशमूल ५१२ तोले, मंडे का मास १२० तोले इन को १०२४ तोले जल में डालके काटा करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उत्तारके

छान लेवे. फिर इस में तिली का तेल १२८ तोले, दूध २५६ तोले, जीवनीयगण की औषधी, मजीठ, चव्य, चित्रक, कायफल, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, रास्ता, आवले, गोखरू, कौंच के बीज, अंड की जड़, शतावर, सेंधानिमक, बिड, कचिया-निमक, देवदारु, गिलोय, कूठ, असगंध, वच और कचूर ये प्रत्येक औषध एक२ तोले ले इनका कल्क करके इस को तेल में मिलाय देवे. फिर इस को मंदाग्रिपर रखके पचन करे तो यह तेल सिद्ध होय यह पक्षाघात से पीडित रोगी को हितकारी है. तथा हनुस्तंभ, अर्दितरोग, कर्णशूल, मस्तकशूल, त्रिदोष, तिमिर, हाथ, पैर, मस्तक, मन्या, कान का बधिरपना, कलायखंज, पंगुवात, गृध्रसी और अपवाहुक इनपर हितकारी है तथा यह पीने में बस्तिकर्म, अभ्यंग, नस्य और कान में डालना इन में इस तेल की बहुत प्रशंसा करते हैं यह संपूर्ण वातविकारनाशक है. यह महामाया-दिनामक तैल पहले मुनियों ने कहा है ॥

महानारायणतैल

तिलतैलं समादाय चतुराढकसंमितम् । पंचपल्लवकल्केन शोध-
येद्दोषशांतये ॥ तत्राजं दुग्धमथवा गव्यं तैलसमं पचेत् । शता-
वरीरसं चापि तैलतुल्यं पचेद्भिषक् ॥ दशमूली वला रास्ता शि-
शूत्पलपुनर्नवाः । शेफालिका नागवलातिवला च प्रसारिणी ॥
अश्वगंधासहचरौ दर्भमूलं करंजकः । खदिरश्चंदनो लोध्रं वचा
शनपलांशकम् ॥ ककुभैरंडवरुणशालयुग्मकटंभराः । शि-
रीषः शिखरी वासा हिंस्राजंबु विभीतकम् ॥ कांचनारः कपि-
त्थश्च पारिभद्रः प्रियालकम् । पापाणभेदसंपाकदुग्धिका दा-
डिमीफलम् ॥ उदुंबरः सप्तला च कन्यका मालती त्वचा । मा-
धवी नरमूलं च यवकोलकुलत्थकम् ॥ आत्मगुप्तार्ककार्पासवीजं
वत्सादनी सुही । केतकी मूलधतूरलांगली गर्दभांडकम् ॥ चि-
त्रकं च महानिंबं पंचवल्कलमेव च । मुंडी टंकारिसुसली हंसपा-
दी विशल्यकम् ॥ एषां दश पलान् भागान् वारिण्यष्टगुणे पचे-
त् । पादशेषं परिस्त्राव्य तत्र तैलं पुनः पचेत् ॥ छागो मेपश्च ह-
रिण एणश्च बहुशृंगकः । शशः शल्यः शिवा गोधा सिंहो व्या-
घ्रश्च भडुकः ॥ वन्यो वराहः खड्गी च महिषो घोटकस्तथा ।

कपिर्बभ्रुर्विडालश्च मूपकश्चोरुदुर्दुरः ॥ वर्तिकस्तिरिर्लावः
 खंजरीटश्चकोरकः । उलूको नीलकंठश्च वनकुडुट एव च ॥
 गृध्रश्च गरुडो हंसश्चक्रः कारंडवोपि च । कपोतः सारसः क्रौंचो
 वन्यः पारावतस्तथा ॥ रोहितो मद्गुरश्चापि शिल्धिः शृंगक-
 स्तथा । इल्लिसो गर्गरो वर्मिः कथिका कविकापि च ॥ महा-
 मत्स्यः कच्छपश्च शिशुमारश्च सांकुचिः । मकरो घंटिकाका-
 रस्तदलाभे तु गोधिका ॥ यथालाभममीपां च काथं तैलसमं
 पचेत् । रास्नाश्वगंधा मिशिदारु कुष्ठपर्णी चतुष्कागुरुकेस-
 राणि ॥ सिंधूत्थमांसी रजनीद्वयं च शैलेयकं पुष्करचंद्रं च ।
 एला सयष्टी तगराब्दपत्रं भृंगोष्टवर्गस्तु वचा पलाशी ॥ स्थौणे-
 यवृश्चीवकचोरकारुख्यं मूर्वा त्वचं कट्फलपद्मकं च । मृणाल-
 जातीफलकेतकारुख्यं सनागपुष्पं सरलं सुरा त्व ॥ जीवंतिको-
 शीरवरास्तथैव दुरालभा वानरिका तखश्च । कैवर्तमुस्ताज्जंतित-
 त्तकं च वातामखर्जूरकतुंवराश्च ॥ सघातकीग्रंथिकपर्पटाश्च
 पटोलहेमाह्वजयंतिका च । त्रायंतिकालंबुपशक्रवीजरसांजना-
 भात्रिवृत्तारुणाश्च ॥ द्राक्षाकणाद्राणपुनर्नवाश्च क्रौंती कृमिघ्नो
 ह्यमारकश्च । नीलोत्पलं पद्मककारवीभ्यां रंभानलो गोकुशुरकः
 क्षुरश्च ॥ कंठोलकालीयकुसुंभपुष्पं तुरुष्ककाश्मीरकसिक्थकं
 च । लवंगकर्पूरसपालकांडकस्त्रुरिकावालकमंवरं च ॥ कल्का-
 नमीपां विपचेत्सुवैद्यः पृथक् पृथक्पर्पयुगोन्मितानाम् । शुभे
 च नक्षत्रमुहूर्तलग्ने संतोष्य विप्रांश्च भिषगवरांश्च ॥ संपूज्य ना-
 रायणनामधेयं देवं त्रिनेत्रं जगतामधीशम् । पात्रे तु हेमः खलु
 राजते वा ताप्रेथ वा लोहमयेपि रक्षेत् ॥ अभ्यंजनंजने तस्ये
 निरूहे चावगाहने । पाने चैतद्यथाव्याधि प्रयुंजीत चिकित्सकः ॥
 बहुनात्र किमुक्तेन तैलमेतत्प्रयोजितम् । अवश्यं वातजान् व्या-
 धीनशितीनापि नाशयेत् ॥ एतस्याभ्यासतो जंतोर्जरा ज्ञातु

न जायते । पतंति वलयो नांगे पलितं नैव जायते ॥
 नेत्रे तेजश्च नितरां गरुडस्येव जायते । नोच्चैः श्रुतिर्न वाधिर्यं
 कर्णनादो न जायते ॥ पाणिकंपः शिरःकंपः प्रलापश्च न
 जायते । बुद्धिभ्रंशो न जायेत तस्य स्यात्कर्मपाटवम् ॥
 यथा जलेन सित्तस्य शाखिनः पल्लवादयः । वर्धते घात-
 वस्तद्ब्रह्मेहिनीनेन नित्यशः ॥ आमगर्भं त्यजेद्या तु सूतिकासृ-
 क्स्तुता च या । या बहुप्रसवक्षीणा ताभ्य एतद्धितं परम् ॥
 वंध्या च लभते पुत्रं गर्भपातो न जायते । योनिरोगाः प्रण-
 श्यंति प्रदरश्च प्रशाम्यति ॥ अस्मात्तैलवरादन्यत् कुत्रचिन्नास्ति
 भेषजम् । वल्यं वृष्यं वृंहणं च रसायनमिदं महत् ॥ पुरा देवा-
 सुरे युद्धे दैत्यैरभिहतान्सुरान् । भिन्नान्भग्नास्थिकान्विद्धान्पि-
 च्छितान्व्यथयादितान् ॥ दृष्ट्वा हिताय देवानां नराणां चात्रवीदि-
 दम् । तैलं नारायणो देवो महानारायणाभिधम् ॥

अर्थ—तिली का तेल १०२४ तोले लेकर उस को बड़, पीपल, आंव, जामुन
 और पापरी इन के कल्क से शुद्ध करे फिर तेल में गौ का अथवा बकरी का दूध
 शतावर का रस तेल के बराबर मिलावे तथा दशमूल, सिरिटी, प्रसारणी, राम्ना, सहजना,
 कमल, पुनर्नवा, निर्गुडी, नागबला, अतिबला, असगंध, पियावासा, ढाभ की जड़, कंजा,
 खैर, चंदन, लोध, वच, विजयसार, पलास, कोह की छाल, अंड की जड़, वरना की
 शाल और बड़ा शाल, कुटकी, सिरस, आंगा, अडूसा, जटामांसी, जामुन, बहेडा,
 कचनार, कैथ, नीम की छाल, चिरोंजी, पाषाणभेद, अमलतास, दुद्धी, अनार,
 गूलर, यूहर का भेद, सातला, ग्वापट्टा, चमेली, दाळचीनी, मधुमालती, नरकशूर,
 जौ, बेर, कुलथी, कोंच के बीज, आक, कपास के बीज (विनोले), गिलोय, यूहर,
 केतकीमूल, धतूरे के बीज, कलियारी, पारसपीपल, चित्रक, बकामन, पीपल, बड़,
 पासर, गूलर और बेत, गोरखमुंडी, टंकारी, मुसली, हंसपदि (छईं मुईं), गुठ-
 घोटी ये प्रत्येक चालीस २ तोले लेवे. इन का अठगुने जल में काटा करके जब
 चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. इस में उस तेल को मिलायके बकरा, मेढा,
 हरिण, काला हरिण, साबरसींग, शशा, सेह, गीदड (स्यार), गोधा, सिंह, चघेरा, रीछ,
 जंगली सूअर, गेंडा, भैसा, घोडा, बंदर, नीला, बिलाव, म्पा, बड़ा मेढका, बटेर,

तीतर, लवा, खंजन, चकोर, घूषू, नीलकंठ, वनमुरगा, गीध, गरुड (गीध का भेद), हंस, चकवाँ, कारंडव, कपोत (पिंडुकिया), सारस, क्रींच, वन का कबूतर ये पक्षी, रोहित, मुद्गर, शिल्पीध्र, सिंगिया, इल्लिस, गर्गर, चर्मि, कथिक, कविक और महामच्छ, ये सब जात की मछली, कछुआ, सूस, सांकुची, मगर, घडियाल (इस के न मिलने में गोह लेवे) इन में से जो जो जीव मिले इन के मांसरस को तेल के साथ पचावे. तथा रास्ना, असगंध, सोंफ, दारुहलदी, कूठ, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, अगर, केशर, सैधानिमक, जटामांसी, हलदी, दारुहलदी, शिलाजीत, पुहकरमूल, चंदन, इलायची, मुलहठी, तगर, नागरमोथा, पत्रज, भांगरा, अष्टवर्ग की सब औषध (जीवक, ऋषभ, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, कांकोली, क्षीरकांकोली), वच, पलास, गठिवन, पुनर्नवा, कचूर, मूर्वा, दालचीनी, कायफल, पद्मास, कमल की जड, जायफल, केतकी, नागदौन, सरल, एकांगी, मुरा, गिलोय, खस, हरड, बहेडा, आवला, धमासा, कौंछ के बीज, नखद्रव्य, बकायन, कैवटीमोथा, कोह, चिरायता, बदाम, खजूर, तुंबरू, धाय के फूल, पीपरामूल, पित्तपापडा, पटोलपत्र, लाल कमल, हलदी, त्रायमाण, लजालू, इन्द्रजो, सुरमा, बबूर के बीज, निसोय, वरना, दास, पीपल, द्रोण का निमक, पुनर्नवा, रेणुकबीज, वायविडंग, कनेर, नीले कमल, पद्मास, कलौंजी, केले का कंद, चित्रक, गोखरू, तालमखाने, कंकोल, दारुहलदी, कसूम, शिलारस, केशर, मोम, लौंग, कपूर, पालकांड, कस्तूरी, नेत्रवाला, अंबर ये प्रत्येक औषध दो दो तोले ले इन का कल्क पृथक् २ करके उस तेल में डालके मंदाग्नि से पचन करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके वस्त्र में छान उत्तम दिन (अर्थात् शुभ घडी, लग्न, वार, तिथि, नक्षत्र) में देव ब्राह्मण और वैद्य इन का पूजन कर तथा श्रीमन्नारायण और महादेव का पूजन कर इस तेल को सुवर्ण के, चांदी के, ताँबे के अथवा लोहे के पात्र में भरेके उस पात्र को जापते से रक्षण पूर्वक एकांत में रख देवे. इस को देह में लगाना, अंजन, नस्य, निरूहवस्ती, स्नान और पीना इन में जैसी व्याधि होवे. उसी के अनुसार देवे. बहुधा करके इस तेल से अवश्य ही अस्ती प्रकार के वादीन का नाश होय. इस तेल के निरंतर सेवन करने से उस को वृद्धावस्था कदाचित् नहीं आवे. तथा अंग की बली (गुजलट) और बाल कभी सपेद नहीं होवे. गरुड के समान नेत्रों में तेज होवे. धीरे बोलने से सुननेवाला, बहरा नहीं हो. कर्णनाद रोग नहीं हो. हाथ, शिर इन का हिलना कदाचित् नहीं हो. मलापक कदाचित् न होवे. बुद्धिअंशु नहीं हो. कर्म करने में कुशल होवे. जैसे जल के सींचने से वृक्ष के पत्ते, डाली आदि बढ़ते हैं उसी प्रकार इस तेल के लगाने से नित्य देह की धातु बढ़ते हैं,

जिस स्त्री के गर्भपात होता है. तथा जिस स्त्री के प्रसूतसमय राधिर अधिक और जो बहुत बालको के होने से क्षीण हो गई ऐसी स्त्रियों को परम हित है वध्या स्त्री गर्भ को प्राप्त हो और इस के प्रताप से कदाचित् गर्भपात नहीं होवे योनिरोग और प्रदर नष्ट होवे इस तेल से परे दूसरी उत्तम औषधी नहीं है यह बल, वृष्य, श्रृंखण और अत्यन्त रसायन है, पहले देव और दैत्यो के सग्राम में दैत्योंकरके मारे गये जो देवता तथा जिन की हड्डी टूट गई तथा जो पिच गये और व्यया करके पीडित उन देवताओं के हित के वास्ते और संपूर्ण प्राणियों की दया विचारके श्रीमन्नारायण ने यह महानारायण तैल कहा है ॥

दूसरा प्रकार

बलाश्वगंधा बृहती श्वदंष्ट्रा स्योनाकवात्थालकपारिभद्रा । क्षुद्रा कठिल्लातिबलाग्रिमंथरास्त्रारणीकः कणिकच्छुराश्व ॥ निर्गुडि- कैरंडकुरंटकानां मूलानि वर्षासरणीयुतानि । मूलं विदध्याद्- शपाटलानां संकुट्य पादांशवतोद्धृतानाम् ॥ द्राणैरपामष्टभिरेव पक्त्वा पादावशेषेण रसेन तेन । तैलाढकाभ्यां समदुग्धमत्र गव्यानि दद्यादथ वाज्यदुग्धम् ॥ दद्याद्रसं चैव शतावरीणां तैलं च तुल्यं पुनरेव तत्र । पक्त्वा दिनैक कृतवस्त्रपूतं कल्कानि चैषां हि समावपेच्च ॥ रास्त्राश्वगंधामिशिदारुकुष्ठपर्णीतुरुष्का- गरुकेसराणि । सिंधूत्थमांसी रजनीद्वयं च शैलेयकं पुष्करचंद- नानि ॥ एला सयष्टी तगरांबुपत्रं भृंगाष्टवर्ज्यं च जया पलाशम् । वृश्चीव ऐलेयकचोरकारुयं मूर्वा त्वचा पुष्करपद्मकं च ॥ मृ- णालजातीफलकेतकी च सनागपुष्पं सरलं सुरा च । जीवंतिका चंदनकं ह्युशीरं दुरालभा वात्ररिका नखं च ॥ कैवर्तकं ताल- शिरः सतिकं खर्जूरिसुस्तं समभागमेपाम् । एतैः समैः सार्ध- पलप्रमाणैर्भागानथाष्टौ किल कालमेष्यः ॥ एणः कुरंगो हरिणो मयूरो गोधा शशः शक्रकचक्रवाकौ । वर्तीरलावौ वरतित्तिरी च सत्सारचक्रौ चककंबुवर्णः ॥ आनूपकूर्मा इह मांसपुष्टाः क्रमात्क्षिपेच्चात्र यथैव लाभम् । रोहीतकोथो शववेत्रनामा

कसाढ्वौ मुद्गरशृंगिके च ॥ पाठानकालीयकतोडिका च सरो-
 खरा ये कुरुदादयश्च । ये चापि तोये शिशुमारमुख्या लभ्याश्च
 येश्च भ्रमता भुजंगाः ॥ अन्येपि ये भूचरखेचराश्च पूर्णा अमीपां
 क्रमशोत्र योज्याः । सुताम्रपात्रेप्यथ मृत्तिका च कर्पूरकाश्मी-
 रमृगांडजं वा ॥ दद्यात्सुगंधाय वदंति केचित्प्रक्लेददौर्गंधवि-
 नाशनाय । वदंति केचिद् द्विपदः समेतं शुभे निधायथ सुहू-
 र्तलमे ॥ संतोष्य विप्रान् भिषजोर्थिनश्च सुभोजने यज्ञघृतं त-
 थैव । पाने च नस्ये च निरूहणे च भोज्यं प्रदेयं तत एव नून-
 म् ॥ अभ्यंगमादौ च सदा प्रशस्तं निर्वाप्यते कर्मसु केषु चिह्न-
 म् ॥ उन्मादशोपक्षतरक्तपित्तश्वासाभ्रमूर्च्छादिषु मूर्च्छितेषु ॥ का-
 साग्निवाता हनुमूलदंतकृमीष्ठद्युम्नीहिसतोददाहान् । सतालुमूलं
 श्रवणाक्षिशूलं वाधिर्यमुच्चज्वरपीडितं च ॥ मंदेंद्रियत्वं च तथा-
 ग्निमाद्यं नष्टप्रशुक्रत्वमथांगकंदूः । निहंति सत्त्वं न गुणप्रभा-
 वात्कटिग्रहापस्मृतिगृध्रसीं च ॥ पक्षाभिघातं चरणाभिघातं
 हस्ताभिघातं च शिरोग्रहं च । प्रक्षीणमुग्रं सकलप्रमेहान् ना-
 साक्षिकर्णप्रभवान् विकारान् ॥ वातादिजातान् किल भूतजा-
 तान् कृत्यादिजातान् ग्रथितान्विकारान् । रोगः स नास्त्येव
 नरस्य देहे नानेन शान्तिं समुपैति मोहः ॥ सद्योव्रणानस्थि वि-
 चूर्णितं वा नाडीव्रणान्वापि च योजयित्वा । सुवर्णवर्णं वितनोति
 रूपं नारायणाख्योखिलतैलराजः ॥ वंध्यः पुमान् वापि वरां-
 गना वा सुपुत्रमाप्नोति विलेपतोस्य । सिद्धचत्यनेनैव नियोजि-
 तेन निदाघदग्धः प्रहतोपि वृक्षः ॥ अन्यस्य का का भणितिर्नि-
 रस्य रोगस्य जंतोरपरस्य चापि । नारायणोक्तं तदिदं तु तैलं
 नारायणं नाम ततः प्रसिद्धम् ॥

अर्थ—बला (खिरेटी, वरियारा) की जड़, असगंध, बड़ी कटेरी, गोखरू, टेंडू
 सहदेई, नीम, छोटी कटेरी, करेला, अतिबला (कंगही), अरनी, रास्ता, दूसरी

अरनी, कौंच के बीज, निर्गुंडी, अंड की जड़, पियावांसा, काला जीरा, प्रसारणी, दशमूल और पाठ इन की जड़ इन को कूटकर ८१९२ तोले जड़ में उन का काटा करके जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे। इसमें ५१२ तोले तेल मिलावे और इतना ही गौ तथा बकरी का दूध मिलावे। फिर अग्निपर रखके औटावे। जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके छान ले और इस में राम्ना, असगंध, सोंफ, दारुहलदी, कूठ, शालपर्णी, शिलारस, काली अगर, नागकेशर, सैंधानिमक, जटामांसी, हलदी, दारुहलदी, पत्यर का फूल, पुहकरमूल, चंदन, इलायची, मुलहठी, तगर, नेत्रवाला, पत्रज, भांगरा, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीरकाकोली, जया (अरनी), पलास, पुनर्नवा, एकवालुक, चोरक, मूर्वा, दालचीनी, कमलकंद, पद्मास, कमल की जड़, जायफल, केतकी, नागदौन, देवदारु, सरल, सुरा (चावलों की बनी हुई दारु), जीवकशाक, पीला चंदन, खस, धमासा, कौंच के बीज, नख, बकायन, ताड़ के मस्तक का गाभा, चिरायता, खजूर, भद्रमोथा ये प्रत्येक छः छः तोले लेय तथा तगर आठ तोले, मजीठ ८ तोले इन सब का कल्क करे इस को तथा हिरन, कुरंग, काला हिरन, मोर, गोधा, ससा, शकक, चक्रवा, बटेर, लवा, तीतर, सारस, कौंच, बगला और जल समीप रहनेवाले जीव, कछुआ तथा रोहिंस, महर, शवनेत्र, कस, आडव, सिंगिया, पाठीन, कालीयक, तोडिका इत्यादि सरोवर की मछली तथा उस २ स्थान के कुरुदादि मत्स्य तथा सूंस से आदि ले मिले जो जल के जीव, बिल में रहनेवाले जीव (सर्पादिक) तथा आकाश में विचरनेवाले पक्षी और पृथ्वी में विचरनेवाले जीव इन में से जो मिल सके उन सब का मांसरस ले उस तेल में मिलायके तेल सिद्ध करे जब सिद्ध हो चुके तब छानके तांबे के पात्र में भरके रख देवे। अथवा मिट्टी के चिकने वासन में भरके रख देवे और उस पात्र में सुगंध करने के वास्ते और दुर्गंध दूर करने को कपूर, केशर और कस्तूरी ये पदार्थ डालके शुभ मुहूर्त देख ब्राह्मण, देवता और याचक जन इन का पूजन करके फिर इस तेल को पान, नस्य, निरूहवास्ति इन में देवे। यह मालिस करने में बहुत श्रेष्ठ है और उन्माद, शोष, क्षत, रक्तपित्त, श्वास, भ्रम, मूर्छा, खांसी, अग्निवात, हनुमूल, दंतमूल, कृमि, इष्टयुग्नी, पीडा, दाह, तालुशूल, कर्णशूल, नेत्रशूल, बहरापना, बढा हुआ ज्वर, इन्द्रियों की मंदता, धातुक्षय, खुजली, कटिग्रह, अपस्मार, गृध्रसी, अधांगवायु, हस्ताभिघात, पादाभिघात, मस्तकशूल, कृशत्व, सर्वप्रमेह, नाक, कान और नेत्र इन की व्याधि, सर्ववातव्याधि, भूतोन्माद, कृत्या का उन्माद, गांठविकार, सद्योवण, अस्थिभंग और नाडीवण इत्यादिकों को नष्ट करे। इस तेल के लगाने से न जानेवाली असाध्य व्याधिभी दूर होवे। तथा यह सुवर्ण के समान कांति करे और पुरुष तथा स्त्रियों का वंध्यापना नष्ट

अरनी, कौंच के बीज, निर्गुडी, आतिकाफलम् । कस्तूरी घनसारं च सिह्मारं
दशमूल और पाठ इन की जड़णागरु नतं चैव पत्रकं जातिपत्रिका । यथा-
झाडा करके जब चतुर्थाश रोजयेत्तत्र तद्दुधः ॥ तैलेनानेन नश्यन्ति सर्व-
और इतना ही गौ तथा बर । अशीतिर्वातजा रोगाः शोफशूलकटिग्रहाः ॥
एक मात्र शेष रहे तब उत्तमः । अशीतिर्वातजा रोगाः शोफशूलकटिग्रहाः ॥
शुद्धी, कूठ, शालपर्णी, पिंगूनां वामनानां तथैव च । अधोभागे च ये
हृदी, दासहलदी, पत्तघ्यगताश्च ये ॥ मन्यास्तंभे हनुस्तंभे वातरोगे
पत्रवाला, पत्रज, भांस्य शुष्यति चैकांगं ये च भग्नास्थिसंधयः ॥ पक्षा-
गिरिकाकोली, जयावृषु अर्दिते च हनुग्रहे । मंदश्रुतौ च श्रवणे तिमिरे च
वीनी, कमलकंद, ॥ हृच्छूले पार्श्वशूले च बाधिये मूकमिम्मिणे । काम-
उरल, सुरा (चा. ॥ हस्तकंपे शिरःकंपे गात्रकंपे
गोच के बीज, नरोगे च खल्लीशूलकटिग्रहे ॥ हस्तकंपे शिरःकंपे गात्रकंपे
गोथा ये प्रत्येक, हे । कलायखंजगृध्रस्यामववाहुं च नाशयेत् ॥ बाधिये
ना कल्क को भादे च सर्ववातविकारनुत् । दंडापतानकश्चैव मन्यास्तंभे
वकवा, बटे, ॥ हनुस्तंभे प्रशस्तं स्यात्सूतिकावातनाशनम् ।
हनुया तर, ॥ स्ये मांसप्रदं चैव शुक्राम्निचलवर्धनम् ॥ अंत्रवृद्धिमंडवृद्धिम-
गोडिका इ, चीं नाशयेत्ततः । योनिशूलमसृग्दोषमाध्मानं विनिहन्ति च ॥
उ आदि, श्वातशोणितदुष्टानां वातोपहतचेतसाम् । अश्वानां वातभग्नानां
कुंजराणां नृणां तथा ॥ तैलमेतत्प्रयोक्तव्यं सर्ववातविकारनुत् ।
अस्थिमेदोगता वाता क्षीणाश्चाशोभगंदराः ॥ भूतग्रहपिशा-
चाश्च तथा दुष्टग्रहानपि । दद्रूविचर्चिकापांमाकुष्ठकंडूत्रणाप-
हम् ॥ शृगालाद्यमिदं ख्यातं बहुपीडां च नाशयेत् । एतत्तैलेन
नश्यन्ति रोगाः सर्वे विशेषतः ॥

अर्थ—एक स्यार को मार उस के हाथ, पैर और पेट की आंतडी निकालके पटक
लेवे. फिर उस मांस के बारीक २ टुकड़े करके उस में मांस से चौगुना जल डालके
उस में से चतुर्थाश रस छानके लेवे. उस में उस रस के समान तेल डालके पचावे
फिर बकरो का चमडा, मस्तक, पांव निकाल के उस के काटे में और मुरगे के मांस
के रस में अलग २ पचावे. फिर शतावर का रस तैल के समान, भेड का दूध, छाछ
का पानी, उत्तम मद्य ये सब तैल के समान डालके शालपर्णी, पृष्ठिपर्णी, बडा, छोटी

शतावर, अंड की जड़, बृहती, पूतिक और ग्वेधुक की जड़, सहचर की जड़, प्रसा-
 रिणी, अश्वगंधा, काली मुसली, पुनर्नवा, रास्ना, गोखरु, पाठा, पाटला, नीम, आक
 की जड़, बड़ी दंती, कटभी, नागकेशर, चक्रमर्द, आंगा, अंकोट व बेल की जड़,
 स्योनाक, करंज, नागरमोथा, अदुसा, धमासा, कडुआ परवल, निर्गुंडी, मुंडी,
 कडुआ कडू, लांगली, शिशु, पीलुका, खिचूर, कासिवदा, चॉटली की जड़,
 विधारक, गिलोय, शंखपुष्पी, भृंगराज, कुंद, वट, कुट, वाला, मदन, कौंच, सुही,
 महानिंब, वृंदावन, शिरीष, करवीर (मनशील) ये प्रत्येक चार २ तोले लेके इन
 का चतुर्थांश काढा करके तेल के समान डाले. फिर चंदन, देवदारु, कोष्ठ,
 जटामांसी, पुनर्नवा, करंज, रास्ना, त्रिवृता, रेणुकबीज, शिशु, गुग्गलु, दालचीनी,
 इलायची, तमालपत्र, नागकेशर, मजीठ, हलदी, दारुहलदी, नागरमोथा, घातकीपुष्प,
 पतंग, जवास्वार, टंकणस्वार, वच, इलायची, शिलारस, सोंठ, काली मिरच, पीपल,
 पाचों निमक ये प्रत्येक दो २ तोले लेके इन का कल्क करके उस तेल में डालके
 मंदाग्रि से पचाके सिद्ध करे और सुगंधि के वास्ते लौंग, जायफल, कस्तूरी, कपुर,
 शिलारस, नख, वाला, काला अंगर, तगर, तमालपत्र और जायपत्री इन में से
 जो मिल जाय उस तेल में डाले. यह तेल सब रोग, अस्सी तरह के वायु, अफरा,
 शूल, कटिग्रह, कुञ्जवात, पांगलपना, वामनवात, अधोभागगत वातरोग. मस्तक का
 वातरोग, मन्यास्तंभ, हनुस्तंभ, वातरोग, गलग्रह, एकांगवात, अस्थिभंग, संधिभंग,
 पक्षघात, अर्दित, हनुग्रह, बहरापन, मूकवात, मिम्भिणवात, कामला, पांडुरोग,
 खल्लीवात, शूल, कटिग्रह, हस्तकंप, शिरःकंप, गात्रकंप, मस्तकशूल, कलायसंजवात,
 गृध्रसी, अवबाहुक, बहरापन, कर्णनाद, संपूर्णवात, दंडापतानक, मन्यास्तंभ, हनु-
 स्तंभ व सूतिकावात इन का नाश करता है. बालपन में देह में मांस को बढाता है,
 बल, शुक इन को बढाता है, अंडवृद्धि, अंत्रवृद्धि, अपची, योनिशूल,
 रक्तदोष, आध्मान, वातरक्त, वातरोग, वायु से विगडे हुए हाथी, घोडे और गौ
 इन के वातविकार को नष्ट करता है, अस्थिगत व मेदगतवायु, क्षय, अर्श, भगंदर
 भूतबाधा, ग्रहबाधा, पिशाचबाधा, दुष्टग्रह, दद्रुपामा, विचर्चिका, कोठ और व्रण इन
 का नाश यह शृगालतैल करता है. इस तेल के सेवन से विशेष करके सब रोग
 नष्ट होते हैं ॥

तीसरा मापतैल

मापकाथे बलाकाथे रास्नाया दशमूलजे । यवकोलकुलित्थानां
 छागमांसरसे पृथक् ॥ प्रस्थे तैलस्य च प्रस्थं क्षीरं दद्याच्चतु-
 गुणम् । रास्नात्मगुप्तासिंधूत्थशताह्वैरंडमुस्तकैः ॥ जीवनीय-

बलाव्योपपचेदक्षमितैः पृथक् । हस्तकंपे शिरःकंपे बाहुकंपेव-
बाहुके ॥ वस्त्यभ्यंजनपानेषु नावने च प्रयोजयेत् । मापतैल-
मिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजनुगदापहम् ॥

अर्ध—उडद, खिरेटी, रास्ना, दशमूल, जों, बेर और कुलथी इन का पृथक् २६४ तोले काढा करके लेवे. मांसरस ६४ तोले, इन सब में ६४ तोले तेल को पृथक् २ पक्क करके फिर तेल के चौगुना दूध डालके रास्ना, कोंच के बीज, सैधानिमक, शतावर, अंड की जड, नागरमोथा, जीवनीयगण, खिरेटी और त्रिकुटा इन का तोले २ चूर्ण करके गेरे फिर पक्क करके इस को रख लेवे. इस को मापतैल कहते हैं. यह हस्तकंप, बाहुकंप, अवबाहुक इन रोगोंपर, वस्ति, अभ्यंजन, नस्य और पान इन में देवे. यह हसली के ऊपर के रोगों को नाश करे ॥

रास्नापूतीकतैल

दशमूलबला दारु अश्वगंधा शतावरी । वरुणैरंडनिगुंडी तर्का-
री शिशु मोरुम् ॥ सहचरं चित्रमूलं करंजां कोलमूलकम् ।
पुनर्नवं च भूपालु अर्कपुंखी दुरालभा ॥ जीवंती विपत्तिदुश्च
वातारिहिंस्रशिशुकम् । अलर्कयवकोलं च कुलित्थानां
कपायकम् ॥ एतेषां च समं रास्ना पूतीकं च तयोः समम् ।
अष्टभागावशेषं तु कपायमवतारयेत् ॥ तत्पादं तिलतैलं
च अजाक्षरं च तत्समम् । गुग्गुलं तगरं मांसी त्रिकटु त्रिफ-
लानि च ॥ चातुर्जातं कचोरं च विडंगाभरदारु च । हिंशु रास्ना
वचा तित्ता पाठा यष्टिकचित्रकम् ॥ प्रियंगु पिप्पलीमूलं चंदनं
चव्यदीपकम् । वरालं चंपकं कुष्ठं मंजिष्ठा मिश्रिसर्पपाः ॥ जा-
तीफलं सुगंधं च पाठोशीरं समांशकम् । एतत्तैलस्य पष्टांशं
कल्कद्रव्याणि दापयेत् ॥ सुमुहूर्ते सुनक्षत्रे नववस्त्रेण पीडयेत् ।
पानलेपननस्याद्यैः शिरोवस्तिषु योजितम् ॥ धनुर्वातातरायामं
गृध्रसीमवबाहुकम् । आक्षेपके व्रणायामे विप्व्याच्यामपतंत्रके ॥
आन्ववाते हनुस्तंभे शिरावातापतानके । भूशंखकर्णनासा-
क्षिजिह्वास्तंभे च दारुके ॥ कलायखंजता पंगु सर्वांगैकांगमा-

रुते । अदिते पादहर्षे च पक्षाघाते प्रशस्यते ॥ ऊरुस्तंभं सुप्त-
वातं नाशयेन्नात्र संशयः । रास्नापूर्तिकनामैतत्तैलमात्रेयनिर्मितम् ॥

अर्थ—दशमूल, खिरेटी, दारुहलदी, असगंध, शतावर, वरना, अंड की जड़, निर्गुडी, अरनी, सहजने की छाल, ईख की जड़, पियावासा, चीते की छाल, कंजा, बेर की जड़ पुनर्नवा, भूपिण्ड, अर्कपुंखी, दुरालभा (धमासो), जटामांसी, कुचला, लाल अंड, लाल आक, जों, बेर और कुलथी इन औषधों की बराबर रास्ना लेवे और सब की बराबर कंजा इस प्रकार सब औषध लेके काटा करे जब जल अष्टमांश शेष रहे तब उतारके उस में उस का चतुर्थांश तेल मिलावे और इतना ही बकरी का दूध और गूगल, तगर, जटामांसी, त्रिकुटा, त्रिफला, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, कचूर, वायविडंग, देवदारु, हींग, रास्ना, वच, कुटकी, पाद, मुलहठी, चित्रक, त्रिपंगु, पीपरामूल, चंदन, चव्य, अजमायन, लोंग, चंपा, कूठ, मजीठ, सोंफ, सरसो, जायफल, रोहिपतृण, पाद की जड़ और खस इन सब औषधों का चूर्ण तेल से छटा भाग लेवे. इस को तेल में डालके सब को एकत्र कर मंदाग्न पर रखके औटावे जब तेल सिद्ध हो जावे तब उतारके उत्तम दिन में उसे किसी उत्तम पात्र में भरके धर देवे. इस को पीने से लेप, शिरोवस्ति इन में देवे तो धनुर्वात, अंतरायाम, गृध्रसी, अपवाहुक, आक्षेपक, व्रणायाम, विश्वाची, अपतंत्रक, आढ्यवात, हनुस्तंभ, शिरावात, अपतानक, भौंह, कनपटी, कान, नाक, नेत्र और जिह्वा इन का स्तंभ, दारुक, कलायसंजता, पंगुता, सर्वांगवात, एकांगवात, अदित, पादहर्ष, पक्षाघात, ऊरुस्तंभ और सुप्तवात इन सब को नाश करे इस में संदेह नहीं है इस को रास्नापूर्तिक नामक तेल कहते हैं. यह आत्रेयऋषि का निर्माण करा है ॥

बलातैल वातादिकोंपर

बलामूलकपायेण दशमूलशृतेन च । कुलित्थयवकोलानां का-
थेन पयसस्तथा ॥ अष्टाष्टभागयुक्तेन भागमेकं च तैलकम् ।
गणेन जीवनीयेन शतावर्यैर्द्रदारुणा ॥ मंजिष्ठाकुष्ठशैलेयतगरा-
गुरुसैधवैः । वचापुनर्नवामांसिसारिवाहयपत्रकैः ॥ शतपु-
प्पाश्वगंधाभ्यामेलया च विपाचयेत् । गर्भार्थिनीनां नारीणां
पुंसां च क्षीणरेतसाम् ॥ व्यायामक्षीणगात्राणां सूतिकानां च
युज्यते । राजयोग्यमिदं तैलं सुखिनां च विशेषतः ॥ बलातै-
लमिति ख्यातं सर्ववातामयापहम् ॥

अर्थ-खिरेटी आठ प्रस्थ को बत्तीस प्रस्थ जल में डालके औटावे जब चौथाई रहे तब उतारके उस काढे को छान लेवे इसी प्रकार दशमूल ८ प्रस्थ में बत्तीस प्रस्थ जल डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय तथा कुलथी, ज्ञों, बेर के भीतर की गुठली, पृथक् २ औषध आठ २ प्रस्थ लेकर एक एक में बत्तीस प्रस्थ जल डालके पूर्वोक्त क्रम से पृथक् २ काढा कर लेवे फिर इन पांचों काढों को एकत्र मिलायके इन में गौ का दूध आठ प्रस्थ डालके तथा तिल का तेल १ प्रस्थ डाले इस में चूर्ण करके डालने की औषधी इस प्रकार लेवे. जीवनीय गण की औषध, शतावर, मजीठ, देवदारु, कूठ, पत्थर का फूल, तगर, अगर, सेंधानिमक, बच, पुनर्नवा, जटामांसी, सपेद कोयल, कोयल, पत्रज, सौंफ, असगंध और इलायची ये चौबीस औषध तेल के चतुर्थांश ले कलक करके उसी तेल में मिलाय देवे. फिर तेल को अग्निर रखके औटावे जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे. इस को बलानैल कहते हैं. यह तैल जिस स्त्री को गर्भ की इच्छा होवे उस की देह में मालिस करे और जिस पुरुष की धातु क्षीण होवे उन को तथा जो बहुत आने जाने से थक गये हो उन को देना चाहिये तथा प्रसूता स्त्री को देवे तथा यह तैल विशेष करके राजाओं के और सुखी मनुष्य (सेठ साहूकारों) के योग्य है. इस तेल से वादी के संपूर्ण विकार दूर होते हैं ॥

मापादितैल त्रीवास्तंभादि के ऊपर

मापा यवातसी क्षुद्रा मर्कटी च कुरंटकः। गोकंटदंडुकश्चैपां कुर्यात्सप्तपलं पृथक् ॥ चतुर्गुणांबुना पक्त्वा पादशेषं सूतं नयेत् । कार्पासास्थीनि वदरं शणवीजं कुलित्थकम् ॥ पृथक् चतुर्दशपलं चतुर्गुणजले पचेत् । चतुर्थांशावशिष्टं च गृहीयात्काथमुत्तमम् ॥ प्रस्थैकं छागमांसस्य चतुःपष्टिपले जले । निःक्षिप्य पाचयेद्दीमान् पादशेषं रसे नयेत् ॥ तैलप्रस्थं ततः काथान् सर्वानेतान् विनिःक्षिपेत् । कल्कैरेभिश्च विपचेदमृताकुष्ठनागरेः ॥ रास्त्रापुनर्नवरंडैः पिप्पल्या शतपुष्पया । बलाप्रसारिणीभ्यां च मांसीकटुकया तथा ॥ पृथगर्घपलैरैतैः साधयेन्मृदुवह्निना । हन्यात्तैलमिदं शीघ्रं त्रीवास्तंभापवाहुकौ ॥ अर्थांगशोपमाक्षेप-सूरुस्तंभापतानकौ । शाखाकंपं शिरःकंपं विश्वाचीमर्दितं तथा ॥ मापादिकमिदं तैलं सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ-उडद, जों, अलसी के बीज, कटेरी, कौंच के बीज, पियावांसा, गोखरू, टेंदू ये आठ औषध सात २ पल लेय सब औषधों से चौगुना जल डालके काढा करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. तथा विनेला, बेर की गुठली सन के बीज और कुलथी ये चार औषध चौदह २ पल लेय इन में चौगुना पानी डालके काढा करके छान ले फिर बकरे का मांस एक प्रस्थ में ६४ पल जल डाल चतुर्थांश जल रहने पर्यंत काढा कर छान लेवे. फिर तिलों का तेल एक प्रस्थ डालके पूर्वोक्त संपूर्ण काढे मिलाय देवे. फिर गिलोय, कूठ, सोंठ, रास्ता, पुनर्नवा, अंड की जड़, पीपल, सोंफ, खिरेटी, प्रसारणी, जटामांसी, कुटकी ये बारह औषध आधा २ पल ले सब का कल्क कर तेल में मिलाय मंदाग्रि से पचावे फिर तेल को छान लेय इस को मापादितैल कहते हैं. यह तेल देह में लगाने से ग्रीवास्तंभ वायु, अपचाहुक वायु, अर्द्धांगवायु, आक्षेपक वायु, ऊरुस्तंभ वायु, अपतानक वायु, हाथपैरों का कापना, मस्तककंप, विश्वाची और अर्दित (लववा) इत्यादि समस्त वायु दूर हो ॥

सुगंधतैल

तगरागरुकुंकुमकुंदुरुभिः सलवंगवरांगकुंरंगमदैः । सरलामर-
दारुदलद्रविडीनखकेशररुड्नलिनीनलदैः ॥ सतुरुष्कहरेणुव-
लाक्कथनैरिति तैलमिदं पयसा विपचेत् । नृपतिप्रमदाशिशुभिः
स्थविरैरुपयोज्यमिदं पवनामयजित् ॥

अर्थ-तगर, अगर, केशर, कुंदरू, लौंग, दालचीनी, कस्तूरी, सरल, देवदारु, इलायची, नख, नागकेशर, कूठ, कमलिनी, नेत्रवाला, शिलारस, रेणुकबीज और खिरेटी इन का काढा और दूध एकत्र करके तेल बनाय लेवे इस को राजा की छी, कुंज और कुंजों को स्नेहन करके यह राजाधिकार का नशा करे ॥

एलादितैल

एलामुरासरलशैलजदारुकोंतीचंडाशठीनलदचंपकहेमपुष्पम् ।
स्थौणैयगंधरसपूतिदलं मृणालश्रीवासकुंदुरुनखांबु लवंगकु-
ष्ठम् ॥ कालीयकं जलदकर्कटचंदनश्रीजात्याः फलं सविकसं
सह कुंकुमेन । स्पृक्का तुंरुष्कलघुकांबु तथा विनीय तैलं वला-
क्कथनदुग्धदधिप्रपक्कम् ॥ मंदानलेन हितमेतदुदाहरंति वाताम-
येषु वलवर्णहुताशकारी ॥

अर्थ-इलायची, मुरा, सरल, पत्थर का फूल, देवदारु, रेणुकबीज, गडोना, कचूर, खस और सुवर्णचंपा, थूनेर, लाल बोल, पीली लोध, कमल का कंद, श्रीवास, कुंदरू, नख, नेत्रवाला, लौंग, कूठ, दारुहलदी, नागरमोया, ईस, चंदन, बेलगिरी, जायफल, लाल पुनर्नवा, केशर, मूर्वा, शिलारस और पीले रंग का खस इन का चूर्ण कर खिरेटी के काढे में दूध और दही इन से युक्त मंदाग्नि पर पकाया हुआ तेल वादी के रोगपर हितकारी है. तथा बल, वर्ण, आग्नि इन को चढावे ॥

महालक्ष्मीनारायणतैल

दशशतांघ्रिशिवेतरमल्लिका दहननागबला ऋबुवाष्पिका ।
 कितवलांगलकीवनमल्लिकाकुटजहेंदुवृकीखंरशृंगिका ॥ मधुक-
 बीजकचंपकमालतीसुहिवलाकूमिहा प्रपुत्राटकाः । शतदला-
 श्ववराहकवासनीऋबुकधन्वनपिप्पलिरक्तिका ॥ अतिबला द्वि-
 विपा शकदाडिमी शिखरिशालमलिसिंधुकुतुंडिका । सुपिरफं-
 गुलकाशसुमर्कटी वरककुंभनिकुंभजयंतिका ॥ कुसरिपिच्छ-
 लिका करमर्दिका कसनमर्दककेवणिरूपिका । अतसिवत्सक-
 गृध्रमहीरुहो विदुलकुंजलिका द्वितयोच्चटा ॥ दधिफलसुववृक्ष-
 मृगादनी मधुरसा मगधा जलपत्रिका । रुदंतिका पृथगेभ्य जटा
 सुधी समनुगृह्य दशांघ्रिकम् ॥ सुनितरुमलयतपनापामार्गबीज-
 नक्तमालशृंगाटी । प्रपुनाटो हेमदुग्धा कलेरुहाणां तु बीजानि ॥
 धात्री शिशु करंजबन्जुलमधुष्टीलेंगुदीनेपतीनिपारग्वधरक्तसार-
 वदरीविस्फूर्जनः कांचनः । चिंचोदुंबरतापसीद्रुमयुगांकोलद्वयं
 सल्लकी गायत्री कलिवृक्षभंडिकदराश्वत्थाभयापादपाः ॥ भल्ली-
 किंशुकमेपशृंगिकिहिनीभूतांकुशः शल्यकः कोशाभ्राजुनपारि-
 भद्रकमहावृक्षाः कुमार्यासनैः । कुंभी रक्तधनंजयो नियमनो वा-
 तारिमोखाह्वया एतेपां परिगृह्य बल्कलमथो रंभा विदारी वरी ॥
 आलूकेशिरकंदवाजिसुवहा कर्कोटिका गृष्टिका सज्जरी सुरसू-
 रणप्रभृतिकान्कदांश्च साधूनपि । छिन्नाटरूपकाशिवप्रियमाप-
 पर्णा ज्योतिष्मती युगुलपपंटमेपवल्ली ॥ भूपणिंकासजटि-

कामृगराजमुंडीयुक्तर्तरीकुलकयुग्मफलार्कभक्ता । भूर्निव्व-
 ह्निदमनो गिरिकाणिकायुक् चिल्हारका खदिरका विजया
 कुमार्यः ॥ गंगावतीयुगकवैष्णविका सुगंधा लंबा सुपर्णलतिका
 सहदेविका च । गोपीयुगं मृगखुरी सरणी च कंगुमोर्यश्च
 नागदमनी मधुपुष्पिका च ॥ एतानि गृह्य निखिलानि तथा-
 द्ययुग्मं चूतास्थितो तरुरुहो वटसंप्रोहान् । भूशर्करा मदकरा
 कुसुमं च पीलुवर्हिः शिखा कनककेतकिसंप्रोहान् ॥ व्या-
 घ्राटिकांप्रिकरकं तिनरोत्थसारं कंडूकपित्थभवलोहजटा गृ-
 हीत्वा । मुष्टिप्रमाणं विधिनोद्धृतानि द्रोणैर्जलानां त्रिसृभिर्वि-
 पक्त्वा ॥ पादावशेषं परिगृह्य पोतं प्रस्थत्रयं तच्च तिलोत्थ-
 तैलम् । हिंस्रा रक्ता वरिष्ठा सुररजनियुगं सैहलं गंधसारं शृं-
 गारं नागपुष्पं पलितकटुफलं रक्तकाष्ठं नतं च ॥ पड्यंथा
 जोंगकाश्वा रुचककररुहं रोचना रक्तसारं कोरंजी पालकाह्वं
 कृमिरिपुमधुकं सिंधुजं स्निग्धदारु ॥ तालीसं जातिसस्यं मलय-
 जममृतं पद्मकं जातिपत्री सेव्यं पद्मं यवानी कतकुतुरवती
 केशरं पद्मकस्य । पाठीनो राजपुत्री जलधरचविका सोमवल्को
 मधूकं पाक्यः स्वर्जा शताह्वा वनजमगधजा मत्स्यपित्ता शठी
 च ॥ कारुंची पुत्रजीवास्तपनकनकजं बीजभृंगाररेची वृक्षाम्लं
 देवधूपो जरणरसरसाकल्कराकुट्टिमं च । मृद्धीका साकुरंडं
 नियमनधनिका धन्वयासं च ब्राह्मी विश्वं कैरातकेशुरकारिक-
 णामोदकं वस्तमोदा ॥ शक्राह्वा तिल्वलाख्यश्छुरपुरसुपवी
 मेथिका शृंगिका च प्रत्येकं संगृहीत्वा पिचुदलतुलिता मुंच-
 चासकृत् प्रपिष्ट्वा । ता निःक्षिप्याशु पात्रे शुचि जनविहृतं
 निर्मलं वैद्यवर्यो गव्यं वा दुग्धमाजं युगपरिगणितं पूर्वमुक्ताच्च
 तैलात् ॥ नारायण्यस्वरसकमथो रंगमातारसं च तैलोन्मानं

विपचरविजे भाजनं प्रत्यहं वा । तस्मिन्पाकं गतवति यथावि-
 ध्यनुप्रक्षिपेच्च सौगंधार्थे शिशिरकिरणं कुंकुमं वेधमुख्यम् ॥
 गोधूमारुख्यं सुसुरभियुतं गंधकर्चूरकं च जातीपुष्पं शतदलसमं
 मल्लिकं चंपकं च । लोधानेन त्वतिसुरभिते काचभाण्डे निधाय
 तैलं चैतन्नृपतिसदने धारयेद्द्वैद्यवर्यः ॥ पाने वस्तौ विहितमग्ने
 नावनाभ्यंजने च मातंगे वा मनुजघनयोर्वातरोगाभिभूते ।
 वाताष्टीलां गलहनुशिरो गृध्रसी पादशूलं पक्षाघातं श्रवणन-
 यनभूललाटेषु शूलम् ॥ ऊरुस्तंभादिंतत्रधिरतैकांगरोगापतानं
 मन्यास्तंभं त्रिकहृदयरुद्धं मूकताक्षेपखांज्यम् । जिह्वास्तंभं
 गतिविकलतां कुब्जतां दंतशूलं स्तन्यो गुल्मद्रव्यं वा गुदक-
 टिचरणभ्रंशगुल्फौ च सुप्तिम् ॥ विश्वाचीं वा वृषणपवनं धातु-
 वातापतानं मूकं कंपं जयति सकलान् वातरोगाननुक्तान् । रेतो-
 वृद्धिं जनयति नवं यौवनं पौंस्त्ववृद्धिं बुद्धिं प्राणं वितरति
 तथा पुष्टिमायुष्यकारी ॥ वंध्यायाः पुत्रदं स्यात् ज्वरविहिततनौ
 शोपदौर्भाग्यहंतृ तैलं भूपोपयोग्यं विनिगदितमिदं नाम नारायणं च ॥

अर्थ—शतावर, बेर, मल्लिका, चित्रक, नागवला, अंड, बभूर, धतूरा, भटेडर, क-
 लियारी, वनमल्लिका, इंद्रजो, हेदीवृक्ष, पाद, सरसिंगा, मुलहटी, यिजोरा, चंपा,
 चमेली, धूहर, खिरेटी, बायाविडंग, पवाड, सोंफ, असगंध, पाराहीकंद, वासनी, लाल
 अंड, धामन, पारस पीपल, पतंग, अतिवला, काठी और सफेद वाघेटी, शक, (?)
 अनार, आंगा, सेमल, निर्गुंडी, कट्टर कंदूरी, नरसल, पांगली, कांस, कोंच के बीज,
 भारंगी, निसोय, दंती, अरनी, कुमरी, पिच्छलिका, (?) करंद, कसौंदी, कमरस, केवणी,
 आक, जवासा, काला कृडा, बेर, वेत, साल, बडा साल, सपेद पूंपची, लाल
 घूंचची, कैथ, टाक, इन्द्रायन, मूर्वा, पीपल, कमलिनी, रुदंती, दशमूल इन सब की
 जड लेवे. अगस्तिया, चंदन, भिलाए, आंगा, कंजा, सिघाडे, पवाड, चौक, करंज
 इन के बीज लेवे. आवला, सहजना, कंजा, बभूर, महुआ, गौंदी, नेपती, जलकदंब,
 अमलतास, सीसों, बेर, विस्फूर्जन, (?) धतूरा, इमली, गूलर, सपेद और लाल अगस्तिया,
 अंकोळ, दोनों रायआवले, सैर, बहेडा, मेंडी, सपेद सैर, पीपलवृक्ष और हरड इन
 सब औषधों के पंचांग लेवे. भिलाए, पलास, मेढासिंगी, सपेद आंगा, नकलि-

कनी, मैनफल का वृक्ष, कोशाम्र (कोकम्), कोह, कडुआ नीम, धूहर, धीगुवार, विज-
यसार, गोमा; लाल चित्रक, वरना, अंड, मोखा वृक्ष इन वृक्षों की छाल लेवे. केरा,
विदारीकंद, शतावर, आडू, क्षीरकंद, असगंध, ककोडा, वांझ ककोडा, खजूर, मूसली-
कंद और जमीकंद इत्यादि कंद लेवे. गिलोय, अडूसा, बेलगिरी, मापपर्णी, कांगनी-
मालकांगनी, पित्तपापडा, मेढासिंगी, वासनवेल, घूषची, भांगरा, मुंडी, निर्गुंडी,
काली निर्गुंडी, परवल, मीठा परवल, हुलहुल इन के पंचांग लेवे. चिरायता,
चित्रक, दवना, सपेद और काली कोयल, लजालू, खैर, भांग, धीगुवार, गंगावतीद्वय,
वृद्धदारु, तेरडा, कडुई घीया, कांडवेल, सहदेई, सारिवा, कृष्णसारिवा, छोटी बडी
हरनखुरी, हरनवेल, कांगनी, मूर्वा, नागदौन, महुआ के फूल इन के भी पंचांग लेय.
नागरमोथा, भद्रमोथा, आम की गुठली, वांदा, बड की कोपल, सक्करकंद, धाय के फूल,
अखरोट, मोरसिखा, सुवर्ण केवडा की कोपल, धतूरा, केतकी इन की नई कोपल,
अनार, कौंच के पत्ते, कैय की जड, लोहे की कीटी ये प्रत्येक औषध चार २ तोले
लेवे. इन को जौंकूट करके ३०७२ तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे
तब उतारके छान लेय. फिर इस में १९२तोले तिलों का तेल डाले और जटामांसी,
मजीठ, खस, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, दालचीनी, चंदन, लोंग, नागकेशर,
गूगल, कायफल, पतंग, तगर, वच, काली अमर, असगंध, संचरनिमक, नखद्रव्य,
गोरोचन, लाल चंदन, फिटकरी, कूठ, वायविडंग, मुलहठी, सेंधानिमक, तेलिया
देवदारु, तालीसपत्र, जायफल, धनिया, चंदन, बच्छनाग, कमलाक्ष, जावित्री, नेत्र-
वाला, कमल, अजमायन, लवलीफल के बीज, फिटकरी, कमल की केशर, चित्रक,
रेणुकबीच, भद्रमोथा, चव्य, बावची, मुलहठी, जवाखार, सज्जीखार, सोंफ, चिर-
फल, पीपल, कुटकी, कचूर, कारुची, जीयापोता, भिलाए, धतूरे के बीज, भांगरा,
निसोय, इमली, गूगल, जीरा, रार, रास्ना, अकरकरा, अनार की छाल, दाख,
अखरोट, नीम की छाल, धनिया, धमासा, ब्राह्मी, सोंठ, चिरायता, तालमखाने,
गजपीपर, अजमायन, अजमोद, इन्द्रायन, लोध, कौंच की जड, गूगल, बनकरेला,
मेथी, काकडासिंगी, गौ का अथवा बकरी का दूध तेल से दुगुना लेवे. तथा इतना
ही शतावर का रस और इतना ही लाख का काढा, इन सब को एकत्र करके तामे
के पात्र में पचन करे और उस में सुगंध होने के वास्ते कपूर, केशर, कचूर, प्रियंगु,
कपूरकचरी, चमेडी, सेवती, मल्लिका और चंपा इन के फूल डाले. फिर कांच के
पात्र में लोहवान की धूनी देकर भरके धर रखे. इस को पीने के अर्थ, वास्ति, भोजन,
नस्य, देह में लगाना, हाथी अथवा मनुष्य इन के वातरोग होने से और वातघ्नीला,
गलग्रह, शिरोग्रह, गृध्रसी, पादशूल, पक्षाघात, कान, नाक, भौंह और ललाट इन के
शूल को, ऊरुस्तंभ, अर्दित, बाधिरता, एकांगरोग, अपतानक, मन्यास्तंभ, त्रिक, उर इन में

दर्द का होना, गूंगापना, आक्षेपक, खंज, जिह्वास्तंभ, लंगडापना, कुबडा, दाँतों का दर्द, स्तनरोग, गोला, गुदा. कमर और पैर इन का भ्रष्ट होना, खल्ली, सुप्ति, विश्वाची, अंडकोशों की वात, धातुगत वादी, अपतानक, मूकता, कंठ और संपूर्ण कहे अथवा नहीं कहे ऐसे वादी के रोगों को जीते. वीर्य बढे, यौवन देवे. पुरुषार्थ की वृद्धि करे. प्राण, बल, पुष्टि और आयुष्य इन को करे. बंध्या को पुत्र देवे. ज्वर, क्षय और दुर्भगता इन को नाश करे. यह तेल राजाओं के योग्य इस को महालक्ष्मी-नारायण कहते हैं. (हमारी समझ में किसी मूर्ख वैद्य ने इस के श्लोक गढे हैं सो इसपर वैद्य बनाने का साहस न करे) ॥

रास्नाद्यघृत

रास्ना पौष्करशिशुमूलदहनं सिंधूतथगोक्षूरकं पिप्पलिसं-
युतं चलगदे पेयं सदा सर्पिषा । संपाच्याथ चतुर्गुणेन पयसा
वा वाजिगंधायुतं सर्पिः पेयमसाध्यवातगदजे शुक्रक्षये दारुणे ॥

अर्थ—रास्ना, पुहकरमूल, सहजने की जड़, चित्रक, सेधानिमक, गोखरू और पीपल इन का कल्क, घृत और चौगुना दूध डालके घृत सिद्ध करे और असगंध चूर्ण के साथ असाध्य वायु और शुक्रक्षयपर खाने को देवे ॥

पंचतित्तघृत

निंवामृतावृषपटोलनिदिग्धिकानां भागान्पृथग्दश पलानि प-
चेद्वटेपाम् । अष्टावशेषितरसेन पुनश्च तेन प्रस्थं घृतस्य विप-
चेत्पिचुतुल्यकल्कैः ॥ रास्नाविडंगसुरदारुगजोपकुल्याद्विक्षा-
रनागरनिशामिशिचव्यकुष्ठैः । तेजोवती मरिचवत्सकदीप्यका-
ग्निर्रोहिण्यपुष्करवचाकणमूलयुक्तैः ॥ मंजिष्ठया तु विपया त्रि-
वृता यवान्या संशुद्धगुग्गुलुपलैरपि पंचसंख्यैः । तत्सेवितं घृत-
मतिप्रबलं समीरसंध्यस्थिमज्जगतमप्यथ कुष्ठमीदृक् ॥ नाडीव-
णार्बुदभगंदरगंडमालाजत्रूर्ध्ववातगदगुल्मगुदोत्थमेहान् । य-

क्षमारुजश्वसनपानसकासशोफहृत्पांडुरोगमथ विद्रधिवातरक्तम् ॥
अर्थ—नीम की छाल, गिलोय, अहसा, पटोलपत्र और कटेरी ये प्रत्येक चालीस तोले लेवे. सब को जोकूट करके १०२४ तोले जल डाल के जब अष्टावशेष ठा हो जावे. तब उतारके छान लेय और इस में ६४ तोले घी डालके उस में

रास्ना, वायविडंग, देवदारु, गजपीपल, जवाखार, सुहागा, सोंठ, हलदी, सोंफ, चव्य, कूठ, मालकांगनी, काली मिरच, कूडा की छाल, अजमायन, चित्रक, कुटकी, पुहकरमूल, वच, पीपरामूल, मजीठ, अतीस, निसोय और किरमानी अज-
मायन ये प्रत्येक एक २ तोले लेय इन का कल्क कर उस घी में मिलाय और गूगल
पांच तोले डालके घृत को सिद्ध करे इस के सेवन करने से अत्यंत बढा हुआ वायु,
संधि, अस्थि, मज्जा इन का वायु, कुष्ठ, नाडीव्रण, अर्बुद, भगंदर, गंडमाला, हसली
के ऊपर के भाग की वादी, गोला, बवासीर, प्रमेह, क्षय, श्वास, खांसी, पीनस,
सूजन, पांडुरोग, विद्रधि और वातरक्त इन रोगों को नाश करे ॥

वातरोगपर पथ्यापथ्य

कुलित्था मापगोधूमा रक्ताभाः शालयो हिताः । पटोलं शिशु
वार्ताकं दाडिमं च परूपकम् ॥ मत्स्यंडिका घृतं दुग्धं किलाटं
दधिकूर्चिका । बदरं लशुनं द्राक्षा तांबूलं लवणं तथा ॥ चटकः
कुक्कुटो वहिंस्तिस्तिश्चेति जांगलाः । शिलीध्रः पर्वतो नक्रो
गर्गरः खुडिशो झपः ॥ यथाश्रमं यथावश्यं यथाचरणमेव हि ।
वातव्याधौ समुत्पन्ने पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥

अर्थ—कुलथी, उडद, गेहूं, लाल चावल, पटोल, सहजना, बैंगन, अनार, फा-
लसा, खांड, घी, दधिकूर्चिका (दूध और दही इन दोनों को समान लेके एकत्र
पकाया हुआ पदार्थ), किलाट, बेर, लहसन, दाख, बिड निमक, चिडिया, मुरगा,
मोर, तीतर, अरण्यपशु, भूच्छत्र, चिरायता, सुसर, गर्गर, खुडिश, झप इन जाति
के मत्स्य इतने पदार्थ श्रम, आवश्यकता और आचार के अनुसार विचारपूर्वक
वातव्याधि पर पथ्य में देवे ॥

अपथ्य

चिंताप्रजागरणवेगविधारणानि छर्दिः श्रमोन्शनता चणकाः क-
लायाः । श्यामाकचूर्णकुरविंदुनिवारकंगुमुस्तास्तडागतटिनीस-
लिलं करीरम् ॥ क्षौद्रं कपायकटुतिक्तरसा व्यवायो हस्त्यश्व-
यानमपि चक्रमणं च खट्वा । आध्मानिनोर्दितवतोपि पुनर्विशे-
पात्स्नानं प्रदुष्टसलिलैर्द्विजघर्षणं च ॥ निःशेषतंत्रपरिकीर्तित
एष वर्गो नृणां समीरणगदेषु मुदं न दत्ते ॥ वातरोगस्त्वसाध्योयं १
दैवयोगात्सुसिध्यति । अनुमानेन कुर्वति वैद्यकं न प्रतिज्ञया ॥

अर्ध-चिंता, जागर, वेगधारण, के का दवा, थम, उपवास, चना, मटर, श्यामक का आटा, बडी शाली, नीवार, नागली, काङ्ग, मुस्ता, तालाव व नदी का पानी, वांस का अंकुर, सहत, कपैला, तीखा, कडुवा इतने रस, मैथुन, हाथी व घोडा इन पर चिठना, बहुत फिरना, खाट पर सोना ये सब वातव्याधि पर अपथ्य हैं और आध्मान व अदितरोग जिस के होय वह विशेषतः बूरे पानी का स्नान और दंतौन न करे. में ने सर्व ग्रंथ देखकर ये अपथ्य पदार्थ निकाले हैं. वातरोग तो असाध्य है, परंतु देवगति से साध्य होता है. अत एव वैद्यों को अनुमान से चिकित्सा करनी चाहिये. प्रतिज्ञापूर्वक चिकित्सा सिद्ध नहीं होती ॥

वातरोग पर पथ्य

अभ्यंगो मर्दनं वस्तिः स्नेहं स्वेदोऽवगाहनम् । संवाहनं संशमनं
प्रवृत्तिर्वातवर्जनम् ॥ अग्निकर्मोपनाहश्च भूशय्या स्नानमास-
नम् । तैलद्रोणी शिरोवस्तिः शमनं नस्यमातपः ॥ संतर्पणं वृं-
हणं च कीलाटं दधिकूर्चिका । सर्पिस्तैलं वसा मज्जा स्वाद्मल्ल-
वणा रसाः ॥ नवीनास्तिलगोधूममापाः संवत्सरोपिताः । शा-
लयः पष्टिकाश्चापि कुलित्थानां रसाः पुरः ॥ ग्राम्यानूपख-
रोट्टाश्च रासभच्छागलादयः । आरूपाः कोलमहिपन्यंकुसुड-
गिगजादयः ॥ औदका हंसकादंबचक्रमर्दवकादयः । विलेश्या
भेकगोधा नकुलश्च द्विजादयः ॥ चटकः कुकुटो वाहंस्तिस्तिर-
श्चेति जांगलाः । शिलीध्रः पर्वतो नक्रो गर्गरः कवयीलिशः ॥
एरंडचुलकी कर्मशिशुमारस्तिमिंगिलः । रोहितो मद्दुरः शृंगी
वर्मी च खुडिशो झपः ॥ पटोलं शिष्टु वार्त्ताकं लशुनं दाडि-
मद्रयम् । पक्वं तालं रसालं चल्लदंबु पक्षुपक्रम् ॥ जंबीरं
वदरं द्राक्षा नागरं गोमधूकजम् । प्रसारणी गोशुक्रः शुक्राज्ञी
पारिभद्रकः ॥ पयांसि च पयःपेटी ह्रुवुतैलं गवां जलम् । म-
त्स्यंडिका च ताम्बूलं धान्याम्लं तित्तिडीफलम् ॥ स्निग्धो-
ष्णानि च भोज्यानि स्निग्धोष्णं चानुलेपनम् । विशेषाद्रमना-
र्तानामामाशयमुपागते ॥ पक्वाशयस्थे मांसस्थे तथा स्निग्धं

विरेचनम् । प्रत्याध्मानाध्मानयोर्वावर्तिलंघनदीपनम् ॥ अ-
ष्टौलाख्ये मूत्रविधिः शुक्रस्थे क्षयजित् क्रिया । त्वङ्मांसासृक्
शिराप्राप्ते हितं शोणितमोक्षणम् ॥ यथाश्रमं यथावस्थं यथाच-
रणमेव हि । वातव्याधौ समुत्पन्ने पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥

अर्थ—उबटना, वातनाशक तेल आदि की मालिस करना, वस्तिकर्म, स्नेहनकर्म, पसीने निकालना, गरम जल से स्नान, मीढना, संशमन औषधों में प्रवृत्ति, वायु का त्याग, आग्निकर्म, उपनाह, धरती में सोना, स्नान, बैठना, तेल की कुप्पी, शिरबस्ती, शमन. नस्य, धूप, संतर्पण, बृंहण, किलाट (छाछ का भेद), दही की कूचिका, घृत, तैल, वसा, मज्जा, मीठे, खट्टे, निमकीन रस, नवीन तिल, गेहूं, उडद, वर्षादिन के पुराने चावल, सोंठी चावल, कुलथी का रस, गूगल, गाम के अनूप के संचारी जीव, गधा. ऊंट और बकरी आदि का मांस, आरूप (सांप का भेद), सूअर, भैंसा, बारहसोंगा, गेंडा और हाथी आदि का मांस, जल के जीव. हंसों का समूह, चकवा, बगला आदि चिड़ों में रहनेवाले, मेंडका, गोह, नौला, पक्षी—चिडा, मुरगा, मोर, तीतर इत्यादि जांगलजीव. शिलींध्र, पर्वत, नरु, गर्गर, कवयी और इल्लिश जाति की मछली, एरंड, चुलकीकर्म, सूत, बडी मछली, रोहू मच्छली, महुर, शृंगी, बर्मी, खुड्डिश आदि मछली. परवल, सहजना, बैंगन, लहसन, खट्टे मीठे अनार, पका तालफळ, आंब, स्वच्छ जल, फालसे, जंभीरी, बेर, दाख, सोंठ, महुआ, प्रसारणी, मोखरू, काकोली, नीम, दूध, नारियल का जल, गोमूत्र, खांड, पान, धान्याम्र, डमलो, चिकने गरम भोजन, चिकने और गरम ही लेप जो वादी की वपन से पीड़ित हैं. आमाशयगत वात, पचाशयगत वात, मांसगत इन में स्निग्ध विरेचन देवे. आध्मान और प्रत्याध्मान वात में वर्ती करना, लंघन और दीपनकर्त्ता विधि करे. अष्टौलावात में मूत्र कराना. शुक्रस्थ वात में उस के नाशक क्रिया करे. त्वचा, मांस, रुधिर और शिरागत वात में रुधिरमोक्षण कर्म करना दित है. जैसे उस रोगी को श्रम हो और जैसी उस की अवस्था हो उस के अनुसार तथा उस रोगी के आचरण के अनुसार यह पथ्य कही है ॥

अपथ्य

चित्ताप्रजागरणवेगविधारणानि छर्दिः श्रमोऽनशनता चणकाः
कलायाः । नीवारकंगुशरवैणवकोरदूपश्यामाकर्णकुसुविंदसु-
खानि यानि ॥ धान्यानि तालतृणजानि च राजमाया मुद्गा गुडा-
गरुनदीजलशीतलं च । जंबूकसेरुकमलं क्रमुकं मृणालं निष्पा-

वचीजमपि तालफलास्थिमज्जा ॥ शिबी च पत्रभवशाकमुदुंबरं
च शीताम्बु रासभपयोऽपि विरुद्धमन्नम् । क्षारोपि शुष्कपल्लं
रुधिरश्रुतिश्च क्षौद्रं कपायकटुतिक्तरसा व्यवायो, हस्त्यश्वघा-
नमपि चंक्रमणं च खट्वा ॥ आध्मानिनोर्दितवतोपि पुनर्विशेषा-
त्स्नानं प्रदुष्टसलिलं द्विजवर्षणं च । निःशेषतस्तु परिकीर्तित
एष वर्गो नृणां समीरणगदेषु मुदं न दत्ते ॥

अर्थ—चिंता करना, जागना, मल मूत्र आदि वेगों को रोकना, वमन, परिश्रम, भोजन त्याग (उपवास), चने, मटर, सामखिया, कांगनी, सरपत्ते और वांस के चावल, कोरदूप (कोदों), सामखिया, चूना, कुरुविद (मोटे चावल) आदि धान्य, ताल तृणजाति के अन्न, चौरा, मूंग, गुड, काली अगर, नदी का जल, जामन, कसेरू, कमलगट्टे, सुपारी, भसींडे (चौरा के बीज), ताल के फल की गुठली, कमलकंद, तेंदू, करेले, नवीन ताल का फल, सेम के साग, पत्रशाक, गूडर, शीतल जल, गद्धी का दूध, विरुद्ध अन्न, क्षार, सूखा मांस, रुधिर का निकलना, सहत, कपेले, घरपरे और कडवे रस, मैथुन, हाथी, घोड़े की सवारी, डोलना, खरदरी खाट, दूषित जल से दाँतों का घिसना (माँझना) और अफरा रोग तथा लकवावाले को विशेष करके स्नान इत्यादिक यह संपूर्ण वस्तु वातव्याधि रोगी को सुखकारी अर्थात् पथ्य नहीं है किंतु अपथ्य है ॥

इति श्रीकृष्णलालमाधुरतनुजदत्तगामनिर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निषण्टत्कारे
वातव्याधिकर्मविपाकनिदानचिकित्सापथ्यापथ्य परिपूर्णतामगात् ।

वातरक्तकर्मविपाकः ।

वातरक्त का ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

व्योमस्थाने महीपुत्रः शनिदृष्टो यदा भवेत् ।

जन्मकाले यस्य जंतोः स वातरुधिरार्दितः ॥

अर्थ—जिस प्राणी के जन्मसमय दशम स्थान में मंगल बैठा होय और शनिश्चर की उस पर दृष्टि होय तो वह पुरुष वातरक्त रोगी होवे ॥

शमन

व्योमस्थानस्थितशनिदृष्टभौमजनितरक्तदोषोपशांतये मंगल-
प्रीतये पूर्वोक्तमेव जपादिकं कुर्यात् ॥

अर्थ—दशमस्थानस्थित और शनिदृष्ट मंगल का दोष नाश करने को पूर्वोक्त जप
ह्वनादिक करे तो वातरक्त रोग दूर हो ॥

वातरक्तनिदान

लवणाम्लकटुक्षारस्निग्धोष्णाजीर्णभोजनैः । क्लिन्नशुष्कांबुजानू-
पमांसपिण्याक्रमूलकैः ॥ कुलित्थमापनिष्पावशाकादिलवले-
क्षुभिः । दध्नारनालसौवीरसूक्ततक्रसुरासवैः ॥ विरुद्धाध्ययन-
क्रोधदिवास्वप्नप्रजागरैः । प्रायशः सुकुमाराणां मिथ्याहार-
विहारिणाम् ॥ स्थूलानां सुखिनां चाथ वातरक्तं प्रकुप्यति ॥

अर्थ—नोन, खटाई, कडवी, खारी, चिकना, गरम, कच्चा ऐसे भोजन से सड़े
और सूखे ऐसे जलसंचारी जीवों के और जल के समीप रहनेवाले जीवों के मांस
से, पिण्याक (खर), मूली, कुलथी, उडद, निष्पाव (सेम), शाक (तरकारी),
पल्ल (तिल की चटनी), ईख, दही, कांजी, सीवीर मद्य, सुक्त (सिरका आदि),
छाछ, दारु, आसव (मद्यविशेष), विरुद्ध (जैसे दूध, मछली), अध्पशन (भोजन के
ऊपर भोजन), क्रोध, दिन में निद्रा, रात में जागना इन कारणों से विशेषकरके
सुकुमार पुरुषों के और मिथ्या आहार विहार करनेवाले पुरुषों के और जो मोटा होय
तथा सूखा होय ऐसे मनुष्यों के वातरक्त रोग होय है ॥

वातरक्त रोग की संप्राप्ति

हस्त्यश्वोद्वैर्गच्छतश्चाश्वतश्च विदाह्यन्नं सविदाहाशनस्य । कृत्स्नं
रक्तं विदहत्याशु तच्च स्रस्तं दुष्टं पादयोश्चीयते तु ॥ तत्संयुक्तं
वायुना दूषितेन तत्प्रावल्यादुच्यते वातरक्तम् ॥

अर्थ—हाथी, घोड़ा, ऊंट इन पर बैठकर जाने से, (यह वायु के बढने का और
विशेषकरके रुधिर के उतरने का कारण है) विदाहकारी अन्न के खानेवाले पुरुष के
(इसी से दग्धरुधिर की वृद्धि होती है) गरमागरम अन्न के खानेवाले ऐसे पुरुष के
सब शरीर का रुधिर दुष्ट होकर पैरों में डकड़ा होय और वह दुष्ट वायु से दूषित
होकर मिले, इस रोग में वायु प्रबल है, इसी से इस रोग को वातरक्त ऐसे कहते हैं ॥

वातरक्त में अन्यदोषसंबंधी लक्षण

तद्वत् पित्तं दूषितेनासृगाक्तं श्लेष्मा दुष्टो दूषितेनासृगाक्तः ।
स्पर्शाद्भिन्नौ भेदतोदप्रशोषस्वापोपेतौ वातरक्तेन पादौ ॥
पित्तासृग्भ्यामुग्रदाहौ भवेतामत्यर्थोष्णौ रक्तशोफौ मृदू च ।
कंडूमंतौ स्वेदशीतौ सशोफौ पीनौ स्तब्धौ श्लेष्मदुष्टौ तु
रक्ते ॥ सर्वैर्दुष्टैः शोणितैर्वापि दोषाः स्वं स्वं रूपं पादयोर्दर्शयन्ति ॥

अर्थ—वायु के योग से पित्त और कफ दूषित होकर दुष्ट रक्त के साथ मिल जाते हैं तब पांव स्पर्श होते ही दुखते हैं और फूटन, वेदना, शुष्कता और भिरभिरी से युक्त होते हैं. रक्तपित्त से रक्त दूषित होने से पांव उग्रदाह से युक्त और उष्ण स्पर्श से युक्त होते हैं और उन पर लाल व मृदु सूजन होती है. कफ से रक्त दूषित होके पांव में जम जाने से पांव कंडुयुक्त, जड, पसीने से युक्त, थंडे, मोटे और स्तब्ध होते हैं. त्रिदोष से युक्त होने से वह वातरक्त सब दोषों के लक्षणों से युक्त होता है ॥

पूर्वरूप

स्वेदोऽत्यर्थं न वा काष्ण्यं स्पर्शाज्ञत्वं क्षतेऽतिरुक् । संधिशै-
थिल्यमालस्यं सदनं पिटिकोद्गमः ॥ जानुजंघोरुकट्यंशहस्त-
पादांगसंधिषु । निस्तोदः स्फुरणं भेदो गुरुत्वं सुतिरेव च ॥
कंडुः संधिषु रुग्दाहो भूत्वा नश्यति चासकृत् । वैवर्ण्यं मंड-
लोत्पत्तिर्वातासृक्पूर्वलक्षणम् ॥

अर्थ—पसीना बहुत आवे, अथवा नहीं आवे, शरीर काला हो जाय, शरीर में स्पर्श का ज्ञान जाता रहे और थोड़ी सी चोट लगने से पीडा अधिक होय, संधि ढीली हो जाय, आलस्य आवे, ग्लानि हो, शरीर में फुनसी उठें, घोंटू, जंघा, ऊरू, कमर, कंधा, हाथ, पैर, सन्धि और अंगों में सुई के चुभाने की सी पीडा होय, स्फुरण (फरकना), तोड़ने की सी पीडा, भारीपना, बधिरता ये लक्षण होते हैं और संधियों में खुजली चले और शूल होकर वारंवार नाश हो जाय, शरीर का विवर्ण हो जाय, रुधिर के चकत्ता देह में पड जाय. ये वातरक्त के पूर्वरूप होते हैं ॥

वातरक्त में अन्यसंसर्ग होने से उपद्रव

वाताधिकेऽधिकं तत्र शूलस्फुरणतोदनम् । शोथश्च रौक्ष्यं

कृष्णत्वं श्यावता वृद्धिहानयः ॥ धमन्यंगुलिसंधीनां संको-
चोऽग्रहोऽतिरुक् । शीतद्वेषानुपशयस्तंभवेपथुसुप्तयः ॥

अर्थ--वाताधिक वातरक्त में शूल, अंगों का फरकना, चोटने की सी पीडा ये अधिक होते हैं. सूजन, रूखापना, नीलापना अथवा श्यामवर्णता एवं वातरक्त के लक्षणों की वृद्धि होय और क्षणभर में हास (कम हो) धमनी और अंगुलियों की संधियों में संकोच होय. शरीर जकडबंध होय, अत्यंत पीडा होय, सर्दी बुरी लगे और शीत के सेवन करने से दुःख होय, स्तंभ होय, कंप और शून्यता होय. ये लक्षण होते हैं ॥

रक्ताधिक वातरक्त तथा पित्ताधिक वातरक्त

रक्ते शोफोऽतिरुक्क्रेदस्ताम्रश्चिमचिमायते । स्निग्धरूक्षैः शमं
नैति कंडूक्रेदसमन्वितः ॥ पित्ते विदाहः संमोहः स्वेदो मूर्च्छा
मदः सतृट् । स्पर्शासहत्वं रुग्णांगः शोफः पाको भृशोष्णता ॥

अर्थ--रक्ताधिक वातरक्त में सूजन, अत्यन्त पीडा और उस में से तामे के रंग का क्रेद बहे, उस सूजन में चिमचिम वेदना होय, स्निग्ध अथवा रूखे पदार्थ से शांति न होय. उस सूजन में खुजली और पानी निकले. पित्ताधिक वातरक्त में अत्यन्त दाह, इन्द्रियों को मोह, पसीना, मूर्च्छा, मस्तपना, प्यास, स्पर्श बुरा मालूम हो, पीडा, लाल रंग, सूजन, छोटे छोटे पीरे फोडा, अत्यन्त गरमी यह लक्षण होते हैं ॥

कफरक्तनिदान

कफे स्तैमित्यगुरुतासुप्तिस्निग्धत्वशीतताः ।

कंडूर्मन्दा च रुग्द्वंद्वे सर्वलिङ्गं च सङ्करात् ॥

अर्थ--कफाधिक वातरक्त में स्तैमित्य (गीले कपडा से आच्छादित समान), भारीपना, शून्यता, चिकनापना, शीतलता, खुजली और मन्द पीडा ये लक्षण होते हैं. दो दोषों के वातरक्त में दो दोषों के लक्षण और तीनों दोषों के वातरक्त में तीन दोषों के लक्षण होते हैं. पैरों में वातरक्त हुआ होय उस की अपेक्षा करने से हाथों में होय है उस को कहते हैं ॥

अंगों में प्रसरणत्वकथन

पादयोर्मूलमास्थाय कदाचिद्धस्तयोरपि ।

आखोर्विपमिव क्रुद्धं तद्देहमनुसर्पति ॥

अर्थ--यह वातरक्त पैरों के मूल में होकर कदाचित् हाथों में भी होय है. सीं आरु (मूसे) के विपसटश रुवदेह में मंद मंद फैल जाय. यह वातरक्त चरक ने

दो प्रकार का कहा है, एक उत्तान, दूसरा गंभीर, त्वचा और मांस इन में होय सो उत्तान और गंभीर इस की अपेक्षा भीतरी होय है ॥

वातरक्त के असाध्य लक्षण

आजानु स्फुटितं यच्च प्रभिन्नं प्रसृतं च यत् ।

उपद्रवैर्यच्च जुष्टं प्राणमांसक्षयादिभिः ॥

वातरक्तमसाध्यं स्याद्याप्यं संवत्सरोपितम् ॥

अर्थ-आजानु (जंघा के नीचे के भाग) पर्यन्त गया भया वातरक्त असाध्य है, जिस की त्वचा फट गई होय, चिर गया होय और जो स्त्रावयुक्त होय ऐसा वातरक्त अप्राण मांसक्षयादि उपद्रवयुक्त होय, आदिशब्द से जो आगे (श्रम, अरोचक, श्वास) इत्यादिक कहेंगे वह भी लक्षण होय सो भी असाध्य है. वातरक्त प्रगट भये वर्षादिन व्यतीत हो गया होय सो याप्य होय है. वर्षादिन के पहले साध्य होय है परंतु उस में स्फुटितादि लक्षण न होय तो साध्य है ॥

वातरक्त के उपद्रव

अस्वप्नारोचकश्वासमांसकोथशिरोग्रहाः । समूर्च्छाऽमन्दरुक्त्व-

ष्णाज्वरमोहप्रवेपकाः ॥ हिक्कापांगुल्यवीसर्पपाकतोद्भ्रमक्कुमाः ।

अंगुलीवक्रतास्फोटदाहमर्मग्रहावुदाः ॥ एतेरुपद्रवैर्वर्ज्यं मोहेनै-

केन चापि यत् ॥

अर्थ-निद्रानाश, अरुचि, श्वास, मांस का सडना, मस्तक का जकडना, भूच्छा, अत्यन्त पीडा, प्यास, ज्वर, मोह, कंप, हिचकी, पांशुरापना, विसर्परोग, पकना, नोचने की सी पीडा, भ्रम, अनायासश्रम, उंगली टेढी हो जाय, फोडा, मर्मस्थानों में पीडा, अर्बुद (गांठ) हो इन उपद्रव युक्त वातरक्तवाला रोगी असाध्य है अथवा एक मोहयुक्त ही होय तो भी असाध्य जानना ॥

साध्यासाध्यत्व

अकृत्स्नोपद्रवं याप्यं साध्यं स्यान्निरुपद्रवम् ।

एकदोषानुगं साध्यं नवं याप्यं द्विदोषजम् ॥

त्रिदोषजमसाध्यं स्याद्यस्य च स्युरुपद्रवाः ॥

अर्थ-जिस वातरक्त में सब उपद्रव होय नहीं वह याप्य है और निरुपद्रव साध्य है और जो एक दोष का होय वह साध्य है और द्विदोषज याप्य और त्रिदोषज तथा उपद्रवयुक्त होय तो वातरक्त असाध्य है. यह श्लोक क्षेपक है माघव का नहीं है ॥

वातरक्त पर सामान्य चिकित्सा
 वातशोणितिनो रक्तं स्निग्धस्य बहुशो हरेत् ।
 अल्पालपं रक्षयेद्वायुं यथादोषं यथाबलम् ॥

अर्थ—वातरक्त रोगी को प्रथम स्नेहपान कराकर वारंवार दोष, बल को विचार-के थोड़ा २ रुधिर निकाला करे और वादी से रोगी की रक्षा करता रहे तो यह रोग दूर होवे ॥

अंगदाहतोदेषु जलौकाभिर्विनिर्हरेत् ।
 शृंगतुवैश्विमिचिमाकंडुरुग्वेदनान्वितम् ॥
 च्छन्नेन शिराभिर्वा देशादेशांतरं व्रजेत् ॥

अर्थ—वातरक्त रोगी को जोक लगायके निकालें देह में घोर दाह और दर्द यदि होने लगे तो उस के रुधिर सुजली, पीड़ा और दुःख होता होय तो उस दूध में चिमचिमाहट (चरचराने लगे) को निकाले. यदि ऐसे दुष्ट रुधिर को रोगी के देह से नहीं अथवा सिंगी लगाके रुधिर मार्ग से अथवा नाडियों के मार्ग से इस जगे से दूसरी जगे चला जाय तो वह गुत-पाना है ॥

अंगे म्लाने तु न स्राव्यं रूक्षं वातोत्तरं च यत् ।
 गंभीरश्वयथुस्तंभकंपग्लानिशिरामयान् ॥
 रोगानन्यांश्च वातोत्थान् कुर्याद्वायुररक्षितः ॥

अर्थ—वातरक्त रोगी का अंग म्लान किंवा रूक्ष होने से किंवा वाताधिक रक्तपित्त का रुधिर न निकाले. यदि मूल से ऐसे रोगी का रुधिर निकाल लिया जावे तो और वादी का संरक्षण न करे तो गंभीर सूजन, स्तंभ, कंप, ग्लानि, मस्तकरोग और अनेक प्रकार के वातरोगों को उत्पन्न करे है ॥

पिंडतैलादिनाभ्यंगं पानं तिक्तादिसर्पिषा ।
 सेकलेपाह्यसृङ्मुक्तिः शोधनं चोभयोर्हितम् ॥

अर्थ—रक्तपोष डालके तेल सिद्ध करे उस तेल की देह में मालिस करे और कुटकी इत्यादिक योग्य पदार्थ और वी इन का पान, जल का छिडकना, लेप करना, रुधिर निकालना तथा दस्त कराना, वमन कराना ये सब कर्म वातरक्त रोगवालों को हितकारी हैं ॥

विविधान्वातरोगान्वा मृत्युं वात्यन्नसेचितम् ।

रक्तं कुर्यात्ततः स्निग्धात्तत्प्रमाणेन निर्हरेत् ॥

अर्थ—अत्यंत रुधिर निकालने से अनेक प्रकार के वातरोग अथवा मृत्यु होती है. इस वास्ते रोगी को स्निग्ध करके प्रमाण-का ही रुधिर निकाले अधिक न निकाले ॥

विरेचयेच्च पित्तादौ स्नेहयुक्तैर्विरेचनैः ।

बाह्यमालेपनाभ्यंगपरिपेकोपनाहनैः ॥

विरेकास्थापनस्नेहपानैर्गंभीरमाचरेत् ॥

अर्थ—पित्ताधिक वातरक्त पर स्नेहयुक्त विरेचन देवे. वात्य वातरक्त पर लेप, अभ्यंग, जल का छिडकना तथा उपनाह ये उपचार करे और गंभीर वातरक्त पर विरेचन, निरूहवस्ती और स्नेहपान ये उपचार करे ॥

भोजन और रस

पुराणयवगोधूमशालयः पष्टिकास्तथा ।

भोजनार्थे रसार्थे तु विष्किराः प्रतुदा हिताः ॥

अर्थ—पुराने जौं, गेहूं, चावल, साठी चावल ये भोजन के वास्ते देवे तथा पक्षियों के मांस में चिडा, मुरगा आदि और तोता, मैना आदि का मांसरस देवे तो हितकारी होंगे ॥

यूप

आढकाश्वणका मुद्गा मसूराः सकुलित्थकाः ।

यूपार्थे बहुसर्पिष्काः प्रशस्ता वातशोणिते ॥

अर्थ—वातरक्त पर आहर, चना, मूंग, मसूर, कुलथी इन के यूप में अधिक धी डालके देवे ॥

शाक

सुनिपण्णकवेत्रायं काकमाची शतावरी ।

वास्तूकोपादिका शाकं शाकं सौवर्चलं तथा ॥

घृतमांसरसैर्भृष्टं शाकसात्म्याय दापयेत् ॥

अर्थ—चौपतिया, वेत्र की कांपड, मकोप, शतावरी, घुआ, पोई, डुरडुर, वरना, संचरनिमक, धी में मुने मांस तथा मांसरस ये प्रदार्थ शाक राने की इच्छा होंगे तो उन रोगियों को देना चाहिये ॥

छिन्नोद्भवाकषायेण सेव्यं सिद्धं शिलाजतु ।

पंचकर्मविशुद्धेन वातरक्तप्रशांतये ॥

अर्थ—पहिले वमन रेचकादि पांचों कर्म से शुद्ध करके फिर गिलोय के काढे में शुद्ध शिलाजीत डालके पीवे तो वातरक्त शांत होय ॥

वासादि काथ

वासागुडूचीचतुरंगुलानामेरंडतैलेन पिबेत्कषायम् ।

क्रमेण सर्वांगजमप्यशेषं जयेदसृग्वातभवं विकारम् ॥

अर्थ—अडूसा, गिलोय और अमलतास इन के काढे में अंडी का तेल डालके पीवे तो वातरक्त का विकार यदि सर्व अंग में होय तो उस को भी क्रम २ से दूर करे ॥

मंजिष्ठादि काथ

मंजिष्ठाकुटजामृता घनवचा शुंठी हरिद्राद्रयं वासा पर्पटसारिवा

प्रतिविषानंता विशालजलमशुद्रारिष्टपटोलकोष्ठकटुका भार्ङ्गी

विडंगाग्रिकं मूर्वा दारुकलिंगभृंगमगधा त्रायंति पाठा वरी ॥

गायत्री त्रिफला किरातकमहानिंबो सनारग्वधश्यामावल्गुज-

चंदनं सवरुणं पूतीकशाकोटकम् । मंजिष्ठादिममुं कषायविधिना

नित्यं पुमान्यः पिबेत्त्वग्दोषा ह्यचिरेण यांति विलयं कुष्ठानि

चाष्टादश ॥ वातरक्ते प्रसुप्ते च विसर्पे विद्रवौ तथा । सर्वेषु रक्त-

दोषेषु मंजिष्ठादिः प्रशस्यते ॥

अर्थ—मंजिष्ठा, कुडा की छाल, गिलोय, नागरमोथा, वच, सोंठ, हलदी, दा हलदी, अडूसा, पित्तपापडा, सारिवा, अतीस, धमासा, इन्द्रायन की जड, नेत्रवात कोटेरी, नीम की छाल, पटोलपत्र, कूठ, कुटकी, भारंगी, वायविडंग, चित्रक, मू देवदारु, इन्द्रजो, भांगरा, पीपल, त्रायंती, पाठ, सतावर, खैरसार, त्रिफला, चि यता, बकायन की छाल, विजेशार, अमलतास का गूदा, निसोथ, बावची, ल चंदन, वरना, कंजा और सहोडा ये सब समानभाग औषध लेके २ तोले का का करे इस को पीने से त्वचा के दोष, अठारह प्रकार के कोढ़, वातरक्त, सुन्नवा विसर्परोग, विद्रधि और संपूर्ण रुधिर के विकार, तत्काल नाश करे ॥

लघुमंजिष्ठादि काथ

मंजिष्ठा त्रिफला तिक्ता वचा दारु निशामृता । निंबश्चैषां कृतः

क्वाथो वातरक्तविनाशनः ॥ पामाकपालिकाकुष्ठरक्तमंडल-
जिन्मतः ॥

अर्थ—मजीठ, हरड, बहेडा, आवला, कुटकी, वच, दारुहलदी, गिलोय और नीम की छाल इन का काढा वातरक्त, खाज, कापालिक, कुष्ठ और रुधिर के चकत्तों को नाश करे ॥

पटोलादि क्वाथ

पटोली त्रिफला तिक्ता गुडूची च शतावरी ।

एष क्वाथो जयेत्पीतो वातास्रं दाहसंयुतम् ॥

अर्थ—पटोलपत्र, हरड, बहेडा, आवला, कुटकी, गिलोय और शतावर इन का काढा पीवे तो दाहयुक्त वातरक्त को जीते ॥

वासादि क्वाथ

क्वाथो वासाभृतातिक्ताभवो वातास्रनोदनः ॥

अर्थ—अहूसा, गिलोय और कुटकी इन का काढा वातरक्तनाशक है ॥

एरंडतैलयोग

एरंडतैलेन गुडूचिकायाः क्वाथोथ वा वर्धितपिप्पली वा ।

गुडेन पथ्याखिलवातरक्तं विनाशयेत्पथ्ययुतस्य पुंसः ॥

अर्थ—गिलोय के काढे में अंडी का तेल डालके पीवे अथवा वर्द्धमान पीपल देवे अथवा हरड के चूर्ण को गुड में मिलाय के देवे और पथ्य से रहे तो वातरक्त दूर होय ॥

दाव्यादि क्वाथ

दावीगुडूचीकुटकोग्रगंधामंजिष्ठात्रिफलाकपायः ।

वातास्रमुच्चैर्नवकार्पिकारुष्यो जयेच्च कुष्ठान्याखिलानि पुंसाम् ॥

अर्थ—दारुहलदी, गिलोय, कुटकी, वच, मजीठ, नीम, हरड, बहेडा, आवला इन नौ औषधों को तोले २ छेबे सब का ज्ञाप करके पीवे. यह नवकार्पिकगूगल उग्र वातरक्त तथा संपूर्ण कुष्ठ को नाश करे ॥

वत्सादिन्यादि क्वाथ

वत्सादिन्युद्भवः क्वाथः पीतो गुग्गुलुमिश्रितः ।

समीरेण समायुक्तं शोपितं संप्रणाशयेत् ॥

अर्थ—गिलोय के काढे में गूगल डालके पीवे तो वातरक्त को नाश करे ॥

पित्ताधिक वातरक्तपर

पित्तोत्तरे तु काश्मर्यद्राक्षारग्वधचंदनैः । मधुरक्षीरकाकोली-
युक्तैः काथं सुशीतलम् ॥ शर्करामधुसंयुक्तं वातरक्ते पिवेत्ररः ॥

अर्थ—कंभारी की छाल, दाख, अमलतास, लाल चंदन, काकोली और क्षीरका-
कोली इन के काटे में सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो वातरक्त को दूर करे ॥

काकोल्यादि काथ

काकोलाख्यामृताकाथं पिवेत्कोष्णं यथाबलम् ।

पथ्यभोजी त्रिसप्ताहान्मुच्यते वातशोणितात् ॥

अर्थ—काकोली और गिलोय इन का काढा बलाबल विचारके कुछ गरम करके
पीवे और पथ्य से रहे तो सात दिन में यह प्राणी वातरक्तरहित होय ॥

समधूच्छिष्टमंजिष्टससर्जरससाधितम् ।

पिंडतैलादिनाभ्यंगो वातरक्तरुजापहः ॥

अर्थ—मोम, मजीठ, रार इन के तेल से अथवा लाल बोल के तेल का मालिस
करने से वातरक्त की पीडा दूर होवे ॥

गुडूचीयोग

गुडूच्याः स्वरसं कल्कं चूर्णं वा काथमेव वा ।

सेवते यो नरो नित्यं वातरक्तात्स मुच्यते ॥

अर्थ—गिलोय का स्वरस, कल्क, चूर्ण अथवा काढा इन में कोई वस्तु का सेवन
करे तो वातरक्त नष्ट होय ॥

गुडूच्यादि काथ

गुडूची वाकुची चक्रमर्दश्च पिचुमंदकः । हरीतकी हरिद्रा च
धात्री वासा शतावरी ॥ वालं नागबला यष्टी मधूकं क्षुरकोपि
च । पटोलस्यलतोशीरं मंजिष्ठा रक्तचंदनम् ॥ गुडूच्यादिरयं
काथो वातरक्तांतकारकः । कुष्ठानामपि संहर्ता कंडूमंडलखं-
डनः ॥ वातिकान् रौधिरान्सर्वान् विकारानाशु नाशयेत् ।
मुनिभिः करुणाकीर्णैः कषायोयं प्रकाशितः ॥

अर्थ—गिलोय, बावची, चकवड, नीम की छाल, हरड, हलदी, आंवला, अडूसा, शतावर, नेत्रवाला, कगही, मुलहठी, महुआ के फूल, तालमखाने, पटोलपत्र, खस, मजीठ और लाल चंदन इन का काढा करके पीवे तो वातरक्त, कुष्ठ, खुजली, चकत्ते, वातसंबंधी रोग, रुधिर के विकार इन को तत्काल दूर करे. यह गुडूच्यादिकाढा कृपालु मुनियों ने कहा है ॥

वृषादि काथ

काथो वृषारग्वधकुंडलीनामेरंडतैलेन समं निपीतः ।

जयेदसृग्वातभवं विकारं सर्वांगशोफप्रविदाहयुक्तम् ॥

अर्थ—अडूसा, अमलतास का गूदा और गिलोय इन का काढा करके उस में अंडी का तेल ढालके पीवे तो सर्वांग की सूजन और दाह इन करके युक्त वातरक्त का नाश होय ॥

त्रिवृतादि काथ

त्रिवृद्धिदारीक्षुरजः कषायोथ वा गुडूच्याः स्वरसो हितश्च ॥

अर्थ—निसोथ, विदारीकंद और काला ईंल (काला पौडा) इन का काढा अथवा गिलोय का रस देवे तो हितकारी होय ॥

पथ्यायोग तथा गुडूच्यादि काथ

तिस्रः पंचाथ वा पथ्याः पिड्वा दग्धा गुडेन तु ।

पिबेच्छिन्नरुहाकाथं वातरक्तादितो नरः ॥

अर्थ—तीन अथवा पांच हरडों को भूनके चूर्णकर गुड के साथ देवे अथवा गिलोय का काढा करके देवे तो वातरक्त दूर होय ॥

वातरक्त पर काढा

रतिकेलिकलाकुशले विलसद्गलये वलयेन समानकुचे ।

अमृतव्रतती रुब्रुतैलयुता, तथैरंडसिंहास्यवत्सादिनीनाम् ॥

अर्थ—गिलोय के काढे में अंड का तेल ढालके देवे या अंड की जड़ अडूसा और गिलोय इन का काढा देवे ॥

वातरक्त पर पिंडादि काथ

7 मधूत्थारुणागोपिकादेवधूपैः शृतं वातरक्तापहं पिंडतैलम् ।

कषायः सहैरंडतैलेन युक्तस्तथैरंडसिंहास्यवत्सादिनीनाम् ॥

अर्थ—मोम, मजीठ, सारिवा और रार इन के काढ़े में तेल डालके तयार करे यह पिंडतैल वातरक्तनाशक है तथा अंड की जड़, अदूसा और गिलोय इन के काढ़े में अंडी का तेल डालके देवे तो यह भी वातरक्तनाशक है ॥

मंजिष्ठादि काथ

मंजिष्ठा वरा तित्ता निशा निवामृतामरैः ।

सत्रिवृत्खदिरैः काथः सर्वकुष्ठानिलास्रजित् ॥

अर्थ—मजीठ, वच, हरड, बहेडा, आवला, कुटकी, हलदी, नीम की छाल, गिलोय, देवदारु, निसोय और कत्या इन का काढा करके देवे. यह कुष्ठ और वातरक्त इन का नाश करे ॥

द्वितीय मंजिष्ठादिकाथ

मंजिष्ठा रिष्टवासात्रिफलाः कंदे हरिद्रे गुडूची भूनिवो रक्त-
सारः सखदिरकडुका वाकुची व्याघ्रातैः । मूर्वानंता विशाला
कृमिरिपुसहितैस्त्रायमाणैः सपाठैः पीताः । न्यात्समस्तान् स-
कलतनुगतान् वातरक्तप्रकोपान् ॥

अर्थ—मजीठ, नीम की छाल, अदूसा, हरड, बहेडा, आवला, चित्रक, हलदी, देवदारु, हलदी, गिलोय, चिरायता, लालचंदन, कत्या, कुटकी, वावची, अमलतास का गूदा, मूर्वा, धमासा, इन्द्रायण, वायविडंग, त्रायमाण और पाठ इन का काढा पीवे तो संपूर्ण वातरक्तविकारों का नाश करे ॥

खदिरकाथ

देयं द्विकालमपि पथ्यघृतौदनं च निर्वातमंडलमकृष्टगदं निहंति ।
कुष्ठादिसर्वसकलामयमामवातकृच्छ्रादनेन विधिना खदिरोदकेन ॥

अर्थ—खैर का काढा करके प्रातःकाल और सायंकाल दोनों बेर पीवे और ऊपर से घी भात भोजन करे तथा पवन न खाय तो यह काढा कुष्ठादि सर्व रोगों का नाश करे ॥

मंजिष्ठादि काढा

मंजिष्ठा मुस्तकुटजो गुडूची कुष्ठनागरैः । भाङ्गीं क्षुद्रा वचा
निवनिशाद्वयफलत्रिकैः ॥ पटोलकडुका मूर्वा विडंगासनचि-
त्रकैः । शतावरी त्रायमाणा कृष्णेंद्रे यववासकैः ॥ भृंगराजमहा-

दारुपाठाखदिरचंदनैः । त्रिवृद्धरुणकैरातवाकुचीकृतमालकैः ॥
शाखोटकमहानिंबकरंजातिविपाजलैः । इंद्रवारुणिकानंतासारि-
वापपटैः समैः ॥ एभिः कृतं पिवेत्काथं कणागुग्गुलसंयुतम् ।
अष्टादशेषु कुष्ठेषु वातरक्तादिते तथा ॥ उपदंशे स्त्रीपदे च प्र-
सुप्तौ पक्षाघातके । मेदोदोषे नेत्ररोगे मंजिष्ठादिः प्रशस्यते ॥

अर्थ—मजीठ, नागरमोथा, कूडा की छाल, गिलोय, कूठ, सोंठ, भारंगी, कटेरी, वच,
नीम की छाल, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आवला, पटोलपत्र, कुटकी, मूर्वा,
वायविडंग, विजेशार, चीते की छाल, शतावर, त्रायमाण, पीपल, इन्द्रजो, अहूसा,
भांगरा, देवदारु, पाठ, खैरसार, लालचंदन, निसोय, वरना, चिरायता, नावची,
अमलतास का गूदा, सहोडा, बकायन, कंजा, अतीस, नेत्रवाला, इन्द्रायन की जड़,
जवासों, सारिवा और पित्तपापडा इन को समानभाग ले २ तोले का काटा करे-
उस में पीपल का चूर्ण डालके और गुग्गुलु डालके पीवे तो अठारह प्रकार के कुष्ठ,
वातरक्त, उपदंश, स्त्रीपद, सूत्रवात, पक्षाघात, मेददोष और नेत्ररोग इन पर यह
मंजिष्ठादिकाटा उत्तम है ॥

अमृतादि कल्क

अमृता कटुका शुंठी यष्टिकल्कं समाक्षिकम् ।

गोमूत्रपीतं जयति सकफं वातशोणितम् ॥

अर्थ—गिलोय, कुटकी, सोंठ और मुलहठी इन का चूर्ण सहत और गोमूत्र
में मिलायके पीवे तो कफयुक्त वातरक्त का पराजय करे ॥

लांगल्यादि चूर्ण

लांगल्याः कंदचूर्णं त्रिकटुकलवणो योगराजोभिभिथ्रं गव्येना-
लिह्य चूर्णं मधुघृतसहितं चाक्षमात्रं हिताशी । नानारुक्पाद-
दोषस्फुटनविमथनेर्मर्मजं तत्प्रकृष्टैर्दुःसाध्यं वातरक्तं जयति
स नियतं कुष्ठमत्युग्ररूपम् ॥

अर्थ—कलयारी का कंद, सोंठ, मिरच, पीपल और निमक इन का चूर्ण एकत्र
करके इस में से १० भासे चूर्ण सहत और गौ के घी में मिलायके देवे और पथ्य से
रहे तो अनेक रक्तविकार, पाददोष, पैरों का फूटना, मसों का दूखना, असाध्य वातरक्त
और कुष्ठ इन को नाश करे ॥

मुंड्यादि चूर्ण

लीढा मुंडीतिकाचूर्णं मधुसर्पिःसमन्वितम् ॥

अर्थ—गोरखमुंडी और कुटकी इन का चूर्ण सहित और घी इन में मिलाय के देवे तो वातरक्त दूर होय ॥

पद्मकाद्य तैल

पद्मकोशीरयष्ट्याह्वं रजनीक्वाथसाधितम् ।

स्यात्पिष्टैः सर्जमंजिष्ठावीराकांकोलिचंदनम् ॥

पद्मकाद्यमिदं तैलं वातासृग्दाहनाशनम् ॥

अर्थ—पद्मास, खस, मुलहटी और हलदी इन का काढा और रात, मजीठ, घीगुवार, कांकोली और सपेद चंदन इन का कल्क इन दोनों में तेल मिलायके सिद्ध करे तो यह तेल वाररक्त और दाह इन को दूर करे ॥

गुडूच्यादि तैल

गुडूचीक्वाथकल्काभ्यां तैलं लाक्षारसेन वा ।

सिद्धं मधुककाश्मर्यसेवनाद्वातरक्तनुत् ॥

अर्थ—गिलोय का काढा और कल्क इन में तेल मिलायके तथा लाख का सीरा, मुलहटी, कंभारी का रस ये सब डालके तेल बनाय ले. यह तेल वातरक्तारोग को नाश करे ॥

मरीचादि तैल

मरिचालशिरार्कपयः फालिनी विषमुष्टिनिशामरनिबधनैः ।

कुटजं रसचतुर्गुणगोबुसृतं किल तैलमसृक्पवनापहरम् ॥

अर्थ—काली मिरच, हरताल, नारियल, आक का दूध, कल्यारी, कुचला, हलदी, नदीवड, नीम की छाल, नागरमोथा और कूडा की छाल इन का काढा और काढे से चौगुना गोमूत्र इन सब की बराबर तेल लेकर अग्निपर सिद्ध करे तो यह तेल वातरक्त को नाश करे ॥

बृहन्मरिच्यादि तैल

मरिचं त्रिवृता दंतीक्षीरमार्कं शकृद्रसः । देवदारु दरिद्रे द्वे मां-

सिकुष्ठं सचंदनम् ॥ विशालं करवीरं च हरितालं मनःशिलाम् ।

चित्रकं लांगलीं चापि विडंगं चक्रमर्दकम् ॥ शिरीषं कुटजो
निंबः सप्तपर्णोमृता स्नुही । शम्याको नक्तमालश्च खदिरं पि-
प्पली वचा ॥ ज्योतिष्मती च पलिका विपस्य द्विपलं मतम् ।
आढकं कटुतैलस्य गोमूत्रं च चतुर्गुणम् ॥ मृत्पात्रे लोहपात्रे
वा शनैर्मृद्भिना पचेत् । एतत्तैलं विशेषेण नाशयेत् कुष्ठजान्
व्रणान् ॥ वातरक्तभवान् व्याधीन् पामाविस्फोटचर्चिकाः ॥

अर्थ—काली मिरच, निसोध, दंती, आंक का दूध, गोबर का पानी, देवदारु,
हलदी, दारुहलदी, जटामांसी, कूठ, चंदन, इंद्रायन, कनेर की जड़, हरताल, मन-
सिल, चित्रक, करियारी. वायुविडंग, पमार के बीज, सिर के बीज, कूडा की छाल,
नीम की छाल, सतोना, गिलोय, थूहर, अमलतास का गूदा, कंजा, खैर, पीपल,
वच और मालकांगनी ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे और सिंगियाविप ८ तोले इस
प्रकार लेकर २५६ तोले सरसों के तेल में चौथुना गोमूत्र मिलावे और पूर्वोक्त
औषधों का कल्क मिलायके एकत्र करे. इस को मिट्टी के बरतन में अथवा लोहे के
पात्र में डालके मंदाग्नि से पचन करे. यह तेल विशेष करके कुष्ठ के व्रण, वातरक्त
की व्याधी, खुजली, विस्फोटक, विचर्चिका इन को नाश करे ॥

पिंडतैल

मंजिष्ठा सारिवा सर्ज यष्टिसिक्थपयोन्वितैः ।

पिंडारुयं साधयेत्तैलमभ्यंगाद्वातरक्तनुत् ॥



अर्थ—मंजीठ, सारिवा, रार, मुलहठी और मोम तथा दूध इन के योग से बोल का
तेल निकाले इस के मालिस करने से वातरक्त रोग दूर होय ॥

गुडूच्यादि तैल

तुलां पचेद्गुडूच्यास्तु जलद्रोणचतुष्टये । पादशोपः कपायस्तु
गोदुग्धं द्रोणसंमितम् ॥ तिलतैलाढकं ताभ्यां पचेन्मृद्भिना
भिपक् । वक्ष्यमाणैस्ततो द्रव्यैः सम्यक्कल्कीकृतैः पचेत् ॥
मंजिष्ठा मधुकं कुष्ठं जीवनीयगणस्तथा । एला रुचकमृद्धीका
मांसी व्याघ्रनखो नखी ॥ हरेणुः श्रावणी व्योपं स्थिरा ताम-
लकी तथा । शृंगी श्यामा शताह्वा च विष्णुक्रांता च पत्रकम् ॥

नागकेशरवालत्वक् पद्मकोत्पलचंदनम् । एतानि कल्कव-
स्तूनि कथितानीह कोविदैः ॥ पानेभ्यंगेनुवासे च तैलमेतन्नि-
पेवितम् । वातरक्तं तदुद्धृतोपद्रवांश्चाशु नाशयेत् ॥ धन्यं
पुंसवनं स्त्रीणां गर्भदं वातपित्तनुत् । स्वेदकंडुरुजापामाशिरः-
कंपार्दितामयान् ॥ हन्याद् व्रणकृतान् दोषान् गुडूचीतैलमुत्तमम् ॥

अर्थ-गिलोय चार सौ तोले ले उस को ४०९६ तोले जल में डालके काढा
करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उस को उतारके छान लेय. उस काढ़े में २०२४
तोले दूध और २५६ तोले तेल डालके औटावे और मजीठ, मुलहटी, कूठ, जीवनीय
गण की औपधी, इलायची, विजोरा, दाख, जटामांसी, थूहर, लघुनख और नखी,
रेणुकबीज, मुंडी, त्रिकुटा, सालपर्णी, भुई आंवला, कांकडासिंगी, पीपल, शतावर,
कोयल, पत्रज, नागकेशर, नेत्रवाला, दालचीनी, कमल; पद्माख और चंदन इन का
कल्क करके उस तेल में मिलाय देवे. जब तेल सिद्ध होवे तब उतारके रख लेय.
यह तेल पान, अभ्यंग, अनुवासन, वस्ति इन में उपयुक्त करने से वातरक्त तथा उस
के उपद्रव इन को तत्काल नाश करे. उत्तम पुत्र, स्त्रियों को गर्भ का देनेवाला तथा
वात, पित्त, पसीना, खुजली, पामा, शिरःकंप, अर्दितवायु और व्रणदोष इन को
नाश करे. इस को गुडूचीतैल कहते हैं ॥

पद्मकादि तैल

पद्मकोशीरयष्ट्याह्वरजनीकाथसाधितम् ।

स्यात्पिष्टैः सर्जमंजिष्ठा वीरा काकोलिचंदनैः ॥

पद्मकाद्यमिदं तैलं वातासृग्दाहनाशनम् ॥

अर्थ-पद्मख, खस, मुलहटी और हलदी इन का काढा और रार, मजीठ, शतावर,
काकोली और चंदन इन का कल्क इन के साथ सिद्ध करा हुआ तेल वातरक्त के
दाह को नाश करे. इस को पद्मकाष्ठ तैल कहते हैं ॥

मुडूच्यादि तैल

गुडूचीकाथसंयुक्तं तैलं लाक्षारसेन वा ।

सिद्धं मधुककाश्मर्यरसे वा वातरक्तनुत् ॥

अर्थ-गिलोय का काढा अथवा लाख का काढा अथवा मुलहटी और कंभारीवे
फल इन का काढा इनमें से किसी एक के साथ सिद्ध करा हुआ तेल वातरक्त
नाशक है ॥

शताह्वादि तैल

शताह्वया च कुष्ठेन मधुकेन नवेन वा ।

एकैकं साधितं तैलं वातरक्तरुजापहम् ॥

अर्थ—शतावर, कूठ, नवीन मुलहटी इन में से किसी एक के साथ सिद्ध करा हुआ तैल वातरक्त नाश करे ॥

वातरक्त तैल

सारिवासर्जमंजिष्ठयष्टीपिंडपयोन्वितम् ।

तैलं पक्त्वा प्रयोक्तव्यं पिंडारूपं वातशोणिते ॥

अर्थ—सारिवा, राळ, मजीठ, मुलहटी और लाल बोल इन के काढे के साथ सिद्ध करा हुआ तैल वातरक्तनाशक है. इस को पिंडारूप तैल कहते हैं ॥

पिंडतैल

सारिवासर्जयष्ट्याह्वमधूच्छिष्टैः पयोन्वितैः ।

सिद्धमेरंडजं तैलं वातरक्तरुजापहम् ॥

अर्थ—सारिवा, राळ, मुलहटी, मोम और जल इस में अंडी का तेल डालके तेल सिद्ध करे यह वातरक्त की पीडा को नाश करनेवाला है ॥

दशपाक बलातैल

बलाकपायकल्काभ्यां तैलं क्षीरं चतुर्गुणम् । दशपाकं भवेदेत-

द्वातासृग्वातरक्तजित् ॥ धन्यं पुंसवनं चैव नराणां शुक्रवर्धनम् ।

रेतोयोनिविकारघ्नमेतद्वातविकारनुत् ॥

अर्थ—खिरेटी का काढा और कल्क तेल और तेल से चौगुना दूध इस प्रकार उब को एकत्र करके औटावे इस को दशपाक तैल कहते हैं. यह वातरक्तनाशक, उत्तम पुत्र देनेवाला, वीर्यवर्द्धक, शुक्रविकार, योनिविकार और वातविकार इन को दूर करे है ॥

बलातैल

कलाकपायकल्काभ्यां तैलं क्षीरसमं पचेत् । सहस्रशतपाकं च

वातरक्तहरं परम् ॥ रसायनमिदं श्रेष्ठमिन्द्रियाणां प्रसाधनम् ।

जीवनं बृंहणं स्वयं शुक्रासृग्दोषनाशनम् ॥

अर्थ-खिरेटी के जड़ का काढा और कल्क में तेल और दूध ये समानभाग डालके तेल को पचावे यह सहस्रपाक अथवा शतपाक वातरक्त का नाश करे. यह श्रेष्ठ रसायन है. तथा इन्द्रियों को बल देनेवाला, जीवन, पुष्टि करे तथा स्वर को सहारे और शुक्र के दोष तथा रुधिर के दोष इन को नाश करे ॥

नागवलातैल

सिद्धां पचेन्नागवलातुलां च जलार्मणे पादकपायशिष्टम् । पाच्यं तुलैलाजकमत्र शस्तमजापयस्तुल्यविमिश्रितं च ॥ न तस्य यष्टीमधुकस्य कल्कं दत्त्वा पृथक् पंचपलं विपक्वम् । तद्वा-तरक्तं शमयत्युदीर्णं वस्तिप्रदानेन हि सप्त रात्रात् ॥ दशाह-योगेन करोत्यरोगं पीतं च तैलोत्तममश्विञ्जुष्टम् ॥

अर्थ-बला की जड़ ४०० तोले और जल १०२४ तोले लेकर चतुर्थांश काढा करे फिर उतारके छान लेय तथा इस में इस के बराबर बकरी का दूध, नेत्रवाला, मुलहटी और महुआ इन का २० तोले कल्क डालके तेल को पचावे और इस की बस्ती देवे तो सात दिन में वातरक्त को नाश करे. दश दिन पीने से नैरोग्य होय ॥

आरनालतैल

आरनालाढके तैलं पादसर्जरसं शृतम् ।

प्रस्थस्थे निर्जिते तोये ज्वरदाहार्तिनुत्परम् ॥

अर्थ-कांजी २५६ तोले, तेल ६४ तोले तथा रार का काढा ६४ तोले डालके तेल सिद्ध करे यह ज्वर और दाह इन को नष्ट करे ॥

बलादि घृत

बलामतिबलां मेदीमात्मगुप्तां शतावरीम् । काकोलीं क्षीरका-कोलीं राम्नां मृद्धां च पेपयेत् ॥ घृतं चतुर्गुणं क्षीरं तत्सिद्धं वातरक्तनुत् ॥

अर्थ-बला, अतिबला, मेहदी, कौंठ, शतावर, काकोली, क्षीरकाकोली, राम्ना, दास इन का कल्क और घी, घी से चौगुना दूध डालके घृत सिद्ध करे यह वातरक्तनाशक है ॥

गुडूच्यादि घृत

गुडूच्याथकल्काभ्यां सपयस्कं घृतं शृतम् ।

तथा रक्तं कुष्ठं जयाति दुस्तरम् ॥

अर्थ—गिलोय का काढा तथा इसी का कल्क और दूध इन के साथ औटायकर सिद्ध करा हुआ घी वातरक्त और कोष्ठ इन को नाश करे ॥

अमृतादि घृत

अमृतायाः कपायेण कल्केन च महौषधम् । मृद्वाग्निना घृतं सिद्धं वातरक्तहरं परम् ॥ आमवाताढ्यवातादीन्कृमिकुष्ठव्रणानपि । अर्शांसि गुल्मांश्च तथा नाशयत्याशु योजितम् ॥

अर्थ—गिलोय का काढा और कल्क इन की बराबर मंदाग्नि से सिद्ध करा हुआ घी वातरक्त नाश करने में बड़ी भारी औषध है. तथा यह आमवात, कृमि, कुष्ठ, व्रण, बवासीर और गोला इत्यादिकों का नाश करे ॥

शतावरीघृत

शतावरीकल्कगर्भं रसे तस्याश्चतुर्गुणे ।

क्षीरतुल्यं घृतं सिद्धं वातरक्तहरं परम् ॥

अर्थ—शतावर का कल्क, घी, घी के बराबर दूध और घी से चौगुना सतावर का रस इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी वातरक्तनाशक है ॥

अमृतास्वरसविपक्वं सर्पिस्तत्कल्कसाधितं पीतम् ।

अपहरति वातरक्तं उत्तानं चावगाढं च ॥

अर्थ—गिलोय के स्वरस में सिद्ध करे हुए घी को गिलोयसत्व के साथ पीवे तो उत्तान तथा अवगाढ ऐसे वातरक्त को नाश करे ॥

अमृतादिघृत

अमृतायाः पलशतं जलद्रोणे सुशोषितम् । घृतप्रस्थं विपक्तव्यं

कल्कानष्टौ पलानि च ॥ चतुर्गुणेन पयसा वातासृक्कुष्ठना-

शनम् । कामलापांडुरोगघ्नं घ्रीहकासज्वरापहम् ॥

अर्थ—गिलोय ४०० तोले को १०२४ तोले जल में औटायके छान लेवे उस में ६४ तोले घी और ३२ तोले गिलोयसत्व डालके फिर मंदाग्नि पर चौगुने दूध के साथ पक करे फिर इस को भक्षण करे तो वातरक्त, कुष्ठ, कामला, पांडुरोग, घ्रीहा, खांसी, ज्वर इन को नाश करे ॥

अमृतादि घृत

अमृता मधुकं द्राक्षा त्रिफला नागरं बला । वासाग्बधवृश्ची-

वदेवदारु त्रिकंठकम् ॥ कटुका रोहिणी कृष्णा काश्मर्याश्च फलानि च । रास्ना क्षुरकगंधर्वदेवदारुत्वलोत्पलैः ॥ कल्कैरेभिः समैः कृत्वा सर्पिःप्रस्थं विपाचयेत् । धात्रीरसः समो देयो पयस्त्रिगुणसंयुतः ॥ सम्यक् सिद्धं तु विज्ञाय भोज्ये पाके च शस्यते । बहुदोषोत्थितं वातरक्तेन सह मूर्च्छितम् ॥ उत्तानं वापि गंभीरं त्रिकजंधोरुजानुजम् । कोटुशीर्षं महाशूले आमवाते सुदारुणे ॥ महारोगोपसृष्टस्य वेदना चातिदुस्तरा । मूत्रकृच्छ्रमुदावर्तं प्रमेहं विषमज्वरान् ॥ एतान् सर्वात्रिहंत्याशु वातपित्तकफोत्थितान् । सर्वकालोपयोगेन वर्णायुर्वलवर्धनम् ॥ अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं घृतमेतदनुत्तमम् ॥

अर्थ—गिलोय, मुलहठी, दास, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, धला, अहसा, अमलतास, पुनर्नवा, देवदारु, गोखरू, कुटकी, पीपल, कंबारी के फल, रास्ना, तालमखाने, अंड, दारुहलदी, अतिबला, कमल ये सब समानभाग लेवे इन का कल्क करे. इस में ६४ तोले घी डालके और आंवले का रस घी के बराबर डाले और दूध घी से त्रिगुना मिलायके घृत सिद्ध करे. इस को भोजन में अथवा पदार्थ में मिलायके भक्षण करे. यह अनेक दोषों से उत्पन्न हुई मूर्च्छा, रुधिर, उत्तान अथवा गंभीर, त्रिक, जंधा, ऊरू और जानु इन की पीडा, कोटुशीर्ष, महाशूल, दारुण आमवात, महारोग की दुस्तर पीडा, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त, प्रमेह, विषमज्वर इन सब रोगों को दूर करे. तथा वातपित्त, कफ इन से उत्पन्न हुए रोग इन को नष्ट करे यह सर्वकाल उपयोग में लाने से आयुष्य, बल इन को बढ़ावे यह अत्युत्तम घृत अश्विनीकुमार ने निर्माण करा है ॥

अश्वगंधापाक

पूर्वं कृत्वाश्वगंधायाश्चूर्णं दश पलानि च । तदर्धं नागरं चूर्णं तस्यार्धं पिप्पली शुभा ॥ मरिचानां पलं चैकं सूक्ष्मं चूर्णं तु कारयेत् । त्वगोलापत्रपुष्पाणि चैकैकं तु पलं पलम् ॥ तुलार्धं महिषीदुग्धं तस्यार्धस्य च माक्षिकम् । माक्षिकार्धं घृतं गव्यं खंडा त्रिंशत्पलानि च ॥ पयःखंडाज्यमाक्षिक्यं चत्वार्यैकत्र कारयेत् । पूर्वं कथितदुग्धेन क्षिप्त्वा चूर्णं पचेद्भिषक् ॥ दूर्वा-

प्रलेपे संजाते चातुर्जातं विमुंचयेत् । यज्ञातं तंदुलाकारं ताव-
 त्त्रिप्पन्नमाचरेत् ॥ पयोमुक्तं घृतं दृष्ट्वा तावदुत्तारयेत्ततः ।
 ग्रंथिकं जीरकं छिन्ना लवंगं तगरं तथा ॥ जातीफलमुशीरं च
 वालकं मलयोद्भवम् । श्रीफलांभोरुहं धान्यं धातकी वंशलो-
 चनम् ॥ धात्री खदिरसारं च घनसारं तथैव च । पुनर्नवाज-
 गंधा च हुताशनशतावरी ॥ मात्रागद्याणकं चैव द्रव्याणामेक-
 विंशतिः । सूक्ष्मं चूर्णं कृतं चैव योगो ह्यस्मिन्विनिर्दिशेत् ॥
 पश्चात्सुशीतलं कृत्वा स्निग्धभांडे निधापयेत् । पलार्धमपि
 भुंजीत यदृच्छाहारभोजनः ॥ कासं श्वासं तथा हन्यादजीर्णं
 वातशोणितम् । प्लीहां मदं च मेदं च आमवातं च दुर्जयम् ॥
 शोफं शूलं च वातार्शः पांडुरोगं च कामलाः । ग्रहर्णां गुल्म-
 रोगं च अन्यं वातकफोद्भवम् ॥ विकारो विलयं याति यथा
 सूर्योदये तमः । एकमासप्रयोगेण वृद्धः संजायते युवा ॥
 मंदाग्नीनां हितं बल्यं बालानां चांगवर्धनम् । स्त्रीणां च कुरुते
 पुष्टिं प्रसवे स्तन्यवर्धनम् ॥ यावत्स्तन्यं भवेत्स्तोकं तावद्गुग्ध-
 युतं पिबेत् । क्षीणानां चाल्पवीर्याणां हितं कामाग्निदीपनम् ॥
 सर्वव्याधिहरं श्रेष्ठं योगं सर्वोत्तमं विदुः ॥

अर्थ-असगंध ४० तोले, सोंठ २० तोले, पीपल १० तोले और काली मिरच,
 दालचीनी, इलायची, पत्रज और लवंग ये प्रत्येक चार २ तोले, भैस का दूध २००
 तोले, सहत १०० तोले, गौ का घी ५० तोले और मिथ्री १२० तोले इन सब को
 मिलाय प्रथम दूध को औटावे फिर इस में ऊपर कही हुई सब औषधों का चूर्ण डाल-
 के पचावे और उस में दूसरा दूध, मिथ्री, सहत और घी मिलायके फिर पचावे.
 जब गाढा होने पर आवे तब दालचीनी, इलायची, पत्रज और नागकेशर इन का
 चूर्ण डालके पचावे जब चाबल के समान दाने पडने लगे और घी छूटने लगे तब
 उत्तारके उस में पीपरामूल, जीरा, गिलोय, लींग, तगर, जायफल, नेत्रवाटा, स्रम,
 चंदन, श्रीफल, कमलगट्टा, धनिया, धाय के फूल, वंशलोचन, आंवले, मरसार,
 कपूर, पुनर्नवा, असगंध, चित्रक और शतावर ये इकसि औषध आधि २ तोले लेंवे.
 सब का चूर्ण करके उस चासनी में डाल देवे जब शीतल हो जावे तब उत्तारके घी के

चिकने वासन में भरके रख देवे. इस को अश्वगंधा पाक कहते हैं. इस में से दो तोले नित्यप्रति एक महिनेपर्यंत भक्षण करे और ऊपर से यथेच्छ भोजन करे तो खांसी, श्वास, अजीर्ण, वातरक्त, ग्रीहा, उन्माद, मेदरोग, आमवात, सूजन, शूल, वातार्श, पांडुरोग, कामला, संग्रहणी, गुल्मरोग और वातकफजनित रोग इन को नाश करे. एक महिने सेवन करने से बुद्धा भी जवान होय यह मंदाग्रिवालों को और बालक इन को हितकारी है. बलकारी तथा पौष्टिक ऐसा है. तथा स्त्रियों को पुष्ट करे है. प्रसूत होने पर यदि दूध न रहे तो जवतक दूध थोडा रहे तबतक इस पाक को प्रसूता स्त्री दूध के साथ पीवे तो स्तनों में अधिक दूध हो जावे. अल्पवीर्यवालों को हितकारी और काम तथा आग्नि इन को बढावे तथा संपूर्ण व्याधियों को नाश करे. ऐसा यह सर्वोत्तम योग है ॥

प्रपौंडरीकादि लेप

प्रपौंडरीकं मंजिष्ठा दावी मधुकचंदनैः । सीतोपलैलासकूभि-
र्मसूरोशीरपद्मकैः ॥ लेपो रुग्दाहवीसर्परोगशोफनिवारणः ॥

अर्थ—पुंडरीक वृक्ष (कमल की एकजाति), मजीठ, दारुहलदी, गुलहटी, चंदन, मिश्री, इलायची, जौं, मसूर, खस और पद्मास इन का लेप करे तो पीडा, दाह, विसर्प और सूजन इन को नाश करे ॥

लेप और अभ्यंग

लेपः पिष्टास्तिलास्तद्भृष्टः पयसि निर्वृताः । क्षीरपिष्टमु-
पालेप एरंडस्य फलानि च ॥ कुर्याच्छूलनिवृत्त्यर्थं शताह्वां
चाधिकेनिले । सूत्रक्षीरसुरासिद्धं घृतमभ्यंजने हितम् ॥ सिद्धं
तु मधुसूक्तं तु सेकाभ्यंगः फलोत्तरे । गृहधूमं वचा कुष्ठं शता-
ह्वा रजनीद्वयम् ॥ प्रलेपः शूलनुद्घातरक्ते वातकफोत्तरे । प्रभू-
तकालमासेव्यं मुच्यते वातशोणितात् ॥

अर्थ—तिलों को बारीक पीसके भून लेवे. फिर उन को दूध में औटावे इन का अथवा अंडी को पीस के भूनके दूध में औटावे इन का अथवा इसी प्रकार शतावर की जड का लेप करे तो वातादिक शूल को शमन करे. तथा गोमूत्र, दूध और सहज इन में सिद्ध करे हुए घृत की मालिस करना हितकारी होती है तथा मधुसूक्त को सिद्ध करके उस का सेवन करे अथवा मालिस करे तो यह सन्निपाताधिक रक्तपित्त

पर उत्तम है अथवा घर का धूआ, वच, कूट, शतावर, हलदी और दारुहलदी इन का लेप बहुत दिनपर्यंत कफादिक वातरक्त पर करे तो यह रोग दूर हो ॥

शताह्वादि लेप

उभे शताह्वे मधुकं विशाला बलाप्रियाले च कसेरुयुग्मम् ।

घृतं विदारीं च शिलोपलां च कुर्यात्प्रदेहं पवने सरक्ते ॥

अर्थ—कलौंजी, सोंफ, मुलहठी, इन्द्रायन की जड़, बला, चिरोंजी, कचूर, मोथा, घी, विदारीकंद और मिश्री इन सब को पीसके वातरक्त रोग पर लेप करे तो हितकारी होवे ॥

सहस्रधौत घृत तथा रालयोग

सहस्रशतधौतेन घृतेन रुधिरोत्तरे ।

लेपनं चोष्णशीतेन घृतसर्जरसेन वा ॥

अर्थ—रक्ताधिक वातरक्तवाले के हजार बार का धुला हुआ घी का लेप करे अथवा रार और घी को औटायके लेप करे तो वातरक्त दूर होय ॥

नवनीतमर्दन

माहिपं नवनीतं तु गोमूत्रक्षीरसैधवैः । खल्वेनैकत्र संलोड्य

वह्निना तापयेच्छनैः ॥ गात्रमुद्रर्तयेत्तेन देहस्फुटनशांतये ॥

अर्थ—भैंस का मक्खन, गोमूत्र, दूध और सेधानिमक ये सरल पीसके एकत्र करे फिर इन को गरम करके देह में मालिस करे तो अंगों का फूटकर बहना बंद होय ॥

सर्पपादि और वरुणादि लेप

गौरसर्पपकल्केन प्रलेपो वातरक्तनुत् ।

लेपो वरुणाशिशूतथकांजिकेन रुजापहः ॥

अर्थ—सफेद सरसों को पीसके इस का अथवा बरना तथा सहजना इन को कांजी में पीसके लेप करे तो वातरक्त का नाश करे ॥

कनकादि लेप

कनकभुजगवल्लीमालतीपत्रमूर्वाइनरसकुनटीभिर्मर्दितं तैलयो-
गात् । अपहरति रसेद्रः कुप्टकंदूविसर्पस्फुटितचरणवक्रं श्या-
मलत्वं नराणाम् ॥

अर्थ—धतूरे के पत्ते, नागरबेल के पान, माळती के पत्ते, मूर्वादन और मनसिल इन के चूर्ण को तेल में घोटके इस का लेप कोठ, खुजली, विसर्प, पैरों का फूटना और मुख के काले दाग इन का नाश करे ॥

पंचामृतरस

पारदं च क्रियाशुद्धं तुल्यं शुद्धं च गंधकम् । अभ्रकं तु द्वयो-
स्तुल्यं त्रिभिस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः ॥ सर्वांशममृतासत्त्वं भावये-
दौषधैः पृथक् । निर्गुंडी गोक्षुरच्छिन्ना कोकिलाख्यांप्रिजै रसैः ॥
सप्तवारं ततो युंज्याद्वातरक्ते त्रिवल्लकम् । कोकिलाख्यस्य
मूलानां पानीयमनुपाययेत् ॥

अर्थ—शुद्ध पारा १, शुद्ध गंधक १, अभ्रकभस्म २, गूगल ४, गिलोय का सत्व ८ भाग इस प्रकार सब को एकत्र कर उस में निर्गुंडी, गोखरू, गिलोय और तालमखाने इन औषधों की पृथक् २ सात २ भावना देवे. फिर इस में से ६ रत्ति के अनुमान नित्य देकर ऊपर से तालमखाने की जड का रस पीवे तो वातरक्त रोग दूर हो ॥

हरतालभस्म

तालं रसं तुवरिकां नयनेंदुवाणभागैर्विशुद्धवसुजातरसैर्विमर्द्य ।
दत्त्वा शरावयुगुले प्रविधाय मुद्रां दत्त्वा गजाह्वपुटमस्य भवेत्सु-
भस्म ॥ दृष्ट्वाकृतिं प्रकृतिमप्यखिलामवस्थां दृष्ट्वा पुनश्च बहु-
धा बहुधा विचार्य । दद्याच्च तंदुलमिता हरितालमात्रा प्राप्ता
मया यतिवराद्धि महाप्रयत्नात् ॥

अर्थ—हरताल शुद्ध २, पारा १ और फिटकरी ५ भाग इस प्रकार लेकर इन को खरल करके इस में सफेद पुनर्नवा के जड की भावना देवे. फिर इस का गोला बनाय शरावसंपुट में रखे ऊपर से कपड मिट्टी करके गजपुट में धरके फूंक देवे तो हरताल की भस्म होय इस को रोगी की आकृति, बल और काल इन को वारंवार विचार करके १ चावल भर की मात्रा खाने को देवे तो वातरक्त को नष्ट करे. यह भस्म मुझ को बड़ी भारी सेवा करने से योगिराज से प्राप्त हुई है ॥

कैशोरगुग्गुलु

नवमहिपलोचनोदरसन्निभवर्णस्य गुग्गुलोः प्रस्थम् । प्रक्षिप्य
तोयराशौ त्रिफलाममृतां यथोक्तपरिमाणाम् ॥ संसाधयेत्प्रय-

त्नाद्व्यां संघट्टयेच्च तद्यावत् । अर्धक्षपितं जातं तोयं ज्वलन-
स्य संसर्गात् ॥ अवतार्य वस्त्रपूतं पुनरपि संसाधयेदापः ।
सांद्रीभूते तस्मिन्नवतार्य हिमोपस्पर्शं ॥ पथ्याचूर्णं द्विपलं
त्रिकटुकचूर्णं पडक्षपरिमाणम् । कृमिरिपुचूर्णार्धपलं कर्पं कर्पं
त्रिवृद्धंत्योः ॥ पलमेकं छिन्नरुहां दत्त्वा संचूर्ण्य यत्नेन । संस्था-
पयेच्च गुप्तं स्निग्धे भांडे घृतेन सुरभीणाम् ॥ आदाय तस्य
मात्रां विहितातिथिदेवताप्रणतिः । खादेद्यथाग्नि मनुजो व्याधि-
बलापेक्षया सम्यक् ॥ इच्छाहारो भेषजकालश्च सर्व एवात्र ।
तनुरोधिवातशोणितमेकद्वित्र्युल्वणं चिरोत्थमपि ॥ भग्नलुति-
परिशुष्कं स्फुटितमपि निहंति यत्नेन । व्रणकासकुष्ठगुल्मश्व-
यथूदरपांडुरोगमेदांसि ॥ मंदाग्नित्वविवंधं प्रमेहदोषांश्च नाश-
यति । सततं निषेव्यमाणः कालेन निहंति रोगगणम् ॥ अभि-
भूय जरादोषं करोति कैशोरकं रूपम् ॥

अर्थ-नवीन उत्पन्न हुए भैसे के नेत्र के पेटे के समान जिस का रंग ऐसा गूगल
३४ तोले लेवे. उस को गिलोय, हरड, बहेडा, आंवला लेवे. इन सब को जल में
डालके औटावे और कलछी से चलाता रहे जब आधा जल रह जावे तब
उतारके छान लेय और फिर इस को भट्टीपर रखके औटावे जब गाढा हो जावे तब
उतारके शीतल होने पर आगे लिखी हुई औषधों का चूर्ण डाले. जैसे-हरड ८, सोठ २,
काली मिरच २, पीपल २, वायविडंग ४, निसोथ और दंती ये एक २ तोले तथा
गिलोय ८ तोले डाले और बहुत देरतक सब को एकजीव होय तबतक घोटे. फिर
इस को गौ के घी से चिकने पात्र में भरके उस का मुख बांधके धर देवे. फिर देवता,
अतिथि इन का पूजन कर अपना आग्निल और रोग का बल विचारके उसी के अनुसार
मात्रा भक्षण करे तथा इच्छानुसार आहार करे और जो समय औषध का है उसी
समय औषध खाने को देवे. यह औषध शरीर में व्यापक ऐसे वातरक्त एकाधिक
दोष अथवा दो तीन दोष जिस में अधिक हों ऐसे बहुत दिन का स्राव जिस का
बंद हो गया हो शुष्क तथा फूटनेवाले वातरक्त का नाश करे और व्रण, खांसी,
गोला, कुष्ठ, सूजन, उदर, पांडुरोग, मेद, मंदाग्नि, पेट का फूलना और प्रमेह इन
का नाश करे. तथा निरंतर इस के सेवन करने से कालकरके सर्वरोगों का नाश करे
और वृद्धावस्था दूर कर सारुण्यता लाता है ॥

माहिपारुख्य गुग्गुलु

प्रस्थमेकं गुडूच्याश्च सार्धप्रस्थं तु गुग्गुलुः। प्रत्येकं त्रिफलायाश्च
 तत्प्रमाणं विनिर्दिशेत् ॥ सर्वमेकत्र संक्षिप्य कथयेदुत्त्वणंभसि ।
 पादशेषं परिश्राप्य कपायं ग्राहयेद्विपक्व ॥ पुनः पचेत्कपायं
 वा यावत्सांद्रत्वमाप्नुयात् । दंतीव्योपविडंगानि गुडूचीत्रिफला-
 त्वचः ॥ ततश्चार्धपलं चूर्णं गृह्णीयात्तु प्रति प्रति । चूर्णं कर्पे
 त्रिवृत्तायाः सर्वं तत्र विनिःक्षिपेत् ॥ तस्मिन्सुसिद्धं विज्ञाय
 कोष्णं पात्रे विनिःक्षिपेत् । ततश्चाग्निबलं ज्ञात्वा तस्य मात्रां
 प्रयोजयेत् ॥ वातरक्तं तथा कुष्ठं गुदजानग्निसादनम् । दुष्टव्रणं
 प्रमेहं च ह्यामवातं भगंदरम् ॥ नाड्याख्यवातान् श्वयथून् सर्वा-
 न्वातामयान् जयेत् । अश्विभ्यां निर्मितः पूर्वं माहिपारुख्यश्च
 गुग्गुलुः ॥

अर्थ-गिलोय, हरड, बहेडा और आंवला हर एक चौंसठ तोले लेवे और गुग्गुलु ७
 तोले इन को एकत्र कर बहुत से जल में औटावे. जब जल चतुर्थांश रहे तब उता-
 के छान लेवे. फिर इस को गाढा होने पर्यंत औटावे और इस में दंती, सोंठ, मिर-
 पीपल, वायविडंग, गिलोय, हरड, बहेडा, आंवला और दालचीनी ये प्रत्येक दो
 तोले तथा निसोथ १ तोले ले सब का चूर्ण करके उस काढे में डाल देवे और कलह
 से मिलाय देवे. जब भले प्रकार सीज जावे तब कुछ २ गरम को ही चिकने वास
 में भर देवे फिर अग्नि बल विचारके मात्रा देवे तो वातरक्त, कुष्ठ, बवासी
 मंदाग्नि, दुष्टव्रण, प्रमेह, आमवात, भगंदर, नाडीवात, सूजन और संपूर्ण वातरोग इ-
 को जीते इस को माहिपग्गुलु कहते हैं. यह अश्विनीकुमार ने निर्माण करा है

तालकेश्वर रस

तालकस्य तु यस्येह पत्राणि स्युः पृथक् पृथक् । अभ्रकस्येव
 तत् ग्राह्यं हरितालं विचक्षणैः ॥ पुनर्नवायाः स्वरसे तालकं
 तद्विमर्दयेत् । दिनमेकं ततस्तस्मिन् घनत्वं गमिते सति ॥
 कुर्वीत चक्रिकां तां तु शोषयेत्सम्यगातपे । पुनर्नवासमस्तां-
 गक्षारैः स्थालीं गलावधि ॥ पूरयेत्तु ततः क्षारं दृढयेत्पीडनेन

हि । क्षारस्योपरि तां सम्यक् दत्त्वा तत्तालचक्रिकाम् ॥ तत
आच्छादनं दत्त्वा मुद्रां कृत्वा विशोपयेत् । स्थालीं चुल्यां
निधायग्निममदं ज्वालयेद्भिषक् ॥ निरंतरमहोरात्रपंचकं तेन
सिध्यति । स्वांगशीतं समुत्तार्य गृहीयाद्रसमुत्तमम् ॥ ताल-
केश्वरनामायं रसो गुंजामितोशितः । गुडूच्यादिकपायेण ग-
दानेतान्विनाशयेत् ॥ सोपद्रवं वातरक्तं कुष्ठान्यष्टादशापि च ।
फिरंगदेशजं जंतोर्हति रोगं सुदुस्तरम् ॥ विसर्पं मंडलं कंडूं
पामां विस्फोटकं तथा । वातरक्तकृताञ्च रोगानन्यानपि वि-
नाशयेत् ॥ एतद्भेषजसेवी तु लवणाम्लौ विवर्जयेत् । तथा
कटुरसं वह्निमातपं दूरतस्त्यजेत् ॥ लवणं यः परित्यक्तुं न
शक्नोति कथंचन । स तु सैधवमश्रीयान्मधुरोपरसो हितः ॥

अर्थ-जिस हरताल के अम्रक के से पत्ते अलग २ हो जावे उस को लेकर पुन-
र्नवा के स्वरस में एक दिन खरल करे जब गाढी हो जावे तब उस की छोटी २
टिकिया बनायके धूप में सुखाय लेवे. फिर पुनर्नवा के पंचांग की राख को एक मट
के में भरके बीच में उन टिकियाओं को रखके ऊपर से उसी पुनर्नवा की राख को
खूब दाब २ के मुखपर्यंत भर देवे. फिर इस के ऊपर मुद्रा देकर सुखाय लेवे. इस
मटके को चूल्हे पर चढाय नीचे पांच दिनरात्रि तीव्राग्नि देवे तो यह तालकेश्वर रस
सिद्ध होय इस को स्वांगशीतल होनेपर युक्तिपूर्वक उस में से निकाल लेवे. यह रस
गिलोय के काढे से १ रत्ती भक्षण करे तो उपद्रवसहित वातरक्त, अठारह प्रकार के
कुष्ठ तथा फिरंगोपदंश, विसर्प, मंडल, खुजली, पामा, विस्फोटक और वातरक्त से
उत्पन्न हुए उपद्रव इन सब रोगों का नाश करे. यह तालकेश्वर भक्षण करनेवालों को
खारी, खट्टा, चरपरा, अग्नि से तापना, धूप में डोलना इन को त्याग दे जिस से
विना निमक के न रहा जाय वह थोडा सैधानिमक खाय और मीठा रस सेवन करे ॥

अमृतभ्रूतकावलेह

निमज्जति जले यास्तु भ्रूतकव्यश्च ता हिताः । ताश्च सर्वा
विधातव्याः संछिन्नमुखमुद्रिकाः ॥ तासां प्रस्थद्वयं छित्त्वा ज-
लद्रोणे परिक्षिपेत् । प्रस्थद्वयं गुडूच्याश्च क्षुण्णं तत्रांभसि
क्षिपेत् ॥ चतुर्थांशावशेषं तु कपायमवतारयेत् । वघ्नपूते

कषाये च वक्ष्यमाणानि निक्षिपेत् ॥ सर्वाण्येकत्र भांडे तु
 पचेन्मृद्भग्निना शनैः । सर्वद्रव्ये घनीभूते पावकादवतारयेत् ॥
 तत्र क्षेप्याणि चूर्णानि ब्रूमो विश्वामृताऽमृता । वाकुची चक्र-
 मर्दश्च पिचुमंदो हरीतकी ॥ धात्री रात्रिश्च मंजिष्ठा मरिचं
 नागरं कणा । यवानी सैधवं मुस्तं त्वगोला नागकेसरम् ॥
 पर्पटः पत्रकं वालमुशीरं चंदनं तथा । गोक्षुरस्य च बीजानि
 कर्चूरो रक्तचंदनम् ॥ पृथक् पलार्धमानानामेषां चूर्णमिदं क्षि-
 पेत् । सम्यक् संमिश्र्य तद्रक्षेद्भाजने मृन्मये नवे ॥ प्रभाते
 भक्षिते जीर्णेऽमृतभल्लातकाभिधम् । अवलेहं समश्रियात्पल-
 मात्रं जलेन हि ॥ प्रकृत्या देहिनो यस्य सहतेरुष्करो न चेत् ।
 सोरुष्करस्य संसर्गं सदा दूरात्परित्यजेत् ॥ भल्लातकावलेहोयं
 वातरक्तांतकृन्मतः । वातरक्तसमुद्भूतान् विकारानाशु नाश-
 येत् ॥ कुष्ठानि सकलान्येव दुर्नामानि हरेदरम् । विसर्पं मंडलं
 कंडूं शमयेदेष सेवितः ॥ विकारान्वातिकान्सर्वास्तथा रुधिर-
 संभवान् । हरत्येव प्रयोगोयं यत्रतः सेवितः सदा ॥ व्याया-
 ममातपं वह्निमम्लं मांसं दधि स्त्रियम् । तैलाभ्यंगं तथाध्यानं
 नरो भल्लातके त्यजेत् ॥

अर्थ—पानी में डूब जावे ऐसे भिलाए ५१६ तोले को दो दो टुकड़े कर २०४८
 तोले जल में डाले और इतनी ही गिलोय को टुकड़े करके डाल देय फिर इस को
 अग्निपर चढायके काढा करे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इस
 में सोंठ, गिलोय, वावची, चक्रवड, नीम की छाल, हरड, आंवले, हलदी, लाल
 निसोथ, मजीठ, मिरच, सोंठ, पीपल, अजमायन, सैधानिमक, नागरमोथा, दालची-
 नी, इलायची, नागकेशर, पित्तपापडा, तालीसपत्र, नेत्रवाला, खस, चंदन, गोखरू,
 कचूर और लाल चंदन, इन सब के दो दो तोले चूर्ण डाले और गाढा होने पर्यंत
 उस को अग्निपर मंदाग्नि से पक करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके नवीन मिट्टी
 के बरतनमें भरके धर रखे. यह अमृतभल्लातक अचलेह जलसे एक पल प्रमाण
 सेवन करे. जिन को भिलाए न हितकारी हो वह इस अवलेह को न खाय यह
 सविकारक वातरक्त को नाश करे तथा संपूर्ण कुष्ठ, बवासीर, विसर्प, मंडल, खुजली,

संपूर्ण वातविकार और रुधिर से उत्पन्न वात के विकार इन को नाश करे. इसपर दंड, कसरत, धूप, अग्नि, खटाई, मांस, दही, स्त्रीसंग, तैल की मालिस और मार्गमन इन को त्याग देवे ॥

योगसारामृत

शतावरी नागबला उच्चटा वृद्धदारुकम् । पुनर्नवामृता कृष्णा
वाजिगंधा त्रिकंटकम् ॥ पृथक् दश पलान्येषां श्लक्ष्णचूर्णानि
कारयेत् । तदर्धं शर्करायुक्तं चूर्णं तन्मर्दयेद्बुधः ॥ स्थापयेत्तु दृढे
भांडे मध्वार्धाढकसंयुतम् । घृतप्रस्थेनावलोज्य त्रिसुगंधिपलेन
च ॥ यः खादेन्नष्टचेष्टाग्नौ यथा च विकलेन्द्रियः । वातरक्तं क्षयं
कुष्टं पित्तं पित्तास्रसंभवम् ॥ वातपित्तकफोत्थांश्च रोगानन्यांश्च
तद्विधान् । हत्वा करोति पुरुषं वलीपलितवर्जितम् ॥ योगसा-
रामृतो नाम्ना लक्ष्मीकांतिविवर्धनः ॥

अर्थ—शतावर, नागबला, घूंघची की जड (अथवा उटंगण की जड), विधायरो, पुनर्नवा, गिलोय, पीपल, असगंध और गोखरू ये प्रत्येक ४० तोले लेवे. इन का बारीक चूर्ण करे और चूर्ण से आधी मिश्री और सहत १२८ तोले मिलावे. तथा घी ६४ तोले डालके सब को एकत्र करे सब दृढपात्र में भरके रख देवे. यह नष्टेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय ऐसे रक्तपित्ताधिक वातरक्त पर देवे और वात, पित्त और कफ इन से उत्पन्न हुई ऐसी अनेक व्याधियों को अथवा वातरक्त के समान व्याधियों को नाश कर रोगी को वलीपलित रहित करके शोभा और कांति इन को बढावे. इस को योगसारामृत कहते हैं. यह टोडरानंद ग्रंथ में लिखा है ॥

सर्वेश्वर रस

रसहिंगुललोहानां त्रयः कर्पाः पलद्वयम् । ताम्रगंधकयोः सर्वे
जंबरिाद्भिर्विमर्दयेत् ॥ विपमुष्ट्यर्कहेमस्तुक्करवीरजलैः पुनः ।
सप्तधा गोलकं कृत्वा स्वेदयेद्विसद्वयम् ॥ वालुकायंत्रमध्यस्थं
शीते निष्कं विपस्य च । कर्पं कणानां सूतः स्यात्सर्वेशो
वातरक्तजित् ॥ गुंजामात्रास्य दातव्या द्वयं वा मत्तवारिणा ।
रक्तप्रकोपनं तीव्रं पित्तलं परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—पारा, हींगलू, लोहे की भस्म ये प्रत्येक तोले २ भर और ताम्रभस्म तथा गंधक ये आठ २ तोले इन सब को एकत्र करके नीबू के रस में खरल करे और इस को कुचला, आक, धतूरा, धूहर और कनेर इन के रस की सात २ भावना देवे फिर इस का गोला बनायके दो दिन बालुकायंत्र में पुट देवे. जब शीतल हो जावे तब निकालके इस में सिंगियाविप आधा तोला और पीपल १ तोले इन का चूर्ण मिलावे तो यह सर्वेश्वर रस तयार होवे. इस के सेवन करने की मात्रा एक रत्ती से लेकर दो रत्ती पर्यंत की है. इस को धतूरे के रस से देवे तथा रुधिर को कुपित करनेवाले, दाहक, गरम और पित्त कुपित करता ऐसे पदार्थों से पथ्य करना चाहिये ॥

अर्केश्वर रस

पलानि रसचत्वारि वलेद्वादशतावती । ताम्रस्य चक्रिका देया
रसस्यार्धश्रावकम् ॥ दत्त्वा निरुद्धा तद्गांडे पूरयेद्द्रस्मना
दृढम् । अग्निं प्रज्वालयेद्यामद्रयं शीतं विचूर्णयेत् ॥ पुटे द्वादश-
धा सूर्यदुग्धेनालोडितं पुनः । वरापावकशृंगाणां द्रवैस्त्रिस्त्रिश्च
भावयेत् ॥ अयमर्केश्वरो वातरक्तमण्डलसुप्तिजित् । गुंजाद्रयं
ददीतास्य लवणादि विवर्जयेत् ॥

अर्थ—पारा १६ तोले, गंधक ४८ तोले और तांबे के पत्र १ तोले इस प्रका लेकर प्रथम पारे गंधक की कजली करके फिर इन को एक पात्र में भरके उस के ऊपर पत्र से बंदकर फिर राख को खूब दाबके भर देवे. ऊपर से पात्र के मुखपर ढकना दे कपडमिठी कर देवे. इस को चूल्हे पर चढाय दो प्रहर की अग्नि देवे. जब शीतल हो जावे तब निकालके आक के दूध में खरल करे और पुट देवे इस प्रकार बारह पुट देवे फिर त्रिफला, चीते की छाल, कांकडासिंगी इन की तीन २ पुट देवे. यह अर्केश्वर रस दो रत्ती देवे तो वातरक्तसंबंधी चकत्ते और शून्यता इन को नाश करे इस पर लवणादिक वर्जित पथ्य देवे ॥

वातरक्त रोग में पथ्य

उत्तानेऽभ्यंजनं सेकः सोपनाहः प्रलेपनम् । गंभीरे स्नेहपानं च
स्थापनं च विरेचनम् ॥ सर्वत्रास्रच्छ्रुतिः सूचीजलौकाशृंग्यला-
बुभिः । शतधौतघृताभ्यंगो मेपीदुग्धावसेचनम् ॥ यवपट्टिक-
नीवारकलमारुणशालयः । गोधूमाश्वणका मुद्गास्तुवयोपि मकु-

ष्टकाः ॥ अजाव्यमहिषीणां च गवामपि पर्यासि च । उपोदिका
काकमाची वेत्राग्रं सुनिपण्णकम् ॥ वास्तुकं कारवेळं च
तंदुलीयं पटोलकम् । धात्रीफलं शृंगवेरं सुरणं श्वेतशर्करा ॥
मृद्धीकावृद्धकूष्मांडं नवनीतं नवं घृतम् । लावतित्तिरवार्तीक-
ताम्रचूडविविष्किराः ॥ प्रतुदाः शुक्रदात्यूहकपोतचटकादयः ।
शिशपागरुदेवाह्वसरलस्त्रेहमर्दनम् ॥ तिक्तं च पथ्यमुद्दिष्टं वात-
रक्तगदे नृणाम् ॥

अर्थ—चित्त सोना, उवटना, जल का तरडा देना, पसीने निकालना, लेप करना,
गंभीर वातरक्त में स्नेहपान, आस्थापन बस्ती, दस्त कराने, सुई, जोख, सिंगी और
दुंबी आदि से रुधिर का निकालना, सौवार धुले हुए घी की मालिस, भेड के दूध
का सेचन, जों, सांठी चावल, सामखिया, कलमी चावल, लाल चावल, गेहूँ, चना,
मूंग, अरहर, मोठ ये अन्न, भेड, बकरी, भैस और गौ का दूध, लवा, तीतर, बटेर,
मुरगा और विष्कर (अन्न को विखेरके खानेवाले), प्रतुद, तोता, पपैया अथवा
जलकाक, पिंडुकिया, चिडा आदि का मांस. पोई का साग, मकोय, वेत की कोंपल
और चौपतिये का साग, बथुआ, करेला, चौलाई, प्रसारणी, धत्रा, पुराना पेठा, घृत,
अमलतास के पत्ते, पटोलपत्र, अंडी का तेल, दाख, सपेद खांड, मक्खन, सोमल-
ता, कस्तूरी, सपेद चंदन, सीसो, अगर, देवदार, तेल की मालिस और कडवा रस
ये सब वातरक्तरोग में पथ्य कहे हैं ॥

अपथ्य

दिवास्वप्नाग्रिसंतापव्यायामातपमैथुनम् । मापाः कुलित्था
निष्पावाः कलायाः क्षारसेवनम् ॥ अण्डजानूपमांसानि विरुद्धा-
नि दधीनि च । इक्षवो मूलकं मद्यं पिण्याकोऽम्लानि काञ्जि-
कम् ॥ कटूष्णं गुर्वभिष्यदि लवणानि च सक्तवः । एतानि
वातरक्तेषु नैव गुंज्याद्भिषग्वरः ॥

अर्थ—दिन में सोना, आग्रि से तापना, दंड कसरत करना, धूम में डोलना, फिरना,
मैथुन करना, उडद, कुलथी, चौरा, मटर, जवाहार आदि का सेवन, अंडे से होने-
वाले जीव और अनुपदेशसंचारी जीवों का मांस, विरुद्ध पदार्थ, दही, ईख, मूली का
साग, मद्य, खल, सट्टे पदार्थ, कांजी, चरपरे, गरम, भारी, अभिष्यंदी पदार्थ, लवण

के पदार्थ, सत्तु, इन वस्तुओं को वैद्य वातरक्त रोग पर कदाचित् प्रयोग न करे अर्थात् न देवे यह वातरक्त में अपथ्य है ॥

इति श्रीकृष्णलालमाथुरतनुजदत्तरामनिर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघण्टुरत्नाकरे
वातरक्तकर्मविपाकनिदानचिकित्सापथ्यापथ्यं समाप्तम् ।

ऊरुस्तंभकर्मविपाकः ।

ऊरुस्तंभनिदान

शीतोष्णद्रवसंशुष्कगुरुस्निग्धैर्निपेवितैः । जीर्णाजीर्णात्तथाया-
ससंक्षोभस्वप्नजागरैः ॥ सश्लेष्ममेदः पवनः साममत्यर्थसंचि-
तम् । अभिभूयेतरं दोषमूरु चेतप्रतिपद्यते ॥ सक्थ्यस्थानि
प्रपूर्यातः श्लेष्मणा स्तिमितेन च । तदा स्तभ्राति तेनोरु स्त-
ब्धौ शीतावचेतनौ ॥ परकीयाविव गुरु स्यातामतिभृशव्यथौ ।
ध्यानाङ्गमर्दस्तैमित्यतंद्राच्छर्द्यरुचिज्वरैः ॥ संयुतौ पादसदन-
कृच्छ्रोद्धरणसुप्तिभिः । तमूरुस्तंभमित्याहुराढ्यवातमथापरे ॥

अर्थ—शीतल, गरम, पतले, शुष्क, भारी, चिकने ऐसे परस्पर विरुद्ध भोजन से, जीर्ण, अजीर्ण, उसी प्रकार दंड कसरत के करने से, चित्त के क्षोभ से, दिन में सोने से, रात्रि में जागना, इन कारणों से कफ मेदयुक्त अत्यन्त संचित भया आम-युक्त वात इतर दोषों को अर्थात् पित्त को आच्छादित कर ऊरु में आयकर प्रात होय और ऊरु के हाडों को आर्द्रकफ से परिपूर्ण करे, तब उस के ऊरु स्तंभित हो (जकड जाय) और शीतल तथा निर्जीव हो जाय और दूसरे पुरुष के ऊरु के समान उछरके चलना इस विषय में असमर्थ होय और भारी, अत्यन्त पीडायुक्त होय, चिंता, अंगों का तोडना, आर्द्रता (गीला), तन्द्रा, वमन, अरुचि और ज्वरसहित मनुष्य के दोनों ऊरु जकड जाय, बडे कष्ट से चले और शून्यता होय इस रोग को ऊरुस्तंभ ऐसे कहते हैं और कोई आढ्यवात कहते हैं ॥

ऊरुस्तंभ के पूर्वरूप

प्राग्रूपं तस्य निद्रार्तिध्यानं स्तिमितता ज्वरः ।

लोमहर्षोऽरुचिश्छर्दिर्जघोर्वोः सदनं तथा ॥

अर्थ—निद्रा बहुत आवे, अत्यन्त चिंता, मंदता, ज्वर, रोमांच, अरुचि, वमन, जंघा और ऊरु इन में पीडा होय, यह ऊरुस्तंभ के पूर्वरूप होते हैं ॥

ऊरुस्तंभ के लक्षण

वातशंकिभिरज्ञानात्तस्य स्यात्स्नेहनात्पुनः । पादयोः सदनं
सुप्तिः कृच्छ्रादुद्धरणं तथा ॥ जंधोरुग्लानिरत्यर्थं शश्वच्चानाह-
वेदना । पदं च व्यथतेऽत्यर्थं शीतस्पर्शं न वेत्ति च ॥ संस्था-
ने पीडने गत्यां चालने चाप्यनीश्वरः । अन्यस्येव हि संभग्ना-
वूरु पादौ च मन्यते ॥

अर्थ—पैरों का सोना, संकोच होना इत्यादिक वातरोग के समान चिन्ह मिलने से उस मनुष्य को वातरोग की शंका होय तब वह मनुष्य तैलादिक स्नेहन चिकित्सा करे तो उस के दूना रोग बढे, पैरों में पीडा होय तथा पैर सोंय जावें, बडे कष्ट से पैर उठाय़ा और धरा जाय, जंघा और ऊरु इन में अधिक पीडा होय और निरन्तर दाह तथा वेदना होय, पैरों में व्यथा होय, शीतल पदार्थ का स्पर्श मालूम न होय तथा पैर के उठाने में रगडने में अथवा चलने में अथवा हलाने में असमर्थ होय, पैर और ऊरु ये दूटे से तथा अन्य मनुष्य के से मालूम हो ये लक्षण ऊरुस्तंभ के हैं. व्याधि के स्वभाव से यह ऊरुस्तंभ त्रिदोष का एक ही है. वातादि भेदों से अनेक प्रकार का नहीं है ॥

ऊरुस्तंभ के असाध्य लक्षण

यदा दाहार्तितोदारतो वेपनः पुरुषो भवेत् ।

ऊरुस्तंभस्तदा हन्यात्साधयेदन्यथा नवम् ॥

अर्थ—जिस समय पुरुष दाह, शूल और तोद (नोचने की सी पीडा) इन से पीडित होकर कंपयुक्त होय उस समय वह ऊरुस्तंभरोग उस का नाश करे है और ये लक्षण न होंय और रोग नया होय तो यह रोग साध्य है ॥

ऊरुस्तंभ की सामान्य चिकित्सा

यत्स्यात्कफप्रशमनं न च मारुतकोपनम् ।

तत्सर्वं सर्वदा कार्यमूरुस्तंभस्य भेषजम् ॥

अर्थ—कफ को शमनकर्ता और जो वादी को कुपित करे नहीं ऐसी औषध ऊरुस्तंभ रोग पर सदैव करनी चाहिये ॥

स्नेहासृक्स्त्राववमनं वस्तिकर्म विरेचनम् । वर्जयेदाह्यवाते तु
यतस्तैस्तस्य कोपनम् ॥ तस्मादत्र सदा कार्यं स्वेदलंघनरू-
क्षणम् । आममेदःकफाधिक्यात् मारुतं नयता समम् ॥

अर्थ—आह्यवात में स्नेह, रुधिरमोक्ष, स्नान, वमन, वस्तिकर्म और विरेचन ये क्रिया करना वर्जित है. क्योंकि ये स्नेहादिक कर्म करने से वात कुपित होती है परंतु उस वायु में आम, मेद और कफ इन की आधिक्यता रहती है इस वास्ते वादी के शमन की इच्छा करनेवाले वैद्य को ऊरुस्तंभ पर सदैव स्वेद, लंघन और रूक्ष ये क्रिया करनी चाहिये ॥

सर्वो रूक्षः क्रमः कार्यस्तत्रादौ कफनाशनः ।

पश्चाद्वातविनाशाय विधातव्याखिला क्रिया ॥

अर्थ—ऊरुस्तंभ रोग में प्रथम सर्व क्रम रूक्ष तथा कफनाशक करने चाहिये फिर वातनाशक संपूर्ण क्रिया करनी चाहिये ॥

अत्र

भोज्याः पुराणाः श्यामाककोद्रवोद्दालशालयः ।

जांगलैरघृतैर्मांसैः शकैश्चालवणैर्हितैः ॥

अर्थ—पथ्य में पुराने सामखिया, पुरानी कोदो, पुरानी वनकोदो, पुराने चावल, जंगली जीवों का मांस और शाक ये पदार्थ निमक और घी के विना देवे ॥

दद्याद्वास्तुकशाकेन हीनेन लवणेन तु ।

जीर्णशाल्वोदनं रूक्षमूरुस्तंभवते भिषक् ॥

अर्थ—निमक के विना बथुए का शाक, पुराने चावलों का भात और रूक्ष ऐसे ार्य ऊरुस्तंभरोग पर देवे ॥

रूक्षणाद्वातकोपश्चेन्निद्रानाशादिसंभवः ।

स्नेहस्वेदक्रमस्तत्र कार्यो वातामयापहः ॥

अर्थ—रूक्ष क्रिया करके वादी का कोप होने से निद्रानाशादिकों का संभव होता है इसवास्ते उस पर स्नेह और स्वेद इत्यादि वातरोगनाशक उपचार करे ॥

प्रतारयेत्प्रतिस्रोतः सरितं शीतलोदकाम् ।

सरश्च विमलं शीतं स्थिरतोयं पुनः पुनः ॥

अर्थ—ऊरुस्तंभवाले रोगी को बहनेवाली नदी में वेग के सामने चलावे अथवा जिस तलाव पुष्करणी का जल स्थिर होवे उस में अथवा शीतलजल में बलना चाहिये ॥

भल्लातादि काथ

भल्लातकुल्यामगधाजटानां कृतः कपायो मधुसंप्रयुक्तः ।

ऊरुग्रहं घोरमपि प्रवृद्धं निहन्ति गोमूत्रयुता कणा वा ॥

अर्थ—भिलाए, पीपल और पीपरामूल, इन का काढा करके उस में सहत मिलायके देवे तो घोर काठिन भी यदि ऊरुस्तंभ रोग होवे तो उस को दूर करे अथवा गोमूत्र में मिलायके पीपल का चूर्ण देना चाहिये ॥

ग्रंथिकादि काथ

ग्रंथिकारूक्षकृष्णानां काथं क्षौद्रान्वितं पिवेत् ॥

अर्थ—पीपरामूल, धामन और पीपल इन का काढा देवे तो ऊरुस्तंभ रोग को नाश करे ॥

भल्लातकादि काथ

भल्लातकामृता शुंठी दारु पथ्या पुनर्नवा ।

पंचमूलीद्रयं मिश्रमूरुस्तंभनिवर्हणम् ॥

अर्थ—भिलाए, गिलोय, सोंठ, देवदारु, हरड, पुनर्नवा, दशमूल इन का काढा करके पीवे तो ऊरुस्तंभ रोग को नाश करे ॥

पुनर्नवादि काथ

पुनर्नवा नागरदारु पथ्या भल्लातकच्छिन्नरुहाकपायः ।

दशांघ्रिमिश्रः परिपेय ऊरुस्तंभेथ वा मूत्रपुरःप्रयोगः ॥

अर्थ—पुनर्नवा, सोंठ, देवदारु, हरड, भिलाए, गिलोय और दशमूल इन का काढा करके ऊरुस्तंभ पर केवल काढा मात्र अथवा गोमूत्र डालके पीवे ॥

शेफालिकादि काथ

शेफालिकादलकाथं कणायुक्तं पिवेन्नरः ।

कफघ्नं यच्च तत्सर्वमूरुस्तंभे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—ऊरुस्तंभ पर काली निर्गुडी के पत्तों का काढा करके उस में पीपल का चूर्ण डालके देवे तथा जो कफनाशक उपचार हैं वे करने चाहिये ॥

वचादि क्वाथ

वचा प्रतिविषा कुष्ठं चित्रकं देवदारु च । पाठा तेजोवती मुस्ता
स्वर्णक्षीरी निदिग्धिका ॥ वत्सको नक्तमालश्च मूर्वा कटुक-
रोहिणी । तर्कारी प्रग्रहश्चैव पीलु निवफलानि च ॥ आसनः
सप्तपर्णश्च त्रिफलामरिचेन च । एतानि समभागानि कपाय-
मुपसाधयेत् ॥ मधुयुक्तं कपायं च प्रयोगेण पिवेन्नरः । ऊरुस्तंभं
जयेदेव वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ एतान्येव च चूर्णानि माक्षिकेण
विलेहयेत् । अनेन च कपायेण भोजयेत्सिद्धमोदनम् ॥

अर्थ—वच, अतीस, कूठ, चित्रक, देवदारु, पाठ, मालकांगनी, नागरमोथा, चोक, कटेरी, इन्द्रजों, कंजा, मूर्वा, कुटकी, अरनी, अमलतास, अखरोट, नीम की साल, विरेटी, विजसार, सतोना, हरड, बहेडा, अंजिना और काली मिरच ये औषध समभाग लेके काढा करे जब शीतल हो जावे तब सहत डालके पीवे अथवा इसी औषधों के चूर्ण को सहत मिलायके सेवन करे अथवा इसी काढे से अन्न भक्षण करे तो जैसे वच वृक्षों का नाश करे उसी प्रकार यह ऊरुस्तंभ का नाश करे है ॥

त्रिफलादि चूर्ण

त्रिफला चव्यकटुका ग्रंथिकं मधुना लिहेत् ।

ऊरुस्तंभविनाशाय पुरं मूत्रेण वा पिवेत् ॥

अर्थ—त्रिफला, चव्य, कुटकी, पीपलामूल इन का चूर्ण सहत में सानके चाटे तो ऊरुस्तंभ का नाश होय अथवा गोमूत्र में गूगल डालके पीवे तो ऊरुस्तंभरोग को दूर करे ॥

दूसरा प्रकार

त्रिफलाग्रंथिकव्योपचूर्णं लिह्यात्समाक्षिकम् ।

ऊरुस्तंभविनाशाय पुरं मूत्रेण वा पिवेत् ॥

अर्थ—त्रिफला, पीपलामूल और त्रिकुटा इन के चूर्ण को सहत के साथ चाटे तो ऊरुस्तंभ का नाश होय अथवा गोमूत्र और गूगल मिलायके पीवे ॥

वृद्ध्यादि तैल

वृद्धिर्महौषधं दारु चूर्णमेपां समांशतः ।

पीतमुष्णांभसा शीघ्रमूरुस्तंभविनाशनम् ॥

अर्थ—शुद्धि, सोंठ और देवदारु इन का समानभाग चूर्ण एकत्र कर गरम जल से देवे तो ऊरुस्तंभ का शीघ्र नाश करे ॥

त्रिफलाचूर्ण

लिह्याद्वा त्रिफलाचूर्णं क्षौद्रेण कटुकायुतम् ।

सुखांबुना पिबेद्वापि चूर्णं पट्चरणं नरः ॥

अर्थ—त्रिफला, कुटकी, इन का चूर्ण सहत में भिजायके खाय अथवा सुखोष्ण गरम जल से पट्चरण चूर्ण देवे ॥

शिलाजतुयोग

शिलाजतुं गुग्गुलुं वा पिप्पलीमथ नागरम् ।

ऊरुस्तंभे पिबेन्मूत्रैर्दशमूलीजलेन वा ॥

अर्थ—शिलाजीत, गुग्गुल, पीपल अथवा सोठ इन में से किसी एक को गोमूत्र के साथ अथवा दशमूल के काटे के साथ देवे तो ऊरुस्तंभ का नाश होय ॥

ग्रंथिकादि कल्क

चव्याभयाग्निदारूणां कल्कं वा मधुसंयुतम् ॥

अर्थ—चव्य, हरड, चित्रक और देवदारु इन के कल्क में सहत डालके देवे तो ऊरुस्तंभ का नाश करे ॥

पिप्पल्यादि कल्क

पिप्पली पिप्पलीमूलं भल्लातकफलानि च ।

कल्कं मधुयुतं पीत्वा ऊरुस्तंभात्प्रमुच्यते ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, भिलाए इन को कूट पीस गोली बनावे फिर इस को सहत के साथ खाय तो ऊरुस्तंभ से मुक्त होवे ॥

पिप्पलीयोग

पिप्पलीं वर्धमानां वा माक्षिकेण गुडेन वा ।

ऊरुस्तंभे प्रशंसति गंडिरारिष्टमेव च ॥

अर्थ—वर्धमान पीपल, सहत अथवा गुड इन के साथ देवे अथवा जमीकंद का आसव देवे तो ऊरुस्तंभ पर प्रशस्त है ॥

ऊरुस्तंभ पर योग

सक्षारमूत्रस्वेदांश्च रूक्षात्रस्वेदनानि च ।

कुर्याद्देहे च मूत्राद्यैः करंजफलसर्पपैः ॥

अर्ध-गोमूत्र में जवाहार आदि चारों को मिलायके उस से पीसीने निकाले, रूक्षान्न देवे और देह में कंज के बीज अथवा सब रसों को गोमूत्र में पीसके गरम करके लेप करे ॥

प्रकारांतर

मूलैर्वा ह्यश्वगंधाया मूलैरर्कस्य वा भिपक् । पिबुमंदस्य वा
मूलैरथ वा देवदारुणा ॥ क्षौद्रसर्पपवल्मीकमृत्तिकासंयुतैर्भि-
पक् । गाढमृद्भंधनं कुर्यादूरुस्तंभप्रशांतये ॥

अर्ध-असगंध, आक अथवा नीम इन की जड़, देवदारु, सहत और सरसों इन का चूर्ण और बांबी की मिट्टी इन सब को एकत्र मिलाय गरम करके उस की गाढी २ पिंडी बांधे तो ऊरुस्तंभ की शांति होय ॥

ऊरुस्तंभ पर लेप

क्षौद्रं सर्पपवल्मीकमृत्तिकासंयुतं भिपक् ।
गाढमुत्सादनं कुर्यादूरुस्तंभे प्रलेपनम् ॥

अर्ध-सहत, सरसों और बांबी की मिट्टी इन को एकत्र जल से पीस लेप करे. इस को उत्सादन कहते हैं यह ऊरुस्तंभनाशक है ॥

कुष्ठादि तैल

कुष्ठं श्रीवेष्टकोदीच्यसरलं दारु केसरम् । अजगंधांश्वगंधा च
तैलं तैः सर्पपं पचेत् ॥ सक्षौद्रं मात्रया तस्मादूरुस्तंभार्दितः
पिबेत् ॥

अर्ध-कूठ, श्रीवेष्ट, खस, सरल, देवदारु, नागकेशर, वनतुलसी, और असगंध इन के काटे में अथवा कल्क में सरसों का तेल डालके पचावे. इस को ऊरुस्तंभ-रोगवाले को सहत डालके प्रकृति अनुसार पिवावे तो यह रोग दूर होय ॥

सैंधवादि तैल

द्वे पले सैंधवाढ्यं च शुंठीग्रंथिकचित्रकान् । द्वे द्वे भल्लातका-
स्थानि विंशतिर्द्वे तथाढके ॥ आरनाले पचेत्प्रस्थं तैलस्येत्यं
पिबेत्पलम् । गृध्रस्योरुग्रहस्येति सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्ध-सैंधा निमफ, सोंठ, पीपरामूल और चित्रक की छाल ये प्रत्येक आठ २ तोले,

भिलाए ८८ तोले और कांजी २२६ तोले इसमें ६४ तोले तेल डालके पचन करे सिद्ध होनेपर इस को पीवे तो गृध्रसी, ऊरुस्तंभ और संपूर्ण वातविकार इन को नाश करे ॥

कटुतिक्ततैल

बलाभ्यां पिप्पलीमूलं नागरो उष्ट्रकट्वराः । तैलप्रस्थे समो
दध्ना गृध्रस्यूयहापहम् ॥ उष्ट्रकट्वरतैले तु तैलं सार्पपमुच्यते ।
पिप्पलीनागरायाश्च प्रत्येकं द्विपलं स्मृतम् ॥

अर्थ—बला, नागबला, पीपरामूल और सांठ ये प्रत्येक आठ २ तोले ले ऊटकरे, राख ३२ तोले. इन का कल्क तथा दही सब के बराबर डालके तेछ सिद्ध करे, यह गृध्रसी और ऊरुस्तंभ इन का नाश करे ॥

त्रिफलादि गुग्गुलु

त्रिफला त्रिवृता दंतीनीलिनीचतुरंगुलैः । पंचविंशतिसंख्यातैः
प्रत्येकं पलमात्रया ॥ कथिते कुट्टिते चैभिश्चतुर्द्रोणे प्रमा-
णतः । पचेत्तत्सलिले तावद्यावद्रोणावशेषितम् ॥ पंचांशं तत्र
निक्षिप्य गुग्गुलुस्तु पलान्यपि । काथयेद्धि घनं यावत्तावत्त-
त्पूर्ववत्पचेत् ॥ तावतास्मिन्घनीभूते त्वगेला नागकेशरम् ।
त्रिकटु त्रिफला पत्रं यवानी जीरकाणि च ॥ पिप्पली दहनं चैव
हृषुपा कृष्णजीरकम् । बाण्डिका साजमोदा च तित्तिडी चाम्ल-
वेतसौ ॥ सौवर्चलयुता कृत्वा श्लक्ष्णचूर्णं विनिःक्षिपेत् । प्रत्ये-
कमेकपलिकैर्भागैः सम्यक् विचक्षणैः ॥ ततोक्षमात्रा गुटिका
भक्षयेत्तु दिने दिने । ऊरुस्तंभोरुग्रथितगंडमालोदरादितः ॥
अग्नेन चैव विधिना गिरिजं वा प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आंवला, निसोय, जमालगोटा, नीली और अमलतास का गूदा ये प्रत्येक सो २ तोले ले सब को कूटके ४०९६ तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश काढा रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इस में २०० तोले गूगल डालके फिर पचावे जब गाढा हो जावे तब उस में दाळचीनी, इलायची, नागकेशर, सांठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, पत्रज, अजमायन, जीरा, गजपीपल, चीते की छाल, होऊबेर, काला जीरा, कलौजी, अजमोद, इमली, अमलवेत और संचरनिमक ये प्रत्येक औषधी चार २ तोले लेय सब का चूर्ण करके उसी पाक में

डाल देवे. सब को मिलाय के एक जीव करे. फिर इस में से १० मासे की गोली बनायके नित्य प्रति एक २ देवे तो ऊरुस्तंभ, गांठ, गंडमाला और उदर इन पर उत्तम है तथा इसी विधि से शिलाजीत को देना चाहिये ॥

गुंजागर्भरसायन

निष्कत्रयं शुद्धसूतं निष्कद्वादशगंधकम् । गुंजाबीजं विषं निष्कं
निंबबीजं जया तथा ॥ प्रत्येकं निष्कमात्रं तु मापं जेपालबी-
जकम् । जातीजंबीरधत्तूरकाकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ मद्यै सर्वं
वर्तं कुर्यात् घृतैर्गुंजाद्रयं पिबेत् । गुंजागर्भो रसो नाम हिंशु-
सैंधवसंयुतः ॥ समंडं दापयेत्पथ्यमूरुस्तंभप्रशांतये ॥

अर्थ—पारा १ तोले, गंधक ४ तोले और गुंजा (घूंयची), बच्छनाग विष, निंबो-
री और अरनी ये प्रत्येक चार २ मासे ले और जमालगोटा १ मासे इन सब को
एकत्र करके चमेली, जभीरी नींबू, धतूरा और मकोय इन के रस में एक २ दिन
खरल करे इस की दो २ रत्ती की गोली बनाय ले एक गोली को घी, हींग और
सैंधानिमक इन के साथ सेवन करे तो ऊरुस्तंभ को शांति करे. इस पर मंड और
भात ये पथ्य में देवे ॥

लशुनयोग

पलमर्धपलं वापि रसोनस्य सुकुट्टितम् । हिंशुजीरकसिंधूत्थ-
सौवर्चलकटुत्रिकम् ॥ एभिः संचूर्णीतैः सर्वैस्तुल्यं तैलेन सं-
युतम् । यथाग्नि भक्षयेत्प्राज्ञो रुबुक्वाथानुपानतः ॥ मासैकस्य
प्रयोगेण सर्वान्यातामयान् जयेत् । एकांगसर्वांगगतमूरुस्तंभं
च गृध्रसीम् ॥ कटिपृष्ठास्थिसंधिस्थमर्दितं चापतंत्रकम् । ज्वरं
धातुगतं जीर्णं नित्यंशैत्यं करांघ्रिजम् ॥

अर्थ—कूटी हुई लहसन, हींग, जीरा, सैंधानिमक, संचरानिमक, सोंठ, मिरच
और पीपल इन का चूर्ण ४ तोले अथवा २ तोले लेकर उस की बराबर अंड का
तेल लेवे फिर आम्रिवल विचारके खाने को देय और ऊपरसे अंड की जड का काटा
देवे इस प्रकार १ महिने पर्यंत करे तो संपूर्ण वात के रोग, एकांगवात, सर्वांगवात,
ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, कमर, पीठ, हड्डी और संधि इन की वादी, अर्दित और
अपतंत्रक वायु, धातुगत और जीर्णज्वर, हाथ पैरों का शीत इन सब का नाश करे ॥

ऊरुस्तंभरोग पर पथ्य

रूक्षः सर्वो विधिः स्वेदः कोद्रवा रक्तशालयः । यवाः कुलित्थाः
श्यामाका उद्दालाश्च पुरातनाः ॥ सौभाजनं कारवेळं पटोलं
वास्तुकं तथा । सुनिपण्णं काकमार्चो वेत्राग्रं तप्तवारि च ॥
जांगलैरघृतैर्मसैः शकैश्चालवणैर्हितैः । एतत्पथ्यं समुद्दिष्ट-
मूरुस्तंभविकारिणाम् ॥

अर्थ—सब रूक्षण कर्त्ता विधि, पसीने निकालने, कोदों अन्न, लाल चावल, पुराने
जों, कुलथी, सामखिया, वनकोदो, सहजना, करेला, परवल, लहसन, चोपतिपा, मकोय,
वेत की अग्रभाग, उष्ण जल, बिना घी डाली हुई जंगल की मछली, लवण बिना
साग ये पदार्थ पथ्य कहे हैं ॥

ऊरुस्तंभरोग पर अपथ्य

गुरुशीतद्रवस्निग्धविरुद्धासात्म्यभोजनम् । विरेचनं स्नेहनं च
वमनं रक्तमोक्षणम् ॥ वस्ति च न हितं प्रादुरूरुस्तंभविकारिणाम् ।

अर्थ—भारी, शीतल, पतले, चिकने, विरुद्ध और आत्मा को अहित ऐसे पदार्थों
का सेवन, जुल्लाव, स्नेहनकर्म, वमन, रुधिर का निकालना, बस्तीकर्म, ये सब
ऊरुस्तंभ विकारवालों को हित नहीं है ॥

इति श्रीकृष्णलालमाधुरतनुजदत्तरामनिर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहान्निषण्डुरत्नाकरे
ऊरुस्तंभकर्मविपाकनिदानचिकित्सापथ्यापथ्य समाप्तम् ।

आमवातकर्मविपाकः ।

हुताग्निनिर्वापक आमवातवानिति वचनात् ।

तदुक्तदोषशांतये अयुतसंख्याको गायत्रीजपः ॥

अर्थ—जो प्राणी हवन करी हुई अग्नि का विसर्जन करे बिना शांति कर देता है
वह आमवातरोगी होय है. उस प्राणी को उस दोष की शांति करने को दश हजार
गायत्रीजप करना चाहिये ॥

आमवात पर वैदिककर्म

तिलैराज्येन च होमं सुवर्णान्नदानं यत्र असंकीर्णमात्मानं मन्यते

द्विजः तत्र तिलैर्होमो गायत्र्या वा जपस्तथेति स्मरणात् ॥

अर्थ—तिलों का अथवा घी का हवन करे और सुवर्ण तथा अन्न इन का दान करे. जिस जगे कर्ता अपना अपरिपूर्ण मनोरथ माने उस काल में उस को तिलों का होम अथवा गायत्री का जप करे. इस प्रकार कहा है ॥

ज्योतिश्शास्त्राभिप्रायमाह

अष्टमो गुरुरामस्य कर्ता चेति वचनात् अष्टमस्थानस्थितगुरु-
जनितामवातरोगोपशान्तये तत्प्रीतये पूर्वोक्तमेव जपहोमपूजा-
दानादिकं कुर्यात् तेनोपशाम्यति ॥

अर्थ—जन्मकाल में यदि अष्टम स्थान में गुरु बैठा होय तो वह प्राणी आमरोगी होय. इस वास्ते अष्टमस्थानस्थित बृहस्पति के होने से उत्पन्न आम की शांति करने को तथा गुरु की प्रसन्नता के वास्ते पूर्वोक्त कहा जप करे. होम, पूजा और दान इत्यादि करे तो आमरोग नष्ट होय ॥

आमवातनिदान

विरुद्धाहारचेष्टस्य मन्दाग्नेर्निश्चलस्य च । स्निग्धं भुक्तवतो
ह्यन्नं व्यायामं कुर्वतस्तथा ॥ वायुना प्रेरितो ह्यामः श्लेष्मस्थानं
प्रधावति । तेनात्यर्थं विदग्धोऽसौ धमनीः प्रतिपद्यते ॥ वा-
तपित्तकफैर्भूयो दूषितः सोन्नजो रसः । स्रोतांस्यभिस्पर्दयति
नानावर्णोतिपिच्छिलः ॥ युगपत्कुपितावेतौ त्रिकसंधिप्रवेशकौ ।
स्तब्धं च कुरुते गात्रमामवातः स उच्यते ॥

अर्थ—विरुद्ध आहार (क्षीर मत्स्यादि), और विरुद्ध विहार करनेवाले मनु-
ष्य के, मंदाग्निवाले के, जो दंड कसरत न करे और चिकना अन्न खाकर दंड क-
सरत करनेवाले ऐसे पुरुष का आम वायु से प्रेरित होकर कफ के आमाशयादि
स्थान के प्रति जायकर प्राप्त होय और उस कफ से अत्यन्त दूषित हो कर वही
आम, धमनी नाडीन में प्राप्त होकर भीतर वह अन्न का रस (आम) वात और
कफापित्त से दूषित होकर नाडीन के छिद्रों में भर जाय, वह अनेक प्रकार के रंग क्लृ-
अतिगाढा होय है. पीछे ये वात कफ एक ही काल में कुपित होकर त्रिकसंधीन में जायके
प्रवेश करे, तब जडकीसी देह हो जाय, इस रोग को आमवात ऐसे कहते हैं ॥

आमवात के सामान्य लक्षण

अङ्गमर्दोऽरुचिस्तृष्णा आलस्यं गौरवं ज्वरः ।

अपाकः शून्यतांऽगानामामवातः स उच्यते ॥

अर्थ—अंगों का टूटना, अरुचि, प्यास, आलस्य, भारीपना, ज्वर, अन्न का न चना और देह में शून्यता हो जाय इस रोग को आमवात कहते हैं ॥

अत्यंत बढे हुए आमवात के सामान्य लक्षण

स कष्टः सर्वरोगाणां यदा प्रकुपितो भवेत् । हस्तपादशिरोगु-
ल्फत्रिकजानूरुसंधिषु ॥ करोति सरुजं शोथं यत्र दोषैः प्रप-
द्यते । स देशो रुजतेऽत्यर्थं व्याविद्ध इव वृश्चिकैः ॥ जनये-
त्सोऽग्निदौर्बल्यं प्रसेकारुचिगौरवम् । उत्साहहानिवैरस्यं दाहं
च बहुमूत्रताम् ॥ कुक्षौ कठिनतां शूलं तथा निद्राविपर्ययम् ।
तृट्छर्दिभ्रममूर्च्छाश्च हृद्ग्रहं विड्विबंधताम् ॥ जाड्यांत्रकूज-
मानाहं कष्टांश्चान्यानुपद्रवान् ॥

अर्थ—यह आमवात जिस समय बढे उस समय सब रोगों में कष्टकर्ता होती है, अर्थात् सब रोगों से बढकर कष्टदायक है । हाथ, पैर, मस्तक, घाँट, त्रिकस्यान, जानू, जंघा इन की संधि में पीडायुक्त सूजन करे और जिस जिस ठिकाने आम जाय उसी उसी ठिकाने बीजू के डंक मारने की सी पीडा करे. यह रोग मंदाग्नि, मुख से पानी का गिरना, अरुचि, देह भारी, उत्साह का नाश, मुख में विरसता, दाह, बहुत मूत्र का उत्तरना, कूख में कठिनता, शूल, दिन में निद्रा आवे, राति में जागे, प्यास, वमन, भ्रम, मूर्च्छा, हृदय में दुःख, मल का अवरोध, जडता, आंतों का गूँजना, अफरा तथा अत्यंत उपद्रव कहिये वातव्याधि में कहे कलाप संजादि कों को करे ॥

आमवात के विशेष लक्षण

पित्तात्सदाहरागं च सशूलं पवनानुगम् ।

स्तैमित्यं गुरुकंडूं च कफभुष्टं तमादिशेत् ॥

अर्थ—पित्त से जो आमवात होय उस में दाह और लाल रंग होय है. वादी के आमवात में शूल होय है. कफसंबंधी आमवात में देह में आर्द्रता (गीला) और भारीपना तथा खुजली चले है ॥

आमवात में साध्यासाध्य विचार
 एकदोपानुगः साध्यो द्विदोपो याप्य उच्यते ।
 सर्वदेहचरः शोथः स कृच्छ्रः सान्निपातिकः ॥

अर्थ—एक दोष का आमवातरोग साध्य है, दो दोषों का याप्य है, और सर्व देह में विचरनेवाली सूजन अथवा त्रिदोष से प्रगट आमवातरोग कष्टसाध्य जानना ॥

आमवात की सामान्य चिकित्सा

लंघनं स्वेदनं तिक्तं दीपनानि कटूनि च । विरेचनं स्नेहपानं
 वस्तयश्चाममारुते ॥ रूक्षः स्वेदो विधातव्यो वालुकापोटलै-
 स्तथा । उपनाहाश्च कर्तव्यास्तेपि स्नेहविवर्जिताः ॥

अर्थ—लंघन, पसीने निकालना, कड़वी, दीपन, तीक्ष्ण ऐसे पदार्थ, विरेचन स्नेहपान, बरित, वालू की पोटली का रूक्ष सेक तथा रूक्ष उपनाहविधि इत्यादि उपचार आमवात पर करने चाहिये ॥

रास्नादि काथ

रास्नामरदारु राजवृक्षत्रिकटुरंडपुनर्नवामृतानाम् ।
 कथितं जलमामवात एषां शमयेन्नागरकल्कमिश्रमाशु ॥

अर्थ—रास्ना, देवदारु, अमलतास का गूदा, सोंठ, मिरच, पीपल, अंड की जड, पुनर्नवा और गिलोय इन के काठे में सोंठ का कल्क डालके देवे तो आमवात का नाश करे ॥

रास्नादि काथ

रास्नामृतानागरवातशत्रुकटकटेरीजनितः कषायः ।
 एरंडतैलेन समन्वितोयं भेत्ता भवेदामसमीरणस्य ॥

अर्थ—रास्ना, गिलोय, सोंठ, अंड की जड और दारुहलदी इन का काढा कर उस में अंडी का तेल डालके पीवे तो आमवात को नाश करे ॥

रास्नादि काथ

रास्नामृतारग्वधदेवदारुपर्चांश्रियुग्मेंद्रयवैः कषायः ।
 एरंडतैलेन समन्वितोयं भेत्ता भवेदामसमीरणस्य ॥

अर्थ—रास्ना, गिलोय, अमलतास का गूदा, देवदारु, दशमूल और इन्द्रजों : का काढा अंडी का तेल डालके पीवे तो आमवात का नाश होवे ॥

महौपधादि काथ

महौपधामृताभवः कपायकश्च सेवितः ।

हिनस्ति चाममारुतं चिराय संधिसंश्रितम् ॥

अर्थ—सोंठ वाडकी और गिलोय इन का काढा करके सेवन करने से बहुत दिन-के भी आमवातरोग का नाश होय ॥

महारास्नादि काथ

रास्ना वातारिमूलं च वासकः सदुरालभः । शठी दारु वला
मुस्तं नागरातिविपाभयाः ॥ श्वदंष्ट्रा व्याधिघातश्च मिश्रिधान्यं
पुनर्नवा । अश्वगंधामृता कृष्णा वृद्धदारुः शतावरी ॥ वचा
सहचरश्चैव चविका वृहतीद्वयम् । समभागानि सर्वाणि रास्ना
तु त्रिगुणा मता ॥ पित्रेत्कपायमेतेपामष्टभागावशेषितम् ।
क्षिप्वा नागरचूर्णं च प्रक्षेपोत्र यथावलम् ॥ सर्वेषु वातरोगेषु
सामेषु तु विशेषतः । पक्षाघातेऽर्दिते कंफे कुञ्जे संधिगतेनिले ॥
जानुजंघास्थिपीडासु गृध्रस्यां च हनुग्रहे । ऊरुस्तंभे वातरक्ते
विश्वाच्यां क्रोष्टुशीर्षके ॥ हृदामये च दुर्नाम्नि योनिशुक्रामयेषु
च । पुंसां मेद्रगतं वाते स्त्रीणां वंध्यामये तथा ॥ योपितां गर्भदं
मुख्यं नास्त्यस्मादौषधं परम् । महारास्नादिकः काथो वेध-
सायं विनिर्मितः ॥

अर्थ—रास्ना ३ भाग और अंड की जड़, अदूसा, धमासो, कचूर, दारुहलदी, खिरेटी, नागरमोया, सोंठ, अतीस, हरड, गोखरू, अमलतास, सोंफ, धनिया, पुनर्नवा, असगंध, गिलोय, पीपल, विधायरा, शतावर, वच, पियावांसा, चव्य, कटेरी और बडी कटेरी ये सब एक एक भाग लेवे. जल में अष्टावशेष काढा करके पीवे. इस को पीने के समय इस में रोगी के बलाबल विचारके सोंठ का चूर्ण डाल लेना चाहिये. यह सर्ववात के रोग, विशेषकरके आमवात, पक्षाघात, अर्दित, कंफ, कुञ्ज, संधिगत, जानु, जंघा और अस्थि इन में रहनेवाला वायु, गृध्र, हनुग्रह, ऊरुस्तंभ, वातरक्त, विश्वाची, क्रोष्टुशीर्षक, हृद्रोग, बवासीर, योनिरोग, शुक्ररोग, मेद्रगत वात तथा वंध्यापना इन पर हितकारी है. स्त्रियों के गर्भ देनेवाली ऐसी दूसरी औषध नहीं है. यह महारास्नादिक काथ प्रथम ब्रह्मदेव ने निर्माण करा है ॥

रास्नादि काथ

रास्नारग्वधदेवदारुऋतुभूच्छिन्नोद्भवागोक्षुरैरंडेन युतैः कपा-
यकवरो विश्वारजोमिश्रितः । नानासंधिरुजान्वितं विजयते
घोरामवाताययं स्वर्णांगिकुचपद्मकुड्मलरुचिर्दीपोंधकारं यथा ॥

अर्थ—रास्ना, अमलतास का गूदा, देवदारु, पुनर्नवा, गिलोय, गोखरू और अंड की जड़ इन औषधों का काटा करके उस में सोंठ का चूर्ण डालके पीवे तो अनेक संधीन में दर्द होय तो भी भयंकर आम दूर होवे. जैसे सुवर्णसमान देहवाली के कुचकमलकली के समान देदीप्यमान जो दीपक वह जैसे अंधकार को दूर करता है उसी प्रकार यह औषध आमवात को नष्ट करे ॥

रास्नाद्वादशकाठा

रास्ना शतावरी वासा गुडूच्यतिविषाभया । शुंठी डुरालभैरं-
डदेवदारुवचाघनैः ॥ काथः पीतो जयत्याशु आमवातं सुदा-
रुणम् । कट्यूत्रिकजंघांघ्रिगुल्फजानुसमाश्रितम् ॥

अर्थ—रास्ना, शतावर, अडूसा, गिलोय, अतीस, हरड, सोंठ, धमासो, अंड की जड़, देवदारु, वच और नागरमोथा इन का काटा कमर, ऊरू, त्रिक, जंघा, पैर, एड़ी और घोटू इन स्थानों की वादी और दारुण आमवात को नाश करे ॥

रास्नासप्तक काथ

रास्नामृतारग्वधदेवदारुत्रिकंटकैरंडपुनर्नवानाम् ।

काथं पिवेन्नागरचूर्णमिश्रं जंघोरुपृष्ठत्रिकपार्श्वशुली ॥

अर्थ—रास्ना, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखरू, अंड की जड़, पुनर्नवा इन का काटा सोंठ का चूर्ण डालके पीवे तो जंघा, पीठ, पीठ का हाड और कूख इन ठिकाने का शूल दूर होवे ॥

शुंव्यादि काथ

शुंठीगोक्षुरककाथः प्रातः प्रातर्निपेवितः ।

आमवातं कटीशूलं पाचनो रूग्प्रणाशनः ॥

अर्थ—सोंठ और गोखरू इन का काटा नित्य सेवन करने से आमवात और कमर का शूल इन को नाश करे. पाचक है और पीडा को शमन करनेवाला है ॥

शक्यादि काथ

शठी शुंक्वभया चोग्रा देवाह्वातिविपाकृता ।

कपायमामवातस्य पाचनं रूक्षभोजनम् ॥

अर्थ—कचूर, सोंठ, हरड, वच, देवदारु, अतीस और गिलोय इन का काढा करके आमवात पर पाचन देवे और रूक्ष भोजन करे ॥

पिप्पल्यादि काथ

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरम् ।

काथितं वारयत्येवमामवातं सुदारुणम् ॥

अर्थ—पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इन का काढा दारुण आमवात रोग को दूर करे ॥

दशमूलादि काठा

दशमूलकपायमिश्रितं वा ललने विश्वकपायमिश्रितं वा ।

प्रपिबेत्कटिकुक्षिबस्तिशूले ध्रुवमेरंडजमेकमेव तैलम् ॥

अर्थ—दशमूल के काठे में अथवा सोंठ के काठे में अंडी का तेल मिलायके पीवे तो कमर, कूख और बस्ति इन ठिकाने के शूल को नाश करे ॥

अजमोदादि चूर्ण

अजमोदा विडंगानि सैंधवं देवदारु च । चित्रकः पिप्पलीमूलं

शतपुष्पा च पिप्पली ॥ मरिचं चेति कर्पांशं प्रत्येकं कारये-

द्बुधः । कर्पास्तु पंच पथ्याया दश स्युर्वृद्धदारुकात् ॥ नागराच्च

दशैव स्युः सर्वाण्येकत्र कारयेत् । पिबेत्कोष्णजलेनैव चूर्णं श्वय-

थुनाशनम् ॥ आमवातरुजं हंति सैंधिपीडां च शृङ्गसीम् । क-

टिपृष्ठगुदस्थां च जंघयोश्च रुजं जयेत् ॥ तूर्नीं प्रतूर्नीं विश्वार्चीं

कफवातामयान् जयेत् । समेन वा गुडेनास्य वटकान् कारये-

त्सुधीः ॥

अर्थ—अजमोद, वायविडंग, सेवानिपक, देवदारु, चीते की छाल, पीपरामूल, सोंठ, पीपल, और काली मिरच ये नौ औषध एक २ कर्प लेवे. तथा छोटी हरड ५ कर्प, विधायरो १० कर्प, सोंठ १० कर्प ले. फिर सब औषधों का चूर्ण कर गरम

जल के साथ पीवे तो सूजन, आमवायु, संधियों का दूखना और गृभसी वायु (कमर से लेकर पैरपर्यंत जो होता है) तथा कमर, पीठ, गुदा और जंघा इन का शूल होता है वह तथा तूनी वायु, प्रतूनी वायु, विश्वाची वायु तथा कफवायु के विकार ये सब रोग दूर हों अथवा इस चूर्ण के समान गुड डालके गोली बनाय ले इन गोलियों के सेवन करने से जो रोग चूर्ण के खाने से दूर हों वेही इन गो-
लियों के खाने से दूर होते हैं ॥

पंचसमचूर्ण

शुंठी हरीतकी कृष्णा त्रिवृत्सौवर्चलं तथा । समभागानि स-
र्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ ज्ञेयं पंचसमं चूर्णमेतच्छूलहरं
परम् । आध्मानजठराशौघ्नमामवातहरं स्मृतम् ॥

अर्थ—सोंठ, हरड, पीपल, निसोथ, संचरनिमक इन को समान भाग लेकर चूर्ण करे इस को गरम जल के साथ पीवे तो शूल, अफरा, उदर, ववासीर और आम वात इन को नाश करे. इस को पंचसमचूर्ण कहते हैं ॥

पंचकोलचूर्ण

पंचकोलकचूर्णं च पित्रेदुष्णेन वारिणा ।

मंदाग्निशूलगुल्मामकफारोचकनाशनम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य और चित्रक की छाल इन का चूर्ण गरम जल के साथ पीवे तो मंदाग्नि, शूल, गोला, आम, कफ और अरुचि इन का नाश करे ॥

त्रिफलादि चूर्ण

त्रिफला नागरं चैव सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । मस्त्वारनालतक्रेण

पेया मांसरसेन वा ॥ आमवातं निहंत्याशु श्वयथुं संधिसंस्थितम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ इन का चूर्ण करके दही के मंड (जल) से, कांजी, छाछ, पेया और मांसरस इन में से किसी एक के साथ पीवे तो तत्काल आमवात और संधि गत सूजन को दूर करे ॥

आरग्वधपत्र चूर्ण

आरग्वधस्य पत्राणि भृष्टानि कटुतैलतः ।

आमवातप्रशांत्यर्थं खादेद्भक्तावृतानि च ॥

अर्थ—अमलतास के पत्तों को सरसों के तेल में तलके आमवात दूर करने के लिये इन को भात में मिलायके भक्षण करे ॥

पुनर्नवादि चूर्ण

पुनर्नवा छिन्नरुहा शताह्वा मुंडी सठी दारुक नागराणाम् ।

चूर्णं हि हन्यात्किल कांजिकेन दुष्टामवातं चिरगृध्रसीं च ॥

अर्थ—पुनर्नवा, गिलोय, शतावर, गोरखमुंडी, कचूर, देवदारु और सोंठ इन का चूर्ण करके कांजी के साथ देवे तो दुष्ट आमवात का और बहुत दिन की गृध्रसी वायु का नाश करे ॥

शुब्धादि चूर्ण

शुटिलवंगविडंगकटुत्रिकं घनशिवाशिवपत्रजकं समम् ।

त्रिगुणितं त्रिवृता च सिता समा अदत आम पतिष्यति कामतः ॥

अर्थ—बड़ी इलायची, लोंग, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, हरड, गूगल और पत्रज ये समान भाग लेवे तथा निसोयतिगुना ले एवं सब चूर्ण के समान मिश्री मिलायके चूर्ण तयार करे इस के सेवन करने से संपूर्ण आम गिर जावे ॥

अलंबुषादि चूर्ण

अलंबुषा. गोक्षुरकस्त्रिफला नागरामृता ।

यथोत्तरं भागवृद्ध्या श्यामाचूर्णं च तत्समम् ॥

पिवेत्सुरा मस्तु तक्र कांजिकोष्णोदकेन वा ।

आमवातं जयत्याशु सशोकं वातशोणितम् ॥

अर्थ—गोरखमुंडी १, गोखरू २, हरड ३, बहेडा ४, आवले ५, सोंठ ६ और गिलोय ७ भाग लेवे सब की बराबर निसोय लेवे और चूर्ण करके मद्य (दारु), दही का तोड, छाछ, कांजी और गरम जल इन में से किसी एक के साथ सेवन करे तो आमवात, सूजन और वातरक्तारोग इन को शीघ्र नाश करे ॥

भल्लातादि चूर्ण

भल्लाततिलपथ्यानां चूर्णं गुडसमन्वितम् ।

आमवातं कटीशूलं हन्याद्वा गुडनागरम् ॥

अर्थ—भिलाए, तिल और हरड इन का चूर्ण गुड के साथ खाय अथवा सोंठ और गुड मिलायके खाय तो आमवात तथा कटर का शूल इन को नाश करे ॥

वैश्वानरचूर्ण

मणिमंथस्य भागौ द्वौ यवक्षारश्च तत्समः । तथाजमोदभागश्च

नागराद्भागपंचकम् ॥ दश चैव हरीतक्याः सूक्ष्मं चूर्णं कृतं
शुभम् । मस्त्वारनालमूत्रैश्च सुरयोष्णोदकेन वा ॥ पीतं जये-
दामवातं गुल्महृद्भस्तिजान् गदान् । प्लीहानमथ शूलादीना-
नाहं चार्शसां हितम् ॥ वातानुलोमनमिदं चूर्णं वैश्वानरं स्मृतम् ॥

अर्थ—सैंधानिमक २ भाग, जवाखार २ भाग, सोंठ ५ भाग और हरद १० भाग इन का बारीक चूर्ण कर दही का तोर, कांजी, गोमूत्र, मद्य, गरम जल इन में से किसी एक के साथ पीवे तो आमवात, गोला, हृदयरोग, चस्ती के रोग, प्लीहा, शूल, अफरा, और चवासीर इन को नष्ट करे तथा वात को अनुलोमन करे. इस को वैश्वानर चूर्ण इस प्रकार कहते हैं ॥

हिंवादि चूर्ण

हिंयु चव्यं विडं शुंठी कृष्णाजाजी सपुष्करम् ।

भागोत्तरमिदं चूर्णं पीतं वातामजिद्भवेत् ॥

अर्थ—हींग, चव्य, विडानिमक, सोंठ, पीपल, जीरा और पुहकरमूल ये क्रम से १-२-३-४-५-६-७ इस प्रकार भाग लेवे. इन का चूर्ण करके सेवन करे तो आम-वात को दूर करे ॥

चित्रकादि चूर्ण

चित्रकं कटुका पाठा कर्लिगातिवृषामृता ।

देवदारु वचा मुस्ता नागरातिविषाभया ॥

पिवेदुष्णांबुना नित्यं चूर्णमाममरुत्प्रणुत् ॥

अर्थ—चित्रक, कुटकी, पाठ, इन्द्रजो, अतीस, गिलोय, देवदारु, वच, नागरमोषा, सोंठ, अतीस, हरद इन का चूर्ण कर गरम जल के साथ पीवे तो आमवात को नाश करे ॥

नागरचूर्ण

कर्पे नागरचूर्णस्य कांजिकेन पिबेत्सदा ।

आमवातप्रशमनं कफवातविनाशनम् ॥

अर्थ—दस मासे सोंठ का चूर्ण नित्य कांजी के साथ पीवे तो आमवात, कफवात इन को नाश करे ॥

अजमोदादि गुटिका वा चूर्ण

अजमोदमरिचपिप्पलीविडंगसुरदारुचित्रकशताह्वाः । सैंधव-
मागधिमूलं भागानवकस्य पलिकाः स्युः ॥ शुंठी दश पलिका
स्यात्पलानि तावन्ति वृद्धदारस्य । अभयापलानि पंच श्लक्ष्णं
चूर्णं विधाययेदेषाम् ॥ समगुडवटकानदत्शूर्णं वा कोष्णवारिणा
पिवतः । नश्यन्त्यामानिलजाः सर्वे रोगाः सुदारुणाः शीघ्रम् ॥
आनाहशूलतूनीप्रतितूनीगृध्रसीगुल्माः । कटिपृष्ठपरिस्फुटनं
स्फुटनं चैवास्थिजंघयोस्तीव्रम् ॥ श्वयथुस्तथांगसंधिषु ये
चान्येष्यामवातजा रोगाः । सर्वे प्रयांति शान्तिं तम इव सू-
र्यांशुविध्वस्तम् ॥

अर्थ—अजमोद, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, चित्रक, शतावर, सैंधानिमक
और पीपलामूल ये प्रत्येक चार २ तोले, सोंठ ४० तोले, विधायरा ४० तोले, हरड
२० तोले इस प्रकार सब को लेकर बारीक चूर्ण करे फिर चूर्ण के समान गुड
मेलायके इस को अनुमान माफिक खाय अथवा इस को गरम जल के साथ पीवे तो
आमवात से उत्पन्न घोर भयंकर रोगों का नाश होय तथा अफरा, शूल, तूनी,
रतूनी, गृध्रसी, गोला, कपर, पीठ, हाड और जंघा इन का फूटना, सूजन, अंग,
संधि इन में पीडा ये सब नाश होय. जैसे सूर्योदय होने से अंधकार नष्ट होता है ॥

सिंहनादगूगल

पलत्रयं वा ताप्यस्य त्रिफलायाः सुचूर्णीतम् । सौगंधिकं पलं
चैव कौशिकस्य पलं तथा ॥ कुडवं चोरुवूकस्य तैलमादाय
यत्नतः । पाचयेत्पाकविद्वैद्यः पात्रे लोहमये दृढे ॥ हंति वातं
तथा पित्तं श्लेष्माणं खंजपंगुताम् । श्वासं सुदुर्जयं हंति कासं
पंचविधं तथा ॥ कुष्ठानि वातरक्तं च गुल्मशूलोदराणि च ।
आमवातं जयेदेतदपि वैद्यैर्विवाजितम् ॥ एतदभ्यासयोगेन जरा-
पलितवर्जितम् । सर्पिस्तैलरसोपेतमश्रीयाच्छालिपट्टिकम् ॥
सिंहनाद इति ख्यातो रोगवारणदर्पहा । वल्लेर्बृद्धिकरः पुंसां
भापितो दंडपाणिना ॥

अथे-सुवर्णमाक्षिक १२ तोले, त्रिफला का चूर्ण, गंधक ४ तोले, गूगल ४ तोले, अंडी का तेल १६ तोले इन सब को एकत्र कर लोहपात्र में पाक के सदृश पचायके धर लेवे. फिर घी, तेल अथवा मांसरस इन के साथ शक्तिप्रमाण भक्षण करे तो वात, पित्त, कफ, लंगडापना, पांगुलापना, दुर्जय श्वास, पांच प्रकार की खांसी, कोठ, वातरक्त, गोला, शूल, उदर, दुःसाध्य आमवात इन को नाश करे. यह अभ्यास के प्रताप से बुढापे को दूर करे. इस को सिंहनाद गूगल कहते हैं यह रोग-रूप हाथी के मारने को सिंह स्वरूप है और अग्नि को प्रदीप्त करे है. यह योग दंडपाणी भैरव ने कहा है. इस पर पथ्य सांठी चावल का भात खाय ॥

हरीतकीगूगल

हरीतकी नागरं च वृद्धदारुसमं समम् । द्विगुणं गुग्गुलं दत्त्वा
तेलमेरंडजं तथा ॥ मर्दयेद्दिनमेकं तु भक्षयेदामवातनुत् ॥

अर्थ-छोटी हरड, सोंठ, विद्यापरो ये समान भाग लेवे और गूगल सब से दूनी ढालके इस को अंड के तेल में एक दिन खरल करे तो यह हरीतकी गूगल आमवातरोग का नाश करे इस में संदेह नहीं है ॥

योगराजगूगल

चित्रकं पिप्पलीमूलं यवानी कारवी तथा । विडंगमजमोदा च
जीरकं सुरदारु च ॥ चव्यैला सैधवं कुष्ठं रास्ना गोक्षुरधान्य-
कम् । त्रिफला सुस्तकं व्योषं त्वगुशीरं यवाग्रजम् ॥ ताली-
सपत्रं पत्रं च सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । यावंत्येतानि चूर्णानि
तावन्मात्रं च गुग्गुलुः ॥ संमर्द्य सर्पिषा गाढं स्निग्धभांडे नि-
धापयेत् । ततो मात्रां प्रयुंजीत यथेष्टाहारवानपि ॥ प्लिहगु-
ल्मोदरानाहदुर्नामानि विनाशयेत् । अग्निं च कुरुते दीप्तं
तेजोवृद्धिं बलं तथा ॥ मर्दयेद्दिनमेकं तु भक्षयेदामवातहा ॥

अर्थ-चित्रक की छाल, पीपरामूल, अजमायन, सोंफ, वायविडंग, अजमायन जीरा, देवदारु, चव्य, इलायची, सैधानिमक, कूठ, रासना, गोखरू, धनिया, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, खस, जवाखार, ताली-सपत्र और पत्रज इन सब का समानभाग चूर्ण करे तथा इस चूर्ण के समान गूगल ढालके और घी मिलायके एक दिन खूब कूट पीस एकजीव करके घी के चिकने घासन में भरके रख देवे. इस में से अग्निबल विचारके मात्रा देवे और पथ्य जैसा

चाहिये ऐसे भोजन करे तो घृहीत, गोला, उदर, अफरा और बवासीर इन को नाश करे और तेज तथा बल इन को बढ़ावे. अग्नि को प्रदीप्त करे ॥

सिंहनादगूगल

गुग्गुलोः पिंडितं प्रस्थं कटुतैलं पलं घृतम् । प्रत्येकं त्रिफ-
लाप्रस्थे सार्धद्रोणे जले पचेत् ॥ पादावशेषं पूतं च पुनरग्ना-
वधिश्चयेत् । त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडंगामरदारु च ॥
गुडूच्यग्नित्रिवृद्धं चव्यं सूरणमानकम् । पारदं गंधकं चैव
प्रत्येकं शुक्तिसंमितम् ॥ पुनः सहस्रं प्रत्यग्रं जयपालफलं
बुधः । त्वगंकुरविनिर्मुक्तं सिद्धं संचूर्ण्य निक्षिपेत् ॥ ततो मा-
पद्रयं जग्ध्वा पिवेत्तप्तजलादिकम् । अग्निं च कुरुते दीप्तं वड-
वानलसन्निभम् ॥ धातुवृद्धिं बुद्धिवृद्धिं बलं च विपुलं तथा ।
आमवातं शिरोवातं ग्रंथिवातं भगंदरम् ॥ जानुजंघास्थिजं वातं
सकटिग्रहमेव च । अश्मरीमूत्रकृच्छ्रं च भग्नं वस्तिमितोदरे ॥
आम्लपित्तं तथा कुष्ठं प्रस्वेदं स्वेदनिर्गमम् । कासं पंचविधं
श्वासं क्षयं च विपमज्वरम् ॥ श्लीपदं पंक्तिशूलं च पांडुरोगं
सकामलम् । शोथांत्रवृद्धिशूलानि गुदजानि विनाशयेत् ॥
सिंहनाद इति ख्यातो योगीयममृतोपमः ॥

अर्थ—बारीक करा हुआ गूगल ६४ तोले, शिरस का तेल, घी ये चार २ तोले
लेवे हरड, बहेडा, आंवला ये प्रत्येक ६४ तोले. सब को जोकूट करके १५३६
तोले जल में डालके काढा करे जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे. फिर
इस काढ़े को चूल्हे पर चढाय उस में साँठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला,
नागरमोथा, वायविडंग, देवदारु, गिलोय, चित्रक, निसोथ, दंती, चव्य, जमीकंद,
पारा २ और गंधक २ इन की कजली करके इस को और जमालगोटा १००० ले
उन की भीतर की जिब्हा निकालके लेवे. इन सब का चूर्ण करके उस में डाल
देवे. जब तयार हो जावे तब २ मासे की गोली बनायके देवे ऊपर से गरम जल
पीवे सो अग्नि को प्रदीप्त करे. धातुवृद्धि और बल इन को बढ़ावे. आमवात, शिरो-
वात, वातग्रंथी, वातभगंदर और कमर, जानु, जंघा और हड्डी इन की वादी और
पथरी, मूत्रकृच्छ्र, भग्नरोग, वस्तिवात, पेट की जडता, अम्लपित्त, कुष्ठ, पसीनों का

आना, पांच प्रकार की खांसी, श्वास, क्षय, विषमज्वर, श्लीपद, पंक्तिशूल, पांडुरोग, कामला, सूजन, अंत्रवृद्धि, शूल और बवासीर इन को नाश करे. यह सिंहनाद गुग्गुलुयोग अमृत के समान है ॥

अभयादि गुटी

अभया सेंधवं शम्या विशालां विश्वभेषजम् । इंद्रवारुणिका
मज्जा तथा सर्वं विमर्दयेत् ॥ लोहभांडे विनिक्षिप्य दद्यादाग्निं
शनैः शनैः । बदराभा प्रमाणेन वटी कार्या भिषग्वरैः ॥ उष्णो-
दकानुपानेन भुक्त्वा दोषाद्यपेक्षया । पथ्यं दध्योदनं देयं
आमरोगं विनाशयेत् ॥

अर्थ—हरड, सेंधानिमक, अमलतास का गूदा, इंद्रायन की जड़, सोंठ और इंद्रायन का गूदा, इन सब को एकत्र कर मर्दन करे फिर लोहे के पात्र में भरके चूल्हे पर चढ़ावे. मंद २ अग्नि से पचावे गाढी होने पर बेर की बराबर गोली बनावे. इस को गरम जल के साथ दोपानुसार देवे और पथ्य में दहीभात खाने को देय तो आमरोग का नाश करे ॥

एरंडादि गुटी

एरंडबीजमज्जा समविश्वशर्करासहिता ।

गुटी कृता प्रभाते भुक्ता सामानिलं जयति ॥

अर्थ—अंडी, सोंठ और मिश्री ये समान भाग लेवे. सब को कूट पीस गोली बनावे. प्रातःकाल भक्षण करे तो आमवात को नष्ट करे ॥

आमवातारि गुटिका

रसगंधकलोहार्कतुत्थटंकणसैंधवान् । समभागान् विचूर्ण्यथ
चूर्णाद्विगुणगुग्गुलुः ॥ गुग्गुलोः पादिकं ज्ञेयं त्रिफलाचूर्णमुत्त-
मम् । तत्समं चित्रकस्याथ घृतेन वटिकां कुरु ॥ खादेन्मापद्भयं
चेदं त्रिफलाजलयोगतः । आमवातारिगुटिका पाचिका भेदिका
तथा ॥ आमवातं निहंत्याशु गुल्मशूलोदराणि च । यकृत्प्ली-
हानमष्टीलां कामलां पांडुकामलाम् ॥ हलीमकाम्लपित्ते च
श्वयथुं श्लीपदार्वुदम् । ग्रंथिशूलं शिरःशूलं गृध्रसीवातरोगहा ॥
गलगंडं गंडमालां कृमीन्कुष्ठं विनाशयेत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, लोहभस्म, ताम्रभस्म, लीला थोथा, सेंधानिमक ये सब दवा समान भाग ले चूर्ण करे और चूर्ण से दूनी गूगल डाले गूगल की चतुर्थांश त्रिफले का चूर्ण मिलावे और इतना ही चित्रक का चूर्ण लेवे. इन सब को घी में घोटके उडद के समान गोली बनावे. दो गोली त्रिफला के चूर्ण में मिलाय गरम जल के साथ सेवन करे. इस को आमवातारि गुटिका कहते हैं यह पाचक है, भेदनी है और आमवात को शीघ्र दूर करे तथा शूल, गोला, उदर, यकृत, प्लीहा, अण्ठीला, कामला, पांडुकामला, हलीमक, अम्लपित्त, सूजन, क्षीपद, अर्बुद, ग्रंथिशूल, शिर का दर्द, गृध्रसी, वातरोग, गलगंड, गंडमाला, कुमिरोग और कुष्ठ इन सब रोगों को दूर करे ॥

एरंडयोग

विशोध्यैरंडबीजानि पिष्ट्वा तत्पायसं पिबेत् ।

आमवाते कटीशूले गृध्रस्यां चौपधं परम् ॥

अर्थ—अंडी को पीसके उस की दूध में खीर बनावे इस के भक्षण करने से आमवात, कमर का दर्द और गृध्रसी इन को दूर करे ॥

एरंडयोग

आमवातगजेन्द्रस्य शरीरवनचारिणः ।

एक एवाग्रणीर्हिता एरंडस्त्रेहकेसरी ॥

अर्थ—देहरूपी वन में फिरनेवाले आमरूप हाथी को मारनेवाला एरंडतैलरूप सिंह बडा बलवान् कहा है ॥

हरीतकी योग

एरंडतैलयुक्तां हरीतकीं भक्षयेद्विधिवत् ।

आमानिलार्तियुक्तो युक्तो वृद्धया च गृध्रस्या ॥

अर्थ—अंडी के तेल में हरड को भक्षण करे तो आमवात, अंत्रवृद्धि और गृध्रसी-वात इन को सर्वथा दूर करे ॥

अहिंसादियोग

अहिंसा केमुकामूलं शिशु वल्मीकमृत्तिका ।

मूत्रपिष्टश्च कर्तव्यो उपनाहोनिलामजित् ॥

अर्थ—अहिंसा (थूहर का भेद), कोची के बीज, सहजना और बंबई की मिट्टी इन को गोमूत्र में पीसके इस की मिट्टी बांधे से आमवात हर रोग ॥

जल

आमवाताभिभूताय पीडिताय पिपासया ।

पंचकोलेन संसिद्धं पानीयं हितमुच्यते ॥

अर्थ—आमवात से तथा तृषा से पीडित मनुष्य को पंचकोल का काटा करके पिलावे तो हितकारी होय अर्थात् प्यास दूर करे ॥

एरंडमूलयोग

एरंडमूलं त्रिफला गोमूत्रं चित्रकं विषम् ।

गुजैका घृतसंबद्धा आमवातान् विनाशयेत् ॥

अर्थ—अंड की जड़, त्रिफला, गोमूत्र, चित्रक की छाल और सिंगियाविष इन के एक रत्ती चूर्ण को घी में मिलायके खाय तो आमवात का नाश करे ॥

रसोनयोग

रसोनस्य पलं हिंगु व्योपसंधवजीरकम् । सौवर्चलं विडंगं च

पिष्ट्वा तैलेन मिश्रयेत् ॥ कर्पूरकं भक्षयेत्प्रातरामवातादितो नरः ॥

अर्थ—लहसन ४ तोले, हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानिमक, जीरा, संचरानिमक और वायविडंग इन को एकत्र कर तेल में मिलायके १ तोले प्रातःकाल नित्य भक्षण करे तो आमवात को हितकारी होय ॥

पारदभस्मप्रयोग

शरावनिहितं सूतं द्विघ्नवंगं मुहुर्मुहुः । दत्त्वाग्निं सूयेयामातं

निंबकाष्टेन घट्टयेत् ॥ एवं भवेत्पीतवर्णा रसराजस्य भूतिका ।

यथानुपानं रोगेषु प्रदद्यात् भिषगुत्तमः ॥ अर्जितं विविधो-

पायैर्जगमाद्भिषजान्मया । इदं तत्त्वं प्रलब्धं तु पालनीयं

चिकित्सकैः ॥

अर्थ—पारा १ भाग, रांगा २ भाग दोनों को खिपडे में डाल आग्नि पर रखके नीम की लकड़ी से वारंवार घोटे इस प्रकार १२ प्रहर की अग्नि देवे. इस प्रकार करने से पारद की पीले रंग की भस्म होय. इस को रोगों में अनुपान विचारके देवे. मैंने यह औषध एक बड़े भारी वैद्य से अनेक उपाय से प्राप्त करी है. यह वैद्यों को अपने संग्रह में रखनी चाहिये ॥

आमवातविध्वंस रस

प्रक्षिप्य गंधं रसपादभागं कलाप्रमाणं च विषं समस्तात् ।
कृशानुतोयेन च भावयित्वा वल्लं ददीतास्य मरुत्प्रशांत्यै ॥
अपस्मारे तथोन्मादे सर्वांगव्यथनेपि च । एकांगवाते सामे
वा दंष्ट्राबंधे हिमे तथा ॥ देयोयं वल्लमात्रं तु सर्ववातनिवृत्तये ॥

अर्थ—पारा ४ भाग, गंधक १ भाग और सब का षोडशांश सिंगियाविष ले चित्रक के काढे में खरल करके २ रत्ती की गोली वात दूर करने को देवे. इस को वातविध्वंस रस कहते हैं. यह अपस्मार, उन्माद, सर्व अंगों की व्यथा, एकांग-वात, आमवात, हनुस्तंभ और सरदी इत्यादिक संपूर्ण वायु दूर होने के वास्ते वैद्य रोगी को देवे ॥

आमवातारिरस

रसो गंधो वरा वह्निर्गुग्गुलुः क्रमवर्धितः । एतदेरंडपत्रेण शु-
क्षणचूर्णं विमर्दयेत् ॥ कर्पाशैरंडतैलेन हंत्युष्णजलपायिनः ।
आमवातवते देयं दुग्धमुद्गादि वर्जयेत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, त्रिफला, चित्रक की छाल, गुग्गुलु ये औषध क्रमवृद्धि से लेकर अंड के पत्तों के रस में खरल करके गोली बनाय लेवे. एक गोली अंडी के तेल से आमवात रोगी को देवे और ऊपर से गरम जल पीवे तथा दूध और मूंग के पदार्थ को त्यागके पथ्य देवे तो यह आमवात रोग दूर करे ॥

उदयभास्कर रस

पारदं गंधकं व्योषं द्वौ क्षारौ लवणानि च । टंकणं चेति तुल्यानि
जेपालं सकलैः समम् ॥ भावना बीजपूरस्य शुष्कं सूक्ष्मं विचूर्ण-
येत् । संग्राह्यं रक्तिकायुग्ममामवातविनाशनम् ॥ गोदुग्धं केवलं
पथ्यं देयं मुद्गपयोथ वा । अन्नं च वर्जयेत्तावदामशोफं निवारयेत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, पांचों निमक, सुहागा और जमालगोटा ये सब समान भाग ले विजोरे के रस की भावना देवे और बारीक चूर्ण करके रख छोड़े इस में से दो रत्ती के अनुमान रोगी को देवे तो आमवात का नाश करे इस पर केवल पथ्य में गौ का दूध और मूंग की दाल देवे तथा आमवात संबंधी सूजन जाने पर्यंत अन्न खाने को न देवे ॥

शतपुष्पादि लेप

शतपुष्पा वचा विश्वा श्वदंष्ट्रा वरुणत्वचः । पुनर्नवा सदेवाह्वा
शठी मुंडीतिकाः समाः ॥ प्रसारणी च तर्कारी फलं च मद-
नस्य च । सूक्तकांजिकपिष्टास्तु सुखोष्णालेपने हिताः ॥

अर्थ—सोंफ, वच, सोंठ, गोखरू, वरना की छाल, पुनर्नवा, देवदारु, कचूर, मुंडी,
प्रसारणी, अरनी और मैनफल इन को समान भाग ले सूक्त अथवा कांजी में पीस
गरम करके उस को सुखोष्ण लेप करे तो आमवात की सृजनवाले को हित-
कारी होवे ॥

रसोनाद्य तैल

दधि मस्तु गुडक्षीरपोतका मापपिष्टकम् । लशुनस्य तुला-
मेकां जलद्रोणे विपाचयेत् ॥ चतुर्भागावशेषं तु कर्पयेदव-
तारयेत् । तत्कपायं परिश्राव्य विपचेत्ताम्रभाजने ॥ चित्रतैला-
ढकं दद्याद्भेषजानि प्रदापयेत् । त्रिफला त्र्यूपणं हिंगु सूक्ष्मैला
चित्रकं विडम् ॥ सौवर्चलं विडंगानि दीप्यकं ग्रंथिकं तथा ॥

अर्थ—दही, छाल का जल, गुड, दूध, पोई, उडद का चून और लहसन ये १००
तोले लेवे. इन को १०९६ तोले जल में डालके चतुर्थांश रहने पर्यंत काढा करे
जब तयार हो जावे तब उतारके छान लेवे. फिर इस को तांबे के पात्र में भर इस
में २५६ तोले अंडी का तेल और हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, भिरच, पीपल,
हींग, इलायची, चित्रक की छाल, संचरनिमक, विडनिमक, वायविडंग, अजमायन
और पीपरामूल इन का कल्क मिलापके तेल सिद्ध कर लेवे. इस का आमवातरोग
में उपयोग करे ॥

रसोनासव

पलं शतं रसोनस्य तिलं च कुडवं तथा । हिंगु त्रिकटुकाक्षारौ
द्वौ पंचलवणानि च ॥ शतपुष्पा तथा कुष्ठं पिप्पलीमूलचि-
त्रकौ । अजमोदा यवानी च जीरकं चापि बुद्धिमान् ॥ प्रत्येकं
च पलं तेषां सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । घृतभांडे दृढे धान्ये स्था-
पयेद्दिनपोडश ॥ प्रक्षिपेतैलमानेन प्रस्थार्धं कांजिकस्य च ।

खादेत्कर्पप्रमाणं तु तोयं मद्यं पिवेदनु ॥ आमवाते तथा वाते
सर्वाङ्गैकाङ्गसंश्रिते । अपस्मारेनले मांघ्रे कासे श्वासे ज्वरेषु च ॥

अर्थ—लहसन ४०० तोले, तिल १६ तोले और हिंग, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सैधानिमक, पांचों निमक, कूठे, पीपलामूठ, चित्रक, अजमोद, अजमायन और जीरा ये प्रत्येक ४ तोले ले सब का वारीक चूर्ण करे, इस को घी के वासन में भरके इस में अंडी का तेल ३२ तोले तथा कांजी ३२ तोले डालके उस पात्र का मुख बंदकर १६ दिन धान की राशि में गाढ देवे. पश्चात् उस में से निकालके इस में से १ तोले औषध पीवे और इस के ऊपर मद्य अथवा जल पीवे तो एकाङ्ग-आमवात अथवा सर्वाङ्ग की आमवात, मृगी, मंदाग्नि, खांसी और ज्वर इन को नाश करे ॥

लशुनरस

रसो रसोनस्य पिचुप्रमाणः क्षिपेच्च तत्राक्षमितं घृतं गोः ।

पिवेदुभे तेन दहंत्यवश्यं शिखिवि तूलं हिमहामवातम् ॥

अर्थ—लहसन का रस १ तोले, गौ का घी १ तोले, दोनों को मिलायके पीवे यह कपास को जैसे अग्नि भस्म कर देती है उसी प्रकार यह शीत और आमवात को जलाय देवे है ॥

रसोनासव

तुला क्षुण्णा रसोनस्य तदर्थं लुञ्चितास्तिलाः । पात्रे तु गव्यत-
क्रस्य पिष्टद्रव्यैः समं क्षिपेत् ॥ त्र्यूपणं धान्यकं चव्यं चित्रकं
गजपिप्पली । अजमोदा त्वगेला च ग्रंथिकं च पलांशकम् ॥
शर्करायाः पलान्यष्टौ पंचाजाज्याः पलानि च । कृष्णाजाज्याश्च
चत्वारि राजिकायास्तथैव च ॥ पलप्रमाणं दातव्यं हिंगोर्ल-
वणपंचकम् । आर्द्रकस्य च चत्वारि सर्पिश्चाष्टौ पलानि च ॥
तिलतैलस्य तावन्ति सूक्तस्यापि च विंशतिः । सिद्धार्थकस्य
चत्वारि द्विगुणं मधुकस्य च ॥ एकीकृत्य दृढे भांडे धान्य-
राशौ निधापयेत् । द्वादशाहात्समुद्धृत्य प्रातः खादेद्यथाबलम् ॥
सुरां सौवीरकं चाथ मधु वापि पिवेत्ररः । जीर्णं यथेप्सितं
भोज्यं दधिपिष्टकवर्जितम् ॥ एकमासोपयोगेन सर्वव्याधिहरो

भवेत् । अशीतिर्वातजा रोगाश्चत्वारिंशच्च पित्तजाः ॥ विंश-
तिश्लेष्मजास्तद्वत् नश्यन्ते तस्य सेवनात् । योनिशूलं प्रमेहांश्च
कुष्ठोदरभगंदरान् ॥ अर्शोगुल्मक्षयांश्चापि जयेद्बुचिचलप्रदः ॥

अर्थ—लहसन का कल्क चार सौ तोले, तिल का कल्क दो सौ तोले, त्रिकुट
धनिया, चव्य, चित्रक, गजपीपल, अजमोद, दाळचीनी, इलायची औ.
पीपरामूल ये प्रत्येक चार २ तोले. पांचों निमक प्रत्येक ४ तोले, काला जीरा १६
तोले, राई १६ तोले, हींग ४ तोले, मिश्री ३२ तोले, जीरा २० तोले, अदरक १६
तोले और घी ३२ तोले, तिलों का तेल ३२ तोले, कांजी ८० तोले, सपेद सरसों
१६ तोले और मुलहठी ३२ तोले लेवे. इस प्रकार सब औषधों को ले चूर्ण करे
फिर एक पात्र में गौ की छाछ डालके उस में ये सब औषधी भरके उस घडे के
मुख को बांध धान की राशि में गाड़ देवे. १२ दिन बीतने के उपरांत उस
को निकाल शक्ति के अनुसार प्रातःकाल पीवे. ऊपर से मद्य कांजी अथवा सहत
भक्षण करे. जब यह पच जावे. तब यथेष्ट भोजन करे और दही तथा चून के
पदार्थ अथवा पिठ्ठी के पदार्थ खाना इस पर वर्जित है. यह एक महिने पर्यंत सेवन से
सर्वव्याधियों को नाश करे. अस्ती प्रकार के वातरोग, चालीस प्रकार के पित्तरोग, बीस
प्रकार के कफरोग, योनिशूल, प्रमेह, कुष्ठ, उदर, भगंदर, बवासीर, गोला और क्षय
इन सब रोगों का नाश करे. तथा रुचि और बल को करे है ॥

बृहत्सैंधवादि तैल

सैंधवं श्रेयसी रास्ना शतपुष्पा यवानिका । स्वर्जिका मरिचं
कुष्ठं शुंठी सौवर्चलं विडम् ॥ वचाजमोदा जरणः पौष्करं म-
धुकं कणा । एतान्यर्धपलांशानि सूक्ष्मकल्कानि कारयेत् ॥
प्रस्थमेरुडतैलस्य प्रस्थोबु शतपुष्पजम् । कांजिकं द्विगुणं
दत्त्वा मस्तु च द्विगुणं तथा ॥ एतत्संभृत्य संभारं शनैर्मुद्गमिना
पचेत् । सिद्धमेतत्प्रयोक्तव्यमामवातहरं परम् ॥ पात्रे चाभ्यं-
जने वस्तौ कुरुतेग्रिवलं भृशम् । वातातै वंक्षणे शूले कटी-
जानूरुसंधिजे ॥ तथा हृत्पार्श्वजे शूले शस्तं श्लेष्मनिपीडिते ।
अन्यांश्चानिलजान् रोगान्नाशयत्याशु देहिनाम् ॥

अर्थ—सैंधानिमक, हरड, रास्ना, अजमायन, सज्जीतार, काली मिरच, कूठ,
सोंठ, संचरनिमक, विडनोन, वच, अजमोद, जीरा, पुहकरमूल, मुलहठी और पीपल

ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सब का बारीक चूर्ण करे फिर इस में ६४ तोले अंडी का तेल, सोफ का काटा ६४ तोले, कांजी १२८ तोले, दहीका जल १२८ तोले इस प्रकार लेकर सब को एकत्र कर मंदाग्नि में परिपक्व करे तो यह तेल सिद्ध होय इस तेल को पान और अभ्यंग (उबटना) इस विषय में योजना करने से अत्यंत वातनाशक और अग्निवर्द्धक है उसी प्रकार वंक्षण, कमर, जानु, संधी, हृदय और कूख इन स्थानों की पीडा, कफरोग तथा अन्य वादी के रोग इन सब को शीघ्र नाश करे ॥

एरंडतैल

कटिशूले पिबेतैलमेरंडफलसंभवम् ॥

अर्थ—आमवात से कमर रह जाती है उस को अच्छा करने के लिये अंडी का तेल पीवे ॥

शुंठीघृत

पुष्ट्यर्थं पयसा साध्यं दध्ना विष्णुत्रसंग्रहे । दीपनार्थं मतिमता
मस्तुना च प्रकीर्तितम् ॥ सर्पिर्नागरकल्केन सौवीरं च चतुर्गु-
णम् । सिद्धमाग्निकरं श्रेष्ठमामवातहरं परम् ॥

अर्थ—सोंठ का चूर्ण और दूध इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी पुष्टिकारी है और दही तथा सोंठ इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी विष्णुत्र प्रतिबंध का नाशक और दही के जल के साथ सोंठ डालके बनाया हुआ घी अग्नि को दीपन करे है. उसी प्रकार कांजी और सोंठ इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी अग्निदीपक और आमवातनाशक जानना ॥

शुंठीखंड

नागरस्य पलान्यष्टौ घृतस्य कुडवं तथा । क्षीराढकसमायुक्तं
खंडस्यार्धशतं पलम् ॥ व्योषत्रिजातकद्रव्यात्प्रत्येकं च । पलं
पलम् । निःक्षिपेच्चूर्णितं तत्र खादेदग्निलं तथा ॥ आमवा-
तप्रशमनं धातुपुष्टिकरं परम् । बल्यमायुष्यमोजस्यं वली-
पलितनाशनम् ॥

अर्थ—सोंठ ३२ तोले, घी १६ तोले, दूध २५६ तोले, मिथी २०० तोले, त्रि-
कुटा, दालचीनी, इलायची और पत्रज ये प्रत्येक ४ तोले ले. सबका चूर्ण करके दूध में डाल देवे और सब को मिलायके एकत्र कर लेवे. इस में से अक्रान्तुसार सेवन करे तो यह आमवात को शमन करे. धातु को पुष्टि करे. बल, आयुष्य और तेज इन को देवे और बुढापे को दूर करे ॥

प्रकारांतर

नागरस्य तुलामेकां घृतस्यं पलविंशतिः । क्षीरद्रोण्यर्धके पक्त्वा
खंडस्यार्धं शतं क्षिपेत् ॥ व्योषं त्रिजातकं चैव केसरं पिप्पली
जटा । जोंगकं जातिपत्रीकं जातीफलकचोरकम् ॥ अश्मभेद-
स्ताम्रभस्म वंगभस्म तथैव च । स्वर्णमाक्षिकमभ्रं च तथा
लोहत्रयं क्षिपेत् ॥ एतान् पृथक् पलान् भागान् प्रत्येकं चूर्णितं
क्षिपेत् । मंदानलविपकं तु लेहनं साधु साधयेत् ॥ बल्यं
वर्ण्यं तथायुष्यं वलीपलितनाशनम् । आमवातप्रशमनं सौ-
भाग्यकरमुत्तमम् ॥

अर्थ—सोंठ चार सों तोले, घी ८० तोले, दूध ८१८२ तोले, मिश्री २०
तोले, सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, पीपरामूल
काली अगर, जावित्री, जायफल, कचूर, पापाणभेद, तामे की भस्म, वंग की भस्म
सुवर्णमाक्षिक की भस्म, मंडूर, लोहा, कांतलोह प्रत्येक चार २ तोले लेवे. सब कं
मंदाग्नि पर रखके उत्तम अवलेह बनावे. यह बल, वर्ण, आयुष्य, वली (गुजलट)
पलित (बालों का सपेद होना) और आमवात इन को नाश करे तथा उत्त
सुंदरता देता है ॥

मेथीपाक

मेथिकायाः पलान्यष्टौ शुंघ्या अष्टपलानि च । तयोश्चूर्णं पटे पूतं
दुग्धे मृद्गग्निना पचेत् ॥ दुग्धाढकयुतं गव्यं घृतमष्टपलं क्षि-
पेत् । तत्तावत्सुपचेद्यावद्भवेदतिघनं पयः ॥ पुनः पचेच्छनै-
स्तत्र दत्त्वाढकमितां शिताम् । ततः पाके सुविज्ञाते ज्वल-
नादवतारयेत् ॥ मरिचं पिप्पली शुंठी कणामूलं सचित्रकम् ।
यवानी जीरको धान्यं कारवी शतपुष्पिका ॥ जातीफलं शठी
त्वक्च पत्रकं भद्रमुस्तकम् । गृहीयात्पलमेतेषां सर्वेषां च
पृथक् पृथक् ॥ पडक्षं नागरं तत्र मरिचं च पडक्षकम् । एषां
चूर्णं परिक्षिप्य सर्वं संमिश्र्य रक्षयेत् ॥ एतत्तु भेषजं प्रोक्तं
मेथिकापाकसंज्ञितम् । भक्षयेत्पलमात्रं तद्यथा चाग्निवलयं तथा ॥

आमवातं निहंत्येतत् सर्वांश्च पवनामयान् । ज्वरांश्च विपमान्
हन्ति पांडुरोगं सकामलम् ॥ हंत्युन्मादमपस्मारं प्रमेहान्वात-
शोणितम् । अम्लपित्तं शिरःपीडां नासारोगं दृगामयम् ॥ प्रदरं
सूतिकारोगं हन्यादेतन्न संशयः । वपुषः पुष्टिकृद्भ्रूल्यं वीर्यवृ-
द्धिकरं परम् ॥

अर्थ—दाना मेथी और सोंठ प्रत्येक बत्तीस २ तोले. दोनों को कूट पीस कपड-
छान चूर्ण करे उस को २५६ तोले दूध में ३२ तोले घी डालके पाक करे फिर
२५६ तोले मिश्री डालके फिर मंदाग्नि से चासनी कर पूर्वोक्त औषधों का खोहा
मिलायके सिद्ध होने पर उतार लेवे फिर काली मिरच, पीपल, सोंठ, पीपरामूल,
चित्रक, अजमायन, जीरा, धनिया, कलौंजी, सोंफ, जायफल, कचूर, दालचीनी,
तमालपत्र और नागरमोथा ये प्रत्येक चार २ तोले ले. सोंठ ६ तोले, मिरच ६
तोले इन सब का चूर्ण उस चासनी में डाल सब को मिलायके थाल में कतरी जमाय
लेवे इस को मेथीपाक कहते हैं यह ४ तोले अथवा शक्ति के अनुसार प्रातः-
काल भक्षण करे तो यह आमवात और वात के रोग, विपमज्वर, पांडुरोग, कामला,
उन्माद, अपस्मार, प्रमेह, वातरक्त, अम्लपित्त, मस्तक का दर्द, नासारोग, नेत्ररोग,
प्रदर और प्रसूति के रोग ये सब नाश होवें इस में संशय नहीं है यह देह को पुष्ट
करे. बल, वीर्य को बढ़ावे है ॥

सौभाग्यशुंठी

विश्वौषधं पलान्यष्टौ सर्पिषः पलविंशतिः । प्रस्थद्वयं च गोक्षीरं
शर्करार्धतुला तथा ॥ त्रिकटु त्रिसुगंधी च प्रत्येकं च पलं
पलम् । साधयेत्स्नेहविधिना सम्यक् शुंठीरसायनम् ॥ नाम्ना
सौभाग्यशुंठीयं पुनः सौभाग्यदायकम् । आमवातं हरत्याशु
त्वचि कांतिं प्रयच्छति ॥ धातुवृद्धिकरं वृद्धिमायुश्च कुरुते
चिरम् । वलीपलितनाशं च कुर्याद्द्विध्यत्वनाशनम् ॥

अर्थ—सोंठ ३२ तोले और घी ८० तोले इन को १२८ तोले गी के दूध में
डालके खोहा करे फिर मिश्री २०० तोले की चासनी में पूर्वोक्त खोहा मिलाय फिर
सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची और पत्रज ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे.
स्नेहविधि से पाक तयार करे. इस को शुंठीरसायन अथवा सौभाग्यशुंठी
कहते हैं. यह आमवात का नाश करके उत्तम कांति करे है तथा धातुपुष्टि, बल और
आयुष्य को बढ़ावे तथा वली और पलित तथा बंध्यात्व इन को नाश करे है ॥

शुंघ्यादि पुटपाक

शुंठीकल्कं विनिष्पिष्य रसैरेरंडमूलजैः । विपचेत्पुटपाकेन त-
द्रसः क्षौद्रसंयुतः ॥ आमवातसमुद्भूतां पीडां जयति दुस्तरः ॥

अर्थ—सोंठ को अंड के रस में पीस कल्क करे उस को पुटपाक की विधि से पचायके रस निचोड़ लेवे. इस में सहत डालके पीवे तो आमवात की पीडा को नष्ट करे ॥

आमवातरोग पर पथ्य

रूक्षः स्वेदो लंघनं स्नेहपानं वस्तिकर्म रेचनं पायुवर्तिः ।
अब्दोत्पन्नाः शालयो ये कुलत्था जीर्णं मद्यं जांगलानां रसा-
श्च ॥ वातश्लेष्मघ्नानि सर्वाणि तक्रं वर्षाभूश्चैरंडतैलं रसानः ।
पटोलपत्तूरककारवेल्हवार्त्ताकुशिशूणि च तप्तनीरम् ॥ मंदा-
रगोकंटकवृद्धदारुं भल्लातकं गोजलमार्द्रकं च । कटूनि तिक्तानि
च दीपनानि स्युरामवातामयिने हितानि ॥

अर्थ—रूक्षणकर्म, लंघन, स्नेहपान, वस्तिकर्म, लेप, रेचन, गुदा में चत्ती डालना, एक वर्ष के पुराने चावल, पुराने कुलथी, पुराना मद्य, जंगली जीवों का मांसरस, वातकफनाशक संपूर्ण पदार्थ, छांछ, सांठ की जड़, अंडी का तेल, लहसन, परवल, पत्तों का शाक, करेले, बेंगन, सहजना, गरम जल, आक, गोखरू, विधायरो, भिलाए, गोमूत्र, अदरक और जो पदार्थ चरपरे, कडवे, अग्निदीपनकर्त्ता हैं वे सब आमवात रोगीकी हितकारक जानने ॥

आमवातरोग पर अपथ्य

दधि मत्स्या गुडक्षीरोपोदिकामापिष्टकम् । दुष्टनीरं पूर्ववातं
विरुद्धान्यशनानि च ॥ असात्म्यं वेगरोधं च जागरं विपमा-
शनम् । वर्जयेदामवातातो गुर्वभिष्यंदकारि च ॥

अर्थ—दही, मछली, गुड के पदार्थ, दूध, पोई का साग, उडद, पिष्टपदार्थ, (चून मैदा आदि), दूषित (विगडा हुआ) जल, पूर्व की पवन, विरुद्ध और असात्म्य भोजन, मलमूत्रादि उपस्थित वेगों का रोकना, जागरण करना, विषम भोजन और भारी तथा अभिष्यंदी पदार्थ ये आमवातवाले रोगी को त्याज्य कहे हैं ॥

इति श्रीबृहन्नियन्त्ररत्नाकरे आमवातनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

शूलरोगकर्मविपाकः ।

अजीर्णशूल का कर्मविपाक

शुद्रस्यैव तु भुक्त्वान्नमत्रतस्य द्विजस्य च ।

शूलव्याधिर्भवेन्नित्यमजीर्णाच्चातिपीडितः ॥

अर्थ—जो ब्राह्मण शुद्र का अथवा पतित ब्राह्मण का अन्न भोजन करे है. उस प्राणी के नित्यप्रति शूल रोग और अजीर्ण से पीडित रहता है ॥

ग्रीहशूल

विश्वस्तविपदाता च ग्रीहवान् जायते नरः ॥

अर्थ—जो प्राणी आपने पर विश्वास करनेवाले को विष (जहर) देता है उस के ग्रीहा का रोग होता है ॥

जठरशूल

श्रुताध्ययनसंपन्नं याचितारमकिंचनम् । ब्राह्मणं दांतमाहूय
दानार्थं न ददाति यः ॥ स भवेज्जठरी शूली तथाध्मानी च
कर्हिचित् ॥

अर्थ—पढा हुआ, बहुश्रुत और दरिद्री, भिखारी, शमदमादि साधनयुक्त ब्राह्मण को जो बुलाकर भी दान नहीं देता उस के उदरशूल तथा पेट का फूलना ये उपद्रव होते हैं ॥

शमन

कृच्छ्रातिकृच्छ्रचांद्राणि स कुर्याद्रोगमुक्तये ॥

अर्थ—ऐसे रोगी को कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र और चांद्रायण व्रत करने चाहिये ॥

अरुचिशूल

श्रद्धाहीनो धनवान् दानेष्वरतिस्तामसदानी वा यः ।

सोरुचिमान् शूली जायेतात्रैव निस्तारः ॥

अर्थ—जो कोई धनवान् होकर दान में अश्रद्धा करे अथवा तामसी दान करे उस के अरुचि और शूल ये रोग होते हैं उस की शांति कहते हैं ॥

शमन

चांद्रायणं चातिकृच्छ्रं प्राजापत्यमथापरम् ।

होमाद्यपि च कुर्वीत व्याध्यादेरनुरूपतः ॥

अर्थ—अरुचि और शूलरोगी को चांद्रायण, कृच्छ्रचांद्रायण और प्राजापत्य व्रत करने चाहिये अथवा व्याधि के तारतम्य अनुसार होम आदि करे तो यह रोग शांत हो ॥

साक्षाद्भंति गवादीनि यः पुनर्जननांतरे ।

शिरोरोगी श्रोत्ररोगी शूली वारुचिमान् भवेत् ॥

अर्थ—जो कोई गौ और ब्राह्मण इत्यादिक को जो पूर्व जन्म में वध करता है वह मस्तकशूलरोगी होय है तथा कर्णशूल, उदरशूल अथवा अरुचिवाला होता है ॥

शमन

एतन्निवृत्तये वर्षं द्विवर्षं वा त्रिवर्षकम् ।

चरेद् घृतव्रतं चांते गोहिरण्यादिकं दिशेत् ॥

अर्थ—ब्रह्महत्यादि दोष दूर होने के वास्ते एक, दो अथवा तीन वर्ष पर्यंत घृत पीकर रहे और पश्चात् ब्राह्मण को गौ और सुवर्ण का दान देवे ॥

कटिशूल का कर्मविपाक

गोगामी कटिशूली स्यात् तस्य चांद्रायणं तथा ।

कृच्छ्रं चैवातिकृच्छ्रं च जपं सौरं च निर्दिशेत् ॥

अर्थ—जो प्राणी गौ से गमन करता है वह कमरके दर्द से पीडित होता है उस को चांद्रायण, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र अथवा सूर्य के मंत्र (गायत्री आदि) का जप करना चाहिये ॥

कर्णशूल

मैथुनं शृणुयात्पित्रोः कर्णशूली भवेत् सः ।

स्याच्चैव वधिरः किञ्चित्कपालेसह्यशब्दान् ॥

अर्थ—जो प्राणी अपने मातापिता के मैथुन को सुनता है (अर्थात् अनुमान करता है) वह कर्णशूल (कान की पीडा) वाला होता है अथवा बहरा होय अथवा उस के कपाल में असह्य शब्द होवे ॥

शमन

निष्कविंशतिकं दद्याद्ब्राह्मणाय कुटुंबिने ।

विष्णुप्रकाशकान् मंत्रान् जपेद्गोगोपशांतये ॥

अर्थ—ऊपर लिखे शूल की शांति करने को कुटुंबवाले ब्राह्मण को वीस तोले सुवर्ण का दान करे अथवा विष्णु देवता जिस का ऐसे (द्वादशाक्षरी अष्टाक्षरी) मंत्रों का जप करे ॥

हस्तशूल

पूर्वजन्मनि नास्तिक्यात्संध्यादिरहितो द्विजः ।

हस्तशूली संभवति निष्कद्रादशकं दिशेत् ॥

अर्थ—जो पूर्व जन्म में नास्तिकपने से ब्राह्मण होकर भी संध्यावंदनादिक नहीं करे उस के हाथों में दर्द हुआ करे है वह बारह तोले सुवर्ण का दान करे ॥

शमन

भोजयेद्ब्राह्मणान् शक्त्या जपेत्सौरं हिरण्यदः ॥

अर्थ—हस्तशूलवाला रोगी यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करावे तथा सुवर्ण दान करके सौरमंत्र का जप करे ॥

नेत्रशूल

नग्नां परस्त्रियं दृष्ट्वा सूर्यं वास्तमयोदये ।

नेत्रशूली भवेत्सोपि नेक्षितुं क्षमते दिशः ॥

अर्थ—जो पुरुष परस्त्री को नग्न देखता है अथवा उदय और अस्त होते हुए सूर्य को देखता है वह नेत्रशूलरोगी होता है. इसी से उस से दिशाओं की तरफ देखा भी नहीं जाय ॥

शमन

वर्चो मे देहि मंत्रेण जपः स्यादष्ट चायुतम् ।

वयः सुपर्णा इति च मंत्रैः सिंचेच्च वारिणा ॥

अर्थ—नेत्रशूली रोगी को 'वर्चो मे देहि' इस मंत्र का १०००८ जप करे अथवा 'वयः सुपर्णा' इत्यादि मंत्र से अभिषेक करे ॥

शूलरोग में कर्मविपाक

शूली परोपतापेन जायते वपुषा तनुः ।

सौन्नदानं प्रकुर्वीत तथा रुद्रं जपेद्बुधः ॥

अर्थ—जो प्राणी अन्यजीवों को दुःख देता है इस पाप से वह शूलरोगी होता है तथा शरीर में कृश होता है उस को अन्नदान अथवा रुद्रजप करना चाहिये ॥

शूल निदान

दोषैः पृथक्समस्तामद्ब्रैः शूलोपधा भवेत् ।

सर्वेष्वेतेषु शूलेषु प्रायेण पवनः प्रभुः ॥

अर्थ—वात, पित्त, कफ इन से तीन प्रकार का, एक सन्निपात से, एक आम से और तीन द्रव्य ऐसे सब मिलकर आठ प्रकार का शूलरोग है. इन सब शूलों में प्रायः वादी है. ज्वर के समान शूलरोग की प्रथम उत्पत्ति हारीत में कही है सो इस प्रकार कामदेव के नाश करने के अर्थ शिव ने क्रोधकरके त्रिशूल को फेंका, उस त्रिशूल को अपने सन्मुख आता हुआ देख कामदेव भयभीत होकर विष्णुभगवान् के देह में प्रवेश कर गया. तदनंतर वह त्रिशूल विष्णु की हुंकार से मूर्च्छित होकर गिरा तो पृथ्वी में शूल इस नाम से प्रसिद्ध भया, तब से वह शूल पंचभूतात्मक देहधारी मनुष्यों को पीडा करने लगा इस प्रकार इस की उत्पत्ति है. शिव के त्रिशूल से उत्पन्न भया तथा शूल के घाव के समान पीडा करे है इसी से इस को शूल ऐसे कहते है ॥

व्यायामयानादतिमैथुनाच्च प्रजागराच्छीतजलातिपानात् ।

कलायमुद्राढकिकोरदूपादत्यर्थरूक्षाध्यशनाभिघातात् ॥ क-

पायतिकादिविरूढकान्नविरुद्धवल्लूरकशुष्कशाकात् । विट्शुक्र-

मूत्रानिलवेगरोधाच्छोकोपवासादतिहास्यभाष्यात् ॥ वायुः प्रवृ-

द्धो जनयेद्धि शूलं हृत्पार्श्वपृष्ठत्रिकवस्तिदेशे । जीर्णे प्रदोषे च

घनागमे च शीते च कोपं समुपैति गाढम् ॥ मुहुर्मुहुश्चोपशमश्च

कोपो विष्णुमूत्रसंस्तंभनतोद्भेदैः । सस्वेदनाभ्यंजनमर्दनाद्यैः

स्निग्धोष्णभोज्यैश्च शमं प्रयाति ॥

अर्थ—दंड, कसरत, बहुत चलना, अति मैथुन, अत्यंत जागना, बहुत शीतल जल पीना, कांगनी, मूंग, अरहर, कोदों, अत्यन्त रूखे पदार्थ के सेवन से और अध्यशन (भोजन के ऊपर भोजन), लकड़ी आदि के लगने से, कपेली, कडवी, भिजा अन्न, जिस में अंकुर निकस आये हों, विरुद्ध क्षीर मछली आदि, सूखा मांस, सूखा शाक (कचरिया आदि) इन के सेवन करने से, मल, मूत्र, शुक्र और अधोवायु, इन के वेग को रोकने से, शोक से, उपवास (व्रत) के करने से, अत्यन्त हँसने से, बहुत घोलने से, कोप को प्राप्त भई जो वात सो बढ़कर हृदय, पसवाडा, पीठ, त्रिकरथान, श्त्रस्यान में शूल को करे और वह भोजन पचने के पीछे प्रदोषकाल में,

बर्षाकाल में, शीतकाल में इन दिनों में शूल अत्यंत कोप करे और वारंवार कोप होय, मलमूत्र का अवरोध, पीडा और भेद ये लक्षण वातशूल के हैं तथा स्वेदन और अभ्यंजन तथा मर्दन इत्यादिक से और चिकने गरम अन्न से यह शूल शांत होय है ॥

वातशूल की चिकित्सा

ज्ञात्वा तु वातजं शूलं स्नेहस्वेदैरुपाचरेत् ॥ पायसैः कृशरा-
पिंडैः स्निग्धैर्वा पिशितोत्कटैः ॥ आशुकारी हि पवनस्तस्मात्तं
त्वरया जयेत् । तस्य शूलाभिपन्नस्य स्वेद एव सुखावहः ॥

अर्थ—वादी से उत्पन्न हुए शूलरोग में स्नेहपान अथवा पसीने निकालने, खीर, खिचड़ी, स्निग्ध जिस में मांस के पदार्थ अधिक हों ऐसा आहार करना इत्यादिक उपाय करे. तथा प्राणी को तत्काल वादी नष्ट करनेवाली है इस कारण इस को शीघ्र जीते बहुधा शूल से दुखी मनुष्य पसीने निकालने से सुखी होवे ॥

वातशूल में यूष

वातात्मकं हंत्यचिरेण शूलं स्नेहेन युक्तस्तु कुलित्थयूषः ।
ससैंधवव्योपयुतः सलावः सहिंयुसौवर्चलदाडिमाढ्यः ॥

अर्थ—अंड के तेल से युक्त कुलथी का मंड, त्रिकुटे का चूर्ण, सैंधानिमक, लवा पक्षी का मांस, हींग, संचरनिमक और अनारदाना इन को मिलायके पीवे तो वातात्मक शूल तत्काल नाश होय ॥

दशमूलादि काथ

तैलमेरंडजं वापि दशमूलस्य वारिणा ।
पीतं निहन्ति साटोपं हिंयुसौवर्चलान्वितं ॥

अर्थ—दशमूल के काठे में अंडी का तेल, हींग और संचरनिमक डालके पीवे तो पेट का फूलना और शूल इन को नाश करे ॥

विश्वादि काठा

विश्वमेरंडजं मूलं काथयित्वा शृतं पिबेत् ।
हिंयुसौवर्चलोपेतं सद्यः शूलनिवारणम् ॥

अर्थ—सोंठ और अंड की जड़ इन के काठे में हींग और संचरनिमक डालके देवे तो तत्काल शूल रोग को नाश करे ॥

बलादि काथ

बलापुनर्नवैरंडबृहतीद्वयगोक्षुरैः ।

काथः सर्हिगुलवणः पीतो वातरुजं जयेत् ॥

अर्थ—बला, पुनर्नवा, अंडी, कटेरी, बडी कटेरी और गोखरु इन के काठे में हींग और निमक मिलायके पीवे तो वातशूल का नाश होय ॥

वातशूल पर कल्क

तुषवारिविनिष्पिष्टतिलकल्कस्य पोटली ।

भ्रामिता जठरोर्ध्वं चेन्मुहुः शूलं विनाशयेत् ॥

अर्थ—धानके तुष, जल और तिल इन को एकत्र पीसके पोटली बनाय लेवे फिर इस को पेट पर फेरे तो शूल को नाश करे ॥

बीजपूरस्वरस

सुपक्वबीजपूरस्य रसः संधवमिश्रितः ।

पीतः पथ्याशिनो हंति हृच्छूलमतिदारुणम् ॥

अर्थ—उत्तम पके हुए बिजोरे के रस में संधानिमक डालके पीवे और पथ तथा योग्य अन्न भक्षण करे तो अतिदारुण हृदय का शूल नाश होय ॥

तुंबरुआदि चूर्ण

तुंबरुस्यभयाहिंशुपौष्करं लवणत्रयम् ।

पिवेद्यवांबुना वातशूलगुल्महरं परम् ॥

अर्थ—तुंबरु, हरड, हींग, पुहकरमूल, संधानिमक, विडानिमक और कचियानिमक इन के चूर्ण को जों के काठे के साथ देवे तो वातशूल और गोला इ को नष्ट करे ॥

हरीतक्यादि चूर्ण

हरीतकी चातिविषा हिंशु सौवर्चलं वचा । गालितेंद्रयवास्तुल्या

भक्षयेदुष्णवारिणा ॥ कर्पकमनुपानं स्याद्वातशूलहरं परम् ॥

अर्थ—हरड, अतीस, हींग, संचरनिमक, वच और इन्द्रजों इन का समान भाग चूर्ण गरम जल के साथ १ तोले देवे तो उष्ण वातशूल को नाश करे ॥

सौवर्चलाद्य चूर्ण

सौवर्चलाम्लवेतसविडलवणयुतससैधवातिविषा ।

त्रिकटुकं बीजपुररसान्वितमशितं गुरुगुल्मशूलहरम् ॥

अर्थ—संचरनिमक, अमलवेत, विडनिमक, सैधानिमक, अतीस और त्रिकुटा इन के चूर्ण को बिजोरे के रस से देवे तो गोला और शूल इन का नाश करे ॥

उशीराद्य चूर्ण

उशीरं सैधवं हिंयु मूलमेरंडजं समम् ।

वातशूलं निहन्त्येव भुक्तं तप्तेन वारिणा ॥

अर्थ—खस, सैधानिमक, हींग और अंड की जड़ इन का समानभाग ले चूर्ण करे. गरम जल के साथ पीवे तो वातशूल को नाश करे ॥

श्वेतएरंडादिचूर्ण

श्वेतैरंडशिफाहिंयुसैधवं समचूर्णितम् ।

तप्तेन वारिणा भुक्तं वातशूलहरं परम् ॥

अर्थ—सपेद अंड की जड़, हींग और सैधानिमक सब समानभाग ले चूर्ण करे. गरम जल से पीवे तो वात के शूल को नाश करे ॥

मंदारमूलिकाद्य चूर्ण

मंदारमूलिकाचूर्णं भुक्तं दुग्धेन मिश्रितम् ।

वातशूलहरं देवीमूलं वा कर्णगोद्भवम् ॥

अर्थ—मंदार की जड़ का चूर्ण दूध से देवे तो वातशूल को नाश करे अथवा सहदेई की जड़ अथवा गोकर्णी की जड़ वात के शूल को नाश करे ॥

यवान्यादि चूर्ण

यवानी सैधवं हिंयु क्षारः सौवर्चलाभया ।

पिबेत्कोष्णांबुना वातोद्भवशूलनिवृत्तये ॥

अर्थ—अजमायन, सैधानिमक, सोरा, संचरनिमक और हरड इन का चूर्ण करके गरम जल के साथ पीवे तो वातशूल का नाश होवे ॥

करंजाद्य चूर्ण

करंजसौवर्चलनागराणां सरामठानां समभागिकानाम् ।

चूर्णं कदुष्णेन जलेन पीतं समीरशूलं विनिहंति सद्यः ॥

अर्थ—कंजा, संचरानिमक, साँठ, हींग इन को समानभाग ले चूर्ण करे इस को गुनगुने जल के साथ सेवन करे तो वातशूल को तत्काल नाश करे ॥

गुडूच्यादि चूर्ण

पीतमुष्णांभसा चूर्णं गुडूचीमरिचोद्भवम् ।

हृच्छूलं वातशूलं च हंतिपथ्याशनो नरः ॥

अर्थ—गिलोय और काली मिरच इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे और पथ्य से रहे तो हृदयशूल तथा वातशूल इन को नाश करे ॥

प्रकारांतर

मातुलिंजरसं चूर्णं गुडूचीमरिचोद्भवम् ।

हृच्छूलं हंति वेगेन पीतं शीतेन वारिणा ॥

अर्थ—गिलोय और काली मिरच इन के चूर्ण को विजोरेके रस से अथवा शीतल जल से देवे तो बहुत जल्दी हृदय का शूल नाश होय ॥

उशीरादि चूर्ण

उशीरं पिप्पलीमूलं चूर्णं कृत्वा समांशतः ।

गोघृतेन समं पीतं हंति हृच्छूलमुल्वणम् ॥

अर्थ—खस और पीपरामूल इन का समानभाग चूर्ण कर गौ के घी में मिलायके राय तो अतिकठिन हृदय का शूल नाश होय ॥

सुवर्चलादि चूर्ण

सुवर्चलाभया हिंशुरजमोदा च सैंधवम् ॥

स्वर्जां यवोद्भवः क्षारः पयोसूक्तं च शूलहृत् ॥

अर्थ—संचरानिमक, हरड, हींग, अजमोदा, सैंधानिमक, सजीखार और जवार इन का चूर्ण दूध और कांजी में मिलायके पीवे तो शूलरोग को नाश करे ॥

प्रकारांतर

सुवर्चला जीरकमम्लवेतसं समं त्रयं दशमरीचचूर्णकम् ।

सवीजपूरस्य रसेन भावितं जलेन पीतं खलु वातशूलनुत् ॥

अर्थ—सोरा, जीरा और अमलवेत ये समानभाग ले तथा काली मिरच का चूर्ण दशगुना इस प्रकार लेकर इस में विजोरे के रस की भावना देकर जल के साथ खाय तो वातशूल का नाश करे ॥

एरंडमूलादि चूर्ण

एरंडमूलं तुंबरुविडलवणसुवर्चलाभया ।

हिंगुरेतैरंबुना पीतैर्न याति शूलं च गुरुगुल्मम् ॥

अर्थ—अंड की जड़, धनिया, विडनिमक, सोरा, हरड और हींग इन के चूर्ण को जल से पीवे तो शूल और गोला इन का नाश करे ॥

सौवर्चलादि गुटिका

सौवर्चलाम्लिकाजाजिमरीचैर्द्विगुणोत्तरैः ।

मातुलिंजरसैर्बद्धा गुटिका वातशूलहृत् ॥

अर्थ—संचरनिमक, इमली, जीरा और काली मिरच ये प्रत्येक द्विगुणोत्तर वृद्धि के क्रम से लेवे सब को विजोरे के रस में घोटके गोली बनाय लेवे यह वातशूल का नाश करे है ॥

विल्वादि गुटिका

विल्वैरंडतिलैः कृत्वा गुटिकाश्चाम्लपेपिताः ।

वातशूलोपशान्त्यर्थं प्रयुंज्यादुष्टया तथा ॥

अर्थ—बेल, अंड की जड़ और तिल इन का चूर्ण नीबू के रस में खरल करके गोली बनावे. इस को लघु मेंढासिंगी के रस में देवे तो वातशूल को शांति करे ॥

सोमाग्निमुखरस गुटि

समांशं पंचलवणं दत्त्वाद्रकजले पचेत् ।

दिनं पक्षं ततः कुर्याद्गुटिका चणमात्रका ॥

भक्षयेद्वातशूलार्तः सोमाग्निमुखनामकः ॥

अर्थ—पांचों निमक समान भाग लेवे सब को अदरख के रस में पंद्रह दिन चनावे. फिर इस की चने के बराबर गोली करके वातशूलरोगी को देवे इस का सोमाग्निमुख यह नाम है ॥

मृगशृंगोद्भव भस्म

बहुशाखं तु यत् शृंगं शृहीत्वा तन्मृगोद्भवम् ॥

अंतर्धूमं विदग्धं तद्भस्म कर्पं घृतैर्लिहेत् ॥
वातशूलहरं सिद्धं जयंतीं वा गुडैर्लिहेत् ॥

अर्थ—सावर के सींग को अग्नि में भूनके भस्म कर ले यह भस्म १ तोले को घी में मिलाय अथवा अरनी के रस और घी के साथ अथवा गुड के साथ सेवन करे तो वात के शूल को नाश करे ॥

अग्निमुख रस

रसवलिगगनाकै वेतसाम्लं विपं स्यात्सवरमिति पृथक् तद्भावये-
दस्रमेतैः ॥ कनकभुजगवल्लीकंटकारीजयाद्रिः कनकशमिक-
वासाऋद्धिरास्तांबुपूरैः ॥ अरुणदशशशाकैर्मातुलान्याथ योज्यैः
पटुगण इह तुल्यो भावयेदारद्रकाद्रिः ॥ दहनवदनसंज्ञो वल्ल-
मात्रो निहंति प्रवलपवनशूलं तद्विकारानशेषान् ॥ शिवावचा-
हिंशुविपाकलिंगरुचकं समम् ॥ कर्पमुष्णांबुना सेव्यमनुपानं हि
शूलिभिः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, अश्रक, ताम्र, अमलवेत, सिंगिपाविप, हरड, बहेडा, आंबला, और पांचों निमक ये समान भाग लेवे. इन को घतुरे, पान, कटेरी, भांग, पलास, छोकरा, अडूसा, ऋद्धि, रासना, लाल ओंजा, कपूर, भांग. और अदरस का रस इन को नित्य एक एक भावना देवे तो यह अग्निमुख रस एक वल्ल देने से वातशूल और वातविकार इन को नाश करे इस का अनुपान हरड, वच, हींग, अतीस, कूडा की छाल और निमक इन औषधों को समान भाग चूर्ण करके यह १ तोले चूर्ण से देवे ॥

उदयभास्कर रस

भस्म सूतं मृतं चाभ्रं शिलागंधकतालकम् ॥ हिंशुकं कुष्ठमुस्तं
च तुल्यं चूर्णं विभावयेत् ॥ शुद्धार्कमत्तनिर्गुडीमहाराम्राद्रवैः
पृथक् ॥ प्रतिदिनं द्रवैर्भाव्यं शुष्कं तद्गोलकीकृतम् ॥ वस्त्रे वद्धा
मृदा लेप्यं शुष्कं कृत्वा पुटे पचेत् ॥ चतुर्धा वस्तमूत्रेण समा-
दाय विचूर्णयेत् ॥ द्वौ गुंजे घृतशुंठीभ्यां लेह्यो ह्युदयभास्करः ॥

वातशूलप्रशांत्यर्थं तिलक्षारं सकुष्ठकम् ॥ मधुना लेहयेचानु-
शूलं वा काकतुंडकम् ॥

अर्थ—पारदभस्म, अभ्रकभस्म, मनसिल, गंधक, हरताल, हींग, मुरदासिंग और नागरमोथा ये समान भाग ले इन का चूर्ण करके इस में थूहर, आक, धतूरा, निर्गुडी और रासना इन के रस में एक एक दिन खरल कर गोला बनाय ले उस को सुखायके फिर बकरी के मूत्र में खरल करे और फिर प्रथम कही हुई औषधों की पुट देवे इस प्रकार चार पुट देवे. फिर इस में से २ रत्ती यह उदयभास्कररस धी और सोंठ के चूर्ण से देवे अथवा वातजन्य शूल पर तिल के खार कूठ और सहत इन के साथ देवे अथवा काकडोडीके चूर्ण के साथ देवे ॥

नाभिशूलपर लेप

नाभिलेपाज्येच्छूलं मदनं कांजिकान्वितम् ।

विल्वैरंडतिलैर्वापि पिष्टैरम्लेन पोटली ॥

अर्थ—मैनफल को कांजी में पीस उस का टुंडी पर लेप करे अथवा बेलगिरी अंडी इन को बिजोरे के रस में खरल कर पोटली बनाय ले इस में सेक करे तो शूल दूर होय ॥

वातशूलपर लेप

राजिकाशिष्टुकल्कं च गोतक्रेण च पेपितम् ।

तेन लेपेन हंत्याशु शूलं वातसमुद्भवम् ॥

अर्थ—राई और सहजने की छाल इन को गौ की छाछ में पीसके लेप करे तो वातशूल को नाश करे ॥

मृत्तिकासेक

मृत्तिकां सजलां पाकात् घनीभृतां पटे क्षिपेत् ।

कृत्वा तत्पोटलीं शूली तथा स्वेदं विधापयेत् ॥

अर्थ—मिट्टीको जलमें सानके औटावे. जब गाढी हो जावे तब इस की कपडे में पोटली बांधके पेटको सेक के पसीने निकाले तो शूल होना बंद होय ॥

नाभिलेप

हिंगुतैलं सलवणं गोमूत्रेण विपाचितम् ।

नाभिस्थाने प्रदातव्यं यस्य शूलं सवेदनम् ॥

अर्थ-हींग, तेल और सैंधानिमक इन को गोमूत्र में डालके पचावे फिर इस का नाभि पर लेप करे तो पीडायुक्त शूल का नाश होय ॥

पैत्तिकशूलनिदान

क्षारातितीक्ष्णोष्णविदाहितैलनिष्पावपिण्याककुलित्थयूपैः ।
कट्म्लसौवीरसुराधिकारैः क्रोधानलायासरविप्रतापैः ॥ ग्राम्या-
तियोगादग्नेर्विदग्धैः पित्तं प्रकुप्याति करोति शूलम् । तृष्णो-
हदाहार्तिकरं हि नाभ्यां सस्वेदमूर्च्छाभ्रमचोषयुक्तम् ॥ मध्यंदिने
कुप्यति चार्धरात्रे विदाहकाले जलदात्यये च । शीते च शीतैः
समुपैति शांतिं सुस्वादुशीतैरपि भोजनैश्च ॥

अर्थ-यवक्षार आदि खार, मरिच आदि तीखी और गरम विदाहकारक वांछ और करील आदि, तेल, सिंघी, खल, कुलथी के यूप से, कडुवा, खट्टा, सौवीर (मद्यविशेष), सुराधिकार (कांजी इत्यादिक), क्रोध से, अग्नि के समीप रहने से, परिश्रम से, सूर्य की तीव्र धूप में डोलने से, अतिमैथुन करने से, विदाहकारक अन्न आदि इन कारणों से पित्त कुपित होकर नाभिस्थान में शूल उत्पन्न करे वह शूल तृषा, मोह, दाह, पीडा इन को करे और पसीना, मूर्च्छा, भ्रम, शोष इन को करे, दुपहर के समय, मध्यरात्रि में, अन्न के विदाहकाल में, शरदकाल में शूल अधिक होय शीतकाल में शीतल पदार्थ से और अत्यंत मधुर (मीठा) शीतल अन्न से यह शूल शांति होय ॥

सामान्यचिकित्सा

वामयेत्पित्तशूलार्तं पटोलेश्वरसादिभिः ।

पश्चाद्विरेचयेत्सम्यक् पित्तगुल्मविरेचनैः ॥

अर्थ-पित्तशूलपीडित मनुष्य को पडवल, ईस का रस इत्यादिकों करके वमन करावे फिर पित्तगुल्म पर जो रेचन (दस्तपर औषधी) कही है उन से जुल्लाव देके शुद्ध करे ॥

पित्ते प्रशस्ताः सलिलेवगाहा भांडानि कांस्यानि जलभृतानि ॥

निधाय शूलोपरि शीतलानि प्रशामयेच्छूलमनेन तज्ज्ञः ॥

अर्थ-पित्तशूल होने से जलमें गोते लगावे. तथा कांसे के पात्र में जल भरके शूल पर धारण करे तो इस की शांति होय ॥

नाभी के ऊपर पात्र धरना
मणिरजतताम्राणां भाजनानि गुरुणि च ।
तोयेन परिपूर्णानि शूलस्योपरि धारयेत् ॥

अर्थ—स्फटिकादि पाषाणों का वा रूपे का वा तांबे का पात्र लेकर उस में जल भरके जिस स्थान में शूल उत्पन्न होता है उस पर धारण करना. इस से शूल रोग का नाश होता है ॥

सामान्ययत्न

विरेचनं पित्तहरं प्रशस्तं रसाश्च शस्ताः शशलावकानाम् ॥

अर्थ—पित्तशूल पर पित्तनाशक रेचन और ससे के मांस का अथवा लवापक्षी के मांस का रस पीना उत्तम कहा है ॥

शतावर्यादिकाथ

शतावरीसयष्ट्याह्वात्वात्वालकुशगोक्षुरैः । शृतशीतं पीवेत्तोयं
सगुडक्षौद्रशर्करम् ॥ पित्तासृग्दाहशूलघ्नं सद्यो दाहखजापहम् ॥

अर्थ—शतावर, मूलहठी, विरेटी, डाभ की जड़ और गोखरू इन के काटे को शीतल होने पर उस में गुड अथवा खांड अथवा सहत डालके पीवे तो पित्तरक्त, दाह, शूल इन को नाश करे. तथा दाह को तत्काल शमन करे ॥

बृहत्यादिकाथ

बृहतीगोक्षुरैरंडकुशकाशेक्षुवालिकाः ।

पीताः पित्तभवं शूलं सद्यो हन्युः सुदारुणम् ॥

अर्थ—कटेरी, गोखरू, अंड की जड़, कुश, कांस और कसौंदी इन का काटा पीवे तो तत्काल शूलरोग को नाश करे ॥

त्रिफलादिकाथ

त्रिफलारग्वधकाथः शर्कराक्षौद्रसंयुतः ।

रक्तपित्तहरो दाहपित्तशूलनिवारणः ॥

अर्थ—हरह, बहेडा, आवला मत्पेक १-२-३ भाग ले और अमलतास का गूदा ४ भाग इन चारों औषधों का काटा करके उस में मिथी और सहज डाल के पीवे तो रक्तपित्त और दाह तथा पित्तशूल को दूर करे ॥

त्रिफलादिकाथ

त्रिफलारिष्टयष्ट्याह्वकटुकारग्वधैः शृतम् ।

पाययेन्मधुसंमिश्रं दाहशूलोपशांतये ॥

अर्थ—त्रिफला, नीम की छाल, मुलहठी, कुटकी और अमलतास का गूदा इन का काढा कर उस में सहत डाल के पीवे तो पित्तशूल नष्ट होय ॥

त्रायमाणादि काथ

त्रायमाणकणामूलं त्रिवृता मधुकं शिवा ।

गिरमाला शिवा द्राक्षा कुरंतः पित्तशूलहृत् ॥

अर्थ—त्रायमाण, पीपलामूल, निसोय, मुलहठी, हरड, अमलतास का गूदा, आंवले दास और पियावांसा इन का काढा करके पीवे तो पित्तशूल को नाश करे ॥

शतावर्यादिरस

शतावरिरसं क्षीरं क्षौद्रं प्रातः पिबेन्नरः ।

दाहशूलोपशांत्यर्थं सर्वं पित्तामयापहम् ॥

अर्थ—शतावर के काटे में दूध और सहत डालके प्रातःकाल पीवे तो दाह और शूलरोग की शांति होय । तथा यह सर्व पित्त के रोगों का नाशक है ॥

धात्र्यादिचूर्ण

प्रलिह्यात्पित्तशूलघ्नं धात्रीचूर्णं समाक्षिकम् ।

सगुडं घृतसंयुक्तं भक्षयेद्वा हरीतकीम् ॥

अर्थ—आंवले के चूर्ण को सहत के साथ चाटे अथवा हरड का चूर्ण गुड और भी इन के साथ सेवन करे तो पित्तशूल नाश होय ॥

धात्र्यादिस्वरस

धात्र्या रसं विदार्या वा त्रायंत्या गोस्तनांबु वा ।

पिवेतसशर्करं सद्यः पित्तशूलनिवारणम् ॥

अर्थ—आंवले का अथवा विदारिकंद का अथवा मेंदी का अथवा दास का रस मिश्री डालके पीवे तो तत्काल पित्तशूल का निवारण करे है ॥

कफजन्य शूल के लक्षण

आनूपवारिज्जकिलाटपयोविकारैर्मसैक्षुपिष्टकृशरातिलशङ्कु-

लीभिः । अन्यैर्वलासजनकैरपि हेतुभिश्च श्लेष्मा प्रकोपमुपग-
म्य करोति शूलम् ॥ हृष्टासकाससदनाऽरुचिसंप्रसेकैरामाशये
स्तिमितकोष्ठाशिरो गुरुत्वैः । भुक्ते सदैव हि रुजं कुरुतेऽतिमात्रं
सूर्योदये च शिशिरे कुसुमागमे च ॥

अर्थ-जल के समीप रहनेवाले पक्षीन का मांस, मछली आदि मांस, दही,
घृत, मक्खन आदि दूध के विकार, मांस, ईश का रस, पिप्पा अन्न, खिचड़ी, तिल,
पुरी, कचौड़ी आदि और कफकारक पदार्थ खाने से कफ कुपित होकर आमाशय
में शूलरोग को प्रगट करे उस में सूखी रद, खांसी, ग्लानि, अरुचि, मुँह से लार
गिरे, बद्धकोष्ठता, मस्तक भारी हो ये लक्षण होंय. भोजन करते समय पीडा होय,
सूर्योदय के समय, शिशिरऋतु में और वसंतकाल में शूल बहुत होय ॥

कफशूल के सामान्य चिकित्सा

शाल्यत्रं जांगलं मांसमरिष्टं कटुकं रसम् ।

मद्यानि जीर्णगोधूमं कफशूले प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-साली चावलों का भात, जंगली जीवों का मांस, लहसन, परवल, मांसद्रव,
मद्य और पुराने गेहूँ इन को कफशूल पर योजना करे ॥

एरंडमूलादि काय

एरंडमूलं द्विपलं जलेष्टगुणिते पचेत् ।

तत्काथो यावशूकाव्यः पार्श्वहृत्कफशूलहा ॥

अर्थ-अंड की जड़ ८ तोले को ले अष्टगुने जल में डालके अष्टावशेष काटा
करे फिर इस में जवातार डालके पीवे तो पसवाहों का दर्द, छाती का दर्द और
कफ के शूल को नष्ट करे ॥

वीजपूररस

वीजपूररसोपेतो गुडः श्लेष्मसमुद्रवम् ।

हृद्रोगं वातशूलं च गुल्मं वा हंति निश्चितम् ॥

अर्थ-बिजौर के रस में गुड डालके देवे तो कफ से उत्पन्न हुआ शूल, हृदय
रोग, वातशूल और गोला इन को नाश करे ॥

कटफलादि चूर्ण

कटफलं पौष्करं शृंगी मुस्तकं कटुकं शठी । समस्तानेकशो

वापि सूक्ष्मघूर्णानि कारयेत् ॥ आर्द्रकस्वरसक्षौद्रैर्लिङ्गात्कफ-
विनाशनम् । शूलानिलारुचिच्छर्दिकासश्वासक्षयापहम् ॥

अर्थ—कायफल, पोहकरमूल, काकडासिंगी, नागरमोथा, सोंठ, काली मिरच, पीपल, कजूर ये नौ औषधी पृथक् २ कूटे अथवा सब को एकत्र कूटके चूर्ण करे फिर अदरक के रस से अथवा सहत के साथ सेवन करे तो इस चूर्ण के प्रभाव से कफ दूर होवे. शूल और वायु, अरुचि, वमनरोग, खांसी, श्वास, क्षयरोग ये दूर हों ॥

बृहत्कट्फलानि चूर्ण

कट्फलं पौष्करं कृष्णा शृंगी च मधुना सह ।

श्वासकासज्वरहरः श्रेष्ठो लेहः कफांतकृत् ॥

अर्थ—कायफल, पोखरमूल, पीपल, काकडासिंगी इन चारों औषधों को चूर्ण करके सहत से देवे तो श्वास, खांसी और ज्वर ये दूर होवे. जिस किसी को कफ अत्यंत दुःख देता हो उस के वास्ते यह चूर्ण बहुत उत्तम है ॥

पथ्यादि चूर्ण

चूर्णं पथ्या वचा वह्नि कटुरोहिणिरुक्त्समम् ।

श्लेष्मशूलं हरत्याशु पीतं गोमूत्रसंयुतम् ॥

अर्थ—हरड, वच, चित्रक की छाल, कुटकी इन सब का चूर्ण करके १ तोले के अनुमान ले गोमूत्र के साथ पीवे तो शीघ्र कफशूल को नाश करे ॥

मुस्तादि चूर्ण

मुस्तं वचा तिक्तकरोहिणी च तथाभया निर्दहनं च तुल्यम् ।

पिबेत्तु गोमूत्रयुतं कफोत्थे शूले तथा यस्य च पाचनार्थम् ॥

अर्थ—नागरमोथा, वच, कुटकी, हरड और भिलाए इन को समानभाग लेकर चूर्ण करे फिर इस गोमूत्र से पीवे तो कफजन्य शूल का नाश करे तथा आम को पचावे ॥

लवणादि चूर्ण

कफप्रकोपशूलार्तमवश्यमुपवासयेत् । लवणत्रितयं हिंशु पंच-

कोलयुतं पिबेत् ॥ सुखोष्णानांभसा पीतं कफशूलहरं परम् ॥

अर्थ—कफ के कोप से यदि शूल प्रगट होवे तो अवश्य उपवास करे और सेंधानिमक, बिडनिमक, संचरनिमक, हींग, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इन के चूर्ण को गरम २ जल के साथ देवे तो कफशूल को हरण करे ॥

सर्वांगसुंदर रस

मृतं सूतं मृतं ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम् । चूर्णयेत्त्वणं पंच
एतद्दशकतुल्यकम् ॥ मृतं स्वर्णं च निक्षिप्य सूतांतर्दशमांश-
कम् । सूततुल्यं वत्सनागं चूर्णं भाव्यं दिनावधि ॥ विपमुष्ट्या
जया वासा विजया रक्तशाकिनी । बर्बरी च महाराष्ट्रिद्रवैध-
चूरजैस्तथा ॥ रुध्वा तुपपुटे पाच्यं समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
सर्वांगसुंदरो नाम रसो गुंजाचतुष्टयम् ॥ भक्षयेद्धृतशुंठीभ्यां
हन्ति गुल्मं सशूलकम् ॥

अर्थ—पारे की भस्म, तामे की भस्म, मनसिल, सुवर्णमाक्षिक, हरताल, निमक, सुहागा, सेंधानिमक, विडनिमक और संचरनिमक ये दश औषध समानभाग लेवे, प्रथम पारे का दशांश स्वर्णभस्म पारे में मिलाय के घोंटे तथा पारे की समान सिंगियाविप लेवे. फिर इन सब को एकत्र करके उस में कुचला, अरनी, अडूसा, भांग, लाल नौरोपे का साग, बनतुलसी, जलपीपल और धत्रा इन प्रत्येक के रसों की अथवा इन के कादों की नित्य प्रति भावना देवे फिर इन की टिकिया बनाय शरावसंपुट में भरके तुषाग्रे देवे. जब खांगशीतल हो जावे सब निकाल लेवे. फिर संपुट में से युक्ति के साथ निकाल लेवे और खरल करे इस को सर्वांगसुंदर रस कहते हैं इस चार रत्नी रस को धी और साँठ इन के संग देवे. तो कफशूल और गोले का रोग इन को नाश करे ॥

आमशूल

आटोपह्लासवमीगुरूत्वं स्तैमित्यमानाहकफप्रसेकैः ।

कफस्य लिंगेन समानलिंगमामोद्भवं शूलमुदाहरन्ति ॥

अर्थ—पेट में गुडगुडाहट शब्द होय, उवाकिआँका आना, रद, देह भारी, मंदता अफरा, मुख से कफ का स्राव इन लक्षणों से तथा कफशूललक्षणों के समान ऐसे शूल को आमशूल कहते हैं ॥

आमशूल की सामान्य चिकित्सा

आमशूले क्रिया कार्या कफशूलविनाशिनी ।

सेव्यमामहरं सर्वं यद्यदग्निविवर्धनम् ॥

अर्थ—आमशूल पर कफशूलनाशक संपूर्ण क्रिया करनी चाहिये तथा आमनाशक और अग्नि को बढ़ानेवाले उपचार करे ॥

चित्रकादि काथ

चित्रकग्रंथिकैरंडशुंठीधान्यजलैः शृतम् ।

सहिंगु सैंधवविडमामशूलहरं परम् ॥

अर्थ—चित्रक, पीपरामूल, अंड की जड़, सोंठ और धनिया इन का काढा हींग और सैंधानिमक तथा विडनिमक ढालके पीवे तो अत्यंत शूल को नाश करे ॥

त्रिफलादिचूर्ण

तिक्ष्णायाम्बुर्णसंयुक्तं त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ।

प्रयोज्यं मधुसर्पिभ्यां सर्वशूलनिवारणम् ॥

अर्थ—राई और त्रिफला इन के चूर्ण को सहत और घी में मिळायके देवे तो सर्वप्रकार के शूल दूर हों ॥

दीप्यादिचूर्ण

दीप्यकं सैंधवं पथ्या नागरं च चतुःपलम् ।

चूर्णं शूलं जयत्याशु मंदस्याग्नेश्च दीपनम् ॥

अर्थ—अजमायन, सैंधानिमक, हरड, सोंठ ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे इन का चूर्ण करके सेवन करे तो शूल और मंदाग्नि इन को नाश करे ॥

विल्वमूलादि चूर्ण

मूलं वैलवं तथैरंडं चित्रकं विश्वभेषजम् ।

हिंगुसैंधवसंयुक्तं सद्यः शूलनिवारणम् ॥

अर्थ—बेलगिरी, अंड की जड़ और चित्रक की जड़, सोंठ, हींग, सैंधानिमक इन का चूर्ण करके सेवन करे तो तत्काल शूल को दूर करे ॥

दार्वादि लेप

दारुहैमवतीकुष्ठशताह्वाहिंगुसैंधवैः ।

आम्लपिष्टैः सुखोष्णैश्च लिपेच्छूलयुतोदरम् ॥

अर्थ—दारुहलदी, हरड, कूठ, शतावर, हींग और सैंधानिमक इन सब को छाल में पीस कुछ गरम करके पेट पर लेप करे तो शूल का नाश करे ॥

आमशूल पर

एरंडतैलं पद्मभागं लशुनस्य तथाष्टकम् ।

एकं हिंगु त्रिसिंधूत्थं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।

त्रिनिष्कं भक्षयेत्पश्चादामशूलप्रशांतये ॥

अर्थ-अंडी का तेल ६ लहसन ८ हींग १ सैंधानिमक ३ इस प्रकार भाग लेकर व को एकत्र मर्दन करके इसमें से १ तोले भक्षण करे तो आमशूल शांति होवे ॥

हिंम्वादि योग

हिंगुत्रिगुणसैधवं तस्माच्च शुद्धतैलमैरंडम् ।

तत्रिगुणरसोनरसं मुल्मोदावर्तशूलघ्नम् ॥

अर्थ-हींग १ भाग, सैंधानिमक ३ भाग अंडी का तेल ९ भाग, लहसन का रस २७ भाग, ये सब एकत्र करके चूर्ण करे यह गोला, उदावर्त इन को नाश करे ॥

कूष्मांडक्षार

कुष्मांडं तनु कृत्वा तु च्छित्वा घर्मे विशोपयेत् । स्थाल्यां नि-
क्षिप्य तत्सर्वं पिधानेन पिधाय च ॥ चुल्यां निवेश्य वह्निं च
ज्वालयेत्कुशलो जनः । यथा तन्न भवेद्द्रुस्म किं त्वंगारो दृढो
भवेत् ॥ तदा निर्वापयेच्छीतं चूर्णितं चूर्णयेत्तु तत् । मापद्रय-
मितं तावच्छुंठीचूर्णविमिश्रितम् ॥ जलेन भक्षयेन्नित्यं महाशू-
लाकुलो नरः । असाध्यमपि यच्छूलं तदप्येतेन शाम्यति ॥

अर्थ-पेठे को छील उस के बीजों को निकाल छोटे २ टुकड़े कतर लेवे उन को जल में धोकर घूप में सुखाय ले फिर उनके एक मिट्टी के पात्र में भरके मुख को ढक-
नेसे ढक देवे इस पात्र को चूल्हे पर चढाय नीचे अग्नि जलावे उन को कुशल वैद्य
इस प्रकार जलावे उत्तम कोले हो जावें किंतु वा जलके रास न हो जाय फिर उनको
बुझायके शीतल होनेपर चूर्ण कर लेवे. इसमें से दो मासके अनुमान ले और इतनीहि
सोंठ मिलावे. दोनोंको एककर गरम जल के साथ नित्य भक्षण करे तो असाध्यभी
शूलरोग इस त्वासे नष्ट होय ॥

द्वंद्वजशूललक्षण

वस्तौ हृत्कंठपार्श्वेषु स शूलः कफवातिकः ।

कुक्षौ हृन्नाभिमध्येषु स शूलः कफपैत्तिकः ॥

दाहज्वरकरो घोरो विज्ञेयो वातपैत्तिकः ।

अर्थ-वस्ति (मूत्रस्थान), हृदय, कंठ, पसवाडे इन ठिकाने शूल होय वो (कफ वातिक) जानना, कूख मे हृदय नाभि और पसवाडे इन में कफपित्त का शूल होय है, दाह ज्वर करनेवाला ऐसा भयङ्कर शूल होय वो वातपित्त का जानना ॥

द्वंद्वजशूलकी सामान्य चिकित्सा

द्वंद्वजं स्नेहयोगेन तत्रियोगेन सर्वजम् ॥

अर्थ-द्वंद्वज शूलपर स्नेहादिक दो योग योजना करे और त्रिदोषात्मक होय तो तीन योग योजना करे ॥

द्वंद्वजशूलपर काथ

निदग्धिकावृहत्यौ च कुशकाशेक्षुवालिकाः ।

श्वदंष्ट्रैरंडमूलं च वारिणा सह पाचयेत् ॥

पिवेत्सशर्करक्षौद्रं शूले पित्तानिलात्मिके ।

अर्थ-कटेरी, बही कटेरी, डाम, कांस, इक्षुवालिका कांसका भेद, गोखरू, अंड की जड़ इनके काढे में सहत डालके तथा मिश्री मिलायके पीवे तो पित्तवातात्मक शूल को नाश करे ॥

पटोलादि काथ

पटोलत्रिफलारिष्टैः शृतं क्षौद्रयुतं पिवेत् ।

पित्तश्लेष्मज्वरच्छर्दिदाहशूलोपशांतये ॥

अर्थ-पटोलपत्र, त्रिफला और नीम की छाल इन के काढे में सहत डालके पीवे तो पित्तश्लेष्म ज्वर, छर्दि, दाह और शूल इन को शांति करे ॥

द्राक्षादि काथ

द्राक्षाटरूपयोः काथः श्लेष्मपित्तरुजं जयेत् ।

पित्तश्लेष्मोद्भवं शूलं विरेकवमनैर्जयेत् ॥

अर्थ-दास और अडूसा इन का काढा कफपित्त शूल को पराजय करे और पित्त-श्लेष्मशूल रेचन तथा वमन कराने करके जीते ॥

एरंडमूलादि काथ

एरंडफलमूलानि बृहतीद्रव्यगोक्षुरैः । पर्णिन्यः सहदेवी च सिंह-

पुच्छी क्षुरालिका ॥ तुल्यैरेतैः शृतं तोयं यवक्षारयुतं पिवेत् ।

पृथग्दोषभवं शूलं हन्यात्सर्वभवं तथा ॥

अर्थ—अंडी, अंड की जड़, कटेरी, बड़ी कटेरी, गोखरू, शालिपर्णी, पृष्ठपर्णी, महावला, पिठवन, और क्षुरालिका इन सब औषधों को समान भाग ले काढा करे छानके जवाखार मिलायके देवे तो द्रंद्रज शूल का नाश करे ॥

लशुनकल्क

मद्येन नित्यं तु रसोनकल्कं प्रातः पिवेद्वातकफोत्थशूली ।
क्षारोदकं पिप्पलिसैधवाक्तं पीतं जयेदुर्जयमुग्रशूलम् ॥

अर्थ—वातकफ शूल पर लहसन के कल्क को मद्य के साथ प्रातःकाल पीवे। अथवा खारीजल में पीपल और सैधानिमक इन का चूर्ण डालके देवे तो यह शूल का नाश करे ॥

सन्निपातशूल के लक्षण

सर्वेषु दोषेषु च सर्वालिंगं विद्याद्भिषक् सर्वभवं हि शूलम् ।
सकष्टमेनं विपवज्रतुल्यं विवर्जनीयं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥

अर्थ—वातादि सर्व दोषों के लक्षण हुए होंय तो उस को सन्निपातज शूल कहते हैं। वह सन्निपातज शूल विष और वज्र इन के समान दुःसाध्य ऐसा वैद्यलों ने कहा है ॥

त्रिदोषशूलचिकित्सा

शङ्खचूर्णं सलवणं सहिगुव्योपसंयुतम् ।
लण्णोदकेन तत्पीतं शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ॥

अर्थ—शंखभस्म, सैधानिमक, हींग और त्रिकुटा इन का चूर्ण गरम जल के साथ पीवे तो त्रिदोष के शूल को नाश करे ॥

विदारिसयोग

विदारिदाडिमरसः सव्योपलवणान्वितः ।
क्षौद्रयुक्तो जयत्याशु शूलं दोषत्रयोद्भवम् ॥

अर्थ—विदारीकंद, और अनारदाना इन के रस में सोंठ, मिर्च, पीपल और निमक इन का चूर्ण और सहत डालके पीवे तो त्रिदोषजन्य शूल को नाश करे ॥

अक्षादिस्वरस

अक्षामलकशिवानां स्वरसः सुपक्वलोहजं च रसः ।
सगुहं यद्यपि युक्तं मुंचति शूलं त्रिदोषोत्थम् ॥

अर्थ—बहेडा, आंवले और हरड इन का रस और लोहभस्म इन में गुह डालके देवे तो त्रिदोषज शूल नाश होय ॥

वैश्वानरयोग

भाषितं मातुलिंगाम्ले ताभ्रं च मरिचं दिनम् । आर्द्रकस्य रसे
चैव विषं तुल्यं च चूर्णयेत् ॥ पिप्पली पिप्पलीमूलं युक्तं गुंजा-
द्रयं हितम् । हिंगू करंजबीजं च शुंठी लशुनमौषधम् ॥ एरंड-
तैलसंपिष्टं कर्पूरं भक्षयेदनु । योगो वैश्वानरो नाम शूलं हन्ति
त्रिदोषजम् ॥

अर्थ—तांबा, मिरच, सिंगिया विष, पीपल और पीपरामूल इन का समान चूर्ण
एकत्र कर बिजेरे के रस में तथा अदरक के रस में एक दिन खरल करके दो
रत्ती की मात्रा रोगी को देवे. इस के ऊपर हींग, कंजा के बीज, सोंठ, लहसन इन
को अंड के तेल में पीसके इस को एक तोले मात्रा देवे तो यह वैश्वानरयोग त्रिदो-
षजन्यशूल को नाश करे ॥

सर्वजशूलपरशास्त्रार्थ

वमनं लंघनं स्वेदः पाचनं फलवर्तयः ।

क्षारचूर्णानि गुटिकाः शस्यन्ते शूलनाशनाः ॥

अर्थ—वमन, लंघन, पसीने निकालने, पाचन, फलवर्ती अर्थात् मलशोधन करने
के वास्ते गुदा में तेल लगाके वाती डालते हैं वह, क्षारचूर्ण, गोळियें सब
शूलनाशक हैं ॥

वाते निरूहवस्तिश्च पित्ते क्षीरं विरेचनम् ।

कटुतिक्तकपायाश्च शूले वातकफोद्भवे ॥

अर्थ—वातशूल पर निरूहवस्ति, पित्तशूल पर दूध का जुलाब और वातकफोत्पन्न
शूल पर कटु, तिक्त और कपेडी औषध देवे ॥

शूले स्वरसमाह

शतावर्याश्च मधुना युक्तः शूलहरो रसः ॥

अर्थ—शतावरी का स्वरस सहत के साथ पीवे तो शूल को हरण करे है ॥

बीजपूरादिस्वरस

बीजपुररसः पानान्मधुक्षीरयुतो जयेत् ।

पार्श्वहृद्वस्तिशूलानि कोष्ठवायुं च दारुणम् ॥

अर्थ—बिजोरे का रस, दूध और सहत इन सब को मिलायके पी जावे तो कूल, उर और बस्तिस्थान के शूल को तथा कोठे की वायु को नाश करे ॥

मातुलुंगस्वरस

मातुलिंजरसं सर्पिः सहिंयु लवणान्वितम् । सुखोष्णं पाययेदेतद्वि-
द्विबंधानुलोमनम् ॥ कुक्षिहृत्पार्श्वशूलेषु वेदना चोपशाम्यति ॥

अर्थ—बिजोरे का स्वरस, घी, हींग और सैंधानिमक इन को एकत्र करके कुछ गरम २ पीवे तो मल को अनुलोम करे (निकाले) और कूल, हृदय और पसवाड़े इन ठिकाने की शूलव्यथा को शांति करे ॥

बृहत्यादिकाथ

रिंगणी दुल्लरी विल्वं बीजपुरांघ्रयोश्मभित् ।

गोक्षीरेणान्वितेरेतैः कृतः काथोऽतिशीतलः ॥

अर्थ—कटेरी, दुल्लरी, बेल और बिजोरा, इन की जड़ और पाषाणभेद लेकर इन का काटा करे उस में गौ का घी डालके शीतल करे. इस के पीने से शूल नाश होवे ॥

एलादिकाथ

एलाहिंयुवक्षारसैंधवप्रतिवासितः । पीत एरंडतैलेन कटि-
हृद्भवमुद्धतम् ॥ जाठरं नाभिशूलं च पृष्ठकुक्षिगतं तथा ।

शिरःकर्णाक्षिशूलं च नाशयत्यतिवेगतः ॥

अर्थ—इलायची, हींग, जवाखार और सैंधानिमक इन के काटे में अंडी का तेल डालके देवे. तो कमर, हृदय, उदर, नाभि, पीठ, कूल, मस्तक, कान और नेत्र इन स्थानों के शूल को बहुत जल्दी नाश करे ॥

मातुलुंगादिकाथ

मातुलिंजरसो वापि शियुक्काथस्तथा परः ।

सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृत्स्तिशूलहा ॥

अर्थ—बिजोरे का रस अथवा सहजने का काटा जवाखार और सहत इन के साथ पीवे तो कूल, उर और बरती इन स्थान के शूल को नाश करे ॥

अजमोदादि काथ

अजमोदा वचा हिंयु लवणं विडपूर्वकम् । शुंठी सुवर्चला कृष्णा

दुछारी रिंगणी तथा ॥ बीजपूरस्य बीजानि तुंवरुं समभागतः ।

एतत्क्वाथस्य पानेन यांति शूलान्यनेकधा ॥

अर्थ—अजमायन, वच, हींग, बिडनिमक, सोंठ, सोरा, पीपल, दुछारी, कटेरी, बिजोरे के बीज, चिरफल ये समान भाग लेवे इन का काढा करके पीवे तो अनेक शूल दूर हों ॥

एरंडादिकाथ

एरंडविल्वबृहतीद्वयमातुलिंगपापाणभिन्निकटुमूलकृतः कपायः ।

सक्षारहिंशुलवगोरुबुतैलमिश्रः श्रोण्यूरुमेद्दहृदयस्तनरुक्षु पेयः ॥

अर्थ—अंड, वेल, बड़ी कटेरी, छोटी कटेरी, बिजोरा इन की जड़ और पापाण-भेद, सोंठ, मिरच, पीपल इन सब का काढा जवाखार, हींग, सैधानिमक, अंडी का तेल इन को मिलायके पीवे तो कमर, ऊरु, लिंगभंग, हृदय, स्तन इन स्थानों में होनेवाले शूल को नाश करे ॥

त्रिफलादि काथ

त्रिफलाकाथगोमूत्रक्षौद्रक्षीररसैः पृथक् ।

एरंडतैलद्विगुणैर्हितः शूलनिवारणे ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आंवला, इन के काढे में गोमूत्र, सहत, दूध और पापाण भेद इनमें से किसी एक पदार्थ को एक भाग और अंडी का तेल दो भाग एकत्र करके पीवे तो शूलरोग पर हित है. अर्थात् शूलरोग को दूर करे ॥

पथ्यादि काथ

पथ्यासशक्यवपुष्करमूलयुक्ता निःक्वाथ्य हिंशुजटिलातिविपा-

समेतम् । पीत्वा सुखोष्णमथ वातकृतं हि शूलमामोद्भवं कफ-

कृतं च निहंति तूर्णम् ॥

अर्थ—हरड, इन्द्रजो, पुहकरमूल, हींग, जटामांसी और अतिसि इन का काढा गरम सुहाता २ पीवे तो आम से अथवा कफ से उत्पन्न शूल नाश होय ॥

शूलमात्रपर यवागू

भ्रष्टा दालीकृता मुद्गाः शालिलाजाश्च सैधवम् । धान्यं जीरं जलं

स्निग्धं यवागूरिति कथ्यते ॥ पाचिता क्षुत्करी शूलनाशिनी

च त्रिदोषहृत् । गुर्विणी कृशवृद्धानां बालानां च हितावहा ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरेः । यवागूः सेविता सिद्धा
दीपनी पाचनी हिता ॥

अर्थ—भुनी हुई मूंग की दाल, शाली चावलों की खील, सेंधानिमक, धनिया और जीरा ये डालके जल में यवागू तयार करे। यह क्षुधाकारक और शूल तथा त्रिदोष को नाश करे तथा गरोदर स्त्री, बालक और वृद्ध इन को हितकारी है पीपल, पीप-रामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इन की यवागू करे। इस को पीवे तो दीपन और पाचन करे ॥

रेचन के वास्ते बत्ती

अगारधूमविडरामठदंतिकृष्णाकंकुपसैधवगुडत्रिफलावृता च ।
वर्तिर्जलेन च गवां हि गुदे नियुक्ता विट्प्रथिजातविरुजं
क्षिपति क्षणेन ॥

अर्थ—घर का धूँआ, विडनिमक, होंग, दंती, पीपल, मुरदासिंग, सेंधानिमक, गुड और त्रिफला इन को पीसके बत्ती बनावे। इस को गोमूत्र में डबोयके गुदा में रखे तो मल की गांठ से जो इस प्राणी को दुःख होता है उस को क्षणभर में नाश करे ॥

अश्वीपुरीपरसयोग

तुरंगीपुरीपोदकं हिंगुयुक्तं महाशूलहारि प्रदिष्टं भिषग्भिः ।
तथा हिंगुविश्वाविडैर्वापितोसौ कुलित्थोद्भवोत्राकपायः प्रदिष्टः ॥

अर्थ—घोड़ी की लीद को निचोडके रस निकाल लेवे उस में हींग मिलायके पिवावे अथवा कुलथी के काटे में हींग, सोंठ और विडनिमक इन का चूर्ण डाल के देवे। तो महान् शूलरोग का नाश करे ॥

विश्वजलादिकाथ

विश्वजलं रुवुतैलं विमिश्रं हिंगुयुतं रुचकेन च युक्तम् ।

पीतमपि त्वरितं निहंति शूलममूलभिदं हि मया न कथितम् ॥

अर्थ—सोंठ के काटे में अंडी का तेल, हींग और संचरनिमक डालके पीवे तो समूल शूल को नाश करे यह अमूल (अर्थात् अप्रमाण) मैंने नहीं कहा ॥

कुबेरादि चूर्ण

अक्षं नागररामठाभयसमं मञ्जाकुबेराक्षजा तुल्या पुष्करतैलप-

कमृदिता सेवेत्सदा यो नरः । नानास्थानविशालशूलशमनं
ब्रह्मास्त्रमेतत्परं सत्यं श्रीजयदेवसूनुनृहरेर्वक्रांबुजाग्निःसृतम् ॥

अर्थ—बहेडा १, सोंठ १, हींग १, हरड १ और लता करंज की गोली ३ भाग ले
इन का चूर्ण करके अंडी के तेल में पचावे और घोटे फिर रोगी को देवे तो अनेक
स्थान के घोर शूल को ब्रह्मास्त्र के समान नष्ट करे इस प्रकार नृहरिनामक जयदेव
के पुत्र ने कहा है ॥

हिंम्वादि चूर्ण

हिंम्बम्लत्रिपटूग्रपट्टकटुशठीवृक्षाम्लदीप्यालकापाठाजाज्यजगं-
धमूलहपुपाद्रिक्षारसाराभयम् ॥ हिक्काध्मानविबंधवध्मकसन-
श्वासाग्निसादारुचिल्पीहाशौखिलशूलगुल्मगलहृद्रोगाश्मपांडु-
प्रणुत् ॥

अर्थ—हींग, बिजोरा, तीनों निमक, वच, सोंठ, भिरच, पीपल, पीपरामूल, चव्य,
चित्रक, कचूर, अमलवेत, अजमायन, कंकोल, पाठ की जड़, जीरा, वनतुलसी, मूली,
हौऊवेर, जवाखार, सुहागा, अनारदाना और हरड इन का चूर्ण विबंध, हिचकी,
अफरा, बद, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, अरुचि, ग्रीहा, बवासीर, सर्वप्रकार के शूल, गोले
का रोग, हृदयरोग, पथरी, पांडुरोग इन को नाश करे ॥

नाराचचूर्ण

कर्पमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृतं स्यात्पलोन्मितम् । खंडात्पलं च
विज्ञेयं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ कर्पोन्मितं लिहेदेतत्क्षौद्रेणाध्मान-
नाशनम् । गाढविट्कोदरकफापित्तशूलानि नाशयेत् ॥

अर्थ—पीपल १ तोले, निसोय ४ तोले, विडनिमक ४ तोले इन सब को एकत्र
कूठ चूर्ण करे फिर इस को सहत के साथ १ तोले नित्य भक्षण करे तो अफरा, मल
का कठिनता से उतरना, उदररोग, कफ, पित्त और शूल इन को नाश करे ॥

क्षारयोग

क्षाराः किंशुकमूलकार्जुनधवापामार्गरंभातिला जीवंतीकनकाह्व-
या सरजनी कूष्मांडवल्ली तथा । वासासूरणमेवतीत्रदहनैः प्र-
ज्वाल्य भस्मीकृतं त्रायेण प्रतिशोध्य निःसृतपयःपानं विधेयं

सकृत् ॥ शूलानाहविबंधगुल्मकफजान् रोगान् जयेत्कामला-
न्विद्रध्यो हृदिशूलपाण्डुग्रहणीशोफार्शसंपीनसान् । मंदाग्निं ज-
ठरस्य पीनसगुरुप्लीहातिमेहादिकान् पापाणा ह्यदरे भवंति
बहुधा भस्मीकृतास्तत्क्षणात् ॥

अर्थ-पलासपापडा, मूली, कोह, धौ की छाल, आंगा, केले की जड, तिल,
जीवन्ती, घटूरा, हलदी, कुल्लोडे की वेल, अडूसा और सूरण (जमीकंद) इन को
एकत्र करके बडी भारी अग्नि से भस्म करे उस राख को जल में घोट के उस नित-
ते २ जल को छान लेवे इस जल को पीवे तो अफरावायु, मलबंध, गोले का रोग,
रुफसबंधी संपूर्ण रोग, कामला, विद्रधि, हृदय का शूल, पांडुरोग, संग्रहणी, सूजन,
खासीर, पीनस वा जुकाम, मंदाग्नि, उदररोग, सरेकमा, प्लीह और प्रमेह इत्यादिकों
का नाश करे. और पत्थरभी यदि इस प्राणी ने भक्षण करा होवे तो उस को भी यह
प्रार भस्म कर देवे ॥

हिंवादिचूर्ण

हिंम्वक्षार्द्रकुबेराक्षा वृद्धाः शूलेंवुना सुखाः ।

गुडाभयं वा सघृतो रसोनः शूलनुत्परः ॥

अर्थ-हींग १, बहेडा २, सोंठ ३, लताकरंज ४ इस प्रकार भाग लेकर सब का
चूर्ण करे गरम जल के साथ पीवे तो यह शूल को शमन करे तथा गुड, हरड और
श्री, लहसन ये दो योग शूल को नष्ट करते हैं ॥

तुंबरूआदि चूर्ण

तुंबरूणी त्रिलवणं यवानी पुष्कराह्वयम् । यवक्षाराभयाहिंशुवि-
डंगानि समानि च ॥ त्रिवृत्रिभागा विज्ञेया सूक्ष्मचूर्णानि कार-
येत् । पिवेदुष्णेन तोयेन यवक्वाथेन वा पिवेत् ॥ जयेत्सर्वाणि
शूलानि गुल्माध्मानोदराणि च ॥

अर्थ-तुंबरू अथवा चिरफल, सैधानिमक, संचलनिमक, विडनिमक, अजमोदाः
पुहकरमूल, जवाखार, छोटी हरड, भुनी हुई हींग और वायविडंग ये दश औषध
समान भाग लेवे तथा निसोथ तीन भाग ले फिर सब औषध का घारीक चूर्ण कर
गरम जल के साथ अथवा जों के काटे के संग पीवे तो संपूर्ण शूल और गोला, पेट
का फूलना, उदररोग इन सब को दूर करे ॥



पंचसमचूर्ण

शुंठी हरीतकी कृष्णा त्रिवृत्सौवर्चलं तथा । समभागानि सर्वाणि
सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ ज्ञेयं पंचसमं चूर्णमेतच्छूलहरं परम् ।
आध्मानजठराशौघ्नमामवातहरं स्मृतम् ॥

अर्थ—सोंठ, जंगी हरड, पीपल, निसोथ, संचरनिमक ये पांच औषध समान भा
लेवे. बारीक चूर्ण करे इस को पंचसमचूर्ण कहते हैं इस चूर्ण के सेवन करने से शूल,
पेट का फूलना, मंदाग्नि, बवासीर, आमवात इन रोगों को दूर करे ॥

विश्वादिचूर्ण

विश्वोरुबूकदशमूलयवांभसा तु द्विक्षारहिंशुलवणत्रयपौष्कराणाम्
चूर्णं पिवेद्धृदयपृष्ठकटिग्रहामपक्वाशयातिभृशरुग्ज्वरगुल्मशूली ॥

अर्थ—सोंठ, अंड की जड़, दशमूल और जों इन के कांटे के साथ जवाखार
सुहागा, हींग, संधानिमक, संचरनिमक, बिडनिमक और पुहकरमूल इन के चूर्ण कं
'पीवे तो उर, पीठ, कमर, आमाशय और पक्वाशय इन स्थानों की पीड़ा, शूल औ
गोला इन को नष्ट करे ॥

विश्वादिचूर्ण

शुंठी सुवर्चलं हिंशुपाठामूलोष्णकं जलम् ।

निपीतं नाशयत्येव सर्वशूलानि देहिनाम् ॥

अर्थ—सोंठ, सज्जीखार और हींग इन के चूर्ण को गरम जल से पीवे तो क्षणमा
में प्राणीमात्र के संपूर्ण शूल को नाश करे ॥

वचादिचूर्ण

वचा सुवर्चलं हिंशु कुष्ठमिंद्रयवा समाः ।

चूर्णमुष्णांभसा पीतं सर्वशूलनिकृंतनम् ॥

अर्थ—वच, सज्जीखार, हींग, कूठ, इन्द्रजो ये समान भाग लेवे. इन का चूर्ण
कर गरम जल से पीवे तो संपूर्ण शूलों का नाश करे ॥

अजमोदादिचूर्ण

अजमोदा वचा कुष्ठमम्लवेतससेधवम् । सर्जिशारं तथा पथ्या
त्रिकटु ब्रह्मदंडिका ॥ मुस्ता सुवर्चला विश्वा लवणं बिडपूर्व-
कम् । पीतं तक्रान्वितं चूर्णममीपां सर्वशूलहृत् ॥

अर्थ—अजमायन, वच, कूठ, अमलवेत, सैधानिमक, सज्जीखार, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, ब्रह्मदंडी, नागरमोथा, संचरनिमक, सोंठ, निमक और विडनिमक इन के चूर्ण को छाछ के साथ पीवे तो संपूर्ण शूलों का नाश करे ॥

वचादि चूर्ण

वचाविडाभयाशुंठीहिंयुकुष्ठाम्निदीप्यकान् । द्वित्रिपट्चतुरावष्ट-
सप्तपंचांशकाः क्रमात् ॥ चूर्णं मध्वादिभिः पीतं शूलानाहोदरा-
पहम् । गुल्मार्शःश्वासकासघ्नं ग्रहणीपांडुरोगहृत् ॥

अर्थ—वच, विडनिमक, हरड, सोंठ, हींग, कूठ, चित्रक की जड़ और अजमायन ये क्रमसे २-३-६-४-८-७ और ५ भाग लेवे. इन का चूर्ण कर सहत आदि के संग देवे तो शूल, अफरा, उदर, गोला, बवासीर, श्वास, खांसी, संग्रहणी और पांडुरोग इन को हितकारी है ॥

यवान्यादि चूर्ण

यवानी सैंधवं दारु यवक्षारं सुवर्चलम् । विश्वैरंडशिफाहिंयु-
लवणं विडपूर्वकम् ॥ एतच्चूर्णं समं श्लक्ष्णं गुडूचीकाथपानतः ।
सर्वशूलानि नश्यंति महारोगान्न संशयः ॥

अर्थ—अजमायन, सैधानिमक, देवदारु, जवाखार, सोरा, सोंठ, अंड की जड़, हींग और विडनिमक इन को समान भाग ले चूर्ण करे. इस को गिलोय के काटे से पीवे तो अत्यंत घोर शूल को नाश करे ॥

अजमोदादि चूर्ण

अजमोदाभया पाठा त्रिकटुः समचूर्णकम् ।

भुक्तमुष्णांभसाजीर्णं शूलनिर्मूलनं क्षणात् ॥

अर्थ—अजमायन, हरड, पाठ, सोंठ, मिरच और पीपल इन का समान भाग चूर्ण कर इस को गरम जल के साथ देवे तो अजीर्ण और शूल इन को क्षणमात्र में निर्मूल करे ॥

रुचकादि चूर्ण

चूर्णं समं रुचकहिंयुमहौपधानामुष्णांशुना कफसमीरणसंभवासु ।

हृत्पार्श्वपृष्ठजठरार्तिविपूचिकासु पेयं तथा यवरसेन च विडिवंधे ॥

अर्थ—संचरनिमक, हींग और सोंठ इन को समान भाग ले चूर्ण करके गरम जल

से देवे. तो कफवात से हृदय, पसवाडा, पीठ और पेट इन के शूल को और विपूचिका इन को नाश करे. तथा मलबद्ध होनेपर जोके काढे से इस चूर्ण को देवे ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगु ग्रंथिकधान्यकाग्निकवचा चव्याग्निपाठा सठी वृक्षाम्लं
लवणत्रयं त्रिकटुकं क्षारद्रव्यं दाडिमम् । पथ्यापुष्करवेतसा-
म्लहृपुपाजाजाज्यगंधैः कृतं चूर्णं भावितमेतदारद्रकरसे स्या-
द्वीजपूरस्य वा ॥ आध्मानग्रहणीविकारगुदजान् गुल्मानुदा-
वर्तकान् वाताध्मानगरोदराश्मरिरुजस्तूनीद्रयारोचकान् । ऊ-
रुस्तंभमतिभ्रमं च मनसो वाधिर्यमष्टीलिकां प्रत्यष्टीलिकश्वा-
सकासमपहृतत्पीतमुष्णांबुना ॥ हृत्कुक्षिवंक्षणकटीजठरांतरेषु
वस्तिस्तनांसफलकेषु च पार्श्वयोश्च । शूलानि नाशयति वात-
बलासजानि हिंग्वाद्यमाद्यमिदमश्विनिसंहितायाम् ॥

अर्थ—हींग, पीपरामूल, धनिया, चित्रक, वच, चव्य, भिलाये, पाठ, कसूर, चूका, सैधानिमक, बिडनिमक, संचरानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, अनार की छाल, हरड, पुहकरमूल, अमलवेत, हाऊवेर, जीरा, बनतुलसी इन के चूर्ण को अदरख के रस की अथवा बिजोरे के रस की भावना देवे और इस को गरम जल के साथ सेवन करे तो अफरा, संग्रहणी, बवासीर, गोला, उदावर्त, वाताध्मान, विप, उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, तुनी, प्रतूनी, अरुचि, ऊरुस्तंभ, मतिभ्रम, अंतःकरण का भ्रम, बहरापना, अष्टीलिका, प्रत्यष्टीलिका, श्वास, खांसी, हृदय, कूल, वंक्षण, कमर, पेट, बस्ती, स्तन, कंधे और पसवाडे इन स्थानों के शूल वायु अथवा कफ का होय तो उस का नाश होय इस को हिंग्वादिचूर्ण कहते हैं. यह प्राचीन है अश्विनी-कुमारों ने कहा है ॥

शंखवटी

चिंचाक्षारं पंचपलं लवणानि पलं पलम् । संचूर्णानि क्षिपेत्प्र-
स्थद्वये जंबीरवारिणि ॥ शंखं दशपलं तत्त्वा निक्षिपेत्सतवा-
रतः । तत्समस्तं विशोष्याथ हिंगुव्योषं चतुष्पलम् ॥ बली-
सूतविपान्भागैः पलाधींश्च पृथक् पृथक् । एतत्समस्तं संमर्द्य

जंबीराम्ले दिनत्रयम् ॥ बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्बुधः ।
 एकैकां भक्षयेत्प्रातः कोष्णतोयं पिबेदनु ॥ सर्वशूलं हरेद्बुध-
 मजीर्णं परिणामजम् । अतीसारगदं हन्याद् ग्रहणीं च विशेषतः ॥

अर्थ—इमली का खार २० तोले, निमक ४ तोले, सैंधानिमक ४ तोले, संचर-
 निमक ४ तोले, बिडानिमक ४ तोले, सुहागा ४ तोले इन के चूर्ण को १२८ तोले
 नीबू के रस में डालके फिर ४० तोले शंख को अग्नि में तपायके उस रस में बुझाय
 देवे इस प्रकार सातवार करने से शंख की भस्म हो जावे वह शंख की भस्म और हींग
 ४ तोले, सॉठ ४ तोले, मिरच ४ तोले, पीपल ४ तोले, गंधक ४ तोले, पारा २
 तोले. सिंगियाविष २ तोले इन सब को डालके सब को नीबू के रस में तीन दिन
 खरल करे फिर बेर की गुठली के बराबर गोली बनाय लेवे इस में से एक २ गोली
 प्रातःकाल भक्षण करे और ऊपर से गरम जल पीवे तो सर्वप्रकार के शूल, गोले का
 रोग, अजीर्णरोग, परिणामशूल, अतिसार, संग्रहणी इन को नाश करे ॥

गोमूत्रमंडूर

गोमूत्रसिद्धं मंडूरं त्रिफलाचूर्णसंयुतम् ।

विलिहन्मधुसर्पिभ्यां शूलं हंति त्रिदोषजम् ॥

अर्थ—गोमूत्र में सिद्ध करा हुआ मंडूर, हरड, चहेडा, आंवला इन के चूर्ण को
 मिलाय इस को सहत और घी इन के साथ सेवन करे तो त्रिदोष का शूल नाश होय ॥

सूर्यप्रभा वटी

व्योपग्रंथिवचा च हिंयु जरणद्वंद्वं विषं निंबुकद्रावैरार्द्रकजै रसै-
 विमृदितं तुल्या मरीचोपमा । कर्तव्या वटिकाथ सा दिनमुखे
 भुक्ता कवोष्णांबुना शूलं त्वष्टविधं निहंति सहसा सूर्यप्रभानामतः ॥

अर्थ—त्रिकुटा, पीपरामूल, वच, हींग, जीरा, काला जीरा, सिंगियाविष ये सब
 समान भाग लेवे इस को नीबू के रस और अदरक के रस में खरल करके मिरच
 के बराबर गोली बनावे १ गोली प्रातःकाल गरम जल के साथ भक्षण करे तो आठ
 प्रकार के शूलों का नाश करे. इस को सूर्यप्रभा वटी कहते हैं ॥

शंखादि चूर्ण

दग्धशंखं करंजं च हिंयुन्यूपणसैधवम् । एतच्चूर्णाकृतं सर्वं पि-
 वेच्चोष्णेन वारिणा ॥ सर्वशूलहरं चूर्णं विख्यातो रवितागरः ॥

अर्थ—शंख की भरम, कंजे के बीज, हींग, सोंठ, काली मिरच, पीपल और सैंधानिमक इन का समान भाग चूर्ण कर गरम जल से पीवे तो संपूर्ण शूलों का नाश करे इस को रचिसागर कहते हैं ॥

क्षारयोग

आल्मवेतसनिर्यासः सैंधवं शुंठिरामठम् । सुवर्चलाजमोदा च
देवदारुः समांशकम् ॥ स्थाल्यां प्रक्षिप्य तत्सर्वं वह्निमुद्दीप-
येदधः । क्षारः स्यादिष्टिकापिष्टः स पीतस्तीव्रशूलहृत् ॥

अर्थ—अमलवेत का गूदा, सैंधानिमक, सोंठ, हींग, सोरा, अजमायन और देवदारु इन का समान भाग चूर्ण खिपड़े में डालके चुल्हेपर चढाय अग्नि देवे तो इन सब की राख हो जावे इस को ईंट से बारीक पीसके देवे तो तीव्रशूल को नाश करे ॥

चित्रकादि वटक

चित्रकं लवणं पाठा व्योषं लवणपंचकम् । अजाजी धान्यकं
हिंस्रा दीप्यकं ग्रथिकं तथा ॥ एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि
कारयेत् । जंवीरस्य रसेनैव वटकान् कारयेदुधः ॥ हृच्छूलं
पार्श्वशूलं च आमशूलमरोचकम् । अशीतिं वातजान् रोगान्
नाशयेच्चैव तत्क्षणात् ॥

अर्थ—चित्रक की छाल, निमक, पाठ, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानिमक, साह्वर-
निमक, खारीनिमक, कालानिमक, कचियानिमक, जीरा, धनिया, जटामांसी, अज-
मायन और पीपरामूल ये समान भाग लेके बारीक चूर्ण करे सब को एकत्र करके
सब को नीबू के रस में खरल करे फिर गाढा होने पर गोली बनाय ले. यह हृदय-
शूल, पार्श्वशूल, आमशूल, अरुचि, अस्ती प्रकार की वातव्याधि इन को तरकाळ
नाश करे ॥

हरीतक्यादि वटी

हरीतकी त्रिकटुकं कुचिला गंधहिंशु च । सैंधवं च समं सर्वं
वटीं कुर्यात्सुखावहाम् ॥ लघुकोलप्रमाणां तां भक्षयेत्प्रातरैव
हि । एकैका वटिका भुक्ता जन्मशूलनिवारिणी ॥ ग्रहण्यामातिसारे
वाजीर्णे मंदे च पावके । उष्णोदकानुपानेन सुखमाप्नोति नित्यशः ॥

अर्थ—हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, कुचला के बीज, गंधक, हींग और सेंधानिमक ये सब समान भाग लेवे. सब का चूर्ण करके जल से आधे २ तोले की गोली बनाय लेवे. प्रातःकाल १ गोली नित्य भक्षण करे तो यह एक ही गोली जन्मशूल को नाश करे. तथा संग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण, मंदाग्नि इन पर गरम जल के संग देवे तो सुख प्राप्त होय ॥

कुबेराक्षवटी

कर्पेकं च कुबेराक्षं कर्पेकं च महौषधम् । सौवर्चलं च कर्पार्धं
कर्पार्धं भृष्टहिगुकम् ॥ शिशुमूलरसेनैव रसोनस्य रसेन वा ।
पिष्ट्वा सर्वं प्रयत्नेन स्वच्छांगारे विपाचयेत् ॥ भुक्त्वा विनाश-
येच्चैव शूलमष्टविधं तथा ॥

अर्थ—लताकरंज १ तोला, सोंठ १ तोला, संचरनिमक छः मासे, भूनी हुई हींग छः मासे सब का एकत्र चूर्ण कर सहजने के जड के अथवा लहसन के रस में पोंट स्वच्छ अंगारों पर पचन करके देवे तो आठ प्रकार के शूलों का नाश करे ॥

अगस्तिवटी

दशाम्रकं हैमवतीसमेतं स्वित्त्रं तुपोदे विपतिदुबीजान् । कडु-
त्रिकक्षारयुगं त्रिदीप्यं कृमिघ्नहिगुत्रिपट्टत्रिविल्वम् ॥ पृथक् क्लृप्तं
जंभजले वटीयमगस्त्यपूर्वा वदरप्रमाणा । शूलानि गुल्मकृमि-
मंदवह्निष्ठीहामवातान् जयति प्रसह्य ॥

अर्थ—हरड ४ तोले को तुपों के काटे में सिजावे. तथा इसी प्रकार कुचले के बी-
जों को सिजवावे. इन को और सोंठ, मिरच, पीपल, जवापार, सुहागा, अजमायन,
अजमोद, सुरासानी अजमायन, वायविडंग, हींग, सेंधानिमक, विडनिमक, कचिया-
निमक ये प्रत्येक बारह २ तोले ले. सब का चूर्ण एकत्र करके नीबू के रस में उन को
सरल कर घेर की घरावर गोली बनावे और रोगी को देवे तो शूल, गोला, कृमि-
रोग, मंदाग्नि, प्रीहा और आमवातरोग इन को नाश करे ॥

गरलादि वटी

गरलहुतभुग्विश्वाजाजीवचोपणहिगुभिर्विधिसुमृदितैर्भृगद्रावे गु-
टीमथ कृत्यच । इरति विविधं भुक्त्वा शूलं तथानिलमृदताम-
नलविरतिं सौम्यं भास्वद्वटी भुवि विश्रुता ॥

अर्थ—अफीम, चित्रक, सोंठ, जीरा, वच, मिरच, हींग इन का चूर्ण भांगरे के रस में खरल करके गोली बनाय लेवे. उस को भक्षण करने से शूल, मूढवात, मंदाग्नि, सुप्तिवात इन को नाश करे इसे भास्वद्वटी कहते हैं ॥

वचादिवटी

वचा विश्वाजीरोपणगरलवालहीकदहनत्वचा कार्या वस्यश्चणक-
तुलिता मार्कवरसैः । यथा भानोर्भासस्तिमिरनिकरं कामि-
नि तथा हरंत्येताः शूलान्यनिलमनलं ग्लानिमपि च ॥

अर्थ—वच, सोंठ, जीरा, मिरच, सिंगिया विप, हींग, चित्रक की छाल और दा-
लचीनी इन का समान भाग चूर्ण करके भांगरे के रस में चने के बराबर गोली करके
देवे तो शूल, वादी और मंदाग्नि इन को नाश करे. जैसे सूर्य की किरण अंधकार को
नाश करे हैं ॥

कुबेराक्षपाक

धान्याम्ले त्रिदिनं विलाप्य विपचत्यग्नौ कुबेराक्षकं पादांशं
पट्टु संविधाय च पचेद्वित्त्वा च संपूरयेत् । सिंधूत्थं त्रिकटूद्रवेन
रजसा संसिच्य विंदुद्रवैः शुष्कास्ते रुचिरा भवन्ति च तथा
निघ्नन्ति शूलान् बहून् ॥

अर्थ—लताकरंज को तीन दिन कांजी में भिगो देवे. उन के चतुर्थांश निमः
डालके अग्निपर चढायके पचन करे. फिर इन को फोडके भीतर की मिर्ग
निकाल लेवे और सेधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण डालके ऊपर र
थोड़ी २ बूंद २ टपका कांजी का डालके पचावे. जब सब कांजी सूख जाय त
उतार ले. यह रुचिकारी तथा अनेक शूलों को नाश करे ॥

सप्तविंशतिगुग्गुलु

क्षारद्वयं त्रिकटुकं त्रिफला हरिद्रा रुद्राक्षमुस्तलवणत्रयतुंबरू-
णि । सग्रंथिकाग्नित्रुटिचित्रकचव्यकुप्रमाक्षीकपुष्करविडंगवि-
पायुतानि ॥ यावन्त्यमूनि गजपिप्पलिसंयुतानि तावत्प्रमा-
णमिति गुग्गुलुसंयुतानि । कृत्वा घृतेन गुटिका मनुजैः प्र-
योज्या वातं च दुग्धजलकांजिकमुद्गयूपैः ॥ हृत्पार्श्वपृष्ठकटि-

वंक्षणकुक्षिकक्षाशूलानि नाशयति कुष्ठकिलासरोगान् । पांडू-
मयं क्षयमपस्मृतिमूर्ध्वातमुन्मादमामपवनं श्वयथुं प्रमेहम् ॥

अर्थ—जवाखार, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, चहेडा, आवला, हलदी, रुद्राक्ष, नागरमोथा, सैधानिमक, विडानिमक, कचियानिमक, चिरफल, पीपरामूल, चित्रक, छोटी इलायची, चित्रक की छाल, चव्य, कूठ, सुवर्णमाक्षिक की भस्म, पुहकरमूल, वायविडंग, अतीस, गजपीपल ये सब समान भाग लेवे. तथा सब के बराबर गूगल लेय. सब को एकत्र कर धी में सान कूटके गोली बनावे. इस को दूध, जल, कांजी, मूंग का यूप इन में से किसी एक के साथ देवे तो वादी, हृदय, पसवाडा, पीठ, कमर, वंक्षण, कूख इन के शूल को नाश करे तथा कुष्ठ, किलासकुष्ठ, पांडुरोग, क्षय, अपस्मार, ऊर्ध्वात, उन्माद, आमवायु, सूजन और प्रमेह इन को भी नाश करे ॥

लोहभस्मयोग

मूत्रांतः पाचितां शुष्कां लोहचूर्णसमन्विताम् ।
सगुडामभयां दद्यात्सर्वशूलोपशांतये ॥

अर्थ—हरडों को गोमूत्र में पचाय के सुखाय ले. फिर पीस इस में लोहभस्म मिलायके गुड के साथ देवे तो संपूर्ण शूलों का नाश होय ॥

गंधकरसायन

पलैकं त्रिफलाचूर्णं पलार्धं गंधकस्य तु । लोहभस्म तु कर्पैकं
सर्वं संचूर्ण्य मिश्रयेत् ॥ कर्पार्धं मधुसर्पिभ्यां लेहयेत्सर्वशूल-
नुत् । वातविस्फोटकान्हांति सेवनात्तु त्रिमासतः ॥ गताः केशाः
पुनर्याति गंधकस्य रसायनात् ॥

अर्थ—त्रिफले का चूर्ण ४ तोले, गंधक २ तोले, लोहभस्म १ तोला सब का चूर्ण एकत्र कर मिलाय लेय इस में से आधा तोला सहत और धी के साथ देवे तो संपूर्ण शूल, वायु, विस्फोटक इन को तीन महिनों में नाश करे तथा गये हुए चाल फिर ऊग आवें. इस को गंधकरसायन कहते हैं ॥

शूलकुठाररस

टंकणं पारदं गंधं त्रिफला व्योपतालकम् । विपं ताम्रं च जे-
पालं भृंगस्वरसमर्दितम् ॥ द्विगुंजमात्रा वटिका मरीचेनार्द्रकेण
वा । सर्वशूलकुठारोयं विष्णुचक्रमिवासुरान् ॥

अर्थ—सुहागा, पारा, गंधक, त्रिफला, सोंठ, मिरच, पीपल, हरताल, सिंगिया-विष, ताम्रभस्म, जमालगोटा इन सब को एकत्र करके भांगरे के रस में खरल करे. फिर इस में से दो दो रत्ती की गोली बनावे इन गोलियों को मिरच अथवा अदरक के रस से देवे तो संपूर्ण शूलों को नाश करे. इस को शूलकुठार रस कहते हैं ॥

अग्निकुमाररस

सूतेन गंधं सह टंकणेन समं विषं योज्यमिह त्रिभागम् । कपर्द-
शंखावपि तत्र भागौ मरीचकैरष्टगुणैर्विमिश्रम् ॥ जंबीरनीरेण
विमर्दनीयं सिद्धो भवेदग्निकुमार एषः । देयो हि गुंजाद्वितयं च
शूले त्रिदोषजे योजय सानुपानम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, सुहागा ये समान भाग लेवे तथा सिंगिया विष तीन भाग के और कौड़ियों की भस्म २ भाग, शंखभस्म २ भाग, काली मिरच ८ भाग सब को एकत्र चूर्ण कर नीबू के रस से खरल करे इस की दो रत्ती की गोली बनायके देवे तो शूल का नाश करे. इस को अग्निकुमार रस कहते हैं ॥

क्षारताम्ररस

पलमितमृतशुल्वं तन्मितं गंधचूर्णं वसुमितपरिमाणं चिंचिणि-
क्षारचूर्णम् । त्रयमिदमभिदिष्टं क्षारताम्राख्यमेतत् हरति सकल-
शूलं पीतमुष्णोदकेन ॥

अर्थ—तामे की भस्म ४ तोले, गंधक ४ तोले और इमली का खार ८ तोले इस सब को एकत्र कर उत्तम रीति से खरल करे इस को क्षारताम्र कहते हैं. यह गरम जल के साथ पीवे तो संपूर्ण शूलों को नाश करे ॥

सोमनाथिताम्र

शुल्वं तुल्येन सूतेन बलिना तत्समेन च । तदर्धांशेन तालेन
शिलया च तदर्धया ॥ विधाय कज्जलीं श्लक्ष्णां भिन्नकज्जलसन्नि-
भाम् । यंत्राध्यायविनिर्दिष्टगर्भयंत्रोदरे क्षिपेत् ॥ कज्जलिं ताम्र-
पत्राणि पर्यायेण विनिक्षिपेत् । रुद्धा शरावकेणैव तदर्धं लवणं
क्षिपेत् ॥ पंचत्रियामपर्यंतं स्वांगशीतं विचूर्णयेत् ॥ तत्तद्रो-
गहरानुपानसहितं ताम्रं द्विवल्लोन्मितं संलीढं परिणामशूलमुदरं

शूलं च पांडुज्वरन् । गुल्मं ग्रीहयकृतक्षयाग्निसदनं मेहं च शूलामयं दुष्टं च ग्रहणीं हरेत्पुवमिदं तत्सोमनाथाभिधम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक दोनो समान भाग लेवे इन दोनो से आधी हरताल और चतुर्थांश मनसिल सब को एकत्र करके कजली करे. फिर इस कजली का कंटकवेधी तामे के पत्रो पर दो तीन बार लेप कर देवे फिर उन पत्रों को शरावसंपुट में बीच में निमक बिछाय पत्रो को रख ऊपर से फिर निमक डालके दूसरे शराव से बंद कर देवे और संधियों को बंदकर गर्भयंत्र में तीन प्रहर अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब निकालके खरल कर लेवे. इस को सोमनाथीताम्र कहते है यह ४ रत्ती रोगी को अनुपान के साथ संपूर्ण रोगों पर देवे तो परिणामशूल, उदरशूल, पांडु, ज्वर, गोला, ग्रीहा, यकृत, क्षय, मंदाग्नि, प्रमेह, शूल, संग्रहणी इन को नाश करे ॥

गदमददहन

नागं वंगं सुताम्रं दरदमनशिला तुत्थताम्राभ्रगंधं भस्म स्यात्स्वर्णतुल्यं रसकमपि रविक्षारघृष्टं सुगोप्यम् । कृत्वा तत्क्वाथयंत्रे लवणविरचिते भावयेदारद्रकाभिर्वासानिर्गुंडिकाद्रिः सुरसमगधया सेवनीयः क्रमेण ॥ पार्श्वे शूलाग्निमाद्ये त्वरुचिसमुदिते औषधं सन्निपाते हृद्रोगे गुल्ममेहे कफपवनजये सर्वरोगे ज्वरेपि । देयो भक्त्या रसेन्द्रस्त्रिभुवनरचितो भोगिलोकप्रसिद्धो नागानां वल्लभोयं गदमददहनो रक्तपित्तप्रहंता ॥

अर्थ—शीशा, रांगा, तामा, हिंगुल, मनसिल, लीलायोया, अभ्रक, गंधक, सुवर्ण इन की भस्म, खपरिया इन सब को एकत्र करके आक के दूध में खरल कर उस का गोला बनावे उस गोले को शराव में निमक भर बीच में इस गोले को रखे ऊपर निमक डालके दूसरे सकोरे से बंद कर कपड मिट्टी कर देवे इस को गजपुट में रख के फूंक देवे. स्वागशीतल होने पर निकाल लेवे फिर इस को अदरख, अडुसा, निर्गुंडी इन के रस की भावना देकर तुलसी का रस और पीपल के संग सेवन करे तो पार्श्वशूल, मंदाग्नि, अरुचि, सन्निपात, हृदयरोग, गुल्म, प्रमेह, कफ वादी के सर्वरोग और ज्वर इन को गदमददहन नाम सब को म्रिय तथा लोक में प्रसिद्ध रक्तपित्तनाशक है यह नागलोक में प्रसिद्ध है ॥

शंखादि चूर्ण

शंखः पीतवराटकस्त्रिकटुकं क्षारत्रयं त्रैफलं संकोचीलवणानि

गंधकमथोजाजो यवानी पृथक् । कर्पद्वंद्वमितानि हिंगुसहिता-
न्येलालवंगानले लोहं पारदभस्मकोमृतमथो ताम्रं च कर्प
पृथक् ॥ चूर्णं मापयुगं सुशीतलजलेनासेवितं शूलनुत् गु-
ल्मप्लीहमजीर्णमग्निमृदुतामत्यम्लपित्तं जयेत् ॥

अर्थ—शंख, पीरी कौडी, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, हरड, बहेडा, आंवला, लजालू, निमक, सुहागा, सैंधानिमक, रेहका निमक, संचल निमक, गंधक, जीरा, अजमायन और हींग प्रत्येक दो २ तोले लेवे तथा इलायची, लौंग, चित्रक, लोहभस्म, पारदभस्म, ताम्रभस्म ये प्रत्येक एक २ तोले लेवे. सब को एकत्र करे इस चूर्ण में से दो मासे शीतल जल के संग सेवन करे तो शूल, गोला, प्लीहा, अजीर्ण, मंदाग्नि और अम्लपित्त इन को नाश करे ॥

विद्याधराभ्रलोह

विडंगमुस्तत्रिफलागुडूचीदंतीत्रिवृच्चित्रकटुत्रिकैव । प्रत्येकमेपां
पिचुभागचूर्णं पलानि चत्वारि च सोमलस्य ॥ गोमूत्रसिद्धस्य
पुरातनस्य किट्टस्य देयानि वराटिकायाः । कृष्णाभ्रचूर्णस्य
पलं विशुद्धं निश्चंद्रिकं श्लक्ष्णमतीव सूतात् ॥ पादेन कर्पः
स्वरसेन खल्वे शिलातले सप्तमुनीदलस्य । संशोष्य पश्चाद-
तिशुद्धगंधपापाणचूर्णेन पिचून्मितेन ॥ युक्त्या ततः पूर्व्वरजांसि
दत्त्वा सर्पिमधुभ्यामिव मर्द्य यत्नात् । निधापयेत्स्निग्धविशुद्ध-
भाण्डे ततः प्रयोज्योस्य रसायनस्य ॥ ग्राह्यमापकोत्ता
व्यथवा त्रयो वा गव्यं पयो वा शिशिरं जलं वा । पिबेदमुं योग-
वरं प्रभूतकालप्रनष्टानलदीपकोयम् ॥ योगो निह्न्यात्परि-
णामशूलं युक्तं तथान्नद्रवसंज्ञकं च । यक्ष्माम्लपित्तं ग्रहणीं
प्रवृद्धां जीर्णज्वरं लोहितपित्तकुष्ठम् ॥ नश्यंति चानेन निहंति
रोगान्योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः ॥

अर्थ—वायविडंग, नागरमोया, हरड, बहेडा, आंवला, गिलोय, दंती के निसोय, चित्रक की छाल, सोंठ, मिरच, पीपल और संशियाधिप ये प्रत्येक तोले २ लेवे तथा गोमूत्र की भावना देकर सिद्ध करा हुआ पुराना मंहर २६ तोले, कौडी की भस्म

१६ तोले, कृष्णाभ्रकभस्म ४ तोले, पारा १ तोला ये सब पदार्थ शुद्ध करे हुएके सब को एकत्र खरल कर अगस्तियाके पत्तों के रस की ७ भावना देवे जब सूख जावे तब इस में १ तोले गंधक का चूर्ण मिलावे और सहत तथा घी इन में घोटके तयार कर चिकने पात्र में भरके धर रखे इस को बलाबल विचारके १-२ अथवा तीन मासे पर्यंत गौ के दूध के साथ अथवा शीतल जल से देवे तो मंदाग्नि, परिणामशूल, अन्नशूल, क्षय, अम्लपित्त, संग्रहणी, जीर्णज्वर, रक्तपित्त, कुष्ठ इन को नाश करे तथा अन्य अनुपानों के साथ यह योग सेवन करने से अनेक रोगों को नाश करे ॥

पीडारिरस

व्योमपारदगंधाश्मजयपालकटंकणम् । वह्निचंडशशिद्वित्रिभा-
गान् जंभाभसा ऽपहम् ॥ पिष्ट्वा कोलमिता कृत्वा गुडकांजिकतो
वटिः । वितरेदामशूलादौ कृमिशूले विशेषतः ॥ पथ्यं तक्रोदनं
चात्र स्तंभार्थं शीतलक्रिया ॥

अर्थ—अभ्रकभस्म ३ तोले, पारा १ भाग, गंधक २ तोले, जमाल गोटा २ तोले, सुहागा ३ भाग इस प्रकार सब को लेकर तीन दिन पर्यंत जंबीरी नीबू के रस में खरल करे फिर आधे २ तोले की गोली बनावे इस को कांजी से आमशूल, कृमिशूल इनपर विशेष करके देवे तथा छाछ भात पथ्य में देवे तथा दस्त होने के बंद करने को शीतल क्रिया करनी चाहिये ॥

शुल्बसुंदररस

समं ताम्रदलं गृह्य रसेद्रेण द्विगंधकम् । मृद्रस्त्रेण समावेष्ट्य
पटुयंत्रैः पुटे पचेत् ॥ संचूर्ण्य हेमवातारिचित्रकव्योपजैर्द्रवैः ।
पोडशांशं विपं दत्त्वा चूर्णयित्वास्य बल्लकम् ॥ प्रागुक्तैरनुपा-
नैश्च सद्योवातं च वातजम् । कफजं पक्तिशूलं च हन्याच्छ्री-
शिवशासनात् ॥

अर्थ—तामे के कंटकवेधी पत्र १ तोला, पारा १ तोला, गंधक २ तोले ले प्रथम पारे गंधक की कजली करे उस को तामे के पत्रों पर लेप करे जब सूख जावे तब शराब में निमक भर के बीच में तामे के पत्र धर ऊपर से फिर निमक डालके दूसरे सराब से टक संधि बंदकर कपडमिट्टी कर देवे और गजपुट में रखके फूंक देवे जब शीतल हो जावे तब निकालके खरल करे इस में सब औषधों का पोडशांश सिंगिया विप डालके धनूरे का तेल, अंडी का तेल, चित्रक का तेल, सोंठ, मिरच,

पीपल इन का काढा इन की भावना देवे जब सूख जावे तब इस में से २ रत्ती अनुपान के साथ देवे तो सद्योवात, कफरोग, पक्तिशूल इन को नाश करे ऐसी शिव की आज्ञा है ॥

पण्मुखरस

सूतं गंधं समं शुद्धं सूतांशं मृतताम्रकम् । सुवर्चलं च सूतांशं
जंवीरैर्दिनसप्तकम् ॥ मर्दयेदातपे तीव्रे रुद्धा लघुपुटत्रयम् ।
दत्त्वादाय तु तच्चूर्णे सूतांशं त्रिकटुं क्षिपेत् ॥ पण्मुखोयं रसो
नाम त्रिगुंजः सर्वशूलजित् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, ताम्रभस्म, सज्जीखार ये समान भाग लेवे इन को नीबू के रस की सात भावना देवे और तीव्र घूप में रखकर खरल करे जब सूख जावे तब लघुपुट देवे इस प्रकार तीन पुट देय पश्चात् जितना पारा होवे उतना ही त्रिकुटा चूर्ण मिलावे इस को पण्मुखरस कहते हैं यह तीन रत्ती रोगी को देवे तो सर्व शूल के रोगों को नाश करे ॥

महाशूलहर रस

रसं गंधकं टंकणं श्वेतकाचं मलं भारशृंगं रविस्वं वराटम् । विडं
शंबुकं शृंगमेणस्य शंखं रविस्तुक्पयोभिर्दिनं संविमर्द्यम् ॥ शुष्कं
तु पश्चाद्विपव्योपयुक्तं मरीचाज्ययुक्तं तु वल्लं ददीत । महा-
शूलहर्ता क्षये दुर्निवारो ग्रहण्यां तथा पांडुरोगाग्निमांघे ॥

अर्थ—पारा, गंधक, सुहागा, सपेदकांच, कपूर, सावर का सींग, तामे की भस्म, कौडी की भस्म, विडनिमक, छोटे शंख की भस्म, हरण के सींग की भस्म, शंखभस्म ये सब समान भाग ले एकत्र कर आक के दूध और थूहर का दूध इन से एक २ दिन खरल करके सुखाय ले फिर इस में सिंगिया विष, सोंठ, मिरच, पीपल, इन का चूर्ण मिलायके घी के साथ १ वल्ल की मात्रा रोगी को देवे तो महाशूल, क्षय, संग्रहणी, पांडुरोग और मंदाग्नि इन को नाश करे ॥

त्रिनेत्ररस पक्तिशूलादिकों पर

टंकणं हारिणं शृंगं स्वर्णं शुल्बं मृतं रसम् । दिनैकमार्द्रकद्रा-
वैर्मर्द्यं रुद्धा पुटे पचेत् ॥ त्रिनेत्रारख्यरसस्यैकं मापं मध्वाज्य-
कैर्लिहेत् । संधवं जीरकं हिंयु मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥ पक्ति-
शूलहरः ख्यातो मासमात्रात्र संशयः ॥

अर्ध—सुहागा, हरिण के सींग की भस्म, सोने की भस्म, तामे की भस्म, पारे की भस्म इन पांच औषधों को अदरख के रस से एक दिन खरल करके मट्टी के शरावसंपुट में रख देवे और कपडमिट्टी करके खाड़ा खोद, उस में आरने उपलों का सूक्ष्म अग्नि देना, स्वांगशीत होनेपर बाहर निकाल लेवे. इस को त्रिनेत्ररस कहते हैं यह रस एक मासा प्रमाण सहत और घृत इन के साथ एकत्र करके रोगी को देवे, ऊपर संधानिमक, जीरा, भूनी हुई हिंग इन तीन औषधों का चूर्ण घृत और सहत के साथ खरल करके देवे. इस माफिक करने से एक महीने का पक्तिशूल नष्ट होता है. इस में कुछ संशय नहीं ॥

गजकेसरी

शुद्धसूतं द्विधा गंधं यामैकं मर्दयेत् दृढम्।द्वयोस्तुल्यं शुद्धता-
म्रसंपुटे तन्निरोधयेत् ॥ ऊर्ध्वाधो लवणं दत्त्वा मृद्गांढे धारयेद्भि-
पक्त् । ततो गजपुटे पक्त्वा स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ संपुटं चूर्ण-
येत्सूक्ष्मं पर्णखंडे द्विगुंजकम् । भक्षयेत्सर्वशूलार्तो हिंशुशुंठी-
सर्जारकम् ॥ वचामरिचजं चूर्णं कर्पमुष्णजलैः पिबेत् । असा-
ध्यं नाशयेत् शूलं रसायं गजकेसरी ॥

अर्ध—शुद्ध करा हुआ पारा एक भाग और गंधक दो भाग दोनों एकत्र कर प्रहरतक खरल करके कजली करे फिर इस कजली के बराबर शुद्ध कंटकवेधी तांबे-के पत्र लेवे. उन का संपुट बनाय उस में कजली रखकर संपुट को बंद करके एक मिट्टी के गगरे में आधा निमक भरके बीच में इस संपुट को रखे ऊपर से फिर निमक भरके उस पात्र के मुख को दूसरे छोटेसे गगरेसे बंद कर उस की संधियों को कपड-मिट्टी से बंद कर गड्ढा खोद आरने उपलों से भरके बीच में इस पात्र को रखा देवे और गजपुट की आंच देवे. जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल संपुट को निकाल बारीक पीस डाले इस को गजकेसरी रस कहते हैं. यह रस दो रत्ती जिस मनुष्य को सर्व प्रकार का शूल हो उस को पान के टुकड़े में से खाने को देवे और इस को खायकर उसी वखत इस के ऊपर भूनी हुई हिंग १, सोंठ २, जीरा ३, वच ४, काली मिरच ५, इन पांच औषधों का चूर्ण एक तोले राय ऊपर से गरम जल पीवे तो यह रस असाध्य शूलरोग को भी नाश करे इस में जो संपुट लिखा है वह तामे की डिविया का नाम है अर्थात् तामे की डिविया में पूर्वोक्त कजली भरके इस को बनावे ॥

शूलगजकेसरी

रसविपगंधकपर्दक्षाराश्च सिंधुपिप्पलीविश्वैः ।

आहिवलयंबुविघृष्टाः शूलेभहरिर्द्विगुंजोयम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, सिंगियाविप, कौडी की भस्म, सुहागा, सैंधानिमक, पीपल, सोंठ इन को नागवेलपान के रस में खरल करे तो यह शूलगजकेसरी रस तयार हो. इस की दो रत्ती की मात्रा रोगी को देवे ॥

गजकेसरी

क्षारं कपर्दं विपसैधवं च व्योपान्वितं पर्णरसैर्विमर्द्यम् ।

गुंजैकमात्रोनिलजे विकारे पक्त्यामशूले गजकेसरी स्यात् ॥

अर्थ—कौडी का खार, सिंगिया विप, सैंधानिमक, त्रिकुटा इन को पान के रस में खरल कर १ रत्ती रोगी को देवे तो वातशूल, परिणामशूल और आमशूल इन को सिंह के समान नष्ट करे ॥

पथ्यादि रस

पथ्याटकणविश्वहिंशुमरिचं वह्निर्विडं गंधकं तुल्यं सैधवसंयुतं

तु कुचिलं सर्वैः समं संमतम् । शूलाध्मानविवंधगुल्मकसनश्ले-

ष्मामवातापहा जीर्णाध्यास्युदरारुचिस्वरहरी शूलद्विपत्री वटी ॥

अर्थ—हरड, सुहागा, सोंठ, हींग, मिरच, चित्रक, विडनिमक, गंधक और सैंधानिमक ये समान भाग लेवे. तथा सब के समान भाग कुचला के बीज लेवे सब को एकत्र खरल करे फिर गोली बनायके रोगी को देवे तो शूल, पेट का फूलना, मल की कठोरता, गोला, खांसी, कफ, आमवात, अजीर्ण, उदर, अरुचि, स्वरभंग और शूल इन सब रोगों को नाश करने में हाथी को सिंह के समान है ॥

परिणामशूलनिदान

भुक्ते जीर्यति यच्चूलं तदेव परिणामजम् । तस्य लक्षणमप्ये-

तत्समासेनाभिधीयते ॥ बलासः प्रच्युतः स्थानाच्छीतेन सह

मूर्च्छितः। वायुमादाय कुरुते शूलं जीर्यति भोजने ॥

अर्थ—आहार पचने के समय जो शूल होय उस को परिणामशूल कहते हैं. उस का निदान संक्षेप से कहता हूं, कफ अपना स्थान छोड़ कर शीत से संयुक्त हो बढ़ता है वह कफ वायु को साथ ले कर पचने के समय शूल उत्पन्न करता है ॥

शूल के स्थान

स कुक्षौ जठरे पार्श्वे नाभ्यां वस्तौ स्तनांतरे । पृष्ठमूलप्रदेशेषु
सर्वेष्वेतेषु वा पुनः॥भुक्तमात्रे तथा वापि जीर्णैश्च प्रशाम्यति।
पाष्टिकव्रीहिशालीनां भोजने च विवर्धते ॥ तत्परीणामजं शूलं
दुर्विज्ञेयं महागदम् । आहाररसवाहीनां स्रोतसां दुष्टिहेतुकम् ॥

अर्थ—यह शूल कुक्षी, पार्श्व, जठर, नाभि, वस्ती, स्तनांतर, पृष्ठमूल इन में पृथक् पृथक् उत्पन्न होता है साठी चावलों को भक्षण करने से वृद्धिगत होता है- यह परिणामशूल अन्नरस वाहिनी नाडियों को विकार उत्पन्न करता है ॥

वातिकशूल के लक्षण

आध्मानाटोपविण्मूत्रनिबंधारतिवेपनैः ।

स्निग्धोष्णोपशमप्रायं वातिकं तद्द्रुदेद्रिपक् ॥

अर्थ—पेट का फूलना तथा पेट में गुडगुडशब्द, मलमूत्र का अवरोध, अरति (मन का न लगना), कंप यह लक्षण हैं और चिकना, गरम, पदार्थ से शांति होय ऐसे शूल को वातिक कहते हैं ॥

पैत्तिकशूल के लक्षण

तृष्णादाहारतिस्वेदकटुम्ललवणोत्तरम् ।

शूलं शीतशमप्रायं पैत्तिकं लक्षयेद्बुधः ॥

अर्थ—प्यास, दाह, चित्त का न लगना, पसीना यह लक्षण होंय तीखा, खट्टा, नोन का ऐसे पदार्थ खाने से चढ़नेवाला और शीतपदार्थ के सेवन से शांति होय ऐसा शूल पित्त का जानना ॥

कफजन्य शूलके लक्षण

छर्दिहृत्लाससंमोहं स्वल्परुग्दीर्घसंततिः ।

कटुतिक्तोपशांतं च तच्च ज्ञेयं कफात्मकम् ॥

अर्थ—वमन, ओकारी और संमोह, (इन्द्री और मन को मोह) ये लक्षण जिसमें बहुत होंय, पीडा थोड़ी होय, शूल बहुत दिन रहे, कड़वे और तीबरे पदार्थ से शांति होय उस शूल को कफात्मक जानना ॥

द्वंद्वजसन्निपातशूल के लक्षण

संसृष्टलक्षणं यच्च द्विदोषं परिकल्पयेत् ।

त्रिदोषजमसाध्यं तु क्षीणमांसवलानलम् ॥

अर्थ—जिस में दो दोषों के लक्षण मिले हों उस को द्वंद्वज कहते हैं और तीन दोषों के लक्षणों से त्रिदोषज जानना, मांस बल और अग्नि ये जिस के क्षीण हो गये हों ऐसा शूलरोग असाध्य जानना ॥

शूल के उपद्रव

वेदना च तृषा मूर्छा आनाहो गौरवारुची ।

कासश्वासौ च हिक्का च शूलस्योपद्रवाः स्मृताः ॥

अर्थ—शूल, श्वास, मूर्छा, पेट का फुलना, अंगों का जकड़ जाना, अरुचि, खांसी, श्वास, हिक्का ये शूल के उपद्रव जानना ॥

शूलके असाध्यलक्षण

एकदोषान्वितः साध्यः कृच्छ्रसाध्यो द्विदोषजः ।

सर्वदोषोत्थितो घोरस्त्वसाध्यो भूर्युपद्रवः ॥

अर्थ—एक दोष का शूलरोग साध्य है, दो दोषों का कृच्छ्रसाध्य और तीनों दोषों का भयंकर और बहुत उपद्रवयुक्त होय वह शूल असाध्य जानना ॥

परिणामशूल की सामान्यचिकित्सा

लंघनं प्रथमं कुर्याद्वमनं च विरेचनम् ।

वस्तिकर्म परं चात्र पक्तिशूलोपशान्तये ॥

अर्थ—परिणामशूल के दूर करने को प्रथम लंघन करे फिर वमन और विरेचन दवे. फिर वस्तिकर्म करे तो परिणामशूल दूर हो ॥

वातादिकों पर सामान्यचिकित्सा

वातजं स्नेहयोगेन पित्तजं रेचनादिना । कफजं वमनाद्यैश्च प-

क्तिशूलमुपाचरेत् ॥ द्वंद्वजं स्नेहयोगेन तत्रियोगेन सर्वजम् ॥

अर्थ—वातज परिणाम शूलपर स्नेहन देना, पित्तज शूलपर रेचन करना व कफज शूलपर वमन कराना. व द्वंद्वज शूलपर स्नेहन व सन्निपातशूल के ऊपर वमन व विरेचन और स्नेहन ये तीनों उपचार करावे ॥

त्रिफलादिक्वाथ

त्रिफलाकृतमालभवं कथनं सितया मधुना मिलितं हरति ।

तनुदाहयुतास्रकपित्तरुजः किल पित्तजशूलदरं प्रदरम् ॥

अर्थ—हरद, बहेडा, आबला, अमलतास का गूदा इन के काटे में सहत और मेथी डालके देवे तो दाह, रक्तपित्त, पित्तशूल और प्रदर इन को नाश करे ॥

वमन

आकंठं पाययेन्मद्यं क्षीरमिक्षुरसं रसम् ।

मदनारिष्टजं क्वाथं सम्यक् पश्चाच्च वामयेत् ॥

अर्थ—वमन करानेवाली औषध देने के प्रथम रोगी को आकंठ पर्यंत मद्य, ईरा ता रस अथवा दूसरे रसरूप पदार्थ भोजन करावके फिर मेनफळ, नीम की छाल इन का काटा देकर वमन करावे ॥

परिणामशूल पर कल्क

विष्णुक्रांताजटाकल्कः सिताक्षौद्रघृतैर्युतः ।

परिणामभवं शूलं नाशयेत्सप्तभिर्दिनेः ॥

अर्थ—विष्णुक्रांता (कोयल) की जड़ का कल्क करके उस में मिथी, सहत और घी मिलावके पीवे तो सात दिन में परिणामशूल को नाश करे ॥

शूठीकल्क

शूठीतिलगुडैः कल्कं दुग्धेन सह योजयेत् ।

परिणामभवं शूलमामवातं त्र्यह्वान्नयेत् ॥

अर्थ—सोंठ, तिल और गुड इन का दूध में कल्क कर पीवे तो परिणामशूल और आमवात इन को नाश करे ॥

विरेचन

त्रिवृता च तथा दंत्या तैलेनैरंडजेन वा ।

दत्तं विरेचनं सद्यः पक्तिशूलनिवारणम् ॥

अर्थ—निसोय, जमालगोटा अथवा अंडी का तेल इन से कराया हुआ उल्लास तत्काल परिणामशूल का नाशक है ॥

वमन

पीत्वा तु क्षीरमाकंठं मदनक्वाथसंयुतम् । कांतारकस्य पौंद्-

स्य कोशकारस्य वा रसम् ॥ कपायं वाथ निवस्य कटुतुंबीरसं
तथा । यथाविधि वमेद्धीमान् पक्तिशूलादितो जनः ॥

अर्थ—दूध को मैनफल के काटे में मिलायके कंठपर्यंत पीवे अथवा ईख के रस में मैनफल का काटा मिलायके पीवे अथवा नींब का रस अथवा कडुई तुंबी का रस पीके विधिपूर्वक वमन करे तो परिणामशूल शांत होय ॥

गुडादिचूर्ण

पक्तिशूलं जयत्याशु गुडार्द्रतिलमोदकः । हिंवाभयं वचो वेल्लं
पीतमुष्णांबुना जयेत् ॥ आनाहशूलहृद्रोगविषूचीगुल्ममारुतान् ॥

अर्थ—गुड, अदरक, नील इन का लड्डु परिणाम शूल का नाशक है. हींग, हरड, वच, वायविडंग इन का चूर्ण गरम जल के साथ पीवे तो अफरा, शूल, हृदयरोग, विषुचिका और वायगोला इन को नाश करे ॥

सामुद्रादिचूर्ण

सामुद्रं सैंधवं क्षारौ रुचकं रोमकं विडम् । दंती लोहरजःकिट्टं
त्रिवृत्सूरणकं समम् ॥ वृद्धिगोमूत्रपयसा मंदापाकपाचितम् ।
तद्यथाग्निवलं चूर्णं पिवेदुष्णेन वारिणा ॥ जीर्णेजीर्णे च भुंजति
मांसादिघृतसाधितम् । नाभिशूलं च हृच्छूलं गुल्मं ग्रीहकृतं
जयेत् ॥ विद्रघ्यष्टीलजं हंति कफवातोद्भवं तथा । अन्नद्रवं
जरयितुमजीर्णं ग्रहणीमपि ॥ शूलानामपि सर्वेषामौषधं ना-
स्त्यतः परम् । परिणामसमुत्थस्य विशेषेणांतकं मतम् ॥

अर्थ—समुद्र का निमक, सैंधानिमक, जवाहार, सुहागा, संचर निमक, रोमक-निमक, विड निमक, दंती, लोहभस्म, मंडूरभस्म, निसोथ, जमीकंद, दही, गोमूत्र और दूध ये सब एकत्र कर मंदाग्नि से परिपक करे तयार होने पर बलाबल विचार इस की मात्रा गरम जल के साथ सेवन करे और भोजन करे हुए के उत्तम पचने पर मांस, घी, दही इत्यादिक भक्षण करे तो नाभिशूल, हृदय शूल, गोला, ग्रीहा से उत्पन्न हुआ शूल, विद्रधि, अष्टीला, कफवात, अन्नद्रव, जररिपत्त, अजीर्ण, सैंधु, ग्रहणी इन से उत्पन्न शूल इन सब शूलों को नाश करे. इस के सिवाय शूलनाशक दूसरी औषध नहीं है परिणामशूल को तो विशेष करके नाश करे है ॥

इंद्रवारुण्यादि चूर्ण

इंद्रवारुणिकामूलं कटुत्रयसमन्वितम् ।

नरोंबुना हरेत्पीतं शूलमत्यंतदुःसहम् ॥

अर्थ—इन्द्रायन की जड़ को जल में मिलाय और उस में सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण डाले फिर इस को पीवे तो अत्यंत दुःसह शूल को नाश करे ॥

एरंडादिभस्म योग

एरंडवह्निशंबूकवर्षाभूगोक्षुरं समम् ।

अंतर्दग्ध्वा पिबेदद्भिरुष्णाभिः शूलशांतये ॥

अर्थ—अंड की जड़, चित्रक, छोटा शंख, पुनर्नवा, गोखरू ये समान भाग लेवे इन को संपुट में जलायके भस्म कर ले इस भस्म को गरम जल के साथ पीवे तो शूल दूर होय ॥

पिप्पल्यादि योग

समागधिगुडं सर्पिः प्रस्थं क्षीरं चतुर्गुणम् ।

पक्वं पीत्वा जयत्याशु पक्तिशूलं समुद्धतम् ॥

अर्थ—पीपल, गुड इन को डालके ६४ तोले घी, २५६ तोले दूध में पक करे। जब सिद्ध हो जावे तब यलाबल विचारके देवे तो घोर उद्धत परिणामशूल तत्काल नाश होय ॥

त्रिपुरभैरवरस

भागो रसस्य भागश्च हेमः पिष्टं विधाय च । तथा द्वादश

भागानि ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥ ऊर्ध्वाधो गंधकं दत्त्वा पल-

मात्रं समंततः । क्षारस्य मृगशृंगस्य चूर्णं योज्यं समंततः ॥

सिंचेन्मस्याक्षिनीरेण रुद्धा यामचतुष्टयम् । पचेच्छूलहरः सूतो

भवेत्त्रिपुरभैरवः ॥ मापो मध्वाज्यसंयुक्तो देयोस्य परिणा-

मजे । अन्येष्वेरंडतैलेन कटुत्रययुतो हितः ॥

अर्थ—पारा २ भाग, सुवर्ण का चूर्ण १ भाग दोनों की कजली करके बारह भाग तांबे के कंटकवेधी पत्रों पर इस कजली का लेप कर देवे। फिर ऊपर नीचे और चारों तरफ ४ तोले गंधक का चूर्ण बिछाय देवे। फिर जवाखार हरण के सींग इन

के चूर्ण को उस के ऊपर डालके फिर ब्रह्मी का रस अथवा मछले का रस उस के ऊपर छिड़केके उस पात्र के मुख को बंद करके चार प्रहर की प्रचंड आग्नि देवे तो यह शूलनाशक त्रिपुरभैरवरस सिद्ध होवे. यह उडद के बराबर सहत और वी के साथ देवे तो परिणामशूल को नाश करे अन्य शूलों पर अंडी का तेल और त्रिकुटा के चूर्ण के साथ देवे ॥

शूलदावानलरस

शुद्धसूतं विपंगंधं पलांशं मर्दयेत् दृढम् । मरीचं पिप्पलीं शुंठीं
हिंयु सौवर्चलद्रयम् ॥ पलायकं पटूनां च चिंचाक्षारं पला-
यकम् । सप्तवारं शङ्खभस्म जंवीराम्ले निषेचयेत् ॥ पलायकं
च संयोज्यं तत्सर्वं निबुकद्रवैः । दिनं मर्द्यं कोलमात्रं भक्षये-
त्सर्वशूलनुत् ॥ अजीर्णोदरमंदाग्निमसाध्यमपि साधयेत् ।
शूलदावानलाख्योयं रसोजीर्णादिरोगहा ॥

अर्थ—पारा, गंधक, सिंगियाविष प्रत्येक चार २ तोले और मिरच, पीपल, सोंठ, हींग, संचर निमक प्रत्येक ८ तोले, निमक ३२ तोले. इमली का खार ३२ तोले और शंखभस्म ३२ तोले को गरम कर नींबू के रस में बुझावे, फिर सब औषधों को एकत्र कर नींबू के रस में एक दिन खरल करके बेर के बराबर गोली बनाय भक्षण करे यह अजीर्ण, उदररोग, मंदाग्नि इन असाध्य रोगों को भी दूर करे है. इसे शूलदावानलरस कहते हैं ॥

परिणामशूल पर मंडूर

लोहकिट्टंपलान्यष्टौ गोमूत्राढकिके पचेत् ।

परिणामभवं शूलं सद्यो हंति न संशयः ॥

अर्थ—लोहे की कीटी की भस्म ३२ तोले को २५६ तोले गोमूत्र में औटावे. फिर इस को बलाबल देखके देवे तो परिणामशूल को तत्काल नष्ट करे ॥

तारमंडूर

विडंगं चित्रकं चय्यं त्रिफला त्र्यूपणानि च । नवभागानि
चैतानि लोहकिट्टसमानि च ॥ गोमूत्रं त्रिगुणं दत्त्वा मूत्रात्
द्विगुणतो गुडः । शनैर्मृद्वग्निना पक्त्वा सुसिद्धं पिंडितां गतम् ॥
स्निग्धभांडे विनिक्षिप्य भक्षयेत्कोलमात्रया । प्राङ्मध्यांतक्र-

मेणेव भोजनस्य प्रयोजितः ॥ योगोयं श्मयत्याशु पक्तिशूलं
सुदारुणम् । कामलां पांडुरोगं च शोथं मेदोनिर्लाशंसी ॥
शूलार्तानां कृपाहेतोस्तारया प्रकटीकृतः ॥

अर्थ—वापविडंग, चित्रक, चव्य, त्रिफला, त्रिकुटा ये सब समान भाग लेवे और इन सब की बराबर लोह की कीटी की भस्म लेवे और सब से दुगुना गोमूत्र लेवे तथा गोमूत्र से दुगुना गुड लेवे सब को एकत्र कर मंदाग्नि पर पचावे जब गोलासा बंधने लगे तब उतारके इस को किसी चिकने वासन में भरके रख देवे इस में से छः मासे भोजन करने के प्रथम अथवा भोजन करने के पश्चात् खावे तो घोर दारुण पक्तिशूल शांत करे। उसी प्रकार कामला, पांडुरोग, शोथ, मेद, बवासीर इन को नाश करे यह शूलार्त मनुष्यों पर कृपा करके ताराभगवती ने प्रगट करा है ॥

भीममंडूर

यवक्षारकणा शुंठी कोलग्रंथिकचित्रकौ । प्रत्येकं पलमादाय
प्रस्थं लोहस्य किट्टतः ॥ शनैः पचेदयःपात्रे यावद्द्वीप्रलेप-
नम् । दत्त्वाष्टगुणगोमूत्रं किट्टात् शुद्धाद्विचक्षणः ॥ ततोक्षमा-
त्रान्वटकान् योजयेत्सप्तरात्रतः । आदिमध्यावसानेषु भोजन-
स्योचितस्य वै ॥ स भीमवटको ह्येष परिणामरुगंतकः ॥

अर्थ—जवाक्षार, पीपल, सोंठ, मिरच, पीपरामूल, चित्रक ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे मंडूरभस्म ६४ तोले सब को लोहपात्र में ५९२ तोले गोमूत्र डालके पचावे जब रुलछी से चिमटने लगे तब उतारके एक २ तोले की गोली बनावे इस को भोजन के प्रथम अथवा मध्य में किंवा अंत में खाय इस प्रकार सात दिन सेवन करने से परिणामशूल को नाश करे इस को भीमवटक इस प्रकार कहते हैं ॥

लोहगुग्गुलु

त्रिफला मुस्तकं व्योपं विडंगं पौष्करं वचा । चित्रकं मधुकं
चैव पलांशं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ अयोभस्म पलान्यष्टौ गुग्गु-
लुस्तावदेव तु । सर्पिषा मेलयित्वाथ कर्पमात्रं वटीकृतम् ॥
अद्यादनुपिवेत्कोष्णं वारि शूलाद्विमुच्यते । जीर्णान्नसंभवा-
त्पांडोः कामलाया हलीमकान् ॥

अर्थ—त्रिफला, नागरपोया, त्रिकुटा, वायविडंग, पुहकरमूल, वच, चित्रक, मुल-
हठी इस प्रकार प्रत्येक चार २ तोले ले लोहभस्म ३२ तोले, गूगल ३२ तोले सब
को घी में मिलाय एक २ तोले की गोली बनावे गरम जल के साथ भक्षण करे तो
परिणामशूल, पांडुरोग, कामला, हठीमक इन रोगों से छूट जावे ॥

नारिकेलक्षार

नारिकेलं सतोयं च लवणेन सुपूरितम् । मृदा च वेष्टितं शुष्कं
पक्वं गोमयवह्निना ॥ पिप्पल्या भक्षितं हंति शूलं हि परिणा-
मजम् । वातिकं पैत्तिकं वापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥

अर्थ—जलममेत सब नारियल ले उस के मुखपर छिद्र करके उस में निमक
भर देवे फिर उस के मुख को बंद कर ऊपर से मिट्टी लगायके सुखाय ले फिर
आरने उपलों की आग्नि में पकाय लेवे जब परिपक्व हो जावे तब निकालके बारीक
पीस डाले और पीपल के चूर्ण के साथ यथाशक्ति इस को भक्षण करे तो परिणाम
शूल, वात, पित्त, कफ, संनिपात इन से उत्पन्न हुए शूलों को नाश करे ॥

पथ्याद्य लोह

पथ्या लोहरजः शुंठी तच्चूर्णं मधुसर्पिपा ।

परिणामभवं हंति वातपित्तकफात्मकम् ॥

अर्थ—हरड और सोंठ इन के चूर्ण में लोहभस्म मिलायके सहत के साथ सेवन
करे तो त्रिदोषजन्य परिणामशूल को नाश करे ॥

लोहादिलेह

लोहस्य रजसो भागस्त्रिफलायास्तथा त्रयः । गुडस्याष्टौ
तथा भागा गुडान्मूत्रं चतुर्गुणम् ॥ एतत्सर्वं च विलिहेद्गुडपा-
कविधानतः । लिहेच्चैव यथाशक्ति क्षये शूले च पाकजे ॥

अर्थ—लोहभस्म १ भाग, त्रिफला ३ भाग, गुड ८ भाग और गोमूत्र गुड से चौ-
गुना लेवे इन सब को एकत्र करके गुडपाक के समान पाक करे जब इस की अव-
लेह बन जावे तब रोगी का गलाबल विचारके देवे तो क्षय, अपक्वशूल इन
को नाश करे ॥

कृष्णाद्य लोह

कृष्णाभयालोहचूर्णं विलिहन्मधुसर्पिपा ।

परिणामभवं शूलं सद्यो हंति सुदारुणम् ॥

अर्थ-पीपल, हरड, लोहभस्म इन का चूर्ण सहत और घी से मिलायके देवे तो तत्काल दारुण परिणामशूल को नाश करे ॥

कृष्णादि लोह

कृष्णाभयालोहचूर्णं गुडेन सह भक्षयेत् ।

पक्तिशूलं निहंत्याशु जठराण्यग्निमंदताम् ॥

अर्थ-पीपल, हरड, लोहभस्म इन को समान भाग ले गुड में मिलायके देवे तो पक्तिशूल, उदर और मंदाग्नि इन को नाश करे ॥

शंबूकादि गुटिका

शंबूकमूपणं चैव पंचैव लवणानि च । समांशैर्गुटिकां कृत्वा
कलंबुकरसेन वा ॥ प्रातर्भोजनकाले वा भक्षयेत्तु यथात्रलम् ।

शूलाद्विमुच्यते जंतुः सहसा परिणामजात् ॥

अर्थ-छोटे शंख की भस्म, काली मिरच, निमक, सुहागा, सैंधा निमक, विड निमक, संचर निमक ये समान भाग लेके कलंबुक नाम की औषधी के रस में घोटके गोली बनाय लेवे. इस में से प्रातःकाल अथवा भोजन के समय यथाशक्ति राय तो परिणामशूल से मुक्त होवे ॥

चतुःसमलोह

गंधं ताम्रं रसं लोहं प्रत्येकं मारितं पलम् । सर्वमेतत्समाहृत्य
विपचेत् कुशलो भिषक् ॥ आज्ये पलद्वादशके दुग्धे शतपले
वरे । पक्त्वा तच्च क्षिपेच्चूर्णं संपूतं घनतां व्रजेत् ॥ विडंग-
त्रिफलावह्नित्रिकटूनां तथैव च । क्षित्वा पलोन्मितानेतान्य-
था संमिश्रतां नयेत् ॥ ततः पिष्ट्वा शुभे भांडे स्थापयेच्च
विचक्षणः । आत्मनः शोभने घस्त्रे पूजयित्वा रविं गुरुम् ॥
घृतेन मधुना मर्द्यं भक्षयेन्मापसंमितम् । अष्टौ मापक्रमाद्या-
वन्मात्रासंस्थं भवेत्ततः ॥ अन्नपानं च दुग्धेन नारिकेलोदकेन
वा । जीर्णशाल्यन्नमुद्गाश्च सिता मांसरसादयः ॥ रसोनमवि-
रुद्धानि पलान्नान्यपि भक्षयेत् । हृच्छूलं पार्श्वशूलं च साम-
वातं कटिग्रहम् ॥ गुल्मशूलं च सर्वं च यकृतप्लीहान्विशेषतः ।

अग्निमांद्यं क्षयं कुष्ठं श्वासं कासं विचर्चिकाम् ॥ अश्मरीं मूत्र-
कृच्छ्रं च योगेनानेन शाम्यति ॥

अर्थ—गंधक, तामे की भस्म, एारे की भस्म, लोहे की भस्म प्रत्येक पल पल अर्थात् चार २ तोले लेय इन सब को एकत्र करके ४८ तोले घी और ४०० तोले दूध में डालके औटावे फिर वायविहंग, त्रिफला, चित्रक, त्रिकुटा इन प्रत्येक का चार २ तोले चूर्ण उस पाक में डालके मिलाय देवे. फिर पाक हो जावे तब उतारके उत्तम पात्र में भरके घर देवे और शुभ लग्न मुहूर्त में सूर्य, गुरु की पूजा करके सहत घृत इन के साथ उडद के प्रमाण सेवन करे और नित्य एक २ उडद बढावे इस प्रकार आठ उडद पर्यंत बढावे अनुपान दूध के साथ अथवा नारियल के जल के साथ सेवन करे. तथा पुराने चावलों का भात, मूंग, सक्कर, मांसरस और दूसरे अविरोद्ध फल अन्न भक्षण करे तो हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, कटिग्रह, गुल्म-शूल, यकृत, प्रीह, मंदाग्नि, क्षय, कुष्ठ, श्वास, खांसी, विचर्चिका, पथरी, मूत्रकृच्छ्र इतने रोग इस योग से शांत हों ॥

विडंगादि मोदक

विडंगं तंदुलं व्योषं त्रिवृद्धंतिसचित्रकम् । सर्वाण्येतानि संहृत्य
सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ गुडेन मोदकान्कृत्वा भक्षयेत्प्रातरु-
त्थितः । उष्णोदकानुपानेन दद्यादग्निविवर्धने ॥ जयेत्त्रिदोषजं
शूलं परिणामसमुद्भवम् ॥

अर्थ—वायविहंग, चौलाई, त्रिकुटा, निसोय, दंती, चित्रक इन सब का चूर्ण कर उस में गुड डालके लड्डू बनाय लेवे प्रातःकाल साथ तो त्रिदोषशूल, परिणामशूल इन को नाश करे और अग्नि को प्रदीप्त करने के वास्ते इसे गरम जल के साथ सेवन करे ॥

तिलादिवटी

तिलनागरपथ्यानां भागं शंबूकभस्मनाम् । द्विभागगुडसंयुक्तं
वटीं कृत्वाक्षभागिकाम् ॥ शीतांबुना पिबेत् प्रातर्भक्षयेत् क्षीर-
भोजनम् । सायाह्ने रसकं पीत्वा नरो मुच्येत दुर्जरात् ॥ परि-
णामसमुत्थाच्च शूलाच्चिरभक्षदापि ॥

अर्थ—तिल, सोंठ, हरड, शंख की भस्म सब समान भाग ले तथा गुड दो भाग डालके एक २ तोले की गोली बनावे इस गोली को शीतल जल के साथ प्रातःकाल

में सेवन करे तथा दूधभात भोजन करे और सायंकाल में रस पीवे तो दुर्जर और बहुत दिन का परिणामशूल दूर होवे ॥

खंडामलकरस

सुपीडितं च कूप्मांडं तुलार्धं अष्टमाज्यतः । प्रस्थार्धं खंडतुल्यं
तु पचेदामलकीरसम् ॥ प्रस्थं सुस्विन्नकूप्मांडरसं प्रस्थं पुटे
पचेत् । दर्व्यां लेपगते तस्मिन् चूर्णाकृत्य विनिक्षिपेत् ॥ द्वे द्वे
पले कणाजाजिशुंठीनां भरिचस्य च । पलं तालीसधान्याक-
चातुर्जातकमुस्तकम् ॥ कर्पप्रमाणं प्रत्येकं प्रस्थार्धं माक्षिकस्य
च । पक्तिशूलं निहंत्येतदोपत्रयभवं च यत् ॥ छर्द्यम्लपित्तं
मूर्छां च कासश्वासावरोचकम् । हृच्छूलं रक्तपित्तं च पृष्ठशूलं
च नाशयेत् ॥ रसायनमिदं श्रेष्ठं खंडामलकसंज्ञकम् ॥

अर्थ—२०० तोले पेटे के बारीक टुकड़े कर और घोंघके खूब दाबके निचोड़ डाले फिर उस को घी में भून लेवे फिर आमले का रस ३२ तोले, मिश्री ३२ तोले और पेटे का रस ६४ तोले सब को एकत्र कर पचावे जब कलछी से चिपटने लगे तब इस में पीपल, जीरा, सोंठ ये आठ २ तोले, काली मिरच ४ तोले तथा ताली-सपत्र, धनिया, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, नागरमोथा ये प्रत्येक एक २ तोले, सहत ३२ तोले सब को मिलायके सिद्ध कर लेवे, यह खंडामलकरस रसायन त्रिदोषज पक्तिशूल, वांति, अम्लपित्त, मूर्च्छा, खांसी, श्वास, अरुचि, हृदय का शूल, रक्तपित्त इन सब को नाश करे ॥

जीर्णशूल पर गुड

उट्टिर्दी शीयुमूलं च मयूरं सैधवं समम् ।

द्विगुडं जीर्णशूलं च यात्येतच्चूर्णभक्षणात् ॥

अर्थ—ऊटंकटेरी, सहजने की जड़, सपेद आंगा, सैधानिमक ये समान भाग लेकर चूर्ण करे तथा चूर्ण से दुगुना गुड मिलावे इस को भक्षण करे तो अजीर्ण से उत्पन्न हुए शूल को नाश करे ॥

योगांतर

भूमितर्वटमूलं च शूलजित्कोष्णवारिणा ।

सद्योद्भवं हरेत् शूलं लवणं चारनालकम् ॥

घृतेन सैधवं वाथ उष्णतोयैः सुवर्चलम् ॥

अर्थ-भूइतरवड की जड के चूर्ण को गरम जल के साथ देवे अथवा निमक कांजी अथवा धी, सैधव अथवा गरम जल से संचर निमक पीवे तो तत्काल शूल को नाश करे ॥

शंबूकभस्मयोग

शंबूकजं भस्म पीतं जलेनोष्णेन तत्क्षणात् ।

पक्तिजं विनिहंत्याशु शूलं विष्णुरिवासुरान् ॥

अर्थ-छोटे शंख की भस्म को गरम जल के साथ पीवे तो तत्क्षण पक्तिशूल को नाश करे ॥

नाभि पर मदनादि लेप

मदनस्य फलं तिक्तां पिष्ट्वा तिक्तं च वारिणा ।

कोष्णं कुर्यान्नाभिलेपं शूलशांतिर्भवेत्ततः ॥

अर्थ-मैनफल, कुटकी इन को जल में पीसके कुछ गरम कर नाभि पर लेप करे तो शूल को दूर करे ॥

रसादि लेप

रसं गंधं विषं म्लेच्छं मणिमथं च टंकणम् । सौराष्ट्रं मरिचं नागं
हरितालं मनःशिलाम् ॥ जेपालं कौशिकं तुत्थं नवसारं पृथक्
समम् । एतत्सर्वं क्षिपेत्खल्वे आरनालेन पेपयेत् ॥ उदरे लेपनं
कुर्याच्छीघ्रतः सर्वशूलजित् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, सिंगिया विष, ताम्रभस्म, सैधानिमक, सुहागा, फिटकरी, काली मिरच, शीशे की भस्म, हरताल, मनसिल, जमालगोटा, गूगल, लीलायोथा, नोसहर ये प्रत्येक समान भाग ले. खरल में कांजी से घोटे. फिर इस का पेट पर लेप करे तो सर्व शूलों का नाश करे ॥

शतपुष्पादि लेप

शतपुष्पसुरद्रुदिनेशपयोगदरामठसिंधुभवं हरति ।

अपि लेपस्थितोस्थिगतं कटिशूलं संधिभवं त्रिदिनात्सततम् ॥

अर्थ-सोंफ, देवदारु, आक का दूध, कूठ, हींग और सैधा निमक, इन का पेट पर लेप करे तो उदरशूल, कमर का शूल और संधिशूल इन को नाश करे ॥

कुबेराक्षयोग

एक एव कुबेराक्षो हन्ति शूलशतत्रयम् ।

किं पुनर्लशुनोपेतः सैधवेन च द्विगुना ॥

अर्थ—एक ही लताकरंज तीन सौ शूलों का नाश करे यदि उस में लहसन, धा निमक और हींग मिलायके सेवन करे तो फिर क्या ही कहना है ॥

क्षारयोग

बंध्या लांगलिकामूलं शेषं च द्विगुणं तयोः । त्रयाणां भावये-
चूर्णं त्र्यहं जंवीरजद्रवैः ॥ रुध्वा गजपुटे पाच्यं तत्क्षारं मरिचै-
घृतैः । कर्पमात्रं पिबेच्छूलात्तक्षणान्मुक्तिमाप्नुयात् ॥

अर्थ—बंध्याककोडा, कलयारी दोनों समान भाग ले सोंफ २ भाग इन तीनों का चूर्ण कर उस को तीन दिन नीबू के रस की भावना देवे. फिर इस क्षार को निकाल-के काली मिरच और घी इन से १ तोले देवे तो तक्षण शूल से मुक्त होवे ॥

खंडपिप्पली

कणाचूर्णं तु कुडवं पट्टपलं हविपस्तथा । पलं पोडशकं खंडं
शतावर्याः पलायकम् ॥ क्षीरप्रस्थद्वये सार्धं लेहीभूते तदुद्ध-
रेत् । त्रिजातमुस्तधान्याकं शुंठी मांसी द्विजीरकम् ॥ अभया-
मलकं चैव चूर्णं द्वादशकार्पिकम् । तदर्धं मरिचं भागं सारं खा-
दिरमेव च ॥ मधुत्रिफलसंयुक्तं खादेत्सिद्धं यथाबलम् । शूला-
रोचकहृत्स्नासच्छर्दिपित्ताम्लरोगनुत् ॥ अग्निसंदीपनी हृद्या खं-
डपिप्पलिका मता ॥

अर्थ—पीपल का चूर्ण ६४ तोले, घी २४ तोले, मिश्री ६४ तोले, शतावर ३२ तोले, दूध १६० तोले सब को एकत्र कर मंदाग्नि पर पक करे जब गाढा हो जावे तब उतारके उस में दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागरमोया, धनिया, सोंठ, जटामांसी, कालाजीरा, सपेदजीरा, हरड, आंवला ये प्रत्येक १२ तोले चूर्ण ले और कालीमिरच, खैरसार, सहत, हरड, बहेडा, आंवला इन प्रत्येक का चूर्ण छः छः तोले ले इन सब को मिलायके सिद्ध करे यह सिद्ध हुई औषध घलायल देखके भक्षण करे तो शूल, अरुचि, हृत्स्ना, वमन, अम्लपित्त इन को नाश करे इस औषध को खंडपिप्पली कहते हैं. यह अग्निदीपक और हृद्य है ॥

मातुलुंगादि घृत

घृताच्चतुर्गुणो देयो मातुलिंजरसो दधि । शुष्कमूलककोलाम्ल-
कपायो दाडिमांभसा॥विडंगं लवणं क्षारं पंचकोलयवानिभिः ।
पाठामूलककल्केन सिद्धं शूले घृतं मतम् ॥ हृत्पार्श्वशूलं
वै श्वासं कासं हिक्कां तथैव च । वर्ध्मगुल्मप्रमेहाशान्वातव्या-
धींश्च नाशयेत् ॥

अर्थ-घी १ भाग और बिजोरे का रस ४ भाग, दही १ भाग, सूखी मूली, बेर,
बिजोरे इन का काटा एक भाग, अनार का रस १ भाग, वायविडंग, सेंधानिमक,
सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक, अजमायन, पाठ, मूली इन का चूर्ण
१ भाग इस प्रकार लेकर सिद्ध करा हुआ घी हृदय, कूख इन स्थान का शूल, श्वास,
खांसी, हिचकी, बद, गोल्ला, प्रमेह, बवासीर, वातव्याधि, सामान्यशूल इन को
नाश करे ॥

तैल

नारायणेन तैलेन वस्तिकर्म हितं तथा ॥

अर्थ-संपूर्ण शूलों पर नारायणतैल से वस्तीकर्म करे तो शूल नष्ट होय ॥

अन्नद्रवशूलनिदान

जीर्णे जीर्यत्यजीर्णे वा यच्छूलमुपजायते ।

पथ्यापथ्यप्रयोगेण भोजनाभोजनेन वा ॥

न श्मं याति नियमात्सोन्नद्रव उदाहृतः ॥

अर्थ-भक्षण करा हुआ अन्न जीर्ण होकर वा जीर्ण होने के समय जो शूल उत्पन्न
होता है वह पथ्य करने से वा पथ्य न करने से अथवा भोजन करने से वा भोजन न
करने से जो शूल शांत नहीं होता उस को अन्नद्रवशूल कहते हैं ॥

अन्नद्रवशूल के लक्षण

अन्नद्रवाख्ये शूले तु न तावत्स्वास्थ्यमश्नुते ।

यावत्कटुकपीताम्लमन्नं न च्छर्दयेत् द्रवम् ॥

अर्थ-अन्नद्रव से जो शूल उत्पन्न भया वह शूल जबतक कटु, पीत, अम्ल ऐसे
रसों का वमन नहीं हुआ तबतक रोगी के चित्त को स्वस्थता नहीं देता ॥

वमन-विरेचन

जातमात्रे जरत्पित्ते शूलमाशु विनाशयेत् ।

पित्तांतं वमनं कृत्वा कफांतं च विरेचनम् ॥

अर्थ—जीर्ण पित्त से जो शूल होता है वह तत्काल नाश करे है इसवास्ते पित्त जबतक गिरे तबतक वमन करावे और कफ निकलने पर्यंत विरेचन कराना चाहिये ॥

सामान्ययत्न

अन्नद्रवे च तत्कार्यं जरत्पित्ते यदीरितम् ।

जरत्पित्ते तु तत्पथ्यं प्रोक्तमन्नद्रवे तु यत् ॥

आमपक्वाशये शुद्धे गच्छेदन्नद्रवः शमम् ॥

अर्थ—अन्नद्रवशूल पर वो उपचार करने चाहिये जो जरत्पित्त पर कहे हैं और जरत्पित्त शूल पर वो पथ्य करे जो अन्नद्रवशूल पर कही है. आमाशय और पक्वाशय के शुद्ध होने से अन्नद्रव शूल शांत होय ॥

मापेंडरी

मापेंडरीं सलवणां सुस्वित्रां तैलपाचिताम् ।

तादृशीं सर्पिषा खादेदन्नद्रवनिपीडितः ॥

अर्थ—उडद के बडे सैंधानिमक मिलायके नरम तैलपकों को घी के साथ खाय तो अन्नद्रव शूल नाशक है ॥

धात्रीलोह

धात्रीफलभवं चूर्णमयश्चूर्णसमन्वितम् ।

यष्टीचूर्णेन वा युक्तं लिह्यात्क्षौद्रेण तद्रते ॥

अर्थ—आंवले के चूर्ण के साथ अथवा मुलहठी के चूर्ण के साथ लोहमस्य सहत में मिलायके खावे तो अन्नद्रवशूल शांत होय ॥

पायस

श्यामाकतंडुलैः सिद्धं सिद्धं कोद्रवतंडुलैः ।

प्रियंगुतंडुलैः सिद्धं पायसं सहितं हितम् ॥

अर्थ—सामखिया या कोदों अथवा कांगनी इन के चावल डालके बनाइ हुई खीर अन्नद्रवशूल पर हितकारी है ॥

अन्न

गौडिकं सौरणं कंदं कूष्मांडमपि भक्षयेत् ।

कलाययवसक्तून्वा सक्तून्वा जलसंभवान् ॥

अर्थ—ईस, जमीकंद, पेठा, मटर, जो का सत्तू इन के चून अथवा खीलों का चून इतने पदार्थ सेवन करने से हितकारी होंगे ॥

अन्न

कुलित्थसक्तूनथवा दध्नाद्यादाधिकं वचा ।

चणकानामथो सक्तून् कोद्रवस्यौदनं तथा ॥

अर्थ—कुलथी का चून अथवा वच का चूर्ण अथवा चने के चून को अथवा कोदों का भात दही के साथ खाय तो अन्नद्रवशूल को नाश करे ॥

अन्न

गोधूमं मंडलं तत्र सर्पिपा गुणसंयुतम् ।

ससितं शीतदुग्धेन मृदितं कथितं हितम् ॥

अर्थ—गेहूं का चून घी, गुड डालके पकावे अथवा दूध और खांड डालके मसलकर पचावे, फिर इस को एक मंडल ४८ दिन पर्यंत सेवन करे तो अन्नद्रवशूलों पर हितकारी होय ॥

सामान्यचिकित्सा

अन्नद्रवो दुश्चिकित्स्यो दुर्विज्ञेयो महागदः ।

तस्मात्तस्य प्रशमने परं यत्नं समाचरेत् ॥

अर्थ—अन्नद्रवशूल घोर दुर्घट और परीक्षा करना भी कठिन है. इसी कारण इस के शांति करने के वास्ते बड़ा भारी यत्न करना चाहिये ॥

सामान्यचिकित्सा

अन्नद्रवे जरत्पित्ते वह्निर्मदो भवेद्यतः ।

तस्माद्दान्नपानानि मात्राहीनानि कारयेत् ॥

अर्थ—अन्नद्रव और जरत्पित्त इन दोनों में आग्नि मंद होती है इसीवास्ते इस रोग में जहांतक रोगी से हो सके तहांतक थोड़ा भोजन करावे ॥

भक्षण

कलाययवगोधूमाः श्यामाकाः कोरदूषकाः । राजमापाश्च मा-

पाश्च कुलित्थाः कंगुशालयः ॥ दधि लुत्तरसं क्षीरं सर्पिर्गव्यं
समाहिपम् । वास्तुकं कारवेल्लं च कर्कोटकफलानि च ।
बर्हिणो हरिणा मत्स्यरोहिताद्याः कर्पिजलाः । एतस्मिन्नामये
शस्ता मता मुनिचिकित्सकैः ॥

अर्थ—मटर, जौ, गेहूँ, सामखिया, कोदों, चौरा, उडद, कुलथी, कांगनी, साली
चावल, दही, मथा हुआ दूध, गौ का घी, भैंस का घी, बथुआ, करेला, ककोडा,
मोर, हिरण, रोहितादिक मछली, सपेद तीतर ये पदार्थ अन्नद्रवशूल पर उत्तम
मुनिवैद्यों के मान्य हैं ॥

गुडमंडूर

गुडामलकपथ्यानां चूर्णं प्रत्येकशः पलम् । त्रिपलं लोहकि-
ट्टं स्यात्तत्सर्वं मधुसर्पिपा ॥ समालोढ्य समश्रीयादक्षमात्रं
प्रमाणतः । आदिमध्यावसानेषु भोजनस्य निहंति तत् ॥
अन्नद्रवं जरत्पित्तमम्लपित्तं सुदारुणम् । परिणामसमुत्थं च
शूलं संवत्सरोत्थितम् ॥

अर्थ—गुड, आंमले, हरड इन का चूर्ण प्रत्येक चार तोले, लोहकीट की भस्म
१२ तोले लेकर सहत और घी में मिलायके उस में से १ तोले के अनुमान भोजन
के प्रारंभ में, मध्य और अंत में सेवन करे तो अन्नद्रव, जरत्पित्त, परिणामशूल, इन
से उत्पन्न हुआ शूल एक वर्ष का भी नष्ट होय ॥

शतावरीमंडूर

संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मंडूरस्य पलाष्टकम् । शतावरीरस-
स्याष्टौ दध्नस्तु पयसस्तथा ॥ पलान्यादाय चत्वारि तथा ग-
व्यस्य सर्पिपः । विपचेत्सर्वमेकत्र यावत्पिंडत्वमागतम् ॥ सिद्धं
तु भक्षयेन्मध्ये भोजनस्याग्रतोपि वा । वातात्मकं पित्तभवं
शूलं च परिणामजम् ॥ निहंत्येव हि योगोयं मंडूरस्य न संशयः ॥

अर्थ—मंडूरभस्म ३२ तोले, सत्तावर का रस, दही, दूध प्रत्येक ३२ तोले, गौ
का घी १६ तोले, सब को एकत्र करके पक करे. जब गोला बंधने लगे तब उतारके
धर लेवे इस में से यथाशक्ति भोजन, पूर्व अथवा मध्य में खाय तो वातशूल, पित्त-
शूल, परिणामशूल इन को यह मंडूर का योग नाश करे. इस में संशय नहीं है ॥

शूलरोग में पथ्य

छर्दिः स्वेदो लंघनं पायुवर्तिर्वस्तिर्निद्रा रेचनं पाचनं च । अब्दो-
त्पन्नाः शालयः पष्टिमंडस्तप्तं क्षीरं जांगलानां रसाश्च ॥ पटो-
लसौभांजनकारवेल्लकं शालिं च पाक्यानि च वास्तुकानि ।
सामुद्रसौवर्चलहिंशुविश्वं विडं शताह्वा लशुनं लवंगम् ॥ एरं-
डतैलं सुरभीजलं च तथांबुजंवीररसोपि कुष्ठम् । लघूनि च
क्षाररनांसि चेति वर्गो हितो शूलगदादितेभ्यः ॥

अर्थ—वमन, स्वेदन, लंघन, गुदा में बत्ती डालना, निद्रा, जुल्लाव, पाचन, एव
वर्ष के पुराने चावल, वाद्यमंड, गरम दूध, जंगली जीवों के मांस का रस, परवल
सहजना, करेले, बैंगन, पके हुए आम, दाख, कैथ, कालानिमक, चिरौंजी, शालि-
शाक, पत्ते के साग, वधुआ, समुद्रनिमक (पोंगा), संचरनिमक, हींग, सोंठ, वायवि
डंग, सतावर, लहसन, लौंग, अंडी का तेल, गौ का मूत्र, गरमजल, जँभीरी का रस
कूठ और हलके और सार का चूर्ण ये संपूर्ण वस्तु शूलरोगी को हितकारी कही हैं ॥

शूलरोग में अपथ्य

विरुद्धान्यन्नपानानि जागरं विपमाशनम् । रूक्षतित्तकपायाणि
शीतलानि गुरुणि च ॥ व्यायामं मैथुनं मद्यं वैदलं कटुकानि
च । वेगरोधं शुचं क्रोधं वर्जयेच्छूलवात्ररः ॥

अर्थ—विरुद्ध अन्न पान, रात्रि में जागना, विषम भोजन, रूखे, कडवे, कषेले
शीतल और भारी ऐसे पदार्थ, दंड कसरत, मैथुन और मद्य ये शूलरोगवाले को
वर्जित कहे हैं ॥

इति श्रीबृहन्नियधट्टुरत्नाकरे शूलरोगकर्मविपाक-निदान चिकित्सा पथ्याऽपथ्यसहिता समाप्ता ।

आनाहोदावर्त्तकर्मविपाकः ।

देवद्विजक्षेत्रतडागवल्मीककूपादिनां यो भेदनं करोति तं वा-
यसो नाम ग्रहो गृह्णाति तल्लक्षणमाध्मान उदावर्ती ज्वरअरुचि-
मान्पाददाही च जायते ॥

अर्थ-देवता, ब्राह्मण इन की पृथ्वी को हरण करे तथा तलाव, बांशी, कूआ, चावडी आदि को जो विगाड करे अर्थात् इन को तोडे उस को वायस नामक ग्रह ग्रहण करे उस के लक्षण ये हैं कि अफरा, उदावर्त, ज्वर, अरुचि और पैरों में दाहवान् होता है ॥

ज्योतिःशास्त्र का अभिप्राय

मध्ये पापग्रहयोश्चंद्रे यदने स्थितार्कजे जंतोः ।

श्वासक्षयविद्रधिगुल्मप्लीहादिपीडितः स नरः ॥

अर्थ-जन्मकाल में पाप ग्रहों के मध्य में चंद्रमा और सप्तम स्थान में शनि होय तो श्वास, क्षय, विद्रधि, गोला, प्लीहा इत्यादिक रोगों से पीडित होता है ॥

उदावर्तनिदान

वातविण्मूत्रजृंभास्रक्षवोद्गारवर्माद्रियैः ।

क्षुत्तृष्णोच्छ्वासनिद्राणां धृत्योदावर्तसंभवः ॥

अर्थ-अधोवायु, विष्ठा, मूत्र, जंभाई, अश्रुपात, छींक, डकार, वमन, शुक्र, भूल, प्यास, श्वास और निद्रा इन तेरह वेगों के रोकने से उदावर्तरोग उत्पन्न होय है, तेरह के नियम के करने से यह प्रयोजन है कि क्रोध, लोभ, मन इत्यादि वेगों के धारण करने से रोग उत्पन्न नहीं होय. क्योंकि इन के रोकने में तो स्वस्थता प्राप्त होती है. सब उदावर्तों में मुख्य कारण वायु है. उदावर्त की निरुक्ति इस प्रकार है. (उद्भूतेन वेगविधारणेन आवृत्तस्य वायोरावर्तनमुदावर्तः ।) ॥

वातनिरोधजन्य उदावर्त

वातमूत्रपुरीपाणां संगध्मानं कुमो रुजः ।

जठरे वातजाश्चान्ये रोगाः स्युर्वातनिग्रहात् ॥

अर्थ-अधोवायु के रोकने से अधोवायु, मल, मूत्र ये बन्द हो जाय, पेट फूल जावे, अनायास, श्रम और पेट में वादी से पीडा होय तथा और वातकृत (तोद शूलादि पीडा) होय ॥

मल रोकने का उदावर्त

आटोपशूलौ परिकर्तिका च संगः पुरीपस्य तथोर्ध्ववातः ।

पुरीपमास्यादथ वा निरेति पुरीपवेगेऽभिहते नरस्य ॥

अर्थ-मल के वेग रोकने से पेट में गुडगुडाहट होय, शूल होय, गुदा में कतरने की सी पीडा होय, मल उतरे नहीं, डकार आवे, अथवा मल मुख के द्वारा निकले ॥

मूत्र रोकने का उदावर्त

वस्तिमेहनयोः शूलं मूत्रकृच्छ्रं शिरोरुजा ।

विनामो वंक्षणानाहः स्याल्लिंगं मूत्रनिग्रहे ॥

अर्थ—मूत्र के वेग रोकने से वस्ति (मूत्राशय) और शिश्न इंद्रिय इन में पीडा होय, मूत्र कष्ट से उतरे, मस्तक में पीडा, पीडा से शरीर सीधा होय नहीं, पेट में अफरा होय ॥

जंभाई रोकने का उदावर्त

मन्यागलस्तंभशिरोविकारा जंभोपरोधात्पवनात्मकाः स्युः ।

तथाक्षिनासावदनामयाश्च भवंति तीव्राः सह कर्णरोगैः ॥

अर्थ—जंभाई आती हुई के रोकने से मन्या कहिये नाड के पीछे की नस और गला इन का स्तंभ होय और वातजन्य विकार मस्तक में होय, उसी प्रकार नेत्ररोग, नासारोग, मुखरोग और कर्णरोग ये तीव्र होय हैं ॥

अश्रुपात रोकने का उदावर्त

आनन्दजं वाप्यथ शोकजं वा नेत्रोदकं प्रातममुंचतो हि ।

शिरोगुरुत्वं नयनामयाश्च भवंति तीव्राः सह पीनसेन ॥

अर्थ—आनंद से अथवा शोक से प्रगट अश्रुपातों को जो मनुष्य नहीं त्याग करे, उस के इतने रोग प्रगट होय. मस्तक भारी रहे, नेत्ररोग और पीनस ये प्रबल हों ॥

छींक रोकने का उदावर्त

मन्यास्तंभशिरःशूलमर्दितार्धविभेदकौ ।

इन्द्रियाणां च दौर्बल्यं क्षवथोः स्याद्विधारणात् ॥

अर्थ—मन्या (कहिये नाड के पिछाडी की नस) का स्तंभ (कहिये जकड़-जाना), शिर में शूल का चलना, आधा मुख टेढ़ा हो जाना, अर्धांगवात और सब इंद्रिय दुर्बल हो जाना इतने रोग आती हुई छींक रोकने से होते हैं ॥

डकार रोकने का उदावर्त

कंठास्यपूर्णत्वमतीव तोदः कूजंश्च वायोरथवाऽप्रवृत्तिः ।

उद्गारवेगेऽभिहृते भवंति जंतोर्विकाराः पवनप्रसूताः ॥

अर्थ—आती हुई डकार के वेग के रोकने से वातजन्य इतने रोग होते हैं. कंठ और

मुख भारीसा मालुम होय; अत्यन्त नोचने की सी पीडा होय, अव्यक्तभाषण, (अर्थात् जो समझ में न आवे) ॥

वमन रोकने का उदावर्त

कंडुकोठारुचिव्यंगशोथपांड्वामयज्वराः ।

कुष्ठहृत्लासवीसर्पाच्छर्दिनिग्रहजा गदाः ॥

अर्थ—जो मनुष्य आती हुई वमन के वेग को रोके उस के अंगों में खुजली चले, देह में चकत्ता हो जाय, अरुचि, मुख पर झाँई सी पडे, सृजन, पांडुरोग, ज्वर, कुष्ठ, खाली रद्द, विसर्परोग ये होंय ॥

वीर्य रोकने का उदावर्त

मूत्राशये वै गुदमुष्कयोश्च शोथो रुजा मूत्रविनिग्रहश्च ।

शुक्राश्मरी तत्स्रवणं भवेच्च एते विकाराभिहते च शुक्रे ॥

अर्थ—मैथुन करते समय वीर्य निकलते को जो मनुष्य रोके अथवा और प्रकार से शुक्र के वेग को रोके उस के मूत्राशय में सृजन होय तथा गुदा में और अंडकोशों में पीडा होय, मूत्र बडे कष्ट से उत्तरे, शुक्राश्मरी (पथरी के निदान में आगे कहेंगे) होय, शुरु का स्राव होने ऐसे अनेक प्रकार के रोग होंय ॥

भूक रोकने का उदावर्त

तन्द्रांगमर्दावरुचिः श्रमश्च क्षुधाभिघातात्कृशता च दृष्टेः ॥

अर्थ—भूख के रोकने से तन्द्रा, अंगों का टूटना, अरुचि, श्रम और दृष्टि कामन्द होना ये रोग प्रगट होंय. चकार से कृशता और दुर्बलता होय ये अन्य ग्रन्थसे जानना ॥

प्यास रोकने का उदावर्त

कंठास्यशोषः श्रवणावरोधस्तृपाभिघाताद्धृदयव्यथा वै ॥

अर्थ—प्यास के रोकने से कंठ और मुख का सूखना, कानों से मन्द सुनना और हृदय में पीडा ये लक्षण होंय ॥

श्वासोच्छ्वास रोकने का उदावर्त

श्रांतस्य निःश्वासविनिग्रहेण हृद्रोगमोहावथ वापि गुल्मः ॥

अर्थ—जो मनुष्य हार गया हो और वह श्वास को रोके उस के हृदयरोग, मोह और वायगोला इतने रोग होंय ॥

निद्राविघातजन्य उदावर्त

जृम्भांगमर्दाक्षिशिरोतिजाड्यं निद्राभिघातादथवापि तंद्रा ॥

अर्थ—आती हुई निद्रा के रोकने से जंभाई, अंगों का टूटना, नेत्र और मस्तक का अत्यंत जड होना और तन्द्रा ये विकार होय. अब कहते हैं कि वेग रोकने से प्रगट रोगों को कहके अब रूक्षादि कारणों से कुपितवायु से उत्पन्न होनेवाले उदावर्त रोगों को कहते हैं ॥

रूक्षादि कुपितवातज उदावर्त

वायुः कोष्ठानुगै रूक्षैः कपायकटुतिक्तकैः । भोजनैः कुपितः
सद्य उदावर्तं करोति च ॥ वातमूत्रपुरीपाशुकफमेदवहानि
च । स्रोतांस्युदावर्तयति पुरीषं चातिवर्तयेत् ॥ ततो हृद्भस्ति-
शूलातो हृल्लासारतिपीडितः। वातमूत्रपुरीपाणि कृच्छ्रेण लभते
नरः ॥ श्वासकासप्रतिश्यायदाहमोहतृपाज्वरान् । वमीहिक्का-
शिरोरोगमनःश्रवणविभ्रमान् ॥ वहूनन्यांश्च लभते विका-
रान्वातकोपजान् ॥

अर्थ—रूखा, कपेला, तीसा और कडुआ ऐसे भोजन करने से कोष्ठगतवायु, मलमूत्र, अश्रुपात, कफ और मेद इन के वहनेवाली नाडीन के मार्ग को रोक दे और मल को सुखाय दे तब रोगी हृदय-मूत्रस्थान में शूल के होने से बेकल हो, सूखी रह, अस्वस्थपना इन से पीडित होय. मलमूत्र और वात ये कष्ट से उतरे और श्वास, सांसी, पीनस, दाह, मोह, प्यास, ज्वर, वमन, हिचकी, मस्तकरोग, मन की भ्रांति, मंद सुने तथा वातकोप से और भी बहुत से विकार होय ॥

अधोवातजन्य उदावर्त की चिकित्सा

अधोवातनिरोधोत्थे ह्युदावर्तं हितं मतम् ।

स्नेहपानं तथा स्वेदो वस्तिर्यच्चानुलोमनम् ॥

अर्थ—जो प्राणी अधोवात (पाद) रोकने से उदावर्त करके पीडित होय उस को स्नेहपान, स्नेह, वस्ति और अनुलोमक औषध ये हितकारी है ॥

मलनिरोधज उदावर्त की चिकित्सा

विड्विघातसमुत्थे तु विड्वभेद्यन्नं तथौषधम् ।

वर्त्यभ्यंगावगाहाश्च स्वेदो वस्तिर्हितो मतः ॥

अर्थ-मल के रोकने से जो उदावर्त रोग होवे उस पर मल को निकालनेवाले अन्न, औषध और अभ्यंगस्नान, स्वेद, वस्ति ये हितकारी हैं ॥

मूत्रनिरोधज उदावर्त की चिकित्सा

मूत्रावरोधजनिते क्षीरं वारि च ना पिवेत् ।

दुःस्पर्शास्वरसं चापि कपायं ककुभस्य च ॥

अर्थ-मूत्र रोकने से प्रगट हुए उदावर्त पर दूध, जल दोनों को मिलापके पीवे अथवा कटेरी का स्वरस अथवा कोहवृक्ष की छाल का काढा पीवे ॥

उर्वारुजीजं तोयेन पिवेद्वा लवणीकृतम् । सितामिक्षुरसं क्षीरं

द्राक्षारसमथापि वा ॥ सर्वं चैव प्रकुर्वीत मूत्रकृच्छ्राश्मरीविधिम् ॥

अर्थ-खीरा के बीजों को जल में पीस सेधा निमक डालके पीवे अथवा मिथ्री, ईख का रस, दूध अथवा दाख का रस पीवे तथा मूत्रकृच्छ्र और पथरी की विधि करे तो मूत्रजन्य उदावर्त दूर होवे ॥

जंभाईनिरोधज उदावर्त की चिकित्सा

जृम्भानिरोधजे स्नेहं स्वेदं चापि प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-जंभाई के रोकने से जो उदावर्त होता है उस पर स्नेहपान, पसीने ये उपचार करे ॥

वाष्पावरोधज व छींक के रोकने के उदावर्त की चिकित्सा

अन्यानपि प्रयुंजीत समीरणहरान्विधीन् । नेत्रनीरावरोधेत्ये

मुंचेदुच्चैर्दृशो जलम् ॥ स्वप्यात्सुखेन तस्याग्रे कथयेच्च शुभाः

कथाः । शिक्काविघातने तीक्ष्णघ्राणनस्यार्कदर्शनैः ॥ प्रवर्त-

येत्क्षुतं सक्तां स्नेहस्वेदौ च शीलयेत् ॥

अर्थ-आए हुए अश्रुपातों के रोकने से जो उदावर्त होवे उस पर अन्य दूसरे वातहरणकर्ता उपचार करे तथा इस अश्रुपात रोकने से प्रगट उदावर्त पर नेत्रों से बहुतसा पानी निकालना चाहिये, फिर स्वस्थता पूर्वक सुलावे, उत्तम वार्ता सुनावे- छींक के उदावर्त पर तीक्ष्ण पदार्थों के वास से अथवा नस्य, सूर्य के सामने देखना ऐसे उपाय करने से रुकी हुई छींक साफ होवे तथा पसीने निकालके स्नेह पान करे ॥

जंभाईजनित उदावर्त की चिकित्सा

स्नेहस्वेदैरुदावर्ते जृम्भजं समुपाचरेत् ।

अंसमोक्षजजे कार्याः स्वप्नो मद्यं प्रियाः कथाः ॥

अर्ध-जंभाई के रोकने से उत्पन्न उदावर्त्तवाले को स्नेहन तथा स्वेदन ये उपचार करे और अंसमोक्षज उदावर्त्त पर निद्रा लेना, मद्य पीना और कर्णप्रिय वार्त्ताओं का सुनना ये उपचार करे ॥

छींकजन्य उदावर्त्त की चिकित्सा

क्ष्वजे क्ष्वपत्रेण घ्राणस्थे नानयेत्क्ष्वम् ।

तथोर्ध्वजत्रुकेभ्यंगः स्वेदो धूमः समाहृतः ॥

अर्थ-छींक के रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर ईख इत्यादिक के पत्ते को नाक में डालके छींक लावे तथा गरदन पर मालिस, पसीने निकालना, धूमपान इत्यादिक उपचार करे ॥

उद्गारछर्दिनिरोधज उदावर्त्त की चिकित्सा

उद्गारस्यावरोधे तु स्नेहिकं धूममाचरेत् । छर्दिनिग्रहसंजाते

वमनं लंघनं हितम् ॥ विरेचनं चात्र मतं तैलेनाभ्यंजनं हितम् ।

वस्तिशुद्धिकरैः स्निग्धं चतुर्गुणजलं पयः ॥

अर्थ-डकार के रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर स्निग्ध पदार्थ आग्नि में डालके उस का धुंआ पीवे. आई हुई रद्द के वेग को रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर वमन करावे तथा लंघन, विरेचन, तैल की मालिस और वस्तिशुद्धकर्ता औषधों का काढा चतुर्याश दूध में डालके पिलावे ॥

उद्गार (डकार) जन्य उदावर्त्त पर

हितं वातघ्नमाज्यं च घृतं चोत्तरभक्तिकम् ।

उद्गारजे क्रमोपेतं स्नेहिकं धूममाचरेत् ॥

अर्थ-डकार रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर वातनाशक घृत देवे तथा देह के ऊपर के भाग पर उस घृत को लगावे और स्नेहयुक्त धूमपान करे ॥

छर्दिजन्य उदावर्त्त पर

छर्द्याघातं यथादोषं नस्यस्नेहादिभिर्जयेत् ।

भुक्त्वा प्रच्छर्दनं धूमो लंघनं रक्तमोक्षणम् ॥

अर्थ-वमन रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त को नस्य और स्नेहन इत्यादिक कर्माँ से जीते और भोजन करके रद्द करके निकाल देवे तथा धूमपान, लंघन और रुधिर का निकालना ये उपाय करे ॥

क्षुधातृपोत्थ उदावर्त पर

क्षुद्धिघातसमुद्भूते स्निग्धमुष्णं तथा लघु । रुच्यमल्पहितं
भक्ष्यं पुष्पं सेव्यं सुगंधि यत् ॥ तृपाविघातसंभूते शीतः सर्वो
विधिर्हितः । कर्पूरशिशिरं स्वल्पं पिबेत्तोयं शनैः शनैः ॥

अर्थ—भूख के रोकने से उत्पन्न उदावर्त पर स्निग्ध, गरम, हलके, रुचिकारी, थोड़े, हितकारी ऐसे पदार्थ भक्षण करे. सुगंधित फूलों को मूँघे और तृपा (प्यास) रोकने के उदावर्त पर संपूर्ण शीतल उपचार करे तथा कपूर मिलायके शीतल करे जल को धीरे २ पीवे ॥

श्रमनिद्रोत्थ उदावर्त पर

श्रमश्वासकृते शस्तो विश्रामः सरसौदनः । निद्रावेगविघातोत्थे
पिबेत्क्षीरं सितायुतम् ॥ संवाहनं सुशय्यात्र हितस्वप्नः प्रियाः कथाः ॥

अर्थ—श्रमजन्य उदावर्त पर विश्राम लेवे (सस्ताना), मांसरस के साथ भात भोजन करे. निद्रा के रोकने से उत्पन्न उदावर्त पर मिथी मिलाय दूध पीवे और उत्तम शय्या, पैरों को दावना, प्यारी कहानियों को सुनना, इस प्रकार से निद्रा लानी चाहिये ॥

सामान्य चिकित्सा

रूक्षान्नपानं व्यायामो विरेकश्चात्र शस्यते ।
वस्तिशुद्धिकरं वापि चतुर्गुणजलं पयः ॥

अर्थ—उदावर्त व्याधिवाले को रूक्ष अन्न और पान, विरेचन, वस्तिशुद्धिकारी औषध देवे और दूध में चौगुना जल मिलायके पिलावे ॥

विधारादि लेप

उदावर्तविनाशाय त्थुदावर्ते प्रलेपनम् ।
विधारा मृत्तिका चैव करंजा सारिवा तथा ॥
गोमूत्रेण प्रलेपोयमुदावर्तं विनाशयेत् ॥

अर्थ—विधायरा, गोपीचंदन, कंजा, सारिवा इन को गोमूत्र में पीस उदावर्त पर लेप करे तो उस को नाश करे ॥

रसोनादि प्राश

रसोनमद्यं संमिश्र्य पिबेत्प्रातः प्रकांक्षितम् ।

गुल्मोदावर्तशूलघ्नं दीपनं बलवर्धनम् ॥

अर्थ—लहसन और मद्य इन दोनों को मिलाय प्रातःकाल पीवे तो गोला, उदावर्त और शूल इन को नाश करे ॥

कदलीफलयोग

दुःस्पर्शस्वरसैर्वापि कपाये कुंकुमस्य च ।

और्वारुवीजं तोयेन पिबेद्वा लवलीफलम् ॥

अर्थ—धमासे का स्वरस केशर के काटे में अथवा खीरे के बीजों में पीस उस को जल में छान लेवे उस में केला मिलायके पीवे तो उदावर्त रोग दूर होय ॥

पंचमूलक्षीर

पंचमूलीकृतं क्षीरं द्राक्षारसमथापि वा ।

सर्वथैव प्रयुंजीत मूत्रकृच्छ्राश्मरीविधौ ॥

अर्थ—पंचमूल का काढा अथवा दास का काढा मूत्रकृच्छ्र और पथरी इन पर देवे ॥

सुवर्चलादि पेय

सुवर्चलाद्यां मदिरां मूत्रेण च गवां पिबेत् ।

एलां वाप्यथ मद्येन क्षीरेण च पिबेन्नरः ॥

अर्थ—सोरे का चूर्ण डालके मद्य पीवे अथवा गोमूत्र देवे अथवा इलायची मद्य के साथ अथवा दूध के साथ पीवे ॥

धात्रीस्वरस

धात्रीफलानां स्वरसं जलं वापि पिबेद्यहम् ।

रसमश्वपुरीपस्य गर्दभस्याथवा पिबेत् ॥

अर्थ—आवलों का स्वरस अथवा काढा तीन दिन पीवे अथवा घोड़े की या गधे की लीद का रस पीवे तो उदावर्त दूर होय ॥

वट्यादि यूष

वट्यायूषेण पिप्पल्या मूलकानां रसेन च ।

भुक्त्वा स्निग्धमुदावर्ताद्वातगुल्माद्विमुच्यते ॥

अर्थ-पीपल का यूप अथवा पीपल के रस में घी डालके पीवे तो उदावर्त और वातगुल्म (वायगोला) दूर होवे ॥

शामादि काथ

शामा दंती द्रवंती लुक् महाशामामृता त्रिवृत् । सप्तला शंखिनी
श्वेता राजवृक्षः सत्रिल्वकः ॥ कंपिलकं करंजश्च हेमक्षीरीत्ययं
गणः । सर्पिस्तैलं रजःकाथः कल्कश्चान्यतमं तथा ॥ उदावर्तो-
दरानाहविपगुल्मविनाशनम् ॥

अर्थ-हलदी, दंती, द्रवंती (रुदंती), धूहर, काळा विधायरा, गिलोय, निसोय, सातला (धूहर का भेद), संखाहूली, कटेरी, अमलतास का गूदा, बेलगिरी, कपीला, कंजा, गूलर इन सब का काढा अथवा कल्क, घी, तेल अथवा चूर्ण इन में से किसी एक का उपयोग करने से उदावर्त, उदर, अफरा, विप और गोला इन को नाश करे ॥

नाराचचूर्ण

खंडं पलं त्रिवृत्ताक्षः कृष्णाकर्पद्वयं चूर्णम् । प्राग्भोजनस्य मधुना
विडालपदकं नरो लिह्यात् ॥ एतद्गाढपुरीषे ज्ञेयं विज्ञैरुदावर्ते ।
मधुरं नरपतियोग्यं चूर्णं नाराचकं नाम ॥

अर्थ-मिश्री ४ तोले, निसोय १ तोला, पीपल २ तोले इन का चूर्ण भोजन के प्रथम सहत के साथ १ तोला चाटे तो जिस का मल भीतर कठोर हो गया हो उस को यह दूर करे तथा उदावर्त को नाश करे यह मिष्ट है इसी कारण इस को राजा वाबू आदि सुकुमार मनुष्यों को देना चाहिये. इस को नाराचचूर्ण कहते हैं ॥

दंत्यादिक वर्ती

विपाच्य मूत्राम्लरसेन दंती पिंडीतकृष्णाविडकुष्ठधूमैः ।

वर्ति करांगुष्ठनिभां घृताक्तां गुदे रुजानाहहरीं विदध्यात् ॥

अर्थ-दंती की जड़, मेनफळ, पीपल, विड निमक, कूठ, धुंआ इन के चूर्ण को गोमूत्र, नींबू का रस इन में औटायेके कपडे में लगाय उस की हाथ के अंगूठे के समान मोटी बत्ती बनावे उस को घी में भिगोय लेवे फिर इस का गुदा में रखे तो पीटा और अफरा इन को नाश करे ॥

हिंवादिचूर्ण

हिंगूग्रगंधाविडशुंध्यजाजी हरीतकी पुष्करमूलकुष्ठम् ।

भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदरानाहविपूचिकासु ॥

अर्थ—हींग १, वच २, विड निमक ३, सोंठ ४, जीरा ५, हरड ६, पुहकरमूल ७, कूठ ८ इस प्रकार भाग लेकर इन का चारीक चूर्ण करके भक्षण करे तो गोला, उदर, अफरा, विपूचिका इन को नाश करे ॥

भद्रदार्वादि चूर्ण

भद्रदारु घनं मूर्वा हरिद्रा मधुकं तथा ।

कोलप्रमाणं तु पिबेदंतरिक्षेण वारिणा ॥

अर्थ—तेलिया देवदारु, नागरमोथा, मूर्वा, हलदी और मुलहठी इन का चूर्ण तोले भर वर्षा के जल के साथ पीवे तो उदावर्त्त दूर हो ॥

हरीतक्यादि चूर्ण

हरीतकी यवक्षारपीलुनी त्रिवृता तथा ।

घृते चूर्णमिदं पेयमुदावर्त्तं विनाशयेत् ॥

अर्थ—छोटी हरड, जवासार, अखरोट, निसोथ इन का चूर्ण घी के साथ खाय तो उदावर्त्त नाश होय ॥

गुडाष्टक

सव्योपं पिप्पलीमूलं त्रिवृदंती च चित्रकम् । तच्चूर्णं गुंजसंयुक्तं

भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥ एतद्गुडाष्टकं नाम्ना बलवर्णाग्निवर्धनम् ।

उदावर्त्तप्लीहगुल्मशोथपांड्वामयापहम् ॥

अर्थ—त्रिकुटा, पीपरामूल, निसोथ, दंती, चित्रक इन का चूर्ण कर गुड मिलाय ले फिर इस को प्रातःकाल भक्षण करे इस को गुडाष्टक कहते हैं यह बल, वर्ण, अग्नि इन को बढावे तथा उदावर्त्त, प्लीहा, गोला, सूजन, पांडु इन सब रोगों को दूर करे ॥

शुष्कमूलादि घृत

मूलकं शुष्कमाद्रं च वर्षाभूः पंचमूलकम् ।

कृतमालफलं चाशु पक्त्वा चैतद्घृतं पचेत् ॥

तत्पीतं शमयेत्क्षप्रमुदावर्त्तमशोपतः ॥

अर्थ—सुखी हुई मूली, अदरस, पुनर्नवा, लघु पंचमूल, अमलतास इन के काढ़े में घी डालके भिद्ध करे. इस के पीने से संपूर्ण उदावर्त्तों का नाश होय ॥

त्रिकटुकाद्या वर्ति

वर्तित्रिकटुकसैधवसर्पग्रहधूमकुष्ठमदनफलैः । मधुनि गुडे वा
पक्वैर्निहिता सांगुष्ठपरिमाणा ॥ वर्तिरियं दृष्टफलाशनैः प्रणिहिता
गुदे घृताभ्यक्ता । आनाहोदावर्तो श्मयति जठरं तथा गुल्मम् ॥

अर्थ—त्रिकुटा, सैधानिमक, सरसों, घर का धुंआ, कूठ, भैनफळ इन के
चूर्ण को सहत अथवा घी में भिगोयके बत्ती बनाय ले इस को गुदा में रखे तो
अफरा, उदावर्त, उदर, गोला इन को दूर करे. यह प्रयोग अनुभव करा
(अजमाया हुआ) है ॥

मदनफलादिक फलवर्ति

मदनं पिप्पली कुष्ठं वचा गौराश्च सर्पपाः ।

गुडक्षीरसमायुक्ता फलवर्तिरिहोदिता ॥

अर्थ—भैनफळ, पीपळ, कूठ, वच, सफेद सरसों और गुड इन को दूध से
पीसके कपडे पर लेप देवे फिर इस की बत्ती बनायके गुदा में रखे तो उदावर्त
नाशक होवे ॥

हिंग्वादि वर्ति

हिंगुमाक्षिकसिंधूत्थैः पक्त्वा वर्ति सुवर्तिताम् ।

घृताभ्यक्तां गुदे दद्यादुदावर्तविनाशिनीम् ॥

अर्थ—हिंग, सहत, सैधानिमक इन को एकत्र खरल कर कपडे में लगायके उस
की बत्ती बनाय लेवे. फिर इस को आंचपर सेक लेवे. फिर घी में भिगोकर गुदा में
ढाले तो उदावर्त को नाश करे ॥

उदावर्त पर पथ्य

उदावर्ते हितं सर्वं पाचनं लघुभोजनम् ॥

अर्थ—उदावर्तरोग पर लघु पाचक ऐसे पदार्थ भोजन करना हितकारी है ॥

उदावर्त पर अपथ्य

विष्टंभीनि विरुद्धानि कपायाणि गुह्मूणि वा ।

उदावर्ते प्रयत्नेन वर्जयेत्सततं नरः ॥

अर्थ—विष्टंभकारी, भारी, विरुद्ध पदार्थ, कपेले इतने अन्न उदावर्त रोग पर मनु-
ष्य को यत्नपूर्वक त्याग देने चाहिये ॥

बराबर घी और समुद्र निमक और खीलों का चूर्ण करके उस को शंख में भर उस की संधियों को लेप करके बंद कर देवे फिर पुट में धरके फूंक देवे. जब शीतल होय तब निकाल खरल कर लेवे इस को अन्न में मिलायके अथवा जल में मिलायके देवे तो आनाह रोग को शांत करे ॥

तुंबुरुचूर्ण

तुंबुरुश्वाभया हिंगु पौष्करं लवणत्रयम् । यवानी च यव-
क्षारं विडंगेन समानि च ॥ त्रिवृत्रिगुणितं चूर्णं पिवेदुष्णेन
वारिणा । आनाहमुदराण्यष्टौ विट्बंधं चापि नाशयेत् ॥

अर्थ—धनिया, हरड, हींग, पुहकर मूल, सैंधानिमक, विडनिमक, कचियानिमक, अजमायन, जवाखार, वायविडंग ये सामानभाग ले निसोय तीन भाग इन सब का चूर्ण गरम जल से पीवे तो अफरा, आठ प्रकार के उदर और विट्बंध इन को नाश करे ॥

वचादि चूर्ण

वचाभयाचित्रकया च शूकान् सपिप्पलीकातिविपान्सकुष्ठान् ।
उष्णांबुनानाहविमूढवातान्पीत्वा जलं वा स हि तोदनाशी ॥

अर्थ—वच, हरड, चित्रक, जवाखार, पीपल, अतीस, कूठ इन के चूर्ण को गरम जल के साथ देवे और जलयुक्त उत्तम भोजन करे तो यह अफरा, मूढवात इन को नाश करे ॥

त्रिवृतादि गुटिका

त्रिवृत्कृष्णाहरीतकयो द्विचतुःपंचभागिकाः ।

गुडे तु तुल्या वटिका हरत्यानाहमुल्बणम् ॥

अर्थ—निसोय, पीपल और हरड ये क्रम से दो, चार और पांच भाग ले चूर्ण कर लेवे. इस चूर्ण की बराबर गुड डालके गोली बनाय ले. इस के खाने से दारुण आनाह रोग दूर होय ॥

सुह्यादि वटी

त्रिवृद्धरीतकी श्यामा सुहिक्षीरेण भावयेत् ।

वटिका मूत्रपीतास्ताः श्रेष्ठास्त्वानाहनाशनाः ॥

अर्थ—निसोय, हरड, पीपल इन के चूर्ण में थूहर के दूष की भावना देवे फिर इस की गोली करके गोमूत्र के साथ खाय तो यह अफरा नाश करने में श्रेष्ठ है ॥

दारुपट्टकादि लेप

दारुपट्टकादिलेपश्च सोष्णः कांजिकपेपितः ।

आनाहस्य प्रशमनः पूर्ववैद्यैः प्रकीर्तितः ॥

अर्थ-नीचे लिखा हुआ देवदारु पट्टक औषधों को कांजी में पीस गरम २ लेप करे तो आनाह रोग को शमन करे. इस प्रकार पहले वैद्यों ने कहा है ॥

दारुपट्टकादि योग

देवदारु वचा कुष्ठं शताह्वा हिंगु सेंधवम् ।

प्रपिष्ट्वा कांजिके लेपादानाहं नाशयत्यपि ॥

अर्थ-देवदारु, वचा, कूठ, सतावर, हींग, सैधानिमक इन का चूर्ण कांजी में पीस-के लेप करने से आनाहरोग नाश होय ॥

स्थिरादि घृत

स्थिरादिवर्गस्य पुनर्नवायाः शंपाकभूर्ताकिकरंजयोश्च ।

सिद्धः कपायो द्विपलासिकानां प्रस्थो घृतं स्यात् परिवृद्धवाते ॥

अर्थ-सालपर्ण्यादि वर्ग, पुनर्नवा, अमलतास का गूदा, चिरायता, कंजा इन का काढा ८ तोले ले उस में केले कारस ६४ तोले और घी ६४ तोले डालके सिद्ध करे इस घृत को कुपित घात पर वैद्य देवे ॥

उदावर्त पर पथ्य

स्नेहस्वेदविरेकाश्च वस्तयः फलवर्तयः । अभ्यंगश्च यवाः सर्व-

सृष्टविष्मूत्रमारुतम् ॥ ग्राम्योदकानूपरसा रुबुतैलं च वारुणी ।

वालमूलकशम्याकत्रिवृत्तिलसुधादलम् ॥ शृंगवेरं मातुलगं

यवक्षारो हरीतकी । लवंगं रामठं द्राक्षा गोमूत्रं लवणानि च ॥

अधोवातसमुत्थे तु स्नेहस्वेदाश्च वर्तयः । वस्तयोऽन्नानि पान-

नानि समीरणहराणि च ॥ पुरीषजे तथा वस्तिः स्वेदोऽभ्यं-

गोऽवगाहनम् । फलवर्तिश्च पानानि विद्भेदीन्यशनानि च ॥

मूत्रवेगसमुत्पन्ने त्रिविधं वस्तिकर्म च । स्वेदोऽभ्यंगोवगाहश्च

सर्पिपश्चावपीडनम् ॥ उद्गारोत्थे तु द्विक्रात्रं कासजे कास-

जिद्विधिः । क्षवजे स्वेदनं धूमो घृतं चोत्तरवस्तिकम् ॥ क्षव-

प्रवर्त्तनं नस्यमभ्यंगश्चोर्ध्वजञ्जुकः । शीतान्नपानं तृष्णोत्थे जृ-
म्भोत्थे वातजित्क्रिया ॥ निद्रावेगोत्थिते क्षीरं स्वप्नं संवाहनानि
च । बुभुक्षोत्थे स्निग्धमल्पमुष्णं च लघुभोजनम् ॥ वाष्पजे
वाष्पसंमोक्षः स्वप्नो मद्यं प्रियाः कथाः । आमश्वाससमुत्पन्ने
विश्रामो वातहारि च ॥ शुक्रोत्थे वस्तिरभ्यंगोऽवगाहश्चरणा-
युधः । शालयो मदिरा क्षीरं प्रिया यौवनगर्विताः ॥ छर्द्युत्थे
लघनं धूमो भुक्तप्रच्छर्दनं श्रमः । रूक्षाणि चान्नपानानि
विरेको रक्तमोक्षणम् ॥ इति पथ्यमुदावर्ते नृणामुक्तं महर्षिभिः ॥

अर्थ—स्नेहन, स्वेदन, विरेक, वर्त्ती, फलवर्त्ती, मालिस, जो, सर्व मलमूत्रादि और
अधोवायु का त्यागना, ग्रामसंचारी जीव, जलसंचारी जीव और जलसमीप के जीवों
का मांसरस, अंडी का तेल, वारुणी (सराव), नवीन मूल, अमलतास, निसोय,
तिल, चूना, नागरवेल के पान, अदरस, विजोरा, जवाखार, हरड, लौंग, हींग,
दास, गोमूत्र और निमक. अधोवात के उदावर्त्त में स्नेहन, स्वेदन, वर्त्ती, वास्तिकर्म
और वातहरणकर्त्ता अन्न जल देवे. मलजन्य उदावर्त्त में वास्तिकर्म, स्वेदन, मालिस
और स्नान, फलवर्त्ती, दस्त लानेवाले अन्न पान देवे. मूत्रजन्य उदावर्त्त में तीनों प्रका-
र की वास्तिकर्म, स्वेदन कर्म, मालिस, स्नान, घृतपान पीडन. डकार के उदावर्त्त में
हिचकी के नाशक कर्म करे. और खांसी रोकने के उदावर्त्त में खांसी के नाशक कर्म
करे. छीक रोकने के उदावर्त्त में धूमपान, घृतपान, उत्तरवस्ती, छीक लानेवाले कर्म
करना, मालिस और हसली के ऊपर शोषण करना. प्यास रोकने के उदावर्त्त में शी-
तल अन्न और जल देवे. जंभाई रोकने के उदावर्त्त में वादीनाशक कर्म करे. निद्रा वेग
के उदावर्त्त में दूध पीवे, सोवे और संवाहन वाष्पजन्य उदावर्त्त में वाष्पनाशक क्रिया
करे सोवे, मद्यपान और उत्तम २ वर्त्ता कहे. श्रम की श्वास रोकने के उदावर्त्त में
विश्राम (तहदली लेना) और वातनाशक कर्म करे. शुक के वेग रोकने के उदावर्त्त
में स्नान, मुरगे का मांस, शालीचावल, मद्यपान, दूध और यौवनगर्वित स्त्री का आलिं-
गन करे. वमन के उदावर्त्त में लघन, धूमपान, भात, वमन, परिश्रम तथा रूते अन्न
और पान, दस्तों का कराना और रुधिर का निकालना यह महर्षियों ने उदावर्त्त
रोग में पथ्य कहा है ॥

उदावर्त्त पर अपथ्य

वमनं वेगरोधं च शमीधान्यानि कोद्रयान् । नीलीशाकं च

शालूकं जांबवं कर्कटीफलम् ॥ पिण्याकमालुकं सर्वं करीरं
पिष्टवैकृतम् । विष्टंभीनि विरुद्धानि कपायाणि गुरूणि च ॥
उदावर्त्ती प्रयत्नेन वर्जयेत्सततं नरः ॥

अर्थ—वमन करना, मलमूत्रादि के उपस्थित वेगों को रोकना, सेम के धान (मूंग मोठ आदि) वा (छोकरे की फली), कोदीं, नाडी का साग, भसीडा, जामन, ककडी, खल, सब प्रकार के करीरफल, पिष्टपदार्थ (सून, मेंदा, पिट्टी), विष्टंभी, विरुद्ध और भारी पदार्थ इन सब को उदावर्त्त रोगी त्याग देवे उदावर्त्तरोगवाले को यावन् मात्र पदार्थ कहे हैं वे और पाचक तथा लंघन करना ये आनाह (अफरा) रोग में वैद्य योजना करे तथा जो उदावर्त्तरोगी को अपथ्य कह आए हैं उन सबको आनाहरोगवाला यत्नपूर्वक त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निरुद्धरत्नाकरे आनाहोदावर्त्तरोगस्य निदान चिकित्सा
पथ्याऽपथ्यसहिता समाप्ता ।

अथ गुल्मरोगकर्मविपाकः ।

गुरुं प्रत्यर्थितां यातो गुल्मवान् जायते नरः ।
आचरेत्तन्निवृत्त्यर्थं मासमेकं प्रयोव्रतम् ॥

अर्थ—जो अपने गुरु के पास भीख मांगे वह गुल्मरोगी होय इस के दूर करने-को-एक महिने पयोव्रत करे तो गुल्मरोग दूर होय ॥

गुल्मरोगनिदान

दृष्ट्वा वातादयोऽत्यर्थं मिथ्याहारविहारतः ।
कुर्वन्ति पञ्चधा गुल्मं कोष्ठांतर्ग्रथिखूपिणम् ॥

अर्थ—मिथ्या आहार और मिथ्या विहार करने से अत्यन्त दुष्ट भये वातादि दोष कोष्ठ (पेट) में ग्रंथिखूप (गांठ) पांच प्रकार का गुल्मरोग उत्पन्न करे हैं ॥

गुल्मरोग के स्थान

तेषां पञ्चविधं स्थानं पार्श्वद्वन्नाभिस्तयः ॥

अर्थ—उस गुल्मरोग के पांच स्थान हैं दोनों पसवाड़े, हृदय, नाभि और वारित ॥

गुल्म का रूप

हृन्नाभ्योरन्तरे ग्रन्थिः संचारी यदि वाऽचलः ।

वृत्तश्चयोपचयवान्स गुल्म इति कीर्तितः ॥

अर्थ—हृदय और नाभि तथा बस्ति (मूत्रस्थान) इन में चलायमान अथवा निश्चल गोल कभी घटे कभी बढ़े ऐसी ग्रन्थि (गांठ) होय उस को गुल्म गोल का रोग कहते है. इस श्लोक में नाभि शब्दसे बस्तिका ग्रहण करा है ॥

संप्राप्ति

स व्यस्तैर्जायते दोषैः समस्तैरपि चोच्छ्रितैः ।

पुरुषाणां तथा स्त्रीणां ज्ञेयो रक्तेन चापरः ॥

अर्थ—कुपित भये दोषों से पृथक् २ और सब दोष मिलकर एक ये चार प्रकार के गुल्म पुरुषों के होते हैं और स्त्रियों के रक्त (रज) के दोष से एक प्रकार का गुल्म होय है, परंतु प्रथम जो लिख आये है कि गुल्मरोग पांच प्रकार का है सो इस का निश्चय नहीं है, क्योंकि रक्तगुल्म स्त्रियों के होय है पुरुषों के नहीं होय धातुरूप रक्तजगुल्म जो है सो स्त्री पुरुष दोनों के होय है, यह क्षीरपाणी का मत है. पांच प्रकार का गुल्म है इस पर बहुत शास्त्रार्थ और मतमतांतर हैं, जिन को देखने की इच्छा हो सो मधुकोश और आतंकदर्पण टीका में देख लें ॥

पूर्वरूप

उद्गारवाहुल्यपुरीपबंधस्तृप्त्यक्षमत्वांत्रविकूजनानि ।

आंठोपमाध्मानमपक्तिशक्तिरासन्नगुल्मस्य वदन्ति चिह्नम् ॥

अर्थ—ढकार बहुत आवें, मल का अवरोध होय, अर्धचि अन्न में होय, सामर्थ्य का नाश होना, आंत बोले, पेट में पीडा होय और अफरा होय, तथा पेट का जकड जाना. मंदाग्नि होना यह लक्षण होय तो जानना कि गुल्म (गोल) रोग शीघ्र प्रगट होना चाहता है ॥

गुल्म के साधारण रूप

अरुचिः कृच्छ्रविण्मूत्रं वातेनांत्रविकूजनम् ।

आनाहश्चोर्ध्ववातत्वं सर्वगुल्मेषु लक्ष्येत ॥

अर्थ—अरुचि, मलमूत्र कष्ट से उतरे, वादी से आंत बोले, पेट फूल आवे, ऊर्ध्ववात होय, यह लक्षण सब गुल्मों में होय है. सब गुल्मरोग में वात कारण है सो परक और सुश्रुत में भी लिखा है ॥

वातगुल्म के लक्षण

रूक्षान्नपानं विपमातिमात्रं विचेष्टनं वेदविनिग्रहश्च । शोका-
भिघातोऽतिमलक्षयश्च निरन्नता चानिलगुल्महेतुः ॥ यः स्था-
नसंस्थानरुजो विकल्पं विद्वातसङ्गं गलवक्रशोपम् । श्यावारु-
णत्वं शिशिरज्वरं च हृत्कुक्षिपार्श्वसिशिररुजं च ॥ करोति
जीर्णेऽप्यधिकं च कोपं भुक्ते मृदुत्वं समुपैति पश्चात् । वातात्स
गुल्मो नच तत्र रूक्षं कपायतिकं कटुनोपसेवयेत् ॥

अर्थ—रूखा, विपम और अतिमात्र ऐसे अन्नपान सेवन करने से, बलवान् पुरुष से लटना, मलमूत्र आदि वेगों के धारण करने से, शोक और अभिघात (लकड़ी आदि की चोट) विरेचन आदि से मल का क्षय करना, उपवास ये सब वातगुल्म के कारण है. जो गुल्म कभी नाभी, कभी वस्ती, कभी पसवाड़े में चला जाय तथा कभी लंबा कभी मोटा गोल अथवा छोटा होय, तथा उस में पीडा कभी थोड़ी, कभी बहुत होय, तोदभेद (सुई चुभाने की सी पीडा) होय अथवा अनेक प्रकार की पीडा होय, मल की और अधोवायु की अच्छी रीति से प्रगृप्ति होय नहीं, गला और मुख सूखे, शरीर का वर्ण नीला अथवा लाल होय, शीतज्वर, हृदय, कूख, पसवाड़े, कंधा और मस्तक इन में पीडा होय और गोला जीर्ण होने पर अधिक कोप करे और भोजन करने के पिछाड़ी नरम हो जाय, वह गोला वादी से प्रगट होय है. उस से रूखा, कपेला, कडुआ, तीखा पदार्थ खाने से सुख नहीं होय ॥

वातगुल्म पर साधारणक्रिया

प्रागेव वातजे गुल्मे सुस्निग्धं स्वेदितं नरम् । रेचितं स्नेहरेकैश्च
निरूहैः सानुवासकैः ॥ उपाचरेद्विपक्व प्राज्ञो मात्रां काले
विशेषतः ॥

अर्थ—वातगुल्मरोगी को प्रथम घृतपानादि कों से स्निग्ध करके पसीने निकाले, स्निग्ध रेचन, निरूह्यरित और अनुवासनवस्ति देकर फिर औषध करे ॥

सामान्य चिकित्सा

स्नेहस्वेदविरेकैस्तु गुल्मः शैथिल्यमाप्नुयात् ।

तस्मादनेन विधिना गुल्मरोगमुपाचरेत् ॥

अर्थ—स्नेह, पसीने, रेचन इत्यादि क्रिया से गुल्म शिथिल होता है इसी से प्रथम उन क्रियाओं को करके फिर औषध करे ॥

सामान्य उपचार

वातगुल्मप्रतीकारे प्रकुप्यति यदा कफः । शस्तमुल्लेखनं तत्र
चूर्णाद्याश्च कफापहाः ॥ यदि कुप्यति वा पित्तं विरेकस्तत्र
भेषजम् । दोषत्रैरप्यशांते च गुल्मे शोणितमोक्षणम् ॥

अर्थ—वातगुल्म पर उपचार करने से यदि कफ कुपित होवे तो लेखन और कफ
नाशक चूर्णादिक औषध देवे और पित्त कुपित होय तो उस को 'रेचक औषध देवे
यदि ऐसा करने पर दोषशांति नहीं होय तो उस का रुधिर निकाले ॥

मातुलुंगादि योग

मातुलिंगरसो हिंगु दाडिमं विडसैधवम् ।

सुरामंडेन पातव्यं वातगुल्मरुजापहम् ॥

अर्थ—विजोरे का रस, हींग, अनारदाना, विडनोन और सैधा निमक इन को
एकत्र कर सुरामंड के साथ सेवन करने से वातगुल्म को नाश करे ॥

शून्यादि योग

नागरार्धपलं पिष्टं द्विपले लुंगकस्य च ।

तिलस्यैकं गुडपलं क्षीरेणोष्णेन पाययेत् ॥

वातगुल्ममुदावर्तं योनिशूलं च नाशयेत् ॥

अर्थ—साँठ का चूर्ण २ तोले, विजोरे का चूर्ण ८ तोले, तिलों का चूर्ण ४ तोले
और गुड ४ तोले इन सबको एकत्र करके चूर्ण करे. इस को गरम जल के साथ
पीवे तो वातगुल्म, उदावर्त और योनिशूल इन को नाश करे ॥

केतकीक्षारयोग

स्वर्जिकाकुष्ठसहितः क्षारः केतकिसंभवः ।

पित्तस्तैलेन शमयेद्वातगुल्मं सुदारुणम् ॥

अर्थ—सजीक्षार, कूठ और केतकी का क्षार ये समान भाग लेवे सब का एकत्र
चूर्ण कर तिल के तेल से सेवन करे तो कठिन भी वातगुल्म को शमन करे ॥

वारुणीमंडयोग

पिवेदैंडतैलं वा वारुणीमंडमिश्रितम् ।

तदेव तैलं पयसा वातगुल्मी पिवेत्रः ॥

अर्थ—वातगुल्मरोगवाला अंडी के तेल को सुरामंड से अथवा दूध से पीवे तो वात-गुल्म को नाश करे ॥

वातगुल्म पर ह्युपादि घृत

ह्युपाजाजिपृथ्वीकापिप्पलीमूलचित्रकैः । क्षीरमूलककोलानां
रसैश्च विपचेदृतम् ॥ वातगुल्मारुचिश्वासशूलानाहज्वरार्श-
साम् । ग्रहणीयोनिदोषाणां घृतमेतन्निवारणम् ॥

अर्थ—ह्रीऊबेर, जीरा, काला जीरा, पीपरामूल और चित्रक इन के काटे और विदारीकंद और बेर इन का रस इन में घी मिलायके पचावे वह घी वातगुल्म, अरुचि, श्वास, शूल, पेट का फूलना, ज्वर, बवासीर, संग्रहणी और योनिदोष इन पर देवे ॥

चित्रकादि घृत

चित्रकं व्योपसिंधूत्थपृथ्वीकाचव्यदाडिमैः । दीप्यकग्रंथिका-
जाजिह्युपाधान्यकैः समैः ॥ दध्यारनालवदरमूलकस्वरसैर्घृ-
तम् । पक्त्वा पिवेद्वातगुल्मदौर्बल्याटोपशूलनुत् ॥

अर्थ—चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधा निमक, विदारीकंद, चव्य, अनारदाना, अजमायन, पीपरामूल, जीरा, ह्रीऊबेर और धनिया ये समान भाग ले काढा कर लेवे और इस काटे में घी, दही, कांजी, बेर और मूली इन का रस ये सब पदार्थ मिलायके पचावे. इस घृत के सेवन करने से वायगोला, दुर्बलता, पेट में गुडगुडाहट, शब्द होना इन को नाश करे ॥

हिंवादि घृत

हिंगु सौवर्चलं त्र्यूपं सिंधुजं दाडिमाक्षकैः । पुष्कराजाजिधान्या-
कैरम्लवेतसचित्रकैः ॥ अश्वगंधा वचा चैव निर्गुंडी सकचूरकैः ।
प्रतिचूर्णैः कर्पमितैः प्रस्थं चैव घृतं ददेत् ॥ पान्यं घृतावशेषं
च पलाधमनु शीलयेत् । वातगुल्मं च शूलं च आनाहं च वि-
नाशयेत् ॥

अर्थ—हिंग, संचरनिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधा निमक, अनारदाना, पुष्कर-मूल, जीरा, धनिया, अमलवेत, चित्रक, असगंध, वचा, निर्गुंडी और कशूर ये प्रत्येक तोले २ भर लेवे. इन के काटे में ६४ तोले घी डालके घृत शेष रहे इस प्रकार औटावे फिर इस को उतारके वह घी दो तोले लेके अनुपान के साथ देवे तो वाय-गोला, शूल और अफरा इन को नाश करे ॥

ऋषणादि घृत

ऋषणं त्रिफलाधान्यविडंगचव्यचित्रकैः ।

कल्कैरेतैर्घृतं सिद्धं सक्षीरं वातगुल्मनुत् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरिच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, धनिया, वायविडंग, चव्य और चित्रक इन के कल्क में घृत, दूध मिलायके सिद्ध करे यह घृत वायगोले को नाश करे ॥

तैल

राजवृक्षस्य तैलं च निष्कं पीतं तु गुल्मजित् ॥

अर्थ—अमलतासवृक्ष का तैल आधा तोला पीवे तो संपूर्ण गुल्मों को नाश करे ॥

कुष्ठादि तैल

श्वेतकुष्ठं तथा हिंशु प्रतिनिष्कद्वयं द्वयम् । क्षारं तत्रिफलाचूर्णं
दशभागं सुचूर्णितम् ॥ कल्कं गोक्षीरतः पिष्ट्वा पूर्वं तैलं सुहिष्ठ-
तम् । पचेत्तैलावशेषं तु पित्रेन्निष्कद्वयं द्वयम् ॥ विरेकांते तु
तत्रेण शाल्यत्रं भोजयेच्छु । चतुर्दिनांते दातव्यमिदं तैलं न
नित्यशः ॥ गुल्मं जलोदरं प्लीहां शूलं च श्वयथुप्रणुत् ॥

अर्थ—सपेद कुष्ठ १, हींग १, जवाक्षार १ और त्रिफला का चूर्ण १० भाग इन को गोमूत्र में कल्क करके उस में तैल और धूहर का दूध मिलायके तैल शेष रहने पर्यंत पचावे जब तैयार हो जाय तब उतार लेय इस में से १ तोले देवे जब दस्त हो जावे तब छाछभात का हलका भोजन देवे. इस प्रकार चार २ दिन में दस्त करावे नित्य न करावे. यह कुष्ठादि तैल गोला, जलोदर, प्लीहा, शूल और सूजन इन को दूर करे ॥

विडंगादि कल्क

विडंगं दाडिमं हिंशु सैध्वैलासुवर्चलम् ।

मातुलिगरसे पीत्वा कर्पकं सुरया सह ॥

वातगुल्मं हरेत्पीत्वा प्राणनाथो रसापि वा ॥

अर्थ—वायविडंग, अनारदाना, हींग, सैधानिमक, इलायची और संचरनिमक इन सब को बिजोरे के रस में बारीक पीस यह कल्क एक तोले को दारु मिलायके पीवे तो वादी का गोला नाश करे अथवा प्राणनाथरस देय ॥

गुग्गुल्योग

गुग्गुलं वा गवां मूत्रैः पिबेद्गुल्मार्तिशूलनुत् ॥

अर्थ—गूगल को गोमूत्र में मिलायके देवे तो गोला और शूल इन को नाश करे ॥

कुलत्थादि क्वाथ

कुलित्थं जांगली शाली क्षीरं वा तक्रमुस्तकम् ।

तर्कारी च हितं पथ्या धान्यांबु कथितं पिबेत् ॥

अर्थ—कुलथी, कपूरकचरी, भात, दूध, छाछ, दही का पानी, अरनी, हरड, धनिया और नेत्रवाला इन का काढा करके देवे ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगुसैधववृक्षाम्बराजिकानागरैः समैः ।

चूर्णं गुल्मप्रशमनं स्यादेतद्धिंगुपंचकम् ॥

अर्थ—हींग, सैधा निमक, तंतडीक, राई, सोंठ इन सब का समभाग चूर्ण करे यह हींगपंचक सेवन करने से वायुगोले को शांत करे ॥

वातगुल्म पर विरेचन

वातारितैलेन पयोयुतेन पथ्यासमेतेन विरेचनं हि ।

संस्वेदनं स्निग्धमतिप्रशस्तं प्रभंजनक्रोधकृते तु गुल्मे ॥

अर्थ—अंडी के तेल में दूध और छोटी हरड का चूर्ण डालके देवे और देह में तैलादिक स्निग्ध पदार्थ की मालिस करके पसीने निकाले यह क्रिया वातगुल्म पर उत्तम है ॥

शिलिवाडवरस

मारितं सूतताम्राभ्रं गंधकं माक्षिकं समम् । मर्दयेच्चित्रकद्रावै-

र्यवक्षारयुतं दिने ॥ त्रिगुंजं भक्षयेन्नित्यं नागवल्लीदलेन च ।

वातगुल्महरः ख्यातो रसोयं शिलिवाडवः ॥

अर्थ—पारे की भस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, गंधक, सुवर्णमाक्षिक, जवासार ये एकत्र कर उस में चित्रक के रस की भावना देवे और इस में से तीन रत्ती पान में रसके साथ ती यह शिलिवाडवरस सर्व वातगुल्मों को नाश करे ॥

पथ्य

तित्तिरांश्च मयूरांश्च कुक्कुटान् क्रौंचवर्तिकान् ।

सर्पिंशालिप्रसन्नाश्च वातगुल्मे च योजयेत् ॥

अर्थ-तीतर, मोर, मुरगा, क्रौंच और बटेर इन पक्षियों का मांसरस, घी भात मद्य अथवा सुरामंड ये वातगुल्म पर पथ्य देना चाहिये ॥

पित्तगुल्म के लक्षण

कट्फल्लर्ताक्ष्णोष्णविदाहिरूक्षक्रोधातिमद्यार्कहुताशसेवा । आ-

माभिघातो रुधिरं च दुष्टं पैत्तस्य गुल्मस्य निमित्तमुक्तम् ॥

ज्वरः पिपासा वदनाङ्गरागः शूलं महज्जीर्यति भोजने च । स्वे-

दो विदाहो व्रणवच्च गुल्मः स्पर्शासहः पैत्तिकगुल्मचिह्नम् ॥

अर्थ-कटु, खट्टा, तीक्ष्ण रस, दाहकारक (वंशकरीलादिक), रूखा ऐसे भोजन करने से, क्रोध से, अति मद्यपान, सूर्य की धूप में डोलने से, अग्नि के समीप रहने से, विदग्ध अजीर्ण से दुष्ट भया रस उस से अभिघात कहिये लकड़ी आदि लगने से, रुधिर का विगडना ये पित्तगुल्म के कारण कहे हैं- ज्वर, प्यास, मुख और अंगों में लालपना, अन्न पचने के समय अत्यन्त शूल होय, पसीना आवे, जलन होय, कोडा के समान स्पर्श सहा न जाय ये पित्तगुल्म के लक्षण हैं ॥

द्राक्षादि चूर्ण

द्राक्षाभयारसं गुल्मे पैत्तिके सगुडं पिबेत् ।

सशर्करं वा विलिहन् त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ॥

अर्थ-पित्तगुल्म पर दास के रस से छोटी हरड के चूर्ण को गुड मिलायके देवे अथवा त्रिफला के चूर्ण में खांड मिलायके देवे तो पित्तगुल्म दूर होवे ॥

पित्तगुल्म पर विरेचन

पित्तगुल्मे त्रिवृच्चूर्णं पातव्यं त्रिफलांबुना । विरेकाय सितायुक्तं

कंपिलं वा समाक्षिकम् ॥ अभयां द्राक्षया खादेत् पित्तगुल्मी

गुडेन वा ॥

अर्थ-पित्तगुल्म पर त्रिफले के काटे में निसोय का चूर्ण मिलायके देवे अथवा कपिल मधु (सहत) के साथ देवे अथवा छोटी हरड के चूर्ण को दास अथवा गुड के साथ सेवन करे ये योग दस्त करानेवाला है ॥

पित्तगुल्म पर पथ्य

शालिगोलागदुग्धं च पटोलं घृतमिश्रितम् । द्राक्षां परूपकं
धार्त्रां खजूरं दाडिमं सिताम् ॥ पथ्यार्थं पैत्तिके गुल्मे बला-
तोयं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—शालीचावलों का भात, गौ अथवा बकरी इन का दूध, परवल, घी, दास, फालसे, आंवले, खजूर, अनार, मिश्री, खिरेटी ये पदार्थ पित्तगुल्म पर पथ्य हैं इस वास्ते देवे ॥

द्राक्षादि घृत

द्राक्षामधुकखजूरं विदारी च शतावरी । परूपकाणि त्रिफलां
साधयेत्पलसंमिताम् ॥ जलाढके पादशेषे रसमामलकस्य च ।
घृतमिक्षुरसं क्षीरमभयाकल्कपादिकम् ॥ साधयेच्च घृतं सिद्धं
शर्कराक्षौद्रपादिकम् । प्रयोगः पित्तगुल्मघ्नः सर्वगुल्मविकारनुत् ॥

अर्थ—दास, मुलहटी, खजूर, विदारीकंद, सतावर, फालसे और त्रिफला ये प्रत्येक चार २ तोले तथा जल २५६ तोले में डालके काढा करे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेय और इस में आमले का रस, ईस का रस, हरड का कल्क, और घी ये काढे के चतुर्थांश डालके पचन करे तो घृत सिद्ध होय. इस में चतुर्थांश मिश्री मिलापके तथा सहत डालके सेवन करने को देवे यह योग पित्तगुल्म तथा संपूर्ण गुल्मविकारों को नाश करे ॥

आमलक्यादि घृत

रसेनामलकेशूणां घृतपादं विपाचयेत् ।

पथ्यायाश्च पित्रेत्सर्पिस्तत्सिद्धं पित्तगुल्मनुत् ॥

अर्थ—आंवले का, ईस का और छोटी हरड के रस में चतुर्थांश घी डाल पचावे तो घृत सिद्ध होय इस के पीने से पित्तगुल्म का नाश होय ॥

त्रायमाणादि घृत

जले दशगुणे साध्यं त्रायमाणचतुःपलम् । पंचभागान्वितं पूतं
कल्के संयोज्य कार्पिकैः ॥ रोहिणी कटुका मुस्ता त्रायमाणा
दुरालभा । द्राक्षा तामलकी वीरा जीवन्ती चंदनोत्पलम् ॥

रसस्यामलकानां च क्षीरस्य च घृतस्य च । पलानि पृथग-
घ्राष्टौ सम्यक् दत्त्वा विपाचयेत् ॥ पित्तगुल्मं रक्तगुल्मं विसर्पं
पित्तजं ज्वरम् । हृद्रोगं कामलां कुष्ठं हृन्त्यादेतद्वृत्तोत्तमम् ॥

अर्थ—त्रायमाण १६ तोले को १६० तोले जल में डालके औटावे जब पंचमांश
जल रहे तब उतारके कपडे में छान लेवे. फिर छोटी हरड, कुटकी, नागरमोया,
त्रायमाण, धमासा, दाख, भूयआवला, धीगुवार, गिलोय, चंदन और कमल इन
औषधों का एक २ तोले कल्क अदरख का रस, दूध और धी ये आठ २ पल ले
उस काठे में डालके पचावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके देवे तो पित्तगुल्म,
रक्तगुल्म, विसर्प, पित्तज्वर, हृदयरोग, कामला और कुष्ठ इन को नाश करे ॥

कफगुल्मनिदान और लक्षण

शीतं गुरु स्निग्धमचेष्टनं च संपूरणं प्रस्वपनं दिवा च । गुल्मस्य
हेतुः कफसंभवस्य सर्वस्तु दुष्टो निचयात्मकस्य ॥ स्तैमित्य-
शीतज्वरगात्रसादहृल्लासकासारुचिगौरवाणि । शैत्यं रुगल्पा
कठिनोन्नतत्वं गुल्मस्य रूपाणि कफात्मकस्य ॥

अर्थ—शीतल, भारी, चिकने ऐसे पदार्थ के सेवन से तृप्ति की अपेक्षा, अधिक
भोजन करना, दिन में सोना ये कफोत्पन्न गुल्म होने का कारण है. और जो घात-
जादि तीनों गुल्मों के कारण कहे हैं, वे सब सन्निपातगुल्म के कारण जानने
देह का गीलापना, शीतज्वर, शरीर की ग्लानि, सूखी रङ्ग (उवाकी), खांसी,
अरुचि, भारीपना, शीत का लगना, थोड़ी पीडा होय, गुल्म (गोला) कठिन होय
और ऊंचा होय इतने ये सब कफात्मकगुल्म के लक्षण हैं ॥

सामान्य चिकित्सा

योगैश्च वातगुल्मोक्तैः श्लेष्मगुल्ममुपाचरेत् ।

अपरैश्च बलासघ्नैर्युक्तियुक्तैः समं नयेत् ॥

अर्थ—कफगुल्म पर वातगुल्मोक्त योग देवे तथा और भी कफनाशक योग युक्ति-
पूर्वक योजना करके शमन करे ॥

यवानीचूर्ण

यवानीचूर्णितं तत्रे विडेन लवणीकृतम् ।

श्लेष्मगुल्मे पिबेद्वा तन्मूत्रवर्चोनुलोमनम् ॥

अर्थ—अजमायन का चूर्ण और बिड निमक इन को छाल में छालके कफगुल्म में देवे तो मलमूत्र का अनुलोमन होकर मल और मूत्र साफ होय ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगुग्रंथिकधान्यजीरकवचा चव्याग्निपाठा शठी वृक्षाम्लं लवण-
त्रयं त्रिकटुकं क्षारद्वयं दाडिमम् । पथ्या पौष्करवेतसाम्लहृपु-
पाजाज्यस्तदेभिः कृतं चूर्णं भावितमेतदाद्रिकरसैः स्याद्वीजपू-
रद्रवैः ॥ गुल्माध्मानगुदांकुरग्रहणिकोदावर्तसंज्ञौ गदौ प्रत्या-
ध्मानगदोदराश्मरियुतास्तूनीद्वयारोचकान् । ऊरुस्तंभमति-
भ्रमं च मनसो वाधिर्यमष्ठीलिकां प्रत्यष्ठीलिकया सहापहरते
प्राक्पीतमुष्णांबुना ॥ हृत्कुशिवंक्षणकटीजठरांतरेषु वस्ति-
स्तनांसफलकेषु च पार्श्वयोश्च । शूलानि नाशयति वातबला-
सजानि हिंग्वाद्यमाद्यमिदमाश्विनसंहितोक्तम् ॥

अर्थ—हींग, पीपरामूल, धनिया, जीरा, वच, चव्य, चित्रक, पाठ, कचूर, अमलवेत, सेंधा निमक, बिड निमक, कचिया निमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, हरद, पोहकरमूल, इमली, हाऊबेर और काला जीरा इन को समान भाग ले चूर्ण करे फिर इस को अदरख के रस की तथा विजोरे के रस की भावना देवे तो चूर्ण तैयार हो. इस को गरम जल के साथ सेवन करने से गोला, पेट का फूलना, बवासीर, संग्रहणी, उदावर्त, प्रत्याध्मान, उदर, पयरी, तूनी, प्रतूनी, अरुचि, ऊरुस्तंभ, मतिभ्रंश, बहरेपना, अष्ठीला, प्रत्यष्ठीला और हृदय का कूख का, वंक्षण, कमर, पेट, वस्ति, स्तन, कंधे, पसवाडे इन के शूल तथा वातरुफ संबंधी शूल इन को नाश करे यह अश्विनीकुमार ने कहा है ॥

पंचकोलादि घृत

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः । पलिकैः सयवक्षारै-
घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ क्षीरप्रस्थेन तत्सर्पिर्हीति गुल्मं कफा-
त्मकम् । ग्रहणीपांडुरोगघ्नं प्लोहकासज्वरापहम् ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ ये चार २ तोले लेवे इन का अष्टमांश काप करे फिर इस में १ शेर घृत, जवाखार ४ तोले और दूध सेरभर

हालके पचावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार लेवे. यह घी कफगुल्म, संग्रहणी, पांडुरोग, घृहीहा, खांसी और ज्वर इन को नाश करे ॥

कफगुल्म पर पथ्य

कुलित्थाञ्जीर्णशालींश्च षष्टिकान्यवजांगलान् ।

मद्यं तैलं घृतं तक्रं कफगुल्मे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—पुराने कुलथी, पुराने साठी चावल, जौ, जंगली जीवों का मांस, मद्य, तैल, घृत और छाछ ये पदार्थ कफगुल्म पर पथ्यार्थ देवे ॥

तिलादि लेप और सेक

तिलैरंडातसीवीजं सर्पपं च विपेपयेत् ।

तेन लिप्तोदरं स्वेद्यमर्कपत्रैः सुकल्पितैः ॥

अर्थ—तिल, अंड और अलसी इन के बीज तथा सरसो इन सब को एकत्र पीसके इस का पेट पर लेप करे और आक के पत्तों से पेट को सेके, तो कफगुल्म नष्ट होय ॥

सेक

एरंडार्कदलैर्वाथ सोष्णैः स्विद्यन्मुहुर्मुहुः ॥

अर्थ—अंड अथवा आक इन के गरम २ पत्तों करके वारंवार सेके तो कफगुल्म दूर होय ॥

दशमूलादि तेल

दशमूलकणा द्राक्षा श्यामा धात्री पलं पलम् ।

प्रस्थमेरंडतैलस्य प्रस्थपट्टं गवां पयः ॥

पचेत्तैलावशेषं तु ततैलं कफगुल्मनुत् ॥

अर्थ—दशमूल, पीपल, दाख, हरड और आंवले ये चार २ तोले लेवे इन के करे काढे में ६४ तोले अंडी का तेल और गौ का दूध ३८४ तोले सब को एकत्र कर तेल शेष रहने पर्यंत पचावे यह तेल कफगुल्म का नाश करे ॥

त्रिवृत्तादि घृत

त्रिवृत्ता त्रिफला दंती दशमूलं पलोन्मितम् । जले चतुर्गुणे

पक्त्वा चतुर्भागावशेषिते ॥ सर्पिरेरंडतैलं च क्षीरं चैकत्र साध-

येत् । संसिद्धो मिश्रकः स्नेहः सक्षौद्रं कफगुल्मनुत् ॥

अर्थ—निसोथ, हरड, बहेडा, आंवला, जमालगोटे की जड़ (दंती) और दशमूल ये सब एक २ पल लेवे. चौगुने जल में इस का काढा कर चतुर्याश रहने पर उतार लेवे. छानके इस में घी, अंडी का तेल और दूध ये सब एकत्र करके आग्नि पर पचावे. जब तेल और घृत शेष रहे तब उतार ले यह मिश्रकघृत है. इस को सहत में मिलायके खाय तो कफगुल्म को नाश करे ॥

विद्याधररस

गंधकं तालकं ताप्यं मृताभ्रं च मनःशिलाम् । शुद्धसूतं च तु-
ल्यांशं मर्दयेद्भावयेद्दिनम् ॥ पिप्पल्यास्तु कपायेण वज्रीक्षीरेण
भावयेत् । निष्कार्थं भक्षयेत्क्षौद्रैर्गुल्मप्लीहादिकं जयेत् ॥ रसो
विद्याधरो नाम गोमूत्रं च पिवेदनु ॥

अर्थ—गंधक, हरताल, सुवर्णमाक्षिक, अन्नकभस्म, मनसिल और शुद्धपारा ये समान भाग लेवे. इस को पीपल का काढा और घृह के दूध की एक-एक दिन भावना देवे. यह विद्याधररस सहत के साथ तीन मासे देवे और ऊपर-से गोमूत्र पीवे तो गुल्म और प्लीहा इन को नाश करे ॥

नाराचरस

शुद्धसूतं समं गंधं जेपालं त्रिफलासमम् ।
त्रिकटुं पेपयेत्क्षौद्रैर्निष्कं गुल्महरं लिहेत् ॥
गुल्मोदरहरः ख्यातो नाराचोयं रसात्तमः ॥

अर्थ—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, जमालगोटा, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल इन सब को एकत्र खरल करे इस में से छः मासे यह नाराचरस सहत के साथ देवे तो गोला और उदर इन को नाश करनेवाला प्रसिद्ध है ॥

द्वंद्वजगुल्मनिदान और लक्षण

निमित्तलिङ्गान्युपलभ्य गुल्मे संसर्गजे दोषबलावलं च ।

व्यामिश्रलिङ्गानपरांश्च गुल्मांघ्नीनादिशेदौषधकल्पनार्थम् ॥

अर्थ—द्वंद्वज गुल्म में कारण, लक्षण और दोषों का बलावल जानकर चिकित्सा करने के वास्ते, मिश्र लक्षण के और तीन गुल्म समझने चाहिये अर्थात् एक दोष बलवान् होय तो चिकित्सा करनी चाहिये और द्विदोष बलवान् वा त्रिदोष बलवान् होय तो चिकित्सा न करे ॥

द्राक्षादि कल्क

द्राक्षाचंदनयष्ट्याह्वा पद्मकं तंदुलोदकैः ।
पिष्ट्वा क्षीरविदारिं च सक्षौद्रां पाययेदनु ॥
पंचवक्रो रसो देयो गुल्मे तु कफवातजे ॥

अर्थ—कफवातगुल्म पर दाख, चंदन, मुलहठी, पद्मास और दूध निकलनेवाला विदारिकंद इन को चांवलों के धोवन के साथ पीसके इस कल्क को सहत डालके देवे और ऊपर से पंचवक्र रस देवे ॥

सैंधवादि तैल

सैंधवं चित्रकं दंतिशक्राह्वं च पलं पलम् । द्वात्रिंशत्पलगोमूत्रैः
पचेदष्टावशेषकैः ॥ कषायस्य समं तैलं पिष्ट्वा तं च विपाचयेत् ।
तैलावशेषमुत्तार्य अनुपानैः पिवेत्सदा ॥

अर्थ—सैंधा निमक, चित्रक, जमालगोटा और इन्द्रजो ये प्रत्येक चार २ तोले लेय इन को १२८ तोले गोमूत्र में अष्टमांश काढा करे. इस में इन पूर्वोक्त औषधों का कल्क और जितना काढा होवे उतना ही तैल मिलायके सिद्ध करे जब तेल मात्र शेष रहे तब उतार ले छानके धर रखे फिर इस को गुल्मादिरोगों पर अनुपान के साथ देवे ॥

नाराच रस

पित्तश्लेष्मस्थिते गुल्मे देयो नाराचको रसः ॥

अर्थ—पित्तश्लेष्मज गुल्म पर नाराचरस को देवे ॥

करंजादि पुटपाक

करंजवटपत्राणि चव्यं वह्निः कटुत्रयम् । इंद्रवारुणिकामूलं
पुटे पाच्यं ससैंधवम् ॥ तद्भावे वारिणा पीतं पलायं मधुनापि
वा । हंति गुल्मोदरं पांडुं द्रंजं श्वयथुं तथा ॥

अर्थ—चव्य, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल और इन्द्रायन की जड़ और सैंधा निमक ये धारीक पीसके करंजा और वट के पत्तों में छपेट कर पुटपाक की विधि से पाक करे फिर इस को जल से पीस दो तोले सहत डालके देवे तो गोला, चदर, पांडुरोग, द्रंज व्याधि इन सब को नाश करे ॥

सन्निपातगुल्म

महारुजं दाहपरीतमश्मवद्धनोन्नतं शीघ्रविदाहदारुणम् ।

मनःशरीराग्निबलापहारिणं त्रिदोषजं गुल्ममसाध्यमादिशेत् ॥

अर्थ—भारी पीडा करनेवाला, दाह करके व्याप्त, पत्थर के समान कठिन, तथा ऊंचा और शीघ्र दाह करके भयंकर, मन, शरीर, अग्नि और बल इन का नाश करनेवाला, (अर्थात् मन को विकल करनेवाला, शरीर को कृश करनेवाला और विवर्ण करनेवाला, अग्निवैषम्यादिकारक, असामर्थ्य करनेवाला) ऐसा त्रिदोषज गुल्म असाध्य जानना ॥

सामान्य

धीमानुपाचरेत् गुल्मं प्रत्याख्याय त्रिदोषजम् ।

सन्निपातोत्थिते गुल्मे त्रिदोषज्ञो विधिर्हितः ॥

अर्थ—बुद्धिमान पुरुष को त्रिदोषजन्य गुल्म को असाध्य जानके उपचार करे. सन्निपात गुल्म पर त्रिदोषज्ञ औषधि हितकारी कही है ॥

वरुणादिक्वाथ

वरुणादिकपायस्तु गुल्मदोषत्रयोत्थितम् ।

हन्ति हृत्पार्श्वशूलान् सोपद्रवं न संशयः ॥

अर्थ—वरुणादिक औषधों का काढा त्रिदोषजगुल्म का नाश करे और हृदय तथा पार्श्व इन के उपद्रवयुक्त शूल को नाश करे ॥

वरुणक्वाथ मध्यविद्रधि पर

वरुणादिगणक्वाथमपक्वे मध्यविद्रधौ ।

रूपकादिरसैर्युक्तं पिबेच्छमनहेतवे ॥

अर्थ—वरुणादिक औषधों का गण आगे कहा हुआ उस का काढा करके तथा रूपकादिक औषध का चूर्ण आगे कहा है उस को उस काढे में ढालके पीवे तो पक नहीं हुआ विद्रधि अर्थात् कुछ २ कच्चे विद्रधिरोग को दूर करे ॥

वरुणादिक्वाथ

वरुणो वकपुष्पं च विल्वापामार्गचित्रकाः । अग्निमंथद्वयं शि-

ष्टद्वयं च बृहतीद्वयम् ॥ सैरेयकत्रयं मूर्वा मेपशृंगी किरातकः ।

अजशृंगी च विंशं च करंजश्च शतावरी ॥ वरुणादिगणक्वाथः

कफमेदोहरः स्मृतः । हन्ति गुल्मं शिरःशूलं तथाभ्यन्तरविद्रधीन् ॥

अर्थ—वरना, वकपुष्प, बेलगिरी, आंगा, चित्रक, दो प्रकार की अरनी (छोटी, बड़ी-), दो प्रकार का सहजना (मीठा और कड़ुआ), कटेरी और बड़ी कटेरी, तीन प्रकार की कटसरैया (पीला, काला और सपेद), मूर्वा, काकडासिंगी, चिरायता, मेढासिंगी, कंदूरी की जड़ अथवा पत्ते, कंजा, सतावर इन सब औषधों का काढा करके पीवे तो कफ, मेदरोग तथा मस्तक का शूल और गोला ये दूर होवें- अंतर्विद्रधि नाम करके जो रोग होता है वह दूर होवे मूल में 'तथा विद्रधिपीनसान्' ऐसा भी पाठ है इस का यह अर्थ है कि विद्रधि और पीनसरोग को दूर करे ॥

जयंत्यादि दो क्वाथ

जयंत्या वा जयाया वा गुडैः सोष्णजलं पिवेत् ।

त्रिदोपोत्थं हरेद्गुल्मं रसो वानंदभैरवः ॥

अर्थ—जयंती या जया इन का गरम काढा गुड डालके देवे तो त्रिदोपोत्थगुल्म नष्ट होवे ॥

राजवृक्षादि पुटपाक

राजवृक्षसुही भानुकरजांकुलजंबुकम् । पाटला रजनी चिंचा

पिप्पली च पुनर्नवा ॥ अपामार्गस्य मूलानि समं रुध्वा पुटे पचेत् । द्विनिष्कं पलगोमूत्रैर्जयेद्गुल्मं त्रिदोपजम् ॥

अर्थ—अमलतास, यूहर, आक, कंजा, अंकोल, जामुन, पाठ, हलदी, इमली पीपल, पुनर्नवा और आंगा इन की समान भाग जड़ लेके पुटपाक की विधि से पचावे इस में से एक तोले लेके आठ तोले गोमूत्र से देवे तो त्रिदोपगुल्म को नाश करे ॥

अभयादि योग

अभया सैधवं तक्रं भोजनांते पिवेदनु । त्रिफलां सुवर्चला-

क्षीरं तुल्यं गुंजैककं भक्षयेत् ॥ त्रिदोपोत्थं हरेद्गुल्मं त्रिफला-

संचलं तथा । उष्णे तत्रे पिवेत्कर्पं मुंडीमूलं च वारिणा ॥

अर्थ—हरद, सैधानिमक इन के चूर्ण को छाछ में मिलाय भोजन करने के पश्चात् पीवे तथा हरद, बहेडा, आवला और संचर निमक इन का चूर्ण एक रत्ती भक्षण करे किंवा 'गोरसमुंडी' की जड़ जल में पीस छाछ में मिलायके १ 'तोले पीवे तो त्रिदोपोत्पन्न गुल्मरोग का नाश होय ॥

संप्राप्तिपूर्वक स्त्रीगुल्म

नवप्रसूताऽहितभोजना या या चामगर्भं विसृजेदृतौ वा । वा-
युर्हि तस्याः परिगृह्य रक्तं करोति गुल्मं सरुजं सदाहम् ॥
पित्तस्य लिङ्गेन समानलिङ्गं विशेषणं चाप्यपरं निबोध । यः
स्पन्दते पिंडित एव नाङ्गैश्चिरात्स शूलः समगर्भलिङ्गः-॥
स रौधिरः स्त्रीभव एव गुल्मो मासे व्यतीते दशमे चिकित्स्यः ॥

अर्थ—नई प्रसूत भई स्त्री के अपथ्य सेवन करने से अथवा अपक गर्भपात होने से अथवा ऋतुकाल के समय अपथ्य भोजन करने से, वायु कुपित होकर उस स्त्री के रुधिर (जो ऋतुसमय निकले उस को) लेकर गुल्म करे वह गुल्म पीडायुक्त व दाहयुक्त होय है और पित्तगुल्म के जो लक्षण कहे हैं वे सब इस में होंय, और इस में दूसरे विशेष लक्षण होते हैं उन को कहता हूं सुनो- यह गुल्म बहुत देर में गोल गोल हिले, अवयव कहिये हाथ पैर के साथ नहीं हिले, शूलयुक्त होय गर्भ के समान सब लक्षण मिलें, (अर्थात् मुख से पानी छूटे, मुख पीला पड जाय, स्तन का अग्रभाग काला हो जाय और दोहदादि लक्षण सब मिलें. ये सब लक्षण व्याधि के प्रभाव से होते हैं. जैसे खई रोगवाले को स्त्रीरमण की इच्छा और काले नख ताल्वादिक होते हैं) यह रक्तजगुल्म स्त्रियों के होय है, दश महीना व्यतीत हो जाय तब इस रक्तगुल्म की चिकित्सा करनी चाहिये. कोई कहते हैं कि यह गर्भ है अथवा रक्तगुल्म है, यह शंका जानकर माधवाचार्य ने (दश महिना व्यतीत होने पर) ऐसा कहा है. कारण इस का यह है कि नववां और दशवां महीना यह प्रसूत होने का समय है * शंका-क्योंजी (यः स्पन्दते पिंडित एव नांगैः) इत्यादिक विशेषणों से स्पष्ट प्रतीति होय है क्योंकि गर्भ तो निरंतर प्रत्येक अवयव के साथ शूलरहित फडकता है और रक्तगुल्म के इस से विपरीत लक्षण हैं, फिर दश महीने व्यतीत होने पर चिकित्सा करना चाहिये ये क्यों कहा ? * उत्तर—इस का कारण इस प्रकार है कि इस रोग में जब तो दश महीना व्यतीत हो जाय जब चिकित्सा करे तो सुखसाध्य होय है, कुछ प्रसव के नियम से नहीं कहा क्योंकि प्रसव ग्यारह बारह महीनों में भी होय है, सो शक में भी लिखा है “ तं स्त्री प्रसूते सुचिरेण गर्भं स्पष्टो यदा चर्षगणैरपि स्यात्” जैसे जीर्णज्वर होने पर दूध पीना और दस्त का लेना हितकारक होय है । इसी से ग्रन्थाम्तरों में भी लिखा है “ रक्तगुल्मे पुराणत्वं सुखसाध्यस्य लक्षणम्” इस रक्तगुल्म को दस महीने व्यतीत होने पर पुरानापना होय है और जेज्जट ने भी

कहा है कि दस महीनों के पहले मर्दनादि क्रिया करने से गर्भाशय को विकार होय है क्योंकि रुधिर उस ठिकाने पर जमा होय है और ग्यारह महीने में गुल्म का गोला बहुत अच्छा जम जाता है, इसी से ग्यारहवें महीने स्नेहादिक करके सब शरीर मृदु (नरम) करने से भेदन क्रिया करे तो गर्भाशय भले प्रकार अच्छा रहे ॥

दंत्यादि वटी

दंतिहिं गुयवाक्षारालाबुर्बाजं कणा गुडः । सुहिक्षीरेण गुटिका
सर्वेषां कर्पमात्रिका ॥ भक्षिता रक्तगुल्मघ्नी रुधिरस्त्रावकारिणी ॥

अर्थ—दंती की जड़, हींग, जवाखार, कडुई घीया के बीज, पीपल, गुड इन को धूर के दूध में खरल करके २ तोले की गोली बनावे एक गोली खाय तो रक्त-गुल्म की नाशक और रुधिर के स्त्राव करनेवाली है (परंतु बलाबल विचारके मात्रा देवे) ॥

पलाशघृत

पलाशक्षारयोगेन सर्पिः सिद्धं पिवेद्बधूः ॥

अर्थ—पलास (टाक) के क्षार के योग से घृत को सिद्ध करके यह स्त्री को पीना चाहिये ॥

शताह्वादि कल्क

शताह्वाचिरविल्वत्वग्दारुभाङ्गीकणोज्ज्वः ।

कल्कः पीतो हरेद्गुल्मं तिलक्वाथेन रक्तजम् ॥

अर्थ—शतावर, कंजा की छाल, दारुहलदी, भारंगी, पीपल इन के चूर्ण को तिल के काटे के साथ पीवे तो रक्तगुल्म का नाश होय ॥

तिलक्वाथ

तिलक्वाथो गुडघृतव्योपभाङ्गीरजोन्वितः ।

पीतो रक्तभवे गुल्मे नष्टे शुक्रे च योपितः ॥

अर्थ—तिल के काटे में गुड, घी और सोंठ, मिरच, पीपल, भारंगी इन का चूर्ण ढालके पीवे तो रक्तगुल्म और स्त्रियों का जो शुक्र नष्ट होता है उस पर परमोत्तम है ॥

भांग्यादि चूर्ण

भाङ्गीकृष्णाकरंजत्वग्रंथिकामरदारुजम् ।

चूर्णं तिलानां क्वाथेन रक्तगुल्मरुजापहम् ॥

अर्थ-भारंगी, पीपल, कंजे की छाल, पीपरामूल, देवदारु इन के चूर्ण को तिल के काटे में मिलायके पीवे तो रक्तगुल्म का नाश करे ॥

तिलमूलादि चूर्ण

तिलमूलं च शिग्रुं च ब्रह्मदंडीयमूलकम् । मधुयष्टी त्रिकटुकै-
र्युतं चूर्णमुपासते ॥ पुष्परोधे वातगुल्मे स्त्रीणां सद्यः सुखावहम् ॥

अर्थ-तिल की जड़, सहजने की जड़, ब्रह्मदंडी की जड़, मुलहठी, सोंठ, मिरच और पीपल इन का चूर्ण सेवन करने से स्त्रियों का नष्टपुष्प, वायगोला इन को तत्काल सुखदाई होय ॥

मुंड्यादि चूर्ण

मुंडीरोचनिकाचूर्णं शर्करामाक्षिकान्वितम् । विदधीतास्यगु-
ल्मिन्यां मलसंरेचनाय च ॥ उष्णैर्वा भेदयेद्भिन्ने विधिर्वा-
सृग्धरोद्दितः । अतिप्रवृत्तमस्रं तु भिन्ने गुल्मे निवारयेत् ॥

अर्थ-मुंडी और वंशलोचन इन का चूर्ण मिश्री और सहज इन से रक्तगुल्म पर रेचन देवे. अथवा गरम औषधों से गुल्म को तोड़े. जब गोला टूट जावे तब रक्त-गुल्म के ऊपर जो यत्न लिखे हैं वे उपाय करे. यदि गोला टूटने से रुधिर अधिक निकलने लगे तो उस को उसी दम बंद करे ॥

गुल्म के असाध्यलक्षण

सञ्चितः क्रमशो गुल्मो महावास्तुपरिग्रहः । कृतशूलः शिरा-
नद्धो यदा कूर्म इवोन्नतः ॥ दौर्बल्यारुचिहृल्लासकासच्छर्द्य-
रतिज्वरैः । तृष्णातंद्राप्रतिश्यायैर्युज्यते न स सिद्धयति ॥
गृहीत्वा सज्वरं श्वासं च्छर्द्यतीसारपीडितम् । हृन्नाभिस्तित्पा-
देषु शोथः क्षिपति गुल्मिनम् ॥ श्वासः शूलं पिपासान्नविद्वेषो
ग्रन्थिमूढता । जायते दुर्बलत्वं च गुल्मिनां मरणाय वै ॥

अर्थ-क्रमक्रम से बड़ा गुल्म जब सब उदर (पेट) में फैल जाय और धातु-ओं में उस का मूल जाय पहुंचे, तथा उस पर नाडियों का जाल लिपट जाय और कण्ठ की पीठ के समान गुल्म ऊंचा होय, तब इस रोगी के निःसत्त्वता, अरुचि, सूती रक्त, खांसी, वमन, अरति और ज्वर तथा प्यास, तन्द्रा और पीनस ये लक्षण हों, ऐसा रोगी असाध्य है वमन और आतिसार इन से पीडित ऐसा

गुल्मरोगी का हृदय, नाभी, हाथ, पैर इन ठिकाने सूजन होय और ज्वर, दमा जिस के होय ऐसे लक्षण होने से रोगी बचे नहीं। श्वास, शूल, प्यास, अन्न में असुचि और गुल्म की गांठ का एकाएकी नष्ट हो जाना और दुर्बलता ये लक्षण होने से जानना कि गुल्मरोगवाले की मृत्यु समीप है। शंका—क्योंकी अंतर्विद्रधि और गुल्म रोग इन में क्या भेद है इन दोनों के स्थान और स्वरूप तो एक से हैं फेर भेद क्या है ? उत्तर—तुम ने कहा सो ठीक है अन्तर्विद्रधि पचता है और गुल्म नहीं पचे है इस का कारण यह है कि गुल्म तो निराश्रय है सो सुश्रुत ने कहाभी है ॥

दूसरे लक्षण

न निर्वंधोस्ति गुल्मस्य विद्रधिः सनिर्वंधनः । गुल्मस्तिष्ठति दोषे स्वे विद्रधिर्मांसशोणिते ॥ विद्रधिः पच्यते तस्माद्गुल्म-
श्चापि न पच्यते ॥

अर्थ—गुल्म का निर्वंध नहीं है और विद्रधि का निर्वंध है, गुल्म अपने दोषों में रहता है और विद्रधि का ठिकाना मांस रुधिर में है, इसी से विद्रधि का पाक होय है और गुल्म का पाक नहीं होय, गुल्म मुठ्ठी के समान बड़ा है और विद्रधि इस से कुछ जीयादा बड़ा होय है ॥

तीसरा लक्षण

ग्रंथिनाशः श्वासशूलतृष्णात्रद्वेषणादयः । गुल्मिनो दुर्बलत्वं च मरणाय विनिर्दिशेत् ॥ शिरावनद्धः सुकठोर उन्नतो व्याप्तो-
दरो भूरिफलोपि गुल्मः । हृल्लासकासारुचिकार्यतृष्णाछर्दि-
ज्वरार्तश्च न सिद्धिमेति ॥ ज्वरः श्वासकासप्रतिश्यायतंद्राव-
मिभ्रांतियुक्तं त्यनेद्गुल्मिनं तम् । गुदे नाभिहृद्गुल्मिपादेषु
शूनं कृशं सातिसारं तृपाशूलयुक्तम् ॥

अर्थ—जिस गुल्मरोगवाले के गुल्मग्रंथी का नाश, श्वास, शूल, प्यास, अन्नद्वेष और दुर्बलता ये लक्षण हों वह असाध्य है। जो गुल्म नसों से कठिन, ऊपर चठा हुआ, जिस ने पेट व्यापा, बगवान, मुंह से जल गिरे, सांसी, अरुचि, कृशता, प्यास, के और ज्वर, श्वास इन लक्षणों से युक्त गुल्मरोगवाला अच्छा नहीं होता। ज्वर, श्वास, सांसी, प्रतिश्याय, तंद्रा, कै, भ्रांति और गुदा, नाभी, हृदय, हाथ, पांव इन पर अफरा होवे, कृशता, अतिसार, प्यास और शूल इन लक्षणोंवाले गुल्मरोगी को वेध को छोड़ देना चाहिये ॥

पुनर्नवादि कल्क

श्वेतं पुनर्नवामूलं तुल्यं सैधवचूर्णितम् ।
सघृतं लेहयेद्गुल्मी क्षौद्रैर्वाथ जलोदरी ॥

अर्थ—सपेद पुनर्नवा (विपलपरा) की जड़ में बराबर का सैधा निमक डालके पीसके कल्क करे. उस में घी मिलायके गुल्म पर देवे. तथा सहत डालके जलोदर पर देवे ॥

चित्रकादि काथ

चित्रकग्रंथिकैरंडशुंठीकाथः परं हितः ।
शूलानाहविवंधेषु सर्हिगुविडसैधवः ॥

अर्थ—चित्रक, पीपरामूल, अंड की जड़ और सोंठ इन का काटा हिंग, विड-निमक और सैधा निमक डालके देवे तो गुल्म, शूल, अफरा और विबंध इन पर अत्यंत हितकारी है ॥

नादेयादिकाथ

नादेयीकुठजार्कशिशुवृहतीस्नुग्वेष्टभल्लातकव्याप्रीकिंशुकपा-
रिभद्रकुटजापामार्गनीपाग्निनाम् । वासामुष्ककपाटलां सलवणां
दग्धां जले पाचितं हिंवादिप्रतिवापमेतद्गुदितं गुल्मोदराष्टीलिषु ॥

अर्थ—भूंयजामुन, कुठा की छाल, आक, सहजना, कटेरी, घूहर, काली मिरच, भिलाए, बडी कटेरी, पलास, नीम, इंद्रजो, आंगा, कडव, चित्रक, अडूसा, मोरावृक्ष की छाल, पाट और भुना हुआ निमक इन का काटा कर उस में हींग डालके गुल्म, उदर और अष्टीला इन पर देवे ॥

पारदादि वटी

पारदं शिखितुत्थं च जेपालं पिप्पलीसमम् ।
आरग्वधफलं मज्जां वज्रीक्षीरेण मर्दयेत् ॥
मापमात्रां वटीं खादेत्स्त्रीणां गुल्मोदरप्रणुत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, लीलाथोया, जमालगोटा, पीपल, अमलतास का गूदा ये समान भाग ले इन को घूहर के दूध में सरल करे फिर एक २ मासे की गोली बनावे वह सब स्त्रियों के गोले तथा उदर इन को नाश करे ॥

मृलिकादि धारण

लांगल्या वापमागोत्थैरिंद्रवारुणिकापि वा ।

शूलं योनिगतं स्त्रीणां धारणं पुष्परोधनुत् ॥

अर्थ—कलियारी, आंगा अथवा इन्द्रायन इन की जड को योनि में धारण करे तो योनिशूल और पुष्पावरोध इन को नाश करे ॥

निंवादि वटी

निंवैरंडस्य वीजानि पिष्ट्वा निंवदलद्रवैः ।

गुटिकांतर्गता योनौ लेपोयं भगशूलनुत् ॥

अर्थ—नीम की निबोरी और अंडी इन को पीस नीम के पत्तों के रस में गोली बनावे इस गोली को योनि में रखे तो अथवा इस का योनि में लेप करे तो योनि-शूल का नाश करे ॥

सव्यादि कांकायनवटी

सठी पुष्करमूलं च दंतिचित्रकमाढकम् । शृंगवेरं वचां चैव प-

लिकानि समाहरेत् ॥ त्रिवृतायाः पलं चैव कुर्यात्रीणि च हिं-

गुलुः । यवक्षारः पले द्वे च द्वे पले चाम्लवेतसम् ॥ यवान्यजा-

जिमरिचं धान्यकं चेति कार्षिकम् । उपकुल्याजमोदाभ्यां तथा

चाष्टमिकामपि ॥ मातुलिंजरसोपेतां गुटिकां कारयेद्विपक ।

तासां त्वेका पिवेद्वे वा तिस्रो वाथ सुखांबुना ॥ अम्लैश्च मद्यै-

रूपैश्च घृतेन पयसाथवा । एषा कांकायनेनोक्ता गुटिका गु-

ल्मनाशिनी ॥

अर्थ—कचूर, पुहकरमूल, दंती, चित्रक ये २५६ तोले और सोंठ, वच ये चार २ तोले निसोय ४ तोले और हींगलू ३ तोले, जवाखार ८ तोले, अमलवेत ८ तोले और अजमायन, जीरा, काली मिरच और घनिया ये एक २ तोले और पीपल, अज-मोद ये ३२ तोले ले इस प्रकार सब औषध लेकर चूर्ण करे. इस को बिजोरे के रस में खरल करके गोली बनाय ले इस में से १ । २ अथवा ३ गोली गरम जल के साथ, खटाई से, सहत से, यूप से, घृत से किंवा दूध के साथ देवे तो यह कांकायनोक्त गुटिका गुल्मरोग को नाश करे ॥

यवान्यादि गुटिका

यवानी जीरकं धान्यं मरिचं गिरिकर्णिका । अजमोदोपकुंची च

चतुःशाणः पृथक् पृथक् ॥ हिंगु पट्टशाणकं कार्यं शाणो लव-
णपंचकम् । त्रिवृच्चाष्टमितैः शाणैः प्रत्येकं कल्पयेत्सुधीः ॥
दंती शठी पौष्करं च विडंगं दाडिमं शिवा । चित्राम्लवेतसः
शुंठी शाणैः पोडशभिः पृथक् ॥ बीजपूररसेनैपां गुटिकां का-
रयेद्दूधः । घृतेन पयसा चाम्लरसैरुष्णोदकेन वा ॥ पिवेत्कां-
कायनप्रोक्ता गुटिका गुल्मनाशिनी । मद्येन वातिकं गुल्मं गोक्षु-
रेण च पैत्तिकम् ॥ मूत्रेण कफगुल्मं च दशमूलैस्त्रिदोषजम् ।
उश्रीदुग्धेन नारीणां रक्तगुल्मं निवारयेत् ॥ हृद्रोगं ग्रहणीशूलं
कृमीनर्शांसि नाशयेत् ॥

अर्थ—अजमायन, जीरा, धनिया, काठी मिरच, सारिवा, अजमोद, कलौजी ये
प्रत्येक चार २ तोले, हींग ६ तोले, पांचों निमक एक २ तोले, निसोय ८ तोले,
जमालगोटा, कचूर, पोहकरमूल, वायविडंग, अनारदाना, आवला, पीपल, अमल-
वेत और सोंठ ये प्रत्येक सोलह २ तोले ले सब को एकत्र कर विजोरे के रस में
उन को खरल करके गोली बनाय लेवे इन को घी, दूध, खट्टे रस अथवा गरम जल
के साथ देवे तो गुल्मरोगनाश होय. वातजन्य गुल्म पर मद्य के साथ, पैत्तिक गुल्म
में गोखरू के साथ, कफगुल्म पर गोमूत्र से, त्रिदोषगुल्म पर दशमूल के काठे के
साथ, स्त्रियों के रक्तगुल्म पर ऊंटनी के दूध से और हृदयरोग, संग्रहणी, शूल,
कृमि और बवासीर इन पर अनुपान के साथ देवे इस प्रकार कांकायनक्राप्ति
ने कहा है ॥

स्वर्जिकावटी

स्वर्जिका शाणमाना स्यात्तावदेव गुडो भवेत् ।

उभयोर्वटिकां खादेद्गुल्मामयविनाशिनीम् ॥

अर्थ—सज्जीखार ३ मासे और गुड तीन मासे इन की गोली बनायके सेवन करे
तो रक्तगुल्म का नाश करे ॥

प्रवालपंचामृत

प्रवालमुक्ताफलशंखशुक्तिकपर्दिकानां च समांशभागम् । प्रवा-
लमात्रं द्विगुणं प्रयोज्यं सर्वैः समांशं रविदुग्धमेव ॥ एकीकृतं
तत्खलु भांडमध्ये क्षिप्त्वा मुखे वंधनमत्र योज्यम् । पुटं च दद्या-

दतिशीतले च उद्धृत्य तद्भस्म क्षिपेत्करंडे ॥ नित्यं हि वारं
प्रतिपाकयुक्तं बलप्रमाणं हि नरेण सेच्यम् । आनाहगुल्मोदर-
प्लीहकासश्वासाग्निमांद्यान् कफमारुतोत्थान् ॥ अजीर्णमुद्गारहृ-
दामयघ्नं ग्रहण्यतीसारविकारनाशम् ॥ मेहामयं मूत्ररोगं मूत्र-
कृच्छ्रं तथाश्मरीम् । नाशयेन्नात्र संदेहो सत्यं गुरुवचो यथा ॥
पथ्याश्रितं भोजनमादरेण समाचरेन्निर्मलचित्तवृत्त्या । प्रवाल-
पंचामृतनामधेयो योगोत्तमः सर्वगदापहारी ॥

अर्थ—मूंगा, मोती, शंख, मोती की सीप, कौडी ये सब समान भाग लेवे परंतु
मूंगा की भस्म दूनी लेवे तथा सब की बराबर आक का दूध डालके सब को एकत्र
पीसके किसी पात्र में भरके ऊपर से ढके और कपडमिट्टी करके संपुट में रखके
फूंक देवे जब शीतल हो जावे तब निकाल शीशी में भरके रख देवे. यह भस्म १
बल रोगी को खाने के वास्ते देवे तो पेट का फूलना, गोला, उदर, प्लीहा, खांसी,
श्वास, मंदाग्नि, कफवातसंबंधी रोग, अजीर्ण, हृदयरोग, संग्रहणी, अतिसार, प्रमेह,
मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, पथरी इन को नाश करे इस प्रकार गुरु ने कहा है इस में उत्तम
पथ्य करे चित्त की वृत्ति निर्मल रखे. इस योग को प्रवालपंचामृत कहते हैं.
यह योग उत्तम होने से संपूर्ण रोगों का नाश करे है ॥

हिंवादि घृत

हिंगुपुष्करमूलानि तुंबरूणि हरीतकी । श्यामा विडं सेंधवं च
यवक्षारं महौषधम् ॥ यवक्षारोदकेनैतत्घृतभ्रष्टं तु पाचयेत् ।

तेनास्य भिद्यते गुल्मः सशूलः सपरिग्रहः ॥

अर्थ—हींग, पुहकरमूल, तुंबरू, हरड, पीपल, विड निमक, सेंधा निमक,
जवाखार और सोंठ ये समान भाग ले चूर्ण करे. इस को जवाखार के जल में
मिलायके १ सेर घी मिलामके आग्नि पर पक करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके
छान ले इस को सेवन करे तो गुल्म फूटकर अच्छा होवे तथा शूलादिक रोग
शांत होवें ॥

धात्रीघृत

धात्रीफलानां स्वरसैर्विडंगं विपचेद्वृतम् ।

शर्करासैंधवोपेतं तत्सिद्धं सर्वगुल्मनुत् ॥

अर्थ—आवलों के स्वरस में वायुविडंग का कल्क और घी डालके घृत सिद्ध करे इस में मिश्री और सैंधा निमक डालके देवे तो संपूर्ण गुल्मों का नाश होय ॥

पट्टपलघृत

पट्टभिः पलैर्मगधजाफलमूलचव्यं विश्वौषधज्वलनयावकक-
ल्कपक्कम् । प्रस्थं घृतस्य दशमूल्यरुबूकभाङ्गीं काथोप्यथो
पयसि वा दधिपट्टपलाख्यम् ॥ गुल्मोदरारुचिभगंदरवह्निमांघ-
कासज्वरक्षयशिरोग्रहनिर्विकारान् । सद्यः शमं नयति ये च
कफानिलोत्था भाङ्गर्चाख्यपट्टपलमिदं प्रवदंति तज्ज्ञाः ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, चव्य, सोंठ, चित्रक और जवाखार ये बत्तीस २ तोले लेवे. इन का कल्क कर घी ६४ तोले, दशमूल, अंड की जड़ और भारंगी इन का काढा, दूध और दही ये २४ तोले ले सब को एकत्र करके घृत को पचावे. यह घृत गोला, उदर, अरुचि, भगंदर, मंदाग्नि, सांसी, ज्वर, क्षई, मस्तकशूल और कफवातोत्पन्न व्याधि इन सब को यह पट्टपलनामक घृत दूर करे ॥

दधिकयोग

विडदाडिमसिंधूत्थहुतभुग्व्योपजीरकैः । हिंयुसौवर्चलक्षारचु-
क्रवृक्षाम्लवेतसैः ॥ बीजपूररसोपेतैः सर्पिर्दधि चतुर्गुणम् ।
साधितं दधिकं नाम्ना गुल्महृत्प्रीहनुत्परम् ॥

अर्थ—विड निमक, अनारदाना, सैंधा निमक, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, हींग, संचरनिमक, चूका, डमली, अमलवेत और बिजोरे का रस ये प्रत्येक तोले २ भर लेवे और घी तथा दही चार २ तोले सब को एकत्र कर पचावे. इस को दधि नामक घृत कहते हैं. यह गोला और प्लीहा इन को नाश करे ॥

सुहृक्षीराद्य घृत

सुहृक्षीरं पले द्वे तु प्रस्थार्धं चैव सर्पिपः । कंपिलं पलमेकं तु
पलार्धं सैंधवस्य च ॥ त्रिवृत्तायाः पलं चैकं धान्याः कुडवमेव
च । तोयप्रस्थेन विपचेच्चैवं मृद्धग्निना भिषक् ॥ कर्पप्रमाणं
दातव्यं जठरप्रीहगुल्मिने । तथा कच्छपारोगेषु युंजीत मति-
मान् भिषक् ॥ एतद्गुल्मान् ससमीरान् निहंति सपरिग्रहान् ।

निहंत्येप प्रयोगो हि वायुर्जलधरानिव ॥ पंचगुल्मवधोपायं
सर्पिरेतत्प्रकीर्तितम् । सर्वासुरवधार्थाय यथा वज्रं स्वयंभुवा ॥

अर्थ—पूहर का दूध ८ तोले, घी ३२ तोले, कवीला ४ तोले, सैंधा निमक २ तोले, निसोथ ४ तोले और आवला १६ तोले इस प्रकार सब को ले ६४ तोले जल में डालके मंदाग्नि से पचावे. यह स्नुह्यादि घृत एक तोले देवे तो उदर, प्लीहा, कच्छपरोग, गोला, वायगोला और पांच प्रकार के गुल्म इन को नाश करे. जैसे संपूर्ण दैत्यों के वध के वास्ते वज्र रचा है उसी प्रकार संपूर्ण रोगों के नाश करने को ब्रह्मदेव ने यह घृत उत्पन्न करा है ॥

अग्निमुखचूर्ण

हिंशुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा भवेत् । पिप्पली त्रिगुणा
ज्ञेया शृंगवेरं चतुर्गुणम् ॥ यवानिका पंचगुणा पड्गुणा च
हरीतकी । चित्रकं सप्तगुणितं कुष्ठं चाष्टगुणं भवेत् ॥ एतद्वा-
तहरं चूर्णं पीतमात्रं प्रसन्नया । पिबेद्भ्रा मस्तुना वा सुरया
कोष्णवारिणा ॥ उदावर्तमजीर्णं च प्लीहानमुदरं तथा । अंगानि
यस्य शीर्यते विषं वा येन भक्षितम् ॥ अशोहरो दीपनं च
शूलघ्नो गुल्मनाशनः । कासं श्वासं निहंत्याशु तथैव क्षयना-
शनः ॥ चूर्णो ह्यग्निमुखो नाम्ना न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥

अर्थ—हींग १, वच २, पीपल ३, सोंठ ४, अजमायन ५, हरड ६, चित्रक ७ और कूठ ८ इन भागों को क्रम वृद्धि से ले चूर्ण करे. यह वातहारक चूर्ण मद्य, दही का जल, मद्य अथवा गरम जल इन के साथ पीवे. यह उदावर्त, अजीर्ण, प्लीहा, उदर, अंगपाक, भोजन करा हुआ विष और बवासीर इन सब को नाश करे तथा यह दीपन, शूलनाशक और गुल्मनाशक है और खांसी, श्वास और क्षय इन को नाश करे यह अग्निमुखचूर्ण कदाचित् खाली नहीं जाता ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रकाजाजिसैंधवम् ।

पीतं तु सुरया हंति गुल्ममाशु सुदुस्तरम् ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, चित्रक, जीरा और सैंधा निमक इन का चूर्ण करके सहत से देवे तो तत्काल गुल्मरोग का नाश होय ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगूग्रगंधाविडशुंघ्रजजीहरीतकीपुष्करमूलकुष्ठम् ।

भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदराजीर्णविषूचिकासु ॥

अर्थ-हिंग, वच, विडनिमक, सोंठ, जीरा, हरड, पुहकरमूल और कूठ ये सब औषध भागोत्तरवृद्धि से लेकर चूर्ण करे. यह गोला, उदर, अजीर्णरोग और विषूचिका (हैजा) इन को दूर करे ॥

चित्रकादि चूर्ण

चित्रको नागरं हिंगु पिप्पली पिप्पलीजटा । चव्याजमोदा
मरिचं प्रत्येकं कर्पसंमितम् ॥ स्वर्जिका च यवक्षारः सिंधु
सौवर्चलं विडम् । सामुद्रकं रोमकं च कोलमात्राणि कारयेत् ॥
एकीकृत्याखिलं चूर्णं भावयेन्मातुर्लिङ्गजैः । रसैर्दाडिमजैर्वापि
शोपयेदातपेन च ॥ एतच्चूर्णं जयेद् गुल्मं ग्रहणीमामजां रु-
जम् । अग्निं च कुरुते दीप्तं रुचिकृत्कफनाशनम् ॥

अर्थ-चित्रक, सोंठ, भूनी हिंग, पीपल, पीपरामूल, चव्य, अजमोद और मिरच ये आठ औषध एक २ कर्प लेवे तथा सजीखार, जवाखार, सेंधानिमक, संचरनिमक, विडनिमक, सामुद्रनिमक, पांगानिमक ये सात क्षार एक २ कोलप्रमाण लेवे फिर सब औषधों का चूर्ण कर बिजोरे के रस की पुट देवे अथवा अनारदाने के रस की पुट देवे फिर इस को धूप में सुखाय लेवे इस चूर्ण के सेवन करने से गोला, संग्रहणी, आम-वात दूर होवे तथा अग्नि प्रदीप्त हो, मुख में रुचि आवे तथा कफ दूर होय ॥

त्रिफलादि चूर्ण

त्रिफला कांचनक्षीरी सप्तला नीलिनी वचा । त्रायंती ह्रपुपा
तिक्ता त्रिवृत्सैधवपिप्पली ॥ पिवेद्धि चूर्णं कोष्णेन वारिमांसर-
सादिभिः । सर्वगुल्मोदरप्लीहकुष्ठार्शःशोथवारणम् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आवला, चोक, सातला (धूर का भेद), नीली, वच, त्राय-माण, हऊबेर, कुटकी, निसोथ, सेंधानिमक और पीपल इन के चूर्ण को गरम जल के साथ अथवा गरम मांसरस के साथ देवे तो गोला, उदर, प्लीहा, कोढ़, बवासीर और सूजन इन को नाश करे ॥

कुमारीयोग

गुल्मी कुमारिकामांसं कर्पार्थं गोघृतान्वितम् ।

गिलेद्वयोपाभयासिंधुसूक्ष्मचूर्णावधूलितम् ॥

अर्थ—वीगुवार का गूदा छः मासे, गौ का घी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरद और सेंधा निमक इन को मिलायके सेवन करे तो गुल्मरोग शांत होय ॥

नाराचचूर्ण

शतपुष्पा वचा कुष्ठकारवीजाजिधान्यकम् । द्वौ क्षारौ पिप्पली-
मूलं सठ्युग्रा चोपकुंचिका ॥ स्वर्णक्षीरीवाजिगंधाविशालाचि-
त्रकाः समाः । त्रिवृहंती सतला च एपां द्वित्रिगुणानपि ॥ ना-
राचकमिदं ख्यातं चूर्णं श्रेष्ठं विरेचनम् । गुल्मानाहविपाजीर्ण-
श्वासकासगलग्रहम् ॥ शोफाशौग्रहणीदोषं गुल्मान् पंचविधानपि ॥

अर्थ—सोंफ, वच, कूठ, कलौंजी, जीरा, धनिया, सुहागा, जवाखार, पीपरामूल, कचूर और बडा जीरा, चोक, असगंध, इंद्रायन और चित्रक ये समान भाग लेवे. और निसोय २, जमालगोटा ३ और सातला ३ भाग इस प्रमाण से लेकर चूर्ण कर लेवे. इस को नाराचचूर्ण कहते हैं. यह रेचनविषय में उत्तम है तथा गोला, अफरा, विष, अजीर्ण, श्वास, खांसी, गलग्रह, सूजन, बवासीर, संग्रहणी और पांच प्रकार के गोला इन को नाश करे ॥

पूतिकादि चूर्ण

पूतीकपत्रगजचिर्भटचव्यवह्लिव्योषं च युक्तरचितं लवणोपधा-
नम् । दध्ना विचूर्ण्य दधिमस्तुयुतं प्रयोज्यं गुल्मोदरश्वयथुपांडु-
गदोद्भवेषु ॥

अर्थ—कंजे के पत्ते, कचरिया, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल और निमक इन के चूर्ण को दही में घोटे. फिर इस को दही के जल में मिलाय देवे तो गोला, उदर, सूजन और पांडुरोग इन को दूर करे ॥

हस्तिकर्णादि चूर्ण

तत्रैर्जलोदरहरी हस्तिकर्णी च कर्पिका । तिलमूलकपायेण
त्रलदंढ्यास्तु मूलकम् ॥ यष्टी त्रिकटुचूर्णं च युक्तं पानेथ गुल्मजित् ॥

अर्थ—हस्तिकर्णी के कंद को छाछ में पीसके १ तोले जलोदरवाले रोगी को देवे. तथा तिल की जड़ का काटा करके उस में ब्रह्मदंडी की जड़, मुलहठी, सोंठ, मिरच और पीपल इन का चूर्ण ढालके खाने को देवे तो गुल्म का नाश करे ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगु त्रिकटुकं पाठा हपुपा चाभया शठी । अजगंधा यवानी
चर्तित्रिणी फलवेतसम् ॥ सारिवा पौष्करं धान्यमजाजी चित्र-
को वचा । अभ्रकं तीक्ष्णकं ताप्यं लवंगं तुंबरूणि च ॥ द्वौ
क्षारौ लवणे द्वे च चव्यमेकत्र चूर्णयेत् । चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्य-
मन्नपानेषु प्रत्यहम् ॥ प्रातरद्याच्च चूर्णोयं मद्येनोष्णोदकेन
वा । पार्श्वहृद्भस्तिशूलेषु गुल्मवातबलासके ॥ आनाहे मूत्र-
कृच्छ्रे च गुदे योनौ च पीडिते । ग्रहण्यशौंकारेषु ग्रीहपांडू-
मयेरुचौ ॥ उरोविबंधे हिक्कायां कासे श्वासे गलग्रहे । भावितं
मातुर्लिंगस्य दाडिमस्य रसेन च ॥ बहुशो गुटिका कार्या
आर्द्रकस्य रसेन वा । नाम्ना हिंग्वादिकं चूर्णं शूलगुल्म-
विनाशनम् ॥

अर्थ—हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, पाठ, हाऊबेर, हरड, कचूर, वनतुलसी, अजमायन, तंतडीक, अमलवेत, सारिवा, पोहकरमूल, धनिया, जीरा, चित्रक, वच, अभ्रकभस्म, पोलादलोह की भस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, लौंग, तुंबरू, सज्जीखार, जवाखार, सैंधा निमक, साह्यरनिमक और चव्य इन को समान भाग ले चूर्ण करे. इस को अन्न के साथ, जल के साथ अथवा प्रातःकाल मद्य के साथ अथवा गरम जल से देवे तो पार्श्वशूल, हृदय, वस्ति इन का शूल, गोला, वातकफ, अफरा, मूत्रकृच्छ्र और गुदा, योनि इन का शूल, संग्रहणी, बवासीर, ग्रीहा, पांडुरोग, अरुचि, छाती का भारी होना, हिचकी, खांसी, श्वास, गलग्रह, इन को नाश करे. इस चूर्ण को अनारदाने के अथवा अदरख के रस में घोटके गोली बनाय लेवे और रोगी को देय. यह हिंग्वादि चूर्ण शूल, गोला इन को नाश करे ॥

विद्याधररस

सूतो गंधस्तालकस्ताम्रताप्यं तुत्थं सर्वं खल्वमध्ये तु पिष्ट्वा ।
कृष्णाक्वाथैः सुहृक्षीरैर्भावितं वास्तैर्मूत्रैर्नाम विद्याधरः स्यात् ॥

निष्काधोयं श्लेष्मगुलमं निह्न्यात्पथ्यं युक्तं सर्वरोगे प्रशस्तम् ।

आदौ गुलमे रक्तमोक्षं विधाय प्रौढः कार्यो यो विधिः सर्वजे वा ॥

अर्थ—पारा, गंधक, हरताल, ताम्रभस्म, सुवर्णमाक्षिक और लीलायोथा इन सब को खरल कर पीपल के काठे में धूहर के दूध तथा बकरे के मूत्र में इन को खरल करे. इस को विद्याधर रस कहते हैं. इस को तीन मासे कफगुलम पर देवे और सर्व रोगोक्त पथ्य देवे तो उस का नाश करे. रक्तगुलम पर प्रथम रुधिर निकाले तथा जीर्ण होने पर देवे और सन्निपातज गुलम का प्रतिकार करे ॥

वडवानलरस

तित्क्वाथं पिबेदाज्यं भांङ्गीव्योपगुडान्वितम् ।

पुष्परोधे रक्तगुलमे स्त्रीभिर्विद्याधरो रसः ॥

अर्थ—स्त्रियों के पुष्पावरोध (ऋतुधर्म न होने) पर भारंगी, सोंठ, मिरच, पीपल इन का काटा गुड डालके पीवे अथवा विद्याधर रस भक्षण करे ॥

गुल्मोदरगजारातिरस

सूतगंधकणापथ्यातुत्थारगवधकान्दढम् । मर्दयेद्भ्रिदुग्धेन मा-

पार्थं खादयेद्दिनम् ॥ गुल्मोदरगजारातिनाम्ना भैरवनिर्मितः ।

स्त्रीणां जलोदरं हन्ति पथ्यं शाल्योदनं दधि ॥ चिंचाफलरस-

स्यापि पानमस्मिन्प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, पीपल, हरड, नीलायोथा, अमलतास का गूदा इन को समान भाग ले चूर्ण करे फिर धूहर के दूध से खरल करे. इस में से नित्य ४ रत्ती देवे. इसे गुलम और उदररूप गज का शत्रु गुल्मोदरगजाराति इस नाम से भैरव ने उत्पन्न करा है. यह स्त्रियों के जलोदर का नाश करे इस पर दही भात पथ्य में देवे और इमली का रस पान करे ॥

उद्दामारुच्य रस

सूतः कर्पः शांखवृक्षस्य नीरैः सर्पाक्ष्याद्भिः पेपयेदस्रमेकम् ।

भूमेः कुक्षौ पंचधैवं पुटित्वा युञ्ज्यत्तुल्यं चारुजेपालगर्भात् ॥

उद्दामारुच्यः स्याद्रसः सर्पिषा यो गुंज्यायुग्मं पित्तगुलमं निहन्ति ।

द्राक्षापथ्याक्वाथ एवानुपानं वज्यै सर्वं पित्तलं दाहकारि ॥

अर्थ—पारा १ तोला लेकर शंखपुष्पी के तथा सरफोका के रस में एक दिन खरल करे फिर इस को जमालगोटे की लुगदी में रखके अग्नि की पांच पुट देवे तो उद्दामनामक रस बने. यह दो रत्ती लेकर घी के साथ देवे तो गुल्मरोग का नाश करे. पित्तव्याधि पर दास्य और हरड इन के काठे के अनुपान से देवे तथा पथ्य में संपूर्ण पित्तकारक और दाहकारक पदार्थ वर्जित है ॥

नाराच रस

शुद्धसूतसमं गंधं जेपालं त्रिफलासमम् ।
त्रिकटुं पेपयेत्क्षौद्रमिश्रं गुल्मं लिहन्हरेत् ॥
उष्णोदकं पिबेच्चानु नाराचोयं रसोत्तमः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, जमालगोटा, हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल ये एकत्र खरल कर सहत में मिलाय के चाटे ऊपर से गरम जल पीवे तो गोले का नाश होय. इस को नाराचरस कहते हैं ॥

गुल्मकुठाररस

नागवंगाभ्रकं कांतं समं ताम्रं समांशकम् । जंवीरस्वरसैर्घृष्ट्वा
वटी गुंजाप्रमाणिका ॥ मधुनार्द्रकनीरेण क्षारयुग्मेन सेविता ।
अजीर्णमम्लपित्तं च हृत्पार्श्वोदरशूलकम् ॥ नाम्ना गुल्मकु-
ठारोयं सर्वान् गुल्मान्वयपोहति ॥

अर्थ—शीशे की भस्म, रांगे की भस्म, अभ्रकभस्म और कांतलोह की भस्म ये समान भाग ले तथा सब की बराबर ताम्रभस्म लेवे. सब को जंभीरीनीबू के रस में १ रत्ती की गोली करे. इस को सहत और अदरख के रस में जवाखार और मुद्गागा डालके देवे तो अजीर्ण, अम्लपित्त और हृदय, पसवाडा और पेट इन के शूल को नाश करे. इस को गुल्मकुठाररस कहते हैं ॥

गुल्ममदेभसिंहरस

रसगंधवराटताम्रशंखविपवंगाभ्रककांततीक्ष्णमुंडम् । अहिर्हिगु-
लटंकणं समांशं सकलं तत्रिगुणं पुराणकिट्टम् ॥ पशुमूत्रविशो-
धितं सुभृष्टा त्रिफलाभृंगतथार्द्रकोत्थनीरैः । सुविशोष्य व-
रामृतालिवासास्वरसैरष्टगुणैः पुनर्नवोत्थैः ॥ पृथगग्निधृतं घनं
विपाच्य गुटिका गुंजयुता निजानुपानैः । ज्वरपांडुत्वपास्रपैत्य-

गुल्मक्षयकासस्वरमग्निमांद्यमूर्च्छाः॥ पवनादिषु दुस्तराष्टरोगान्
सकलान् पित्तहरं गदावृतं च । बहुना किमसौ यथार्थनामा स-
कलव्याधिहरो मदेभसिंहः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, कौडी, ताम्रभस्म, शंख, वंगभस्म, अम्रकभस्म, कांतलोह की भस्म, तीक्ष्णलोह, मुंडलोह, शीशा इन की भस्म, हींगलू, सुहागा ये सब समान भाग लेवे. तथा सब से तिगुनी त्रिफला और भांगरा इन की भावना देकर तैयार करी हुई पुरानी कीटी सब को एकत्र करके त्रिफला, गिलोय, कमलकंद और सोंठ इन सब का अठ गुना स्वरस लेकर पृथक् २ अग्नि पर रखके भावना देवे. जब गाढी हो जावे तब इस की एक एक रत्ती की गोली बनावे. इस गोली को रोगोक्त अनुपान के साथ देवे तो ज्वर, पांडु, प्यास, रक्तपित्त, गोला, क्षय, खांसी, स्वरभंग, मंदाग्नि, मूर्च्छा, वादी से आदि ले घोर अष्ट महारोग और संपूर्ण पित्त के रोग इन को नाश करे. बहुधा करके यह संपूर्ण व्याधि को नाश करे. इस को सर्वव्याधिहर रस कहते हैं. जैसे सिंह मत्त हाथी को नाश करे है उसी प्रकार यह रस संपूर्ण व्याधियों को नाश करे ॥

वज्रक्षार

सामुद्रं सैधवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम् । टंकणं सर्जिकाक्षारं तुल्यं
चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ अर्कक्षारैः सुहिक्षारैर्लुलितं च विभावयेत् ।
अर्कपत्रं लिपेत्तेन रुद्धा भांडे पुटे पचेत् ॥ तत्क्षारं चूर्णयि-
त्वाथ त्र्युपणं त्रिफलारजः । जीरकं रजनी वह्निर्नवकस्य च
भागतः ॥ क्षारार्थं योजयेत्सम्यगेकीकृत्य विचूर्णयेत् । वज्रक्षा-
रमिमं पूर्वं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूलशो-
फेषु योजयेत् । अग्निमांद्ये त्वजीर्णे च भक्ष्यं निष्कद्रयं तथा ॥
वाताधिके जले कोष्णे घृते पित्ताधिके हितः । कफे गोमूत्रसं-
युक्त आरनाले त्रिदोषनुत् ॥

अर्थ—समुद्रनिमक, सैधानिमक, कषियानिमक, जवाखार, सोरा, सुहागा, सर्जी ये सब बराबर लेवे. सब का चूर्ण करके आक और धूहर के दूध में खरल कर फिर इस कजली की मिट्टी को आक के पत्तों पर लेप करके इन को एक हांडी में भरके मुख को बंद कर देवे. फिर इस को लघु पुट देकर निकाल लेवे नारीक पीसके

इस में आधा सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, भावला, जीरा, हलदी, चित्रक इन का चूर्ण डालके फिर खरल करके धर रखे. इस को चञ्चक्षार कहते हैं. यह प्रथम शिव ने कहा है. यह सर्व उदर, गोला, शूल, सूजन और अग्निमांघ, अजीर्ण इन पर आठ मासे खाय, वाताधिक्य होय तो गरम जल के साथ सेवन करे, पित्ताधिक्य होय तो घी के साथ और त्रिदोषाधिक्य में कांजी के साथ सेवन करे ॥

गुल्मरोग पर क्षार

स्वर्जिका यावशूलश्च क्षारयुग्ममुदाहृतम् । ज्ञेयौ वह्निसमौ क्षारौ
स्वर्जिकायावशूलकौ ॥ क्षाराश्चान्येपि गुल्माशौग्रहणरिक्छिदः
सराः । पाचनाः कृमिपुंस्त्वघ्नाः शर्कराश्मरिनाशनाः ॥

अर्थ—सज्जीखार और जवाखार ये दोनों क्षार अग्नि के समान देदीप्यमान हैं तथा आक, इमली, आंगा, थूहर, केला, सहजना इत्यादिक जो और औषधों के क्षार वे सब गोला, बवासीर और संग्रहणी को दूर करते हैं. तथा दस्तार होकर अग्नि को प्रदीप्त करे तथा कृमिरोग और पुरुपत्व (पुरुषार्थ) और शर्करा तथा पथरी इन को नाश करे हैं ॥

वत्ती

वातवर्चोनिरोधेषु सामुद्रार्द्रार्कसर्पणैः ।

कृत्वा पायौ विधातव्या वर्तयो मरिचान्वितैः ॥

अर्थ—वायु और मल इन का रोध होने से समुद्रनिमक, अदरख, आक का दूध, सरसों और मिरच इन से कपडे को भिगोय वत्ती बनायके गुदा में रखे तो मल और वायु निकले ॥

चविकासव

चविकायास्तुलार्धं तु तदर्धं चित्रकस्य च । वाष्पिका पौष्करं
मूलं षट्त्रयंथा हृषुषा सठी ॥ पटोलमूलं त्रिफला यवानी कुट-
जत्वचः । विशाला धान्यकं रास्त्रा दंती दशपलोन्मिता ॥ कृमि-
घ्नमुस्तमंजिष्ठा देवदारु कटुत्रिकम् । भागान्पंचपलानेतानष्ट-
द्रोणैर्भसः पचेत् ॥ द्रोणे शेषे रसे पूते देयं गुडशतत्रयम् ।
धातव्या विशतिपलं चातुर्जातं पलाष्टकम् ॥ लवंगव्याप-
कंकोलं पादिकानि प्रकल्पयेत् । निदध्यान्मासमेकं तु घृत-

भांडे सुसंस्कृते॥चतुःपलां पिवेन्मात्रां प्रातः पीता नियच्छति ।
सर्वगुल्मविकारांश्च प्रमेहांश्चैव विंशतिम्॥प्रतिश्यायं क्षयं कास-
मष्टीलां वातशोणितम् । उदराण्यंत्रवृद्धिं च चविकाख्यो महासवः ॥

अर्थ—चव्य २ तोले, चित्रक १ तोले, रुदंती, पुहकरमूल, वच, हाऊबेर, कजूर, पटोल की जड़, त्रिफला, अजमायन, कूडा की छाल, इन्द्रायन, धनिया, रास्ता और दंती ये प्रत्येक दश २ पल लेवे. वायविडंग, नागरमोथा, मजीठ, देवदारु, सोंठ, भिरच, पीपल ये प्रत्येक पांच २ पल ले इस को जबकुट करके १४ मन २५ सेर जल में डालके औटावे जब एक द्रोण अर्थात् २०४८ तोले जल शेष रहे तब उता-रके छान लेवे और इस में ८० घाय के फूल, ३२ तोले चातुर्जात, लोंग और कंकोल ये आठ २ तोले डाले फिर घी के चिकने वासन में इन सब को भरके एक महीने पर्यंत धरा रहने देवे तो आसव सिद्ध होय इस की मात्रा ४ तोले की है, प्रातःकाल इस को पीवे तो संपूर्ण गुल्म के विकार, बीस प्रकार के प्रमेहरोग, प्रतिश्याय (सरिकमा), क्षय, खांसी, अष्टीला, वातरक्त, उदररोग और अंत्रवृद्धि इन सब को यह चविकाख्य आसव दूर करे यह महाआसव है ॥

कुमारीआसव

कुमार्याश्च रसद्रोणे गुडं पलज्ञतं तथा । तुलांघ्रिसंख्या विजया
क्वाथयेत जलार्णवे ॥ चतुर्थांशावशेषे तु पूते तस्मिन्निधाप-
येत् । मधुनश्चाढकं दत्त्वा धातक्याः पलपोडशम् ॥स्निग्धभांडे
विनिक्षिप्य कल्कं चैव प्रदापयेत् । जातीफलं लवंगं च कंकोलं
च कवावकम् ॥ जटिला चव्यचित्रं च जातीपत्री सकर्कटम् ।
अक्षं पुष्करमूलं च प्रत्येकं च पलं पलम् ॥ मृतशुल्बं तथा
लोहशुक्तिमात्रं प्रदापयेत् । भूम्यां वा धान्यराशौ वा स्थाप-
येद्दिनविंशतिः ॥ ततोद्धृत्य पिवेन्मात्रां यथाचाग्निबलावलम् ।
पंचकासं तथा श्वासं क्षयरोगं च दारुणम् ॥ उदराणि तथाष्टौ
च पडशांसि च नाशयेत् । वातव्याधिमपस्मारमन्यान् रोगा-
न्सुदुस्तरान् ॥ जाठरं कुरुते दीप्तं कोष्ठशूलं च नाशयेत् ।
गुल्माष्टकं नष्टपुष्पं नाशयेत्पक्षमेकतः ॥ कुमारिकासवो ह्येष
बृहस्पतिविनिर्मितः ॥

अर्थ—धीगुवार का रस २०४८ तोले, गुड ४०० तोले भांग १०० तोले और जल १०२४ तोले ले इन का काटा करे. जब चतुर्थांश रहे तब उतार के छान लेवे और इसमें २५६ तोले सहत, ६४ तोले धाय के फूल डालके धी के चिकने वासन में भरके उस के मुख पर जायफल, लौंग, कंकोल, कवावचीनी, जटामांसी, चव्य, चित्रक, जावित्री, कांकडासिंगी, बहेडा, पुहकरमूल इन प्रत्येक का कल्क चार २ तोले और तामे की भस्म, लोहभस्म ये दो दो तोले डालके मुख बंद कर धरती में अथवा धान की राशि में २० दिन गाढ देवे. फिर इस को निकाल लेवे. यह कुमार्यासव रोगी का बलाबल और अग्नि को विचारके देना चाहिये. यह ५ प्रकार की खांसी, श्वास, असाध्य क्षयरोग, ८ प्रकार के उदर, ६ प्रकार की बवासीर इन को नाश करे. यह वातव्याधि, अपस्मार (मृगी) और जो अन्य रोग इन पर देवे तो जठराग्नि को प्रदीप्त करे, पेट के शूल को नष्ट करे, आठ प्रकार के गुल्म, नष्टपुष्प इन सब रोगों को १५ दिन में नाश करे. यह कुमारिकासव बृहस्पति ने कहा है ॥

दंतीहरीतकी लेह

जलद्रोणे विपक्तव्या विंशतिः पंच चाभया । दंत्याः पलानि
तावंति चित्रकस्य तथैव च ॥ तेनाष्टभागशेषेण पलैर्दंतीसमं
गुडम् । ताश्चाभयास्त्रिवृच्चूर्णतैले चापि चतुःपले ॥ पलमेकं
कणाशुंभ्योः सिद्धे लेहे सुशीतलम् । क्षौद्रे तैलसमं दद्याच्चातु-
र्जातपलं तथा ॥ ततो लेहः पलं लीढ्वा जग्ध्वा चैकां हरीतकी-
म् । सुखं विरिच्यते स्निग्धो दोषप्रस्थप्रनामयः ॥ ग्रीहश्वयधु-
गुल्माशौहृत्पांडुग्रहणीगदाः । शाम्यन्ति क्लेशविषमज्वरकु-
ष्ठान्यरोचकम् ॥

अर्थ—हरड १०० तोले, दंती १०० तोले, चित्रक की छाल १०० तोले इन का काटा करके उस में गुड १०० तोले तथा उसी काटे में हरड १६ तोले, नि-सोथ का चूर्ण १६ तोले, तेल १६ तोले और पीपल, सोंठ ये चार २ तोले इस प्रमाण सब को एकत्र कर लेह सिद्ध करे. जब यह शीतल हो जावे. तब इस में सहत १६ तोले और दालचीनी, इलायची, पत्रज और नागकेशर इन सब का चूर्ण चार २ तोले लेके डाले तो यह अवलेह तयार हो. इस में से चार तोले अवलेह सेवन करने से और एक हरड खाय तो स्निग्ध कोठा होकर सुखपूर्वक दस्त हों तथा ग्रीहा, सूजन, गोला, बवासीर, हृद्रोग, पांडुरोग, संग्रहणी, विषमज्वर, कोढ, अरुचि ये शान्त हों ॥

चिंचाशंखवटी

चिंचाक्षारं सुहिक्षारमर्कक्षारं पलं पलम् । द्विपलं शंखभूर्ति च
 रामठं च पलार्धकम् ॥ लवणानि च सर्वाणि पलमात्राणि
 योजयेत् । क्षारद्वयं पलार्धं च सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ जंवीरकर-
 सैर्मर्द्यमनलस्य दिनत्रयम् । भृंगराजस्य निर्गुंडीमुञ्ज्योश्चैव पृथ-
 ग्द्रवैः ॥ आर्द्रकस्य रसेनैव प्रत्येकं मर्दयेद्दिनम् । बदरीबीज-
 मात्रां तु वटिकां कारयेद्विपक्व ॥ एकैकां भक्षयेत्प्रातः पंच गुल्मा-
 न्व्यपोहति । सर्वशूलं निहंत्याशु ह्यजीर्णं च विषूचिकाम् ॥
 मंदाग्निं नाशयेच्छीघ्रं पथ्यं तैलाम्लवर्जितम् । चिंचाशंखवटी-
 नामा ग्रहणीरोगहृत्परा ॥

अर्थ—इमली, थूहर, आक इन का खार चार २ तोले, शंखभस्म ८ तोले, हींग
 २ तोले, सैंधानिमक ४ तोले, कालानिमक, कचियानिमक, बिडनिमक, साह्यरानिमक,
 खारीनिमक, सैंधानिमक, मट्टी का निमक, सूर्यखार, ये सब चार २ तोले,
 सज्जीखार, जवाखार दो दो तोले इस प्रमाण से ले एकत्र चूर्ण करे और जंभीरी के
 रस में खरल करे. फिर चित्रक के कोठे में तीन दिन खरल करे. फिर भांगरा,
 निर्गुंडी, गोरखमुंडी और अदरख इन के रस में एक २ दिन पृथक् २ खरल करे. फिर
 बेर की गुठली के बराबर गोली बनावे. प्रातःकाल एक एक भक्षण करे तो पांच
 प्रकार के गोले, सर्व शूल, अजीर्ण, विषूचिका, मंदाग्नि इन को शीघ्र नाश करे. इस
 का खानेवाला पथ्य में तेल, खटाई न खाय. इस को चिंचाशंखवटी कहते हैं.
 यह संग्रहणीरोग का नाश करे ॥

क्षारादि चूर्ण

क्षारद्वयानलव्योपनीलीलवणपंचकम् ।

चूर्णितं सर्पिपा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥

अर्थ—सुहागा, जवाखार, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, नील और पांचों निमक,
 इन सब का चूर्ण एकत्र करके घी के साथ सेवन करे तो संपूर्ण गुल्म और उदररोग
 इन को नष्ट करे ॥

सूर्यपुट से शंखद्राव

प्रस्थं जंवीरनीरं पलसुपरिमितं काकतुंडस्य मूलं कर्पार्धं स्व-

जिकायास्त्रिपटुपल्युतं नव्यसारं पलार्धम् । तत्सर्वं सूर्यतापे
मुनिदिनयुगुलं काचकुप्यां निधाय हन्याद् गुल्मं सुतीव्रं जठ-
रमलरुजं शंखकद्रावसंज्ञः ॥

अर्थ—जंभीरीनींबू का रस १ सेर, लाल काकडोडी की जड़ ४ तोले, सजीखार
छः मासे, हरड, बहेडा, आंवला चार २ तोले, नोसहर २ तोले इन सब को
एकत्र शीशी में भर १४ दिन पर्यंत धूप में रक्खा रहने देवे. इस को शंखद्राव
कहते हैं. यह घोर तीव्र गोला, उदर, मल की कठोरता इन पर देवे ॥

द्वितीयशंखद्राव

फटकीपलमेकं च सैंधवं पलमेव च । द्विपलं यवजक्षारं द्विपलं
नवसागरम् ॥ चतुःपलं सुराक्षारं पलार्धं कासिसं तथा । डम-
रूयंत्रयोगेन चूल्यां वै बदरीधनैः ॥ साधयेल्लाघवात्तूर्णं शंख-
द्रावरसः परः । गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥

अर्थ—फटकरी ४ तोले, सैंधानिमक ४ तोले, जवाखार ८ तोले, नोसहर ८
तोले, सोरा १६ तोले, हीराकसीस २ तोले इन सब क्षारों को डमरूयंत्र में भरके
चूल्हे पर चढाय नीचे बेर की लकड़ी की अग्नि देवे और बडी होशयारी के साथ
इस में से तेजाब को खींच लेवे. इस को शंखद्राव कहते हैं. यह द्राव उत्तम है.
इस को गुल्मादिक सर्व रोग पर देवे तो सुख होय ॥

तीसरा शंखद्राव

सैंधवं च यवक्षारं नव्यसारं तथैव च । प्रत्येकं द्विपलं ग्राह्यं
सुराक्षारं चतुःपलम् ॥ फटकीफलमेकं च पलार्धं कासिसं
तथा । सर्वमेकत्र संयोज्यं डमरूयंत्रमध्यगे ॥ चूल्यां प्ररोह-
येत्तत्तु ज्वालयेत्खदिरेंधनैः । द्रावितं तत्समादाय तेजोरूपं
जलप्रभम् ॥ द्रावयेदखिलान् धातून् वराटांश्च न संशयः ।
शंखद्रावरसो नाम गुल्मोदरहरः परः ॥

अर्थ—सैंधानिमक, जवाखार, नोसहर ये प्रत्येक आठ २ तोले, सोरा १६ तोले,
फटकरी ४ तोले, हीराकसीस २ तोले इन सब को एकत्र कर डमरूयंत्र में भर ऊपर
से कपडमिट्टी करके चूल्हे पर चढावे नीचे खैर की लकड़ियों की आंच देवे. इसमें
से जो द्रव (तेजाब) खींचे उस को अलग धर देवे यह जल के समान स्वच्छ

और बकरी का दूध, दाख, फालसे, खिजूर, अनार, आंवले, नारंगी, अमलवेत, छाछ, अंडी का तेल, लहसन, कच्ची मूली का साग, पत्तों का साग, वधुआ, सहजना, जवाखार, हरड, हींग, विजोरा, त्रिकुटा, गोमूत्र और जो अन्न चिकना, गरम, बलकर्ता, हलका, दीपन, वात को अनुलोम करनेवाला है वह सब गुल्म (गोले) के रोग में मनुष्यों को पथ्य होता है ॥

गुल्मरोग पर अपथ्य

मापादयः शमीधान्यं शूकधान्यं यवादयः । वातकारीणि सर्वाणि
विरुद्धान्यशनानि च ॥ बहूरं मूलकं मत्स्यं मधुराणि फलानि
च । शुष्कशाकं शमीधान्यं विष्टंभीनि गुरूणि च ॥ अधोवा-
युशकृन्मूत्रश्रमश्वासाश्रुधारणम् । वमनं लंघनं पानं गुल्म-
रोगे विवर्जयेत् ॥

अर्थ—उडद आदि फली के धान और जों से आदि ले शूकधान्य, संपूर्ण वात करनेवाली वस्तु, विरुद्ध पदार्थ का भोजन, सूखा हुआ मांस, मूली, मछली, मीठे र फल, सूखे साग, फली से प्रगट होनेवाले धान, विष्टभकारी, भारी पदार्थ का सेवन, अधोवायु (पाद), मल, मूत्र, श्रम के श्वास को और आंसुओं को रोकना, वमन करना, लंघन करना और अधिक जल का पीना गुल्म (गोले) के रोग में वर्जित है ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहत्त्रिपंडुरत्नाकरे गुल्मरोगस्य निदान-चिकित्सा समाप्ता ।

हृद्रोगकर्मविपाकः ।

उदक्या वीक्षितं भुक्त्वा जायते कृमिलोदरः ।

गोमूत्रयावकाहारः सप्तरात्रेण शुध्यति ॥

अर्थ—रजोदर्शनवाली स्त्री के देखे हुए अन्न को जो प्राणी भोजन करता है उस के उदर में कृमि उत्पन्न होती है. इस को सात दिन गोमूत्र और जों इन का आहार करे तो शुद्धि होवे ॥

अभक्ष्यभक्षणे चैव जायते कृमयो हृदि ।

अथवा तद्विशुद्ध्यर्थमुपोष्यं भीष्मपंचकम् ॥

अर्थ—जो प्राणी अभक्ष्य पदार्थ को भक्षण करता है उस के उदर में कृमि उत्पन्न होती हैं वह प्राणी कार्तिक के महीने में भीष्मपंचकव्रत करे तो शुद्ध होय ॥

गजे च निहते वाश्वे कृमिकुक्षिस्तु जायते ॥

अर्थ—जो प्राणी हाथी अथवा घोड़े को मारता है वह इस पाप से उदर में कृमि-रोगवाला होता है ॥

मृते भर्तारि या नारी नीलीवस्त्रं प्रधारयेत् ।

सा मृता नरकं याति कृमिकुक्षिस्ततः परम् ॥

अर्थ—पति के मरने पर जो स्त्री नीले रंग के वस्त्र को धारण करे वह मरने पर नरकों में जाय और फिर दूसरे जन्म में उस के पेट में कृमि होंगे ॥

ज्योतिःशास्त्रद्वारा निर्णय

पाटितहृदयाचिह्नबुके निर्वाहनबांधवार्तिसतिसौख्यम् ।

बाल्यो व्याधितदेहो नखरोमधरो भवेत् शौरः ॥

अर्थ—जन्मकाल में चतुर्थस्थान में जिस के पापग्रह होंगे तो उस को उरक्षत, बंधुपीडा, बाल्य अवस्था में ही शरीर को व्याधि तथा नख केश इन का धारण करनेवाला होवे ॥

हृद्रोगनिदान

अत्युष्णगुर्वम्लकपायतिक्तैः श्रमाभिघाताध्ययनप्रसंगैः ।

संचिन्तनैर्वैगविधारणैश्च हृदामयः पंचविधः प्रदिष्टः ॥

अर्थ—अति गरम, अति भारी, अति खट्टा, अति कपेला, अति कडुवा ऐसे पदार्थ सेवन करने से श्रम (धनुष आदि का खेंचना), अभिघात (हृदय में चोट लगना) और भोजन के ऊपर भोजन निरय करने से, संचिन्तन (राजा के भय से चिन्ता) मलमूत्र आदि वेगों के रोकने से, वातादिक के क्षय और सन्निपात करके तथा क्रामि से हृदय का रोग होय है वह पांच प्रकार का है ॥

संप्राप्ति

दूषयित्वा रसं दोषा विगुणा हृदयं गताः ।

हृदि बाधां प्रकुर्वन्ति हृद्रोगं तं प्रचक्षते ॥

अर्थ—कृपित भये दोष रस को (हृदय में जो रहता है) दुष्ट करके हृदय में अनेक प्रकार की पीडा करे उस को हृदयरोग कहते हैं ॥

वातजन्य हृदयरोग

आयम्यते मारुतजे हृदयं तुद्यते तथा ।

निर्मथ्यते दीर्यते च स्फोट्यते पात्यतेपि च ॥

अर्थ—वातज हृदयरोग में हृदय ईचासरीखा, सुई से चोटनेसरीखा, फोरनेसरीखा, दो टुकड़ा करनेके समान, मथनेके समान, कुहाड़ीसे फारनेके समान पीड़ा करे है॥

पंचमूलकाथ

वातोपसृष्टे हृदये वामयेत्स्निग्धमातुरम् ।
द्विपंचमूलिकाथेन सस्नेहलवणेन वा ॥

अर्थ—वातजन्य हृदयरोग पर स्नेहपान करके वमन कर देवे अथवा दशमूल के काठे में स्नेह और सैंधव डालके पीवे ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण

पिप्पल्येला वचां हिंशु यवक्षारोथ सैंधवम् । सौवर्चलमथो शुंठी
दीप्यश्चेति विचूर्णितम् ॥ पलं धान्याम्लकौलित्यदधिमद्यव-
सादिभिः । पाययेच्छुद्धदेहस्य वातहृद्रोगशांतये ॥

अर्थ—पीपल, इलायची, वच, होंग, जवाखार, सैंधानिमक, संचरनिमक, से अजमायन इन का चूर्ण तोले २ भर ले तथा कांजी अथवा कुलथी का जल अथवा दही अथवा मद्य अथवा मांस स्नेह इन में से किसी एक के साथ वमन अथवा रेचन से शुद्धि हुए मनुष्य को पिलावे तो वातहृदयरोग शांत होवे ॥

पुष्करादि कल्क

सुपुष्कराख्यं फलपूरमूलं महौषधं शक्यभया च कल्कः ।
क्षीराम्लसर्पिलवणैर्विमिश्रः स्याद्वातहृद्रोगहरो नराणाम् ॥

अर्थ—पुहकरमूल, बिजेरे की जड़, सोंठ, कचूर, हरड इन का कल्क दूध अथवा कांजी अथवा घी अथवा सैंधानिमक मिलायके साथ तो वातहृद्रोगनाश होय ॥

पुनर्नवादितैल

पुनर्नवादारुसपंचमूलरास्नायवाकोलकपित्तथविल्वम् ।
पक्त्वा जले तेन पचेच्च तैलमभ्यंगपानेनिलहृद्रग्रहघ्नम् ॥

अर्थ—पुनर्नवा, दारुहलदी, पंचमूल, रास्ना, यव, घी, बेर, कैय, बेलफळ इन के ताटे के साथ सिद्ध करे हुए तेल को मालिस करे अथवा पीवे तो वातजन्य हृदय-
रोग नष्ट होय. इस को पुनर्नवादि तैल कहते हैं ॥

पित्तजन्यहृदयरोगनिदान

तृष्णोष्णदाहमोहाः स्युः पैत्तिके हृदयकृमः ।
धूमपानं च मूर्च्छा च स्वेदः शोषो मुखस्य च ॥

अर्थ—पित्त के हृदयरोग में प्यास, किंचित् दाह, मोह और हृदय की ग्लानि, धूआं निकलतासा मालूम होय, मूर्च्छा, पसीना और मुख का सूखना ये लक्षण होय हैं ॥

सामान्यचिकित्सा

शीताः प्रदेहाः परिपेचनं च तथा विरेको हृदि पित्तदुष्टे ॥

अर्थ—पित्तजन्य हृदयरोग पर शीतल लेप, जल का छिडकना, रेचन ये उपचार करे ॥

द्राक्षादि चूर्ण

द्राक्षासिताक्षौद्रपरूपकैः स्याच्छुद्धे च पित्तापहमन्नपानम् ॥

अर्थ—पित्तजन्य हृदयरोग पर जुल्लाम करायके शुद्ध होने पर दाख, मिश्री, सहत, फालसे इन को एकत्र करे हुए ऐसे अन्न और पान देने चाहिये ॥

श्रीपण्यादि रेचन और वमन

श्रीपर्णी मधुकं क्षौद्रं सिता गुडजलैर्वमेत् ।

पित्तोपसृष्टे हृदये विरेकः प्रोक्तो हि हृद्रोगहरो नराणाम् ॥

अर्थ—कायफल, मुलहठी, सहत, मिश्री, गुड और जल इन का वमन देवे अथवा विरेचन देवे तो पित्तजन्य हृदयरोग शांत होय ॥

हारहूरादि चूर्ण

हारहूराहरातक्योस्तुल्यं शर्करया रजः ।

पीतं हिमांबुना हंति पित्तहृद्रोगमंजसा ॥

अर्थ—काली दाख, हरड इन के चूर्ण के साथ मिश्री लेकर एकत्र कर शीतल जल के साथ पीवे तो पित्तजन्य हृदयरोग को तत्काल नाश करे ॥

अर्जुनादि क्षीर

अर्जुनस्य त्वचा सिद्धं क्षीरं पित्तहृदतिजित् ।

सितया पंचमूल्या वा बालया मधुकेन वा ॥

अर्थ—अर्जुन (कोह) वृक्ष की छाल के काढे के अथवा लघुपंचमूल के काढे के साथ अथवा मुलहठी इन के साथ सिद्ध करा हुआ दूध पित्तहृदयरोगनाशक जानना ॥

कसेरुकादि क्वाथ

कसेरुकाशैवलशृंगवेरप्रपौंडरीकं मधुकं त्रिसं च ।

ग्रंथिश्च सर्पिः पयसा पचेत्तैः क्षौद्रान्वितं पित्तहृदामयघ्नम् ॥

अर्थ-कचूर, काई, सोंठ, पुंडरीकवृक्ष, मुलहठी, कमल की डंढी, त्रांस की गांठ इन के चूर्ण को घृत, दूध इन को एकत्र औटायके सहत ढालके पीवे तो पित्तहृदय-रोगनाश करे ॥

कफजहृद्रोगनिदान

गौरवं कफसंज्ञावोऽरुचिः स्तंभोग्निमार्दवम् ।

माधुर्यमपि चास्यस्य बलासा वर्तते हृदि ॥

अर्थ-कफ से हृदय व्याप्त होने से भारीपना, कफ का गिरना, अरुचि, हृदय जकड़ जाय, मंदाग्नि, मुख में मिठास ये लक्षण होते हैं ॥

कफजन्यहृद्रोग पर सामान्य चिकित्सा

हृद्रोगे कफजे स्वित्रं सुवातं लंघितं नरम् ।

कफघ्नैर्भेषजैर्युज्याज्ज्ञात्वा दोषं बलाबलम् ॥

अर्थ-कफजन्य हृदयरोग पर पसीने निकाले, वमन कराय, उंवन करायके मनुष्य के दोषों का बलाबल विचारके कफघ्न उपचार करे ॥

त्रिवृतादि चूर्ण

त्रिवृच्छठी बला रास्ना शुंठी पथ्या सपौष्करा ।

चूर्णिता वा श्रुता सूत्रे पातव्या कफहृद्दे ॥

अर्थ-निसोय, कचूर, खिरेटी, रास्ना, सोंठ, हरड और पुहकरमूल इन का काटा अथवा चूर्ण को गोमूत्र के साथ पीवे तो हृदयरोग को नाश करे ॥

सूक्ष्मैलादि चूर्ण

सूक्ष्मैला मागधीमूलं प्रलीढं सर्पिंपा सह ।

नाशयेदाशु हृद्रोगं कफजं सपरिग्रहम् ॥

अर्थ-छोटी इलायची, पीपरामूल इन का चूर्ण घी के साथ चाटे तो उपद्रवस-हित कफजन्य हृदयरोग को नाश करे ॥

सन्निपातज हृदयरोगनिदान

विद्यत्रिदोषं त्वपि सर्वलिङ्गम् ॥

अर्थ—जिस में सब लक्षण मिलते होंय वह त्रिदोष का हृद्रोग जानना, इस में कुछ भी अपथ्य होने से गांठ उत्पन्न होती है, उस गांठ से कृमि पैदा होय हैं, ऐसे चरक में कहा है ॥

त्रिदोषजहृद्रोग की चिकित्सा

त्रिदोषजे लंघनमादितः स्यादन्नं तु सर्वेषु हितं विधेयम् ।

चूर्णानि सर्षीपि च वक्ष्यमाणान्यत्र प्रयोज्यानि भिषग्भिराशु ॥

अर्थ—त्रिदोषजन्य हृदयरोग पर प्रथम लंघन करे तथा संपूर्ण हृदयरोगों पर हितकारी अन्न भोजन करे तथा आगे लिखे हुए चूर्णों को घी में मिलायके त्रिदोष जन्य हृदयरोग पर देवे ॥

कृमिजहृद्रोगनिदान

तीव्रार्तितोदं कृमिजं सकण्डूं ॥ उत्क्लेदः घृिवनं तोदः शूलं हृ-
ल्लासकस्तमः । अरुचिः श्यावनेत्रत्वं शोपश्च कृमिजे भवेत् ॥

अर्थ—तीव्र पीडा करके तथा नोचने की सी पीडा करके तथा खुजली करके युक्त ऐसा हृद्रोग कृमिजन्य जानना. उत्क्लेद (ओंकारी आने के समान माहूम हो), धूकना, तोद (सुई चुभाने की सी पीडा), शूल, हल्लास, अंधेरा आवे, अरुचि, नेत्र काले पड जांय और मुखशोप यह लक्षण कृमिज हृदयरोग में होते हैं. जैय्यट का यह मत है कि (उत्क्लेद से लेकर तम पर्यंत) त्रिदोष के लक्षण कहे हैं जैसे तोद, शूल ये वादी से होंय. उत्क्लेद, हल्लास और घृिवन ये कफ से और तम ये पित्त से लक्षण होते हैं और अरुचि से लेकर शोपपर्यन्त कृमिज हृद्रोग के लक्षण जानने, इस विषय में प्रत्येक आचार्यों के भिन्न भिन्न मत हैं ॥

हृदयरोग के उपद्रव

क्लोमसादो भ्रमः शोपो ज्ञेयास्तेषामुपद्रवाः । कृमिजे कृमिजा-
तीनां श्लेष्मकाणां च ये मताः ॥ संस्तंभः सज्वरं घोरं रूक्ष-
स्पर्शासहं गुरु । आध्मानकुक्षिहृत्कंठवातविष्णूत्ररोधता ॥
तंद्रारोचकशूलानि तस्य लिंगानि निर्दिशेत् ॥

अर्थ—क्लोम कहिये पिपासा (प्यास) स्थान उस में गुानि होय, भ्रम, शोप ये सब उन हृद्रोगों के उपद्रव जानने और कफ का कृमिरोग के उपद्रव पिछाडी कह आये हैं सोही कृमिज हृद्रोग के लक्षण होते हैं. और स्तंभ, घोर ज्वर और हृदय रूक्ष भारी होता है और उस का स्पर्श सहा नहीं जाता. आध्मान होता है, कुक्षी, हृदय, अपानवायु, विषा, मूत्र इन का निरोध, तंद्रा, अरोचक, शूल ये लक्षण होते हैं ॥

कृमिहृद्रोग की सामान्यचिकित्सा
हृद्रोगे कृमिजे कार्यं लंघनं चापतर्पणम् ।
पश्चात्कृमिहरं कर्म कृमिरोगोक्तमाचरेत् ॥

अर्थ—कृमिजन्य हृदयरोग पर लंघन, रेचन ये प्रथम करके पश्चात् कृमिरोग पर कहे ऐसे कृमिनाशक उपचार करे ॥

गोमूत्रपान

कृमिजे च पिबेन्मूत्रं विडंगामयसंयुतम् ।

हृदि स्थिताः पतंत्येव ह्यसाध्याः कृमयो नृणाम् ॥

अर्थ—कृमिजहृदयरोग पर गोमूत्र में वायविडंग और कूठ का चूर्ण डालके पीवे तो पेट में से असाध्य भी कृमि गिर जायेंगे ॥

दुग्धपान

चतुर्विंशतिपलं क्षीरं गवामथ पचेच्छनैः । द्विरष्टपलकं याव-
त्तावत्कुर्यात्तु शीतलम् ॥ सिता क्षौद्रं घृतं तस्मिन् दुग्धे चार्ध-
पलं क्षिपेत् । कर्पूरं पिप्पलीचूर्णं क्षिप्त्वा पेयं हितं परम् ॥ स-
र्वदोषोत्थहृद्रोगं ज्वरं कासं क्षयं जयेत् ॥

अर्थ—छियाणवे ९६ तोले गौ के दूध को मंदाग्नि पर धरके अधोटा करे फिर उतारके शीतल कर लेवे और इस में मिश्री, सहत, धी ये दो दो तोले डालके तथा पीपल का चूर्ण एक तोला डालके पीवे तो सर्वदोषजन्य हृदयरोग, ज्वर, खांसी, क्षय इन को पराजय करे ॥

पौष्करादिक्वाथ

क्वाथः कृतः पौष्करमातुर्लिङ्गपलाशभूतीकसठीसुराह्वैः ।

सनागराजाजिवचायवाह्वः सक्षार उष्णो लवणेन पेयः ॥

अर्थ—पुहकरमूल, बिजोरा, पलास, अजमायन, कश्मूर, देवदारु, सोंठ, जीरा और वच इन का काढा कर उस में जवाखार, सजीखार, सैधानिमक, संचरानिमक ये डालके गरम २ पीवे तो हृदयरोग अच्छा होय ॥

दशमूलादि क्वाथ

दशमूलकृतः क्वाथः सयवक्षारसंधवः ।

हृद्रोगगुल्मशूलार्ति कासं श्वासं च नाशयेत् ॥

अर्थ—शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, बेलगिरी, अरनी, टेंदू, कंभारी, पाठ, इन दशों की जड़ लेवे इन का काढा करे उस में जवाखार और संधा निमक डालके पीवे तो इस से उर में जो रोग होता है वह तथा गोले का शूल तथा श्वास, खांसी इन का नाश करे ॥

एरंडादिकाथ

पवनारिजटा द्विपलाष्टगुणे सलिले पचिता यवजेन युतम् ।

क्वथनं हृदयोद्भवपार्श्वकटीशूलविदारणसिंहनखम् ॥

अर्थ—अंड की जड़ ८ तोले को अठगुने जल में डालके औटावे इस में जवाखार डालके पीवे तो हृदयरोग, कूख, कमर इन के शूल को विदारण करने में सिंह के नख के समान है ॥

वाह्लीकादि काथ

वाह्लीकविश्वदहनायवयावशूकैः पथ्याभयाविडकणारुचकैर्नि-
ह्न्यात् । काथः सपुष्करजटाभववारि पीतो हृद्रोगमग्निवि-
कलत्वमतिप्रबद्धम् ॥

अर्थ—हींग, सोंठ, चित्रक की छाल, जवाखार, हरड, कूठ, बिडनिमक, पीपल, संचरनिमक और पुहकरमूळ इन का काढा पीवे तो हृदयरोग, मंदाग्नि और मलबद्धता इन को नाश करे ॥

नागरादिकाथ

नागरस्य पिवेदुष्णं कपायं चाग्निवर्धनम् ।

कासश्वासानिलहरं शूलहृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ—सोंठ का गरम २ काढा पीवे तो जठराग्नि बढे तथा श्वास, खांसी, वादी, शूल और हृदयरोग इन को नाश करे ॥

नागवलादि दुग्धपान

मूलं नागवलायास्तु गोदुग्धेन च पाचयेत् । हृद्रोगश्वासकासघ्नं
कुंकुमायाश्च वल्कलम् ॥ रसायनं परं बल्यं वातजिन्मासयो-
जितम् । संवत्सरप्रयोगेण जीवेद्वर्षशतं ध्रुवम् ॥

अर्थ—गंगरन की जड़ को गौ के दूध में औटावे इस को पीवे तो श्वास, खांसी, इन को नाश करे तथा सेमर की छाल दूध में सिजायके एक महीने पर्यंत पीवे-

यह रसायन अत्यंत बलकारक और वातनाशक है. इसी को एक वर्ष पर्यंत पीवे तो सौ वर्ष पर्यंत जीवे इस में संदेह नहीं ॥

हिंगुपंचकचूर्ण

विश्वौपधेन रूचकेन सदाडिमेन स्याच्चांम्लवेतसयुतः कृतहिं-
गुभानुः । तद्धिंगुपंचकमिदं हृदयामयघ्नं भेडाभिधानमुनिना
गदितं मुनीनाम् ॥

अर्थ—सोंठ, संचरनिमक, अनार की छाल, अमलवेत और भुनी हुई होंग इन का समान भाग चूर्ण करे यह हिंगुपंचक पहले रोगग्रस्त मुनियों को देख हृद्रोगना-
शनार्थ भेड मुनीश्वरने कहा है ॥

पुष्करचूर्ण

चूर्णं पुष्करजं लिह्यान्माक्षिकेण समायुतम् ।
हृद्रोगश्वासकासघ्नं क्षिप्रं हिकानिवारणम् ॥

अर्थ—पोहकरमूल के चूर्ण को सहत के साथ चाटे तो हृदयरोग, श्वास, खांसी,
हिचकी इन को तत्काल दूर करे ॥

हरिणशृंगभस्म

शरावसंपुटे दग्ध्वा शृंगं हरिणजं पिबेत् ।
गव्येन सर्पिषा पिष्टं हृच्छूलं नाशयेद्भुवम् ॥

अर्थ—हरिण के सींगों के छोटे २ टुकड़े सरवा में रख ऊपर से दूसरे सरवा
को ढक देवे और उस की कपडामिट्टी करके संधियों को लेप कर देवे. अग्नि में
रखके फूंक देवे. जब भस्म हो जावे तब चूर्ण कर गौ के घी में मिलायके पीवे तो
हृदय का शूल नष्ट होय ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगुग्रंथाविडविश्वकृष्णाकुष्ठभयाचित्रकयावशूकम् ।
पिबेत्ससौवर्चलपुष्कराख्यं यवांभसा शूलहृदामयघ्नम् ॥

अर्थ—होंग, वच, बिडनिमक, सोंठ, पीपल, कूठ, हरड, चित्रक, जवाखार, संचरनि-
मक और पोहकरमूल इन का चूर्ण जों के काटेके साथ पीवे तो हृदयरोग को नाश करे ॥

ककुभत्वक्चूर्ण

घृतेन दुग्धेन गुडांभसा वा पिबन्ति चूर्णं ककुभत्वचोत्थम् ।
हृद्रोगजीर्णं ज्वररक्तपित्तं जित्वा भवेयुश्चिरजीविनस्ते ॥

अर्थ—घी, दूध, गुड का जल इन में से किसी एक के साथ कोहवृक्ष की छाल का चूर्ण जो पीते हैं वह हृदयरोग, जीर्णज्वर, रक्तपित्त इन को जीतकर चिरंजीव होते हैं ॥

कटुक्यादि चूर्ण

पिष्ट्वा वा कटुका पेया सयष्टी वा सुखांबुना ।

जीर्णज्वरं रक्तपित्तं हृद्रोगं च व्यपोहति ॥

अर्थ—कुटकी और मुलहठी इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो जीर्ण ज्वर, रक्तपित्त, हृदयरोग इन को नाश करे ॥

हरीतक्यादि चूर्ण

हरीतकीवचारास्त्रापिप्पलीनागरोद्भवम् ।

शठीपुष्करमूलोत्थं चूर्णं हृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ—हरड, वच, रास्त्रा, पीपल, सोंठ, नागरमोथा और पुहकरमूल इन का चूर्ण हृदयरोगनाशक है ॥

पाठादि चूर्ण

पाठा वचा यवक्षारमभयासाम्लवेतसम् । दुरालभां चित्रकं च

त्र्यूपणं च फलत्रिकम् ॥ शुंठी पुष्करमूलं च तित्तिडीकं सदा-

डिमम् । मातुर्लिगस्य मूलानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ उ-

ष्णोदकेन मधैर्वा हृतान्येतानि पाययेत् । आशीं शूलं च हृद्रोगं

गुल्मं चाशु व्यपोहति ॥

अर्थ—पाठ की जड़, वच, जवाखार, हरड, अम्लवेत, धमासा, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, पुहकरमूल, इमली, अनारदाना, बीजों का जड़ इन सब को समान भाग ले बारीक चूर्ण करे. फिर इस को गरम जल के साथ पीवे अथवा मद्य से पीवे तो हृदयरोग, मूलव्याधि, शूल और गोला इन का नाश करे ॥

गोधूमादि चूर्ण

गोधूमककुभचूर्णं पक्वमजाक्षीरगव्यसर्पिर्भ्याम् ।

मधुशर्करासमेतं शमयति हृद्रोगमुद्धतं पुंसाम् ॥

अर्थ—गेहूँ, कोहवृक्ष की छाल इन के चूर्ण को बकरी के दूध में गौ का घाँस के औटावे जब सीज जावे तब उतार सहत, मिथी डालके पीवे तो मनुष्यों का घोर हृदयरोग शांत होवे ॥

वल्लभघृत

शतार्धमभयानां तु सौवर्चलपलद्वयम् । पचेत्कल्कैर्घृतप्रस्थं
दत्त्वा क्षीरं चतुर्गुणम् ॥ घृतं वल्लभकं नाम्ना श्रेष्ठं हृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ—पचास हरड, संचरनिमक ८ तोले इन के चूर्ण को ६४ तोले घी और घी से चौगुना दूध एकत्र कर पका करे इस को वल्लभघृत कहते हैं. यह हृदयरोग-नाशक है ॥

यष्ट्यादि घृत

यष्टीनागबलोदिच्यार्जुनैः सर्पिः सुसाधितम् ।

हृद्रोगक्षयपित्तास्रश्वासकासज्वरार्तिजित् ॥

अर्थ—मुलहठी, नागबला, खस, कोहवृक्ष की छाळ इन को डालके घृत सिद्ध करे. यह घृत हृदयरोग, क्षय, पित्तरक्त, श्वास, खांसी, ज्वर इन की पीडा को जीते ॥

बलादि घृत

घृतं बलानागबलार्जुनानां काथेन कल्केन च यष्टिकायाः ।

सिद्धं निहन्याद्धृदयामयं हि सवातरक्तक्षतरक्तपित्तम् ॥

अर्थ—खिरेटी, नागबला और कोहवृक्ष की छाळ इन के काटे के साथ और मुलहठी के चूर्ण के साथ सिद्ध करा हुआ घृत हृदयरोग, वातरक्त, रक्तपित्त इन को नाश करे ॥

हृदयार्णवरस

सूतार्कगंधं काथेन वराया मर्दयेद्दिनम् । काकमाच्या वर्ती
कृत्वा चणमात्रां तु भक्षयेत् ॥ हृदयार्णवनामार्यं हृद्रोगदलनो रसः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, तामे की भस्म, इन को हरड, पहेडा, आवला इन के काटे में एक दिन खरल कर फिर काकमाची (मकोय) के काटे में एक दिन खरल कर चने के बराबर गोली बनायके खाय तो हृदयरोग का नाश होय. इस को हृदयार्ण-वरस कहते हैं ॥

रसायन

रसगंधाभ्रभस्मानि पार्थवृक्षत्वग्बुना । एकविंशतिधा घर्मे
भाषितानि विधानतः ॥ मापमात्रमिदं चूर्णं मधुना सह लेह-
येत् । वातजं पित्तजं श्लेष्मसंभूतं वा त्रिदोषजम् ॥ कृमिजं चापि
हृद्रोगं निहत्येव न संशयः ॥

अर्थ—घी, दूध, गुड का जल इन में से किसी एक के साथ कोहवृक्ष की छाल का चूर्ण जो पीते हैं वह हृदयरोग, जीर्णज्वर, रक्तपित्त इन को जीतकर चिरंजीव होते हैं ॥

कटुक्यादि चूर्ण

पिष्ट्वा वा कटुका पेया सयष्टी वा सुखांबुना ।

जीर्णज्वरं रक्तपित्तं हृद्रोगं च व्यपोहति ॥

अर्थ—कुटकी और मुलहठी इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो जीर्णज्वर, रक्तपित्त, हृदयरोग इन को नाश करे ॥

हरीतक्यादि चूर्ण

हरीतकीवचारास्त्रापिप्पलीनागरोद्भवम् ।

शठीपुष्करमूलोत्थं चूर्णं हृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ—हरड, वच, रास्त्रा, पीपल, सोंठ, नागरमोथा और पुहकरमूल इन का चूर्ण हृदयरोगनाशक है ॥

पाठादि चूर्ण

पाठा वचा यवक्षारमभयासाम्लवेतसम् । दुरालभां चित्रकं च

त्र्यूपणं च फलत्रिकम् ॥ शुंठी पुष्करमूलं च तित्तिडीकं सदा-

डिमम् । मातुर्लिङ्गस्य मूलानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ उ-

ष्णोदकेन मद्यैर्वा हृत्तान्येतानि पाययेत् । आर्शं शूलं च हृद्रोगं

गुल्मं चाशु व्यपोहति ॥

अर्थ—पाठ की जड़, वच, जवाखार, हरड, अम्लवेत, धमासा, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, पुहकरमूल, इमली, अनारदाना, बीजेरे का जड़ इन सब को समान भाग ले बारीक चूर्ण करे. फिर इस को गरम जल के साथ पीवे अथवा मद्य से पीवे तो हृदयरोग, मूलव्याधि, शूल और गोला इन को नाश करे ॥

गोधूमादि चूर्ण

गोधूमककुभचूर्णं पक्वमजाक्षीरगव्यसर्पिर्भ्याम् ।

मधुशर्करासमेतं शमयति हृद्रोगमुद्धतं पुंसाम् ॥

अर्थ—गेहूँ, कोहवृक्ष की छाल इन के चूर्ण को बकरी के दूध में गौ का घी डालके और पीवे जब सीज जावे तब उतार सहत, मिश्री डालके पीवे तो मनुष्यों का घोर हृदयरोग शांत होवे ॥

वल्लभघृत

शतार्धमभयानां तु सौवर्चलपलद्वयम् । पचेत्कल्कैर्घृतप्रस्थं

दत्त्वा क्षीरं चतुर्गुणम् ॥ घृतं वल्लभकं नाम्ना श्रेष्ठं हृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ—पचास हरड, संचरनिमक ८ तोले इन के चूर्ण को ६४ तोले घी और घी से चौगुना दूध एकत्र कर पक करे इस को वल्लभघृत कहते हैं. यह हृदयरोग-नाशक है ॥

यष्ट्यादि घृत

यष्टीनागबलोदिच्यार्जुनैः सर्पिः सुसाधितम् ।

हृद्रोगक्षयपित्तास्रश्वासकासज्वरार्तिजित् ॥

अर्थ—मुलहठी, नागबला, खस, कोहवृक्ष की छाल इन को डालके घृत सिद्ध करे. यह घृत हृदयरोग, क्षय, पित्तरक्त, श्वास, खांसी, ज्वर इन की पीडा को जीते ॥

बलादि घृत

घृतं बलानागबलार्जुनानां काथेन कल्केन च यष्टिकायाः ।

सिद्धं निह्न्याद्धृदयामयं हि सवातरक्तक्षतरक्तपित्तम् ॥

अर्थ—खिरेटी, नागबला और कोहवृक्ष की छाल इन के काठे के साथ और मुलहठी के चूर्ण के साथ सिद्ध करा हुआ घृत हृदयरोग, वातरक्त, रक्तपित्त इन को नाश करे ॥

हृदयार्णवरस

सूतार्कगंधं काथेन वराया मर्दयेद्दिनम् । काकमाच्या वर्ती

कृत्वा चणमात्रां तु भक्षयेत् ॥ हृदयार्णवनामायं हृद्रोगदलनो रसः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, तामे की भस्म, इन को हरड, बहेडा, आवला इन के काठे में एक दिन खरल कर फिर काकमाची (मकोय) के काठे में एक दिन खरल कर चने के बराबर गोली बनायके खाय तो हृदयरोग का नाश होय. इस को हृदयार्ण-वरस कहते हैं ॥

रसायन

रसगंधाभ्रभस्मानि पार्थवृक्षत्वंगुना । एकविंशतिधा घर्मे

भावितानि विधानतः ॥ मापमात्रमिदं चूर्णं मधुना सह लेह-

येत् । वातजं पित्तजं श्लेष्मसंभूतं वा त्रिदोषजम् ॥ कृमिजं चापि

हृद्रोगं निहंत्येव न संशयः ॥

अर्थ-पारा, गंधक, अभ्रक इन की भस्म समान भाग ले कोहवृक्ष की छाल के रस में अथवा प्याज के रस में धूप में रखके इसे भावना देवे. फिर इस जूर्ण को सहत के साथ एक मासे खाय तो वात, पित्त, कफ, त्रिदोष इन से होनेवाले हृदय रोग अथवा कृमिजन्य हृदयरोग इन सब को नाश करे ॥

हृद्रोग पर पथ्य

स्वेदो विरेको वमनं च लंघनं वस्तिर्विलेपो चिररक्तशालयः ।
मृगद्विजाजांगलसंज्ञयान्विता यूपा रसा मुद्गकुलत्थसम्भवाः ॥
रागाः खडा कांबलिकाश्च खांडवा भव्यं पटोलं कदलीफ-
लान्यपि । पुराणकूष्मांडरसालदाडिमं शम्याकशाकं नवमूल-
कान्यपि ॥ एरंडतैलं गगनाम्बु सैंधवं द्राक्षा च तक्रं च पुरातनो
गुडः । शुंठी यवानी लशुनं हरीतकी कुष्ठं च कुस्तुंबुरुकृष्ण-
मार्द्रकम् ॥ सौवीरशुक्रं मधुवारुणीरसः कस्तूरिका चंदनकं
प्रपानकम् । तांबूलमप्येप गणः सखा भवेन्मर्त्यस्य हृद्रोगनि-
पीडितात्मनः ॥

अर्थ-स्वेदन, वमन, विरेचन, लंघन, वस्तिकर्म, विलेपी, पुराने छाल चांबल, मृग (जंगली जीव हरिण आदि), पक्षी (तोता मैना आदि), यूप (सप्तमुष्टिक आदि), मूंग, कुलथी आदि के रस, राग (पीने का पदार्थ), खांड, कांबलिका, खांडव, नागरमोथा, परवल, केला की गहर, पुराना पेठा, आम, अनार, अमलतास की फलियों का साग, नई मूली, अंडी का तेल, वर्षा का जल, सैंधानिमक, दाख, छाछ, पुराना गुड, सोंठ, अजमायन, लहसन, हरड, कूठ, धनिया, पीपल, अदरक, कांजी, सिका, सहत, मद्य, करतूरी, चंदन, पने और पान के बीडा ये सब हृदय-रोग पीडित प्राणी को हितकारी होते हैं ॥

हृद्रोग पर अपथ्य

तृट्छर्दिमूत्राऽनिलशुक्रकासोद्गारश्रमश्वासविडथुवेगान् ।

सह्याद्रिविंध्याद्रिनदीजलानि मेपीपयो दुष्टजलं कपायम् ॥

अर्थ-प्यास, वमन, मूत्र, अधोवायु, वीर्य, खांसी, डकार, श्रमजन्य श्वास, मल और आंसू इन के उपस्थित वेगों को रोकना, सह्यापर्वत, विंध्याचल पर्वत इन के जल, भेड का दूध, दूधित (विगडा हुआ) जल, कपेले रस, विरुद्ध पदार्थ, गरम

भारी, कडवा, खट्टा और पुराने पदार्थ एवं पत्ते का शाक, खार, महुआ, दाँतन करना, फस्त खोलना इन सब कर्मों को हृदयरोगवाला प्राणी त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्नृपहरन्कारे हृद्रोगस्य निदानोचिकिरसा समाप्ता ।

मूत्रकृच्छ्रकर्मविपाकः ।

गुरुजायाभिगमनान्मूत्रकृच्छ्रं प्रजायते ।

तेनापि निष्कृतिः कार्या शास्त्रदृष्टेन वर्त्मना ॥

अर्थ—गुरुस्त्री के साथ गमन करने से मूत्रकृच्छ्रव्याधि उत्पन्न होती है. उस की शांति के अर्थ शास्त्र में कहे प्रमाण उस की निष्कृति (शांति) करे ॥

पशुयोनौ च गमनान्मूत्रकृच्छ्रं प्रजायते ।

तिलपात्रत्रयं चैव स दद्यादात्मशुद्धये ॥

अर्थ—जो प्राणी पशु (बकरी, घोड़ी, कुत्ती आदि) से मैथुन करता है उस के मूत्रकृच्छ्र रोग होता है उस को आत्मशुद्धि के वास्ते ३ तिलपात्र दान करना चाहिये ॥

तिलपूर्णं ताम्रपात्रं सहिरण्यं द्विजातये ।

प्रातर्दत्त्वा तु विधिवद्दुःस्वप्नं प्रतिहन्ति सः ॥

अर्थ—प्रातःकाल तिलों से भरे हुए ताँबे के पात्र को दक्षिणासहित ब्राह्मण को देता है उस का दुःस्वप्न का नाश होय तथा मूत्रकृच्छ्ररोग शांत होय ॥

ज्योतिष

जन्मकाले यदा यस्य स्मरे भवति भास्करिः ।

राहुर्दुष्टः प्रकुरुते मूत्रकृच्छ्रादिकां रुजम् ॥

अर्थ—जिस प्राणी के जन्मसमय सप्तम स्थान में शनैश्वर और राहु पडे हों उस के मूत्रकृच्छ्रादिक रोग होते हैं ॥

मूत्रकृच्छ्रनिदानं

ध्यायामतीक्ष्णोपधरूक्षमद्यप्रसंगनित्यद्भुतपृष्ठयानात् ।

अनूपमत्स्याध्यशनादजीर्णात्स्युर्मूत्रकृच्छ्राणि नृणामिहाष्टौ ॥

अर्थ—व्यायाम (दंड कसरत आदि), तीक्ष्णोपध (राई आदि), रूखा पदार्थ और नित्यप्रति मद्यपान करना और निरंतर घोंडे पर चढ़ने से और जलसमीप

रहनेवाले पक्षी (हंस, सारस, चक्रवा आदि) का मांस खाने से और मछली, भोजन के ऊपर भोजन करने से और कच्चे पदार्थ इत्यादिकों के खाने से मनुष्यों के आठ प्रकार का मूत्रकृच्छ्ररोग होय है. पृथक् दोषों से ३, सन्निपात से १, चोट लगने का १, मल रोकने के २, वीर्य रोकने का १ और पथरी का १ ये सब मिल करके आठ भये ॥

संप्राप्ति

पृथङ्मलाः स्वैः कुपिता निदानैः सर्वेऽथ वा कोपमुपेत्य वस्तौ ।

मूत्रस्य मार्गं परिपीडयन्ति यदा तदा मूत्रयतीह कृच्छ्रात् ॥

अर्थ—अपने कारण से कुपित भये जो वातादिक दोष अथवा सब दोष वस्ति में कुपित होकर मूत्र के मार्ग को पीडित करें, तब मनुष्य को बड़े कष्ट से मूत्र उतरे ॥

वातमूत्रकृच्छ्रनिदान

तीव्रार्तिरुग्वंक्षणवस्तिमेद्रे स्वल्पं मुहुर्मूत्रयतीह वातात् ॥

अर्थ—वात के मूत्रकृच्छ्र से वंक्षण (जांघ और ऊरु इन की संधि) मूत्राशय और इन्द्रिय इन में पीडा होय और मूत्र वारंवार थोडा थोडा उतरे ॥

वातमूत्रकृच्छ्र पर सामान्ययत्न

अभ्यंजनं स्नेहनिरूहवस्तिः स्वेदोपनाहोत्तरवस्तिसेकान् ।

स्थिरादिभिर्वातहरैश्च सिद्धान् दद्याद्रसांश्चानिलमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—स्नेह की मालिस, स्नेहपान, निरूहवस्ति, पसीने निकालना, उपनाह, उत्तरवस्ति, जल का छिडकना, स्थिरादि वातनाशक. काय इत्यादि उपचार वातमूत्रकृच्छ्र पर करे ॥

काथ

अमृता नागरं धात्री वाजिगंधा त्रिकंटकम् ।

निष्काथ्य प्रपिवेत्काथं मूत्रकृच्छ्रे समीरजे ॥

अर्थ—गिलोय, साँठ, आवला, असगंध, गोखरू इन का काटा करके वातमूत्र-कृच्छ्र पर देवे ॥

त्रिकंटकादि काथ

त्रिकंटकारग्वधदर्भकाक्षयवासधात्रीगिरिभेदपथ्याः ।

निघ्नन्ति पीता मधुनाश्मरीं च समीपमृत्योरपि मूत्रकृच्छ्रम् ॥

अर्थ—गोखरू, अमलतास, डाम, कांस, धमासा, आवला, पापाणभेद और हरड इन का काटा सहत ढालके पीवे तो आसन्नमृत्यु भी हो तथापि उस की पथरी और मूत्रकृच्छ्र नष्ट होय ॥

एलादि चूर्ण

एलाश्मभेदकशिलाजतुगोक्षुराणामेवोरुबीजलवणोत्तमकुंकुमानाम् । चूर्णानि तंदुलजले लुलितानि पीत्वा प्रत्यक्षमृत्युरपि जीवति मूत्रकृच्छ्री ॥

अर्थ—इलायची, पापाणभेद, शिलाजीत, गोखरू, कांकडी के बीज, सैधानिमक, केशर इन के चूर्ण को चावलों के धोवन के साथ पीवे तो आसन्नमृत्युवाला भी मूत्रकृच्छ्री रोगी होय तो भी बच जावे ॥

पित्तमूत्रकृच्छ्रनिदान

पीतं सरक्तं सरुजं सदाहं कृच्छ्रं मुहुर्मूत्रयतीह पित्तात् ॥

अर्थ—वैक्तिक मूत्रकृच्छ्र से पीला, कुछ लाल, पीडायुक्त, अग्नि के समान वारंवार कष्ट से मूत्र उतरे ॥

कुशकाशादि काथ

कुशकाशं शरो दर्भं इक्षुश्चेति तृणोद्भवम् । पित्तकृच्छ्रहरं पंचमूलं वस्तिविशोधनम् ॥ एतैः सिद्धं पयः पीतं मेद्वगं हन्ति शोणितम् ॥

अर्थ—कुश, कास, डाम, रामशर (सरपता), ईख इन की जड़ का काटा पित्त-मूत्रकृच्छ्रनाशक और वस्तिशोधक है तथा इस पंचमूल से सिद्ध करा हुआ दूध पीवे तो शिस्त्र (लिंग) के नीचे को सूजन जो दुष्ट रुधिर से हुई है उस का नाश हो ॥

शतावरीकाथ

शतावरिकासकुशश्चदंष्ट्राविदारिशालीक्षुकसेरुकाणाम् । काथं सुशीतं मधुशर्कराभ्यां युक्तं पिवेत्पैक्तिकमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—शतावर, कांस, कुश, गोखरू, विदारीकंद, शालीचावल, ईख, कसेरू इन की जड़ का काटा शीतल होने पर सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो पित्त-मूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

एवार्बुवीजपान

एवार्बुवीजं मधुकं सदाविं पित्ते पिवेतंतुलुधावनेन ।

दावीं तथैवामलकीरसेन समाक्षिकं पित्तकृतेथ कृच्छ्रे ॥

अर्थ—खीरे के बीज, मुलहठी, दारुहलदी इन का चूर्ण चांबलों के धोवन के साथ मिलायके पीवे अथवा दारुहलदी का चूर्ण आवले के रस के साथ सहत डालके पीवे तो पित्तमूत्रकृच्छ्र नष्ट होय ॥

द्राक्षादि कल्क

द्राक्षासितोपलाकल्कं कृच्छ्रघ्नं मस्तुना युतम् ।

पिवेद्वा कामतः क्षीरमुष्णं गुडसमायुतम् ॥

अर्थ—दाख, मिथी इन को एकत्र कूट दही के जल के साथ पीवे अथवा दूध को गरम करके उस में गुड़ डालके यथेष्ट पीवे तो मूत्रकृच्छ्र नाश होय ॥

नारिकेलजलपान

नारिकेलजलं योज्यं गुडधान्यसमन्वितम् ।

सदाहमूत्रकृच्छ्रं च रक्तपित्तं निहंति च ॥

अर्थ—नारियल का जल, गुड़, धनिया इन को मिलायके पीवे तो यह दाहसहित मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त इन को नाश करे ॥

रक्तनारिकेलजलपान

रक्तस्य नारिकेलस्य जलं कतकसंयुतम् ।

शर्करैलासमायुक्तं मूत्रकृच्छ्रहरं विदुः ॥

अर्थ—लाळ नारियल का जल, निर्मली के बीज, मिथी, इलायची इन को एकत्र पीसके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र का नाश करे ॥

कफजन्य मूत्रकृच्छ्रनिदान

वस्तेः सर्लिंगस्य गुरुत्वशोथौ मूत्रं सपिच्छं कफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—कफ के मूत्रकृच्छ्र में लिंग और मूत्राशय भारी हो तथा सूजन होय और मूत्र चिकना होय ॥

कफजन्य मूत्रकृच्छ्र की सामान्य चिकित्सा

क्षारोष्णतीक्ष्णौषधमन्नपानं स्वेदोपवासं वमनं निरूहः ।

तत्रं च तित्तोपणसिद्धतैलं वस्तिश्च शस्ताः कफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—खारा, तीखा, गरम ऐसे औषध, अन्न, पान तथा स्वेदन, लंघन, वमन, निरूहवस्ति, छाछ और कडुए, चरपरे, ऐसी औषधों से सिद्ध करे हुए तेलों से वस्तिकर्म इत्यादि कफमूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

एलादि चूर्ण

मूत्रेण सुरया वापि कदलीस्वरसेन वा ।

कफकृच्छ्रविनाशाय सूक्ष्मां कृत्वा तृटिं पिबेत् ॥

अर्थ—गोमूत्र, मद्य, केले का रस इन में से किसी एक के साथ इलायची के चूर्ण को पीवे यह कफमूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

सितदारुकादि चूर्ण

तन्नेण युक्तं सितवारुकस्य बीजं पिबेत्कृच्छ्रविघातहेतोः ।

पिबेत्तथा तंदुलधावनेन प्रवालचूर्णं कफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—छाछ के साथ सपेद खीरा के बीजों को कूटकर पीवे अथवा चावलों के धोवन के साथ मूंगा की भस्म पीवे तो कफमूत्रकृच्छ्र पर हितकारी है ॥

सन्निपातमूत्रकृच्छ्रनिदान

सर्वाणि रूपाणि तु सन्निपाताद्भवन्ति तत्कृच्छ्रतमं हि कृच्छ्रम् ॥

अर्थ—सन्निपात से सर्व लक्षण होते हैं यह मूत्रकृच्छ्र कष्टसाध्य है ॥

सर्वं त्रिदोषप्रभवे तु कृच्छ्रे यथाबलं कर्म समीक्ष्य कार्यम् ।

तत्राधिके प्राग्वमनं कफे स्यात्पित्ते विरेकः पवने तु वस्तिः ॥

अर्थ—त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र पर बलाबल विचार सर्व उपचार करे और विशेष इतना है कि कफ अधिक होय तो प्रथम वमन देवे, पित्त अधिक होय तो जुल्लाव देवे और वात अधिक होय तो वस्तिकर्म करे इस प्रकार प्रथम करे ॥

बृहत्यादि काथ

बृहतीधावनीपाठायपीमधुकलिंगकान् ।

पक्त्वा काथं पिबेन्मर्त्यो कृच्छ्रे दोषत्रयोद्भवे ॥

अर्थ—त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र पर कटेरी, बड़ी कटेरी, पाठ की जड़, मुलहठी और इन्द्रजों इन का काढा करके पीवे ॥

शतावर्यादि काथ

शतावर्यास्तु मूलानां काथश्च ससितो मधुः ।

मूत्रदोषं निहंत्याशु वातपित्तकफोद्भवम् ॥

अर्थ—शतावर के काठे में मिश्री और सहत डालके पीवे तो त्रिदोषज मूत्रकृच्छ्र को नाश करे ॥

दुग्धयोग

गुडेन मिश्रितं दुग्धं कदुष्णं कामतः पिवेत् ।

मूत्रकृच्छ्रेषु सर्वेषु शर्करावातरोगनुत् ॥

अर्थ—जिस में गुड मिला हो और कुछ गरम ऐसा दूध पीवे तो सर्व मूत्रकृच्छ्र, शर्करा और वातरोग ये दूर हों ॥

यवक्षार

सपादशाणतुलितो यवक्षारः सितायुतः ।

भक्षितो नाशयत्येव मूत्रकृच्छ्रं न संशयः ॥

अर्थ—जवाखार ५ मासे को मिश्री मिलायके खाय तो मूत्रकृच्छ्र को नष्ट करे ॥

गोकंटकादि लेह

गोकंटकं सदलमूलफलं गृहीत्वा संकुट्टितं पलशतं कथितं सु-
बोधैः । पादस्थितेन च जलेन पलानि दत्त्वा पंचाशते परिपचे-
दथ शर्करायाः ॥ तप्त्वा घृतत्वमुपगच्छति चूर्णितानि दद्यात्प-
लद्वयमितानि सुभेषजानि । शुंठीकणातृटिजवाग्रजकेसराणि
संयाति कोशककुभत्रपुपीफलानि ॥ वंशीपलाएकमिह प्रणिधाय
नित्यं लिह्यात्सुसिद्धममृतं पलसमितेन । हंत्याशु मूत्रपरिद-
ग्धविबंधकृच्छ्रं मूत्राश्मरीरुधिरमेहमधुप्रमेहान् ॥

अर्थ—गोखरू के पंचांग को जवकुट करके ४०० तोले जल में डालके काटा करे जब जल चतुर्याश शेष रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इस में २०० तोले मिश्री मिलाय घृत के समान होने पर्यंत पचावे. इस में सोंठ, पीपल, छोटी इलायची, जवाखार, नागकेशर, जावित्री, कोहसूत की छाल, खीरा और वंशलोचन ये मत्पेक ३२ तोले लेवे. सब का चूर्ण मिलाय ढकके रख देवे. इस में से नित्य

चाटा करे तो मूत्रकृच्छ्र, दाह, मूत्र का न उतरना, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और रक्तप्रमेह इन को नाश करे ॥

शल्यज मूत्रकृच्छ्र

मूत्रवाहिषु शल्येन क्षतेष्वभिहतेषु च । मूत्रकृच्छ्रं तदाघाताज्जा-
यते भृशदारुणम् ॥ वातकृच्छ्रेण तुल्यानि तस्य लिंगानि लक्षयेत् ॥

अर्थ—मूत्र बहनेवाले स्रोत (मार्ग) शल्य (तीर आदि) से विंध जाय अथवा पीडित होय तौ उस घात से भयंकर मूत्रकृच्छ्र होय है इस के लक्षण वातमूत्रकृच्छ्र के समान हों ॥

सामान्यक्रम

मूत्रकृच्छ्रेभिघातोत्थे वातकृच्छ्रक्रिया हिता ।
पंचवल्कलकृच्छ्रेः कवोष्णोत्र प्रशस्यते ॥

अर्थ—चोट लगने से उत्पन्न हुए मूत्रकृच्छ्र पर वड, पीपल, पाखर, आंव, जामुन इन की छाल का कुछ २ गरम २ लेप करे तो उत्तम है ॥

लोहभस्मयोग

अयोभस्म श्लक्ष्णपिष्टं मधुना सह योजितम् ।
मूत्रकृच्छ्रं निहंत्याशु त्रिभिर्लेपैर्न संशयः ॥

अर्थ—लोहभस्म को बारीक पीसके सहत के साथ देवे तो तीन दिन सेवन करने से निःसंदेह मूत्रकृच्छ्र नाश होय ॥

रसपान

रसं वल्लं यवक्षारं सितातक्रयुतं पिवेत् ।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि हन्यन्ते पानतो जवात् ॥

अर्थ—पारा २ रत्ती, जवाखार, मिश्री इन को एकत्र खरल कर छाल के साथ पीवे तो मूत्रकृच्छ्र नाश होय ॥

पुरीपज मूत्रकृच्छ्र

शकृतस्तु प्रतीघाताद्वायुर्विगुणतां गतः ।
आध्मानवातशूलौ च मूत्रकृच्छ्रं करोति च ॥

अर्थ—मल के (विष्ठा के) अवरोध होने से वायु विगुण (उलटा) होकर अफरा, वात, शूल और मूत्रनाश करे तब मूत्रकृच्छ्र प्रगट होय ॥

सामान्यचिकित्सा

स्वेदचूर्णक्रियाभ्यंगो वस्तयः स्युः पुरीपजे ।

कृच्छ्रे तत्र विधिः कार्यो सर्वशुक्रविबंधजित् ॥

अर्थ—मल की उपस्थित बाधा के रोकने से जो मूत्रकृच्छ्र होता है उस पर पीसने निकालने, चूर्ण का खाना, अभ्यंग, वस्ति ये उपचार करे तथा शुक्रविबंध-नाशक उपचार करे ॥

गोक्षुरक्वाथ

क्वाथो गोक्षुरबीजानां यवक्षारयुतः सदा ।

पीतः प्रशमयत्येव मूत्रकृच्छ्रं चिरोत्थितम् ॥

अर्थ—गोखरू के काटे में जवाखार डालके पीवे तो निश्चय बहुत दिनों का मूत्र-कृच्छ्र दूर होय ॥

आमलक्यादि क्वाथ

गुडेनामलकीक्वाथं श्रमघ्नं तर्पणं परम् ।

पित्तासृग्दाहशूलघ्नं मूत्रकृच्छ्रनिवारणम् ॥

अर्थ—आवलों के काटे में गुड मिलायके देवे तो रक्त, दाह और शूल इन कर-के युक्त मूत्रकृच्छ्र का नाश करे ॥

एलाचूर्ण

पिवेन्मद्येन सूक्ष्मैलां धात्रीफलरसेन वा ।

शित्तिवारकबीजं वा तत्रे श्लक्ष्णं च चूर्णितम् ॥

अर्थ—मद्य अथवा आंवले का रस इन के साथ छोटी इलायची के चूर्ण को पीवे अथवा सपेद खीरा के बीजों को बारीक पीसके छाछ के साथ पीवे ॥

खजूरादि चूर्ण

खजूरामलबीजानि पिप्पली च शिलाजतु ।

कपापाणं चंदनौर्वारुबीजकम् ॥ धान्याकं शर्करायुक्तं पातव्यं

ज्येष्ठवारिणा । अंगदाहं लिङ्गदाहं गुदवंक्षणशुक्रजम् ॥ शर्करा-

श्मरिशूलघ्नं बल्यं वृष्यकरं परम् ॥

अर्थ—खजूर, आंवला, पीपल, शिलाजित्त, इलायची, मुलहटी, पापाणभेद, चंदन, खीरा के बीज और धनिया इन के चूर्ण में मिश्री मिलाय मुलहटी के काटे से सेवन

करे तो अंग, गुदा, वंक्षण, शुक्र इन स्थानों के दाह को, शर्करा, पथरी का शूल इन का नाश करे. बल, वृष्यकर्त्ता है ॥

त्रिफलादि कल्क

त्रिफलायाः सुपिष्टायाः कल्कं कोलसमन्वितम् ।

वारुणी लवणीकृत्य पिवेन्मूत्ररुजापहम् ॥

अर्थ—त्रिफले का चूर्ण कर उस में वरने का कंकोल का और सैधे निमक का चूर्ण मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ्ररोग को नाश करे ॥

अश्मरीजन्यमूत्रकृच्छ्र

अश्मरीहेतुतत्पूर्वं मूत्रकृच्छ्रमुदाहरेत् ॥

अर्थ—पथरी के योग से जो मूत्रकृच्छ्र होय उस को पथरी का मूत्रकृच्छ्र कहते हैं ॥

अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र

अश्मरीजे मूत्रकृच्छ्रे स्वेदाद्या ऋत्नित्क्रिया ॥

अर्थ—पथरी के कारण से हुए मूत्रकृच्छ्र पर स्वेदादिक वातनाशक क्रिया करे ॥

क्वाथ

पापाणभेदक्वाथस्तु कृच्छ्रमश्मरिजं जयेत् ॥

अर्थ—पथरीजन्य मूत्रकृच्छ्र पर पापाण भेद का काढा करके देवे ॥

एलादि क्वाथ

एलोपकुल्यामधुकाश्मभेदकौंतीश्वदंद्रावृषकोरुवृकैः ।

शृतं पिवेदश्मजतुप्रगाढं सशर्करं साश्मरिमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—इलायची, पीपल, मुलहठी, पापाणभेद, रेणुकबीज, गोखरू, अदुसा, अंड की जड़ इन के काढे में पापाणभेद अथवा मिथ्री डालके पीवे तो पथरीमूत्रकृच्छ्र का नाश करे ॥

शुक्रज मूत्रकृच्छ्र

शुक्रं दोषैरुपहते मूत्रमार्गे विधारिते ।

सशुक्रं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्रस्तिमेहनशूलवान् ॥

अर्थ—दोषों के योग से शुक्र (वीर्य) दुष्ट होकर मूत्रमार्ग में गमन करे तब उस मनुष्य के मूत्राशय और लिंग इन में शूल हो और मूत्र के संग वीर्यपतन होय ॥

सामान्यचिकित्सा

कृच्छ्रे शुक्रविब्रंधोत्थे शिलाजतु समाक्षिकम् । सक्षीरं ससितं सर्पिः
प्रभाते प्रपिवेन्नरः ॥ शुक्रदोषविशुद्धयर्थं समदां प्रमदां श्रयेत् ॥

अर्थ—वीर्य रोकने से उत्पन्न मूत्रकृच्छ्र पर सहत के साथ शिलाजीत अथवा दूध मिश्री और घृत इन को मिलायके पीवे और शुक्र दोष दूर होने के वास्ते मदनोन्मत्त स्त्री का सेवन करे अर्थात् उस के साथ मैथुन करे ॥

तृणपंचमूलघृत

तृणपंचकमूलेन सिद्धं सर्पिः पिवेदपि ॥

अर्थ—ईख, डाम, काश, सरपता, कुशा इन के काढे के साथ सिद्ध करे हुए घृत को पीवे ॥

बलादि क्षीर

बलाहिंगुयुतं क्षीरं सर्पिर्मिश्रं पिवेन्नरः ।

मूत्रदोषविशुद्धयर्थं शुक्रदोषहरं च यत् ॥

अर्थ—खिरेटी, हाँग, दूध, घी इन को एकत्र करके पीवे तो मूत्रदोष और शुक्र दोष दूर होय ॥

पथरी और शर्करा का निदान

अश्मरी शर्करा चैव तुल्यसम्भवलक्षणे । विशेषणं शर्करायाः
शृणु कीर्तयतो मम ॥ पच्यमानाऽश्मरी पित्ताच्छोष्यमाणा
च वायुना । विमुक्तकफसंधाना क्षरंती शर्करा मता ॥ हृत्पीडा
वेपथुः शूलं कुशावमिश्रं दुर्बलः । तथा भवति मूच्छां च मूत्र-
कृच्छ्रं च दारुणम् ॥

अर्थ—अश्मरी (पथरी) और शर्करा इन दोनों की संप्राप्ति और लक्षण समान है परंतु इन में थोडासा भेद है उस को कहता हूं, पित्त से पकनेवाली और वायु से शुष्क होनेवाली ऐसी पथरी कफ से बंधी न होय, तब मूत्र के मार्ग से रेत के समान क्षरने लगे उस को शर्करा कहते हैं. उस शर्करायोग से हृदय में पीडा, कम्प, कूल में शूल, मंदाग्नि, मूच्छां और भयंकर मूत्रकृच्छ्र ये रोग होय ॥

मूलपंचकयोग

मूलानि कुशकाशेषुशराणां चेशुवालुका ।

मूत्राघाताश्मरीकृच्छ्रं पंचमूलीतृणात्मिका ॥

अर्थ—कुश, काश, ईख, सरपता, डाभ इन पांचों के जड़ का काढ़ा मूत्राघात, मूत्राश्मरी, मूत्रकृच्छ्र इन को नाश करे ॥

शिलाजत्वश्मभित्कृष्णातृटीनां वा पिवेद्रजः ॥

अर्थ—शिलाजित, पाषाणभेद, पीपल, इलायची इन के चूर्ण को जल के साथ पीवे तो मूत्रकृच्छ्र को दूर करे ॥

हरिद्रा मधुकं मूर्वा मुस्तकं देवदारु च ।

पिवेदक्षसमं कल्कं पयसा मूत्रपीडितः ॥

अर्थ—हलदी, मुलहठी, मूर्वा, नागरमोथा, देवदारु इन का चूर्ण एक तोले को दूध के साथ मूत्रकृच्छ्ररोगी को पिलाना चाहिये ॥

**एलाश्मभेदसशिलाजतु पिप्पलीनां चूर्णानि तंदुलजलेर्लुलिता-
नि पीत्वा । यद्वा गुडेन सहितान्यवलेह्य धीमानासन्नमृत्युरपि
जीवति मूत्रकृच्छ्री ॥**

अर्थ—इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत, पीपल इन के चूर्ण को चावलों के धोवन के साथ पीवे अथवा गुड़ में मिलायके खाय तो मूत्रकृच्छ्री आसन्नमृत्यु भी होय तो भी बच जावे ॥

अंकोलतिलकाष्ठानां क्षारः क्षौत्रेण संयुतः ।

दधिवार्यनुपानेन मूत्ररोधं नियच्छति ॥

अर्थ—अंकोल, तिल की लकड़ी इन का खार सहत और दही के जल से पीवे तो मूत्ररोध को नाश करे ॥

दाडिमादि रसपान

दाडिमाभ्युतां तृत्या शंबूजीरकसंयुताम् ।

पीत्वा सुरां सलवणां मूत्रकृच्छ्रात्प्रमुच्यते ॥

अर्थ—खट्टे अनार का रस, इलायची, शंख, जीरा इन के चूर्ण के साथ मद्य अथवा संधानिमक डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र से मुक्त होय ॥

निदग्धिकारसपान

सितातुल्यो यवक्षारः सर्वकृच्छ्रनिवारणः ॥

अर्थ—मिश्री और जवाखार समान भाग लेकर खाय तो मूत्रकृच्छ्र को नष्ट करे ॥

निदग्धिकारसो वापि सक्षौद्रः कृच्छ्रनाशनः ॥

अर्थ—कटेरी का रस सहत के साथ सेवन करे मूत्रकृच्छ्र नष्ट करे ॥

कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ॥ मुस्तादाडिमदूर्वातैः केतकीस्त-
नजद्रवैः । सहदेव्या कुमार्याश्च पर्पटस्य च वारिणा ॥ रामशी-
तलिकातोयैः शतावर्या रसेन च । भावयित्वा प्रयत्नेन दिवसे
दिवसे पृथक् ॥ तिक्ता गुडूचिकासत्वं पर्पटोशीरमाधवी । श्री-
गंधं सारिवा चैषां समानं सूक्ष्मचूर्णितम् ॥ द्राक्षाफलकपायेण
सप्तधा परिभावयेत् । ततः पात्राश्रयं कृत्वा वट्यः कार्याश्रणो-
पमाः ॥ अथ चंद्रकलानाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः । सर्वपित्तगद-
ध्वंसी वातपित्तगदापहः ॥ अंतर्बाह्यमहादाहविध्वंसनमहाघनः ।
श्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ॥ कुरुते नाग्निमाद्यं च
महातापज्वरं हरेत् । भ्रमं मूर्च्छां निहंत्याशु स्त्रीणां रक्तं महास्र-
वम् ॥ ऊर्ध्वाधोरक्तपित्तं च रक्तवांतिं विशेषतः । मूत्रकृच्छ्राणि
सर्वाणि नाशयेन्नात्र संशयः ॥

अर्थ—पारदभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, प्रत्येक एक २ तोले और गंधक २तोले
ले इन की कजली करके नागरमोथा, अनार, दूब, केतकी की कोपल, सहदेई, धी-
गुवार, पित्तपापडा, आरामशीतला और शतावर इन के रस की पृथक् २ भावना
देकर फिर कुटकी, गिलोयरस पित्तपापडा, खस, मधुमालती, बेलफल, चंदन,
सारिवा इन का बारीक चूर्ण कर उस में दाख के काठे की सात भावना देवे फिर
इस को पूर्वोक्त चूर्ण में मिलाय लेवे फिर किसी उत्तम चीनी वा शीशे के पात्र में
भरके सब को मिलाय चने के बराबर गोली बनावे. इस को चंद्रकलारस कहते है.
यह वातपित्त के रोग, भीतर और बाहर का दाह इन को नाश करनेवाला है. गरमी
की ऋतु में और शरदऋतु में विशेष करके प्रशस्त यह मंदाग्नि नहीं करे तथा संताप,
ज्वर, भ्रम, मूर्च्छा, स्त्रियों के रुधिर का जाना, ऊर्ध्वरक्तपित्त, रुधिर की उलटी
होना, अधोगत रक्तपित्त, सर्व प्रकार के मूत्रकृच्छ्र इन को नाश करे. इस में संदेह
नहीं है ॥

सूतं स्वर्णं च वैक्रांतं शृतं तुल्यं च मर्दयेत् । चांडालीराक्षसीद्रा-
वैर्द्रियामांते च गोलकम् ॥ शुष्कं रुध्वा पुटेच्चानु करीपाग्नौ महापुटे ॥

अर्थ—पारे की भस्म, सुवर्णभस्म, वैक्रांतभस्म ये समान भाग लेवे इन को शिव-
लिंगी और मोरमांसी इन दोनों के रस में दो प्रहर खरल कर गोली बनाय ले जब

अर्थ—हलदी, गुड इन को मिलायके एक तोले कांजी में पिलावे अथवा बाँककोडे का कंद १ तोले सहत में मिलाय सहत के साथ खाय तो पथरी का नाश करे इस में आश्चर्य नहीं है यह रहस्य शिव ने कहा है ॥

भृष्टक्षुरसपान

भृष्टक्षुस्वरसं ग्राह्यमाखुविद्धिहितं पिबेत् ।

नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि सद्य एव न संशयः ॥

अर्थ—ईख को भूनके उस के रस को निकाल लेवे उस में मूसे की बीट (लेंडी) मिलायके पीवे तो तत्काल मूत्रकृच्छ्र का नाश करे इस में संशय नहीं है ॥

कुटजयोग

पिष्ट्वा गोपयसा श्लक्ष्णं कुटजस्य त्वचं पिबेत् ।

तेनोपशाम्यते क्षिप्रं मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम् ॥

अर्थ—गौ के दूध में कूडा की छाल को बारीक पीस कल्क करे इन को पीवे तो भयंकर मूत्रकृच्छ्र तत्काल दूर होय ॥

लघुलोकेश्वर

रसभस्म च भागैकं चतुर्भागं तु गंधकम् । पिष्ट्वा वराटकान्

पूर्याद्रसपादं च टंकणम् ॥ क्षीरेण पिष्ट्वा रुध्वास्यं भांडे रुध्वा

पुटे पचेत् । स्वांगशीतं विचूर्ण्यथ लघुलोकेश्वरो रसः ॥ चतु-

र्गुजो घृते देयो मरीचैकोनविंशतिः । जातीमूलं पलैकं तु ह्यजा-

क्षीरेण पाचयेत् ॥ शर्कराभावितं चानु पीतं कृच्छ्रहरं परम् ॥

अर्थ—पारद की भस्म १, गंधक ४ भाग, दोनों को एकत्र खरल कर कौडी में भर देवे फिर कजली से चतुर्थांश सुहागा ले उस को दूध में खरल कर उन कौडियों के मुख को बंद कर देवे फिर इन कौडियों को मटेके में रख मुख को बंद करके संपुट फूंक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब सावधानी से निकाल ले खरल कर ४ रत्ती के अनुमान इस को घृत के साथ देवे इसे लघुलोकोश्वररस कहते हैं—फिर १९ मिरच और ४ तोले चमेली की जड़ को बकरी के दूध में औटाय उस में मिश्री मिलायके देवे तो अत्यंत कृच्छ्रहारक है ॥

चंद्रकलारस

प्रत्येकं कर्पमात्रं स्यात्सूतं ताम्रं तथाभ्रकम् । द्विगुणं गंधकं चैव

बाला, निमोथ, लाल चंदन, धनिया, कुटकी, जवाखार, सुहागा, नागरवेष्ट, काक-
डासिंगी, पुहकरमूल, कसूर, दारुहलदी, शीशे की भस्म, लोहभस्म, वंगभस्म ये
प्रत्येक चार २ तोले लेवे. सब का चूर्ण करके उस में मिलाय देवे जब गाढा हो
जावे तब उतारके शीतल कर उत्तम चिकने वासन में भरके धर रखे इस को बला-
बल विचारके ४ तोले के अनुमान खाय तथा पथ्य से रहे तो पथरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रा-
घात, मूत्रबंध, २० प्रकार के प्रमेहरोग, शुक्रदोष, नष्टशुक्र, अम्लपित्त, घातुक्षय,
उष्णवात (सुजाक), वातकुंडली ये सब सूयोदय होने से जैसे अंधकार नष्ट होवे
उसी प्रकार नष्ट हो. इस गोकंटकादि लेह से परे दूसरा लेह उत्तम नहीं है इस
प्रकार कृष्णात्रेय ने कहा है ॥

मूत्रकृच्छ्र पर पथ्य

वातोद्भवेऽभ्यंगनिरूहवस्तिः स्नेहावगाहोत्तरवस्तिसेकः । पैत्ते-
वगाहः शिशिरप्रदेहा ग्रैष्मो विधिर्वस्तिविधिर्विरेकः ॥ श्लेष्मो-
द्भवे स्वेदविरेकवस्तिः क्षारायवान्नानि च तीक्ष्णमुष्णम् । त्रिदो-
पजेऽभ्यंगपुरःसराणि सर्वाण्यमूनि विमलोदितानि ॥ मूत्रघात-
विकारोत्थे वातकृच्छ्रक्रिया मता । लेहः शुक्रविवंधोत्थे शि-
लाजतु समाक्षिकम् ॥ स्वेदचूर्णक्रियाभ्यंगवस्तयः स्युः पुरी-
पजे । अथो यथादोषमयं गणोऽपि पुरातना लोहितशालयश्च ॥
तक्रं पयो दध्यपि गोप्रभूतं धन्वामिपं मुद्गरसाः सिता च । पु-
राणकूष्मांडफलं पटोलं महार्द्रकं गोक्षुरकः कुमारी ॥ एवार्-
खर्जूरकनारिकेरं तालद्रुमाणां च शिरांसि पथ्या । ताळास्थि-
मज्जात्रपुपं वृष्टिश्च शीतानि पानान्यज्ञानानि चैव ॥ प्रतीरनीरं
हिमवालुका च मित्रं नृणां स्यात्सति मूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—वातजन्य मूत्रकृच्छ्र रोग में मालिस करना, निरूहण वस्ति, स्नेहन कर्म, उत्तर-
वस्ति, सेचनकर्म ये करें पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्र में जल में धसके स्नान, शीतलप्रदेह
तथा जो गरमियों में करना चाहिये वह विधि, दस्त कराने ये कर्म करें. कफजन्य-
मूत्रकृच्छ्र में स्वेदन, वमन, विरेचन, वस्तिकर्म, क्षार, यव के पदार्थ, तीक्ष्ण और
गरम पदार्थ देने चाहिये. त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र में प्रथम मालिस करना और जो
तीनों दोषों पर कर्म करने लिखे वह करें. मूत्राघातविकार में वातजन्य मूत्रकृच्छ्र पर
जो क्रिया लिखी है वह करे. शुक्र के रुकने से प्रगट मूत्रकृच्छ्र में शिलाजीत और

सूत्र जावे तब किसी मिट्टी के पात्र में भर उस के मुख को बंद कर देवे फिर धारने उपलों के संपुट में रखके फूंक देवे तो यह औषधी सिद्ध होय इस को अनुपान के साथ बलाबल विचारके खाय तो मूत्रकृच्छ्र को नाश करे ॥

बृहद्गोक्षुराद्य लेह

गोकंटकं पलशतं कुशमूलं तथैव च । पापाणभेदोष्टपलं गुडू-
चीपलपंचकम् ॥ एरंडो भीरुरष्टौ च मूलं दशपलं पृथक् । प-
द्ममूलं चाश्वगंधा प्रत्येकं पलविंशतिः ॥ सर्वमेकत्र संकुट्य ज-
लद्रोणे विपाचयेत् । पादशेषं तु संग्राह्य वस्त्रपूतं समाक्षिपेत् ॥
गव्याज्यं प्रस्थमेकं तु शिलाजं च तथा स्मृतम् । घनीभूते तु
संजाते द्रव्याणीमानि दापयेत् ॥ तालमूली शताह्वा च त्रिकटु
त्रिफला तथा । सूक्ष्मैला भूतकेशी च ह्रीवेरं नागकेशरम् ॥
पद्मकं जातिपत्रत्वक्मधुयष्टिसरोचना । जातीफलमुशीरं च त्रि-
वृता रक्तचंदनम् ॥ धान्याकं कटुका क्षारौ नागवल्ली च शृंगिका ।
पुष्कराह्वं शठी दारु शीसं लोहं च वंगकम् ॥ द्रव्याणीमानि
संगृह्य प्रत्येकं पलमात्रकम् । खादेद्बलाग्निं संप्रेक्ष्य पथ्यं सेवेत्तु
मानवः ॥ स्निग्धभांडे निधायाथ नित्यं लिह्यात्पलोन्मितम् ।
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च मूत्राघातं विबंधताम् ॥ प्रमेहं विंशतिं चैव
शुक्रदोषं तथैव च । धातुक्षये चोष्णवाते वातकुंडलिकादयः ॥
ते सर्वे प्रशमं यांति भास्करेण तमो यथा । नातः परतरं किं-
चित्कृष्णात्रेयेण पूजितः ॥

अर्थ—गोखरु ४०० तोले, कुशा की जड़ ४०० तोले, पापाणभेद ३२ तोले, गिलोय २० तोले, अंड की जड़ और शतावर ७२ तोले, कमल का कंद और अस-
गंध ये ८० तोले लेवे सब को एकत्र कूट १०२४ तोले जल में चढायके औटावे जब
चतुर्थांश जल शेष रहे तब उतारके छान लेवे इस जल में गौ का घी ६४ तोले,
शिलाजीत ६४ तोले ढालके पचावे जब गाढा हो जावे तब इस में काली मूसली,
शतावर, सांठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, छोड़ी इलायची, जटामांसी,
खस, नागकेशर, पद्मास, जांबत्री, दालचीनी, मुलहठी, वंशलोचन, जायफल, नेत्र-

बाला, निसोथ, लाल चंदन, धनिया, कुटकी, जवाखार, सुहागा, नागरवेळ, काक-
डासिंगी, पुहकरमूळ, कचूर, दारुहलदी, शीशे की भस्म, लोहभस्म, वंगभस्म ये
प्रत्येक चार २ तोले लेवे. सब का चूर्ण करके उस में मिलाय देवे जब गाढा हो
जावे तब उतारके शीतल कर उत्तम चिकने वासन में भरके धर रखे इस को बला-
बल विचारके ४ तोले के अनुमान खाय तथा पथ्य से रहे तो पथरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रा-
घात, मूत्रबंध, २० प्रकार के प्रमेहरोग, शुक्रदोष, नष्टशुक्र, अम्लपित्त, धातुक्षय,
लण्णवात (मुजाक), वातकुंडली ये सब सूर्योदय होने से जैसे अंधकार नष्ट होवे
उसी प्रकार नष्ट हो. इस गोकंटकादि लेह से परे दूसरा लेह उत्तम नहीं है इस
प्रकार लण्णात्रेय ने कहा है ॥

मूत्रकृच्छ्र पर पथ्य

वातोद्भवेऽभ्यंगनिरूहवस्तिः स्नेहावगाहोत्तरवस्तिसेकः । पैत्ते-
वगाहः शिशिरप्रदेहा ग्रैष्मो विधिर्वस्तिविधिर्विकः ॥ श्लेष्मो-
द्भवे स्वेदविकेकवस्तिः क्षारायवान्नानि च तीक्ष्णमुष्णम् । त्रिदो-
पजेऽभ्यंगपुरःसराणि सर्वाण्यमूनि विमलोदितानि ॥ मूत्रघात-
विकारोत्थे वातकृच्छ्रक्रिया मता । लेहः शुक्रविवंधोत्थे शि-
लाजतु समाक्षिकम् ॥ स्वेदचूर्णक्रियाभ्यंगवस्तयः स्युः पुरी-
पजे । अथो यथादोषमयं गणोऽपि पुरातना लोहितशालयश्च ॥
तक्रं पयो दध्यपि गोप्रभूतं धन्वामिपं सुद्वरसाः सिता च । पु-
राणकूष्मांडफलं पटोलं महार्द्रकं गोशुरकः कुमारी ॥ एवार्-
खजूरकनारिकेरं तालद्रुमाणां च शिरांसि पथ्या । तालास्थि-
मज्जात्रपुपं वृटिश्च शीतानि पानान्यज्ञानानि चैव ॥ प्रतीरनीरं
हिमवालुका च मित्रं नृणां स्यात्सति मूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—वातजन्य मूत्रकृच्छ्र रोग में मालिस करना, निरूहण वस्ति, स्नेहन कर्म, उत्तर-
वस्ति, सेचनकर्म ये करें पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्र में जल में घसके स्नान, शीतलप्रदेह
तथा जो गरमियों में करना चाहिये वह विधि, दस्त कराने ये कर्म करें. कफजन्य-
मूत्रकृच्छ्र में स्वेदन, वमन, विरेचन, वस्तिकर्म, क्षार, यव के पदार्थ, तीक्ष्ण और
गरम पदार्थ देने चाहिये. त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र में प्रथम मालिस करना और जो
तीनों दोषों पर कर्म करने लिये वह करें. मूत्राघातविकार में वातजन्य मूत्रकृच्छ्र पर
जो क्रिया लिखी है वह करे. शुक्र के रुकने से प्रगट मूत्रकृच्छ्र में शिलाजीत और

सहत मिलायके अवलेह देवे. पुरीष (मल) जन्य मूत्रकृच्छ्र में स्वेदन कर्म, चूर्ण क्रिया, मालिस और वस्तिकर्म करे. ये पूर्वोक्त गण यथारोगानुसार देवे तथा पुराने छाल चावल, गौ की छाल, दूध, दही, जंगली जीवों का मांस, मूंग का रस, खांड, पुराना पका पेठा, परवल, अदरख, गोखरू, घीगुवार, सुपारी, खिजूर, नारियल, ताड़ की शिरा, हरड, ताड़ का गूदा, खीरा, इलायची छोटी, शीतल पीने के पदार्थ और भोजन, नदी कांठ का जल और शीतल वालू ये सब पदार्थ मूत्रकृच्छ्ररोगी को परम हितकारी हैं ॥

मूत्रकृच्छ्र पर अपथ्य

मद्यं श्रमं निधुवनं गजवाजियानं सर्वं विरुद्धमशनं विपमाशनं च । तांबूलमत्स्यलवणार्द्रकतैलभृष्टं पिण्याकहिंशुतिलसर्पप-
मूत्रवेगान् ॥ मापान् करीरमपि तीक्ष्णविदाहि रूक्षमम्लं प्रमुं-
चतु जनः सति मूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ—मद्यपान, परिश्रम, स्त्रीसंग, हाथी घोड़े की सवारी, संपूर्ण विरुद्ध भोजन और विपमाशन, तांबूल, निमक, अदरख और तेल की भुनी मछली, खल, हींग, तिल, सरसों, मूत्र के वेग को रोकना, उडद, करील और तीक्ष्ण वस्तु तथा दाहकारी पदार्थ. रूक्ष पदार्थ और खटाई इन को मूत्रकृच्छ्र रोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे मूत्रकृच्छ्रनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

मूत्राघातनिदानचिकित्सा ।

जायन्ते कुपितैर्दोषैर्मूत्राघातास्त्रयोदश ।

प्रायो मूत्रविघाताद्यैर्वातकुण्डलिकादयः ॥

अर्थ—मूत्र के वेग रोकने से (आदिशब्द से मल शुक्रादि वेग रोकना और रुक्ष, भोजन आदि जानना) कुपित भये दोषों से वातकुण्डलिकादिक तेरह प्रकार के मूत्राघातरोग को करे ॥

मूत्राघात के १२ भेद

वातकुण्डलिकाष्ठीला वातवस्तिस्तथैव च । मूत्रातीतः सजठरो

मूत्रोत्संगक्षयस्तथा ॥ मूत्रग्रंथिमूत्रशुकमुष्णवातस्तथैव च ।
मूत्रासादो विट्विघातो रोगा द्वादश कीर्तिताः ॥

अर्थ—वातकुंडलिका, अष्टीला, वातवस्ति, मूत्रातीत, मूत्रजठर, मूत्रोत्संग, मूत्र-
क्षय, मूत्रग्रंथि, मूत्रशुक, उष्णवात, मूत्रसाद और विट्वात ये बारह प्रकार के मूत्राघात
कहे जाते हैं ॥

वातकुंडलिका के लक्षण

रौक्ष्याद्वेगविघाताद्वा वायुर्वस्तौ सवेदनः । मूत्रमाविश्य चरति
विगुणः कुण्डलीकृतः ॥ मूत्रमल्पाल्पमथ वा सरुजं संप्रवर्तते ।
वातकुण्डलिकां तां तु व्याधिं विद्यात्सुदारुणाम् ॥

अर्थ—रूखे पदार्थ खाने से अथवा मलमूत्रादि वेगों के धारण करने से, कुपित
भई जो वायु सो बस्ति (मूत्राशय) में प्राप्त हो पीडा करे और मूत्र से मिलकर
मूत्र के वेग को विगुण (उलटा) करके वहां आप कुण्डल के आकार (गोलाकार)
मूत्राशय में विचरे तब मनुष्य उस वात से पीडित हो मूत्र को बारंबार थोडा थोडा
पीडा के साथ त्याग करे इस दारुण व्याधि को वातकुण्डलिका रोग कहते हैं ॥

अष्टीला के लक्षण

आध्मापयन्वस्तिगुदं रुध्वा वायुश्चलोन्नतः ।
कुर्यात्तीव्रार्तिमष्टीलां मूत्रमार्गावरोधिनीम् ॥

अर्थ—बस्ति (मूत्राशय) और गुदा इन में यह वायु अफरा करे तथा गुदा की
वायु को रोककर चञ्चल और उन्नत (ऊंची) ऐसी अष्टीला (पत्थर की पिण्डी के
सदृश) को प्रगट करे यह मूत्र के मार्ग को रोकनेवाली और भयंकर पीडा
करनेवाली है ॥

वातवस्ति के लक्षण

वेगं विधारयेद्यस्तु मूत्रस्याकुशलो नरः । निरुणद्धि मुखं तस्य
वस्तेर्वस्तिगतोऽनिलः ॥ मूत्रसंगो भवेत्तेन वस्तिकुक्षिनिपी-
डितः । वातवस्तिः स विज्ञेयो व्याधिः कृच्छ्रप्रसाधनः ॥

अर्थ—जो मनुष्य अड (जिद) से मूत्र बाधा को रोके उसकी बस्ति (मूत्राशय)
का वायु बस्ति के मुख को बन्द कर दे तब उस का मूत्र बंद हो जाय और वह वायु
बस्ति में और कूख में पीडा करे उस व्याधी को वातवस्ति से कहते हैं- यह
बड़े कष्ट से साध्य होय ॥

मूत्रातीत के लक्षण

चिरं धारयतो मूत्रं त्वरया न प्रवर्त्तते ।

मेहमानस्य मन्दं वा मूत्रातीतः स उच्यते ॥

अर्थ—मूत्र को बहुत देर रोकने से पीछे वह जल्दी नहीं उतरे और मूतते समय धीरे धीरे उतरे इस रोग को मूत्रातीत कहते हैं ॥

मूत्रजठर के लक्षण

मूत्रस्य वेगेऽभिहते तदुदावर्त्तहेतुकः । अपानः कुपितो वायु-
रुदरं पूरयेद्भृशम् ॥ नाभेरधस्तादाध्मानं जनयेत्तीव्रवेदनम् ।
तन्मूत्रजठरं विद्यादधोवस्तिनिरोधजम् ॥

अर्थ—मूत्र के वेग रोकने से मूत्रवेगधारणजनित और उदावर्त्त का कारणभूत ऐसा अपानवायु कुपित होकर पेट बहुत फूल जाय और नाभि के नीचे तीव्र वेदना-संयुक्त अफरा करे, अधोवस्तिका रोध करनेवाला ऐसे इस रोग को मूत्रजठर ऐसे कहते हैं ॥

मूत्रोत्संग के लक्षण

वस्तौ वाप्यथवा नाले मणौ वा यस्य देहिनः।मूत्रं प्रवृत्तं सज्जेत
सरत्तं वा प्रवाहतः ॥ स्रवेच्छनैरल्पमल्पं सरुजं वाथ नीरुजम् ।
विगुणानिलजो व्याधिः स मूत्रोत्संगसंज्ञितः ॥

अर्थ—प्रवृत्त भया मूत्र वास्ति में अथवा शिश्र में (लिंग में) अथवा शिश्र के अग्र भाग में अटक जाय और बल से मूत्र को करे भी तो वादी से वास्ति को फाडकर जो मूत्र निकले वह मंद मंद थोडा थोडा पीडा के साथ अथवा पीडाराहित रुधिर-सहित निकले ऐसी विगुण वायु से उत्पन्न हुई इस व्याधि को मूत्रोत्संग कहते हैं ॥

मूत्रक्षय के लक्षण

रूक्षस्य क्वांतदेहस्य वस्तिस्थौ पित्तमारुतौ ।

मूत्रक्षयं सरुग्दाहं जनयेतां तदाह्वयम् ॥

अर्थ—रूखा भया अथवा श्रांत (थक गया) देह जिस का ऐसे पुरुष के वास्ति (मूत्राशय) में रहे जो पित्त और वायु से मूत्र का क्षय करे और पीडा तथा दाह होता है उस को मूत्रक्षय ऐसे कहते हैं ॥

मूत्रग्रंथी के लक्षण

अन्तर्बस्तिमुखे वृत्तः स्थिरोऽल्पः सहसा भवेत् ।

अश्मरीतुल्यरुग्रन्थिर्मूत्रग्रन्थिः स उच्यते ॥

अर्थ—बस्ती के मुख में गोल स्थिर छोटी सी गांठ अकस्मात् होय उस में पथरी के समान पीड़ा होय इस रोग को मूत्रग्रन्थि ऐसे कहते हैं ॥

मूत्रशुक्र के लक्षण

मूत्रितस्य स्त्रियं यातो वायुना शुक्रमुद्धतम् । स्थानाच्चयुतं
मूत्रयतः प्राक्पश्चाद्वा प्रवर्तते ॥ भस्मोदकप्रतीकाशं मूत्र-
शुक्रं तदुच्यते ॥

अर्थ—मूत्रवाधा का रोकके जो मनुष्य स्त्रीसङ्ग करे उस के वायु शुक्र को उडाय स्थान से भ्रष्ट करे, तब मूतने के पहिले अथवा मूतने के पीछे शुक्र गिरे और उस का वर्ण राख मिला पानी के समान होय, उस को मूत्रशुक्र ऐसे कहते हैं ॥

उष्णवात के लक्षण

व्यायामाध्वातपैः पित्तं वस्तिं प्राप्यानिलायुतम् । वस्तिं मेद्रं
गुदं चैव प्रदहेत्स्रावयेदधः ॥ मूत्रं हरिद्रमथवा सरक्तं रक्तमेव
च । कृच्छ्रात्पुनः पुनर्जैतोरुष्णवातं वदन्ति तम् ॥

अर्थ—व्यायाम (दंड, कसरत), आति मार्ग का चलना और धूप में डोलना इन कारणों से कुपित भया जो पित्त सो बस्ती में प्राप्त हो वायु से मिल वस्ति अंडकोश और गुदा इन में दाह करे और हलदी के समान अथवा कुछ रक्त से युक्त वा लाल ऐसा मूत्र का स्राव वारंवार कष्ट से होय, उस को उष्णवात रोग कहते हैं ॥

मूत्रसाद के लक्षण

पित्तं कफो वा द्वौ वापि संहन्येतेऽनिलेन चेत् । कृच्छ्रान्मूत्रं
तदा पीतं रक्तं श्वेतं घनं स्रवेत् ॥ सदाहं रोचनाशंखचूर्णवर्णं
भवेत्तु तत् । शुष्कं समस्तवर्णं वा मूत्रसादं वदन्ति तम् ॥

अर्थ—पित्त अथवा कफ वा दोनों वायु करके बिगडे हुए होंय तब मनुष्य पीला, लाल, सफेद, गाढा ऐसा कष्ट से मूते और मूतने के समय दाह होय और जब वह मूत्र पृथ्वी में सूख जाय तब गोरोचन, शंख के चूर्ण सा वर्ण होय अथवा सर्व वर्ण का होय इस रोग को मूत्रसाद कहते हैं ॥

विड्विघातलक्षण

रूक्षदुर्बलयोर्वातेनोदावर्तं शकृद्यदा । मूत्रस्रोतोऽनुपद्येत वि-
द्विसृष्टं तदा नरः ॥ विड्वं धं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्विड्विघातं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ—रूक्ष और दुर्बल पुरुष के शकृत (मल) जब वायु करके प्रेरित उदावर्त को प्राप्त हो तब वह मल मूत्र के मार्ग में आवे उस समय मनुष्य मूतने लगे तौ बड़े कष्ट से मूत्र उतरे और उस के मूत्र में विघा की सी दुर्गंध आवे, उस को विड्विघात कहते हैं ॥

मूत्राघात के असाध्यलक्षण

मूत्राघातः कफोत्पन्नो न सिध्यति कथंचन ।

शोपगौरवयुक्स्निग्धं श्वेतं मेहति यो घनम् ॥

अर्थ—जिस के कफ से उत्पन्न मूत्राघात हुआ है और रोगी यदि शोप और जडत्व से युक्त हो और चिकना, सपेद और घन मूते तो असाध्य है ॥

वस्तिकुंडलिका के लक्षण

द्रुताध्वलंघनायासैरभिघातात्प्रपीडनात्स्वस्थानाद्बस्तिरुद्धतः
स्थूलस्तिष्ठति गर्भवत् ॥ शूलस्यन्दनदाहार्तो विन्दुं विन्दुं स्रव-
त्यपि । पीडितस्तु सृजेद्वारां संरंभोद्वेष्टनार्तिमान् ॥ वस्तिकुं-
डलमाहुस्तं घोरं शस्त्रविपोपमम् । पवनप्रवलं प्रायो दुर्निवारम-
बुद्धिभिः ॥ तस्मिन्पित्तान्विते दाहः शूलं मूत्रविवर्णता । श्ले-
ष्मणा गौरवं शोथः स्निग्धं मूत्रं घनं सितम् ॥

अर्थ—जल्दी जल्दी चलने से, लंघन करने से, परिश्रम से, लकड़ी आदि की चोट लगने से, पीडा से बस्ती अपने स्थान को छोड़ ऊपर जाय, मोटी होकर गर्भ के समान कठिन रहे, उस से शूल, कम्प और दाह ये होंय. मूत की एक एक धून्द गिरे, यदि बस्ती जोर से पीडित होय तौ बड़ी धार पड़े, बस्ती में सूजन होय, पेट में पीडा होय इस रोग को वस्तिकुण्डल ऐसे कहते हैं. यह शस्त्र के समान जल्दी प्राणनाशक और विष के समान कालांतर में प्राण का नाश कर्ता भयंकर है. इसमें प्रायः वायु प्रबल है, मन्दबुद्धिवाले वैद्यों से इस का निवारण (चिकित्सा) करना कठिन है. इस को अन्य दोषों का सम्बन्ध होने से जो लक्षण होते हैं उन को कहता हूं वही वस्तिकुंडल पित्तयुक्त होने से दाह और मूत्र का बुरा रंग होय और कफयुक्त होने से जडत्व, सूजन, मूत्र चिकना, गाढा, सपेद ऐसा होय ॥

साध्यासाध्यत्वकथन

श्लेष्मरुद्धगलो वस्तिः पित्तोदीर्णो न सिद्ध्यति । अविभ्रांत-
विलः साध्यो न च यः कुण्डलीकृतः ॥ स्याद्भ्रस्तौ कुंडलीभूते
तृष्णमोहः श्वास एव च ॥

अर्थ—कफ करके जिस का मुख बन्द होय ऐसा और पित्त करके व्याप्त भई
ऐसी बस्ती साध्य नहीं होय और जिस बस्ती का मुख खुला होय तथा जो कुण्ड-
लीकृत होय नहीं सो साध्य है. बस्ती कुण्डलीभूत होने से प्यास, दाह और श्वास
यह लक्षण होय ॥

मूत्राघात की सामान्यचिकित्सा
स्नेहस्वेदोपपन्नस्य हितं स्नेहविरेचनम् ।
दद्यादुत्तरवस्तिं च मूत्राघाते सवेदने ॥

अर्थ—पीडायुक्त मूत्राघात पर स्नेहन, पसीने निकालना इत्यादि करके स्नेहयुक्त
विरेचन देवे अथवा उत्तरवस्ती इत्यादिक उपचार करे ॥

मूत्रकृच्छ्राश्मरीरोगे भेषजं यत्प्रकीर्तितम् ।
मूत्राघातेषु सर्वेषु तत्कुर्याद्देशकालवित् ॥

अर्थ—मूत्रकृच्छ्र, मूत्राश्मरी इन पर जो औषध कही है वह देश और काल जान
नेवाले मनुष्यों को संपूर्ण मूत्राघात पर करना चाहिये ॥

गोक्षुरादि वटी

त्रिकटु त्रिफलातुल्यं गुग्गुलुं च समांशकम् । गोक्षुरकाथसंयुक्ता
गुटिकाः कारयेद्भिषक् ॥ दोषकालबलापेक्षी भक्षयेच्चानुलोमि-
काम् । न चात्र परिचारोस्ति कर्म कुर्याद्यथेप्सितम् ॥ प्रमेहान्
वातरोगांश्च वातशोणितमेव च । मूत्राघातं मूत्रदोषं प्रदरं चाशु
नाशयेत् ॥

अर्थ—सोंठ, पिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला ये समान भाग ले तथा सब
के बराबर गूगल ले. सब को गोखरू के काटे से खरल कर गोली बनावे यह दोष,
काल, बल इन को विचार कर देवे. इस पर किसी प्रकार के खाने पीने आदि का
निषेध नहीं है यथेष्ट आचरण करे. यह प्रमेह, वातरोग, वातरक्त, मूत्राघात, मूत्रदोष,
और प्रदर इन सब को नष्ट करे ॥

पयादि

शृतं शीतं पयो मांसी चंदनं तंदुलांबुना ।
पिवेत्सशर्करं श्रेष्ठमुष्णवाते सशोणिते ॥

अर्थ—औटायकर शीतल करा हुआ दूध, जटामांसी, चंदन, चांबलों का घोंवन मिश्री इन को एकत्र कर पीवे तो रक्तसहित उष्णवात पर श्रेष्ठ है ॥

ऐर्वारूवीजादि कल्क

कल्कमैर्वारूवीजानामक्षमात्रं ससैंधवम् ।

धान्याम्लयुक्तं पीत्वैव मूत्राघाताद्विमुच्यते ॥

अर्थ—खीरे के बीज १ तोला लेके पीसे फिर इस कल्क में सैंधानिमक डालके कांजी में मिलायके देवे तो मूत्राघातरोग से छूट जावे ॥

सामान्ययत्न

दद्यादुत्तरवस्ति वा मूत्राघाते सवेदने ।

अर्थ—वेदनायुक्त मूत्राघात पर उत्तरवस्ती देवे ॥

अतिमैथुन करने से रुधिर गिरे उस पर यत्न

स्त्रीणामतिप्रसंगेन शोणितं यस्य सिच्यते ।

मैथुनोपरमस्तस्य बृंहणीयो विधिर्हितः ॥

अर्थ—अतिमैथुन के योग से जिस का रुधिर लिंग के द्वारा निकले उस को मैथुन न करना चाहिये और पौष्टिक औषधों को सेवन करे ॥

देयः पापाणभेदोत्रानुपानैः कृच्छ्रनाशनः ।

शीतोपचारं बहुलं कुर्याल्लिङ्गोद्भवे गदे ॥

अर्थ—पापाणभेद को अनुपान के साथ देवे तो मूत्रकृच्छ्र को नाश करे और लिंग में होनेवाले रोग पर अत्यंत शीतल उपचार करे ॥

पिवेच्छिलजतुक्वाथे गणे वीरतरादिके ।

रसं दुरालभाया वा कपायं वासकस्य वा ॥

अर्थ—वीरतर्वादिगण के काढ़े में शिलाजीत मिलायके पीवे अथवा जवासा अथवा अहूसा इन के काढ़े को पीवे ॥

त्रिकंठकैरंडशतावरीभिः सिद्धं पयो वातमये सशूले ।

गुडप्रगाढं सघृतं पयो वा रोगेषु कृच्छ्रादिषु शस्तमेतत् ॥

अर्थ—गोखरू. अंड की जड़, शतावर इन का काढा वातजन्य शूलयुक्त मूत्राघात पर उत्तम है तथा गुड, घी, दूध इन को एकत्र कर मूत्रकृच्छ्रादिक रोगो पर प्रशस्त है ॥

वीरतर्वादि क्वाथ

वीरतरुर्वृक्षवंदाकाशः सहचरत्रयम् । कुशद्वयनलो गुंद्रा वकपु-
ष्पोग्निमंथकः ॥ मूर्वा पाषाणभेदश्च स्योनाको गोक्षुरस्तथा ।
अपामार्गश्च कमलं ब्राह्मी चेति गणो वरः ॥ वीरतर्वादिरि-
त्युक्तः शर्कराश्मरिक्कच्छहा । मूत्राघातं वायुरोगान्नाशयेन्नि-
खिलानपि ॥

अर्थ—कोहट्टक्ष की छाल १, बांदा २, काश ३, सपेद पीयावासा ४, पीला पीया-
वासा ५, काला पीयावासा ६, छोटी डाम ७, बड़ी डाम ८, नरसल ९, गुंद्रा
(पटेरे) १०, वकपुष्प ११, अरनी १२, मूर्वा १३, पाषाणभेद १४, स्योनाक
(टेंडू) १५, गोखरू १६, आंगा १७, कमल १८, ब्रह्मी के पत्ते १९ इन उर्लीस
औषधों का काढा करके पीवे तो शर्करा, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और वादी के
रोग ये सब दूर हों ॥

सशूलमूत्राघात पर

नलकुशकाशेक्षुशिफाक्थितं प्रातः सुशीतलं ससितम् ।

पिवतः प्रयाति नियतं मूत्राघातः सवेदनः पुंसः ॥

अर्थ—नरसल, कुश, काश, ईख इन की जड़ का काढा कर शीतल होने पर
मिश्री मिलायके पीवे तो पीडायुक्त मूत्राघात को शमन करे ॥

त्रिफलादि क्वाथ

वरांबु लवणं चैव समूतं यः पिवेत्ररः ।

तस्य नश्यंति वेगेन मूत्राघाताह्नयोदश ॥

अर्थ—त्रिफले के काढे में निमक और पारा डालके जो पीवे उस के तेरह प्रकार
के मूत्रकृच्छ्र नष्ट होवे ॥

गोधावन्यादि क्वाथ

गोधावन्यामूलं कथितं घृततैलगोरसोन्मिश्रम् ।

पीतं विरुद्धमचिरात् भिनत्ति मूत्रस्य संघातम् ॥

अर्थ—ऋषभक, पिठवन इन की जड़ का काढा घी, तेल, दूध डालके पीवे तो
तरकाल मूत्रसंघात को फोडके निकाल दे ॥

दशमूलादि काथ

दशमूलीशृतं पीत्वा सशिलाजतुशर्करम् ।

वातकुंडलिकाष्ठीलावातवस्ती प्रयुज्यते ॥

अर्थ—दशमूल के काढ़े में शिलाजीत और मिश्री डालके पीवे तो वातकुंडलिका, अष्ठीला, वातवस्ती ये नष्ट होंगे ॥

गोक्षुरादि काथ

पीतो गोफंटककाथः सशिलाजतुकौशिकः ।

मूत्रक्षयान्मूत्रशुक्रान्मूत्रोत्संगाद्विमुच्यते ॥

अर्थ—गोखरू का काढ़ा शिलाजीत और गूगल डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र, मूत्रशुक्र, मूत्रोत्संग इन से छूट जावे ॥

प्रकारांतर

काथं समूलपत्रस्य गोक्षुरोः सफलस्य च ।

पिवेन्मधुसितायुक्तं मूत्रकृच्छ्ररुजापहम् ॥

अर्थ—गोखरू के पंचांग का काढ़ा करके उस में सहत और मिश्री डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र की पीडा शांत होय ॥

वरुणादि काथ

वरुणगोक्षुरविश्वभृतं जलं गुडयवाग्रजकल्कसमन्वितम् ।

जयति साश्मरिमूत्रविनिग्रहं विरजमप्यतिविस्तरसंचयम् ॥

अर्थ—वरुणा, गोखरू और सोंठ इन के काढ़े में गुड और जवालार मिलायके पीवे तो पथरी, मूत्रनिग्रह, मूत्रशर्करा इन को नाश करे ॥

शतावर्यादि स्वरस

वरीगोक्षुरभूधात्रीमूलानां स्वरसं पलम् । मापमेकं यवक्षारं सौरं

मापद्वयं तथा ॥ द्विगुंजं टंकणक्षारं सर्वमेकत्र मेलयेत् । पिबेत्तनु

विनाशाय मूत्राघाते सुदारुणे ॥

अर्थ—शतावर, गोखरू, भूयआवला इन की जड़ का स्वरस चार २ तोले, जवा-
खार १ मासे, सोरा २ मासे, सुहागा २ रत्ती ये सब एकत्र कर घोर दारुण
मूत्राघात के नाश करने के विषय में देवे ॥

तिलक्षारयोग

दुग्धमाक्षिकयुता सखे यदा सेविता तु तिलकोलभूतिका ।

मूत्रघातजनितव्यथा तदा दाहवत्यपि नृणां न तिष्ठति ॥

अर्थ—तिलों की राख को दूध में मिलाके उस में थोडासा सहत मिलायके पीवे तो मूत्राघात अर्थात् मूतने के समय दाह हो वह सब इस के पीने से शांत होकर मूत्र अत्यंत उतरे ॥

तालस्य मूलमपि तंदुलवारिपिष्टम् ।

मूत्रोष्णवारिशमनं सितया समेतम् ॥

अर्थ—तालवृक्ष की जड़ को चावलों के धोवन के जल में पीस उस में मिश्री मिलायके देवे तो मूत्र की उष्णता को शमन करे ॥

कर्पूरवर्ती

कर्पूररजसा युक्ता वस्त्रवर्तिः शनैः शनैः ।

मेद्रमार्गांतरे न्यस्ता मूत्राघातं व्यपोहति ॥

अर्थ—कपूर के चूर्ण को कपड़े में मिलाय बत्ती बनाय लेवे फिर उस को धीरे २ शिस्त (लिंग) में प्रवेश करे तो मूत्राघात नष्ट होय ॥

निदग्धिकास्वरस

निदग्धिकायाः स्वरसं पिबेद्वा तक्रमिश्रितम् ।

जले कुंकुमकल्कं वा सक्षौद्रमुशितं निशि ॥

अर्थ—कटेरी का स्वरस छाल के साथ पीवे अथवा रात्रि के समय जल में केशर भिगोय देवे प्रातःकाल उस मे सहत मिलायके पीवे तो मूत्राघात नष्ट होय ॥

शिलाजतुयोग

सशर्करं सशीतं च खीरं शुद्धं शिलाजतु ।

निहंति मूत्रजठरं मूत्रातीतं च देहिनाम् ॥

अर्थ—शुद्ध करा हुआ शिलाजीत, मिश्री, कपूर इन को एकत्र करके साथ तो मनुष्यों का मूत्रजठर और मूत्रातीत इन को नाश करे ॥

कर्कटीबीजादि चूर्ण

कर्कटीबीजसिंधूत्थत्रिफलासमभागिकम् ।

पीतमुष्णांभसा चूर्णं मूत्ररोधं निवारयेत् ॥

युतम् ॥ तुंगाक्षिर्या च तत्सर्वं मतिमान्परिमिश्रयेत् । ततो
मितं पित्रेत्काले यथादोषं यथाबलम् ॥ मूत्रग्रंथिं मूत्रसादमुष्ण-
वातमसृग्दरम् । विद्धिघातं निहंत्येतद्रस्तिकुंडलिमप्यलम् ॥
सर्पिरेतत्प्रयुंजाना स्त्री गर्भं लभते चिरात् । असृक्दोषे योनिदोषे
शुक्रदोषे तथैव च ॥ प्रयोक्तव्यमिदं सर्पिश्चित्रकाद्यं सदा बुधैः ॥

अर्थ—चित्रक, सारिवा, खिरेटी, नीली, छोटी सारिवा, दाख, गिलोय, पीपल, हरड, बेहडा, आवला, मुलहटी, भूयआवला इन प्रत्येक को एक २ तोले ले सब का कल्क कर उस में २५६ तोले घृत मिलाय १०२४ तोले जल तथा इतना ही दूध मिलायके घी को सिद्ध करे. जब यह शीतल हो जाये तब इस में मिश्री २५६ तोले तथा इतना ही बंशलोचन डालके मिलाय देवे. फिर दोष और बल विचारके मात्रा देवे तो मूत्रग्रंथी, मूत्रसाद, उष्णवात (सोजाक), रक्तप्रदर, मूत्राघात, वस्तिकुंडली इन को नाश करे. इस घृत को भक्षण करनेवाली स्त्री को गर्भ रहे और रुधिर का दोष, मूत्रदोष इन पर इस चित्रकादिघृत को बुद्धिवात् वैद्य देवे ॥

मूत्राघात पर पथ्य

अभ्यंजनं स्वेदविरेकवस्तिः स्वेदोवगाहोत्तरवस्तयश्च । पुरात-
ना लोहितशालयश्च मांसानि धन्वप्रभवानि मद्यम् ॥ तक्रं पयो
दध्यतिमापयूपः पुराणकूष्मांडफलं पटोलम् । उर्वारुखर्जूरक-
नारिकेलतालद्रुमाणामपि मस्तकानि । यथाबलं सर्वमिदं च
मूत्राघातातुराणां हितमादिशंति ॥

अर्थ—उबटना, स्नेहन, विरेचन, वस्तिकर्म, पसीने निकालना, जल में प्रवेश कर नहाना, पुराने लाल चाबल, सांठी चाबल, जंगलीजीवों का मांस, मद्य, छाछ, दूध, दही, उडदों का यूप, पुराना पेठा, परवल, अदरख, ताल की डंडी और गूदा, हरड, नया नारियल, घीगुवार, खिजूर, तालवृक्ष की कोपल ये सब यथा दोषानुसार मूत्राघात रोगीको पथ्य कहे हैं ॥

मूत्राघात पर अपथ्य

विरुद्धान्नानि सर्वाणि व्यायामं मार्गशीलितम् ।
रूक्षं विदाहि विष्टंभि व्यवायं वेगधारणम् ॥
करीरं वमनं चापि मूत्राघाती विवर्जयेत् ॥

अर्थ—संपूर्ण विरुद्ध पदार्थ, दंड कसरत का करना, रस्ते का बहुत चलना, रूखे, दाहकारी, विष्टंभी पदार्थों का सेवन, मैथुन करना, मलमूत्रादि वेगों का धारण करना, करील और धमन करना ये सब मूत्राघातवाले रोगी को वर्जित हैं ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे मूत्राघातस्य निदान चिकित्सा समाप्ता ।

अश्मरीरोगकर्मविपाकः ।

परस्त्रीगामी अपस्मारी भवत्यश्मरीवान् ॥

अर्थ—परस्त्री गमन करनेवाला पुरुष अपस्मार (मृगी) अथवा अश्मरी मृत्रकृच्छ्रवाला होय है ॥

शांति

स्वर्णदानं कार्यं तस्य सर्वरोगे दानमुक्तत्वात् ॥

अर्थ—संपूर्ण रोगों में सुवर्णदान कहा है इसी कारण पथरीरोगवाला सुवर्णदान करे ॥

ज्योतिःशास्त्र का मत

शूलप्रमेहपीडितमश्मर्योपहतमानसं सितो जनयति रविणा दृष्टो जीवग्रहे चंद्रजः पुरुषम् । गुरुग्रहवर्तमानरविदृष्टबुधजनिताश्मरीरोगप्रतीकारपूर्वकं बुधप्रीतये पूर्वोक्तमेव जपादिकं कुर्यात् ॥

अर्थ—जिस प्राणी के जन्म के समय गुरु के घर में बुध बैठा हो तथा सूर्य उस को देखता होय तो शूल, प्रमेह तथा पथरी रोग उत्पन्न होय वह प्राणी बुध के प्रसन्न करने को पूर्वोक्त जपादिक करे ॥

अश्मरी (पथरी) निदान

वातपित्तकफैस्तिस्त्रश्चतुर्थी शुक्रजा मता ।

प्रायः श्लेष्माश्रयाः सर्वा अश्मर्यः स्युर्यमोपमाः ॥

अर्थ—वात, पित्त, कफ इन से ३ चौथी शुक्र से अश्मरीरोग (पथरी) होय है ये पथरी विशेष करके कफाश्रित हैं, ' यमोपमा ' कहिये अच्छी चिकित्सा न होय तौ यह अवश्य प्राणनाशक है ॥

संप्राप्ति

विशोपयेद्वस्तिगतं सशुक्रं मूत्रं सपित्तं पवनः कफं वा ।

यदा तदाश्मर्युपजायते तु क्रमेण पित्तेष्विव रोचना गोः ॥

अर्थ-वायु वस्ती में प्राप्त होय, शुक्रयुक्त अथवा पित्तयुक्त मूत्र अथवा कफ को सुखावे तब उस स्थान में पथरी प्रगट होती है. जैसे गऊ के पित्त में गोरौचन जमे है उसी प्रकार वस्ती में वीर्य से पथरी होय है ॥

अश्मरी का पूर्वरूप

नैकदोषाश्रयाः सर्वा अश्मर्यः पूर्वलक्षणम् । वस्त्याध्मानं
तदासन्नदेशेषु परितोऽतिरुक् ॥ मूत्रे वस्तसंगंधत्वं मूत्रकृच्छ्र-
ज्वरोऽरुचिः ॥

अर्थ-सब अश्मरी (पथरी) एक दोष के आश्रय नहीं हैं अर्थात् अनेक दोषा-
श्रित हैं, वस्ती का फूलना, वस्ती के आसपास अत्यंत पीडा होनी, मूत्र में बकरे के
पेशाब की सी दुर्गंध आवे, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर, अरुचि ये पथरी के पूर्वरूप जानने ॥

अश्मरी के सामान्यलक्षण

सामान्यलिंगं रुद्ध नाभिसेवनीवस्तिमूर्धसु । विशीर्णधारं मूत्रं
स्यात्तया मार्गानिरोधनं ॥ तद्व्यपायात्सुखं मेहेदच्छं गोमेदको-
पमम् । तत्संक्षोभात्क्षते सास्रमायासाञ्जातिरुग्भवेत् ॥

अर्थ-नाभिसेवनी (अंडकोश के समीप का भाग) और वस्ती का अग्रभाग
इन में शूल होय, पथरी के योग से मूत्रमार्ग रुकने से मूत्र की धार फटी निकले,
पथरी मूत्रमार्ग के पास से हट जाय तब मूत्र अच्छी रीति से उतरे और स्वच्छ गोमे-
दमणी के समान होय, अश्मरी (पथरी) के योग से वस्ती में घाव होने से रुधिर
मिला मूत्र उतरे और मूतते समय जोर करने से बडा क्लेश और पीडा होय ये
सामान्य लक्षण जानना ॥

वाताश्मरी के लक्षण

तत्र वाताद्भृशं व्याप्तो दन्तान्खादति वेपते । मन्नाति मेहनं नाभिं
पीडयत्यनिशं कुणन् ॥ सानिलं मुंचति शक्नुमुद्दुर्मेहति बिन्दु-
शः । श्वावा रूक्षाश्मरी चास्य स्याच्चिता कंटकैरिव ॥

अर्थ-वायु की पथरी से रोग अत्यंत पीडा करके व्याप्त होय, दांतों को चबावे,

कांपे, लिंग को हाथ से रगड़े, नाभि को रगड़े और रातदिन दुःख से रोवे और मूत्र आने के समय पीडा होने के कारण अधोवायु को परित्याग करे, मूत्र वारंवार टपक टपक गिरे उस की पथरी का रंग नीला और रूखा होय उस के ऊपर कांटे होंय ॥

अश्मरी की सामान्यचिकित्सा

वाताश्मरीपूरूपे स्नेहपानं प्रशस्यते ॥

अर्थ—वाताश्मरी के पूरूप पर स्नेहपान करना उचित है ॥

शुंघ्यादिचूर्ण

शुंघ्याग्रिमंथपापाणभिद्रुग्वरुणगोक्षुरैः । अभयारग्वधफलैः
क्वाथं कृत्वा विचक्षणः ॥ रामठक्षारलवणैः पूर्णं दत्त्वा पिबे-
न्नरः । वाताश्मरीं हन्ति कृच्छ्रं मांघमग्नेश्च तद्रुजः ॥ कट्यूरु-
गुदमेद्रस्थं वृषणस्थं च मारुतम् ॥

अर्थ—सोंठ, अरनी, पापाणभेद, कूठ, वरना, गोखरू, हरड और अमलतास इन के काटे में हींग, जवाखार, सेंधानिमक इन का चूर्ण मिलायके पीवे तो वाताश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, मंदाग्नि इन के उपद्रव, कमर, ऊरु, गुदाद्वार, मेद्र, वृषण इन की वादी को नाश करे ॥

यवादिघृत

यवकोलकुलित्थानि कतकस्य फलानि च । चतुर्थाशकपायेण
पाच्यमेतच्छृतं घृतम् ॥ शमयेद्वातसंभूतामश्मरीं क्षिप्रमेव च ॥

अर्थ—जो, बेर, कुलथी और निर्मली के बीज इन के चतुर्थाश काटे में घृत डालके सिद्ध करे यह वातोत्पन्न पथरी को नाश करे ॥

वीरतर्वादिक्वाथ

वीरतर्वादिकः क्वाथः पूर्वोक्तो वातजाश्मरीम् ।

सद्यो हन्ति यवक्षारगुडयुक्तो न संशयः ॥

अर्थ—वीरतर्वादिकाडा, जवाखार, गुड इन को मिलायके पीवे तो तत्काल वात-पथरी को नाश करे ॥

अन्न

क्षारान्यवागूं पेयांश्च कपायाणि पयांसि च ।

भोजनार्थे प्रयोज्यानि वाताश्मरिरुजां नृणाम् ॥

अर्थ—खार, कांजी, पेया, काढा, दूध ये वाताश्मरीवाले रोगियों को भोजन में देवे ॥

वरुणमूलकाथ

काथो वरुणमूलस्य तस्य कल्केन संयुतम् ।

शिशुमूलस्य च काथः कटुष्णश्चाश्मरीं जयेत् ॥

अर्थ—वरुण की मूल का काढा तथा उसी जड़ का कल्क मिलायके पीवे अथवा अमलतास की जड़ का काढा किंचिन्मात्र गरम करके पीवे तो पथरी को नष्ट करे ॥

पित्ताश्मरी

पित्तेन दह्यते वस्तिः पच्यमान इवोष्मवान् ।

भल्लातकास्थिसंस्थाना रक्ता पीता सिताश्मरी ॥

अर्थ—पित्त की पथरी से रोगी के बस्ती में दाह होय और खार से जैसा दाह होय ऐसी वेदना होय, बस्ती के ऊपर हाथ धरने से गरम मालूम होय और भिलाए की मींगी के समान होय, लाल, पीली, काली होय ॥

पापाणभेदिकाथ

पीत्वा पापाणभित्काथं सशिलाजतुशर्करम् ।

पित्ताश्मरीं निहंत्याशु वृक्षमिद्राशनिर्यथा ॥

अर्थ—पापाणभेद के काढे में शिलाजीत, मिश्री मिलायके पीवे तो पित्ताश्मरी को दूर करे ॥

कफ की पथरी का लक्षण

वस्तिर्निस्तुद्यत इव श्लेष्मणा शीतलो गुरुः ।

अश्मरी महती श्लक्ष्णमधुवर्णाथवा सिता ॥

अर्थ—कफ की पथरी से बस्ती में नोचने की सी पीडा होय, शीतलपना होय और पथरी बड़ी गुरगी के अंडे समान, स्वच्छ और मद्य (दारू) के रंग की सी अर्थात् कुछ पीरीसी होय. यह कफ की पथरी बहुधा बालकों के होती है ॥

इस का बालकों के होना

एता भवंति बालानां तेषामेव च भूयसा ।

आश्रयोपचयाल्पत्वाद् ग्रहणाहरणे सुखाः ॥

अर्थ—पूर्वोक्त त्रिदोषजा अश्मरी (पथरी) विशेष करके बालकों के होय है कारण उन का भारी, मीठा, शीतल, चिकना आहार है और उन की बस्ती छोटी,

तया पुष्टता थोड़ी होय है इसी से वैद्यो को उसका चीरना, फाड़ना, काटना, निका-
लना कठिन नहीं होय सो (सुश्रुत) ने भी कहा है ॥

शिशुक्वाथ

क्वाथो निपीतः सक्षारः शिशुत्वग्वरुणत्वचोः ।

कफजामश्मरीं हन्ति शक्राशनिरिव द्रुमम् ॥

अर्थ—सहजने की छाल और वरना की छाल इन के काढ़े में जवाहार मिला-
यके पीवे तो कफ की पथरी को नाश करे जैसे इन्द्र की अशनि (वज्र) वृक्ष
को नाश करे ॥

शुक्राश्मरीनिदान

शुक्राश्मरी तु महतां जायते शुक्रधारणात् ।

स्थानाद्ध्युतममुक्तं हि मुष्कयोरन्तरेऽनिलः ॥

शोषयत्युपसंहृत्य शुक्रं तच्छुष्कमश्मरी ॥

अर्थ—शुक्राश्मरी यह शुक्र (वीर्य) के रोकने से बड़े मनुष्यों को ही होती है।
मैथुन करन के समय अपने स्थान से चलायमान हो गया हुआ वीर्य उस समय मैथुन
न करे तब शुक्र (वीर्य) बाहर नहीं निकले, भीतर ही रहे तब वायु उस शुक्र को
छाकर मुखा देता है उसी को शुक्रजाश्मरी कहते हैं ॥

शुक्राश्मरी के कार्य

वस्तिरुक्चृच्छ्रमूत्रत्वं मुष्कश्वयथुकारिणी ।

तस्यामुत्पन्नमात्रायां शुक्रमेति विलीयते ॥

अर्थ—इस करके अंडकोपो में सृजन, बलि में पीडा और मूत्ररुच्छ्रता होती है
और शुक्राश्मरी होने पर उस की जगह घसने से वह शुक्र में ही मिळ जाती है ॥

शुक्राश्मरी की सामान्यचिकित्सा

शुक्राश्मर्यां तु सामान्यो विधिरश्मरिनाशनः ॥

अर्थ—शुक्राश्मरी पर अश्मरीनाशक सामान्य यत्र करने चाहिये ॥

यवक्षारयोग

यवक्षारगुडोन्मिश्रं पिबेत्पुष्पफलोद्भवम् ।

रसं मूत्रविचंध्रं शुक्राश्मरिविनाशनम् ॥

अर्थ—जवाहार, गुड इन को मिलाय मूत्ररोधनाशक पुष्प का अथवा फल का
रस पीवे तो शुक्राश्मरी नष्ट होय ॥

कुटजयोग

पिवतः कुटजं दध्ना पथ्यमन्नं च खादतः ।

निपतत्यचिरादस्य निश्चितं मेदूशर्करा ॥

अर्थ—कूड़े की छाल को दही में मिलायकर पीनेवाले और पथ्य के करनेवाले के मेदू (लिंग) से शर्करा निश्चय बहुत जल्दी गिर जावे ॥

शर्कराश्मरीनिदान

पीडिते त्वक्काशस्मिन्नश्मर्येव च शर्करा। अणुशो वायुनाभिन्ना
सा तस्मिन्ननुलोमगे ॥ निरेति सह मूत्रेण प्रतिलोमे विवध्यते ।
मूत्रस्रोतःप्रवृत्ता सासक्ता कुर्यादुपद्रवान् ॥ दौर्बल्यं सदनं
कार्श्यं कुक्षिशूलमथारुचिम् । पांडुत्वमुष्णवातं च तृष्णां हृत्पी-
डनं वमिम् ॥

अर्थ—शुक्राश्मरी की आदि में लिंग और अंडकोप, पेडू इन में पीडा होती है। वीर्य के नाश होने के कारण पयरी की नाई शर्करा उत्पन्न होती है। वायु बस्ती में अनुलोमगति से प्रवेश होय तौ वह शर्करा वायु कर छोटे छोटे इकट्टी होकर मूत्र के साथ बाहर निकले और यदि वायु प्रतिलोम होय तौ मूत्रमार्ग को रोक दे, यदि मूत्रमार्ग में प्राप्त होय तौ मूत्र के बहनेवाले छिद्रों को रोक दे, फिर इतने उपद्रवों को प्रगट करे दुर्बलता, ग्लानि, कृशता, कृत्त में शूल, अरुचि, पाण्डुरोग, उष्णवात, प्यास, हृदय में पीडा, वमन ये सब उपद्रव होंय ॥

शर्करा के असाध्य लक्षण

प्रशूननाभिवृषणं वद्धमूत्रं रुजान्वितम् ।

अश्मरी क्षपयत्याशु शर्करा सिकतान्विता ॥

अर्थ—जिस की नाभि और वृषण सूज जाय, मूत्र उत्तरे नहीं, पीडा होय ऐसे पुरुष के शर्करा और सिकतायुक्त पयरी प्राणनाश करे ॥

पापाणभेदरस

शूद्धसूतं द्विधा गंधं श्वेतपौनर्नवद्रवैः । मर्दयित्वा दिनं खल्वे
रुद्धाघो भूधरे पचेत् ॥ पापाणभेदसंयुक्तं पिष्ट्वा चूर्णं प्रकल्पयेत् ।
भक्षयेदश्मरीं हंति रसः पापाणभेदकः ॥

अर्थ—शुद्ध करा हुआ पारा १ भाग, गंधक २ भाग दोनों को सपेद पुनर्नवाके रस में १ दिन खरल कर भूधरयंत्र में पक करे फिर इस की बराबर पाषाणभेद का चूर्ण मिलाय एकत्र खरल करे. फिर शक्तिप्रमाण भक्षण करे तो पथरी को नाश करे इस को पाषाणभेदी रस कहते हैं ॥

त्रिविक्रमरस

ताम्रभस्म त्वजाक्षीरे पाच्यं तुल्ये घृते पचेत् । तत्ताम्रं शुद्ध-
सूतं च गंधकं च समं समम् ॥ निर्गुंडयुत्थद्रवैर्मद्यं दिनं तद्गो-
लमाहरेत् । यामैकं वालुकायंत्रे पाच्यं योज्यं द्विगुंजकम् ॥
बीजपूरस्य मूलं तु सजलं चानुपाययेत् । रसस्त्रिविक्रमो नाम्ना
सिकता चाश्मरीप्रणुत् ॥

अर्थ—ताम्रभस्म को बकरी के दूध में डालके और घी मिलायके पक करे. उस तामे की बराबर गंधक और पारा ये निर्गुंडी के रस में १ प्रहर खरल कर वालु-
कायंत्र में पचावे फिर इस में से २ रत्ती की मात्रा देवे और बिजोरे की जड का का-
दा अनुपान में देवे तो यह त्रिविक्रमरस संपूण शर्करा और पथरी इन का
नाश करे ॥

रसभस्मयोग

विदारीगोक्षुरुर्यष्टिकेशरं च समं भवेत् । तं कपायं पित्रे-
त्क्षौद्रे रसभस्मयुतं पुनः ॥ मूत्रकृच्छ्राद्विमुच्येत साध्यासाध्या-
न्न संशयः ॥

अर्थ—विदारीकंद, गोखरू, मुलहठी, नागकेशर इन को समान भाग लेके काढा
करे उस में सहत तथा पारे की भस्म मिलायके पीवे तो साध्य अथवा असाध्य पे-
सा मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

लघुलोकेश्वररस

मृतं रसस्य भागैकं चत्वारः शुद्धगंधकम् । पिष्ट्वा वराटिकां
तेन रसपादं च टंकणम् ॥ क्षीरे पिष्ट्वा मुखं लिप्त्वा तासां ताश्च
धमेत्पुटे । स्वांगशीतं विचूर्ण्यथ लघुलोकेश्वरो रसः ॥ सिता-
सह इदं खादेन्मूत्रकृच्छहरं परम् ॥

अर्थ—पारे की भस्म १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग इन को खरल कर उस कजली को पीली कौडियों में भरे उन के मुख को तीन मासे सुहागे को दूध में पीसके लगाय देवे. फिर इन कौडियों को किसी मिट्टी की हंडिया में बंद कर मुख को कप-डमिट्टी से बंद कर देवे. फिर इस को गजपुट में रखके फूंक देय जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकालके कौडियों को पीस लेय. इस को लघुलोकेश्वर रस कहते है. इस को खांड के साथ सेवन करे तो मूत्रकृच्छ्र को नष्ट करे ॥

गंधर्वादि कल्क

गंधर्वहस्तबृहतीव्याघ्रीगोक्षुरकेक्षुकात् ।

मूलकल्कं पिवेद्भ्रा मधुरेणाश्मभेदनम् ॥

अर्थ—सपेद अंड, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, काली ईख इन की जड को पीठे दही में पीसके पीवे तो अश्मरी को तोड डाले ॥

तिलादिक्षार

तिलापामार्गकदलीपलाशयवसंभवः ।

क्षारः पेयो विमूत्रेण शर्करास्वश्मरीषु च ॥

अर्थ—तिल, आंगा, केला, पलास (टाक), जौ इन का खार भेड के मूत्र के साथ पीवे तो मूत्राश्मरी, मूत्रशर्करा इन पर प्रशस्त है ॥

शिलाजतुयोग

अश्मर्यां चाश्मरीकृच्छ्रे शिलाजतु समाक्षिकम् ।

यवक्षारं गोक्षुरं च खादेद्भ्रा चाश्मरीहरम् ॥

अर्थ—अश्मरी और अश्मरीयुक्त मूत्रकृच्छ्र इन में सहित भिलायके शिलाजित सेवन करे अथवा जवाखार और गोखरू साथ ॥

हिंग्वादि योग

हिंग्वेलाक्षीरसर्पिस्तु मूत्रशुक्रामयापहम् ॥

अर्थ—हींग, इलायची, दूध, घी इन को एकत्र करके पीवे तो मूत्ररोग, शुक्ररोग इन को नाश करे ॥

शृंगवेरादि कल्क

शृंगवेरयवक्षारपथ्याकालीयकांजनम् ।

आजं दधि भिनत्त्युग्रामश्मरीमाशु पातनम् ॥

अर्थ—अदरख, जवासार, हरड, दारुहलदी, काला सहजना इन को चकरी के दूध में पीसके पीवे तो शुक्राश्मरी फूटकर निकल जावे ॥

आनंदभैरवीवटी

तिलापामार्गकांडे च कारवल्या यवस्य च । पलाशकाष्टसंयु-
क्तं सर्वं तुल्यं दहेत्पुटे ॥ तन्निष्कैकमजामूत्रे वटीं चानंदभैरवी-
म् । पाययेदश्मरीं हंति सप्तवारान्न संशयः ॥

अर्थ—तिल, आंगा, करेला, जो इन की डंडी, पलाश की लकड़ी ये सब समा-
न भाग ले सब को मटके में भरके पुट देकर जलाय ले फिर इस में से चार मासे
राख को चकरी के मूत्र में पीस गोली करके खाय इस प्रकार सात बार खाय
तो पथरी का पाचन होकर नाश होय इस में संदेह नहीं है ॥

मंजिष्ठादि चूर्ण

मंजिष्ठा त्रपुसं वीजं जीरकः शतपुष्पिका । धात्रीफलं वदरकं
गंधकं च मनःशिला ॥ एतेषां समभागानां चूर्णं टंकमितं
नरः । भक्षयेन्मधुना सार्धं पतेत्तस्याश्मरी ध्रुवम् ॥

अर्थ—मंजिठ, खीरा के बीज, जीरा, सांफ, आवला, बेर, गंधक, मनसिल ये
समान भाग लेकर चूर्ण करे इस में से १ तोले के प्रमाण ले सड़त में मिलापके सेव-
न करे तो उस की पथरी अवश्य गिर जावे ॥

त्रिकंटकादि चूर्ण

त्रिकंटकस्य बीजानां चूर्णं माक्षिकसंयुतम् ।
आविक्षीरेण सप्ताहं पिवेदश्मरिभेदनम् ॥

अर्थ—गोखरू के चूर्ण को सहत्पुक्त भेद के दूध में मिलापके ७ दिन पीवे तो
पथरी के टुकड़े २ होकर गिर जावें ॥

केशरयोग

पुराणाज्येन संपिष्टं पीतं सम्यग्दिनत्रयम् ।
कुंकुमं नाशयत्याशु देहिनां मेदूशर्कराः ॥

अर्थ—पुराने घी में केशर को रारल कर तीन दिन सेवन करे तो मेदूशर्करा
नष्ट होय ॥

पापाणभेदीरस

आदौ व्यथा स्यात्कटिकुक्षिदेशे ततो निरोधाज्ज्वलितं च सूत्रम् ।
इत्यश्मरीलक्ष्मरसोत्र युक्तः पापाणभेदी स निरूप्यतेथ ॥

अर्थ-प्रथम कमर, कूख इन में पीडा, फिर रोध होय इस कारण सूत्र गरम होता है ये पथरी के चिन्ह कहे. इस वास्ते पथरी पर योग्य पापाणभेदी रस को पीछे लिख आये हैं वह देवे तो यह रोग दूर होय ॥

तिलपुष्पक्षारयोग

क्षारो निपीतस्तिलपुष्पजातः समाक्षिकः क्षीरयुतस्त्रिरात्रम् ।

हंत्यश्मरीं सिंधुविमिश्रितं वा निपीयमानं रुचकं प्रयत्नात् ॥

अर्थ-तिलों के फूलों का क्षार, सहत, दूध इन को एकत्र कर तीन दिन पीवे अथवा सेंधानिमक और बिजोरे के रस का सेवन करे तो पथरी दूर होय ॥

गोपालकर्कटीमूलयोग

गोपालकर्कटीमूलं पिष्टं पर्युषितांभसा ।

पीयमानं त्रिरात्रेण पातयत्यश्मरीं हठात् ॥

अर्थ-कचरिया की जड को वास्ते पानी में पीसके पीवे तो तीन ही दिन में पथरी गिर जावे ॥

अर्कपुष्पीकल्क

गव्येन पिष्ट्वा पयसार्कपुष्पी निपीयमाना त्रिदिनं प्रभाते ।

विदार्य धीर्येण निजेन तीव्रामप्यश्मरीं या कुरुते च दाहम् ॥

अर्थ-अर्कपुष्पी को गौ के दूध में पीसके प्रातःकाल तीन दिन पीवे तो अपनी सामर्थ्य से दाहयुक्त तीव्र पथरी के टुकड़े २ करके नाश करे ॥

शतावरीमूलरस

शतावरीमूलरसो गव्येन पयसा समः ।

पीतो निपातयत्याशु ह्यश्मरीं चिरजामपि ॥

अर्थ-शतावर का रस और इस के बराबर गौ का दूध इन को मिलायके पीवे तो बहुत दिन की भी पथरी को तत्काल नाश करे ॥

वरुणादि काथ

वरुणस्य त्वचं श्रेष्ठां शुंठीगोक्षुरसंयुताम् । यवक्षारगुडं दत्त्वा काथं

कृत्वा पिवेद्विमम् ॥ अश्मरीशर्करामूत्रकृच्छ्राघातरुजापहम् ॥

अर्थ—वरना की छाल, सोंठ, गोखरू, जवाखार, गुड इन के काटे को शीतल करके देवे तो मूत्राश्मरी, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात इन सब रोगों को नाश करे ॥

एलामधुकगोकंठरेणुकैरंडवासकः। कृष्णाश्मभेदसहिताः काथ

एपां सुसाधितः॥ शिलाजतुयुतः पेयः शर्कराश्मरिकृच्छ्रहा ॥

अर्थ—इलायची १, मुलहठी २, गोखरू ३, रेणुकबीज ४, अंड की जड ५, अडूसा ६, पीपल ७, पापाणभेद ८ इन आठ औषधों का काटा करके उस में शिलाजीत मिलायके पीवे तो शर्करा, पथरी और मूत्रकृच्छ्र इन को दूर करे ॥

काथ

वरुणत्वक्कपायस्तु पीतौ गुडसमन्वितः ।

अश्मरीं पातयत्याशु वस्तिशूलं च नाशयेत् ॥

अर्थ—वरना की छाल के काटे में गुड डालके पीवे तो अश्मरी (पथरी), वस्तिशूल (मसाने का दर्द) इन को नाश करे ॥

शिशुमूलकाथ

काथश्च शिशुमूलोत्थः कटूष्णोश्मरिपातनः ।

क्षीरान्नभुग्वाह्निशिखामूलं वा तंदुलांबुना ॥

अर्थ—सहजने की जड का काटा चरपरा उष्ण और पथरी को गेरनेवाला है इस वास्ते इस को पीवे अथवा गठोना की जड चांबलों को धोवन में पीसके पीवे और दूधभात भोजन करे तो पथरी नष्ट होय ॥

तुपकपाय

यः पिवेद्रजनीं सम्यक् सगुडां तुपवारिणा ।

तस्याशु चिररूढापि यात्यस्तं मेदूशर्करा ॥

अर्थ—सोंठ के काटे में हलदी और गुड डालके पीवे तो उस की बहुत दिनों की शर्करा लिंग से गिर जावे ॥

शुंठ्यादि काथ

शुंठ्यग्निमंथापामार्गशिशुवरुणगोक्षुरैः ।

अभयारग्वधफलैः काथं कुर्याद्विचक्षणः ॥

रामठक्षारलवणचूर्णं दत्त्वा पिवेत्रः ।

अश्मरीमूत्रकृच्छ्रघ्नं दीपनं पाचनं परम् ॥

अर्थ—सोंठ, अरनी, चिरचिरा, सहजना, वरना, गोखरू, हरड, अमलतास का गूदा इन का काढा कर बुद्धिवान् वैद्य मूत्राश्मरी, मूत्रकृच्छ्र इन पर हींग, जवाखार, संधानिमक डालके पिछावे तो यह अत्यंत दीपन पाचन है ॥

आकलकादि काथ

आकल्लगोक्षुरजटातुलसीशिलाभिरेरंडमूलमगधामधुकैः प्रयु-
क्तः। तक्राह्वमूलसुरसासुरपुष्पशुंठीकाथो निहंति बहुलाप्रतिवा-
पितोयम्॥ सप्ताहमेव पिवतां नियमेन पुंसां घोराश्मरीमतिरुजं
सहशर्करां च । आवीपयो मधुविमिश्रितमाशु तद्वत् चूर्णं त्रिवृ-
त्कुटजबीजभवं वदंति ॥

अर्थ—अकरकरा, गोखरू की जड, तुलसी का रस, पापाणभेद, अंड की जड, पीपल, मुलहठी, कैथ की जड, निर्गुंडी, लौंग, सोंठ इन औषधों का काढा करके इस में इलायची का चूर्ण डालके पीवे इस प्रकार सात दिन करने से घोर पीडाका-
रक पयरी और मूत्र में जो रेतैसी निकले वह दूर हंवे उसी प्रकार भेद का दूध सहत मिलायके देवे अथवा निसोथ, इन्द्रजो इन का चूर्ण करके दूध अथवा चावलों के धोवन से देवे ॥

पापाणभेदादि काथ

पापाणभिद्वरुणगोक्षुरकोरूवूकक्षुद्राद्वयं क्षुरकमूलकृतः कपायः ।

दध्ना युतो जयति मूत्रविबंधशुक्रमुग्राश्मरीमपि च शर्करया समेतम् ॥

अर्थ—पापाणभेद, वरना, गोखरू, अंड, कटेरी, बडी कटेरी, तालमखाने इन का काढा दही मिलायके पीवे तो मूत्रविबंध, शुक्राश्मरी, शर्करा इन को नाश करे ॥

कुलित्थकाथ

पलद्वयमिते कोष्णे कुलित्थस्य श्रुते त्वपः । लवणं शरपुंखेन
सार्धं मापद्वयोन्मितम् ॥ क्षिप्त्वा पिवेत्पतेत्तस्य मूत्रेण सम-
श्मरी । शर्करा सिकता चापि दृष्टमेतदनेकथा ॥

अर्थ—कुलथी का काढा ८ तोले, सरफोके का चूर्ण और संधानिमक २ मासे डालके पीवे तो मूत्र के साथ गिरनेवाली पयरीशर्करा और सिकता निकल जावे ॥

कूष्मांडस्वरस

कूष्मांडकरसं हिंगुयवक्षारयुतं पिबेत् ।

वस्तौ मेद्रे शूलयुक्ते चाश्मरीं शर्करां जयेत् ॥

अर्थ-पेठे का रस, हिंग, जवाखार इन को एकत्र करके पीवे तो वस्ति और शिश्र इन का शूल, पथरी, शर्करा इन को जीते ॥

वरुणादि घृत

वरुणस्य तुलां क्षुण्णां जलद्रोणे विपाचयेत् । पादशेषं परिश्रा-
प्य घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ वारुणी कदली विल्वं तृणजं पंच-
मूलकम् । अमृता त्वश्मजं देयं बीजं च त्रपुसस्य च ॥ शत-
पर्वातिलक्षारः पलाशक्षार एव च । यूथिकायाश्च मूलानि कर्पू-
कानि समर्पयेत् ॥ अस्य मात्रां पिबेजंतुर्देशकालाद्यपेक्षया ।
जीर्णे चानुपिबेत्सर्वमजीर्णे मस्तुमेव च ॥ अश्मरीं शर्करां चैव
मूत्रकृच्छ्रं च नाशयेत् ॥

अर्थ-बरना की छाल ४०० तोले को कूट १०२४ तोले जल में औटावे। जब चतुर्याश जल रहे तब उतारके जल को छान लेवे। इस में ६४ तोले घी डालके औटावे जब घृतमात्र शेष रहे तब उतारके इस में वारुणी, केला, बेल, कुश, काश, ईख, रामशर, मूँज, गिलोय, शिलाजीत, खीरे के बीज, काली दूब, तिलों का खार, पलास का खार, जुही ये सब औषध एक २ तोले लेके उस में डाल देवे। फिर देश काल को विचारके और बलाबल विचार इस की मात्रा खाय जब औषध पच जावे तब जो इच्छा होय सो भोजन पान करे और न पचे तो दही का जल पीवे यह औषध पथरी, मूत्रकृच्छ्र, शर्करा इन को नाश करे ॥

पापाणभेदपाक

अश्मभेदात्प्रस्थमेकं चूर्णितं वस्त्रगालितम् । गव्ये दुग्धाढके
क्षिप्त्वा पाचयेन्मृदुवह्निना ॥ दर्व्या संघट्टयेत्तावद्यावदनतरं
भवेत् । एला लवंगमगधा यष्टी मध्वमृताभया ॥ कौंती श्वदं-
द्रा वृषकं शरपुंखा पुनर्नवा । यावशूकोनिलप्रश्च मांसिसतां-
गुलोत्पलम् ॥ वंगं लोहं तथाभ्रं च कर्पूरं पर्पटं सठी । पत्रेभ-

केशरं त्वक्च संशुद्धं च शिलाजतु ॥ पृथगर्धपलं चूर्णं चूर्णिता
सितशर्करा । सार्धप्रस्थमिता ग्राह्या दुग्धे लेहत्वतां गते ॥ सर्वं
तन्निक्षिपेत्तत्र स्वांगशीतलतां नयेत् । मधुनः प्रस्थकं दद्यात्स्नि-
ग्धभाण्डे विनिक्षिपेत् ॥ कर्पाधं भक्षयेत्प्रातस्तीक्ष्णं तैलादिकं
त्यजेत् । पंचाश्मरीभेदनं स्यान्मूत्रकृच्छ्रं खुडं तथा ॥ मूत्रा-
घातान्प्रमेहांश्च नाशयेन्मधुमेहजान् । अधोगं रक्तपित्तं च व-
स्तिकुक्षिगदं तथा ॥ तीव्राश्मरीपरीतानां विशेषेण हितं हि
तत् । यत् ब्रह्मणा विरचितं च्यवनाय निवेदितम् ॥

अर्थ—पापाणभेद ६४ तोले लेकर कपडछान चूर्ण कर लेवे. फिर इस को २५६
तोले गौ के दूध में डाल मंदाग्नि से परिपक्व करे और कलछी से टारता २ गाढा
करे फिर इलायची, लौंग, पीपल, मुलहठी, गिलोय, हरड, रेणुकबीज, गोखरू,
अहूस, सरफोका, पुनर्नवा, जवाखार, बहेडा, जटामांसी, सप्तांगुल, कमल, वंगभस्म,
लोहभस्म, अभ्रकभस्म, कपूर, कचूर, पत्रज, नागकेशर, दालचीनी, शिलाजीत ये
प्रत्येक औषध दो दो तोले लेकर चूर्ण करे. मिश्री ९६ तोले. सब का चूर्ण कर दूध
के गाढे होने पर सब को डाल दे और मिलायके एक जीव कर देय. फिर उतार
शीतल होनेपर ६४ तोले सहित मिलायके चिकने बासन में भरके धर रखे प्रातः-
फाल इन में से आधा तोला नित्य सेवन करे. इस पर तीखे पदार्थ और तेज न
प्राय तो पांच प्रकार की पथरी, मूत्रकृच्छ्र, खुड, मूत्राघात, प्रमेह, मधुमेह, अधो-
रक्त, वस्तिगत, कुक्षिगत पित्त इन का नाशक, अत्यंत तीव्र पथरी करके पीडित
मनुष्यों को विशेष करके हितकारी है. जो ब्रह्मदेव ने रची और च्यवन ऋषि को
कही वही यह औषध है ॥

वरुणादि गुड

नो जग्धं कृमिभिर्घनं सुतरुणं स्निग्धं शुचिस्थानजं घस्त्रे पुण्य-
निरीक्षिते वरुणकं छित्त्वा तुलां ग्राहयेत् । संग्राह्यासु चतुर्गुणासु
विपचेत्पादावशेषं जलं तत्तुल्येन गुडेन वै दृढतरे भाण्डे पचेत्त-
त्पुनः ॥ ज्ञात्यैवं घनतां गुडे परिणते प्रत्येकमेपां पलं शुंध्यौर्वा-
रुकबीजगोधुरकणापापाणभिच्छीतला । कूप्मांडं खलु साक्षत्री-
जकुनटीवास्तूकसौर्भाजनद्राक्षैलागिरिजाभयाकृमिहृतां चूर्णी-

कृतानां क्षिपेत् ॥ पथ्याशी प्रतिवासरं गुडमसुं योग्यप्रमाणं
नरः खादेत्तस्य समस्तदोषजनिताश्मर्यः पतंति द्रुतम् ॥

अर्थ—जो कीड़ो ने न खाया हो, नवीन, मोटा, रसयुक्त, पवित्रस्थान का, उत्तम दिन देखके लाया हुआ वरना का काष्ठ अथवा जड़ १०० तोले ले उस को चौ-गुने जल में चढायके औटावे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान ले फिर इस काढे के समान गुड डालके फिर पाक करे जब गाढा हो जावे तब सोंठ, सीरे के बीज, गोखरू, पीपल, पापाणभेद, पद्मास, पेठा, बहेडा, मनसिल, वयुआ, सहजना, दास, इलायची, छोटा पापाणभेद, हरड, वायविडग इन का चूर्ण प्रत्येक चार २ तोले उस में डालके बलाबल विचारके नित्य भक्षण करे इस प्रकार करने से उस प्राणी की सर्व दोषजन्य पथरी शीघ्र गिर जावे ॥

अश्मरी (पथरी) पर पथ्य

कुलित्था मुद्गगोधूमा जीर्णशालियवा हिताः । धन्वामिपं तंदु-
लीयं जीर्णं कूष्मांडकं फलम् ॥ आर्द्रकं यावशूकश्च पथ्यमश्म-
रिरोगिणाम् ॥

अर्थ—कुलथी, मूंग, गेरू, पुराने शाली चावल, सचु, निर्जल देश के जीवों का मांस, तंदुलीय, पुराना पेठा, अदरस, जवाहार इतने पदार्थ अश्मरीरोगवाले को पथ्यकारक है ॥

पथ्य

वस्तिर्विरेको वमनं च लंघनं स्वेदोऽवगाहोऽपि च वारिसेचनम् ।
यवा कुलित्थाश्च पुराणशालयो मद्यानि धन्वांडजसंभवा रसाः ॥
पुराणकूष्मांडफलं कसेरुकं गोकंटको वारुणशाकमार्द्रकम् ।
पापाणभेदो यवशूकरेणवश्छिन्ना समाकर्षणमश्मनामपि ॥ ए-
तानि सर्वाणि भवंति सर्वदा मुदेऽश्मरीरोगनिपीडितात्मनाम् ॥

अर्थ—वस्तिकर्म. जुष्टाय, वमन, लंघन, पसीने निकालना, जल में घसके नहाना, जल पीना, जों, कुलथी, पुराने शाली चावल, मद्य, जंगली जीवों के अंडों का सोरु-आ, पुराना पेठा, कसेरू, गोखरू, जल में उत्पन्न होनेवाले साग, अदरस, पापाण-भेद, जों के आगे के कांटे, रेणुका, गिलोप, पथरी को कुशकारी कर्म ये सब पदार्थ पथरीरोगपीडित मनुष्यों को सदैव आनंद के देनेवाले हैं ॥

अश्मरी पर अपथ्य

मूत्रस्य शुक्रस्य च वेगमम्लं विष्टंभि रूक्षं गुरु चान्नपानम् ।

विरुद्धपानाशनमश्मरीमान् विवर्जयेत्संततमप्रमत्तः ॥

अर्थ—मूत्र और शुक्र के उपस्थित वेग को रोकना, खटाई, विष्टंभी, रूखे और भारी ऐसे अन्न, जल का सेवन, विरुद्ध पान और भोजन इन सब को पथरीरोगवाला सावधानी के साथ परित्याग कर देवे ॥

इति श्रीवृहन्नियन्त्ररत्नाकरे अश्मरीरोगनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

प्रमेहरोगकर्मविपाकः ।

चांडालीगमनात्सर्वप्रमेहव्याधिमान् भवेत् । क्षुत्पिपासातुरश्चैव

जायते तस्य निष्कृतिः ॥ चांद्रायणत्रयं कुर्याद्यवमध्यं तथापरे ।

जुहुयात्सर्पिषा चैतान् जपेन्मंत्रान्समाहितः ॥ इदमापः प्रवहत

इति द्वयोर्मेधातिथिर्ऋषिः ॥

अर्थ—चांडाली (भंगिन) के साथ गमन करने से प्रमेह का रोग होता है अथवा क्षुधा (भूख), तृषा (प्यास) इन से आतुर होवे. उस का प्रायश्चित्त कहते हैं. उस को यवमध्य चांद्रायण तीन करने तथा दूसरे दिन “ इदमापः प्रवहत ” इस का मेधातिथि ऋषि इत्यादि अंगन्यास करन्यास करके जप करे और इसी मंत्र से घृत का होम करे ॥

सशूलप्रमेह का कर्मविपाक

तिर्यग्गामी सशूलेन प्रमेहेन युतो भवेत् ।

कुर्यात्सांतपनादीनि प्रायश्चित्तं यथाविधि ॥

अर्थ—तिर्यग्गामी अर्थात् गैया, बकरी, घोड़ी इत्यादिक से जो मैथुन करता है उस पुरुष के पीढायुक्त प्रमेह का रोग होता है. उस को प्रायश्चित्त यह है कि वह सांतपन व्रत करे ॥

वातप्रमेहकर्मविपाक

पर्वच्यवायो मनुजः कन्यागामी तथैव च ।

वातप्रमेहयुक्तः स्यात्कुर्याच्चांद्रायणव्रतम् ॥

अर्थ—अमावास्या, पूर्णमासी आदि पर्व तिथियों में जो स्त्रीगमन करता है अथवा कन्या गमन करे वो वातप्रमेहवाला होता है उस को चांद्रायणव्रत तीन करने चाहिये॥

मधुमेह का कर्मविपाक

मधुमेही मातृगामी सततं जायते नरः । पितृभार्याभिगामी च
जलमेही नराधमः ॥ यो गच्छेद्भगिनीं नित्यमिक्षुमेही भवेन्नरः।
प्रायश्चित्तं क्रमादत्र पद्वर्षाण्यथ पंच च ॥ इत्यब्दमित्याचरेत्स-
म्यक् ततो रोगात्प्रमुच्यते ॥

अर्थ—मातृगमन अथवा सीतेली माता से गमन करे तो जलमेही होय. उस का क्रम से प्रायश्चित्त कहते हैं. जो प्राणी भगनी (वहन) से गमन करता है वह इक्षुप्रमेही होवे वह छः वर्ष अथवा पांच वर्ष अथवा तीन वर्ष चांद्रायणादि व्रत करे तो प्रमेहरोग दूर होय ॥

प्रमेहनिदान

आस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनि ग्राम्योदकानूपरसाः पर्याप्ति।
नवान्नपानं गुडवैकृतं च प्रमेहहेतुः कफकृच्च सर्वम् ॥

अर्थ—बैठने के सुप्त से, निद्रा के सुप्त से अथवा स्वप्नसुप्त कहिये स्वप्न में स्त्रीप्र-
संग आदि सुप्त से, दही, ग्राम के संचारी जीव भेड बकरी आदि, जल के संचारी
जीव मच्छी कछुआ आदि, अनूप (जलसमीप) के रहनेवाले जीव इंस चकवा आदि
ऐसे प्राणियों के मांसरस, दूध, नया अन्न और नया जल तथा शर्करा गुड आदि के
पदार्थ अथवा गुड के विकार ये और जितने कफकारक पदार्थ हैं सो सब प्रमेह
होने के कारण हैं ॥

कफादि प्रमेहों की संप्राप्ति

मेदश्च मांसं च शरीरजं च क्लेदं कफो यस्तिगतः प्रदूष्य ।
करोति मेहान्समुदीर्णमुष्णैस्तानेव पित्तं परिदूष्य चापि ॥ क्षी-
णेषु दोषेष्ववकृत्य धातून्संदूष्य मेहान्कुरुतेऽनिलश्च ॥

अर्थ—यस्ति (मूत्रस्यान) गत कफ, मेद, मांस और शरीर के क्लेद को बिगाड
कर प्रमेह को उत्पन्न करे है उसी प्रकार गरम पदार्थ से पित्त दुषित होकर पूर्वोक्त
मेद मांस को बिगाडकर प्रमेह को उत्पन्न करे और वायु यद् दोष क्षीण होने से धातु
(यसा मज्जादिक) को ईचकर (यस्ती के मुगपर टायकर) प्रमेह को प्रगट करे॥

कंफादिजन्य प्रमेहों का साध्यासाध्यत्व

साध्याः कफोत्था दश पित्तजाः पट् याप्या न साध्या पवना-
च्चतुष्काः । समक्रियत्वाद्विषमक्रियत्वान्महाक्रियत्वाच्च यथा-
क्रमं ते ॥

अर्थ—कफ से प्रगट दस प्रमेह साध्य हैं कारण इस का यह है कि कफदोष और मेदःप्रभृति द्रूप्य इन पर कटुतिक्तादि क्रिया समान है इस रोग में रोग का ही प्रभाव ऐसा है कि इस में तुल्यद्रूप्य को साध्यत्व कहा है और प्रमेह के विना और रोगों को अतुल्य (असमान) द्रूप्यत्व साध्य का हेतु होय है. पित्त की छः प्रमेह विषम चिकित्सा करने से याप्य होय हैं अर्थात् पित्त हरण करनेवाले जे शीत मधुर आदि द्रव्य वे मेद को बढानेवाले हैं और मेद हरणकर्त्ता उष्ण कटुकादि द्रव्य वे पित्तकर्त्ता हैं ऐसे क्रिया विषम है. वादी से प्रगट चार प्रमेह मज्जादि गंभीर घातुं के आकर्षण करने से अत्यंत पीडाकर्त्ता हैं और इन की विषम ही क्रिया है इसी से ये चार असाध्य हैं ॥

प्रमेहों में दोष और द्रूप्य तथा संख्या

कफः सपित्तः पवनश्च दोषामेदश्च शुक्रांबुवसालसीकाः ।

मज्जारसौजं पिशितं च द्रूप्याः प्रमेहिणीं विंशतिरेव मेहाः ॥

अर्थ—कफ, पित्त और वादी ये दोष और मेद, रुधिर, शुक्र, जल, मांस, स्नेह (चर्बी), लसिका (मांस का जल), मज्जारस, ओज और मांस ये द्रूप्य जानने इन दोष और द्रूप्य दोनों से बीस प्रकार के प्रमेह होते हैं ॥

पूर्वरूप

दंतादीनां मलाढ्यत्वं प्राग्रूपं पाणिपादयोः ।

दाहश्चिक्कणता देहे तृट्श्वासश्च प्रजायते ॥

अर्थ—दांतों में आदिशब्द से जिन्हा तालु आदि का ग्रहण है, इन में मैल बहुत रहे, हाथ पैर में दाह, अंग का चिकनापना, प्यास, श्वास, चकार से केशों (बालों) का आपस में लिपट जाना और नखों का बढाना ये प्रमेह के पूर्वरूप होते हैं ॥

प्रमेह के सामान्यलक्षण

सामान्यं लक्षणं तेषां प्रभूताविलमूत्रता । दोषद्रूप्याविशेषेपि
तत्संयोगाविशेषतः ॥ मूत्रवर्णादिभेदेन भेदो मेहेषु कल्प्यते ।
सम्यक्चेदं परिज्ञाय क्रिया कार्या भिषगवरैः ॥

अर्थ—बहुत और गाढा मूत्र उतरे ये प्रमेह के सामान्य लक्षण हैं. दोष और दूष्य इन के भेद होने से. परंतु दोष और दूष्य इन के संयोग भेद से मूत्र वर्णादि भेद करके प्रमेह में भेद होय है दस छः चार इत्यादिक दोष (वात पित्त कफ) दूष्य (मांस मेदा मज्जादि) जैसे सफेद पीला काला तामे के रंग का और श्याम इन पांच रंगों के संयोग करने से पिंगल पाटलादि अनेक वर्णभेद होते हैं इसी प्रकार दोषादिकों के संयोग से नाना प्रकार के प्रमेह होते हैं संयोग भेद की कैसे प्रतीति हो ऐसे कोई पूछे तो उस के वास्ते कहते हैं मूत्र के वर्णादि भेद से समान कारणों के भेद कल्पना करने चाहिये. जैसे घट (घडा) बनाने के समय मृत्तिकादि कारण सामग्री में भेद नहीं है परंतु कुम्भकारादि (कुम्हारआदि) संयोग भेद करके घडा सरवा मटकना आदि अनेक जातिभेद हो जाते हैं. इन भेदों को अच्छी तरह जानके महावैद्य को इन की चिकित्सा करनी चाहिये ॥

प्रमेह के बीस भेद

उदकश्चेक्षुसांद्रश्च सुराह्वौ पिष्टकस्तथा । शुक्राह्वः सिकताह्वश्च
शीतमेहः शनैस्तथा ॥ लालामेहस्तथा क्षारो नीलमेहोथं का-
रकः । हरिद्रमेहो मांजिष्ठो रक्तमेहस्तथापरः ॥ पौडशोथ वसा
मेहो मज्जामेहस्तु कीर्तितः । क्षौद्रमेहश्च हस्ती च मेहानां विं-
शतिः क्रमात् ॥

अर्थ—उदकमेह, इक्षुमेह, सुरामेह, सांद्रमेह, पिष्टकमेह, शुक्रमेह, सिकतामेह, शीतमेह, शनैर्मेह, लालामेह, क्षारमेह, नीलमेह, कालप्रमेह, हरिद्रमेह, मांजिष्ठमेह, रक्तमेह, वसामेह, मज्जामेह, क्षौद्रमेह, हस्तिमेह ऐसे प्रमेह बीस प्रकार के हैं ॥

कफजन्य उदकादि दश प्रमेह

अच्छं बहुसितं शीतं निर्गंधमुदकोपमम् । मेहत्युदकमेहेन किं-
चिदाविलपिच्छिलम् ॥ इक्षो रसमिवात्यर्थं मधुरं चेक्षुमेहतः ।
सांद्रीभवेत्पर्युपितं सान्द्रमेहेन मेहति ॥ सुरामेही सुरातुल्यमुप-
र्यच्छमधोपनम् । संहृष्टरोमा पिष्टेन पिष्टवद्बहुलं सितम् ॥ शु-
क्राभं शुक्रमिश्रं वा शुक्रमेही प्रमेहति । सूत्राणून् सिकतामेही
सिकतारूपिणो मलात् ॥ शीतमेही सुबहुशो मधुरं भृशशीत-
लम् । शनैः शनैः शनैर्मेही मन्दं मन्दं प्रमेहति ॥ लालातंतुयुतं
मूत्रं लालामेहेन पिच्छिलम् ॥

अर्थ-१ उदकप्रमेह करके-स्वच्छ बहुत सपेद शीतल गंधरहित, पानी के समान कुछ गाढा और चिकना मूत्र है. २ इक्षुप्रमेह से-ईख के रससमान अत्यंत मीठा ऐसा मूत्र होय. ३ सांद्रप्रमेह से-रात्र में पात्र में धरने से जैसा होवे ऐसा मूत्र होय. ४ सुराप्रमेह से-दारू के समान ऊपर निर्मल और नीचे गाढा ऐसा मूत्र. ५ पिष्टप्रमेह से-पीसे चावलों के पानीसमान सपेद और बहुत मूत्र तथा मूत्रते समय रोमांच होय. ६ शुक्रप्रमेह से-शुक्र(वीर्य) के समान अथवा शुक्रमिला मूत्र होय. ७ सिकतामेह से-मूत्र के कण और वाळू रेत के समान मलके रवा गिरें. ८ शीतमेह से-मधुर तथा अत्यंत शीतल ऐसा वारंवार बहुत मूत्र. ९ शनैर्मेह से-धीरे धीरे और मंद मंद मूत्र. १० लालाप्रमेह से-लार के समान तारयुक्त और चिकना मूत्र होय है ॥

पित्तप्रमेह के छः भेद

क्षारमेही नीलमेही कालहारिद्रमेहनः ॥

मांजिष्टो रक्तमेहश्च मेहाः षट् पित्तजाः स्मृताः ॥

अर्थ-क्षारप्रमेह, नीलप्रमेह, कालप्रमेह, हारिद्रप्रमेह, मांजिष्टप्रमेह, रक्तप्रमेह ऐसे छः प्रकार के प्रमेह पित्त से उत्पन्न होते हैं ॥

क्षारादि प्रमेहों के लक्षण

गंधवर्णरसस्पर्शैः क्षारेण क्षारतोयवत् । नीलमेहेन नीलाभं
कालमेही मपीनिभम् ॥ हरिद्रमेही कटुकं हरिद्रासन्निभं दहेत् ।
विस्रं मांजिष्टमेहेन मांजिष्टासलिलोपमम् ॥ विस्रमुष्णं सलवणं
रक्ताभं रक्तमेहतः ॥

अर्थ-११ क्षारप्रमेह से-खारी जल के समान गंध वर्ण रस और स्पर्श ऐसा मूत्र होता है. १२ नीलप्रमेह से- नीले रंग का अर्थात् पपैया पक्षी के पंख के सदृश मूत्र. १३ कालप्रमेह से-स्याई के समान काला मूत्र. १४ हारिद्रप्रमेह से-तीक्ष्ण हल्दी के समान और दाहयुक्त मूत्र १५ मांजिष्टप्रमेह से-आम दुर्गंध और मजीठ के समान मूत्र. १६ रक्तप्रमेह से-दुर्गंधयुक्त गरम खारी और रुधिर के समान लाल मूत्र करे ॥

वातजन्यमेह

चत्वारस्तु वसामज्जाहस्तिमध्वनिलात्मजाः ॥

अर्थ-वसाप्रमेह, मज्जाप्रमेह, हस्तिप्रमेह, शौद्रप्रमेह ऐसे चार प्रकार के प्रमेह वायु से उत्पन्न होते हैं ॥

वसादि मेहों के लक्षण

वसामिश्रं वसामेही वसाभं मूत्रयेन्मुहुः । मज्जाभं मज्जामिश्रं वा
मज्जामेही मुहुर्मुहुः ॥ कपायं मधुरं रूक्षं क्षौद्रमेहं वदेद्बुधः ।
हस्ती मत्त इवाजस्रं मूत्रं वेगविवर्जितम् ॥ सालसीकं विबुद्धं च
हस्तिमेहेन मेहति ॥

अर्थ-१७ वसाप्रमेही-वसा (चर्बी) युक्त अथवा वसा के समान मूत्रे. १८
मज्जाप्रमेही-मज्जा के समान अथवा मज्जा मिला वारंवार मूत्रे. १९ क्षौद्रप्रमेही-कपे-
छा मीठा और चिकना ऐसा मूत्रे. २० हस्तिप्रमेही-मस्त हाथी के समान निरंतर वेग-
रहित जिस में तार निकले और ठहर ठहरके मूत्रे ॥

कफप्रमेहों के उपद्रव

अविपाकोऽरुचिश्छर्दिर्ज्वरः कासः सपीनसः ।

उपद्रवाः प्रजायन्ते मेहानां कफजन्मनाम् ॥

अर्थ-अन्न का परिपाक न होय अरुचि वमन ज्वर खांसी पीनस ये कफप्रमेह
के उपद्रव हैं ॥

पित्तप्रमेहों के उपद्रव

वस्तिमेहनयोः शूलं मुष्कावदरणं ज्वरः ।

दाहस्तृष्णाम्लिका मूर्च्छा विड्मेदःपित्तजन्मनाम् ॥

अर्थ-बस्ती और लिंग इन में पीडा होय, अंडकोशों का पककर फटना, ज्वर,
प्यास, खट्टी डकार, मूर्च्छा और पतला दस्त होय ये पित्तप्रमेह के उपद्रव हैं ॥

वातप्रमेहों के उपद्रव

वातजानामुदावर्तः कंठद्गद्गल्लोलताः ।

शूलमुन्निद्रता शोषः कासः श्वासश्च जायते ॥

अर्थ-उदावर्त, गला हृदय इन का रुकना, लोलता (सर्वरस भक्षणपेच्छा), शूल,
निद्रानाश, शोष, सूखी खांसी, श्वास ये वातप्रमेह के उपद्रव हैं ॥

असाध्यलक्षण

यथोक्तोपद्रवाविष्टमतिप्रसृतमेव च ।

पिडिकापीडितं गाढं प्रमेहो हन्ति मानवम् ॥

अर्थ—ऊपर कह आये जो अविपाकादि उपद्रव वे सब होंय, जिस के मूत्र का स्वाव बहुत हुआ होय, शराविका आदि जो पिडिका आगे कहेंगे वे होंय, रोग अंग में प्रवेश हो गया हो ऐसे लक्षण होने से वह प्रमेह मनुष्य को मार डाले ॥

स्त्रियों के प्रमेह न होने में कारण

रजः प्रवर्तते यस्मान्मासि मासि विशोधयन् ।

सर्वान् शरीरदोषांश्च न प्रमेहोस्त्यतस्त्रियाः ॥

अर्थ—हर मास में रजःप्रवृत्ति होने से स्त्रियों के शरीरसंबंधी सब दोष शुद्ध होते हैं इसी से स्त्रियों के प्रमेह नहीं होता है ॥

प्रमेह के असाध्यलक्षण

जातः प्रमेही मधुमेहिना यो न साध्यरोगः स हि बीजपोपात् ।

ये चापि केचित्कुलजा विकारा भवन्ति तांश्च प्रवदन्त्यसाध्यान् ॥

अर्थ—मधुमेही पुरुष से उत्पन्न भया जो प्रमेहवान् पुरुष का रोग बीजदोष के कारण से साध्य नहीं होय इस जगह मधुमेहशब्द से साधारण प्रमेह जानना. इस जगह भी मधुकोशटीकावाले ने मधुमेहशब्द में बहुतसा शास्त्रार्थ लिखा है जो कोई कुष्ठादिक कुलपरंपरागत विकार हैं वे सब असाध्य हैं अब कहते हैं कि सर्व प्रमेहों की उपेक्षा करने से मधुमेहत्व को प्राप्त होते हैं ॥

मधुमेहोत्पात्त और कारण

सर्व एव प्रमेहास्तु कालेनाप्रतिकारिणः ।

मधुमेहत्वमायांति तदाऽसाध्या भवंति हि ॥

अर्थ—सब प्रमेह औषध के बिना काल करके मधुमेह को प्राप्त होते हैं तब वे असाध्य हो जाते हैं ॥

दो प्रकार के मधुमेहों के कारण

मधुमेहे मधुसमं जायते स किल द्विधा ।

क्रुद्धे धातुक्षयाद्वायौ दोषावृतपथेऽथवा ॥

अर्थ—मधुमेह में मूत्र मधु (सहत) के समान होय है सो दो प्रकार का है एक तो धातुक्षय होने से वायु कुपित होकर होय और दूसरा दोषों करके पवन का मार्ग व्यर्थ (टकने) करके होय है ॥

आवरण के लक्षण

आवृतो दोषलिङ्गैस्तु सोऽनिमित्तं प्रदर्शयन् ।

क्षीणः क्षणात्पुनः पूर्णो भजते कृच्छ्रसाध्यताम् ॥

अर्थ—आवृत वायु से प्रगट मधुमेह जिस पित्तादि दोष करके आच्छादित होय उस के लक्षण अकस्मात् दीखें क्षणभर में क्षीण होय क्षण में पूर्ण होय वह कष्टसाध्य जानना ॥

मधुमेहप्रवृत्तिनिमित्त

मधुरं यच्च मेहेषु प्रायो मध्विव मेहति ।

सर्वेऽपि मधुमेहाख्यां माधुर्याच्च तनोरतः ॥

अर्थ—प्रमेहों में रोगी प्रायशः मधु (सहत) के समान मीठा मूते और सब शरीर को मीठा कर दे इसी से सर्व प्रमेह को मधुप्रमेहसंज्ञा दी है और अमृतसागर में जो छः प्रमेह आत्रेय के मत से लिखी है वह प्रमाणरहित है और प्रसिद्ध में भी प्रमेह बीस प्रकार के हैं इसी से हम ने छोड़ दीने हैं ॥

लोधादि काथ

लोधाभयाकट्फलमुस्तकानां विडंगपाठार्जुनधन्वकानाम् ।

कदंबशाखार्जुनदीप्यकानां विडंगदार्वाघनशाल्मलीनाम् ॥

चत्वार एते मधुना कपायाः कफप्रमेहेषु निषेवणीयाः ॥

अर्थ—लोध, हरड, कायफल, नागरमोया. वायविडंग, पाट, कोह की छाल, धमासा. कदंब, कोह, अजमायन. वायविडंग, दासहलदी, नागरमोया, सेमर का गोंद इन चार काथ मेंसे किसी एक को सहत डालके कफप्रमेह पर देवे ॥

कफजन्यमेहों पर क्रम से दश काथ

हरीतकीकट्फलमुस्तलोधाः पाठाविडंगार्जुनधन्वयासाः । उभे

हरिद्रे तगरं विडंगं कदंबशालार्जुनदीप्यकाश्च ॥ दार्वा विडंगं

खदिरो धवश्च सुराह्वकुष्ठार्जुनचंदनानि । दाव्यग्निमंथौ त्रिफला

सपाठा पाठा च मूर्वा च तथाश्वदंष्ट्रा ॥ यवान्युशीराण्यभयागु-

डूचीजंबूशिवाचित्रकसप्तपर्णाः । पादैः कपायः कफमेहिनां ते

दशोपदिष्टा मधुसंप्रयुक्ताः ॥ जलप्रमेहेक्षुरसप्रमेहे सांद्रप्रमेहे च

सुराप्रमेहे । पिष्टप्रमेहेपि च शुक्रमेहे क्रमादमी स्युः सिकताप्र-
मेहे ॥ शीतप्रमेहे च शनैःप्रमेहे लालाप्रमेहेपि सुखाय तेषाम् ॥

अर्थ—हरड, कायफल, नागरमोथा, लोध, इन का; पाठ, वायविडंग, कोह, घमासा
इनका; दारुहलदी, हलदी, तगर, वायविडंग इन का; कदंब, शाल, कोह, अजमायन
इन का; दारुहलदी, वायविडंग, खैर, धों इन का; देवदारु, कूठ, चंदन, कोह इन
का; दारुहलदी, अरनी, त्रिफला, पाठ इन का; पाठ, मूर्वा, गोखरू इन का; अज-
मायन, खस, हरड, गिलोय इन का; जामुन, आंवला, चित्रक, सतोना इन का
काथ ये दश काठे श्लोक के एक एक पाद में समाप्त हुए हैं इन से एक २ को कफप्र-
मेह पर देवे. उन को रूम करके कहते हैं. जलप्रमेह, इक्षुप्रमेह, सांद्रप्रमेह, सुराप्रमेह,
पिष्टप्रमेह, शुक्रप्रमेह, सिकताप्रमेह, शीतप्रमेह, शनैःप्रमेह, लालाप्रमेह इन प्रमेहों
पर क्रम से देवे तो रोगी को सुख होय ॥

शनैर्मैह

शनैर्मैहिनां त्रिफलागुडूचीकपायम् ॥

अर्थ—शनैःप्रमेह पर त्रिफला और गिलोय का काथ करके देवे ॥

पिष्टप्रमेह

पिष्टमेहिनां हरिद्राद्वितयकपायम् ॥

अर्थ—पिष्टप्रमेह पर हलदी, दारुहलदी का काथ करके देवे ॥

सिकताप्रमेह

सिकतामेहिनां निंवकपायम् ॥

अर्थ—सिकताप्रमेह पर नीम की छाल का काथ करके पीवे ॥

उदकप्रमेह

उदकमेहिनां पारिजातकपायं पाययेत् ॥

अर्थ—उदकप्रमेह को पारिजात (हरसिगार) का काथ करके पीलावे ॥

सांद्रप्रमेह

सांद्रमेहिनां सप्तपर्णकपायम् ॥

अर्थ—सांद्रप्रमेह पर सतोना की छाल का काटा करके पीवे ॥

लालाप्रमेह

लालामेहिनां त्रिफलारग्वधमृद्धीकाकपायं पाययेत् ॥

अर्थ—छालाप्रमेहवाले को त्रिफला, अमलतास और दाख इन का काढा करके पिछावे ॥

शुक्रमेह

शुक्रमेहिनां दूर्वाशैवलप्लवकारंजकसेरुककपायम् । ककुभचंदनकपायं वा ॥

अर्थ—शुक्रप्रमेह पर दूब, काई, भद्रमोथा, कंजा, कसेरू इन का काय करके देवे अथवा कोह की छाल और चन्दन इन का काढा करके देवे ॥

शीतप्रमेह

शीतमेहिनां पाठागोक्षुरकपायम् ॥

अर्थ—शीतप्रमेह पर पाठ, गोखरू इन का काढा करके पीवे ॥

इक्षुप्रमेह

इक्षुमेहिनां निंबकपायम् ॥

अर्थ—इक्षुप्रमेह मनुष्य को नींब की छाल का काढा करके देवे ॥

सुराप्रमेह

सुरामेहिनां शाल्मलीकपायम् ॥

अर्थ—सुराप्रमेह पर सेमर का गोंद (मोचरस) का काढा करके देय ॥

पित्तप्रमेह पर चार काथ

लोध्रार्जुनोशीरकुचंदनानामरिष्टसव्यामलकाभयानाम् । धात्र्य-
र्जुनारिष्टकवत्सकानां नीलोत्पलाजाजिनिशार्जुनानाम् ॥ च-
त्वार एते विहिताः कपायाः पित्तप्रमेहेषु मधुप्रयुक्ताः ॥

अर्थ—कोह, कोह की छाल, खस, पतंग इनका; नींब, नेत्रवाला, आवला और हरड इन का; आवला, कोह, नीम की छाल, कूडा की छाल इन का; काला कमल, जीरा, हलदी और कोह इन का काढा ये चार काढे सहत डालके पित्तप्रमेहों पर पृथक् २ देवे ॥

पित्त की छः प्रमेहों पर क्रम से छः काथ

उशीरलोध्रासुरचंदनानां उशीरमुस्तामलकाभयानाम् । पटो-
लनिवामलकामृतानां मुस्ताभयापुष्करवृक्षकानाम् ॥ लोध्रांबु-

कालीयकधातकीनां विश्वार्जुनानां मिश्रितोत्पलानाम् । मांजि-
ष्टहारिद्रकनीलक्षारं कृष्णाख्यरक्ते क्रमशः कपायाः ॥

अर्थ—नेत्रवाला, लोध, असगंध, चंदन, इन का काटा; वाला, नागरमोथा, आं-
वला, हरड इन का; पटोलपत्र, नीम की छाल, आवला, गिलोय इन का; नागर-
मोथा, हरड, पुहकरमूळ इन का; लोध, नेत्रवाला, दारुहलदी, धाय के फूल इन का;
सॉठ, कोहवृक्ष की छाल, सॉफ, कमल इन का काटा ये छः कायक्रम करके मांजिष्ठ,
हारिद्र, नील, क्षार, काल, रक्त इन छः पित्त की प्रमेहों पर देना उत्तम है ॥

क्षारप्रमेह

क्षारमेहिनां त्रिफलाकपायम् ॥

अर्थ—क्षारमेहवाले मनुष्य को त्रिफले का काटा पिलावे ॥

हरिद्रामेह

हरिद्रामेहिनां राजवृक्षकपायम् ॥

अर्थ—हरिद्राप्रमेहवाले को अमलतास के गूदे का काटा करके देवे ॥

मांजिष्ठप्रमेह

मांजिष्ठमेहिनां मंजिष्ठाचंदनकपायम् ॥

अर्थ—मांजिष्ठप्रमेहवाले को मंजीठ और लालचंदन का काटा करके देवे ॥

शोणितप्रमेह

शोणितमेहिनां गुडूचीर्तिदुकास्थिकाश्मर्यखजूरकपायं
मधुमिश्रं पाययेत् ॥

अर्थ—शोणितप्रमेहवाले को गिलोय, तेंदू के बीज, कंबारी के फल, खजूर इन
के काटे में सहत मिलायके पिलावे ॥

दुष्टरक्तज प्रमेह

काथः खर्जूरकाश्मर्यतिदुकास्थ्यमृताकृताः ॥

सुहिमः पीतमात्रस्तु सक्षौद्रो रक्तमेहहा ॥

अर्थ—खजूर, कंबारी के फल, तेंदू के फल के भीतर की गिरी, गिलोय इन के
काटे को शीतल करके पीवे तो रक्तप्रमेह दूर होय ॥

नीलप्रमेह

नीलमेहिनां सालसादिकपायं अश्वत्थकपायं वा ॥

अर्थ—नीलमेहवाले मनुष्य को सालकादि काथ अथवा पीपल का काटा देवे ॥

सर्पिप्रमेह वातजन्य

सर्पिमेहिनां कुष्ठकुटजपाठाहिंशुकटुरोहिणीकल्कम्,

गुडूचीचित्रककपायं पाययेत् ॥

अर्थ—सर्पिप्रमेहवाले मनुष्य को कूठ, पाठ, हींग, कुटकी इन का चूर्ण अथवा गिलोय, चित्रक इन का काटा देवे ॥

छिन्नादि काथ

छिन्नावह्निकपायं वा पाठाकुटजरामठम् ।

तिक्ता कुष्ठं च संपूर्णं सर्पिमेहे पिवेत्ररः ॥

अर्थ—गिलोय और चित्रक इन का अथवा पाठ, कूडे की छाल, हींग, कुटकी, कूठ इन सब का काटा सर्पिप्रमेहनाशनार्थ पीवे ॥

हस्तिमेह

हस्तिमेहिनां तिंदुककपित्थकशिरीषपालाशपाठामूर्वा-

दुःस्पर्शकपायं मधुमिश्रम् ॥

अर्थ—हस्तिप्रमेह पर तेंदू, कैय, सिरस, पलाश, पाठ, मूर्वा और धमासा इन का काटा सहित मिलायके पीवे ॥

हस्तिमेह पर क्षार

हस्त्यश्वशूकरखरोद्रास्थिक्षारं चेति ॥

अर्थ—हाथी, घोडा, बन का सूअर, गधा और ऊंट इन की हड्डी का क्षार हस्ति-
मेहनाशक है ॥

वसा मेह और हस्तिमेह पर काथ

अग्निमंथकपायं तु वसामेहे प्रयोजयेत् । पाठाशिरीषदुस्पर्शमू-

र्वाकिंशुकतिंदुकैः ॥ कपित्थेन भिषक् कुर्यात् काथं

हस्तिप्रमेहके ॥

अर्थ—अरनी का काटा वसाप्रमेह पर देवे और पाठ, सिरस, धमासा, मूर्वा, पला-
श, तेंदू, कैय इन का काटा करके वैद्य हस्तिप्रमेह पर देवे ॥

क्षौद्रमेह और सर्पिमेह पर काथ

पूगारिमेदयोः काथः सक्षौद्रः क्षौद्रमेहिनाम् । छिन्नावह्निकपा-

येण पाठाकुटजरामठम् ॥ तिक्ता कुष्ठं च संचूर्ण्य सर्पिर्महे
पिवेन्नरः ॥

अर्थ—सुपारी, सपेद कत्या इन के काटे में सहत डालके पीवे तो क्षौद्रप्रमेह दूर होय और गिलोय, चित्रक इन के काटे में पाद, कूडा, हींग, कुंठकी, कूठ इन का चूर्ण मिलायके पीवे तो सर्पिप्रमेह दूर होय ॥

द्वितीययोग

चांगेरीमेदयोः काथः सक्षौद्रः क्षौद्रमेहिनाम् ॥

अर्थ—क्षौद्रप्रमेहवाले रोगी को चूका और मेदा इन के काटे में सहत डालके पीना चाहिये ॥

वसामेह

वसामेहिनां अग्निमंथकपायं शिंशपाकपायं वा ॥

अर्थ—वसामेह पर अरनी का अथवा काली सीसों का काटा करके देवे ॥

कफपित्तप्रमेह पर

कंपिल्लसप्तच्छदशालजानि विभीतरोहीतककौटजानि । पुष्पा-
णि दध्मश्च विचूर्णितानि क्षौद्रेण लिह्यात्कफपित्तमेहे ॥

अर्थ—कवीला, सतोना, कोह की छाल, बहेडा, लाल रोहिडा, कूडा इन के फूलों को दही में पीस सहत डालके चाटे तो कफपित्तप्रमेह पर उत्तम है ॥

कफवातजन्य प्रमेह पर

हरीतकीकट्फलमुस्तलोध्रकुचंदनोशीरकृतः कपायः ।

क्षौद्रेण युक्तः कफवातमेहं निहंति पीतारजसा च पीतः ।

अर्थ—हरड, कायफल, नागरमोया, लोध, लाल चंदन, खस इन के काटे में सहत डालके अथवा हलदी के चूर्ण के साथ पीये तो कफवातप्रमेह को नाश करे ॥

पित्तवातज प्रमेह

विडंगरजनीद्वंद्वं खदिरोशीरपूगजः ।

काथः पीतः प्रगे हंति मेहं पित्तानिलोद्रेवम् ॥

अर्थ—वायविडंग, दारुहलदी, हलदी, कत्या, खस, सुपारी इन का काटा प्रातः-काल पीये तो पित्तवात से प्रगट प्रमेह को नाश करे ॥

त्रिफलादि काथ

त्रिफलादारुदार्यब्दकाथः क्षौद्रेण मेहहा ।

गुडूच्याः स्वरसः पीतो मधुना सर्वमेहजित् ॥

अर्थ—हरद, बहेडा, आवला, देवदारु, दारुहलदी, नागरमोया इन का काढा सहत डालके अथवा गिलोय का स्वरस सहत डालके पीवे तो सर्व प्रमेहों को नाश करे ॥

त्रिफलादि काथ दूसरा

फलत्रिकं दारु निशा विशाला मुस्ता च निष्काथ्य निशासमेतम् ।

पिवेत्कपायं मधुना प्रयुक्तं सर्वप्रमेहेषु समुत्थितेषु ॥

अर्थ—हरद, बहेडा, आवला, देवदारु, दारुहलदी, इन्द्रायन, नागरमोया इन के काढे में हलदी, सहत डालके सर्व प्रमेहों पर देवे ॥

पलाशपुष्पकाथ

पलाशतरुपुष्पाणां काथः शर्करया युतः ।

निपेवितः प्रमेहाणि हन्ति नानाविधान्यपि ॥

अर्थ—पलाशपुष्प (केसूला के फूलों) का काढा मिश्री मिलायके पीवे तो अनेक प्रकार के प्रमेह दूर हों ॥

प्रमेहनाशक योगत्रय

धात्र्याः कपायं मधुरत्रियुक्तं वटांकुराणां समधुं कपायम् ।

पापाणभेदं मधुमिश्रमेतत्रयं प्रमेहापहमामनन्ति ॥

अर्थ—आवलों का काढा करके उस में सहत और हउदी का चूर्ण मिलायके देवे अथवा चूड के अंकुरों का काढा कर सहत डालके पीवे अथवा पापाणभेद के चूर्ण को सहत में मिलायके देवे ये तीन योगों से प्रमेह दूर होय ॥

विडंगादि काथ

विडंगरजनीयष्टीनागरागोक्षुरैः कृतः ।

कपायो मधुना हन्ति प्रमेहान् दुस्तरानपि ॥

अर्थ—वायविडंग, हलदी, मुलहठी, सोंठ, गोखरू इन का काढा कर उस में सहत डालके पीवे तो दुस्तरप्रमेह को नाश करे ॥

प्रकारांतर

कुटजासनदाव्यब्दफलत्रयभवोथ वा ॥

अर्थ—कूडा की छाल, विजेसार, नागरमोथा और त्रिफला इन का काढा सर्व प्रमेहों को नाश करे ॥

चणकयोग

द्विनिशात्रिफलाकल्कमातपे धारयेत्त्र्यहम् । मृद्गांडे दोलिका
यंत्रे चणकान्मुष्टिमात्रकान् ॥ अहोरात्रोपितान्खादेद्बर्धमानं
दिने दिने । असाध्यं साधयेन्मेहं सिद्धयोग उदाहृतः ॥

अर्थ—हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आवला इन के कल्क को मिट्टी के बरतन में भरके उस को डोलायंत्र करके तीन दिन धूप में रखे फिर एक मुट्टी चनों को एक दिन रात्र उस में ढांक देवे फिर उन को भक्षण करे इस प्रकार निरप्य बढावे अर्थात् पहले दिन १ मुट्टी दूसरे दिन २ और तीसरे दिन ३ इस प्रकार बढाया करे तो असाध्य प्रमेह को भी नाश करे यह सिद्ध योग कहा है ॥

योगचतुष्टय

मधुना त्रिफलाचूर्णमर्षं वाश्मजतूद्भवम् ।

लोहजं वा मलोत्थं वा लिह्यान्मेहनिवृत्तये ॥

अर्थ—सहत में मिलायके त्रिफले का चूर्ण सेवन करे अथवा सहत के साथ शिलाजीत देवे अथवा लोह की भस्म देवे अथवा मंडूर देवे तो प्रमेह नष्ट होय ॥

शालादि कल्क

शालमुस्तककंपिलकल्कमक्षसमं पिबेत् ।

धात्रीरसेन सक्षौद्रं सर्वमेहहरं परम् ॥

अर्थ—कोह की छाल, नागरमोथा, कषीला इन का कल्क १ तोला आवले का रस और सहत इन सब को मिलायके देवे तो संपूर्ण प्रमेहों को नाश करे ॥

वंग तथा नागभस्म

गुडूचरिसमधुना वंगभस्म प्रमेहनुत् ।

नागभस्म तथैवापि सर्वमेहनिवारणम् ॥

अर्थ—गिलोय के रस को सहत में मिलायके और इस में वंगभस्म मिलायके सेवन करे तो प्रमेह नष्ट होय उसी प्रकार नाग (शीशे) की भस्म सर्व प्रमेहों को नाश करे ॥

द्विनिशादि हिम

द्विनिशा त्रिफलायुक्तं रात्रौ पर्युषितं जलम् ।

प्रभाते मधुना पीतं मेहशूलं निकृंतति ॥

अर्थ—दारुहलदी, हलदी, हरड, बहेडा, आंवला इन को जवकुट कर रात्रिके समय जल में भिगोय देवे प्रातःकाल उस को मसलकर जल को कपडे से छान लेवे इस में सहत मिलायके पीवे तो प्रमेह की जड को उखाडके पटक देवे ॥

गुडूची तथा धात्रीरसयोग

यथामृतारसः क्षौद्रयुक्तः सर्वप्रमेहजित् ।

हरिद्राचूर्णयुक्तो वा रसो धात्र्याः समाक्षिकः ॥

अर्थ—जैसे गिलोप का स्वरस सहतयुक्त सर्व प्रमेहों को जीतनेवाला है उसी प्रकार हलदी का चूर्ण और सहत मिलायके आंवले का स्वरस सर्व मेहहारी जानना ॥

अंकोल्यादि योग

अंकोलीमुकुलं धात्री हरिद्रा मधुना लिहेत् ।

विंशतिं च प्रमेहानां हन्ति सत्यं न संशयः ॥

अर्थ—अंकोल की कली, आंवले, हलदी इन के चूर्ण को सहत के साथ चाटे तो बीस प्रकार के प्रमेहों को नाश करे इस में संदेह नहीं है ॥

भूधात्र्यादि योग

भूधात्रीपत्रिगंधानां मरीचानां च विंशतिः ।

असाध्यान्साधयेन्मेहान् सप्तरात्रान्न संशयः ॥

अर्थ—भूयआवला, दालचीनी, इलायची, पत्रज, बीस काली मिरच इन सब को एकत्र पीसके सेवन करे तो असाध्य प्रमेह भी सात दिन में नष्ट होय इस में संदेह नहीं ॥

कतकबीजयोग

कर्पप्रमाणं कतकस्य बीजं तत्रेण पिष्ट्वा सह माक्षिकेन ।

प्रमेहजालं विनिहन्ति सद्यो रामो यथा रावणमाजघान ॥

अर्थ—निर्मली के बीज एक तोले छाल में पीसके उस में सहत डालके पीवे यह प्रमेह के समुदाय को तत्काल नाश करे जैसे राम ने रावण को मारा ॥

शाल्मलीस्वरस

शाल्मलीत्वग्रसोपेतं सक्षौद्रं रजनीरजः ।

वंगभस्म हरेन्मेहान् पंचानन इव द्विपान् ॥

अर्थ—सेमर की छाल का रस, सहत और हलदी का चूर्ण तथा वंगभस्म इन सब को मिलायके खाय तो जैसे सिंह को हाथी नाश करे इस प्रकार प्रमेहों को नाश करे ॥

एलादि चूर्ण

एलाशिलाजतुकणापापाणभेदनिर्मितं चूर्णम् ।

तंदुलजलेन पीतं प्रमेहरोगं हरत्याशु ॥

अर्थ—इलायची, शिलाजीत, पीपल, पापाणभेद इन के चूर्ण को चावलों के धोस-न के साथ पीवे तो प्रमेह को तत्काल नाश करे ॥

कर्कट्यादि चूर्ण

कर्कटीबीजसिंधूत्थत्रिफलासमभागिकम् ।

पीतमुष्णांभसा चूर्णं मूत्ररोधं निवारयेत् ॥

अर्थ—ककड़ी के बीज, हरड, बहेडा, आंवला इन का चूर्ण, सेंधानिमक ये सब समान भाग ले कूट गरम जल में मिलायके पीवे तो मूत्ररोध को निवारण करे ॥

त्रिफलाचूर्ण

एका हरीतकी योज्या द्वौ च योज्यौ विभीतकौ । चत्वार्यामल-
कान्येव त्रिफलैपा प्रकीर्तिता ॥ त्रिफला शोथमेहघ्नी नाशयेद्वि-
पमज्वरान् । दीपनी श्लेष्मपित्तघ्नी कुष्ठहंत्री रसायनी ॥ सर्पिर्म-
धुभ्यां संयुक्ता सेव्या नेत्रामयाञ्जयेत् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आंवला इन तीन औषधों का चूर्ण करे तहां एक हरड, २ बहेडे और तीन आंवले मिलाने से त्रिफला होता है इस के सेवन करने से प्रमेह और सूजन तथा विपमज्वर, कफ तथा पित्त और कुष्ठ ये दूर हों, अग्नि प्रदीप्त हो, यह त्रिफला रसायन है तथा घ्री और सहत को एकत्र कर उस में त्रिफले का चूर्ण मिलाय सेवन करे तो नेत्र के संपूर्ण रोग दूर हों ॥

गुग्गुलु

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं गुग्गुलुं च समांशकम् । गोक्षुरकाथसंयुक्तां
वटिकां कारयेद्बुधः ॥ देशकालवलापेक्षी भक्षयेच्चानुलोमि-
काम् । नचात्र परिहारोस्ति कर्म कुर्याद्यथेप्सितम् ॥ प्रमेहा-

न्वातरोगांश्च वातशोणितमेव च । मूत्राघातं मूत्रदोषं प्रदरं
चापि नाशयेत् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा और गूगल ये समान भाग ले गोखरू के काठे में गोली बनाय देश, काल, बल को विचार भक्षण करे. यह अनुलोमक है. इस पर पथ्य नहीं है. यथेच्छ कर्म करे. प्रमेह, वातरोग, वातरक्त, मूत्राघात, मूत्रदोष, प्रदर इन को नाश करे ॥

गोक्षुरादि गुग्गुलु

अष्टाविंशतिसंख्यानि पलान्यानीय गोक्षुरान् । विपचेत्पद्मगुणे
नीरे काथो ग्राह्योर्द्धशेषितः ॥ ततः पुनः पचेत्तत्र पुरं सप्तपलं
क्षिपेत् । गुडपाकसमाकारं ज्ञात्वा तत्र विनिक्षिपेत् ॥ त्रिकटु-
त्रिफलामुस्तं चूर्णितं पलसप्तकम् । ततः पिंडीकृतं चास्य गुटि-
कामुपयोजयेत् ॥ हन्यात्प्रमेहं कृच्छ्रं च प्रदरं मूत्रघातकम् ।
वतास्रं वातरोगांश्च शुक्रदोषं तथाश्मरीम् ॥

अर्थ—गोखरू २८ पल को जोकूट कर छःगुने जल में डालके औटावे जब आधा जल शेष रहे तब उतारके छान ले. फिर इस में शुद्ध करी हुई गूगल ७ पल डालके औटावे जब गुडपाक के समान गाढी हो जावे तब इस में सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला और नागरमोथा ये सात औषध एक २ पल ले. सब का चूर्ण करके उस पाक में मिलाय देवे. फिर एक पिंड करके खरल में कूट एक जीव करके गोली बनाय लेवे इस को सेवन करे तो प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, प्रदररोग और मूत्राघात, वातरक्त, वादी के रोग, धातु का विकार और पथरीरोग इन सब को दूर करे ॥

चंद्रकलावटी

एलासकपूर्शिला सधात्री जातीफलं गोक्षुरशाल्मली च । सू-
तेंद्रवंगायसभस्म सर्वमेतत्समानं परिभावयेच्च ॥ गुडूचिकाशा-
ल्मलिकाकपायैर्निष्कार्धमाना मधुना ततश्च । वद्धा वटी चंद्र-
कलेति संज्ञा सर्वप्रमेहेषु नियोजयेत्ताम् ॥

अर्थ—इलायची, भीमसेनी कपूर, शिशाजीत, आंवले, जायफल, गोखरू, मोच-
रस, पारा, वंगभस्म और लोहे की भस्म सब समान भाग लेवे. सब को गिलोय

और सेमर के काठे की भावना देकर दो २ मासे की गोली बनावे. इस को सहत के साथ सर्व प्रमेहों पर देवे. इस को चंद्रकलावटी कहते हैं ॥

चंद्रप्रभावटी

वेल्लव्योपफलत्रिकं त्रिलवणं द्विक्षारचव्यानलश्यामापिप्पलिमूलमुस्तकसठामाक्षिकधातुत्वचः । पङ्ग्रंथामरदारुवारणकणाभूर्निवदंतीनिशापत्रैलातिविपापिचुप्रतिमिता लोहस्य कर्पाणकम् ॥ त्वक्क्षीरीपलिकापुराद्दृशपलान्यष्टौ शिलाजन्मनो मानात्कर्पसमाकृतेति गुटिका संयोज्य सर्वं भिषक् । तत्रैव प्रतिवासरे सहघृतं क्षौद्रेण लिह्यादिमां तक्रं मस्तु च गोघृतं मधुरसं पश्चात्पिवेन्मात्रया ॥ अशांसि प्रदरं ज्वरं च विषमं नाडीव्रणानश्मरीं कृच्छ्रं विद्रधिमग्निमांघ्रमुदरं पांड्वामयं कामलाम् । यक्ष्माणं सभगंदरं सपिटिकां गुल्मप्रमेहारुची रेतोदोषसुरःक्षतं कफमरुत्पित्तार्तिमुग्रां जयेत् ॥ वृद्धं संजनयेद्युवानमसमोजस्कं वलं वर्धयेदेतस्मान्न निपिद्धमन्नमसकृन्नाध्वागमो मैथुनम् । विख्याता गुटिकेयमंचतितरां चंद्रप्रभानामतो सांद्रानंदकरी तनोति च रुचिं चंद्रेण तुल्यां तनौ ॥

अर्थ—काली मिरच, त्रिकुटा, त्रिफला, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, संधानिमक, काला निमक और कचियानिमक, चव्य, चित्रक, सारिवा, पीपरापूल, नागरमोथा, कचूर, सुवर्णमाक्षिक, दालचीनी, वच, देवदारु, गजपीपल, चिरायता, दंती, हलदी, पत्रज, इलायची, अतीस ये सब एक एक तोले लेवे तथा लोहभस्म ८ तोले, वंशलोचन ४ तोले, गूगल शुद्ध ४० तोले, शिलाजीत ३२ तोले इन सब को एकत्र कर दश २ मासे की गोली बनावे. इस को सहत और घी इन में मिलायके नित्य सेवन करे. ऊपर से छाल, दही का जल अथवा गौ का घी सेवन करे तो यवासीर, प्रदर, ज्वर, विषमज्वर, नाडीव्रण, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, विद्रधि, मंदाग्नि, चदर, पांडुरोग, कामला, क्षयरोग, भगंदर, पिडिका, गोला, प्रमेह, अरुचि, शुकदोष, उरःक्षत, कफ, वात, पित्त इन को नाश करे. तथा वृद्ध को तरुण करे और बलवान् करे. इस पर अन्न का निषेध नहीं है तथा मार्ग चलना, मैथुन करना वर्जित है यह चंद्रप्रभा गुटिका सर्वत्र प्रसिद्ध है तथा आनंद करनेवाली, कांति देनेवाली और चंद्रमा के समान तेज देनेवाली है ॥

सिंहामृतघृत

कंटकार्या गुडूच्याश्च संहरेच्च शतं शतम् । संकुव्योलूखले वि-
द्रांश्चतुर्द्रोणैर्भसः पचेत् ॥ तच्च पादावशेषेण घृतप्रस्थं विपाच-
येत् । त्रिकटुत्रिफलारास्त्राविडंगान्यथ चित्रकम् ॥ काश्मर्याणां
च मूलानि पूतिकस्य त्वगस्य च । कुट्टयेच्चापि सर्वाणि श्लक्ष्णपि-
ष्टानि कारयेत् ॥ अस्य मात्रां पिवेत्प्राज्ञः शालिभिः पयसा
प्लुतैः । प्रमेहं मधुमेहं च मूत्रकृच्छ्रं भगंदरम् ॥ आलस्यं चांत्रवृद्धिं
च कुष्ठरोगं विशेषतः । क्षयं चापि निहत्येतन्नामसिंहामृतं घृतम् ॥

अर्थ—केटरी १०० तोले को जल में डालके औटावे. जब चतुर्थाश शेष रहे तब उतारके छान लेवे. उस में ६४ तोले घी और त्रिकुटा, त्रिफला, रास्त्रा, वायविडंग, चित्रक, कंभारी की जड, कंजे की जड और छाल इन को बारीक कूटके चूर्ण करे. इस को उसी काठे के जल में डाल देवे. फिर मंदाग्नि से घृत सिद्ध करे. फिर इस को बलाबल विचार दूध भात के साथ भोजन करे तो प्रमेह, मधुमेह, मूत्रकृच्छ्र, भगंदर, आलस्य, अंत्रवृद्धि, विशेष करके कुष्ठरोग, क्षय इन का नाश करे इस को सिंहामृत घृत कहते हैं ॥

हरिद्रादि तैल

निशारसं चतुःप्रस्थं द्विप्रस्थक्षीरसंयुतम् । कुष्ठाश्वगंधालशु-
ननिशापिप्पलिकलिकतम् ॥ विपक्वं तिलजप्रस्थं मेहानां विं-
शतिं जयेत् । एतन्मध्ये कार्पासास्थिवीजमाकूलीमूलत्वक् ॥
तत्पुष्पं केतकीबीजं हरीतकी एतेषां चतुर्गुणं जलं दत्त्वा पा-
दांशं कपायं मेलयित्वा केतकीस्वरसं मेलयित्वा पाकं ज्ञात्वा-
वतारयेत् ॥ तस्य मात्रा कर्पप्रमाणा ॥

अर्थ—हलदी का काठा २५६ तोले, दूध १२८ तोले, कूठ, असगंध, लहसन, हलदी, पीपल इन का कलक, तिल का तेल ६४ तोले सब को मिलायके मंदाग्नि से परिपक करे और इस में कपास के बीज (विनोले) की गिरी, अंकोल के जड की छाल और आकूली के फूल, निर्मली के बीज, हरड इन सब औषधों से चौगुना जल डालके काढा करे फिर इस काठे को और निर्मली के रस को उस में मिलायके फिर उस तेल को पक करे. इस में से १ तोले को सेवन करे तो बीस प्रकार के प्रमेहों को नाश करे ॥

सुपारीपाक

हेमांभोधरचंदनं त्रिकटुकं धात्री प्रियाला कुहूलंजालुस्त्रिसुगंधि
जीरकयुगं शृंगाटकं वंशजम् । जातीकोशलवंगधान्यवहुलां
प्रत्येकमक्षोन्मितां पूगस्याष्टपलं विचूर्ण्य च पयःप्रस्थत्रये संप-
चेत् ॥ गोसर्पिः कुडवं सितार्धकतुला धात्रीवरीञ्चजली मंदाग्री
विपचेद्भिषक् शुभदिने सुस्निग्धभांडे क्षिपेत् । तं खादेत्तु यथा-
ग्नि वासरमुखे मेहांश्च जीर्णज्वरं पित्तं साम्लमसृक्श्रुतिं च गुद-
जान्वक्काशिनासासु च ॥ मंदाग्निं च विजित्य पुष्टिमतुलां कुर्या-
च्च शुक्रप्रदो योगो गर्भकरस्तथामहरणः स्त्रीणामसृग्दोषजित् ॥

अर्थ—नागकेशर, नागरमोथा, चंदन, त्रिकुटा, आंवला, चिरोंजी, कोकिलाक्ष,
लजालू, डालचीनी, इलायची, पत्रज, काला जीरा, सिंघाडे, वंशलोचन, जावित्री,
लौंग, धनिया ये प्रत्येक एक २ तोले, दक्षिणी सुपारी ३२ तोले इस प्रकार सब
को लेकर चूर्ण कर लेवे. फिर ९६ तोले दूध में डालके औटावे और गौ का घी १६
तोले डाल जब खोहा हो जावे तब २०० तोले मिश्री की चासनी करके उस में
खोहे को मिलाय दे और आंवले १६ तोले, शतावर १६ तोले ले चूर्ण करके
उस में डालके पाक बनाय ले फिर शुभ दिन देखके चिकने वासन में भर धर देवे.
शक्तिप्रमाण प्रातःकाल सेवन करे तो प्रमेह, जीर्णज्वर, अल्मपित्त, रक्तस्राव,
बवासीर, मंदाग्नि इन को नाश करे और पुष्टी, वीर्य, गर्भ इन को देवे मदनाशक
स्त्रियों के रक्तदोष को दूर करे है ॥

असगंधपाक

पलान्यष्टावश्वगंधां विपाच्य गोदुग्धे पट्टशरके मंदवह्नौ । दर्वी-
लेपो यावदास्ते सुपक्वश्चातुर्जातं क्षिप्य कर्पप्रमाणम् ॥ जातीजातं
केशरं वंशसत्त्वं मोचं मांसी चंदनं कृष्णसारम् । पत्री कृष्णा-
पिप्पली मूलदेवपुष्पं कंकोलाविकाक्षोटसारम् ॥ भल्लीवीजं शृंगटं
गोक्षुराख्यं सिंदूराभ्रं नागवंगं च लोहम् । कर्पाधार्धि सर्वचूर्णं
प्रकल्प्य संशोप्याथो शर्करापक्वपाके ॥ पक्त्वा शीतं कारयेदश्व-
गंधापाकश्चायं हंति मेहानशोपान् । ज्वरं जीर्णं शोपगुल्मान्वि-

कारान्पैतान्वातान् शुक्रवृद्धिं करोति ॥ पुष्टिं दद्यादग्निसंदी-
पनोयं कांतिं कुर्यात्सौमनस्यं नराणाम् ॥

अर्थ—असगंध ३२ तोले, गौ का दूध ६ सेर, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, प्रत्येक तोले २ लेवे. जायफल, केशर, वंशलोचन, मोचरस, जटामांसी, चंदन, लाल चंदन, जावित्री, पीपल, पीपरामूल, लौंग, कंकोल, मेढासिंगी, अखरोट की छाल, भिलाये, सिंघाडे, गोखरू, रसासिंदूर, अब्रक-भस्म, बंगभस्म, लोहभस्म ये सब तीन २ मासे डालके मंदाग्नि से पक करके कजली जमाय ले. इस को बलायल विचारके सेवन करे तो सर्व प्रमेह, जीर्णज्वर, शोष, गोला, पित्तरोग, वादी के रोग इन को नाश करे तथा शुक्रवृद्धि, पुष्टि, अग्निदीप्ति, कांति, अंतःकरण की प्रसन्नता इन को करे ॥

शाल्मलीपाक

क्षीरद्रोणयुते सशालकुडवं मंदाग्निना पाचितं यावत्पाकमु-
पात्रजेत्परिहितं प्रस्थं गुडं निक्षिपेत् । चातुर्जातलवंगजाति-
फलकैर्मुस्तातुगाधान्यकैः शुंठीमागधिकोपणाश्वमभयालोहैश्च
मिश्रीकृतम् ॥ हृद्रोगक्षयशोपमारुतगदान्हिकामसृक्शोपणं
विंशन्मेहशिरोविकारशमनो रोगानशोपाञ्जयेत् ॥

अर्थ—दूध १०२४ तोले, कोहवृक्ष की छाल का चूर्ण १६ तोले दोनों को एकत्र कर मंदाग्नि पर पक करे फिर उस में ६४ तोले गुड और दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, लौंग, जायफल, नागरमोथा, वंशलोचन, धनियां, सोंठ, मिरच, पीपल, असगंध, हरड, लोहे की भस्म, ये सब उस में मिलायके सेवन करे तो हृदयरोग, क्षय, शोष, वातरोग, हिचकी, रुधिरशोष, बीस प्रकार की प्रमेह, शिरोविकार इत्यादि सर्व रोगों को नष्ट करे ॥

द्राक्षापाक

द्राक्षा दुग्धसिता पृथक् परिमिता प्रस्थेन संपाचिता युक्त्या
वैद्यवरेण चूर्णमधुना देयं पलार्धं पृथक् । चातुर्जातकटुत्रयं मृग-
मदं लोहाभ्रकं केशरं पत्रीजातिफलं मृगांकरजतं कुस्तुंबरी
चंदनम् ॥ सम्यक् जातरसं प्रभातसमये सेव्यं द्विकर्षोन्मितं
स्निग्धं शुक्रकरं प्रमेहशमनं पित्तामयध्वंसनम् । मूत्राघातवि-

बंधकृच्छ्रशमनं रक्तार्तिनेत्रार्तिहृत्पादे पाणितले विदाहशमनं
सौख्यप्रदं प्राणिनाम् ॥

अर्थ—दाख, दूध, मिश्री प्रत्येक ६४ तोले सब को एकत्र करके पक करे फिर इस में दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, त्रिकुटा, कस्तूरी, लोहे की भस्म, अभ्रक भस्म, केशर, जावित्री, जायफल, कपूर, रूपे की भस्म, धनिया, चन्दन ये प्रत्येक दो २ तोले ले चूर्ण करके विधिपूर्वक पक करे जब तैयार हो जावे तब प्रातःकाल इस में से २ तोले नित्य सेवन करे यह स्निग्ध, धीर्य का बढ़ानेवाला, प्रमेह को नाश करे, पित्त-रोगनाशक, मूत्राघात, विड्वंध, मूत्रकृच्छ्र, रक्तपीडा, नेत्रपीडा, हृदय, पैर, हाथ इन का दाह इन को नाश करे तथा यह द्राक्षादि पाक प्राणियों को सौख्यप्रद है ॥

अभ्रकयोग

निश्वंद्रमभ्रकं भस्म सवरारजनीरजः ।

मधुना लीढमचिरात् प्रमेहान् विनिवर्तयेत् ॥

अर्थ—उत्तम निश्वन्द्र अभ्रक की भस्म, त्रिफला, हलदी इन के चूर्ण को सहत मिलायके चाटे तौ तत्काल प्रमेह को दूर करे ॥

नागभस्मयोग

शुद्धस्य च मृतस्याहिरजो मल्लमितं लिहेत् ।

सनिशामलकाक्षौद्रं सर्वमेहप्रशान्तये ॥

अर्थ—उत्तम शीशे की भस्म दो रत्ती, हलदी, आंवले और सहत इन के साथ सेवन करे तौ सर्व प्रमेह शान्ति होवे ॥

गंधकयोग

गंधकं गुडसंयुक्तं कर्पं भुक्त्वा पयः पिबेत् ।

विंशतिस्तेन नश्यंति प्रमेहाः पिटिका अपि ॥

अर्थ—गंधक को गुड में मिलायके १ तोले सेवन करे और ऊपर से दूध पीवे तौ बीस प्रकार के प्रमेह और पिटिका नाश होवे ॥

शिलाजतुयोग

शिलाजतुरजः पात्वा प्रातः क्षीरसितायुतम् ।

मुच्यते सर्वमेहेभ्यास्त्रिःसप्तदिवसेनरः ॥

अर्थ—शिलाजीत के चूर्ण को प्रातःकाल दूध और मिश्री के साथ पीवे तौ २१ दिन में सर्व प्रमेह दूर हो ॥

स्वर्णमाक्षिकभस्मयोग

माक्षिकं मधुना लीढं मेहं हरति सर्वथा ।

गुडूचीसत्वसंयुक्तं पित्तमेहं व्यपोहति ॥

अर्थ—सुवर्णमाक्षिक की भस्म सहत के साथ चाटे तो संपूर्ण प्रमेहों को हरण करे तथा गिलोय के सत्व के साथ माक्षिकभस्म खाए तो पित्त के प्रमेहों को नाश करे ॥

बहुमूत्रमेह का निदान

काश्यं स्वेदोंगंधः करपदरसनानेत्रकर्णोपदाहः कासः शैथिल्यमंगेरुचिरपि पिट्का कंठताल्वोष्ठशोपः । दाहः शीतप्रियत्वं धवलमतनुता श्रान्तता पीतमूत्रं मूत्रस्था मक्षिकाद्याश्चिरमपि बहुमूत्रारुरोगे प्रवृद्धे ॥

अर्थ—कृशता, पसीना, देह से बदन आना, हाथ, पांव, जीभ, आंखें, कान इन का दाह होना, शरीर शिथिल होना, अरुचि, पिट्का, कंठ, तालु, ओंठ इन में शोष और दाह, बड़े पदार्थ की इच्छा, पांडुरता, अतिकृशत्व, थक जाना, मूत पीला होना और जहां मूत्रे वहां मक्खियों और चींटियों का आ जाना ये लक्षण बहुमूत्ररोग के बढने पर होते हैं ॥

दूसरा प्रकार

स्वेदोंगंधः शिथिलत्वमंगे शय्यासनस्वप्नसुखाभिलाषः । हृन्नेत्रजिह्वाश्रवणोपदाहो घनांगता केशनखातिवृद्धिः ॥ शीतप्रियत्वं गलतालुशोपो माधुर्यमास्ये करपाददाहः । भविष्यतो मेहगणस्य लिंगं मूत्रेभिधावन्ति पिपीलिकाश्च ॥ तृष्णा प्रमेहं मधुरं सपिच्छं मधूपमं स्याद्विविधो विकारः । संपूरणा वा कफसंभवा स्यात्क्षीणेषु दोषेष्वनिलात्मकेन ॥ संपूर्णरूपाः कफपित्तमेहाः क्रमेण ये वातकृताश्च मेहाः । साध्या न ते पित्तकृतास्तु याप्याः साध्यस्तु मेहो यदि नातिदुष्टः ॥

अर्थ—पसीना, अंग से बदन आना, शरीर शिथिल होना, सेज आसन और निद्रा के सुख की इच्छा, हृदय, नेत्र, जिह्वा, कान इनका दाह, अंग जड होना, केश और नख की वृद्धि, बड़े पदार्थों की चाह, कंठ और तालु में शोष, मुँह मठि, हाथ और पांव का दाह, मूत की ओर चींटियाँ या मक्खियों का आ जाना, प्यास,

मूत्र भीठा, चिकना और सहत की समान, अनेक प्रकार के उपद्रव, दोष के क्षण होने पर कफ की प्राबल्य ये लक्षण होते हैं, न बढा हुआ कफमेह साध्य है, पित्त-मेह याप्य है, वातमेह असाध्य है ॥

त्रिफलादि योग

त्रिफलावेणुपत्राब्दपाठामधुयुतैः कृतः ।

कुंभयोनिरिवांभोधिं बहुमूत्रं तु शोषयेत् ॥

अर्थ—त्रिफला, बांस के पत्ते, नागरमोथा, पाठ की जड़ इनके काटे में सहत डालके पिलावे तो अगस्त्यऋषि ने जैसे समुद्र को शोष लिया उसी प्रकार यह बहु-मूत्र को शोष करे ॥

देवदार्व्यारिष्ट

तुलार्धं देवदारु स्याद्भासा च पलविंशतिः । मंजिष्ठेन्द्रयवा दंती
तगरं रजनीद्वयम् ॥ रास्ना कृमिघ्नं मुस्तं च शिरीषं खदिरा-
र्जुनौ । भागान्दशपलान् दद्याद्यवान्या वत्सकस्य च ॥ चंद-
नस्य गुडूच्याश्च रोहिण्याश्चित्रकस्य च । भागानष्टपलानेता-
नष्टद्रोणेभसः पचेत् ॥ द्रोणशोषे कपाये च पूते शीते प्रदापयेत् ।
धातक्याः षोडशपलं माक्षिकस्य तुलात्रयम् ॥ व्योपस्य द्विपलं
दद्यात् त्रिजातं च चतुःपलम् । चतुःपलं प्रियंगुश्च द्विपलं नाग-
केशरम् ॥ सर्वाण्येतानि संचूर्ण्य घृतभांडे विधारयेत् । मासा
दूर्ध्वं पिवेदेनं प्रमेहं हंति दुर्जयम् ॥ वातरोगान् ग्रहण्यशौं मूत्र-
कृच्छ्राणि नाशयेत् । देवदार्व्यादिकोरिष्टः कंडूकुष्ठविनाशनः ॥

अर्थ—देवदारु आधे तुलाप्रमाण, अडूसा २० पल, मजीठ, इन्द्रजो, दंती की जड़, तगर, हलदी, दारुहलदी, रास्ना, वायविडंग, नागरमोथा, शिरस, कत्ये की छाल, कोहवृक्ष की छाल ये चारह औषध दश २ पल लेवे. अजमोद, कूडा की छाल, सपेद चंदन, गिलोय, कुटकी, चित्रक ये छः औषध आठ २ पल लेवे. फिर इन सब औषधों को थोड़ी कूट आठ द्रोण जल में डालके औटावे. जब १ द्रोण जल शोष रहे तब उतारके छान लेवे जब शीतल हो जावे तब इतनी औषध और डाले. धाम के फूल १६ पल और सहत ३ तुला तथा सांठ, पिरच, पीपल इन तीनों को २ पल मिलायके और दालचीनी, इलायची, पत्रज ये तीन औषध चार पल लेय,

फूल प्रियंगु ४ पल तथा नागकेशर दो पल इन सब औषधों को चूर्ण करके उस काटे के जल में डाल देवे तथा सहत कहे हुए प्रमाण से डाल सब को एकत्र करे और घी के चिकने वासन में भरके उस के मुख पर मुद्रा देकर एक महीने पर्यंत धरा रहने दे. फिर मुद्रा को दूर करके इस को निकाले इसे देवदाचार्यारिष्ट कहते हैं. यह अरिष्ट पीवे तो घोर दुर्घट प्रमेह दूर हो तथा वादी का रोग, बवासीर, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, खुजली, कोढ़ ये सब रोग दूर हों ॥

लोभासव

लोभ्रं शठी पुष्करमूलमेलं मूर्धा विडंगं त्रिफला यवानि । चव्यं
प्रियंगुं क्रमुकं विशालां किराततित्तं कटुरोहिणीं च ॥ भंडीनतं
चित्रकपिप्पलीनां मूलं सकुष्ठार्तिविपां सपाठाम् । कलिंगकाके-
सरामिंद्रसाह्वं नखं सपत्रं मरिचं पुवं च ॥ द्रोणेभसः कर्पसमानि
पक्त्वा पूते चतुर्भागजलावशेषे । रसेन भागो मधुनः प्रदाय पक्षं
विधेयो घृतभाजनेच्छे ॥ लोभासवोयं कफपित्तमेहान्क्षिप्रं नि-
हन्याद्विपलप्रयोगात् । पांड्यामयाशीस्यरुचिं ग्रहण्यां शेषं कि-
लासं विविधं च कुष्ठम् ॥

अर्थ—लोध, कचूर, पुहकरमूल, इलायची, मूर्धा, वापविडंग, त्रिफला, अजमायन, चव्य, प्रियंगु, सुपारी, इन्द्रायन की जड़, चिरायता, कुटकी, निसोय, तगर, चित्रक, पीपरामूल, कूठ, अतीस, पाद, काकडासिंगी, नागकेशर, इन्द्रजो, नख (सुगंधद्रव्य), पत्रज, मिरच, भद्रमोथा ये प्रत्येक एक २ तोला लेवे सब को कूट १०२४ तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे फिर इस काटे के बराबर सहत डालके चिकने वासन में भरके १५ दिनतक मुख मूंदकर धर देवे पश्चात् इस में से निकाल ६ तोले के प्रमाण सेवन करे तो कफ, पित्त, प्रमेह, पांडु, बवासीर, संग्रहणी, अरुचि, किलास, कुष्ठ, अन्यकुष्ठ इन को शीघ्र नाश करे. इस को लोभासव कहते हैं ॥

तालकेश्वररस

मृतं सूतं मृतं वंगं मृतं लोहाभ्रकं समम् । मर्दयेन्मधुना सार्धं
रसोयं तालकेश्वरः ॥ मापैकं भक्षयेत्क्षौद्रे बहुमूत्रापनुत्तये ॥

अर्थ—पारे की भस्म, वंगभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म ये समान ले सहत से खरल करे इस को तालकेश्वररस कहते हैं. इस को बहुमूत्र के नाश करने के वास्ते १ मासे भर सहत में मिलायके खाये ॥

वंगेश्वररस

शुद्धसूतं समं गंधं वंगं च द्विगुणं भवेत् । एकत्र मर्दयेत्सर्वं व-
ल्लमेकं प्रमेहिणाम् ॥ शर्करामधुसंयुक्तं पथ्यं च क्षारवर्जितम् ।
एष वंगेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृंतनः ॥

अर्थ—पारा १, गंधक १, वंगभस्म २ भाग इस प्रकार लेकर एकत्र खरल कर १
वल्ल सहित और मिश्री के साथ प्रमेहवाला खाय इस पर खारी पदार्थ खाना निषेध
है. इस को वंगेश्वररस कहते हैं यह सर्व प्रमेहों को नष्ट करता है ॥

आनंदभैरवरस

विपोषणकणाटंकार्हिगुलैः समचूर्णिकः ।

आनंदभैरवस्यास्य गुंजातीसारमेहनुत् ॥

अर्थ—विपासिंगिया, काली मिरच, पीपल, सुहागा, हींगूल ये समान भाग ले एकत्र
चूर्ण करे इसको आनंदभैरवरस कहते हैं. १ रत्ती सेवन करने से प्रमेह और
अतिसार को नाश करे ॥

प्रमेहवद्धरस

भस्मसूतं मृतं कांतं मुंडभस्म शिलाजतु । तुत्थं ताप्यं शिला
व्योषं त्रिफलां कोलबीजकम् ॥ कपित्थं रजनीचूर्णं भृंगराजेन
भावयेत् । विशद्वारं विशोष्याथ मधुयुक्तं लिहेत्सदा ॥ निष्क-
मात्रं हरेन्मेहान्मेहवद्धरसो महान् । महान्निवस्य बीजानि पिष्ट्वा
पद्मसंमितानि च ॥ पलं तंदुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च । एकी-
कृत्य पिबेच्चानुहंति मेहं चिरंतनम् ॥

अर्थ—पारे की भस्म, कांतलोह की भस्म, लोह भस्म, शुद्ध शिलाजित, सुवर्णमा-
क्षिक भस्म, मनशिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला, कंकोळ के बीज,
कैय का फल और हलदी ये पंधरह औषध समान भाग ले भस्म से पृथक् जो औषध हैं
उन का चूर्ण करके भस्म और चूर्ण को एकत्र मिलाय लेवे. फिर भांगरे के रस की
धीस पुट देवे. इस को प्रमेहवद्धरस कहते हैं. यह रस १ निष्क ले सहित में मिलाय
सेवन करे तो घोर प्रमेहों को दूर करे तथा यकायन के बीज नग ६ का चूर्ण करके और
चावलों का धोवन १ पल लेवे. इस में पूर्वाक्त चूर्ण और दो निष्क घी मिलाय इस में
यह मेहवद्धरसायन मिलापके सेवन करे तो बहुत दिन की भी प्रमेह दूर होय ॥

हरिशंकररस

सूताभ्रमामलजलैः सप्तवारं विभावयेत् ।

हरिशंकरसंज्ञः स्याद्रसः सर्वप्रमेहनुत् ॥

अर्थ—पारे की भस्म, अभ्रकभस्म इन दोनों को आवलों के रस में खरल करके सात भावना देवे तो यह हरिशंकररस सिद्ध होय. यह सर्व प्रमेहनाशक है ॥

मेघनादरस

सूतं कांतं गंधतीक्ष्णं ताप्यं द्योपं फलत्रिकम् । शिलाजतु
शिलां कोलबीजं रात्रिकपित्थकम् ॥ त्रिःसप्तकृत्वा भृंगाद्भि-
र्भावयेन्निष्क्रमानकम् । मधुना मेघनादोयं सर्वमेहान्विनाशयेत् ॥

अर्थ—पारे की भस्म, कांतलोह की भस्म, गंधक, तीक्ष्णलोह की भस्म, सुवर्ण-
माक्षिकभस्म, त्रिकुटा, त्रिफला, शिलाजीत, मनसील, अंकोल के बीज, हलदी, कैय ये
औषध समान भाग ले चूर्ण करे फिर भांग के काटे की २१ बार खरल कर भावना देवे.
फिर तीन मासे इस रस को सहत में मिलायके सेवन करे तो यह मेघनादरस
संपूर्ण प्रमेहों को नाश करे ॥

निवर्जीजकल्क

महानिवस्य बीजानि पेपयेत्तंदुर्लांबुना ।

सघृतान्यचिराद्धन्युः पानान्मेहांश्चिरोत्थितान् ॥

अर्थ—वक्रायन के फलों की चावलों के घोरन से पीस घी मिलाय सेवन करे
तो तत्काल चिरकाल के प्रमेहों को नाश करे ॥

मेहारिरस

वंगभस्म मृतं सूतं तुल्यं क्षौद्रे विमर्दयेत् ।

द्विगुंजं लेहयेन्नित्यं हंति मेहान् चिरंतनान् ॥

अर्थ—वंगभस्म, पारे की भस्म समान भाग लेवे सहत में खरल कर नित्य दो
रत्ती चाटा करे तो बहुत दिन की प्रमेह नष्ट होय ॥

चंद्रोदयरस

अभ्रकं गंधकं सूतं वंगभस्म समांशकम् । एलां शिलाजतुं चैव
रंभासारेण मर्दयेत् ॥ प्रमेहान् विंशतिं हन्यात् कामलापित्तनाशनः ॥

अर्थ—अत्रकभस्म, गंधक, पारा, वंगभस्म, इलायची, शिलाजीत ये समान भाग लेवे इन को केले के सार के साथ खरल कर खावे तो वीस प्रकार के प्रमेह, कामला, पित्त इन को नाश करे ॥

वंगेश्वररस

रसमेकं त्रयो वंगं वंगसाम्यं तु गंधकम् । मर्दयेद्दिनमेकं तु कु-
मार्याः स्वरसे बुधः ॥ संस्थाप्य गोलकं भांडे रोधयेत्तु दृढं
मुखम् । पाचयेद्बालुकायंत्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥ स्वांगशीत-
लमादाय संपूज्य द्विजदेवताः।पिप्पलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु यो-
जयेत् ॥ क्षीरान्नं योजयेत्पथ्यमनल्पक्षारवर्जितम् । रसो वंगे-
श्वरो नाम सर्वमेहनिर्कुंतनः ॥

अर्थ—पारा १ भाग, वंग ३, गंधक ३ भाग इन को घांगुवार के रस में खरल कर-
के किसी हांडी में अथवा शीशी में भर मुख को बंद कर बालुकायंत्र में एक दिन
उत्तम अग्नि देवे. जब परिपक्व हो जावे तब शीतल होने पर रस को निकाल ले
और देव ब्राह्मण का पूजन कर सहत पीपल के साथ सर्व प्रमेहों पर देवे. दूधभात
का पथ्य है, खटाई और निमक न खाये इस को वंगेश्वररस कहते हैं यह सर्व
प्रमेह नाशक है ॥

मेहकुंजरकेसरी रस

रसगंधायसाभ्राणि नागवंगौ सुवर्णकम् । वज्रकं मौक्तिकं सर्वमे-
कीकृत्य विचूर्णयेत् ॥ शतावरीरसेनेव गोलकं शुष्कमातपे ।
बद्धा शुष्कं तमुद्धृत्य शरावे सुदृढे क्षिपेत् ॥ संधिलेपं मृदा
कुर्याद्गर्तायां गोमयाग्निना । पुटेद्यावच्चतुर्याममुद्धृत्य स्वांगशी-
तलम् ॥ श्लक्ष्णं खल्वे विनिःक्षिप्य गोलं तं मर्दयेद्दृढम् । देव-
ब्राह्मणपूजां च कृत्वा धृत्वा च कूपिकाम् ॥ खादेद्ब्रह्मद्वयं प्रातः
शीतं चानुपिवेज्जलम् । अष्टादशप्रमेहांश्च जयेन्मासप्रयोगतः ॥
तुष्टिं तेजो बलं वर्णं शुक्रवृद्धिं च दारुणम् । अग्नेर्वलं वितनुते
मेहकुंजरकेसरी ॥ दिव्यं रसायनं श्रेष्ठं नात्र कार्या विचारणा ॥

अर्थ—पारा, गंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, शीशे की भस्म, वंगभस्म, सुवर्णभस्म, हीरे की भस्म, मोती की भस्म सब को एकत्र कर शतावर के रस में सरल करे फिर धूप में सुखाय सराव में रस दूसरे सराव से ढक कपडभिट्टी कर देवे. फिर एक गड्ढे में आरने उपलों को भर बीच में इस संपुट को रख देवे. इस में चार प्रहर की अग्नि देवे. जब शीतल हो जावे तब निकाल सरल करके वारीक छान लेवे. देव, ब्राह्मण, अतिथी इन को पूजन कर शीशी में भरके रख देवे. इस में से निरस्य प्रातःकाल ४ रत्ती खाय ऊपर से शीतल जल पीवे. इस प्रकार एक महीना भर करे तो अठारह प्रकार के प्रमेहों को जीते तथा तुष्टि, तेज, बल, वर्ण, शुक्रवृद्धि, अग्निवृद्धि को करे. इस को मेहकुंजरकेसररस कहते हैं. यह बड़ी भारी रसायन है इस में संदेह नहीं ॥

पंचलोहरसायन

मृताभ्रं कांतलोहं च नागवंगौ विशोधितौ । यथोत्तरं भागवृद्ध्या
खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥ तलपोटेन वाराह्या शतावर्या हिमांबुना ।
भावनान्न प्रकर्तव्या यामं यामं पृथक् पृथक् ॥ चणमात्रां वर्तौ
कृत्वा नवनीतेन सेवयेत् । प्रातरुत्थाय विधिना सर्वमेहकुलां-
तकः ॥ शाल्यन्नं सपटोलं च तंदुलीयकवास्तुकम् । मत्स्या-
क्षीमुद्गयूपं च अपक्वं कदलीफलम् ॥ अशींसि ग्रहणीदोषमूत्र-
कृच्छ्राश्मरीप्रणुत् । कामलापांडुशोफं च अपस्मारं क्षतक्ष-
यान् ॥ रक्तकासविनाशाय पंचलोहरसायनम् ॥

अर्थ—अभ्रकभस्म, कांतलोह की भस्म, शीशे की भस्म, वंगभस्म ये सब भस्म १-२-३-४ भाग क्रम से लेवे. फिर ताड़, नारसल, वाराहीकंद, शतावर, लाल चंदन इन का काटा करके पृथक् २ भावना एक २ प्रहर देवे और सरल करे. फिर चने के बराबर गोली बनाय लेवे. १ गोली को मकरान के साथ भक्षण करे तो प्रमेह को नाश करे तथा शाली का भात, परबल, चौलाई, बधुआ, मछेठी, मूंग का मंड, हरे केले ये पध्य में देवे तो बवासीर, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, कामला, पांडुरोग, सूजन, मृगी, क्षतक्षय, रुधिरविकार और सांसी इन के नाश करने को यह पंचलोहरसायन उत्तम है ॥

महावंगेश्वररस

वंगं कांतं च गगनं हेमपुष्पं समं समम् ॥ कुमारीरसतो भाच्यं

सप्तवारं भिषग्वरैः ॥ एष वंगेश्वरो नाम प्रमेहान्विशर्ति जयेत् ॥
मूत्रकृच्छ्रं सोमरोगं पांडुरोगं महाश्मरीम् ॥ रसायनवरश्रेष्ठो
नागार्जुनविनिर्मितः ॥

अर्थ—वंगभस्म, कांतलोह की भस्म, अत्रक भस्म, पीले जपा के फूल ये सब समान भाग ले घीगुवार के रस की सात भावना देवे तो यह वंगेश्वर नामक रस बीस प्रकार की प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग, पांडुरोग, पथरी इन को नाश करे यह रसायन श्रेष्ठ नागार्जुन ने कही है ॥

वंगभस्म

वंगं शिलाजतुयुतं तु मतं प्रमेहे धातुक्षये दुर्बलनष्टशुक्रयोः ।

अत्रेण युक्तं तु सुतप्रदं स्याज्जातीफलार्ककरहाटलवंगयुक्तम् ॥

अर्थ—वंगभस्म और शिलाजीत इन को एकत्र करके खाए तो प्रमेह, धातुक्षय, दुर्बलता, नष्टशुक्र इन को नाश करे और अत्रक की भस्म, जायफल, अर्कपुष्पी, पद्मकंद, लौंग इन के साथ सेवन करे तो पुत्र होय ॥

वसंतकुसुमाकररस

पृथक् द्वौ हाटकं चंद्रं त्रयो वंगा हि कांतजम् । चत्वारः सूतम-
भ्रं च प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥ भावना गव्यदुग्धेषुवासाश्रीद्वि-
जलेर्निशा । मोचकंदरसैः सप्त क्रमाद्भाव्यं पृथक् पृथक् ॥ शतप-
त्रसेनैव मालत्याः कुसुमैस्तथा । पश्चान्मृगमदैर्भाव्यः सुसिद्धो
रसराट् भवेत् ॥ कुसुमाकरविख्यातो वसंतपदपूर्वकः । वल्लद्वय-
मितः सेव्यः सिताज्यमधुसंयुतः ॥ वलीपलितहृन्मेध्यः कामदः
सुखदः सदा । मेहघ्नः पुष्टिदः श्रेष्ठः परं वृष्यो रसायनः ॥
आयुर्वृद्धिकरं पुंसां प्रजाजननमुत्तमम् । क्षयकासतृपोन्माद-
श्चासरक्तविपार्तिजित् ॥ सिताचंदनसंयुक्तमम्लपित्तादिरोग-
जित् । हंति पांडुमयान् शूलान्मूत्रघाताश्मरीं हरेत् ॥ योग-
वाहि त्विदं सेव्यं कांतिश्रीवलवर्धनम् । सुसात्म्यमिष्टभोजी च
रमयेत्प्रमदाशतम् ॥ मदनं मदन्यन्मदसुज्वलयन्प्रमदानिवहान-
तिविह्वलयन् । सुरतैः सुखदैर्गतिविव्यचनैर्भवसारजुपामयमेव
सुहृत् ॥

अर्थ—सुवर्णभस्म २ भाग, रौप्यभस्म २ भाग, वंगभस्म ३ भाग, शीशे की भस्म ३ भाग, कांतलोह की भस्म ३ भाग, पारा ४ भाग, अत्रकभस्म ४ भाग, मूंगा की भस्म ४ भाग, मोती की भस्म ४ भाग इस क्रम से सब वस्तु लेके उस को गौकादूध, ईख का रस, अदूसे का रस, चंदन, खस, नेत्रवाला, हलदी, केले का कंद इन के काढे की, कमल का रस, चमेली की कलियों का रस इन की पृथक् २ सात २ भावना देवे. फिर कस्तूरी के कल्क की भावना देवे तो यह वसंतकुसुमाकर संपूर्ण रसों का राजा बनके तैयार होवे. इस में से ४ रत्ती रस सहत, घी, मिश्री इन में मिलायके सेवन करे तो बुढापे को दूर करे. पवित्र, कामसुख इन को देवे तथा प्रमेहनाशक, पुष्टिकारक, वृष्य, रसायन, आयुष्य और प्रजा इन को देवे तथा क्षय, खांसी, तृषा, उन्माद, श्वास, रुधिरविकार, विष, पांडुरोग, शूल, मूत्राघात, पथरी इन को नष्ट करे तथा मिश्री, चंदन इन के साथ सेवन करने से अम्लपित्तादि रोगों को जीते. यह योगवाही है. कांति, श्री, बलवर्द्धक ऐसा है. इस का सेवन करने के उपरांत यथेष्ट भक्षण करे पथ्य की कुछ जबरत नहीं है. इस का सेवन करनेवाले मनुष्य को सौ स्त्रियों से रमण करने की शक्ति होवे, कामदेव को भी लज्जित करे और मदोन्मत्त होकर स्त्रियों को विवहल करे. संसारी मनुष्यों का यह परम सुदृत् है ॥

जलजामृतरस

तवक्षीरं शिलाधातुवंगं कुंडलिसत्वकम् । मेहारिवीजसंयुक्तं वि-
दारीजीवनीरसैः ॥ भावयेत्तत्रिवारं तु सितोपलसमन्वितम् ।
जलजामृतविख्यातो रसोयं मेहकृच्छ्रनुत् ॥

अर्थ—तवाक्षीर, शिलाजीत, गिलोय का सत्त्व, वंगभस्म. सपेद सारिया के बीज और मिश्री इन सब को एकत्र कर विदारीकंद के रस की तीन भावना देवे तो यह जलजामृत रस मेहकृच्छ्र को नाश करे ॥

प्रमेह की उपेक्षा से प्रमेह पिट्काओं का होना
प्रमेहाणां प्रजायन्ते पिटिकाः सर्वसंधिषु । शराविका क-
च्छपिका जालनी विनताऽलजी ॥ मसूरिका सर्पपिका
पुत्रिणी सविदारिका । विद्रधिश्चेति पिटिकाः प्रमेहापेक्षया
दश ॥ संधिमर्मसु जायन्ते मांसलेषु च धामसु ॥

अर्थ—प्रमेहसंबंधी दश प्रकार की पिटिकायें सब संधियों में होती हैं. १ शरा-

विका, २ कच्छपिका, ३ जालिनी, ४ विनता, ५ अलजी, ६ मसूरिका, ७ सर्प-
पिका, ८ पुत्रिणी, ९ विदारिका, १० विद्रधी ये इन के नाम हैं. प्रमेह की उपेक्षा
करने से ये शराविकादि दश पिटिका संधिमर्म और मांसल ठिकाने में होती हैं ॥

पिटिका के कारण

ये यन्मयाः स्मृता मेहास्तेषामेतास्तु तन्मयाः । विना प्रमेह-
मप्येता जायन्ते दुष्टमेदसः ॥ तावच्चैता न लक्ष्यन्ते यावद्वास्तु-
परिग्रहः ॥

अर्थ—जो प्रमेह जिस दोष करके उल्वण होय है तिस करके तिसी दोष के
उल्वण करके पिटिका होय है ये पिटिका प्रमेह के विना दुष्टमेद के होने से प्रगट
होती है जबतक इन की गांठ नहीं बधे तबतक नहीं दीखे (ये यन्मयाः स्मृता मेहाः)
इस पद के ऊपर मधुकोशवाले ने शास्त्रार्थ लिखा है ग्रन्थ बढने के भय से हम ने
नहीं लिखा ॥

दश पिटिकाओं के लक्षण

अंतोन्नता च तद्रूपा निम्नमध्या शराविका । सदाहा कूर्मसंस्था-
ना ज्ञेया कच्छपिका बुधैः ॥ जालनी तीव्रदाहा तु मांसजाल-
समावृता । अवगाढरुजोत्क्लेदा पृष्ठे वाप्युदरेऽपि वा ॥ महती
पिटिका नीला सा बुधैर्विनता स्मृता । रक्ता सिता स्फोटवती
दारुणा त्वलजी भवेत् ॥ मसूरदलसंस्थाना विज्ञेया तु मसू-
रिका । गौरसर्पसंस्थाना तत्प्रमाणा च सर्पपी ॥ महत्यल्प-
चिता ज्ञेया पिडिका चापि पुत्रिणी । विदारीकंदवदृत्ता कठिना
च विदारिका ॥ विद्रधेऽंक्षणैर्युक्ता ज्ञेया विद्रधिका तु सा ॥

अर्थ—१ शराविका—ये पिटिका ऊपर के भाग में ऊंची और मध्य में बैठी सी होय
जैसा मट्टी का शराव होय है ऐसी होय है. २ कच्छपिका—ये कच्छ के पीठ के समान
कुछ दाहयुक्त ऐसी होय है. ३ जालनी—ये तीव्र दाह करके संयुत और मांस के जाल
से व्याप्त होय है. ४ विनता—ये फुन्शी पीठ में अथवा पेट में होय है इस की पीडा
बहुत होय, ठंडी होय तथा बड़ी और नीले रंग की होय है. ५ अलजी—लाल काली
भारीक फोड़ों करके व्याप्त भयंकर होय है. ६ मसूरिका—मसूर की दाल के समान बड़ी
होय है. ७ सर्पपिका—सफेद सरसों के समान बड़ी होय है. ८ पुत्रिणी—ये बीच में

एक बड़ी फुन्सी होय उस के चारों ओर छोटी छोटी फुन्सी और होय उस को पुत्रिणी कहते हैं. ९ विदारिका—ये विदारीकंद के समान गोल और करडी होय है. १० विद्राधिका—ये विद्राधि के लक्षण करके युक्त होय है. भोज और सुशुत के मत से नीपिटिका हैं और चरक के मत से सात ही है ॥

असाध्य पिटिका

गुदे हृदि शिरस्यंसे पृष्टे मर्मसु चोत्थिताः ।

सोपद्रवा दुर्वलाग्नेः पिडिकाः परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—गुदा में हृदय में शिर में कंधा में पीठ में और मर्मस्थान में चंठी पिटिका और उपद्रव युक्त हो तथा दुर्वलाग्नि पुरुष की पिटिका त्याज्य है ॥

प्रमेह के साध्य लक्षण

प्रमेहिणो यदा मूत्रमनाविलमपिच्छलम् ।

विशदं तित्तकटुकं तदारोग्यं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ—जब प्रमेहरोगवाले का मूत्र न मैला और न चिकना होय किंतु स्वच्छ, सीखा और कटुवा हो तब रोगी को आरोग्य होवेगा ऐसा कहना ॥

पिटिका के उपद्रव

तृट्श्वासमांससंकोचमोहदिकामदज्वराः ।

विसर्पमर्मसंरोधाः पिटिकानामुपद्रवाः ॥

अर्थ—प्यास, श्वास, मांस का संकोचना, मेह, हिका, मद, विसर्प, मर्मस्थान में पीडा ये पिटिका के उपद्रव हैं ॥

पिटिका की सामान्यचिकित्सा

प्रमेहपिटिकानां तु प्राकार्यं रक्तमोक्षणम् ।

पाटनं तु विपक्वानां तासां पानं प्रशस्यते ॥

अर्थ—प्रमेहपिटिकाओं का प्रथम रुधिर निकाले और जब पक जावे तब पाटन करे तथा इन पर कपाय इत्यादिक सेवन करना उत्तम है ॥

क्वाथो व्रणघ्नोत्र वस्तिर्मूत्रलो रक्तमोक्षणम् ।

व्रणस्य प्रक्रिया सर्वा कार्यात्रापि भिषग्वरैः ॥

अर्थ—व्रणनाशक क्वाथ, वस्तिकर्म, मूत्र छानेवाले उपचार, फस्त मोटना और संपूर्ण व्रणरोग में जो क्रिया कही है वह इस जगह करनी चाहिये ॥

न्यग्रोधादि चूर्ण

न्यग्रोधोदुंबराश्वत्थस्योनाकारश्वधासनम् । आम्रं कपित्थं जंबू
च प्रियालं ककुभं धवम् ॥ मधुकं मधुकं रोध्रं वरुणं पारिभ-
द्रकम् । पटोलं मेषशुंगी च दंती चित्रकमाटकी ॥ करंजत्रिफ-
लाशक्रभल्लातकफलानि च । एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि
कारयेत् ॥ न्यग्रोधाद्यमिदं चूर्णं मधुना सह योजयेत् । फल-
त्रयरसं चानुपिवेन्मूत्रविशुद्धये ॥ एतेन विंशतिर्मेहा मूत्रकृच्छ्रा-
णि यानि वा । प्रशमं यांति वेगेन पिटिकासु च योजयेत् ॥

अर्थ—बड, गूलर, पीपर, टेंदू, अमलतास, विजेसार, आम, कैथ, जामुन, चिरौं-
जी, कोह, धौ, महुआ, मुलहठी, लोध, वरना, नीम, पटोलपत्र, मेढासिंगी, दंती,
चित्रक, अरहर, कंजा, हरड, बहेडा, आवला, कूडा और भिलाए ये सब समान
भाग लेके बारीक चूर्ण करे. इस को न्यग्रोधादि चूर्ण कहते हैं. इस को सहत में
मिलायके चाटे ऊपर से हरड, बहेडा, आवला इन का काढा मूत्र शुद्ध होने को पीवे
तो बीस प्रकार के प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र ये तत्काल शांत होवे तथा इस को पिटिकारोग
पर देवे ॥

पिटिकाओं पर लेप

क्षीरमौदुंबरं यत्नाद्राकुचं वा प्रयोजयेत् ।

पिटिकासु समस्तासु लेपनं संप्रशान्तये ॥

अर्थ—गूलर का दूध अथवा बावची का दूध संपूर्ण पिटिकाओं पर लेप करे तो
सब पिटिका दूर हों ॥

प्रमेह पर पथ्य

प्राग्लघनानि वमनानि विरेचनानि प्रोद्धर्तनानि श्मनानि च
दीपनानि । नीवारकंगुयववैणवकोरदूपश्यामाकचूर्णकुरुर्विदक-
कुष्टकाश्च ॥ गोधूमशालिकलमाश्विरजाः कुलित्था मुद्गाढकीच
णकयूपरसास्तिलाश्च । लाजा पुरातनसुरा मधु वात्यमंडस्तक्रं
च रासभजलं महिपीजलं च ॥ लट्ठाकपोतशशित्तिरलावर्हि-
व्याघ्रैणवर्तकशुकादिकजांगलाश्च । सौभाजनं च कुलकं च

कठिलकं च कर्कोटकं तलकमप्यथ वार्हतं च ॥ औदुंबराणि लशु-
नानि नवीनमोचं पत्तूरगोक्षुरकमूपकपर्णशाकम् । मंदारपत्रम-
मृता त्रिफला कपित्थं जंबूकसेरुकमलोत्पलकंदधीजम् ॥ खजूर-
लांगलिकतालतरुत्तमांगं व्योषं च त्रिदुकफलं खदिरं कलि-
गम् । तिक्तानि चापि सकलानि कपायकाणि हस्त्यश्ववाहन-
मतिभ्रमणं रवित्विद् ॥ व्यायाम इत्यपि गणो भवति प्रकामं
मित्रं प्रमेहगदपीडितमानवानाम् ॥

अर्थ—प्रथम लंघन, वमन, विरेचन, उबटना तथा प्रमेह शमन करते और दीपन करते पदार्थों को सेवन करे, पुराने तृणधान्य, कांगनी, जों, बांस के चावल, कोदों, सामखिया, ज्वार, नागरमोथा, मोठ, गेहूं, शालीचावल, कलमीचावल, पुराने कुलथी, मूंग, अरहर, चना इन के यूपरस और तिल, खील, पुरानी दाहू, सहत, वाद्यमंड, छाछ, गधे का और भैस का मूत्र, लट्टा (कबूतर की जाति), पिंडुकिया, शशे, सीतर, लवा, मोर, बघेरा, काला हिरण, बटेर, तोता आदि जंगली जीव, सहजना, परवल, करेला, ककोडा, तिलक, कटेरी, गूलर, लहसन, नवीन केला की फली, पत्तूर, गोखरू, मूपाकरणी का साग (पत्तों का साग), आक के पत्ते, गिलोय, त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला), कैय, जामुन, कसेरू, कमल, भसीडा, कमल-गट्टा, खिजूर, कलियारी, तालफल, सोंठ, मिरच, पीपल, तेंदू, खैर, इन्द्रजो (तरमू-ज), संपूर्ण कडवे पदार्थ और कपेले पदार्थ, हाथी, घोड़े की सवारी, अत्यंत डोलना, सूरज की धूप और दंड कसरत करना ये संपूर्ण पदार्थ प्रमेहरोगपीडित मनुष्यों को हितकारी जानने ॥

प्रमेहरोग में अपथ्य

वेगरोधं धूमपानं स्वेदं शोणितमोक्षणम् । सदासनं दिवानिद्रां
नवान्नानि दधानि च ॥ आनूपमांसं निष्पावं पिष्टान्नानि च मै-
थुनम् । सौवीरकं सुरासूक्तं तैलं क्षीरं गुडं घृतम् ॥ तुंवी ता-
लास्थिमज्जां च विरुद्धान्यशनानि च । कूष्मांडमिश्रदुष्टांबु
स्वाद्मल्लवणानि च ॥ अभिष्यंदि च यत्नेन प्रमेही परिवर्जयेत् ।

अर्थ—मलमूत्रादि वेगों का रोकना, धूमपान, पसीने निकालना, रुधिर निकालना, अष्टप्रहर भोजन, दिन में सोना, नये अन्न और दही, अनूपदेश के जीवों का मांस

चौरा, पीसे हुए अन्न, मैथुन, कांजी, दारु, सिका, तेल, दूध, गुड, घी, तंबा, ताल के भीतर का गूदा, विरुद्ध भोजन, नवीन पेटे का फल, ईख (गंडे), दुष्टजल, स्वादु, खट्टे, निमकीन पदार्थ और अभिष्यंदी पदार्थ ये सब प्रमेहरोगवाले को यत्न-पूर्वक त्याग देने चाहिये ॥

इति श्रीबृहन्नियण्डुरत्नाकरे प्रमेहपित्तक्रानिदानचिकित्सा समाप्ता ।

मेदोरोगनिदानचिकित्सा ।

मेदोरोगनिदान

अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्मलाहारसेविनः ।

मधुरोऽन्नरसः प्रायः स्नेहान्मेदो विवर्द्धते ॥

अर्थ—दंड कसरत के न करने से, दिन में सोने से और कफकारी पदार्थ के सेवन करने से ऐसी रीति से वर्त्तनेवाले पुरुष का अन्नरस केवल मधुर कहिये आमरूप हो स्नेह करके मेद को बढ़ावे ॥

संप्राप्ति

मेदसावृतमार्गत्वात्पुण्यंत्यन्येन धातवः ।

मेदस्तु चीयते यस्मादशक्तः सर्वकर्मसु ॥

अर्थ—मेद करके मार्ग बंद होने से अन्य धातु हाड मज्जा वीर्य आदि पुष्ट नहीं हों और मेद बढ़े तब वह पुरुष सर्व कर्म करने को अशक्त होय ॥

बढी हुई मेद के उपद्रव

क्षुद्रश्वासतृषामोहस्वप्नक्रथनसादनैः ।

युक्तः क्षुत्स्वेददौर्गन्ध्यैरल्पप्राणोल्पमैथुनः ॥

अर्थ—क्षुद्रश्वासः रुक्षायासोद्रव इत्यादिक पिछाडी कह आये सो तृषा मोह निद्रा अकरमात् श्वास का रोकना अंगगलानि भूख पसीना और दुर्गन्धि इन लक्षणों करके वह पुरुष युक्त होय उस की शक्ति घट जाय और मैथुन करने में उत्साह न होय ॥

मेद रहने के स्थान

मेदस्तु सर्वभूतानामुदरेष्वस्थिषु स्थितम् ।

अत एव वृद्धिः प्रायो मेदस्विनो भवेत् ॥

अर्थ—मेद यह सब प्राणिमात्रों के उदर और हड्डियों में रहे है इसी से मेदवाले पुरुष का पेट बढा करता है ॥

मेदरोग में जठराग्नि प्रदीप्त होने में कारण

मेदसावृतमार्गत्वाद्वायुः कोष्ठे विशेषतः । चरन्संधुक्षयत्यग्नि-
माहारं शोषयत्यपि ॥ तस्मात्स शीघ्रं जरयत्याहारं चापि कां-
क्षति । विकारांश्चाश्रुते घोरान्कांश्चित्कालव्यतिक्रमात् ॥

अर्थ—मेद से मार्ग रुक जाने से कोठे में पवन का संचार विशेष होय तब अग्नि को यह पवन बढावे. भोजन करे आहार को तुरन्त शोषण करे तब वह आहार शीघ्र पचकर फेर जेमने की इच्छा को प्रगट करे और भोजन करने में काल का व्यतिक्रम होने से भयंकर वात के रोग उत्पन्न होंय ॥

बढी मेद नाश का कारण होती है यह कथन

एतावुपद्रवकरौ विशेषादग्निमारुतौ ।

देहं हि दहतः स्थूलं वनं दावानलो यथा ॥

अर्थ—यह अग्नि और वायु बढा उपद्रव करे है जैसे दावानल (अग्नि) वन को जरावे है उसी प्रकार ये दोनों उस स्थूल (मोटे) पुरुष को जराते हैं ॥

अत्यंत मेद बढने का परिणाम

मेदस्यतीव संवृद्धे सहसैवानिलादयः ।

विकारान् दारुणान् कृत्वा नाशयंत्याशु जीवितम् ॥

अर्थ—मेद अत्यन्त बढने से वायु आदि अकस्मात् भयंकर प्रमेहपिटिका, ज्वर, भगंदर, विद्रधि, वातरोग इत्यादि उत्पन्न करके शीघ्र ही जीव का नाश करे ॥

स्थूललक्षण

मेदोमांसातिवृद्धत्वाच्चलस्फिगुदरस्तनः ।

अयथोपचयोत्साहो नरोऽतिस्थूल उच्यते ॥

अर्थ—मेद और मांस ये अत्यंत बढने से जिस पुरुष के कूले, पेट और स्तन ये बल्ल बल्ल हल्ले और उस के शरीर की स्थूलता बढी होय अर्थात् जैसी चाड़िये तेसी न होय तथा उत्साह (दृशयारी) न रहे ऐसे मनुष्य को अति स्थूल कहते हैं ॥

उवटना

हरीतकीलोध्रमरिष्टपत्रपूतत्वचो दाडिमवल्कलं च ।

एषोंगरागः कथितोंगनानां जंब्वाः कपायश्च नराधिपानाम् ॥

अर्थ—हरड, पठानी लोध, नीम के पत्ते, कंजा की छाल, अनार का वक्कल इन को पीसके उवटना करे और जामुन का काढा पीवे यह स्त्रियों को और राजाओं को उत्तम है ॥

सामान्ययोग

गुडूचीभद्रमुस्तानां प्रयोगस्त्रैफलस्तथा ।

तक्रारिष्टप्रयोगश्च प्रयोगो माक्षिकस्य च ॥

अर्थ—गिलोय, भद्रमोथा, त्रिफला, छाछ, नीम के पत्ते ये सब योग दुर्गंधिनाशक है। उसी प्रकार सहत दुर्गंधिनाशक है ॥

चव्यादि चूर्ण

सचव्यजीरकव्योपहिंणुसौवर्चलानलाः ।

मधुना सक्तवः पीता मेदोघ्ना वह्निदीपनाः ॥

अर्थ—चव्य, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, संचरानिमक और चित्रक इन का चूर्ण सहत में मिलायके चाटे तो मेदरोग नष्ट होय ॥

फलत्रिकादि चूर्ण

फलत्रयं त्रिकटुकं सतैलं लवणान्वितम् ।

षण्मासमुपभुक्तं चेत्कफमेदोनिलापहम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल, तेल, संधानिमक ये सब औषध एकत्र करके छः महीने पर्यंत सेवन करे तो कफ, मेद और वादी इन को नाश करे ॥

मेद पर सामान्यचिकित्सा

अस्वप्नं च व्यवायं च व्यायामं चिंतनानि च ।

स्थौल्यमिच्छन् परित्यक्तुं क्रमेणातिप्रवर्तयेत् ॥

अर्थ—अल्प सोना, मैथुन करना, दंड-कसरत, चिंता ये जिस को स्थूलता दूर करने की इच्छा होय उस को क्रम करके ये बढाने चाहिये ॥

नवकगुग्गुलु

व्योषाग्निमुस्तत्रिफलांविडंगे गुग्गुलुः समम् । खादन्सर्वान् जये-
व्याधीनामवातभवान् गदान् ॥ क्षौद्रेण त्रिफलाक्वाथः पीतो
मेदोहरः स्मृतः ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, नागरमोथा, हरड, बहेडा, आवला, वायवि-
डंग, गूगल ये समान भाग ले एकत्र चूर्ण करके साय तो संपूर्ण रोगों की जय होय
और आम से उत्पन्न हुए रोगों का पराजय होय. सहत के साथ हरड, बहेडा और
आवला इन का काढा करके पीवे तो मेद को हरण करे ॥

मेद पर उपचार

शीतीभूतं तथोष्णांबु मेदोहृत्क्षौद्रसंयुतम्
उष्णं भक्तस्य मंडं वा पिवन्कृशतनुर्भवेत् ॥

अर्थ—गरम जल को शीतल करके उस में सहत, डालके पीवे तो मेदरोग को
नाश करे उसी प्रकार चावलों का माढ गरमागरम पीवे तो देह कृश होय ॥

तालपत्र का क्षार

क्षारं वा तालपत्रस्य हिंयुयुक्तं पिबेन्नरः ।
मेदोवृद्धिविनाशाय भक्तमंडसमन्वितम् ॥

अर्थ—ताड के पत्तों का क्षार, हींग इन को भात के माढ से पीवे तो उस प्राणी
की मेदवृद्धि नाश होय ॥

मोचरसादि लेप

हितो मोचरसो युक्तश्चूर्णैरुदधिफेनजैः ।
प्रलेपेन निहंत्याशु देहदुर्गंधमुत्कटम् ॥

अर्थ—मोचरस और समुद्रफेन इन को एकत्र खरल कर लेप करे तो अत्यंत देह
की दुर्गंध को नष्ट करे ॥

हरीतक्यादि उद्धर्तन

हरीतकी तु संपिष्य गात्रमुद्धर्तयेन्नरः ।
पश्चात्स्नानं प्रकुर्वीत देहस्वेदप्रशांतये ॥

अर्थ—हरड को पीसके देह में उषटना करके स्नान कर डाले तो देह में पसीने
निकलना बंद होवे ॥

चंद्राशु शीतलं लोभ्रं शिरीषोशीरकेशरैः ।
उद्धर्तनं भवेद्ग्रीष्मे स्वदोह्नमनिवारणम् ॥

अर्थ-कंकोल, लोभ, शिरस, पाठा, कमल के केशर इन का उवटना यह पसीने का निवारण करता है ॥

उवटना

शिरीषलामज्जकहेमलोभ्रैस्त्वद्गोपसंस्वेदहरः प्रघर्षः ।
प्रियंगुलोध्राभयचंदनानि शरीरदौर्गन्ध्यहरः प्रदिष्टः ॥

अर्थ-शिरस, पीला रोहिपत्तन, नागकेशर और लोभ इन का कल्क करके में मालिस करे अथवा फूलप्रियंगु, लोभ, रस, चंदन इन का कल्क देह में मालि करे तो त्वचा के दोष, पसीने, शरीर की दुर्गंधी इन को नाश करे ॥

काथ

क्षौद्रेण त्रिफलाकाथः पीतो मेदोहरः स्मृतः ॥

अर्थ-त्रिफला के काटे में सहत ढालके पीवे तो मेदरोग दूर होय ॥

त्र्यूपणाद्य लेह

त्र्यूपणं त्रिफला चव्यं चित्रकं विडमौद्भिदम् । वाकुची सेंधवं
चैव सौवर्चलमयोरजः ॥ मापमात्रमतश्चूर्णं लिह्यादाज्यमधुसु-
तम् । अतिस्थौल्यमिदं चूर्णं निहंत्यग्निविवर्धनम् ॥ मेदोघ्नं मेह-
कुष्ठघ्नं श्लेष्मव्याधिनिवर्हणम् । नाहारे नियमश्चात्र विहारे वा वि-
धीयते ॥ त्र्यूपणाद्यमिदं चूर्णं रसायनमनुत्तमम् ॥

अर्थ-त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, चित्रक, विडनिमक, सोरा, वावची, सेंधानिमक संचरनिमक, लोहभस्म इन सब का चूर्ण एक मासे को घी और सहत के साथ सेवन करे तो अतिस्थूलता नाश होय. अग्निवृद्धि, मेद, प्रमेह, कुष्ठ, कफरोग इन को नाश करे, इस पर किसी प्रकार का परहेज नहीं है. इस को त्र्यूपणाद्य चूर्ण कहते हैं ॥

उवटना

प्रियंगुलोध्राभयचंदनानि शरीरदौर्गन्ध्यहरं प्रदिष्टम् ॥

अर्थ-फूलप्रियंगु, लोभ, हरड और चंदन इन का उवटना करे तो देह की संपूर्ण दुर्गंधी नाश होय ॥

बबूलादि उद्धर्तन

बबूलस्य दलैः सम्यक् वारिणा परिपेषितैः । गात्रमुद्धर्तयेत्पश्चा-
द्धरीतक्या सुपिष्टया ॥ भूय उद्धर्तनं कृत्वा पश्चात्स्नानं समाच-
रेत् । प्रस्वेदान्मुच्यते क्षिप्रं ततस्त्वेवं समाचरेत् ॥ जंबूदलान्जु-
नतरुप्रसवैः सकुष्ठैरुद्धर्तनं प्रकुरुते प्रतिवासरं यः । प्रस्वेदवि-
दुकाणिकानिकराणि पंगोर्दुर्गंधिता वपुषि तस्य पदं दधाति ॥

अर्थ—बबूर के पत्तों को जल में पीस अंग में मालिस करे फिर हरड को पीसके
लगावे पश्चात् गरम जल से स्नान करे तो पसीनों का आना दूर होय, फिर इस प्रकार
करे जामून के पत्ते और कोहवृक्ष के पत्ते, कूठ इन के चूर्ण को जल में पीस जो
नित्यप्रति देह में मालिस करता है उस के देह में पसीने और दुर्गंध नहीं रहे ॥

वासादि लेप

वासादलरसैर्लेपः शंखचूर्णावचूर्णितः ।

विल्वपत्ररसो वापि गात्रदौर्गन्धनाशनः ॥

अर्थ—अहूसे के पत्तों का रस, शंखचूर्ण इन को पीसके लेप अथवा बेल के पत्तों
को रस का लेप देह की दुर्गंध को नाश करे ॥

त्रिफलादि तैल

त्रिफलातिविपामूर्वात्रिवृच्चित्रकवासकैः । निवारग्वधपद्मग्रंथा-
सप्तपर्णनिशाह्वयैः ॥ गुडूचीद्रववाकृष्णाकुष्ठसर्पपनागरैः ।
तैलमेभिः समं पक्वं सुरसादिरसप्लुतम् ॥ पानाभ्यंजनगंडूपन-
स्यवास्तिषु योजितम् । स्थूलतालस्यकंडूादि जयेत्कफकृता-
न्गदान् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आंवला, अतीस, मूर्वा, निसोय, चित्रक, अहूसा, नीम की
छाल, अमलतास, वच, सतोना, हलदी, गिलोय, इन्द्रजो, पीपल, कूठ, शिरस और
सोंठ ये औषध और निर्गुंडी, इत्यादिकों के कफघ्न रस इन करके युक्त तेल को पकावे।
जब सिद्ध हो जावे तब उतारके धर, रखे। इस को पीना, अंजन करना, कुरला करना,
नस्य, बस्ति, मालिस इन ठिकाने उपयुक्त करने से स्थूलता, आलस्य, छुजली
इत्यादि कफ के रोगों को जीते ॥

महासुगंधितैल

चंदनं कुंकुमोशीरं प्रियंगुशठिरोचनम् । तुरुष्कागरुकस्तूरी क-
 पूरो जातिपत्रिका ॥ जातीकंकोलपूगानां लवंगस्य फलानि च।
 नलिका नलदं कुष्ठं हरेणुतगरं पुवम् ॥ नखं व्याघ्रं नखं स्पृक्षा
 वालो दमनकं तथा । प्रपौंडरीकं कर्चूरं समांशैः शाणमात्रकैः॥
 महासुगंधमित्येतत्तैलं प्रस्थेन साधयेत् । प्रस्वेदमलदौर्गन्धकंडु-
 कुष्ठहरं परम् ॥ अनेनाभ्यक्तगात्रस्तु वृद्धः सप्ततिकोपि वा ।
 युवा भवति शुक्राढ्यः स्त्रीणामत्यंतवल्लभः ॥ सुभगो दर्शनीयश्च
 गच्छेद्दे प्रमदाशतम् । वंध्यापि लभते गर्भं पंडोपि पुरुषायते ॥
 अपुत्रः पुत्रमाप्नोति जीवेच्च शरदां शतम् ॥

अर्थ—चंदन, केशर, खस, प्रियंगु, कचूर, गोरोचन, शिलारस, अगर, कस्तूरी, कपूर, जावित्री, जायफल, कंकोल, सुपारी, लौंग, गुलछबू, नेत्रवाला, कूठ, रेणुक-
 वीज, तगर, भद्रमोथा, नखद्रव्य, व्याघ्रनख, स्पृक्षा, पीला नेत्रवाला, दौना, मरुआ, पुंडरीकवृक्ष और कपूरकचरी ये प्रत्येक चार २ मासे लेवे इन का ६४ तोले तेल में डालके तेल सिद्ध करे यह पसीने, दुर्गंध, खुजली, कोठ इन को नाश करे. इस तेल का जो मालिस करे तो सत्तर वर्ष का भी बुढ़ा होय तो भी तरुण, अतिवीर्य-
 वान्, स्त्रियों को प्रिय ऐसा होय और उत्तम पुष्ट, देखने योग्य, सौ स्त्रियों से गमन करनेवाला ऐसा होवे और वंध्या स्त्री के पुत्र होय, नपुंसक पुरुष को पुरुषार्थ प्राप्ति होय, जिस के पुत्र न होय उस के पुत्रप्राप्ति होय, सौ वर्ष पर्यंत जीवे इतने गुण इस महासुगंधितैल में हैं ॥

बडवाग्निरस

शुद्धसूतं मृतं ताभ्रं तालं बोलं समं समम् । अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं
 क्षौद्रैर्लेह्यं द्विगुंजकम् ॥ बडवाग्निरसो नाम स्थौल्यवृंदं नियच्छति।
 पलं क्षौद्रं पलं तोयमनुपानं पिबेत्सदा ॥

अर्थ—पारा, गंधक, ताम्रभस्म, हरतालभस्म, लाल बोल ये सब समान भाग लेवे. इन को आक के दूध में एक दिन खरल करे फिर सहत के साथ दो रत्ती चाटे. इस को बडवाग्निरस कहते हैं. यह स्थूलता को नाश करे इस के ऊपर चार तोले जल और चार तोले सहत मिलायके पीवे ॥

रसभस्मयोग

रसभस्म वल्लमात्रं लीढा मधुना पिबेदनु क्षौद्रम् ।
कोष्णांबुना समेतं तत्स्थौल्यं मेदकृतं जयति ॥

अर्थ—पारे की भस्म दो रत्ती सहत में मिलायके चाटे ऊपर से सहत को गरम जल में मिलायके पीवे तो मेद से प्रगट स्थूलता को दूर करे ॥

त्रिमूर्तिरस

सूतं गंधमयोभस्म समं संमेल्य भावयेत् । निर्गुंडीपत्रतोयेन
मुसलीकंदवारिणा ॥ ततः सिद्धममुं मापमात्रं रसमनुत्तमम् । लो-
घ्रक्षौद्रेण चार्श्याचूर्णं मापोन्मितं हितम् ॥ पट्टकटु त्रिफला पंच
लवणा वलगुजस्य तत् । मेदशोथाग्निमांद्यामवातश्लेष्मगदप्रणुत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, लोहभस्म सब समान भाग लेय. फिर निर्गुंडी के रस में तथा मुसली के कंद के रस की एक २ भावना देवे, तो यह रस सिद्ध होय यह रस १ मासे और लोघका चूर्ण १ मासे तथा सहत १ मासे सब को मिलायके खाय. ऊपर से सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, त्रिफला, पांचों निमक, बावची इन का चूर्ण खाय तो मेद, सूजन, मंदाग्नि, आमवात, कफरोग इन को नष्ट करे ॥

मेद पर सामान्य उपचार

श्रमचिंताव्यवायाव्यक्षौद्रजागरणस्त्रियः ।

हंत्यवश्यमंतिस्थौल्यं यवश्यामाकभोजनम् ॥

अर्थ—परिश्रम, चिंता, मैथुन, मार्ग चलना, सहत पीना, स्त्रीसेवन, जाँ, साम-
स्त्रिया का भोजन ये कर्म स्थूलनाशक हैं ॥

मेदरोग पर पथ्य

चिंता श्रमं जागरणं व्यवायं प्रोद्धर्त्तनं लंघनमातपश्च । हस्त्य-
श्वयानं भ्रमणं विरेकः प्रच्छर्दनं चाप्यपतर्पणं च ॥ पुरातना वै-
णवकोरदूपश्यामाकनीवारप्रियंगुजूर्णाः । यवाः कुलत्थाश्चणका
मसूरा मुद्गास्तुवर्यश्च मधूनि लाजाः ॥ कटूनि तिक्तानि कपा-
यकाणि तक्रं सुरा पिंगलमत्स्य एव । दग्धानि वार्त्ताकफलानि
चापि फलत्रयं गुग्गुलुरायसं च ॥ शिरीषलोध्रद्रुहरीतकीनां

चूर्णेन गात्रस्य विलेपनं च । कटुत्रयं सर्पपतैलमेला रूक्षाणि
सर्वाणि च मुख्यतैलम् ॥ पत्रोत्थशाकोगुरुलेपनानि प्रतप्तनी-
राणि शिलाजतूनि । एतानि सर्वाणि निपेवितानि मेदोगदं स-
त्वरमुत्क्षिपन्ति ॥

अर्थ—चिंता करना, परिश्रम, जागना, मैथुन करना, उवटना, लंघन, धूप में डोलना, हाथी घोड़े की सवारी, डोलना, जुल्लाव, वमन, अपतर्पण (कृशकर्ता पदार्थों का सेवन), पुराने बांस के चावल, कोदों, सामखिया, पसाई, प्रियंगु, ज्वार, जों, कुलथी, चना, मसूर, मूंग, अरहर की दाळ, सहत, खीळ, कडवे, चरपरे, कपेले पदार्थ, छाछ, मद्य, चिंगल जाति की मछली, बेंगन का भुरता, हरड, बहेडा, आंवला, गूगळ, लोहभस्म, शिरस, लोथ और हरड इन के चूर्ण को देह में मालिस करना, सोंठ, मिरच, पीपळ, सरसों का तेल, इलायची, संपूर्ण रूखे पदार्थ, तिळी का तेल, पत्ते के साग, अगर का लेप, गरम जल और शिलाजीत ये संपूर्ण पदार्थों का सेवन करना मेदरोग को तत्काळ दूर करते हैं ॥

मेदरोग पर अपथ्य

स्नानं रसायनं शालीन् गोधूमान् सुखशीतलान् । क्षीरेक्षुविकृ-
तीन् मापान्सौहित्यं स्वेदनानि च॥मत्स्यं मांसं दिवा निद्रा स्रगं-
धान्मधुराणि च । सर्वस्य भोजनस्यांते जलपानं विशेषतः ॥
अतिमात्रं तूपचितो विशेषाद्भ्रमनक्रियाम् । स्वभावस्थत्वमन्वि-
च्छन्मेदस्वी वर्जयेदिमान् ॥

अर्थ—स्नान करना, रसायन पदार्थों का सेवन, गेहूं, सुख से रहना, दूध के पदार्थ, ईख के पदार्थ, उडद, सौहित्य (पेट भरके भोजन करना), मछली, मांस, दिन में सोना, फूलमाला, चंदन का धारण, भीठे पदार्थ, सब भोजनों के अंत में जल का पीना, अत्यंत देह को पुष्टकारी पदार्थ और वमन करना, जो मनुष्य मुटा-
पे को दूर कर देह को ठीक रखना चाहे वह इन सब को त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे मेदरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

उदररोगकर्मविपाकः ।

यो ब्रह्मविष्णुरुद्राणां मध्ये चैकं विभावयेत् ।

साधयेदुदरं व्याधिं युक्तो भवति मानवः ॥

अर्थ—जो पुरुष ब्रह्मा, विष्णु, शिव इन में से एक को विशेष माने वह अपने वास्ते उदररोग का साधन करे है अर्थात् वह उदररोगी होय ॥

शांति

कुर्यात्कृच्छ्रं चातिकृच्छ्रं चांद्रायणमथापरम् ।

सहस्रकलशस्नानमीश्वरस्य तु कारयेत् ॥

अर्थ—उस प्राणी को कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, चांद्रायणव्रत करने चाहिये और शिव को सहस्र कलश स्नान करावे ॥

जलोदर का कर्मविपाक

राज्ञा वा तु नियुक्तेन नियुक्तो धर्मनिश्चये । पुरोहितः प्राङ्घि-

वाकः सचिवो वान्यथाचरेत् ॥ जलोदरत्वं प्राप्नोति तस्य व-

क्ष्यामि निष्कृतिम् ॥

अर्थ—धर्मनिश्चय करने को राजा अथवा राजा ने मुकर्रीर करा पुरोहित अथवा पुरोहित ने किसी दूसरे को निश्चय करा होय यदि वह धर्म के कार्य को विपरीत करे तो उस के जलोदर व्याधि होती है उस के प्रायश्चित्त के वास्ते शांति कहता हूँ ॥

शांति

पयसा वर्तयेन्मासत्रितयं व्रतमुत्तमम् । सहस्रकलशस्नानं महा-

देवस्य चैव हि ॥ भोजयेच्च शतं विप्रान्मुच्यते किल्विपात्ततः ॥

अर्थ—उस जलोदरव्याधि की शांति करने को तीन महीने पर्यंत पयोव्रत करे और महादेव को सहस्र कलश स्नान करावे तथा सौ ब्राह्मणभोजन करावे तो वह पुरुष उस पापसे छूट जाय ॥

प्रकारांतर

गर्भपातनजा रोगा यकृतप्लीहजलोदराः ।

तेषां प्रशमनार्थाय प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् ॥

अर्थ—ग्रंथांतर में लिखा है कि जो गर्भपात करता है वह यकृत, प्लीहा, जलो-
दररोगी होय है इस के दूर करने को प्रायश्चित्त कहते हैं ॥

शांति

एतेषु दद्याद्विप्राय जलधेनुं विधानतः ।

सुवर्णरौप्यताम्राणां पलत्रयसमन्विताम् ॥

अर्थ—ऊपर कहे हुए रोगों के शमन करने को ब्राह्मण को विधिपूर्वक सुवर्ण,
चांदी अथवा ताम्र ये प्रत्येक चार २ तोले लेकर जलधेनु दान करे ॥

प्लीहोदरकर्मविपाक

भृतकाध्यापको यस्तु कन्यादूषणतत्परः ।

प्लीहावान् संभवेद्विप्रो जपेच्छ्रीसूक्तमेव हि ॥

अर्थ—जो प्राणी वेतन (तनखा) लेकर पढाता है अथवा कन्या को दूषित
करता है वह प्लीहारोगी होय है उस को इस पाप के दूर करने को श्रीसूक्त का जप
करना चाहिये ॥

शांति

अयुतत्रयसंख्याकं प्लीहोदरविमुक्तये ।

प्रत्यृचं च भवेद्धोमश्चरूणां सर्पिषा पृथक् ॥

अर्थ—जिस के प्लीहोदर हुआ हो उस को ३० हजार श्रीसूक्त का पाठ करना
और प्रतिरूचा के साथ चरु और घी का हवन पृथक् पृथक् करे ॥

उदरनिदान

रोगाः सर्वेऽपि मदेऽग्नौ सुतरामुदराणि च ।

अजीर्णान्मलिनैश्चाग्नेर्जायंते मलसंचयात् ॥

अर्थ—अग्नि मन्द होने से सब रोग होते हैं और उदर ती विशेष करके होय है
कारण यह है कि अग्निमांघ यह त्रिदोषजनक है और अजीर्ण से मलिन अन्न से (वि-
रुद्ध अध्यशनादिक) और मल (दोष तथा पुरीषादिक) इन के संचय से उदररोग
होय है. इस जगह उदरशब्द करके उदरस्थित रोग जानने से ग्रंथान्तर में लिखा है ॥

उदररोग की संप्राप्ति

रुध्वा स्वेदांबुवाहीनि दोषाः स्रोतांसि संचिताः ।

प्राणाग्न्यपानान् संदूष्य जनयंत्युदरं नृणाम् ॥

अर्थ—वातादिदोष स्वेद (पसीना) वहनेवाली और जल को वहनेवाली नाडियों के मार्ग को रुद्ध (रोक) कर और वे दोष बढकर प्राणवायु आग्नि और अपानवायु इन को अत्यन्त दुष्ट कर मनुष्यों के उदररोग उत्पन्न करे है. उदररोग का पूर्वरूप सुश्रुत में लिखा है—तत्पूर्वरूपं बलवर्णकांक्षा बलीविनाशो जठरे तु राज्यः । जीर्णापरिज्ञानविदाहवत्यो यस्तौ रुजः पादगतश्च शोथः ॥

उदररोगों का सामान्यलक्षण

आध्मानं गमनेऽशक्तिर्दौर्बल्यं दुर्बलान्विता । शोफः सदनमंगानां संगो वातपुरीषयोः ॥ दाहस्तन्द्रा च सर्वेषु जठरेषु भवन्ति हि ॥

अर्थ—अफरा, चलने की शक्ति का नाश, दुर्बलता, मंदाग्नि, सूजन, अंगगलानि वायु का तथा मल का रुकना, दाह, तन्द्रा ये लक्षण सब उदर में होते हैं ॥

उदर की संख्या

पृथक् दोषैः समस्तैश्च ग्रीहवद्धक्षतोदकैः ।

संभवंत्युदराण्यष्टौ तेषां लिङ्गं पृथक् शृणु ॥



अर्थ—पृथक् दोषों से (अर्थात् वात पित्त कफ) सन्निपात से (सन्निपातोदर) ग्रीहोदर १, बद्धोदर १, क्षतोदर १ और जलोदर १ सब मिलाकर ८ भये उन के लक्षण पृथक् पृथक् कहते हैं ॥

वातोदर के लक्षण

तत्र वातोदरे शोथः पाणिपत्राभिकुक्षिषु । कुक्षिपार्श्वोदरकटीपृष्ठरूपपर्वभेदनम् ॥ शुष्ककासोऽगमदोऽधोगुरुता मलसंग्रहः । श्यावारुणत्वगादित्वमकस्माद्दृद्धिह्लासवत् ॥ सतोदभेदमुदरं तनुकृष्णशिराततम् । आध्मांतद्वतिवच्छब्दमाहतं प्रकरोति च ॥ वायुश्चात्र सरुक्छब्दो विचरेत्सर्वतो गतिः ॥

अर्थ—वातोदर में हाथ, पैर, नाभि और कूख इन में सूजन होय, संधियों का टूटना तथा कूख, पसवाडे, पेट, कमर, पीठ इन में पीडा, सूखी खांसी, अंगों का टूटना, कमर से नीचे भाग में भारीपना, मल का संग्रह होना, त्वचा, नख, नेत्रादिक का काला लाल होना पेट अकस्मात् (निमित्त के बिना) बड़ा हो जाय छोटा हो जाय सुई चुभाने की सी तथा नोचने की सी पीडा होय, पेट में चारों तरफ बारीक काली

शिरा (नाडियों) से व्याप्त होय, चुकटी मारने से फूली पखाल के समान शब्द होय इस उदर में वायु चारों तरफ डोलकर शूल करे तथा गूँजे ॥

वातोदर का सामान्य यत्न

उक्रपमेद्भिपग्दोपवलकालविशेषवित् । स्थिरादिसर्पिपः पानं
स्नेहं स्वेदं विरेचनम् ॥ वेष्टनं वाससा ग्लानौ शाल्वलं चोपना-
हनम् । पेया यूपरसान्नं च योज्यं वातोदरे क्रमात् ॥

अर्थ—बल और काल को भले प्रकार जाननेवाला वैद्य वातोदर पर स्थिरादि घृत का पान करे तथा स्वेदन स्नेहन और विरेचन इत्यादिक उपचार करे. इन उपचारों के करने से यदि ग्लानि उत्पन्न हुई होय तो उस को कपडों से लपेट देवे अथवा कोमल हरे तृण पीडित स्थान पर धरे, उपनाहकर्म, पेया, यूष और रस ये भोजन को देवे ॥

तक्रपान

वातोदरी पिवेत्तक्रं पिप्पलीलवणान्वितम् । शर्करामरिचोपेतं
स्वादु पित्तोदरी पिवेत् ॥ यवानीसैधवाजार्जाव्योपयुक्तं कफोदरी ।
सन्निपातोदरी तक्रं त्रिकटुक्षारसैधवैः ॥

अर्थ—वातोदरी होवे तो उस को पीपल, सैधानिमक, मिलायके छाल पिलावे, और पित्तोदरवाले को मिश्री और काली मिरचयुक्त मीठी छाल पिलावे. उसी प्रकार अजमायन, सैधानिमक, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल इन करके युक्त; कफोदर-वाले रोगी को छाल पिलावे तथा सन्निपातोदरी होवे तो उस को सोंठ, मिरच, पीपल, जवाहार, सैधानिमक इन का चूर्ण मिलायके छाल पीनी चाहिये ॥

चूर्णकपाय

एरंडतैलं दशमूलमिश्रं गोमूत्रयुक्तं त्रिफलारजो वा ।

निहंति वातोदरशोथशूलं काथः समूत्रो दशमूलजश्च ॥

अर्थ—अंडी का तेल दशमूल के चूर्ण में मिलायके खाये अथवा गोमूत्र में हरड, बहेडा, आंवला इन का चूर्ण मिलायके खावे अथवा दशमूल का काढा गोमूत्र में मिलायके पीवे तो वातोदर, सूजन, शूल इन को नाश करे ॥

शिलाजतुचूर्ण

दशमूलकपायेण क्षीरयुक्तं शिलाजतु ।

सद्यो वातोदरी क्षीरमौष्टमाजं च केवलम् ॥

अर्थ—वातोदर पर दशमूल के काटे में दूध और शिलाजीत डालके पीवे अथवा ऊंट का अथवा बकरी का केवल दूध पीवे ॥

कुष्ठादि चूर्ण

कुष्ठं दंती यवक्षारं व्योषं त्रिलवणं वचा । अजाजी दीप्यकं हिंगुस्व-
र्जिकाचव्यचित्रकैः ॥ शुंठीं चोष्णांभसा पीत्वा वातोदररूजापहाम् ॥

अर्थ—कूठ, जमालगोटा, जवात्सार, सोंठ, मिरच, पीपल, सैधानिमक, विड-
निमक, कचिया निमक, वच, जीरा, अजमायन, हींग, सुहागा, चव्य, चित्रक और
सोंठ इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो वातोदर को नाश करे ॥

समुद्रादि चूर्ण

सामुद्रसौवर्चलसैधवानां क्षारो यवानामजमोदभागः । सपिप्प-
लीचित्रकशृंगवेरं हिंगुविडंगं च समानि कुर्यात् ॥ एतानि चू-
र्णानि घृतप्लुतानि भुंजीत पूर्वं कवलैः प्रशस्तम् । वातोदरं गु-
ल्ममजीर्णभुक्तं वातप्रकोपग्रहणीं च दुष्टाम् ॥ अशींसि दुष्टानि
च पांडुरोगं भगंदरं चापि निहंति सद्यः ॥

अर्थ—समुद्रनिमक, संचरनिमक, सैधानिमक, जवात्सार, अजमायन, पीपल, चित्रक
की छाल, सोंठ, हींग और वायविडंग ये समान भाग लेकर चूर्ण करे. इस को घी
भात के साथ भक्षण करे तो वातोदर, गोला, अजीर्ण पर भोजन, घाटी का प्रकोप,
संग्रहणी, बवासीर, पांडुरोग और भगंदर इन को शीघ्र नाश करे ॥

वातोदर पर घृत

दशमूलकपायेण रास्त्रानागरदारुभिः ।

पुनर्नवाभ्यां च घृतं सिद्धं वातोदरापहम् ॥

अर्थ—दशमूल, रास्त्रा, सोंठ, देवदारु और लाल तथा सपेद पुनर्नवा इन के
काटे में घृत सिद्ध करे यह वातोदर को नाश करे ॥

पित्तोदर के लक्षण

पित्तोदरे ज्वरो मूर्च्छा दाहस्त्वृद्धकटुतास्यता । भ्रमोत्तिसारः पी-
तत्वं त्वगादाबुदरं हरित् ॥ पीतताम्रशिरानदं सस्नेदं सोप्य
दह्यते । धूमायते मृदुस्पर्शं क्षिप्रपाकं प्रहूयते ॥

अर्थ—पित्त के उदररोग में ज्वर, मूर्च्छा, दाह, प्यास, मुख में कड़ुआ सा, भ्रम, अतिमार, स्वगादिक (नम नेत्र) इन में पीछापना, पेट हरा होय, पीछी तामे के रंग की नाटियों से उदर व्याप्त हो, पसीना आवे, गरमी से सच देह में दाह होय, आंतां से श्रुंआंसा निकलता दीखे, हाथ के स्पर्श करने से नरम मालूम हो, शीघ्र पाक होय अर्थात् जलोदरत्व को प्राप्त होय और उस में घोर पीडा होय ॥

पित्तोदर का सामान्य यत्न

पित्तोदरे च वलिनं पूर्वमेव विरेचयेत् ।

पयसा त्रिवृताकल्केनोरुधूकशृतेन वा ॥

अर्थ—पित्तोदरवाला रोगी बलवान् होवे तो प्रथम उस को दूध में निस्तोथ का फलक गणया अंड की जड़ का काटा देकर दस्त करावे ॥

सातलादि घृत

सातलात्रायमाणाभ्यां दातेनारग्वधेन च ।

घृतं पित्तोदरे पेयं मधुरौपधसाधितम् ॥

अर्थ—सातला (भूहर), त्रायमाण, अमलतास का गूदा इन का काटा और मधुर भीषण इन से सिद्ध करा हुआ घृत पित्तोदर पर प्राशनार्थ देवे ॥

त्रिवृतादि घृत

स्याभिघृभिफलासिद्धं सर्पिःपानं विशुद्धये । पृथ्निपर्णीवला-
ग्याग्नीलाक्षानागरसाधितम् ॥ क्षीरं पित्तोदरं हन्ति जठरं कति-
गिदिनेः ॥

अर्थ—निसीस, हरद, यहैडा और आंवला इन के काटे में सिद्ध करा हुआ घृत अमवा पिठवम, रिरिटी, कटेरी, छार और साँठ इन से सिद्ध करा हुआ दूध देवे तो शीघ्र दिग् में पित्तोदर का नाश करे ॥

कफोदर के लक्षण

श्लेष्मोदरंऽगसदनं स्वापः श्वपथुगौरवम् । निद्रोत्क्लेदोऽरुचिः

श्रासः फासशुक्रत्वगादिता ॥ उदरं स्तिमितं स्निग्धं शुक्रा-

जीततं महत् । चिराभिऽद्विकठिनं शीतस्पर्शं गुरु स्थिरम् ॥

अर्थ—कफ के उदररोग में श्वाप, श्वे, आदि अंगों में शून्यता हो और जिकड़ जाय, सजम होय, अंग भारी हो जाय, निद्रा आवे, बदन होयगी ऐसा मालूम होय ॥

अरुचि होय, श्वास, खांसी होय, त्वचा, नख, नेत्रादिक सपेद हों, पेट निश्चल चिकना सपेद नाडियों से व्याप्त होय. इन की वृद्धि बहुत काल में होय, पेट कुरडा और शीतल मालम होय तथा भारी और स्थिर होय ॥

कफोदर का यत्न

श्लेष्मोदरिणं सुपिप्पल्या सिद्धेन सर्पिपा स्नेहं नीत्वा सुहिक्षीरे-
गानुलोम्य त्रिकटुकमूत्रतैलमुस्तादिकाथेनास्थापयेदनुवासयेत्
किट्टसर्पपामलकवीजैश्चोपनाहयेदुदरम् । भोजयेच्चैनं त्रिकटुक-
प्रगाढेन कुलित्थयूपेण पयसा वा स्वेदयेच्चाभीक्षणम् ॥ व्योप-
युक्तकुलित्थांबु पयो वा भोजने हितम् । गोमूत्रारिष्टपानैश्च चू-
र्णायस्कृतिभिस्तथा ॥ सक्षीरतैलपानैश्च समये तु कफोदरम् ॥

अर्थ—कफोदरी रोगी को पीपल के कलक से सिद्ध करा हुआ घी पिलायके फिर धूर के दूध से दस्त करावे फिर सोंठ, मिरच, पीपल, गोमूत्र, अंड का तेल और नागरमोथा इन के काटे से अनुवासनवास्ति करे तथा लोह की कीटी, सरसों, आंवले के बीज, इन को पीसके उदर पर लेप करे तथा कुलथी के काटे में सोंठ, मिरच, पीपल डालके उस के साथ भोजन देवे तथा जल से बारंबार पेट को सेके तथा कुलथी के काटे से त्रिकुटा का चूर्ण डालके अथवा कुलथी की दाल भोजन में देवे तो हितकारी होय अथवा पीने के वारते गोमूत्र का काटा, आयसादि चूर्ण अथवा दूध में अंडी का तेल डालके पीवे इन सब उपायों के करने से कफोदर शांत होता है ॥

सन्निपातोदर का निदान

स्त्रियोऽन्नपानं नखरोममूत्रविडार्तवैर्युक्तमसाधुवृत्ताः । यस्मै प्र-
यच्छंत्यरयो गरांश्च दुष्टांबुदूर्पाविपसेवनाद्वा ॥ तेनाशुरक्तं कु-
पिताश्च दोषाः कुर्युः सुघोरं जठरं त्रिलिंगम् ॥

अर्थ—छोटे आचरणवाली स्त्री जिस पुरुष को नख केश (वार) मल मूत्र आ-
र्तव (रजोदर्श का रुधिर) मिला अन्नपान देय अथवा जिस का शत्रु विष देवे,
अथवा दुष्टांबु (जठर मिला मछली तिन का पत्ता आदि औटा हुआ ऐसा जल)
और दूर्पाविप (मन्दविष) इन के सेवन करने से रुधिर और वातादिक दोष शीघ्र
कुपित होकर अत्यन्त भयंकर त्रिदोषात्मक उदररोग उत्पन्न करे है ॥

सन्निपातोदर

सन्निपातोदरे कार्य एष एव क्रियाविधिः । हरीतक्यभयाकल्को
गोमूत्रेण विभावितः ॥ पीतः सर्वोदरघ्नीहमेहार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥

अर्थ—सन्निपातोदर पर यही क्रिया करे कि हरड और थूहर इन का कल्क करके गोमूत्र से देवे तो संपूर्ण उदर, घ्नीहा, प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग और गोला इन को नाश करे ॥

नागरादि तैल

नागरत्रिफलाप्रस्थं घृतं तैलं तथाढकम् । मस्तुना साधयित्वा
तु पिवेत्सर्वोदरापहम् ॥ कफमारुतसंभूतं गुल्मं चैव विनाशयेत् ॥

अर्थ—सांठ, हरड, बहेडा, आंवला ये प्रत्येक ६४ तोले लेवे काढा करके इस काढे में तेल २५६ तोले तथा छाछ का जल ये पदार्थ एकत्र कर तेल सिद्ध करे इस के सेवन करने से संपूर्ण उदर, कफ, वादी इन से उत्पन्न हुआ गुल्म इन को नाश करे ॥

दूष्योदरसंज्ञा

तच्छीतवाते भृशदुर्दिने वा विशेषतः कुप्यति दह्यते च । स
चातुरो मूर्च्छति हि प्रसक्तं पांडुः कृशः शुष्यति सेवया च ॥
दूष्योदरं कीर्तितमेतदेव—॥

अर्थ—वे शीतकाल में अथवा शीतल पवन चले उस समय अथवा जिस दिन वर्षा का झट लगे उस दिन विशेष करके कोप को प्राप्त हो और दाह होय (इस का कारण ये है कि उस समय दूषीविप का कोप होय है) वह रोगी निरन्तर विप के संयोग से मूर्च्छित होय, देह का पीला वर्ण तथा कृश होय और परिश्रम करने से शोष होय तो इस को दूष्योदर ऐसे कहते हैं ॥

शंखिनीघृत

समूलशंखिनीसिद्धं घृतं चात्र विशोधनम् ।
दंतिद्रवंतिफलजं तैलं दुष्योदरी पिवेत् ॥

अर्थ—संनिपातोदरी को जड सहित मंटाहूली के रस में सिद्ध करा हुआ घृत पीना चाहिये यह रेचक है अथवा दंती, द्रवंती इन के फल के काढ़े में अथवा कल्क में सिद्ध करा हुआ तेल पीना चाहिये ॥

प्लीहोदर

—प्लीहोदरं कीर्तयतो निबोध ॥ विदाह्यभिष्यंदिरतस्य जंतोः
प्रदुष्टमत्यर्थमसृक्कफश्च । प्लीहाभिवृद्धिं कुरुतः प्रवृद्धौ प्लीहोत्थ-
मेतज्जठरं वदन्ति ॥ तद्दामपार्श्वे परिवृद्धिमेति विशेषतः सीद-
ति चातुरोऽत्र । मन्दज्वराग्निः कफपित्तलिङ्गैरुपद्रुतः क्षीणव-
लोऽतिपांडुः ॥

अर्थ—अब प्लीहोदर के लक्षण कहता हूँ तू सुन. विदाही (वंश करीरादि) अर्थात् दाह करनेवाली और अभिष्यंदी (दध्यादि) अर्थात् स्रोत (छिद्र रोकनेवाली) ऐसे अन्न निरंतर सेवन करनेवाले पुरुष के अत्यंत दुष्ट भये जे रुधिर और कफ बढ़कर प्लीहा (तापतिल्ली) को बढ़ावे इस उदर को प्लीहोत्थ उदर कहते हैं, ये बाई तरफ पडता है इस अवस्था में रोगी बहुत दुःख पाता है, देह में मंदज्वर होय, मंदाग्नि होय तथा कफपित्तोदर के लक्षण इस में मिलते हों, बल क्षीण होय अत्यंत पीला वर्ण होय ॥

प्लीहोदर पर सामान्य यत्न

स्नेहस्वेदविकारा दिविधेयं प्लीहरोगिणाम् । वामबाहौ च मोक्तव्या
कूर्पराभ्यंतरे शिरा ॥ विध्येत्प्लीहविनाशाय यकृन्नाशाय दक्षि-
णे । मणिबंधे समुत्पन्नं वाममंगुष्ठमीरितम् ॥ दहेच्छिरां शरेणा-
शु वैद्यः प्लीहप्रशांतये ॥

अर्थ—प्लीह (पिल्ली) रोगी को स्नेहन, स्वेदन, रेचन इत्यादि उपचार करे और बाये हाथ के कूर्पर के भीतर की नाडी को वेधन करे और मंगुठ के नाश करने के वास्ते दहने हाथ के कूर्पर के भीतर की नस का वेध करे अथवा पहुचे में बाये अंगुठे की शिरा को वेध करे ॥

शरपुंखामूलकल्क

शरपुंखमूलकल्कः पीतस्तक्रेण नाशयत्यचिरात् ।
बहुतरकालसमुत्थं प्लीहानं रूढमवगाढम् ॥

अर्थ—सरफोका के मूल का कल्क छाछ के साथ पीने को देवे तो बहुत जल्दी बहुत दिन का बड़ा हुआ प्लीहा का नाश करे ॥

तक्र

पिवेत्प्लीहोदरी तक्रं पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम् ।

अर्थ—प्लीहोदररोगी को पीपल और सहत डालके छाल पिलावे ॥

रोहितादि कल्क

रोहीतकाभयाकल्को गोमूत्रेण विभावितः ।

पीतः सर्वोदरप्लीहमेहार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥

अर्थ—छालरोहितक और हरड इन का कल्क गोमूत्र में मिलायके पीवे तो सर्व उदर, प्लीहा, प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग, गोला इन को नाश करे ॥

पिप्पल्यादि काथ

शोफं प्लीहोदरं हन्ति पिप्पलीमरिचान्वितः ।

आम्लवेतससंयुक्तः शिशुकाथः ससंधवः ॥

अर्थ—सहजने की छाल, पीपल, काली मिरच और आम्लवेत इन का काढा करके उस में सैंधानिमक मिलायके देवे तो सूजन, प्लीहोदर इन को नाश करे ॥

शाल्मलीपुष्पपाक

सुस्त्रिन्नं शाल्मलीपुष्पं निशापर्युषितं नरः ।

राजिकाचूर्णसंयुक्तं ह्यद्यात्प्लीहोपशांतये ॥

अर्थ—प्लीहोदर के नाश करने को सेमर के फूल को औढायके रात्रि में भोस में रख देवे प्रातःकाल इस वासे फूल में राई का चूर्ण मिलायके पीवे ॥

लवणादि तक्र

लवणं रजनी राजी प्रत्येकं पलपंचकम् । चूर्णितं निक्षिपेद्ग्राहे

तक्रं शतपलोन्मितम् ॥ त्रिदिनं मुद्रितं रक्षेत् पश्चात्पंचपलं

सदा । पीत्वा विनाशयेत्प्लीहं त्रिःसप्ताहं न संशयः ॥

अर्थ—सैंधानिमक २० तोले, हलदी २० तोले, राई २० तोले इन के चूर्ण को छाल ४०० तोले बासन में भरके मुख बांधके तीन दिन धरा रहने दे. फिर २० तोले प्रमाण नित्य पीवे तो इक्कीस दिन में प्लीहोदर का नाश होय इस में संदेह नहीं है ॥

शुक्तिकारयोग

पातव्यो युक्तितः क्षारः क्षीरेणोदधिशुक्तिजः ।

पयसा वा प्रयोक्तव्याः पिप्पल्यः प्लीहनाशनाः ॥

अर्थ—समुद्र की सीपों के खार को दूध के साथ युक्ति से पीवे अथवा दूधके साथ पीपल खाय तो श्लीह को नाश करे ॥

एरंडभस्मयोग

समूलपत्रमैरंडं रुध्वा भांडे पुटे पचेत् ।

तत्कर्पं पलगोमूत्रं पीतं श्लीहविनाशनम् ॥

अर्थ—जड़ और पत्ते सहित अंड के दरखत को टुकड़े करके किसी पात्र में धरे। फिर उस का मुख बंद करके संपुट में रखके फूंक देवे। फिर उस को कूट १ तोले को चार तोले गोमूत्र के साथ पीवे तो श्लीहोदर नष्ट होय ॥

भल्लातकादि मोदक

भल्लातकाभयाजाजीगुडैश्च कृतमोदकः ।

सप्तरात्रान्निहंत्येप श्लीहानमतिदारुणम् ॥

अर्थ—भिलाए, हरड, जीरा, गुड़ इन सब को कूट पीस लड्डू बनावे, १ लड्डू नित्य सेवन करे तो सात दिन में अतिदारुण श्लीहा नष्ट होय ॥

लशुनादि

लशुनादिपिप्पलीमूलमभयां चैव भक्षयेत् ।

पिबेद्गोमूत्रगंडूषं श्लीहोरोगविमुक्तये ॥

अर्थ—लहसन, पीपरामूल, हरड इन को एकत्र कूटके खाय ऊपर से गोमूत्र का १ घुंटा पीवे तो श्लीहोरोग दूर होय ॥

सौभांजनकयोग

सौभांजनकनिर्यूहं सैंधवाग्निकणाचितम् ।

पलाशक्षारयुक्तं वा यवक्षारं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—सहजने के रस में सैंधानिमक, चित्रक की छाल, पीपल, पलाश का खार और जवाखार इन का चूर्ण डालके पीवे ॥

रक्तस्राव और दाग

रक्तस्रावैर्कंदुग्धं च सैंधवं लेपयेत्तथा ।

अग्निदाहं च कुर्याद्वा श्लीहोदरहरं परम् ॥

अर्थ—रुधिर को निकालके उस पर आक का दूध और सैंधानिमक का लेप करे अथवा अग्निदाह अर्थात् दाग देवे तो श्लीहोदर नष्ट करे ॥

प्लीहोदर पर शंखनाभिचूर्ण

सुपक्वजंवीररसेन शंखनाभीरजः पीतमवश्यमेव ।

कर्पप्रमाणं शमयेदवश्यं प्लीहामयं कूर्मसमानमाशु ॥

अर्थ—उत्तम पके हुए नींबू के रस में शंख की भस्म नौ दश मासे डालके पीवे तो निश्चय कछुए के समान बढी हुई प्लीहारोग नष्ट होय ॥

कुष्ठादि चूर्ण

कुष्ठं वचा शृंगवेरं चित्रकं च यवानिकम् । पाठा चैवाजमोदा
च पिप्पल्यः समचूर्णिताः ॥ ततो विडालपदकं पिबेदुष्णेन वा-
रिणा । प्लीहोदरमुदावर्तं सर्वमेतेन शाम्यति ॥

अर्थ—कूठ, वच, सोंठ, चित्रक की छाल, अजमायन, पाठ, अजमोद और पीपल इन का समान भाग चूर्ण एकत्र कर दश २ मासे गरम जल के साथ देवे तो प्लीहोदर, उदावर्त के संपूर्ण विकार दूर होवे ॥

लघुहिंवादि चूर्ण

हिंगु त्रिकटुकं कुष्ठं यवक्षारोथ सेंधवम् । मातुलंगरसेनैव प्लीह-
शूलहरं परम् ॥ वायुः प्लीहानमुद्भूय कुपितो यस्य तिष्ठति ॥

अर्थ—भूनी हुई हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, कूठ, जवाखार, सेंधानिमक इन के चूर्ण को विजोरे के रस से देवे तो प्लीह, शूल इन को नाश करे ॥

सिंध्वादि चूर्ण

सिंधुमगधाग्निचूर्णं शिग्रुशिलाजाजिकरसनिपीतम् ।

प्रबलमपि योगराजः प्लीहानं नाशयत्याशु ॥

अर्थ—सैंधानिमक, पीपल, चित्रक, शिलाजीत, जीरा इन के चूर्ण को सहजने के रस से साथ तो यह योगराज उग्र प्लीहा को शीघ्र नाश करे ॥

नागवटी

तिलैरंडद्रवस्तस्य क्षारो भ्रष्टातकं कणा । एषां भागं समं
कृत्वा तल्लयस्तु गुडो मतः ॥ खादेदग्निबलं मत्वा पावकस्य
विवृद्धये । जयेत्प्लीहानमत्युग्रं यकृद्बलं तथैव च ॥

अर्थ—तिलों की ढंडी, अंड की जड़ इन की भस्म का जल निक लके स्वार बनाय ले यह स्वार आर भिलाए, पीपल, ये समान भाग तथा सच की बराबर गुड

ढालके उस की गोली बनाय लेवे. इस को अग्निबल विचारके देवे तो अग्निवृद्धि करे तथा बढी हुई प्लीहा, यकृत, गोला इन को नाश करे ॥

विडंगादि चूर्ण

विडंगानि यवानी च चित्रकश्चेति तत्समम् । द्विगुणं देवदारुं
च नागरं सपुनर्नवम् ॥ त्रिवृद्धागाश्च चत्वारि तत्सर्वं कल्कपे-
पितम् । क्षीरेणोष्णेन पातव्यं श्रेष्ठं प्लीहविनाशनम् ॥ अथ चैता-
नि चूर्णानि गवां मूत्रेण पाययेत् । उदरीभूतमप्येवं प्लीहानं
संप्रणाशयेत् ॥

अर्थ—वायविडंग, अजमायन, चित्रक की छाल ये समान भाग लेवे तथा इन से दुगुनी देवदारु, सोंठ, पुनर्नवा और निसोथ ४ भाग ले इन सब औषधों को कूट पीस, कल्क करके गरम जल से देवे तो प्लीहनाश करने में श्रेष्ठ है अथवा इन के चूर्ण को गोमूत्र के साथ देवे तो उदर के समान बढे हुए प्लीहा को नाश करे ॥

यवान्यादि चूर्ण

यवानिकाचित्रकयावशूकपट्टग्रंथदंतीमगधोद्भवानाम् ।
प्लीहानमेतद्विनिहंति चूर्णमुष्णांबुना मस्तुसुरासवैर्वा ॥

अर्थ—अजमायन, चित्रक की छाल, जवाक्षार, वच, जमालगोटा और पीपल इन का चूर्ण गरम जल से, छाछ के जल से, मद्य अथवा आसव इन के साथ देवे तो प्लीहा को नाश करे ॥

वज्रक्षार

सौवर्चलं यवक्षारं सामुद्रं काचसैधवम् । टंकणं स्वर्जिकाक्षारं
तुल्यमेकत्र चूर्णयेत् ॥ अर्कदुग्धैः सुहीदुग्धैर्भावयेद्गतपे त्र्यहम् ।
ऊर्ध्वाधस्थैः क्रमात्तस्य तत्तुल्यैर्कपल्लवैः ॥ भांडे संस्थाप्य
मृल्लिते रुध्वा गजपुटे पचेत् । स्वांगशीतिं तु संचूर्ण्य चूर्णमेपां तु
मेलयेत् ॥ त्र्यूपणं च विडंगं च राजिकां त्रिफलामपि । चव्यं
च हिंशु संभृष्टं तत्रेणाद्याद्यथाचलम् ॥ वज्रक्षाराभिधं चूर्णमुद-
राणि विनाशयेत् । शोथं गुल्मं तथाष्टीलां मंदाग्निमरुचिं तथा ॥
प्लीहानं यकृद्दाल्याख्यमुदरं च विशेषतः ॥

अर्थ—संचरनिमक, जवाखार, समुद्रनिमक, कचियानिमक, सैंधानिमक, सुहागा, सज्जी ये सब समान भाग लेवे. सब को एकत्र कर आक, का दूध और थूहर के दूध में भिगोय तीन दिन धूप में रखा रहने देवे. फिर एक मिट्टी के पात्र में ऊपर नीचे आक के पत्ते बिछायके पूर्वोक्त औषध को भर देवे और पात्र को ढक संधियों को बंद कर गजपुट में रखके फूंक देवे. शीतल होने पर निकास चूर्ण कर ले फिर इस में सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, राई, हरड, बहेडा, आंवला, चव्य, भूनी हींग इन का चूर्ण मिलाय देवे. इस को चक्रक्षार कहते हैं इस को अग्नि बल विचारके छाछ से देवे तो सर्व उदर, सूजन, गोला, अष्टीला, मंदाग्नि, अरुचि, प्लीहा, यकृत इन का नाश करे ॥

क्षारादि योग

क्षारं वा विडकृष्णाभ्यां पूतिकस्यांबुमिश्रितम् ।
यकृतप्लीहप्रशांत्यर्थं पिवेत्प्रातर्यथाबलम् ॥

अर्थ—कंजे की राख का खार, विडनिमक और पीपल इन का चूर्ण बलाबल विचारके प्रातःकाल देवे तो यकृत और प्लीह इन को शांत करे ॥

क्षारभावितपिप्पली

पलाशक्षारतोयेन पिप्पली परिभाविता ।

गुल्मप्लीहार्तिशमनी वह्निदीप्तिकरी मता ॥

अर्थ—पलास के क्षार के पानी में पीपल को डालके देवे तो गोला, प्लीहा इन को शांत करे तथा विशेष करके अग्नि को प्रदीप्त करे ॥

अर्कपत्रक्षार

अर्कपत्रं सलवणमंतर्धूमं विपाचयेत् ।

मस्तुना तं पिवेत्क्षारं प्लीहोदरहरं परम् ॥

अर्थ—आक के पत्ते, सैंधानिमक इन को हांडी में भर मुल बंद कर जलाय देवे. न खार को दही के जल के साथ सेवन करे तो अत्यन्त प्लीहानाशक है ॥

अग्निमुखलवण

चित्रकं त्रिवृता दंती त्रिफलारुचकैः समैः । यावंत्येतानि चूर्णानि चूर्णमात्रं तु सैंधवम् ॥ भावयित्वा सुहृक्षारैः सुक्रांडे प्राक्षिपेत्ततः । मृत्पंकेनानुलित्वाथ प्राक्षिपेज्जातवेदासि ॥ सुदग्धं

च ततो ज्ञात्वा शनैर्वैद्यः समुद्धरेत् । तत्रेण पीतं तच्चूर्णं यकृ-
त्प्लीहोदरापहम् ॥ एतदग्निमुखं नाम्ना लवणं वह्निवर्धनम् ॥

अर्थ-चित्रक की छाल, निसोय, दंती, हरड, बहेडा, आंवला और संचरनिमक ये सब समान भाग लेवे तथा सब चूर्ण के बराबर सेंधानिमक डालके एकत्र करे। इस धूहर के दूध में भिगोयके धूहर की पोली लकड़ीमें भरे। ऊपर से कपडामिट्टी कर देवे। फिर अग्नि में फूंक देवे। जब राख हो जावे तब निकाल उस के भीतर से युक्ति पूर्वक राख को निकास ले, यह भस्म छाल के साथ देवे तो यकृत, प्लीहा इन को नाश करे तथा अग्नि को बढावे, इस को अग्निमुखनाम लवण कहते हैं ॥

रोहितकघृत

रोहीतकात्पलशतं संक्षुद्य वदराढकम् । साधयित्वा जलद्रोणे
चतुर्भागावशेषिते ॥ घृतप्रस्थं समावाप्य छागक्षीरं चतुर्गुणम् ।
तस्मिन्द्रव्याणि सर्वाणि प्रदद्यात्कार्पिकाणि च ॥ व्योषं फल-
त्रिकं हिंगु यवानी तुंवरुं विडम् । विडंगं चित्रकं चैव हृषुपा च-
विकं वचा ॥ अजाजिकृष्णलवणं दाडिमं देवदारुच । पुनर्नवा
विशाला च यवक्षारं सपोष्करम् ॥ एतैर्घृतं विपकं तु विद-
द्ध्याद्दृढभाजने । पाययेच्च पलं मात्रां रसयूपपयोंबुभिः ॥ यकृ-
त्प्लीहोदरं शूलमग्निमाद्यं च नाशयेत् । कुक्षिशूलं पार्श्वशूलं क-
टिशूलमरोचकम् ॥ विड्वंधशूलं शमयेत्पांडुरोगं सकामलम् ।
छर्द्यतीसारश्मनं तंद्राज्वरनिवारणम् ॥ महारोहितकं नाम्ना प्ली-
हघ्नं तु विशेषतः ॥

अर्थ-छाल रोहिडा १०० तोले और बेर २५६ तोले इन दोनों को १०२४ तोले जल में घटाग काढा करे जब चतुर्थांश जल रहे तब उस में ६४ तोले पी, २५६ तोले बकरी का दूध और सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, हींग, अजमायन, धनियां, विडानिमक, वायविडंग, चित्रक, हीऊबेर, चवप, वच, जीरा, साह्यरनिमक, अनारदाना, देवदारु, पुनर्नवा, इन्द्रायन, जवातार, पुहकरमुल ये प्रत्येक तोले २ भर लेवे। इन का कलक करके उस काटे में मिलाय देवे और मंदाग्नि से पचावे। जब तैयार हो जावे तब उत्तम चिकने बासन में भरके रखे। इस को ४ तोले पर्यंत रस, यूप, दूध अथवा मूत्र इन के साथ देवे तो यकृत, प्लीहा, उदर,

शूल, मंदाग्नि, कूख का दर्द, पसवाडे का दर्द, कमर का दर्द, अरुचि, मलबद्धता, शूल, पांडुरोग, कामला, वमन, अतिसार, तंद्रा और ज्वर इन को नाश करे यह महारोहितक नाम घृत ग्रीहा और कृमि इन को नाश करे ॥

चित्रकाय घृत

चित्रकस्य तुलाकाथे घृतप्रस्थं विपाचयेत् । आरनालं च द्विगुणं
दधिमंडं चतुर्गुणम् ॥ पंचकोलकतालीसं क्षारौ च पटुपंचकम् ।
यवान्यौ द्वे च जरणे मरिचं चाक्षसंमितम् ॥ एतैर्युक्त्या घृतं सिद्धं
मात्रया च पिबेत्प्रगे । ग्रीहशोफोदराशौघं विशेषादग्निदीपनम् ॥

अर्थ—चित्रक की जड़ का काटा ४०० तोले में ६४ तोले घी १२८ तोले कांजी और दही का तोड २५५ तोले तथा पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, ताली-सपत्र, जवाखार, सुहागा, समुद्रनिमक, संचरनिमक, सैधानिमक, कचियानिमक और खारीनिमक, अजमायन, अजमोद, जीरा, काला जीरा, मिरच ये प्रत्येक तोले २ डालके युक्ति से पचावे. जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके प्रातःकाल भक्षण करे तो ग्रीहा, सूजन, उदर, बवासीर इन को नाश करे तथा विशेष करके अग्नि को दीपन करे ॥

रक्तस्राव

ग्रीहिनः पृष्ठदेशे तु रक्तस्रावं तु कारयेत् ॥

अर्थ—ग्रीहवालेरोगी के पीठ का रुधिर निकलवाना चाहिये ॥

शिरावेध

वामबाहौ च मोक्तव्या कूर्पराभ्यंतरे शिरा ॥

अर्थ—ग्रीहनाश करने को बायें हाथ के कूर्पर भाग के भीतर की नस तोडे ॥

यकृतोदर

सव्यान्यपार्श्वे यकृति प्रदुष्टे ज्ञेयं यकृद्दाल्युदरं तदेव ॥

अर्थ—दहने तरफ जो यकृत कहिये कलेजा है वह दुष्ट कहिये रोगयुक्त होने से ग्रीहोदर के समान उदर होय उस को यकृद्दाल्युदर कहते हैं दोषों करके यकृत का भेद होय है इसी से यकृद्दाल्युदर कहते हैं ॥

दोषसंबंध

उदावर्त्तरुजानाहैर्मोहत् इदहनज्वरेः ।

गौरवारुचिकाठिन्यैर्विद्यात्तत्र मलान्क्रमात् ॥

अर्थ—उदावर्त्त, शूल, अफरा इन से वायु, मोह, प्यास, ज्वर इन से पित्त और भारीपना, अरुचि, कठिनता इन से कफ ऐसे क्रमपूर्वक दोषों का संबंध जानना ॥

यकृद्दाल्युदर

लवणं राजिकाचूर्णं समं गोमूत्रमिश्रितम् ।

त्रिशाणं हन्ति पीतं चैद्यकृत्प्लीहोदराण्यपि ॥

अर्थ—सैधानिमक, राई ये समान भाग लेवे सब को एकत्र कूटकर गोमूत्र के साथ १ तोले पीवे तो यकृत, प्लीहा, उदर इन को नाश करे ॥

पिप्पलीकल्क

पिप्पलीकल्कसंयुक्तं घृतं क्षीरं चतुर्गुणम् ।

पक्त्वा पिवेद्यथावह्नि यकृद्दाल्युदरापहम् ॥

अर्थ—पीपल का कल्क, घी और चौगुना दूध डालके औटावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार ले. इस को अग्निबल विचारके देवे तो यकृद्दाल्युदर को नाश करे ॥

सामान्ययकृतोपचार

प्लीहोद्दिष्टाः क्रियाः सर्वा यकृतः संप्रकल्पयेत् ।

कार्यं च दक्षिणे बाहौ तत्र शोणितमोक्षणम् ॥

अर्थ—जो क्रिया प्लीहोरोग पर कही है वह सब यकृतरोग पर करे तथा दहने हाथ की नस वेध करके रुधिर निकाले ॥

वद्धगुदोदर

यस्यांत्रमन्त्रैरुपलेपिभिर्वा बालाश्मभिर्वा पिहितं यथावत् । सं-

चीयते यस्य मलः सदोषः शूनैः शूनैः संकरवच्च नाड्याम् ॥

निरुध्यते तस्य गुदे पुरीषं निरेति कृच्छ्रादिति चाल्पमल्पम् ।

हृन्नाभिमध्ये परिवृद्धिमेति तस्योदरं वद्धगुदं वदन्ति ॥

अर्थ—जिस पुरुष की आंत उपलेपे कहिये गाढे अन्न करके (शाकादिक) अथवा घाल तथा बारीक पत्थर के टुकड़े करके बद्ध हो जाय उस पुरुष का दोष-युक्त मल धीरे धीरे आंतडी के नली में होकर जैसे बुहारी से शारा छुण धूर आदि क्रम से बढे है, वसी प्रकार बढे और वह मल बढे कष्ट से गुदद्वारा थोडा थोडा निकले, जब मल का निकलना बंद हो जाय तब मल दोषों करके गुदा से ऊपर आवे इसी से उदर बढे है अर्थात् हृदय और नाभि के मध्य अन्नपाकस्थान की वृद्धि

होय इसी से इस उदर को बद्धगुदोदर कहते हैं अथवा गुदा के ऊपर आंतों को बद्ध होने से बद्धगुद कहते हैं यह चरक का मत है ॥

हृषुषादि चूर्ण

बद्धोदरी तु हृषुषादीप्यकाजाजिसैधवम् ॥

अर्थ—बद्धगुदोदरी से हाज्जेर, अजमायन, जीरा और सैधानिमक इन का चूर्ण सेवन करे ॥

वस्तिप्रकार

स्विन्ने बद्धोदरे योज्यो वस्तिस्तीक्ष्णैस्तु भेषजैः ।

सतैल्लवणश्चापि निरूहश्चानुवासनम् ॥

अर्थ—बद्धगुदोदरवाले रोगी के प्रथम सेक देकर तीक्ष्ण औषध अथवा तेल, निमक इन से निरूहवस्ती और अनुवासनवस्ती करे ॥

उत्तरवस्ति

उदावर्तहरं सर्वं प्रकर्तव्यं चिकित्सितम् ।

वर्तयो विविधाश्चात्र पायौ शस्ताः प्रकीर्तिताः ॥

अर्थ—बद्धगुदोदरवाले रोगी के संपूर्ण उदावर्तनाशक क्रिया करे और गुदा में अनेक प्रकार की वस्ती बनायके डाले ये उपचार उत्तम कहे हैं ॥

तीक्ष्णैर्विरेचनं चात्र शस्यते तु विशेषतः ।

वातहंता विधिः सर्वो विधातव्यो विजानता ॥

अर्थ—बद्धगुदोदर पर तीक्ष्ण औषध से जुल्लाव करावे और संपूर्ण वातनाशक क्रिया करे ये उत्तम हैं ॥

क्षतोदर

श्लयं तथात्रोपहितं चदंत्रं भुक्तं भिनत्त्यागतमन्यथा वा ।

तस्मात्सुतोऽत्रात्सलिलप्रकाशः स्रावः स्रवेद्वै गुदतस्तु भूयः ॥

नाभेरधश्चोदरमेति वृद्धिं निस्तुद्यते दाल्याति चातिमात्रम् ।

एतत्परिस्राव्युदरं प्रदिष्टम् ।

अर्थ—कांटा धूल आदि अन्न के साथ मिलकर पेट में चला जाय अर्थात् पक्का-शय में विलोम (टेढ़ा तिरछा) चला जाय तब आंतों को काटे और सीधा जाय तो नहीं काटे अथवा जंभाई अति अशन करने से अर्थात् रोकने से आत फट जाय

सो चरक में लिखा भी है उन फटे आंतों से गलित पानी के समान स्राव पुनः २ गुदा के मार्ग होकर झरे, नाभि के नीचे का भाग बड़े मोचने की सी तथा भेद (चीरने) की सी पीड़ा से अत्यंत व्यथित होय इस क्षतोदर को ग्रन्थांतर में परि-
स्त्रावि उदर कहते हैं और इसी को छिद्रोदर कहते हैं यह गणदास का मत है॥

वेधक्रिया तथा पाटनक्रिया

छिद्रांत्रवद्धसंज्ञेषु जठरेषु प्रयोगवित् ।

लब्धानुज्ञा भिपक् कुर्यात्पाटनव्यधनक्रियाम् ॥

अर्थ—क्षतोदर तथा घट्टगुद संज्ञक उदरों पर प्रयोग जाननेवाला वैद्य रोगी के संबंधियों की आज्ञा लेकर पाटन (चीरना) और वेधक्रिया करे ॥

तथा जातोदकं सर्वमुदरं व्यधयेद्भिपक् ।

पृष्ठा ज्ञातींश्च सुहृदो दारांश्च नृपतिं गुरुम् ॥

अर्थ—संपूर्ण जातोदक उदररोगी को वैद्य रोगी, जाति के सुहृद, स्त्रीजन, राजा और गुरु इन की आज्ञा लेकर फिर शस्त्रकर्म करे अर्थात् चीरना फाड़ना करे ॥

वेधस्थान

अनुज्ञाप्य भिपक् कर्म विदध्यात्संशयं ध्रुवम् ।

सुवेष्टितं त्वधो नाभेर्वामतश्चतुरंगुलात् ॥

अर्थ—वैद्य रोगी से प्रथम कह देवे कि वेध करनेसे कि तो तू अच्छा हो जावेगा
अथवा तू मर जावेगा यदि इस कहने पर रोगी आज्ञा देवे तो उदर को ढकके
और लपेट के नाभी के नीचे चार अंगुल पर बाईं तरफ वेध करे ॥

वेध करने का प्रकार

अंगुल्योदरमात्रं तु व्रीहिवक्त्रेण भेदयेत् ।

नाडीमुभयतोद्वारां संयोज्यापहरेज्जलम् ॥

अर्थ—अंगुली में धानके कांटे के समान मुत्तवाले शस्त्र को लेकर उस से छेद
करे उस छिद्र में द्विगुल नली डालके उस में से पानी को निकाले ॥

जल निकालने में नियम

**न चैकस्मिन्दिने सर्वदोषं त्वपहरेत्तथा । कासश्वासज्वरस्तृष्णा
गात्रभंगश्च वेपथुः ॥ अतिसारश्च सुतरां पूर्यते जठरं तथा ।
तृतीयपंचमाद्येषु दिवसेष्वल्पशः पुनः ॥**

अर्थ—एक ही दिन में संपूर्ण दोषों को न निकाले. एक ही दम निकालने से खांसी, श्वास, ज्वर, प्यास, गात्रभंग, कंप, अतिसार, और प्रथम के समान फिर पेट का भर जाना ये विकार होते हैं इस वास्ते तीसरे अथवा पाचवें दिन फिर वारंवार निकाले ॥

जल निकालने पर व्रण पर लेप

स्त्रावयेदुदकं तैललवणाभ्यां दृढव्रणम् । बध्नीयाद्विषतो दोषे
रक्तं प्राक् प्रतिपूर्य च ॥ संवेष्टयेद्दाढतरं कौशेयादिकचर्मणा ॥

अर्थ—उदर का जल निकालने के पश्चात् व्रण में दोषप्रवेश होने के प्रथम ही तेल और निमक रुधिर के साथ रेतभी अथवा चमड़ा इन से दृढ बांधे ॥

जलोदर लक्षण

जलोदरं कीर्तयतो निबोध ॥ यः स्नेहपीतोप्यनुवासितो वा वांतो
विरक्तोऽप्यथवा निरूढः । पिवेज्जलं शीतलमाशु तस्य स्रोतांसि
दुप्यन्ति हि तद्ग्रहानि ॥ स्नेहोपलितेष्वथवापि तेषु जलोदरं पू-
र्ववदभ्युपैति । स्निग्धं महत्तत्परिवृद्धनाभि भृशोन्नतं पूर्णमिवा-
बुपानात् ॥ यथादृतिः क्षुभ्यति कंपते च शब्दायते चाप्युदको-
दरं तत् ॥

अर्थ—अब जलोदर कैसे होय है उस को कहते हैं जिस ने स्नेह (घृत तैलादि) पान करा होय, अथवा अनुवासनवस्ति करी हो, वमन करा हो अथवा दस्त करे हो अथवा निरूढ वस्ति करी होय ऐसा पुरुष शीतल जल पीवे तब उस की जल वहनेवाली नसों के मार्ग तत्काल दुष्ट होय हैं, वे उदक वहनेवाले स्रोत (मार्ग) स्नेह से उपलित (चीकने) होने से पूर्ववत् (अर्थात् अन्नरस उपस्नेह-न्याय करके अर्थात् इन को बाहर लायकर उदर को उत्पन्न करे) जलोदर होय है उस में चिकनापन दीखे, ऊंचा होय, नाभि के पास बहुत ऊंचा होय, चारों ओर तनासा मानूम होय, पानी की पोटा भरी सी होय, जैसी पानी से भरी पखाल में जल हले है उसी प्रकार हले, गुड गुड शब्द करे, कांपे. इन को जलोदर अर्थात् जलंधर कहते हैं ॥

छात्र

त्र्युपणक्षारलवणैर्युक्तं तु सलिलोदरी ॥

अर्थ—जलोदरवाले को सोंठ, मिरच, पीपल और निमक का चूर्ण ढाँके छाछ पिंलावे ॥

जलोदरारिस

पिप्पली मरिचं ताम्रं कांचनीचूर्णसंयुतम् । सुहृक्षीरैर्दिनं मर्द्यं
तुल्यं जैपालबीजकम् ॥ निष्कयुक्तं विरेकेण सत्यं हंति जलोदरम् ॥

अर्थ—पीपल, काली मिरच, तामे की भस्म, हलदी ये समान भाग लेवे इन सब के बराबर जमालगोटा लेवे. सब को थूहर के दूध में खरल कर इस में से छः २ मासे खाने को देवे तो दस्त कर जलोदर को नाश करे यह सत्य कहता हूँ ॥

जलोदर पर रेचन

जलोदरेषु विश्राव्यं जातं जातं विरेचनैः ॥

अर्थ—जलंधर में भीतर जल होने से जुझाव देकर जल को निकाल ढाँके ॥

पेट फूलने पर यत्न

विरक्तजठराध्मानं स्नेहाद्यैर्वस्तिभिर्जयेत् ।

निःश्रुतो लंघितो पेयामस्नेहलवणां पिबेत् ॥

अर्थ—जल निकलने के उपरान्त पेट फूला होय तो स्नेहविधि, बस्तिकर्म इन करके उपचार करे तथा जल निकलने के पीछे लंघन करायके घृत और निमक के बिना पेया देवे ॥

छः महीने तक नियम

अतःपरं तु पण्मासं क्षीरवर्ती भवेन्नरः ।

त्रीन्मासान्पयसा पेयं पिबेत्त्रिंश्वपि योजयेत् ॥

अर्थ—इस प्रकार उदर में जल की कमी होने से छः महीने पर्यंत दूध पीवे, अन्न न देय, फिर तीन महीने दूध में पेया करके देवे. इसी प्रकार आगे भी तीन महीने पर्यंत उसी प्रकार उपचार करे ॥

अन्न

सकोरदूष्यश्यामाकपयसा लवणं लघु ।

नरः संवत्सरेणैव जयेदाशु जलोदरम् ॥

अर्थ—कोदो, सामखिया, दूध, निमक, हलके अन्न इस प्रकार उपचार करने से एक वर्ष में जलोदर को जीते ॥

साध्यासाध्यविचार

जन्मनैवोदरं सर्वं प्रायः कृच्छ्रतमं विदुः ।

वलिनस्तदजातांबु यत्रसाध्यं नवोत्थितम् ॥

अर्थ—सर्व प्रकार के उदर जन्म से ही प्रायः अत्यन्त कष्टसाध्य होते हैं, बलवान् पुरुष के नवीन प्रगट भया हो और उस में पानी नहीं प्रगट भया हो ऐसा बडे यत्र से साध्य होय, पानी नहीं प्रगट भया हो ऐसे उदर के लक्षण चरक में कहे हैं ॥

पक्षाद्बद्धगुदं तूर्ध्वं सर्वं जातोदकं तथा ।

प्रायो भवत्यभावाय छिद्रांत्रं चोदरं नृणाम् ॥

अर्थ—बद्धगुदोदर १५ दिवस के पिछाडी असाध्य होय है, उसी प्रकार सब प्रकार के उदक (पानी) उत्पन्न होने से नाशकारक होय है, और छिद्रांत्रोदर ये प्रायः नाशक होय है. कदाचित् शल्य अथवा शस्त्रचिकित्सा जैसी होनी चाहिये ऐसी होय तो उदक (पानी) प्रगट भया उदररोग छिद्रांत्र अथवा बद्धगुद साध्य होय है ये ' प्रायः ' इस पद से सूचना करी ॥

असाध्यलक्षण

शूनाक्षं कुटिलोपस्थमुपक्लिन्नतनुत्वचम् ।

बलशोणितमांसाग्निपरिक्षीणं च वर्जयेत् ॥

अर्थ—जिस उदररोगी के नेत्रों पर सूजन होय, लिंग टेढा हो गया हो, पेट की त्वचा गीली तथा पतली हो गयी होय, बल, रुधिर, मांस और अग्नि ये जिस के क्षीण हो गये हों ऐसा रोगी त्याज्य है ॥

यः क्लिन्नत्वक्तनूभूतनेत्रः कुटिलभूकर्णः । बलशोणितमांसाग्नि-
क्षीणकोष्ठामयी स्मृतः ॥ शोफातिसारपार्श्वार्तिभक्तद्वेपनिपी-
डितम् । विरेचितं चोदरिणं पूर्यमाणं विरेचयेत् ॥

अर्थ—जिस की त्वचा गीली, आंखें छोटी, भौं और कान टेढे, बल, रक्त, मांस, अग्नि और कोठा क्षीण, अफरा, अतिसार, पार्श्वशूल और अन्नद्वेप इन से युक्त और रेचकादिकों से पेट खाली करने पर भी फिर भर जावे ऐसे लक्षणोंवाले उदररोगी को छोड़ देवे ॥

असाध्यलक्षण

पार्श्वभंगान्नविद्वेषशोथातीसारपीडितम् ।

विरक्तं चाप्युदरिणं पूर्यमाणं विवर्जयेत् ॥

अर्थ-पार्श्वभंग (पसरियों में पीडा), अन्न में अरुचि, शोथ, अतिसार इन से पीडित और दस्त कराने से जिसका पेट फेर पानी से भर जाय, ऐसे उदररोगी को वैद्य त्याग देय ॥

यत्न

रेचनं वमनं कुर्यात्सर्वत्र पाचनानि च ॥

अर्थ-संपूर्ण उदरों में रेचन (जुल्लाब), वमन और पाचन कर्म करे ॥

रेचन

उदारानां मलाढ्यत्वाद्बहुशः शोधनं हितम् ।

क्षीरेणैरंडजं तैलं पिबेन्मूत्रेण वासकृत् ॥

अर्थ-संपूर्ण उदर प्रायः करके मल से परिपूरित होते हैं. इस वास्ते उन को शोधन करना हितकारक है उस को दूध के साथ अथवा गोमूत्र के साथ वारंवार अंड का तेल पिलावे ॥

ज्योतिष्मतीतैल

ज्योतिष्मत्याः पिबेत्तैलं पयसा वा दिने दिने ॥

अर्थ-उदररोगी को मालकांगनी का तेल प्रतिदिन दूध में मिलायके पिलावे ॥

गोमूत्रयोग

मूत्राण्युदरिणां सेके पाने चैव प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-गोमूत्रादिक मूत्र उदररोगी को सेचन विषय में और पीने में देने चाहिये ॥

उदर पर यत्नांतर

हरीतकीसहस्रं वा गोमूत्रेण यथा जुपः। सहस्रं पिप्पलीनां वा सु-

वक्षीरेण सुभावितम् ॥ पिप्पलीवर्धमानं वा क्षाराशी वा शिला-

जतु । तद्बद्धा गुग्गुलं क्षीरतुल्यार्द्रकरसैस्तथा ॥ चित्रकामर-

दारुभ्यां कल्कं क्षीरेण वा पिबेत् ॥

अर्थ-उदररोगी को गोमूत्र के साथ हजार पीपल देवे अथवा थूहर के दूध की भावना दीनी हुई हजार पीपल देवे अथवा वर्द्धमान पीपल देवे अथवा दूध के साथ शिलाजीत देकर दूध को ही अन्न की ऐवज देवे अथवा दूध और दूध की बराबर अदरस का रस इनमें गुग्गुल मिलायके देवे अथवा चित्रक, देवदारु इन का कल्क दूध से देवे ॥

वर्द्धमानपीपल

त्रिभिरथ परिवृद्धं पंचभिः सप्तभिर्वा दशभिरथ विवृद्धं पिप्पली-

वर्धमानम् । इति पिवति युवा यस्तस्य न श्वासकासज्वरजठ-
रगुदाशौवातरक्तक्षयाः स्युः ॥

अर्थ—तीन, पांच, सात अथवा दश इस वृद्धि से जो पीपलों को सेवन करता है, उस के श्वास, खांसी, ज्वर, उदर, बवासीर, वातरक्त, क्षय ये रोग कदाचित् नहीं हों ॥

मूत्राप्यष्टाबुदरिणां पानसेके प्रयोजयेत् ।

पिप्पली वर्धमानं वा पयसैव प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—आठ प्रकार के गोमूत्रादिक मूत्रों के पीने की, बफारो देने की उदररोग में योजना करे, अथवा वर्द्धमानपीपल दूध के साथ देवे ॥

उद्रीक्षीरं पिवेज्जीर्णैर्निरन्नो जठरामयी ।

पक्षं मासमृतुं वापि नच पानीयमाचरेत् ॥

अर्थ—ऊंटनी का दूध पचे तो उदररोगवाला इस को पंद्रह दिन अथवा १ महीने अथवा छः महीने पर्यंत जल पीने को त्यागके सेवन करे ॥

सामुद्रशुक्तिकाक्षारो यवक्षारः ससैधवः ।

गोदध्ना संप्रयुज्येत सर्वोदरविनाशनः ॥

अर्थ—समुद्र की सीपियों का खार, जवाखार, सैधानिमक इन को गौ के दूध के साथ सेवन करे. यह सर्व उदररोगों का नाशक है ॥

विशाला शंखिनी दंती त्रिवृत्रीली फलत्रयम् ।

निशा विडंगकंपिलं मूत्रेणोदरनुत्पिवेत् ॥

अर्थ—इन्द्रायन, संसाहुली, दंती, निसोय, नील, हरड, बहेडा, आंवला, हलदी, वायविडंग और कवीला इन सब को कूट पीस गोमूत्र के साथ उदरनाशनार्थ पीवे ॥

जलोदर पर योग

पयो वा चव्यदंत्यग्निविडंगं व्योपकलिकतम् । पेयं वा शृंगेवरांबु

कपायो दारुवह्निजः ॥ चव्यविश्वसमुत्थो वा पेयो जठरशांतये ॥

अर्थ—चव्य, जमालगोटा, चित्रक, वायविडंग, सोंठ, भिरच और पीपल इन का कलक दूध से अथवा उदररक्त के रस अथवा देवदारु, चित्रक की छाल इन का काटा अथवा चव्य, सोंठ इन के काटे को उदररोगशांति के अर्थ देवे ॥

देवदारुव्यादि लेप

देवदारुपलाशाकंहस्तिपिप्पलिशिग्रुकैः ।

साश्वगंधैः सगोमूत्रैः प्रलिपेदुदरं शनैः ॥

अर्थ—देवदारु, केसूला के फूल, आक की जड़, गजपीपल, सहजना, असगंध इन को गोमूत्र में पीसके पेट पर लेप करे ॥

प्रयोगांतर

पयसा शृंगवेरांबुकपायो दारुवह्निजः ।

चव्यमुस्तासमुत्थो वा पेयो जठरशांतये ॥

अर्थ—जल के साथ अदरख का रस अथवा देवदारु, चित्रक इन का काढा अथवा चव्य, नागरमोथा इन का काढा उदरनिवृत्ति के वास्ते पीवे ॥

चव्यादि काथ

चव्यचित्रकविश्वानां साधितो देवदारुणा ।

काथस्त्रिवृच्चूर्णयुतो गोमूत्रेणोदरं जयेत् ॥

अर्थ—१ चव्य, २ चित्रक, ३ सोंठ, ४ देवदारु इन चार औषधों का काढा करके उस में निसोथ का चूर्ण डालके और गोमूत्र में मिलायके पीवे तो संपूर्ण उदररोग दूर होंगा ॥

यः सप्तरात्रं विलिपेत्सुधायाः क्षीरेण चूर्णं मृदितं कणायाः ।

लिह्यात्प्रकामं मधुरं च भुंक्ते तस्योदरव्याधिरुपैति शांतिम् ॥

अर्थ—थूहर के दूध में पीपल का चूर्ण खरल कर उस का सात दिन लेप करे और खाय ऊपर से मिष्ट आहार करे तो उस का उदररोग शांत होय ॥

देवद्रुमादि

देवद्रुमं शिशु मसूरकं च गोमूत्रपिष्टामथ वाश्वगंधाम् ।

पीत्वाशु हन्यादुदरं प्रवृद्धं कृमीन्सशोफानुदरं च दुष्यम् ॥

अर्थ—देवदारु, सहजना, मसूर और असगंध इन को गोमूत्र में पीस खाने को देवे तो घोर बड़ा हुआ उदररोग, कृमिरोग, सूजन और दूष्योदर इन को शीघ्र नाश करे ॥

नारायणचूर्ण

चित्रकत्रिफलाव्योपं जीरकं ह्रपुपा वचा । यवानीपिप्पलीमूलं शतपुष्पाजगंधिका ॥ अजमोदा शठी धान्यं विडंगं स्थूलजीरकम् । हेमाह्वा पौष्करं मूलं क्षारौ लवणपंचकम् ॥ कुपुं चेति समांशानि विशाला स्याद् द्विभागिका । त्रिवृत्रिभागा विज्ञेया दंत्या भागत्रयं भवेत् ॥ चतुर्भागा सातला स्यात्सर्वाण्येकत्र चूर्णयेत् । पाचनस्नेहनाद्यैश्च स्निग्धकोष्ठस्य रोगिणः ॥ दद्याच्चूर्णं

विरेकाय सर्वरोगप्रणाशनम् । हृद्रोगे पांडुरोगे च कासे श्वासे
भगंदरे ॥ मंदेग्रौ च ज्वरे कुष्ठे ग्रहण्यां च गलग्रहे । दद्याद्युक्ता-
नुपानेन तथाध्माने सुरादिभिः ॥ गुल्मे बदरनीरेण विदसंगे द-
धिमस्तुना । उष्णांबुभिरजीर्णे च वृक्षाम्लैः परिकर्तिषु ॥ उष्नी-
दुग्धेनोदरेषु तथा तक्षेण वा गवाम् । प्रसन्नया वातरोगे दाडिमां-
भोभिरर्शांसि ॥ द्विविधे च विपे दद्याद्दृतेन विपनाशनम् ॥

अर्थ—चित्रक की छाल, त्रिफला, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, हाऊबेर, वच, अ-
जमायन, पीपरामूल, सोंफ, बनतुलसी, अजमोद, कचूर, धनिया, वायविडंग, कलौं-
जी, चोख, पुहकरमूल, सज्जीखार, जवाखार, पांचों निमक, (सैधा, कचिया, काला,
समुद्र, विड) और कूठ ये सब समान भाग लेवे और इन्द्रायन की १/४ और औ-
षधों से दूनी ले निसोथ तिगुनी, दंती के तीन भाग, धूहर ४ भाग ले सब को एकत्र
करके चूर्ण करे. प्रथम पाचन और स्नेहादिक करके जिस का कोठा चिकना हो गया
हो उस को दस्त होने के वास्ते यह चूर्ण देवे यह सब रोगों को नष्ट करे हृदयरौ-
ग, पांडुरोग, खाँसी, श्वास, भगंदर, मंदाग्न, ज्वर, कोठ, संग्रहणी, गलग्रह इन रोगों
में पृथक् २ अनुपानों के साथ देवे. अफरा रोग में मद्य के साथ देवे, गुल्मरोग में
घेर के काढे के साथ देवे और मल रुक रहा होवे तो इस चूर्ण को दही के जल के
साथ देवे, अजीर्णरोग में गरम जल के संग देवे, गुदा में कतरने की सी पीडा होती
होय तो उस को इमली के छाल के काढे में देवे, उदररोगवाले को ऊँटनी के दूध
के संग देवे अथवा गौ की छाल के साथ देवे तो इस से संपूर्ण रोग दूर होवें वादी
के रोग में इस चूर्ण को प्रसन्ना जो मद्य का भेद है उस के साथ देवे, बवासीर रोग
में अनार के जल के साथ देना चाहिये, यह चूर्ण घी में मिलाय राय तो स्यादर-
विप (पुष्पपत्रादिक) और जंगमविप (सर्पादिक का) ये दोनों प्रकार के विप दूर
होवें इस चूर्ण को नारायणचूर्ण कहते हैं. इस चूर्ण से संपूर्ण दुष्ट रोग दूर हों ॥

हृपुपादि चूर्ण

हृपुपा त्रिफला चैव त्रायमाणा च पिप्पली । हेमक्षीरी त्रिवृच्चैव
सातला कटुका वचा ॥ नीलिनी सैन्धवं कृष्णलवणं चेति चू-
र्णयेत् । उष्णोदकेन मूत्रेण दाडिमत्रिफलारसः ॥ तथा मांस-
रसेनापि यथायोग्यं पिबेन्नरः । अजीर्णे ष्टीह्नि गुल्मेपु शोफार्शा-
विपमाग्निषु ॥ हलीमकामलापांडुकुष्ठाध्मानोदरेष्वपि ॥

अर्थ—हाऊबेर, हरड, बहेडा, आवला, त्रायमाण, पीपल, चोक, निसोथ, सातला (पीली थूहर यह न मिले तो इस की प्रतिनिधि में थूहर डाले), कुटकी, बच, नील, सेधानिमक, काला निमक इन चोदह औषधों का चूर्ण करके गरम जल अथवा गोमूत्र में अथवा अनार के रस में अथवा त्रिफला के काठे से अथवा जंगली जीवों के मांसरस के साथ सेवन करे परंतु जिस रोगी को जो अनुपान हितकारी होवे उसी के साथ देवे तो अजीर्ण और घ्रीहा, गोला, सूजन, बवासीर, मंदाग्नि, हलीमकरोग, कामला, पांडुरोग, कोठ, पेट का फूलना, उदररोग ये संपूर्ण रोग दूर होंगे ॥

उदररोग पर चूर्ण

क्षारद्वयानलव्योपनीलीलवणपंचकम् ।

चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥

अर्थ—जवाखार, सुहागा, चित्रक की छाल, सोठ, मिरच, पीपल, गजपीपल, पांचों निमक इन के चूर्ण को सेवन करे तो सर्व गुल्मरोग तथा उदररोग इन को नाश करे ॥

पटोलादि चूर्ण

पटोलमूलं रजनी विडंगं त्रिफलात्वचः । कंपिल्लकं नीलिनी च
त्रिवृता चेति चूर्णयेत् ॥ पडाद्यान्कर्पिकानंत्यांस्त्रींश्च द्वित्रिचतु-
गुणान् । कृत्वा चूर्णं ततो मुष्टिं गवां सूत्रेण वा पिबेत् ॥ विरि-
क्तो मृदु भुंजीत भोजनं जांगलै रसैः । मंडं पेयां च पीत्वा वा
सव्योपं पडहं पयः ॥ शृतं पिबेत्ततश्चूर्णं पिबेदेवं पुनः पुनः ।
हंति सर्वोदराण्येतच्चूर्णं जातोदकान्यपि ॥ कामलां पांडुरोगं च
श्वयथुं चापकर्पति ॥

अर्थ—कडुए पडवल की जड़, हलदी, वायविडंग, हरड, बहेडा, आवला ये सब एक २ तोले, दालचीनी २ तोले, कवीला, नीलिनी और निसोथ ये क्रम से ३-४ ५-भाग लेवे इन सब का चूर्ण करके चार तोले की मात्रा गोमूत्र से देवे। जब दस्त हो चुके जंगली जीवों के मांस के रसों से नरम ऐसे भोजन करावे अथवा मंड, पेया किंवा छः दिन सोठ, मिरच, पीपल इन के चूर्ण को डाल औटा हुआ दूध देवे फिर दूसरे दिन चूर्ण डालके उसी क्रम से दूध पिलावे। इस प्रकार वारंवार करे तो यह चूर्ण संपूर्ण उदर जातोदक होय तो उस को भी नष्ट करे तथा कामला, पांडुरोग और सूजन इन को दूर करे ॥

उदर पर विंदु घृत

अर्कक्षीरं पले द्वे तु स्नुहिक्षीरपलानि पद् । पथ्या कंपिल्लकं



श्यामा शम्याकं गिरिकर्णिका ॥ नीलिनी त्रिवृता दंतीशंखिनी
चित्रकं तथा।एषां च पलिकैर्भगैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्॥अथास्य
मलिने कोष्ठे विंदुमात्रं प्रदापयेत् । यावदस्य पिवेद्विद्वंस्तावद्वे-
गान्विरिच्यते ॥ कुष्ठं गुल्ममुदावर्तं श्वयथुं सभगंदरम् । शम-
यत्युदराण्यष्टौ वृक्षमिद्राशनिर्यथा ॥ एतद्विंदुघृतं नाम येना-
भ्यक्तो विरिच्यते ॥

अर्थ—आक का दूध ८ तोले, थूहर का दूध २४ तोले और हरड, सपेद निसो-
य, पीपल, अमलतास का गूदा, सपेद सारिवा, लघुनीली, निसोय, जमालगोट के
बीज, शंखपुष्पी और चित्रक ये सब चार २ तोले ले. इन के कोठे तथा कल्क में
६४ तोले घी डालके पचावे यह विंदुघृत मलिन कोठेवाले को १ बूंद डालने से
दस्त कराता है. इस की जितनी बूंद डाले उतने ही दस्त होंगे यह कुष्ठरोग, गोला,
उदावर्त, सूजन, भगंदर और आठ प्रकार के उदररोग इन को शमन करे इस घृत
को देह में लगाने से भी दस्त कराता है ॥

पंचमूलघृत

द्वे पंचमूल्यौ त्रिवृतानिकुंभे सप्तसलं चित्रकशिथुमूलम् । कुरं-
टबीजं त्रिफलां गुडूचीमेरंडमूलं मदयंतिकां च ॥ पाठां सभा-
र्ङ्गीं सुपर्विं सुनीलां सरोहिपायासकुचेलिकां च । पृथक् समा-
हृत्य पलं जलस्य द्रोणे पचेत्तच्चरणांशशेषम् ॥ घृतं हि पक्वं
सकपाययुक्तं निहंति पीतं सकलोदराणि ॥

अर्थ—दशमूल, निसोय, जमालगोटा, सातला, थूहर का भेद, चित्रक, सहजने
की जड़, सपेद पीयावासे के बीज, हरड, बहेडा, आंवला, गिलोय, अंड की जड़,
मदयंतिका, पाठ, भारंगी, कलंजी, नीली, रोहिपतृण, धमासो, ये औषध चार २
तोले लेवे. १०२४ तोले जल में औटावे जब चतुर्याश रहे तब उत्तारके छान लेवे
इस में घी डालके फिर पक करे जब जल जरके घृत मात्र शेष रहे तब उत्तार ले
इसे पीवे तो संपूर्ण उदरों का नाश करे ॥

नाराचघृत

त्रिफला चित्रको दंती बृहती कंटकारिका । सुहिसार्कविडंगान्नि
घृतस्य कुडवं पचेत्॥तस्य मृद्भग्निसिद्धस्य कर्पाधं पाययेन्नरम्॥

पुनर्नवादि योग

पुनर्नवादाव्यभयागुडूचीं पिवेत्समूत्रां महिषाक्षयुक्ताम् ।

त्वग्दोषशोथोदरपांडुरोगस्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु ॥

अर्थ—पुनर्नवा, दारुहलदी, हरड, गिलोय इन के कांटे में गोमूत्र डालके गूगल डालके देवे तो त्वचा के दोष, सूजन, उदर, पांडुरोग, स्थूलता, लाल ऊपर का कफरोग इन सब को नाश करे ॥

पुनर्नवादि काथ

पुनर्नवामृतादारुपथ्यानागरसाधितः ।

गोमूत्रगुग्गुलुयुतः काथः शोथोदरापहः ॥

अर्थ—पुनर्नवा, गिलोय, देवदारु, छोटी हरड और सोंठ इन पांच औषधों काटा करके उस में गूगल और गोमूत्र मिलायके पीवे तो सूजन जिस उदररोग होय वह इस काथ के पीने से दूर होय ॥

शोथोदरचिकित्सा

पुनर्नवा दारुमहौपधांबु गोमूत्रसिद्धः श्वयथुं निहंति । तथा कणा-

शुंठिगुडोत्थचूर्णं शोफामशूलघ्नमजीर्णहारिः ॥ गवां क्षीरं वरामिथ्रं

शोफोदरविनाशनम् । गोमूत्रेण समायुक्तं महिषीणां पयोथ वा ॥

अर्थ—सपेद पुनर्नवा, देवदारु, सोंठ इन औषधों को कूट गोमूत्र मिलायके कटा करे. इस के पीने से सूजन दूर होय. उसी प्रकार पीपल और सोंठ इन के चूर्ण में गुड मिलायके भक्षण करे तो सूजन, आमशूल, अजीर्ण ये दूर हों. एवं त्रिफला के चूर्ण को गौ के मूत्र के साथ पीवे तो शोफोदर दूर होय अथवा भैंस के मूत्र में त्रिफला को पीवे ॥

गोमूत्रयुक्तं महिषीपयो वा क्षीरं गवां वा त्रिफलाविमिश्रम् ।

क्षीरान्नभुक्तेवलमेव गव्यं मूत्रं पिवेद्वा श्वयथूदरेषु ॥

अर्थ—शोफोदररोगवाले को गोमूत्र के साथ अथवा त्रिफला के साथ गौ का अथवा भैंस का दूध पिलावे. अथवा गोमूत्र पीकर ऊपर से दूधभात का भोजन करे ॥

माहिपमूत्रपान

सत्ताहं माहिपं मूत्रं पयसा चांबुवर्जितम् ।

पिवन्नाश्रं पयो मासं श्वयथूदरनाशनम् ॥

उदररोगकर्मविपाकः ।

वर्ध-शोथरोगवाला रोगी सात दिन पर्यंत दूध के साथ भैस का मूत्र पीवे अ-
कंटनी का दूध एक महीने पर्यंत पीवे परंतु इस के ऊपर अन्न जल को त्याग देवे ॥

विल्वादि काथ

विल्वाग्निचव्यार्द्रकशृंगवेरकाथेन कल्केन च सिद्धमाज्यम् ।

सच्छागदुग्धं ग्रहणीगदोत्थशोफाग्निसादारुचिहं वरिष्ठम् ॥

अर्ध-बेल की जड़, चित्रक की छाल, अदरक और सांठ इन के काढ़े में और
४ में सिद्ध करे हुए घृत को बकरी के दूध से पीवे तो संग्रहणी का विकार, सूजन,
मि, अरुचि इन के नाश करने में श्रेष्ठ है ॥

उदररोग पर पथ्य

विरेचनं लंघनमब्दसंभवाः कुलत्थमुद्गारुणशालयो यवाः । मृग-

द्विजा जांगलसंज्ञयान्विताः सितासुरामाक्षिकसीधुमाध्विकाः ॥

तक्रं रसनो रुबुतैलमार्द्रकं शालिचशाकं कुलकं कठिलकम् ।

पुनर्नवा शिशुफलं हरीतकी तांबूलमेलायवशूकमायसम् ॥ अजा-

गवोद्रीमहिषीपयो जलं लघूनि तीक्ष्णानि च दीपनानि । वस्त्रेण

संवेष्टनमग्निकर्म विपप्रयोगोत्र युतो यथायथम् ॥ विशेषतः प्ली-

हसमुद्भवे गदे वामेग्रवाहौ धमनीव्यधः परम् । वद्धाह्वये नोदरजे

क्षतोत्थिते नाभेरधः शस्त्रविधिर्यथाविधिः ॥ समीरणोत्थे घृत-

पानमादितः साभ्यंजनं चाप्यनुवासनं तथा । यथामलं पथ्यग-

णोयमाश्रितो सखा नृणां स्यादुदरामये सति ॥

अर्ध-जुलाब, लंघन, वर्षादिन के पुराने कुलची, मूंग, छाल चावल, जौ, मूंग,
पक्षी, जंगली जीवों का मांस, मिश्री, खांड, दारु, सहत, सीधु (मद्य का भेद),
माध्विक (सहत महुए की बनी दारु), छाल, लहसन, अंडी का तेल, अदरक,
शालिच शाक, परवल, करेले, सांठ (विसखपरे का भेद), सहजने की फली, हरड,
पान, इछायची, जौ, लोहभस्म (कीटी), बकरी, गौ, अकंटनी और भैस इन का
दूध और मूत्र, हलके पदार्थ, चरपरे, दीपनकारी पदार्थ, कपडे से लपेटना, दागना,
विपभक्षण ये यथायोग्य करे विशेष करके प्लीहोदर में बाईं भुजा के अग्रभाग में
धमनी नाडी की फस्त खोले बद्धोदर में क्षतोदर में नाभि के नीचे यथाविधि शस्त्र-
कर्म (चीरा आदि देना) करे. वादी के उदररोग में प्रथम घी पिळावे, उबटना,
अनुवासनबस्ती ये सब दोषों के अनुसार करे. ये उदर (जलंदर) रोगवाले को
कल्याणकारी जानने ॥

दोषाः कुक्षौ हि संपूर्णे वह्निर्मंदत्वमृच्छति ।

तस्मात्सर्वप्रभोज्यानि दीपनानि लघूनि च ॥

अर्थ—कूख में दोषों के पूर्ण होने पर अग्नि मंद होता है इसलिये बहुत प्रयत्न से दीपन, हलके अन्न रोगी को खिलावे ॥

शालिपष्टिकगोधूमयवनीवारभोजनम् ।

विरेकास्थापनं श्रेष्ठं सर्वेषु जठरेषु च ॥

अर्थ—शाली चावल, गेहूं, जौ, नीवार इन का भोजन, रेचक औषधि और निरुह्वस्ति ये उपचार सब उदररोगों में उत्तम हैं ॥

उदररोग पर अपथ्य

अंबुपानं दिवा स्वापं गुर्वभिष्यंदि भोजनम् ॥ संस्नेहनं

धूमपानं जलपानं शिराव्यधः । छर्दिर्यानं दिवास्वप्नं

व्यायामं पिष्टवैकृतम् ॥ औदकानूपमांसानि पत्रशाकास्तिलानि

पि । उष्णानि च विदाहीनि लवणान्यशनानि च ॥ महेन्द्र-

गिरिजातानां सरितां सलिलानि च । शमीधान्यं विरुद्धान्नं दु-

ष्टनारं गुरूणि च ॥ विष्टंभीनि विशेषात्तु स्वेदं विष्टंभसंभवे ।

वर्जयेदुदरव्याधौ वैद्यो रक्षन्निजं यशः ॥

अर्थ—जल पीना, दिन में सोना, भारी पौष्टिक अन्न खाना, व्यायाम और रास्ता चलना इन को उदररोगवाले को त्यागना चाहिये. स्नेहनकर्म, धूमपान, जलपान, फस्त खोलना, घमन, रास्ता चलना, दिन में सोना, दंड कसरत, पीसे अन्न के पदार्थ (मैदा, जून आदि), जल और जलकिनारे रहनेवाले जीवों का मांस, पत्ते के साग, तिल, गरम और दाह कर्ता, निमक के पदार्थ भक्षण, महेन्द्रपर्वत से निकली नदियों का जल, फली के धान्य (उड़द मूग आदि) विरुद्ध पदार्थ, दुष्ट जल, भारी पदार्थ, विष्टंभकारी पदार्थ, और विष्टंभ से हुए उदररोग में पसीने निकालना ये सब कर्म उदररोग में अपने यश की रक्षा करनेवाले वैद्य को त्याग देना चाहिये ॥

इति श्रीबृहत्त्रिघण्डुरत्नाकरे उदररोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।



मिलनेका ठिकाना—गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
" रक्ष्मीयंकटेश्वर " छापाखाना, कल्याण—मुंबई.

